मणि ३६]. रामवन—जनवरी, १९५९ [आलोक १

मानसमणि



सम्पादक—

भगवानदास सफड़िया

अनुक्रमणिका

सक्रिय सदस्य

"मानस मणि" के सन् १६५८ के दो या दो से अधिक ग्राहक बनाने वाले सदस्य—

बासठ ग्राहक बनाने वाले—श्री पं० रामसुपाल जी भट्ट, खरमसेड़ा (पूर्व प्रकाशित ५३)

छब्बिस ग्राहक बनाने वाले—श्री रामरक्षित जी रामायणी, रामवन (पूर्व प्रकाशित २३)

चौदह ग्राहक बनाने वाले—(१) श्री मन्शाराम जी, करगा (पूर्व प्रकाशित १०)
(२) श्री नारायणप्रसाद जी तिवारी, बोइदा (पूर्व प्रकाशित १०)

दस ग्राहक बनाने वाले—श्री श्रीनाथ सहाय सिन्हा, जनकपुर (पूर्व प्रकाशित ६)

नौ ग्राहक बनाने वाले—श्री हरगोविन्द सिंह जी ब्रह्मवंशी, जबलपुर (पूर्व प्रकाशित ४)

चार ग्राहक बनाने वाले—(१) श्री सीताराम जी राठिया, धर्मजयगढ़
(२) श्री व्रजभूषण गनेड़ीवाला, गोरखपुर (पूर्व प्रकाशित ३)

तीन ग्राहक बनाने वाले—(१) श्री रामप्रताप जी नायबकानूनगो, गंगापुर
(२) श्री सूरजप्रसाद जी पाण्डेय, मकड़ाई (पूर्व प्रकाशित २)

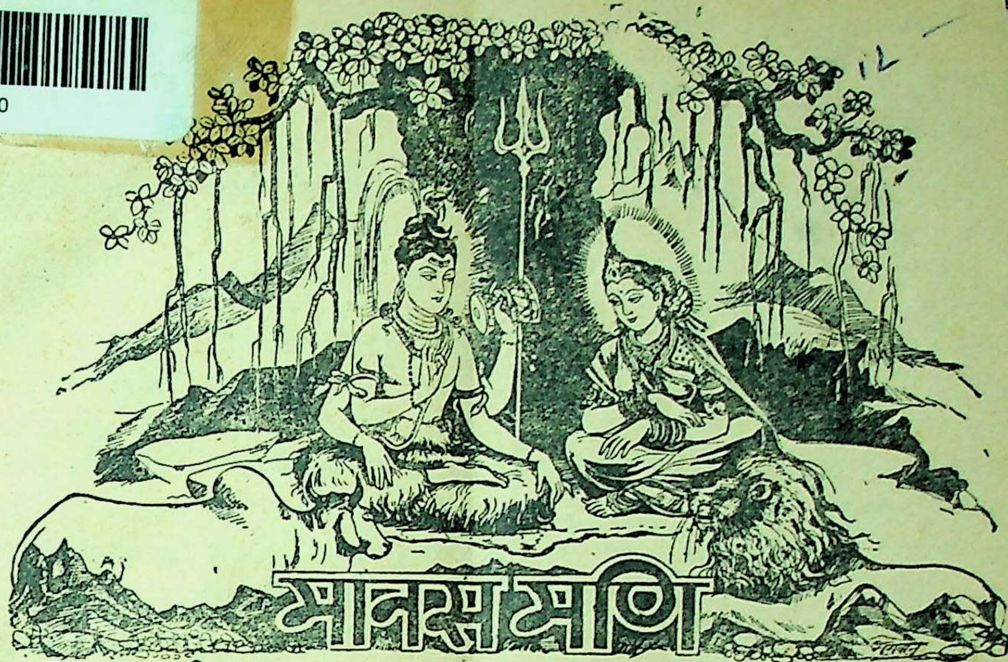
दो ग्राहक बनाने वाले—(१) श्री पाटबाबा मौनी रघुनाथदास जी, जबलपुर
(२) श्री मोतीलाल जी गुप्ता, बलोदा बाजार
(३) श्री आनन्द स्वरूप जी सक्सेना, दिल्ली।

नोटः—जो सज्जन और नये ग्राहक बनाकर सक्रिय सदस्यता प्राप्त करेंगे, उनकी नामावली अगले मास दी जायगी। इस मास तक सक्रिय सदस्यों की संख्या १६३ है।

वार्षिक मूल्य तीन रुपये] विदेश में ६ शिलिङ्ग [वी० पी० तीन रु० ६५ नये पैसे

॥ श्री सीताराम ॥





राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं॥

मणि १८ | रामवन—पौष, मानस सम्वत् ३८५ जनवरी १९५६ ई० | आलोक १

मानस महिमा

भाव अलंकृत मानस में पद, एक ते एक अनूप धरे हैं।
अंकित राम सुनामहिं तें, बहु हीरन हार अमोल खरे हैं॥
चातुर चक्रित हैं लखि कै, पुनि कोउ कुतर्कन माहिं परे हैं।
'भानु' भनै सत भाव जहाँ, तहं भाव के भीतर भाव भरे हैं॥

—'भानु' कवि



श्री सत्योपाख्यान

(अनुवादक--मानस तत्त्वान्वेषी पं० श्री रामकुमारदास जी रामायणी, वेदान्त भूषण, साहित्यरत्न)

ग्रन्थ के सम्बन्ध में—

ग्रंथों में बार बार सूत जी के लिये *'सूतं पौराणिकं खलु"* आता है और समस्त पुराण रचयिता भगवान वेद व्यास जी माने गये हैं *"अष्टादश पुराणानां कर्ता सत्यवती सुतः ।"* अतः जहां जहां सूत शौनक का सम्वाद आता है उसे लोग व्यासकृत मान लेते हैं और जिन्हें अपनी नवीन रचना व्यासकृत मनवानी होती है वे अपना नाम देकर व्यासकृत कहकर सूत शौनक सम्वाद या शिवा--शिव सम्वाद से प्रगट करते हैं । अस्तु

सत्योपाख्यान ७९ अध्याय का एक पौराणिक ढंग का काव्य ग्रन्थ है, न तो इसके रचयिता का नाम कहीं है दिया और न रचनाकाल । रचनाकाल देने की तो प्राचीन परिपाटी ही नहीं थी । आज के वैज्ञानिक ढंग से खोज करने वालों ने इसे सोलहवीं शताब्दी की रचना स्वीकार किया है । सम्वत् १९५४ वि० में यह बम्बई में छपी थी । उसके बाद का पता नहीं । अनन्त श्री विभूषित पं० श्री रामबल्लभा-शरण जी महाराज ने इसकी कथा लिखित प्रति से किया था । उस लिखित प्रति और छपी प्रति में कहीं कहीं थोड़ा सा फर्क पड़ता है । छपी प्रति में प्रूफ की गलती भी है । मैंने उस लिखी प्रति से छपी का संशोधन कर लिया था । आरम्भ में श्री पं० जी महाराज की कथा का भावार्थ भी नोट कर लिया था । मेरा अनुवाद उसी के अनुसार है इसलिये छपी प्रति से कहीं २ एकाधश्लोक का मत--भेद भी हो गया है । अनुवाद को संक्षिप्त करने की चेष्टा मैं अधिक किया करता हूँ पर इतना ख्याल अवश्य रखता हूँ कि कथानक की कोई छोटी सी बात भी न छूटने पाये और प्रवाह में शिथिलता न हो ।

सत्योपाख्यान के पूर्वार्ध के ४९ अध्यायों में श्री राम जी चारों भाइयों की एक वर्ष से १५ वर्ष तक अवस्था की बाल क्रीड़ायें वर्णित हैं, और उत्तरार्ध के तीस अध्यायों में श्री राम जी का विवाह चरित्र है ।

प्रथम अध्याय

दशरथसुत रामं योगिसे व्यांघ्रिपद्ममजमथ सनकाद्यैः पूज्यमानं सदैव ।
हृदि हृदि कृत वासं नारदाद्यैश्च गीतं, तममहमखिल देवं सर्वकर्मा नतोऽस्मि ॥१॥

सेवत हैं सब योगि सदा सनकादिक पूजिसुध्यान जगावैं ।
नारद आदि सुगाव अजन्म सबै जनके हिय पैठि रहावैं ॥
इष्ट सबै के तिन्हैं सब कर्म प्रणामकै आश 'कुमार' लगावैं ।
श्री दश स्यन्दन नन्दन राम के द्वौ पदपद्म हियेमम आवैं ॥

नैमिषारण्य के पुराण प्रसिद्ध सहस्र वर्षीय सत्र (यज्ञ) में एक बार वहां उपस्थित शौनकादि सभी ऋषियों ने समस्त पुराणों के ज्ञाता एवं सभी शास्त्रों के यथार्थ पण्डित श्री सूत जीको प्रणाम करके पूंछा—"सम्पूर्णशास्त्रों के सुपण्डित एवं महाबुद्धिमान् हे श्री सूत जी ! अब आप कृपा करके परमरमणीक अथच पवित्रतम श्री रामभद्र जी की कथा कहिए ॥२।३॥ सूत जी ने कहा कि ब्रह्मर्षियो श्री रामभद्र जी की शुभ कथा–जिसे कि पहले भगवान श्री व्यास जी ने कहा था–आप सबके समक्ष कहता हूँ सुनिये ।॥४॥

भागवत् धर्म में तत्पर महातेजस्वी श्री बाल्मीकि जी समस्त पर्वतों में सुन्दर परम पवित्र चित्रकूट गिरि के अञ्चल में रहते थे। एक बार उन आदि कवि के दर्शन करने चिरजीवी महामुनि मार्कण्डेय आये। भृगुवंशी ऋषि मार्कण्डेय को आया देखकर महा तपस्वी बाल्मीकि जी ने उनका बहुत स्वागत सत्कार करके सुन्दर आसन पर बैठ कर कहा—'हे मुने! आपने बड़ी कृपा करके मेरे आश्रम को पवित्र किया, अब शीघ्र ही अपने आने का कारण कहिये।" तब महा बुद्धिमान श्री मार्कण्डेय जी ने प्रणाम करके निवेदन किया—"हे महाभाग प्रचेतानन्दन आप महाबुद्धिमान् हैं। कृपा करके परब्रह्म-परमात्मा श्री राम जी की मनोहर कथा सुनाकर मुझे कृतार्थ कीजिये।" ५-१०॥

श्री बाल्मीकि ने कहा हे सुव्रत महामुने! आप तो समस्त श्री रामचरित्र जानते ही हैं तो भी आपकी प्रसन्नता के लिये कुछ कहता हूँ। श्री राम जी साक्षात् परमात्मा हैं, देवताओं की प्रार्थना पर पृथ्वी का भार उतारने के लिये स्वयं (किसी के कलांश नहीं) दशरथ के घर में अवतार लिया है, [इस समय तो श्री राम जी राजगद्दी पर विराजमान हैं, मैं उनके बालकाल की बात कहता हूँ।] जिस समय श्री राम जी भाइयों के सहित आँगन में रेंगते थे, यद्यपि वे दासियों-धाइयों से परिरक्षित थे और पीत रंग की झीनीझिंगूली (कुर्ता) पहने थे। कानों में मणि जड़ित कुण्डल, भुजाओं में अंगद (चौखूटा बिजायठ) हाथों में दिव्यकंकण, कटि में करधनी, पावों में नूपुर, कण्ठ में बघनहा, मणियों का कण्ठा एवं अनेक प्रकार से खरादी गई श्री तुलसी की मणियाँ धारण किये थे, इत्र फुलेल सुवासित काले घुंघराले केशों की लट्टूरी मुख-मण्डल पर लटककर मुख को बार बार ढँक सी लेती थीं। तो भी सर्वांग को धूलि से धूसरित करके आँगन में लोट लोट कर क्रीड़ा करते हुये परिजन-पुरजन को परमानन्द प्रदान कर रहे थे ॥११-१६)

एक बार नानारत्नों से अलंकृत परमदिव्य राजमहल में बहुत बड़ी बड़ी सोने के समान चमकते पीली जटावाले महायोगेश्वर श्री बशिष्ट मुनि पधारे। देखते ही हजारों दासियों ने तीनों महारानियों के पास जा जा कर श्री मुनिराज का आगमन निवेदन करते हुये प्रार्थना की कि परम पूज्य एवं अज्ञान नाशक श्री गुरु जी के पास राजकुमारों को लेकर चलिये ॥१७-२१) सुनते ही अत्यन्त प्रसन्न होकर श्री कौशिल्या जी धीरे धीरे चलते नूपुर बजाते हुये उज्ज्वल नील मणि प्रभ श्री रामभद्र का हाथ पकड़कर आईं और सपुत्र गुरु चरणों पर शिर रख कर प्रणाम करके दिव्य सिंहासन पर गुरु जी को पधरा कर बालक रामभद्र के हाथ से चरणों में पूजा समर्पित की और तब महातेजस्वी मनः विजयी श्री बशिष्ट जी ने भी गोद में उठाकर श्री रामभद्र जू के मस्तक पर हाथ रख कर 'चिरंजीव' 'चिरंजीव' कहा ॥२२-२४॥ उसी समय कैकेयी और सुमित्रा ने भी आ कर स्व-स्व पुत्रों सहित गुरु चरणों पर शिर रख कर प्रणाम किया पूजा समर्पित कराई और मुनिराज ने भी उसी तरह आशीर्वाद देकर तीनों कुमारों को भी अपनी गोद में श्री रामभद्र जी के पास ही बैठा लिया। महल की सभी स्त्रियाँ मुनि जी के दर्शन से परमानन्दित हुईं। सभी रानियों को ओर कृपापूर्ण बात्सल्य दृष्टि से देखते हुये आशीर्वाद दिया कि हे श्री सम्पन्न देवियों! आप लोगों और राजा के पुण्य से रक्षित ये राजकुमार सब सानन्द क्रीड़ा करते रहें ॥२५-३२॥ *इति प्रथमोऽध्यायः ॥*

द्वितीय अध्याय

श्री कौशिल्या जी ने निवेदन किया कि हे गुरुदेव! जैसे सूर्यनारायण के उदय रहते अन्धकार का भय नहीं रहता उसी तरह आपकी रक्षा में रहने से सदैव कुशल ही है। परन्तु मेरे मन में एक संदेह है। कभी कभी स्वप्न में अपने रामलला को महान् प्रकाश युक्त देखती हूँ और कभी शंख, चक्र गदा, तलवार, धनुष, भल्ल आदि अनेकानेक आयुध धारण किये गरुड़ पर विराजमान देखती हूँ ॥१-३(

श्री सुमित्रा जी ने कहा कि प्रभो ! कभी कभी मैं भी स्वप्न में लक्ष्मण को ऐसा देखती हूँ कि चाँदी के समान श्वेत रंगवाले हजार शिर वाले नाग के ऊपर विराजमान हैं और क्षण भर में हजारों शिर हजारों हाथ हजारों नेत्र हजारों पाँव हो जाते हैं। इसी तरह कभी शत्रुघ्न को उसी तरह रजत श्वेत नाग पर सोया एवं करोड़ों सूर्य के समान प्रभामान् तथा सुन्दर-दर्शनीय नाभि में कमल एवं आठ भुजा वाला देखती हूँ। श्री कैकेयी जी ने कहा कि मैं भी स्वप्न में भरत को शंख के समान उज्वल, स्निग्धवर्ण तथा चारभुजा वाला कभी गरुड़ पर बैठा कभी मृणालधवल नाग पर सोया देखती हूँ। अन्य रानियों ने भी कहा कि हमें भी कभी कभी स्वप्न में रामलाल साक्षात् परब्रह्मरूप में सभी देवताओं द्वारा स्तुति किये जाते दिखाई पड़ते हैं ॥४-१०॥ रानियों का कथन सुनकर महामुनि ने नेत्रमूंद कर एकाग्रमन से ध्यान किया तो ज्ञात हुआ कि ये चारों नृपनन्दन तो साक्षात् परमात्मा ही हैं, रावणादि करोड़ों राक्षसों को मारेंगे, परन्तु इस तत्व को ये महाभाग्य रानियाँ नहीं जानती हैं, मुझे भी गुप्त रखना ही उचित है। यदि ये इनके पर तत्व को जान लेंगी तो फिर पुत्र भाव का आनन्द न रह जायगा ॥११-१७॥ ऐसा विचार कर हँसते हुये कहा— "ये चारों राजकुमार गुण में नारायण के समान हैं। इसीसे स्वप्न में विष्णु एवं पार्षदों के रूप दिखाई पड़ते हैं" ॥१८, १९॥ रानियों ने पुनः प्रार्थना की कि हे गुरुदेव ये बालक आँगन में खेलते रहते हैं। इन्हें बैताल, भूत, प्रेत, डाकिनी मारिका, राक्षस आदि कोई बाधा न दे सकें, किसी की नजर न लग जाय इसलिए हे स्वामिन् सर्वोपद्रव घातिनी रक्षा कर दीजिए, [मंत्र यंत्र से झाड़ फूंक दीजिए।] आप तो सब दिन से इक्ष्वाकु वंश की रक्षा करते आये हैं। हम सब तो एकमात्र आप ही की शरण हैं ॥२०-२५॥ प्रसन्नतापूर्वक मुसकाते हुए गुरु जी ने कहा कि—देबियों आप ठीक कह रही हैं। बालकों की रक्षा पढ़ने मैं नित्य आया करूंगा। यह कह कर रानियों से विदा लेकर महामुनि अपने आश्रम पर जाते हुये पूर्व वृतान्त विचारने लगे इन्हीं के लिये तो मैंने निकृष्ट कर्म पुरोहिती स्वीकार किया है। श्री राम जी की पुण्य मूर्ति ये मातायें धन्य हैं, राजा दशरथ धन्य हैं, अयोध्यापुरी धन्य है और इन सब के गुरु होने से मैं भी धन्य एवं नमस्कारार्ह हूँ। ऐसा विचारते एवं मार्ग में लोगों से पूजित होते हुये कुण्ड पर स्थित अपने दिव्याश्रम में पहुँच कर शिष्यों एवं सज्जनों से सेवित हुये, और रक्षा पढ़ने के बहाने नित्य ही राज महल जाकर श्री रामादि का दर्शन करने लगे। ॥२६-३२॥ इतनी कथा सुनकर मार्कण्डेय मुनि ने श्री बाल्मीकि जी के चरणों में प्रणाम करके कहा कि हे मुनि पुंगव आपकी कृपा से श्री राम तत्व सुनकर मैं संदेह रहित हो गया, ऐसा गद्-गद् स्वर से कह कर और पुनः २ आदि कवि की परिक्रमा करके प्रसन्नता पूर्वक श्री अयोध्या-नगरी में पहुँच कर महाराजाधिराज श्री रामचन्द्र जी का दर्शन कर प्रणाम करके अपने आश्रम पर गये ॥३३-३५॥ मार्कण्डेय जी का आश्रम पुष्यभद्रा नदी के तट पर नाना मुनिगणों से युक्त था जहां सभी प्राणी स्वाभाविक वैर भुला कर रहते थे। उसी आश्रम पर काम देव अपनी युवतियों की महती सैन्य के साथ मुनि मार्कण्डेय से हार चुका था। श्री जी के कमल-कलित कोमल करों से लालित श्री राम जी के युगल पादपद्मों का ध्यान स्मरण करते हुये चिरजीवी मुनि निवास करने लगे ॥३६-३९॥ *इति*

तृतीय अध्याय

श्री शौनक महर्षि ने कहा कि हे बुद्धिमन् ! सूत जी श्री राम जी के और भी परम अद्भुत चरित्र कहिये। क्योंकि श्री रामचरित्र का एक एक अक्षर तक मनुष्यों के पाप-पर्वत को विदीर्ण कर चूर चूर कर देने वाला भयंकर बज्र है। जो प्राणी मानव शरीर पाकर भी श्री राम जी का भजन स्मरण नहीं करता, उस पापी को उसके कर्मों ने ठग लिया ऐसा जानिये। श्री सूत जी ने कहा कि हे महर्षे आप तो

श्री राम जी के युगल चरण कमलों के मकरंद का सतत् आस्वादन करने वाले, भ्रमर हैं। मैं श्री राम जी का पावन चरित्र कहता हूँ सुनिये ॥३॥ नराकार परब्रह्म-परमात्मा श्री रामभद्र जी एक बार माता की गोद में खेल रहे थे उसी समय श्री कौशिल्या जी की समस्त दासियों की यूथेश्वरी श्री राम जी की मुख्य धात्री परम सुन्दरी धन्यावती आई। एक दिन पूर्व चारों भाई श्री राम जी के कन्दुक क्रीड़ारम्भोत्सव में पुरस्कार स्वरूप श्री कौशिल्या जी के सद्यः धारण किये गये समस्त भूषण एवं वस्त्र जो मिले थे उन्हीं मणिजटित भूषण वस्त्रों से अपना सुन्दर शृंगार किये वह धाई आई। उसे देखते ही राम जी माता की गोद से उछल कर उसकी गोद में पहुँच गये। तब उस धात्री ने महाराणी जी से प्रार्थना की कि इस समय महाराज जी मझली महारानी (श्री कैकेयी) जी के प्राङ्गण में विराजते हैं और श्री रामलाल जी भी मझली माता जी के लिये मचल रहे हैं यदि ये अभी अभी दुग्ध पान कर चुके हों तो मैं ले जाऊँ क्या? कौशिल्या जी की आज्ञा पाकर धन्यावती श्री रामभद्र जी का पुनः शृंगार करके अनेक सैकड़ों श्री सखाओं के साथ ले चली। अनेकों दासियाँ पीछे पीछे श्री राम जी के खिलौने ले कर चलीं ॥४-१८॥ महारानी श्री कैकेयी जी का रम्य महल अनेक दास-दासियों से युक्त तो था ही, अनेकों कृत्रिम (धातु-पत्थर आदि के) मणिजटित पशु-पत्ती यत्र-तत्र यथा स्थान बने थे। मृदंगादि नाना मनोहर वाद्य सदैव बजा करते थे। रत्नजटित दण्डों में मणियों की झालर लगाकर अनेकों प्रकार की चाँदनी प्राँगण में छाई हुई थी। दिव्य रत्नजटित अनेकों स्वर्ण पात्र यथा स्थान सुशोभित थे। प्राङ्गण में बजते हुये मृदंग की ध्वनि को मेघगर्जन जानकर छत के मयूर नाचते थे। प्रांगण में हाथीदांत के बने पलंग पर धर्म में तत्पर महाराज श्री दशरथ जी श्री कैकेयी जी के सहित बैठे हुये श्री भरतलाल जी का दुलार करते हुये शिशु को हँसाते थे, रत्नवेष्टित चँवर दोनों तरफ से दासियाँ डुला रहीं थीं उसी समय अनेक बाल मित्रों से घिरे धात्री धन्यावती के साथ श्री रामभद्र जी पिता माता के पास पहुँचे ॥१६-२७॥ उस समय अतसी पुष्पवत् श्याम श्री रामलाल जी दिव्य पीत वस्त्र कटि में, उषा कालिक शुक्र के समान प्रकाशमान नासामणि और अनेकानेक रत्नजटित आभूषणों से अलंकृत थे। धातृ की शिक्षा का स्मरण करते हुये नित्य की तरह पहले माता कैकेयी के पुनः पिता जी के चरणों पर सिर रख कर प्रणाम किया। दशरथजी मधुर मुसकान युक्त श्री रामजी का बार बार सिर सूंघने लगे तब महारानी कैकेयी जी ने राजा की गोद से श्री रामलाल जी को अपनी गोद में बैठा कर बार २ मुख चूमतीं सिर सूँघतीं एवं अनेक प्रकार से दुलार करती हुई, मुसकाते हुये राजा की ओर देख कर बोलीं ॥२८-३३॥ "महाराज! मेरी तो जैसी दृढ़ प्रीति बड़े कुमार प्रभुआराम में है वैसी भरतलाल में नहीं है।" राजा ने कहा देवि! यह क्या कहने की बात है, यह तो मुझे ही नहीं समस्त पुरजनों-परिजनों को ज्ञात है। अभी राजा इतना ही कह पाये थे कि उसी समय अन्यान्य बालकों के साथ गेंद खेलते हुये श्री लक्ष्मणकुमार ने अनेक दासियों से घिरे वहीं पहुँच कर प्रथम मझली माता को और तब पिता जी के चरणों पर सिर रख कर प्रणाम किया। उस समय जब रानी-राजा गोद में लेने लगे तो दोनों के हाथों से दूर छटक-कर वहीं आँगन में गेंद खेलने लगे। यह देख श्री राम और भरत जी भी माता पिता की गोद से कूद कर बालकों में जाकर गेंद खेलने लगे। चारों कुमार मझली महारानी के प्रांगण में एक साथ गेंद खेल रहे हैं यह खबर पाते ही श्री दशरथ जी की अन्य साढ़े तीन सौ रानियाँ वहीं पहुँच कर महाराज को तीन तरफ से घेर कर स्थित हो गईं। उस समय अपनी सुन्दरियों से घिरे सिंहा-सनारूढ़ महराज ऐसे मालूम होते थे जैसे अप्सराओं से घिरे शची सहित देवराज इन्द्र हों ॥३४-४०॥

इति तृतीयोऽध्याय ॥

राक्षसराज

[श्री सुदर्शनसिंह जी]

(१३) वेदवती

'कौन है यह सुन्दरी !' एकाकी रावण पुष्पकारूढ़ पर्यटन करने निकला था। उसका यान जब हिमालय पर से जा रहा था, अवनि की ओर अचानक दृष्टि गई और चौंक पड़ा वह– 'शैल शिखर पर ऐणेयाजिन आवृता यह देवाङ्गना !'

'सुश्रोणी ! कौन हो तुम ?' पुष्पक नीचे उतर गया। दशग्रीव उस तपस्विनी के पास पहुँचकर पूँछ रहा था- 'दिशाओं को द्युतिमान करती इस अल्पवय में तुम यहां क्यों तपस्या कर रही हो ? ऐसा क्या अभीष्ट है जो तुम्हारी जैसी सुषमा मूर्ति के लिये भी अप्राप्य हो ?'

'सुरगुरु बृहस्पति के पुत्र ब्रह्मर्षि कुशध्वज मेरे पिता हैं।' उस कन्या ने अपनी कोमल वाणी में कहा– 'मेरा नाम वेदवती है। मेरे पिता चाहते थे कि जगदीश्वर श्री हरि उनके जामाता हों।'

'उस सुराराध्य ने तुम्हें भी स्वीकार नहीं किया ?' आश्चर्य था रावण की वाणी में।

'मेरे पिता से देवता, गन्धर्व, राक्षस, नाग, यक्षादि अनेकों ने मेरी याचना की थी; किन्तु उन्होंने किसी की प्रार्थना स्वीकार नहीं की।' वेदवती का स्वर सामान्य ही था– 'उनकी इच्छा का अनुमान करके पापी दैत्य शुम्भ क्रुद्ध हो गया। रात्रि में आया वह निशाचर हमारे आश्रम में और उसने मेरे सुप्त पिता की हत्या करदी। मेरी पतिव्रता जननी पिता के शव के साथ सती हो गईं।'

'अब तुम्हारा अभिप्राय क्या है ?' रावण सन्तुष्ट ही हुआ था यह सब सुनकर। इस कन्या ने उसके चित्त को आकृष्ट कर लिया था। यह अभी अविवाहिता है, यह जानकर उसे प्रसन्नता होनी ही थी।

'मैं अपने पूज्य पिता का अभिप्राय पूर्ण करना चाहती हूँ।' वेदवती ने मुख नीचे कर रखा था– 'मुझे विश्वास है कि श्रीहरि अवश्य इस अनाश्रया को अपना लेंगे। वे करुणावरुणालय हैं। वे पुरुषोत्तम ही अब मेरे पति हैं। अन्य किसी की मैं कदापि आकांक्षा नहीं करती।'

'अज्ञ हो तुम !' रावण हँसा।

'लंकेश ! आप अब यहां से पधारें।' वेदवती ने दशग्रीव की बात पर ध्यान नहीं दिया– 'पौलस्त्य, अपनी तपः शक्ति से मैं आपसे परिचित हो गई हूँ। त्रिलोकी में मेरे लिये कुछ अज्ञात नहीं है। एकाकिनी नारी के पास किसी परपुरुष को नहीं रहना चाहिये।'

'रूप दर्पिते ! अपने सौन्दर्य मद ने तुम्हें सत्य से दूर कर दिया है। तुम सोच नहीं पातीं कि तुम्हारा करणीय क्या है ? तपस्यादि कार्य वार्धक्य के उपयुक्त हैं।' दशग्रीव उत्तेजित हो चुका था 'यह युवावस्था इस प्रकार नष्ट करना योग्य नहीं है।'

'अच्छा हो कि आप अधिक कुछ न कहें।' वेदवती खिन्न हो उठी।

'विष्णु को मैं नहीं जानता। वह कोई हो, शक्ति में, सम्पत्ति में, शौर्य में मेरे समान नहीं हो सकता !' राक्षस राज अब औधत्य पर उतर आया था– 'तुम मुझे स्वीकार करो। मैं सहर्ष तुम्हें भार्या बनाने को उद्यत हूँ'।

'त्रिलोकेश्वर, निखिल ब्रह्माण्ड नायक श्री नारायण के प्रति ऐसी बात कोई अज्ञ ही कह सकता है।' वेदवती की वाणी में रोष आया– 'कोई सुविचार सम्पन्न उनके अपमान की बात सोच नहीं सकता।'

'मैं जानता हूँ कि सौन्दर्य के मद से मत्त स्त्रियां कैसे मानती हैं।' आगे बढ़कर रावण ने उस तपस्विनी की जटा पकड़ली।

'दुष्ट !' दशग्रीव भी हतप्रभ हो उठा तत्क्षण। वेदवती का वाम हस्त अचानक तलवार- सा तीक्ष्ण हो गया और उसने एक झटके से अपने केश काट दिये-- 'तू ने मेरे केश पकड़ने का साहस किया ! स्पर्श किया तू ने—तुम्ह पापी ने मेरा !'

रावण हाथों में उस सुन्दरी की वह छिन्न जटा लिये स्तब्ध सुनता रहा। इतना तेज – इतनी त्वरा और इतना तमकता मुख ! अब वह वेदवती के मुख की ओर देखने में भी अपने को समर्थ नहीं पा रहा था।

'मैं तुझे भस्म कर सकती हूँ शाप देकर। किसी का कोई वरदान तेरी रक्षा करने में समर्थ नहीं।' वेदवती ने हाथों में कमण्डल उठाया जल लेने के लिये और कांप गया लंकेश्वर। किन्तु स्वयं उसने कमण्डल रख दिया- 'मुझे सृष्टिकर्ता तथा भगवान् शङ्कर के वरदान का सम्मान करना चाहिये। तुच्छ-कीट को शाप देकर मैं अपनी तपस्या क्यों नष्ट करूं।'

दशानन का शरीर जैसे जड़ हो गया था। वह वहां से हट जाने में भी अपने को अभी असमर्थ पा रहा था।

'तेरी पाप दृष्टि पड़ी इस देह पर। तू ने मेरे केश का स्पर्श कर लिया। अब यह देह आराध्य की अर्चना के उपयुक्त कहां रहा।' उस तेजस्विनी ने कहा-'तेरे सम्मुख ही मैं यह देह त्यागती हूँ। स्मरण रख ! किसी सर्वेश्वरी अयोनिजा से एक होकर अवतरित होगी यह वेदवती–यह वेदवती ही तेरे विनाश का निमित्त बनेगी।'

समिधाओं की राशि एकत्र करके अग्नि प्रज्वलित की उस पुण्यमयी ने और श्रीहरि के चरणों का स्मरण करती शान्त बैठ गई लाल लाल लपटों के मध्य। हव्यवाह आज एक ऐसी आहुति पा चुके थे, जिसे उन्हें सीधे सर्वेश्वर के समीप पहुँचाना था।

दशानन वहां से हतौजस लौटा। उसका उत्साह शिथिल हो चुका था। पुष्पक अब लङ्का की ओर जा रहा था।

❀ ❀ ❀

हम आप जानते हैं कि आदि शक्ति जब अयोनिजा धराकुमारी के रूप में महाराज विदेह की यज्ञ भूमि में आविर्भूत हुईं—वेदवती उनसे अभिन्न थीं।

वन में जब श्रीराघव ने वैदेही को अग्नि में निवास करने को कहा—वेदवती छाया सीता के रूप में साकार हो गईं। रावण ने उनका हरण किया। अपना विनाश आमन्त्रित किया था उसने।

रावण के निर्वाण के पश्चात् अग्नि परीक्षा हुई। छाया सीता अर्थात् वेदवती ने सायुज्य प्राप्त कर लिया श्री जानकी में। उनकी आराधना अब पूर्ण हो गई थी।



माघ में रामवन आइये

माघ पुनीत मास है। इसमें रामायण पाठ की प्राचीन परम्परा है। कुछ समय निकाल कर आइये, पुण्य भूमि में मानस का पाठ कीजिये, अथवा वाल्मीकि रामायण का अध्ययन कीजिये और विशेष पुण्य लाभ कीजिये एक अरब राम नाम की परिक्रमा का।

रामायण दान करना चाहें तो पत्र व्यवहार करके कोई ऐसा संस्करण मँगवा दीजिये जो रामवन में नहीं है।

—शारदाप्रसाद

यश-अपयश

(श्री छवलाल जी रामायणी)

इस संसार सागर के मध्य जन्म लेकर हमें विचार करना चाहिये कि केवल लोक तथा परलोक का यश 'जैसे लोक सुयश परलोक सुख' वा 'जौ परलोक इहां सुख चहहू' इत्यादि कैसे प्राप्त होगा। उत्तर है कि सुकृत से और कपट के त्याग। से कपट रहने से सुन्दर यश नहीं प्राप्त होता और सुन्दर यश ही लोक और परलोक दोनों स्थानों में सुख देने वाला है। जिसकी दीक्षा अविवेकी जाति स्त्रियां भी देती हैं जैसे—

दुइ सुत मरे दहेउ पुर अजहुं पूर पिय देह।
कृपा सिंधु रघुनाथ भजि नाथ विमल जसलेहु ॥ लं० दो.३७

उसे न मानने पर रावण जैसे अभिमानी योद्धा की भी दुर्गति से मृत्यु हुई। ऐसे ही दुर्गति मृत्यु पर बाली जैसे अभिमानी बलवान को भी प्रभु श्रीरामजी कह रहे हैं—'नारि सिखावन करेसि न काना' अतः 'सुकृत करना चाहिये'—कपट त्यागना चाहिये।

सुकृत और कपट के उदाहरण स्वरूप मानस में दो व्यक्ति हैं।

सुकृत न सुकृती परिहरहिं, कपट न कपटी नीच।
भरत सिखावन दै चले, गीधराज मारीच ॥

गिद्धराज और मारीच दोनो सुकृत और कपट दो बातें ग्रहण करके लोक में यश-अपयश का नाम अमर करके यहां छोड़कर चले गये। इस संसार में एक से एक पराक्रमी तथा यशी अपयशी अपने अपने गुण, तत्व प्रगट करके अन्त में सुनाम और कुनाम छोड़कर चल बसते हैं।

चले गये बालि अरु बाणासुर बीर जैसे,
कर्ण स्वर्णकश्यप कंस कौरव आदि कुम्भकर्ण,
कुन्ती 'लाल' अर्जुन अरु श्रवण से सपूत गये,
निज निज प्राक्रम दिखाय वीर केते गये,
वाल्मीकि मुनिहुं प्रथम राम चरित कहि गये।
कपिल गये जाके क्रोध सगर सुत दहि गये ॥
गये हरिश्चन्द्र बचन हेतु कष्ट सहि गये।
केवल जगत बीच एक नाम नाम रहि गये ॥

मानस संघ के आय व्यय का वार्षिक विवरण

इस वर्ष जो आय व्यय हुआ है उसका जांचा हुआ चिट्ठा नीचे प्रकाशित किया जाता है। जिन महानुभावों से सहायता मिलती है उनके नाम मानस मणि में प्रतिमास प्रकाशित हो जाते हैं। अतः इस विवरण में नहीं दिये जा रहे हैं:—

चिट्ठा ३१ अगस्त सन् ५८ तक का

२३७.७५	मूल श्री रोकड़ बाकी जमा	१०६८.२१	श्री मारुति सेवा खाते नाम
१०८१७.९१	विवध व्यक्तिया को देना	१३७१.८५	मानस प्रचार खाते नाम
११०५५.६६		३६३६.८८	तुलसी संग्रहालय खाते नाम
		५४०.६८	सेंविक बैंक पोस्ट आफिस रामवन खाते नाम
		३६८८.४६	विवध व्यक्तियों से पाना
		१०६०६.३८	
		१४६.२८	श्री रोकड़ बाकी जमा
		११०५५.६६	

उपरोक्त विवरण जांचा और सही पाया।

ह० *तरुणेन्दुशेखर तिवारी, आय व्यय निरीक्षक*

उचित उत्तर

(गोस्वामी महन्त श्री रोशनपुरी वैद्य शास्त्री, कोदड़िया)

गुरु वशिष्ठ जी का आदेश पाते ही श्री भरतलाल जी ननिहाल से अयोध्या पधारे। अयोध्या आने पर उन्हें महाराज श्री दशरथ जी के निधन तथा श्री राम, लक्ष्मण और श्री सीता जी के वन चले जाने का समाचार मिला। धीर धुरंधर श्री भरत जी धैर्य धारण कर पिता जी की अन्त्येष्टि क्रिया से निवृत्त हुए। एक दिन समय जानकर गुरु, मंत्री, महाजन आदि अयोध्या के सभा भवन में उपस्थित हुए और श्री भरतलाल जी को राज्यासीन होने के लिए बाध्य करने लगे। लाचार होकर श्री भरतलाल जी को दो तरहों के उत्तर देने पड़े। जैसे—

'बचन अमिय जनु बोरि, देत उचित उत्तर सबहिं।'

अर्थात्—(१) अमृत में डुबाकर
(२) उचित उत्तर

श्री रामचरितमानस में यह बतला दिया गया है कि अमिय रस बोरी बानी से क्या कहा गया तथा उचित उत्तर कब दिया जाता है। जैसे—

(१) अमृत में डूबी हुई वाणी

चौ०—*बाल्मीकि हँसि कहहिं बहोरी।*
बानी मधुर अमिय रस बोरी॥

इस अमिय रस बोरी वाणी में श्री बाल्मीकि जी ने नीति निपुणता के महत्व को बताया हैं। जैसे—

चौ०—*नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका।*
घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका॥

तात्पर्य यह है कि नीति निपुण के हृदय को श्री राम निकेत बताकर नीति के महत्व को सीमा तक पहुँचा दिया हैं।

(२) उचित उत्तर

उचित उत्तर तभी दिया जाता है जब कोई किसी से विचार विरुद्ध हठ करता है जैसे श्रीराम जी के विचार विरुद्ध सुमन्त जी अयोध्या लौट चलने की हठ करने लगे। जैसे—

'जतन अनेक साथ हित कीन्हे।'

तब लाचार होकर श्रीराम जी ने सुमन्त जी को उचित उत्तर दिया। जैसे—

'उचित उतरु रघुनन्दन दीन्हें।'

यही भाव श्री भरतलाल जी के भी उत्तरों से स्पष्ट होता है। जैसे—

(१) *'बचन अमिय जनु बोरि'*

इस अमृत से डूबी हुई वाणी में श्री भरतलाल जी नीति वाणी बोले हैं। जैसे—

गुरु पितु मातु स्वामि हित बानी।
सुनि मन मुदित करिय भलि जानी॥
उचित कि अनुचित किये बिचारू।
धरम जाइ सिर पातक भारू॥

(२) *'उचित उत्तर'*

श्री भरतलाल जी नीति की मर्यादा को अच्छी तरह से जानते थे। अतः वे बोले—

जद्यपि यह समुझत हउँ नीके।
तदपि होत परितोष न जीके॥

परन्तु आज उन्हें उनकी इच्छा विरुद्ध तथा कुल रीति के विरुद्ध—

जेठ स्वामि सेवक लघु भाई।
यह दिनकर कुल रीति सुहाई॥

अयोध्या के राज सिंहासन पर बैठने को गुरु, माता, मंत्री आदि सभी बाध्य कर रहे हैं। अतः भूमिका बाँधते हुए वे बोले—

उतरु देउँ छमब अपराधू।
दुखित दोष गुन गनहिं न साधू॥

तत्पश्चात् श्री भरत जी बोले कि सभासदों की थोड़ी सी भूल से *'पितु सुरपुर'* पधारे यदि आप पूछें कि इसमें हमारी भूल क्या है? तो सुनिये! आपने माता कैकेयी जी की याचनानुसार कार्य नहीं किया क्योंकि माता कैकेयी जी की प्रथम मांग यह है कि—

'देहु एक बर भरतहिं टीका।'

और दूसरी मांग है—

दूसर बर मागौं कर जोरी ।
पुरवहु नाथ मनोरथ मोरी ॥
तापस बेष बिसेषि उदासी ।
चौदह बरिस राम बनबासी ॥

परन्तु आप लोगों ने किया क्या है ? *'सिय राम बन'* अब पुनः क्या चाहते हैं ? *'करन कहहु मोहिं राजु'* इस प्रकार आप माता जी के मांगे हुए वरदान क्रम का भंग करना चाहते हैं। तो क्या *'एहिते जानहु मोर हित कै आपन बड़ काज।'* परन्तु मेरे राज्यासीन होने के बाद का भी परिणाम आप लोगों ने सोचा है या नहीं। तो सुनिये—

मोहिं राज हठ देइहहु जबहीं ।
रसा रसातल जाइहिं तबहीं ॥

अतः मैं दीनतापूर्वक सबों से शिर झुका कर यही प्रार्थना करूंगा कि–*'देखे बिनु रघुनाथ पद, जिय कै जरनि न जाइ।'* भरतजी की इस वाणी को सुनकर—

मातु सचिव गुरु पुर नर नारी ।
सकल सनेह बिकल भए भारी ॥

और सभी एक स्वर से चिल्ला उठे—

दो०-अवसि चलिय बन राम जहँ भरत मंत्र भल कीन्ह ।
सोक सिंधु बूड़त सबहिं तुम्ह अवलम्बन दीन्ह ॥

कालिदास करण्डिका

पं० श्री टंकेश्वर शर्मा व्यंकट हाई स्कूल में संस्कृत के बड़े पंडित जी थे। मुझे भी उनसे पढ़ने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। प्रायः ४० वर्ष पूर्व उन्होंने अवकाश ग्रहण किया और अब इस संसार में नहीं हैं। वे परम सन्तोषी और सरल स्वभाव के थे।

सतना में पं० श्री रामकुमार पाण्डेय के परामर्श से मैंने यह निश्चित किया है कि उनके शिष्यों तथा प्रेमियों के सहयोग से उनके स्मारक स्वरूप कालिदास करण्डिका तुलसी संग्रहालय में स्थापित कराऊँगा। इसमें महाकवि कालिदास का साहित्य संग्रह किया जायगा।

तुलसी साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन के लिये हमें सभी भाषाओं के श्रेष्ठ कवियों का साहित्य संग्रह करना है। संस्कृत के महाकवियों का साहित्य तो संग्रह होना ही चाहिये और उनमें कालिदास प्रमुख हैं ही।

अबतक ५६) प्राप्त हुए हैं [२०) लाल विन्ध्येश्वरी प्रसाद सिंह जी से ११) श्री रामसेवक वर्मा से और २५) मेरी सेवा।]६८।=) की २४ पुस्तकें आ गई हैं, क्रमशः और साहित्य संग्रह होता जायगा। मीरा मञ्जूषा और सूर सौरभ के सदृश यह कालिदास करण्डिका संग्रहालय का एक उपयोगी भाग होगी।

इस क्रम में और भी अनेक सुझाव आये हैं। जो प्रेमी संग्रह प्रदान करना चाहें वे पत्र व्यवहार की कृपा करें।

—शारदाप्रसाद

दुनियां क्यों रोती है

(महन्त श्री रघुवरदास जी विशारद)

यह संसार मलायतन, मन करि देखु विचार ।
श्री रघुवीर नाम तजि, नाहिन आन अधार ॥

यह तो सभी मानते हैं कि मानव परमात्मा की सर्वोत्कृष्ट रचना है । क्योंकि उसे ऐसा दिमाग़ मिला है कि जिससे वह भली प्रकार अपना भला बुरा सोच सकता है । यथा *भल अनभल पसु पच्छिहु जाना, मानुष तन गुनज्ञान निधाना ।* तत्ववेत्ताओं ने यही बताया है कि हम सब परम सच्चिदानन्द भगवान ही के एक (शरीर) रूप हैं। मेरा यह विश्वास है तथा संसार के समस्त ज्ञानवान प्राणी ऐसा ही मानते हैं । अतः ऐसा मान लेने पर कि हम भगवान के अभिन्न रूप हैं यह सिद्धान्त जब स्थिर हो गया तो यह कहने में किंचित मात्र संदेह नहीं रह जाता कि हमारा उद्गम स्थान सत् , चित, आनन्द और सुख का केन्द्र है ऐसी दशा में हमको सदैव आनन्दित और सुखी रहना चाहिये ।

परन्तु सर्वथा इसके विपरीत दिखाई देता है। क्या संसार के लोग वास्तव में सुखी हैं ? मुझे बड़े दुख के साथ कहना पड़ता है कि हम जिस आनन्द स्रोत से सम्बन्धित हैं उससे यथोचित लाभ नहीं उठाते, प्रत्युत उस ओर से मुंह मोड़ कर दूसरी ओर खड़े हैं जहां पर अंधकार अज्ञान हाहाकार के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । जन समुदाय के जिस कोने में हम प्रवेश करते हैं वहीं पर हमको रोना ही रोना सुनाई पड़ता है । धनवान धन के अपहरण से रोता है, निर्धन धन के अभाव से रोता है, बलवान यौवन ढलने की आशंका से दुखी है, रूपवान अपने प्रतिद्वंदियों की संख्या वृद्धि से रोता है, कुरूप दर्पण में अपना मुंह देख कर रोता है, उच्च शिक्षा सम्पन्न नौकरी न मिलने से रोता है, विद्यार्थी परीक्षा में अनुत्तीर्ण होने से रोता है, अधिक बालबच्चों वाला उनके भरण पोषण के अभाव से दुखी है तथा श्री और साधन सम्पन्न संतान न होने से दुखी है। मोटर पर सवार श्रीमान् दुर्घटना के कारण रोता है तो नंगे पांव धूल में चलने वाला जूता न मिलने से रोता है, एक किसी की मृत्यु पर रोता है तो दूसरा किसी के जन्म पर आंसू बहाता है। कोई व्यर्थ की भविष्य की चिन्ताओं से दुखी है तो कोई वर्तमान के प्रति असंतुष्ट है । सारांश यह कि आज संसार के हर कोने से रोने ही रोने की आवाज आ रही है। अशांति और असन्तोष का एक बवंडर उठा हुआ है ।

दुनियां के इस रोने के कारण की गम्भीर छान बीन करने पर उसका मूल कारण एक ही ज्ञात होता है और वह है अपने आत्मस्वरूप की विस्मृति । उस परम सच्चिदानन्द घन परमात्मा का आश्रय त्याग ।

आज हमारा समाज अपने देश की शिक्षा से बहुत दूर है। वह पाश्चात्य शिक्षा के विचारों से प्रभावित है । जिसका लक्ष्य ही है कि जीवन में यदि कुछ है तो सिर्फ मजा और मौज उड़ाना, सुरा और सुन्दरी। इसके अतिरिक्त उनकी दृष्टि में और समस्त वस्तुयें तुच्छ हैं । वह अपने विज्ञान के बूते पर आकाश पताल को एक कर सकने की क्षमता का दावा रखता है तथा भगवान उसके लिये मात्र एक ढकोसला ही हैं। ऐसी शिक्षा और विचारों का प्रभाव यह हुआ कि आज का हमारा समाज ईश्वर तथा उसके विधानों के प्रति विमुख हो गया । अतः ऐसे व्यक्ति जब अपनी समस्त चेष्टाओं के प्रतिकूल असफलता ही प्राप्त करते हैं तो उनके लिये सिवा रोने के और कुछ रह ही नहीं जाता । मेरा तो यह विश्वास है कि यदि भारतवासी इस पाश्चात्य शिक्षा के फेर में न पड़ते तो इन्हें आज इतना रोना

न रोना पड़ता। पाश्चात्य सभ्य देशों की जो वर्तमान स्थिति है तथा परस्पर जिस स्वार्थ परता और विश्वास-घातकता का वह एक दूसरे के प्रति प्रमाण दे रहे हैं उससे इस मेरे कथन की पुष्टि होती है।

संसार का अहंभाव आज इतना बढ़ा हुआ है कि वह अपने में सब कुछ कर सकने की योग्यता मानता है। उसे ईश्वरीय सत्ता में इतना विश्वास नहीं जितना अपनी सत्ता में है। लेकिन जब असफलताओं की लगातार ठोकरें खाकर वह दुख के गर्त में गिरता है तो दोष ईश्वर ही को देता है अपने को नहीं।

सो परत्र दुख पावइ, सिर धुनि-धुनि पछिताइ।
कालहिं कर्महि ईस्वरहिं, मिथ्या दोष लगाइ॥

लेकिन उसे यह कैसे समझाया जावे कि वस्तुतः तू कुछ नहीं है। जो कुछ है वही सर्वेश्वर है। तू उसी सर्व शक्तिमान का एक अंश, उनके हाथ का खिलौना है तथा तेरे जीवन संचालन की डोर सदा सर्वदा उसी मालिक के हाथों में है। भलाई तो इसी में है कि हर घड़ी हर क्षण अपनी प्रत्येक इच्छा, प्रत्येक कार्य को उसीके कार्य में मिला दिया जाय। जिस कार्य में वह राजी हो उसी में हम खुशी क्यों न मानें।

मालिक तेरी रज़ा रहे और तू ही तू रहे
बाक़ी न मैं रहूँ न मेरी आरजू रहे

भला उस मलिक की मर्ज़ी के खिलाफ़ चल कर हम छिप कहां सकते हैं? दुनियां के रोने का कारण हम ऊपर बता आये हैं कि वह जब से भगवान से विमुख हुई और अपने को कर्ता मान बैठी तभी से दुखी है और रोती है। इस रोने की बीमारी का अचूक इलाज है मालिक की राजी में राजी।

संसार को फिर से उसी अध्यात्मवाद की शिक्षा लेना होगा, आर्ष ग्रन्थों तथा महर्षियों के आप्त वचनों की पुनरावृत्ति करके तदनुकूल अपने को बनाना होगा। तबही यह रोना बन्द हो सकता है। गीताकार ने बताया है कि मनुष्य को सारे काम सच्चे मन से लगन के साथ बिना फल प्राप्ति की कामना के करना चाहिये।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन्—(गीता) जिसके हम अधिकारी होंगे और जब होंगे उसका और तब हमको फल अवश्य प्राप्त होगा। उस सर्वज्ञ ने घोषणा कर दी है कि तुम कर्म करते जाओ, अपने कर्तव्य का पालन करते आओ, तुम्हारी समस्त उचित आवश्यकतायें पूर्ण होंगी। योग क्षेमका वहन मैं स्वयँ करूँगा—"*योगः क्षेमं वहाम्यहम्*" (गीता)

हम अपना काम करते जांय उकतायें नहीं। उसे स्वयं हमारी चिन्ता है। यदि हमें अपने कुटुम्ब की चिंता है तो उसे समस्त ब्रह्मांड का ध्यान है। फिर भविष्य के लिये और उकताना क्या उस सच्चिदानन्द घन ब्रह्म के प्रति विद्रोह नहीं है? जिन लोगों की उस मालिक के प्रति श्रद्धा और विश्वास है, जो उसके अटल नियमों को देख सुनकर उसकी राजी में राजी हैं वह कभी नहीं रोते तथा हर हालत में मस्त रहते हैं। पूज्य गोस्वामी जी ने कहा है:—

जिमि सुसि तन व्रण होइ गोसाईं।
मातु चिराउ कठिन की नाईं॥
जदपि प्रथम दुख पावै रोवै बाल अधीर।
व्याधि नासहित जननी गनत न सो सिसु पीर॥
तिमि रघुपति निजदास कर हरैं मानहित लागि।
तुलसिदास ऐसे प्रभुहिं कस न भजहु भ्रम त्यागि॥

पाठको "*हरेरिच्छा बलीयसी*" भगवान की इच्छा सर्वथा बलवती है। हमारे जीवन में जो अनेकों उलट फेर आते हैं वह सब उसी के हाथ में है। यह निश्चय है कि उसका कार्य हमारे लिये सदा मङ्गलमय ही होता है। हम अपनी अज्ञानता वश, क्षुद्र स्वार्थों की पूर्ति में बाधक समझकर भले ही असन्तुष्ट और दुखी हों और रोवें, परन्तु वास्तव में उस मङ्गलमय का विधान मङ्गल ही है। इसलिये हमें खुशी से सिर झुकाकर उस प्यारे की प्रत्येक अदा में, प्रत्येक कार्य में अच्छाई ही देखना और अनुभव करना चाहिये। इसी दशा में हमारा परम कल्याण है और हम सर्वथा सुखी और अनन्दित रह सकते हैं।

सन्त असन्त मिलन

[श्री जगन्नाथसिंह जी मुख्तार]

सठ सुधरहिं सत-संगति पाई ।
पारस परसि कुधातु सुहाई ॥

सत्संगति प्राप्त होने से सठों का सुधार हो जाता है। पारस पत्थर को स्पर्श कर कुधातु (लोहा) सुन्दर स्वर्ण बन जाता है। यहां लोहा पारस-स्पर्श से केवल सुवर्ण बनता है परन्तु सत्संगति प्राप्त होने पर शठ का सुधार हो जाता है। यहाँ सुधार शब्द का अर्थ लोहे का सोने के रूप में बदल कर सुधार होना मेरी तुच्छ बुद्धि में ठीक नहीं जँचता। सुधार शब्द का अर्थ यदि यह किया जाय कि सत्संगति प्राप्त कर शठ इस प्रकार विकार रहित हो जाता है कि वह स्वयं संत बन जाता है तो ठीक जान पड़ता है क्योंकि सन्तों के गुणानुसार यही अर्थ ठीक होगा। पारस की संगति से लोहे का केवल इतना ही सुधार हो जाता है कि लोहे से ऊपर जाकर सोना बन जाता है। सन्त-मिलन द्वारा जीव आवागमन से मुक्त हो जाता है। जीवों का सच्चा सुधार क्या है ? यह जीव प्रभु के चरणों से बिछुड़-कर भवसागर में डूबता उतराता रहता है, उसे ठहरने का कहीं स्थिर अवलम्ब नहीं मिलता परन्तु यदि भगवान की अहैतुकी कृपा सुलभ हो गई तो फिर क्या पूछना है; उसका बेड़ा पार लग गया। जहां से बिछुड़कर भवसागर में इधर भटकता फिरता था, पुनः उन्हीं श्री चरणों में पहुँच जाता है। इस प्रकार वह आवागमन से मुक्त हो जाता है।

नर तनु भव बारिधि कहँ बेरो ।
सनमुख मरुत अनुग्रह मेरो ॥

भवसिन्धु को पार करने के लिये मनुष्य शरीर बेड़ा है। जिस प्रकार कोई नौका समुद्र अथवा जल में फँस गई हो और उसे सन्मुख वायु (सामने की हवा) मिल जाय तो वह नौका पुनः लौट कर उसी स्थान पर आ जायगी जहाँ से उसने प्रस्थान किया था। यदि नौका पूर्व दिशा की ओर जा रही हो और बरा-बर पूर्व ही चलती जाय और अपने प्रस्थान-स्थान को न लौटे तो कहा जायगा कि नौका भूल गई, घर नहीं लौटी। व्यापारी माल लेकर अपने घर आता है उसी प्रकार यह जीव संसार में व्यापार करने निकला है। इसे जब तक रामनाम का सौदा न मिल जाय उसका व्यापार ठीक नहीं हुआ। यदि पूर्व दिशा की ओर जाने वाली नौका को सन्मुख वायु (पुरवा हवा) मिल जाय तो वायु उसे पीछे ढकेल कर पश्चिम दिशा में लौटा देगी और नौका उसी स्थान पर पुनः लौट आयगी जहाँ से चली थी। "*बाह्यतः*" यह क्रिया विपरीत जान पड़ती है। परन्तु विपरीत नहीं है। जीव ईश्वरांश है। ईश्वर से निकल कर संसार में जन्म लिया है—'*ईश्वर अंस जीव अविनासी ।*' जब पुनः ईश्वर ही में लीन होगा तब जीव का सुधार होना कहा जायगा और तब वह आवागमन से मुक्त हो जायगा। जब भगवान जीवों पर अनायास कृपा करते हैं तो अपना सान्निध्य प्राप्त कराने के लिये सन्तों से भेंट करा देते हैं। अर्थात् उन्हें सत्संगति सुलभ कर देते हैं —

'बिनु हरि कृपा मिलहिं नहिं सन्ता ।'
'सन्त बिसुद्ध मिलहिं परितेही ।
चितवहिं राम कृपा करि जेही ॥
पुन्य पुँज बिनु मिलहिं न संता ।
सतसंगति संसृति कर अन्ता ॥'

सत्संगति संसृति (आवागमन) से मुक्त कर देती है। सन्तों के दर्शन तथा उपदेश से वह जीव स्वयं सन्त बन जाता है और अन्त में अपने अंशी में सायुज्य होकर पुनः जन्म-मरण दुख से मुक्त हो जाता है। पारस में केवल लोहा को सुवर्ण बनाने की शक्ति है। परन्तु उसमें यह शक्ति नहीं है कि वह लोहे को पारस बना दे। पारस तो सोने से भी

अधिक मूल्यवान है, क्योंकि पारस ही लोहे का रूपान्तर करता है। जब पारस लोहे को पारस बना लेता तब लोहे की बड़ाई थी। इसके विपरीत सन्त लोग शठों को इस प्रकार सुधार देते हैं कि वे स्वयं सन्त बन जाते हैं। यही शठ का सच्चा सुधार है। किसी कवि के शब्द हैं:—

पारस पत्थर सन्त में, बहुत अन्तरा जान।
इक लोहा सोना करे, इक कर आपु समान॥

सन्त सबको समान रूप में देखते हैं। उनके मन में समस्त संसार '*सिया राम मय*' है। सब बराबर हैं।

बन्दउँ संत समान चित, हित अनहित नहिं कोउ।
अंजलि गत सुभ सुमन जिमि, सम सुगंध कर दोउ॥

संत की उपमा ९ के अंक से तथा असंत (शठ) की ८ के अंक से दी गई है। ९ का अंक द्विगुण, त्रिगुण, सहस्रगुण, लक्षगुण जो भी किया जाय अपने मूल्य को नहीं बदलता, सर्वदा समान रूप में ९ ही रहेगा। उसी प्रकार सन्त बड़े से बड़ा ज्ञान, शक्ति आदि प्राप्त कर भी अपने विचार में कोई परिवर्तन नहीं करता। सर्वदा समभाव में रहता है।

सन्त—९ × २ = १८ = १ + ८ = ९ (सन्त)
९ × ३ = २७ = २ + ७ = ९ (सन्त)
९ × १०००० = ९०००० = ९ + ०००० = ९

परन्तु असंत अर्थात् शठ जब अपनी जान में उन्नति करना समझता है तो वास्तव में वह नीचे गिरता जाता है:—

असंत—८ × २ = १६ = १ + ६ = ७ एक न्यून होकर नीचे उतरा।
८ × ३ = २४ = २ + ४ = ६ दो न्यून होकर और नीचे उतरा।

इसी क्रम से निरंतर घटता रहता है। परन्तु इस भांति तो बेचारा असन्त कभी उन्नति नहीं कर सकेगा। असन्त केवल तभी उन्नति करके सन्त बन सकता है जब उसे सन्त संयोग हो जाय। और किसी भांति उसकी उन्नति असम्भव है। संत के संयोग से असंत क्या होता है, देखिये।

९ × ८ = ७२ = ७ + २ = ९ (सन्त) बन गया।

सन्त ने असन्त को अपनी संगति में अपना रूप दे दिया। कल जो असन्त था आज वही सन्त होकर शोभा दे रहा है।

ठीक यही दशा भगवन्त की है। पापी जीव भी जब प्रभु के चरणों में पहुँच जाता है तो भगवान तुरन्त उसे अपने में मिलाकर अंशी-अंश एक रूप में हो जाते हैं। भगवान उसे सायुज्यमुक्ति प्रदान कर देते हैं:—

कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू।
आएं सरन तजउं नहिं ताहू॥

सत् संगति से शठ का सुधार हो जाता है इस प्रकार नहीं जिस प्रकार पारस लोहे को सोना बना देता है प्रत्युत सन्त उसका सच्चा सुधार करके उसे अपने समान बनाकर अपने में मिला लेता है। पारस को स्पर्श कर लोहे में केवल इतना सुधार हो जाता है कि वह सुवर्ण बन जाता है परन्तु लोहा फिर भी पारस से नीचे ही रहता हैं, उसकी बराबरी नहीं कर सकता। परन्तु सन्त तो अपने समान बना लेते हैं। सत्संगति से शठों का सच्चा सुधार इसी प्रकार होकर उनका कायापलट हो जाता है। सुधार शब्द का ठीक अर्थ मेरी तुच्छ बुद्धि में इसी प्रकार के सुधार से है। साधुओं के गुणों का वर्णन कोई नहीं कर सकता। स्वयं श्रीमुख वाणी है-

सुनु मुनि साधुन के गुन जेते।
कहि न सकहिं सारद स्रुति तेते॥

महात्मा तुलसीदास जी ने तो उपरोक्त उपमा केवल सन्तों के अगणित गुणों में एक गुण की उपमा स्वरूप लिखा है। वे तो स्वयं अपनी लेखनी को सन्त-गुण-वर्णन में असमर्थ पाते हैं:—

सो मो सन कहि जात न कैसे।
साक बनिक मनि गुन गन जैसे॥

"बोलिए सन्त तथा भगवन्त की जय"

प्रभु प्रताप

(श्री रामसुपाल जी 'भट्ट')

हमारे गोस्वामीजी ने यह स्पष्ट कर दिया है कि हर शरीरधारी मानव को अपने लोक एवं परलोक के सुधार हेतु हर क्षेत्र में कार्य करते हुये श्री राम 'प्रताप' का स्मरण कर लेना या करते रहना बहुत ही आवश्यक है। रघुवीर 'प्रताप' ही सफलता का एक मात्र आधार है। उदाहरणार्थ जीव कोटि का पाठ करते हुये श्री लखनलाल जी को ही देखिए। उन्होंने श्री विदेह सभा में काम करने का जो भी विचार किया वह भगवान के प्रताप स्मरण और उसी के बल से। श्री लखनलाल जी ने यह प्रगट कर दिया कि— *'तव 'प्रताप' महिमा भगवाना। का बापुरो पिनाक पुराना ॥'* और *'तोरौं छत्रक दण्ड जिमि, तव 'प्रताप' बल नाथ।'* आदि से बिलकुल स्पष्ट है कि उन्होंने जो कुछ करने का साहस किया वह श्री राघव जी के 'प्रताप' से ही, अपने बल से नहीं। यही कारण है कि परशुराम जी जैसे-- *'क्षत्रं क्षयं कुर्वते'* से भी सुरक्षित रह सके।

इसी प्रकार श्री हनुमान जी ने भी अपनी लंका की वापसी यात्रा पर श्री राम जी से बताया कि अति विचित्र लंकापुरी में मैंने जो भी कार्य किये हैं वह आपके 'प्रताप' से ही। मेरा उसमें कोई भी श्रेय नहीं है– *'सो सब तव 'प्रताप' रघुराई। नाथ न कछू मोरि प्रभुताई ॥'* प्रचण्ड अग्निकाण्ड में इसी 'प्रताप' ने सहायता की थी।

इसी प्रकार श्री बालि सुत ने राक्षस राज की सभा में 'प्रताप' स्मरण कर पैर ही रोप दिया और अपने लक्ष में भर पूर सफल हुये—

राम 'प्रताप' सुमिरि कपि कोपा।
सभा माँझ पन करि पद रोपा ॥

इसी प्रकार जनकपुरी से आए हुये विवाह संदेश वाले दूतों ने भी श्री चक्रवर्ती जी के सामने राम 'प्रताप' पर ही प्रकाश डाला था कि आपके सुपुत्र पूछने लायक नहीं हैं क्योंकि—

जिनके जस 'प्रताप' के आगे।
ससि मलीन रवि सीतल लागे ॥
सो 'पूंछन' जोग न तनय तुम्हारे।
पुरुष सिंह तिहु पुर उजियारे ॥

समुद्र ने साफ ही कह दिया था कि— *'प्रभु 'प्रताप' मैं जाब सुखाई। उतरहिं कटक न मोरि बड़ाई ॥'* श्री बिभीषण जी ने भी इसी बात पर जोर दिया कि—

तब लगि बसत जीव मन माहीं।
जब लगि प्रभु 'प्रताप' रवि नाहीं ॥

श्री जाम्बवन्त जी ने भी यही कहा था— *'प्रभु 'प्रताप' बड़वानल भारी। सोखेउ प्रथम पयोनिधि बारी ॥'* मन्दोदरी ने भी तो रावण से छिपाकर नहीं रक्खा। उसने प्रभु 'प्रताप' पर प्रकाश डालते हुये रावण को भली प्रकार से सचेत किया कि —

बान 'प्रताप' जान मारीचा।
तासु कहा नहिं मानेसि नीचा ॥

श्री सुग्रीव जी ने भी सीतान्ववेषण के हेतु बंदरी सेना को प्रभु 'प्रताप' कह कर ही भेजा था —

प्रभु 'प्रताप' कहि सब समुझाए।
सुनि कपि सिंहनाद करि धाए ॥

अम्बा श्री सीताजी ने श्री हनुमान जी महाराज को अशोक वाटिका में प्रभु 'प्रताप' पर ही संदेश दिया था।

यहाँ तक कि श्री राम जी भी अपना 'प्रताप' स्मरण करते हैं और यह स्मरण माधुर्य जगत से ऐश्वर्य जगत का होता है। अम्बा जी ने कहा था कि हनुमान जी तुम —

तात सक्रसुत कथा सुनायहु।
बान 'प्रताप' प्रभुहि समझायहु ॥

यहाँ तक कि मानस के चारों वक्ता भी 'प्रताप' पर ही जोर देते हैं —

(१) श्री भोलेनाथ जी—

श्री रघुवीर 'प्रताप' ते, सिन्धु तरे पाषान ।
ते मतिमंद जे राम तजि, भजहिं जाइ प्रभु आन ॥

(२) श्री याज्ञवल्क जी—

राम 'प्रताप' प्रबल कपि जूथा ।
मर्दहिं निसिचर सुभट बरूथा ॥

(३) श्री काक भुसुन्डि जी—

राम कृपा बिनु सुन खगराई ।
जानि न जाय राम 'प्रभुताई' ॥

(४) श्री गोस्वामी जी—

जदपि कवित रस एकौ नाहीं ।
राम 'प्रताप' प्रगट यहि माहीं ॥

एतदर्थ यह सिद्ध हुआ कि बिना राम 'प्रताप' के किसी भी क्षेत्रमें सफलता असम्भव है । उक्त प्रमाणों से यह स्पष्ट हो गया कि जब हनुमान, अंगद आदि प्रभु 'प्रताप' पर सफलता मानते हैं तब '*नर पामर कर केतिक बाता* ।' अर्थात मानव बिना प्रभु 'प्रताप' के हर दशा में असफल रहेगा ।

जय श्री सीताराम

मीरा मञ्जूषा

मीरा मञ्जूषा के लिये हमें निम्न लिखित पुस्तकें चाहिये । पाठकों से निवेदन है कि इनके संग्रह में सहायक होने की कृपा करें । आपके पास इनमें से कोई हों तो कृपया भेजें । हम भेंट में भी स्वीकार कर सकेंगे, मूल्य भी दे सकेंगे । अन्य कोई उपयुक्त पुस्तकें हों तो उनके सम्वन्ध में भी पत्र व्यवहार करें ।

१—मीराबाई का जीवन चरित्र—ले० मुन्शी देवीप्रसाद मुन्सिफ, प्रकाशक जैन प्रेस लखनऊ, सं० १९५५ । २—श्री मीराबाई—ले० श्री सीताराम शरण भगवान प्रसाद, प्रकाशक खड्ग विलास प्रेस वांकीपुर, सं० १९७९ । ३—भक्त मीरा—ले० व्यथित हृदय, प्रकाशक धर्म ग्रन्थावली दारागंज प्रयाग, सन १९३३ । ४—मीरा की पदावली—ले० सदानन्द भारती, प्रकाशक एस० एस० मेहता एण्ड ब्रदर्स, बनारस सिटी सं० १९९२ । ५—मीरा—ले० वामदेव शर्मा. प्रकाशक संत कार्यालय प्रयाग, सन १९३६ । ६—मीराबाई-सहजोबाई- दयाबाई का पद्य संग्रह—ले० वियोगी हरि, प्रकाशक गान्धी पुस्तक भंडार प्रयाग, सं० १९८७ । ७—भजन मीराबाई फर्रुखावाद में छपा । ८—भजन मीराबाई—अमृतसर । ९—मीरा महाकाव्य—तुलसीराम शर्मा 'दिनेश', मीरा मंदिर, बम्बई ।

मानस यज्ञ रमपुरा

गत वर्ष की भाँति इस वर्ष भी माघ कृष्ण पंचमी से त्रयोदशी ता० २८-१-५९ से ६-२-५९ तक भारत के सुप्रसिद्ध रामायणी पूज्य पं० श्री रामरचित जी महाराज मानस-भूषण की अध्यक्षता में मानस यज्ञ होगा । सभी संघ की शाखाओं से निवेदन है कि इस परम पुनीत धार्मिक कार्य में सम्मिलित हों ।

निवेदक
गजाननसिंह वर्मा, रमपुरा पो० सम्बलपुर, जिला दुर्ग

मर्यादापालक रावण

(श्री नत्थूलाल जी थवाइत, साहित्य-भूषण)

आज के इस युग में जब कि मर्यादा पुरुषोत्तम राम का उज्ज्वल चरित्र, आदर्श देवत्व प्रत्येक आस्तिक भारतीय के हृदय में अपना विशिष्ट स्थान निर्धारित कर चुका है उनके प्रतिद्वन्दी रावण को 'मर्यादापालक' कहना निश्चय ही असंगत प्रतीत हो रहा होगा। परन्तु यदि हम स्थिर बुद्धि से अनुसंधान करें तो स्पष्ट हो जावेगा कि 'मानस' जैसे आदर्श ग्रन्थ में मर्यादा हीन चरित्र की उपलब्धि असम्भव ही है। आज जन साधारण द्वारा मानस का प्रतिनायक रावण सर्वाधिक कलंकित, अमर्यादित एवं उच्छृंखल माना जा रहा है परन्तु क्या हम यह मानने के लिये प्रस्तुत हो जांय कि ज्ञानाग्रगण्य तुलसी ने अपने मर्यादापूर्ण आदर्श ग्रन्थ में 'विमल चन्द्रमा के कलंक की भाँति प्रतिनायक के चरित्र को भी कलंकमय ही चित्रित करने की भूल की है? यदि हम तत्सम्बन्धित शब्दावली, उपकरण एवं परिस्थिति पर निष्पक्ष दृष्टिपात करें तो यह स्पष्ट हो जावेगा कि मानस के रचयिता ने उसके विलक्षण मर्यादापालन का चित्रण बड़ी दूरदर्शिता एवं मार्मिकता के साथ किया है।

रावण को विश्वास था—

"मनुषेणैव में मृत्युमाह पूर्वं पितामहः।
मानुषोहि न मां हन्तुं शक्तोऽसि भुवि कश्चिनः॥
ततो नारायणः साक्षान्मानुषोऽभूत्र संशयः।
रामो दाशरथिर्भूत्वा हन्तु समुपस्थितम्" ॥

तभी तो सूर्पणखा के विलाप के पश्चात् उसने निश्चय किया —

सुर रंजन भंजन महिभारा।
जौं भगवन्त लीन्ह अवतारा॥
तौ मैं जाइ बैरु हठ करऊँ।
प्रभु सर प्रान तजे भव तरऊँ॥

यहां शब्दावली से स्पष्ट विदित हो रहा है कि प्रभु शर से केवल रावण ही अकेला प्राण तजने का निश्चय कर रहा है परन्तु ऋषियों के समक्ष प्रभु जो यह प्रतिज्ञा कर चुके हैं—'*निसिचरहीन करौं महि, भुज उठाइ पन कीन्ह*।' यदि वे केवल रावण का ही विनाश करते तो शेष राक्षसों का क्या होता? अस्तु वे आदि शक्ति सीता जी को पावक में निवास करने की आज्ञा देकर 'ललित नरलीला' करने के लिये कुछ निश्चय सा करने लगे।

तत्क्षण ही मनस्वी रामके मानस से अतिप्रबल युगान्तरकारी भावनायें अंतरिक्ष में तरंगित होने लगीं। चपेट में आ, अगाध मानस तरंग में गोता खाता हुआ मानो रावण निशिचर-कुल-नाश हेतु मारीच के समीप गया। कहाँ तो वह अकेला मरने का निश्चय कर चुका था और कहाँ निशिचर-कुल-नाश का बीजारोपण ही हो गया। मारीच के सदुपदेश उस पर तनिक भी प्रभाव न डाल सके। माया विमोहित जो था वह। राम की मानस लहरी उस पर अपना प्रभाव जो जमाये थी। विवश था वह सीता हरण के लिये।

मानस की नायिका सीता सदा से ही प्रतिनायक से मातृत्व का आदर पाती रहीं। तभी तो 'कर कमलन्ह पर मराल इव शम्भु सहित कैलाश' पर्वत को धारण करने वाले रावण ने स्वयंवर के समय पिनाक-भंग की भावना न करके—

'रावन बान छुआ नहिं चापा'

चाप की मात्र प्रदक्षिणा की एवं जगज्जननी सीता को मातृत्व के पद पर अधिष्ठित किया। आगे भी वह मन्दोदरी के सामने सीता जी को जगज्जननी के रूप में ही स्वीकार करता है —

'जानामि राघवं विष्णुं, लक्ष्मी जानामि जानकीम्।'
एवं '*रामेण निधनं प्राप्य यस्यामीति परमंपदम्॥*'

(आध्यात्म रामायण)

वह राम शर से मर कर परमपद प्राप्त करने का निश्चय भी व्यक्त करता है।

सीता हरण के समय पंचवटी में भी उसका व्यवहार प्रसंशाप्रद ही रहा। प्रत्यक्ष में तो वह ऐसे शब्दों का प्रयोग करता है जो सुनने में भयावने लगें परन्तु समझने में मधुर। भावार्थ को न समझते हुये शब्द जाल से आवेष्ठित वाह्य भावनाओं से तुनक कर सीता जी जब कहती हैं —

"जिमि हरि बधुहिं क्षुद्र सस चाहा।
भयेसि काल बस निसिचर नाहा॥"

तब रावण अपने अभिनय को सफल समझता है और प्रत्युत्तर स्वरूप कटु शब्द सुनाने, नाराज होने या दण्डित करने के बदले—

'मन महुं चरन बन्दि सुख माना'

मन ही मन चरण कमलों की वन्दना करने लगता है। भला एक विश्वजयी सर्वशक्तिमान सम्राट एक तापस नारी के मुख से मुंह पर ही भर्त्सना सुनकर सहन कर सकता है? असम्भव! ऐसी विषम विचित्र परिस्थिति में भी मन ही मन वन्दना करना निस्संदेह महानता का ही द्योतक है। यहाँ हम निर्विकार रूप से कह सकते हैं कि उसने सदा सीता जी को जननी के रूप में ही स्वीकार किया है।

जहाँ एक तरफ रावण को निशिचर-कुल-सम्राट सुलभ मर्यादा का पालन करना है वहीं अपने व्यक्त में शत्रु (एवं अन्तर में इष्ट देव राम) के प्रति शत्रुभाव भी व्यक्त करना है। एक ही समय में दो विरोधी कार्य सम्पादित करना है उसे। अपनी कर्त-व्यनिष्ठा, अपूर्व शौर्य, विवेक एवं दृढ़ विश्वास के बल वह सफलता पूर्वक इसका निर्वाह भी कर लेता है। सीता जी से वह कहता है:—

"कह रावन सुनु सुमुखि सयानी।
मन्दोदरी आदि सब रानी॥
तव अनुचरी करौं पन मोरा।
एक बार बिलोकु मम ओरा॥"

प्रसंगानुकूल साधारण शाब्दिक अर्थ तो ऐसा प्रतीत हो रहा कि मानो रावण नारीत्व स्वीकार करने के लिये अनुरोध कर रहा है परन्तु शब्द रचना एवं उपादेयता पर विचार करते हुये ऐसा कदापि नहीं कहा जा सकता। अनुचरी, सयानी, विलोकु शब्दों पर ध्यान देने से वास्तविक तात्पर्य निर्विवाद रूप से सिद्ध हो जायगा। जैसा कि अभी भी प्रचलित है सवति (सौत) सवति की सेवा करना कभी भी स्वीकार नहीं करती। फिर पटरानी मन्दोदरी प्रस्तावित छोटी रानी की सेवा करे! असम्भव!! इन शब्दों के द्वारा तो प्रतिनायक सीता जी के सयानेपन एवं विवेकशक्ति को जागृत करते हुये यह कहना चाहता है—"हे मातृ सीते विवेक पूर्वक विचार करते हुये मेरी तरफ देखो (विलोकु) मुझे समझने की चेष्टा करो फिर तो तुम होगी मेरी माँ एवं मन्दोदरी आदि रानियाँ होंगी तुम्हारी-पतोहू किंकरी।" अपनी उपस्थिति भर में केवल इसी एक बात को विभिन्न तरीकों से प्रदर्शित करके अपनी निर्दोषिता प्रमाणित करने की चेष्टा में रत—*'बहु-विधि खल सीतहिं समुझावा'* इन शब्दों के द्वारा जहाँ वह अपनी आंतरिक निर्दोष भावना व्यक्त करता है वहीं दूसरी ओर राज-कुल सुलभ शान भी रखने में सफल हो जाता है।

भव्य प्रासाद से काफी दूर अशोक-वाटिका में वृक्ष के नीचे सीता जी का रक्खा जाना और वह भी ऐसी राक्षसियों के बीच जो राम भक्ता हों।' हरण की एक लम्बी अवधि के बाद केवल एक ही बार अपनी रानियों, सेविकाओं समेत उपस्थित होना क्या उसकी निर्दोषिता प्रमाणित नहीं करते? लंका का अग्नि, मरुत, जल विजयी वैभवशाली सम्राट और उसकी आराध्य (तथाकथित नारी रूप में) रहे सज्जित प्रकोष्ठ की छाया से भी दूर—वन में—वाटिका में। उसकी पुरी में निवास करें रामभक्त-विभीषण, माल्यवंत, त्रिजटा, प्रहस्त……। मर्यादा-पालन के लिये प्रमाण स्वरूप यह भी आवश्यक ही था। इस विरोधाभास से ही रावण के सच्चे चरित्र की झाँकी मिल जाती है।

हाँ यत्र तत्र कभी कभी उसे राम के विरुद्ध भी कटु शब्दों का प्रयोग करना पड़ा है। लंकाकाण्ड में राम को युद्ध के लिये ललकारते हुये वह कहता है—

"हौं मारिहौं भूप दोऊ भाई' ...।"
'आज करौं खल काल हवाले ॥"

प्रसंग पर दृष्टिपात करने से अनायास ही इसका निराकरण हो जाता है। उसकी सेना रामदल की मार से घबड़ाकर तितर-बितर हो रही है। ऐसी स्थिति में उसने वही किया जो एक सेनापति को रौब जमाने के लिये करना चाहिये था। फिर ललकारते हुए रावण रामदल में पिल पड़ा। अपने सम्राट की रक्षा के लिये भागती हुई सेना भी लौट आई। मर्यादापुरुषोत्तम राम ने भी तो उसके इस कथन को बुरा नहीं माना। उन्होंने तो—

'सुनि दुर्वचन काल बस जाना।
बिहँसि बचन कह कृपा निधाना ॥"

इन शब्दों द्वारा उसकी पवित्रता ही स्वीकार की। इसी तरह से जहां भी उत्तेजनामय अवसर समुपस्थित हुआ है प्रतिनायक ने तापस, तापसी, तपस्विन्ह आदि विरुद्ध शब्दों का ही प्रयोग किया है। इसके सिवाय यदि रावण राम का हृदय से उपासक नहीं होता तो भरे दरबार में अंगद, हनुमान, विभीषण आदि वर्णित राम का विशद गुणगान धैर्य के साथ कभी नहीं सुनता। मन्दोदरी ने भी जब भी अवसर मिला है रावण के सामने विशद-रूप से राम का गुणगान ही किया है और रावण ने भी उसे दबाने का प्रयास न करके—

'समुझत सुखद सुनत भय मोचनि।'

कह कर प्रोत्साहन ही किया है। अस्तु—

यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि रावण रामभक्त था, पूर्णतः मर्यादापालक था। उसके सान्निध्य में रहा करते थे भक्त प्रवर विभीषण। स्वयं राम ने भी तो स्वीकार किया है—

"यहि के हृदय बस जानकी मम जानकी उर बास है।
मम उर भुवन अनेक लागत बान सब कर नास है ॥"

और त्रिजटा के इन शब्दों के अनुसार ही रामचन्द्र जी भी उसका विनाश करने में असफल हो रहे थे। मृत्यु के पश्चात् जब—

"रावणस्य च देहोत्थं ज्योतिरादित्यवत्स्फुरत्
प्रविवेश रघुश्रेष्ठं देवानांपश्तो सताम्"
"तासु तेज समान प्रभु आनन, हरषे देखि संभु चतुरानन"

वह राम रूप में विलीन हो जाता है तब देवताओं के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहता। वे अनायास ही चिल्ला उठते हैं—

"देवा उचुरहो भाग्यं रावणस्य महात्मनः"

वसन्तोत्सव

वसन्तोत्सव एक प्राचीन पर्व है। इसमें पूर्व वर्षों के सदृश इस वर्ष भी रामवन में तीन दिन का मेला लगेगा। माघ शुक्ल ४, ५ तथा ६ तारीख ११, १२, १३ फरवरी मेले के दिन होंगे।

तुलसी संग्रहालय का मुख्य हाल तैयार हो गया है इसमें ही प्रदर्शनी होगी। मानस सर भी तैयार हो गया है और दर्शनीय है। इसके तुलसीघाट में आप स्नान करेंगे या याज्ञवल्क्य घाट में। दोनों पर मंदिर हैं। पश्चिम घाट के मंदिर में विराजमान शंकर भगवान की पूजा तो आप करेंगे ही, और देखेंगे उनका अभिषेक करती पंचधारा। श्री मारुति भगवान की वसन्ती झाँकी किसे आकर्षित न करेगी। सिख बन्धुओं को अपने गुरुद्वारे में उत्सव मनाने का अवसर प्राप्त होगा। आशा है तब तक गांधी घर भी निर्माण हो जायगा। हम उद्योग करेंगे कि इसका उद्घाटन मेले के अवसर पर हो। श्रेष्ट व्यासों के प्रवचन होंगे। बाजार आदि और भी अनेक क्रम चलेंगे। आकर आनन्द लाभ करें।

—शारदाप्रसाद

अणु-अस्त्रों की घुड़दौड़ में भारत की दिशा

(श्री ब्रह्मदेवसिंह जी 'निराश')

भारतीय संस्कृति के रजतपट पर राघवेन्द्र के चरित्र चित्रण की जो गरिमा महामना गोस्वामी जी ने अर्जित की है वह अद्वितीय है। गरीब की झोपड़ियों से लेकर धन-धान्य पूर्ण प्रासादों तक 'रामायण' की विशद गाथा की ध्वनि प्रसारित होती है। मानस के प्रश्न को लेकर विचारकों की दृष्टि में अर्थ सामञ्जस्य की भावना का मतैक्य न भी हो, पर यह मान लेना क्या युक्तिसंगत नहीं होगा कि काव्य की सरसता के दर्शन में काव्य-गुण ही लुप्त होगा।

मानस प्रणेता की भाव मयी शैली की यह प्रमुख मान्यता है कि किसी भी विषय में उन्होंने अपना जो चिन्तन दिया है वह इतना तलस्पर्शी है कि भारत ही नहीं अपितु विश्व के प्रत्येक जिज्ञासु को उससे समाधान मिलने की आशा की जा सकती है। उनके पथदर्शी निर्णय को कोटि-कोटि जनता प्रकाश-स्तम्भ मान कर चलने में अपना गौरव अनुभव करती है।

तत्वचिन्तकों द्वारा मानस संथन का जो सुन्दर कार्य होता रहा है वह जन-जीवन के लिये कितना उपयोगी हुआ है इसे बताने की आवश्यकता नहीं है। मानस के रस को रसिक अपने अपने ढंग से अपनाने में ही आनन्द विभोर हो उठते हैं। साधु-सन्यासी, योगी-भोगी, गृहस्थ, राजा-रंक सब के लिये उनकी इच्छा के अनुसार ढल जाने का महत्व यदि किसी को प्राप्त है तो वह है श्रीमद्गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरित मानस।

भौतिक विज्ञान अपनी चरम सीमा पर है। आये दिन अनेकानेक ध्वंसात्मक अणु-अस्त्रों का सृजन हो रहा है, परीक्षण किया जा रहा है, बड़े बड़े राष्ट्रों में होड़ लग रही है, कौन आगे निकल जाए ? मानव मौत के कगार पर खड़ा है, यह क्या है ? विनाश का साधन, विश्व की दृष्टि वैज्ञानिकों की करामात की ओर लगी है! मुट्ठी भर वैज्ञानिकों ने सारे विश्व को चकाचौंध कर दिया है। भारत इस दिशा में सतर्क है, वह शान्ति चाहता है, शान्ति की योजनाएँ बना रहा है, प्रस्ताव रख रहा है। कहाँ तक वह सफल होगा, कहना संभव नहीं; पर होगा अवश्य। अब आप ही सोचें कि बुद्धिवादी भारत को ही इसकी चिन्ता सर्व प्रथम क्यों हुई ? उत्तर स्पष्ट है। भारत के ऋषि-मुनियों, साधु-महात्माओं, आचार्यों-विद्वानों ने जो निधि विरासत में छोड़ी है वह गीता-रामायण, उपनिषद्-पुराण आदि मानवता प्रदान करने वाले ही तो हैं। जिनके बताए मार्गों पर चल कर मानव--मानव ही बना रहेगा यह निर्विवाद सत्य है।

पश्चिमी हवा भारत के निवासियों पर जिस अंश तक व्याप गई है, उसका परिणाम यत्र तत्र जिस रूप में दिखाई देता है। उसका चित्रण करते हुये एक आह निकल पड़ती है। कृषि-प्रधान देश भारत के कृषक की संतान आज नौकरी की तलाश में है, वे भारतीय गृहणियाँ जिनका कि यश गाया जाता था पुरुष से किसी कदर कम नहीं दीखती हैं, आफिसों में वे भी काम करने की इच्छुक हैं। परिणाम स्वरूप लगता है, कि कुछ ही वर्षों में खेत और रसोई खाली हो जाएगी, आफिस और कैन्टीन भर जाएंगे। यह आज के भारत का कर्तव्य भला मानवता को किस ताक पर रखने को उद्यत है ?

आवश्यकता है, व्यक्ति, समाज, तथा राष्ट्र के उत्थान की। वह तभी सम्भव है जब कोई सुगठित सांस्कृतिक संस्था या दल इस ओर अग्रसर हो। सुप्रसिद्ध जैनाचार्य तुलसी ने जो तेरापंथ साधु संघ के अष्टम आचार्य हैं अपने ६५० साधुओं को इस ओर प्रेरित किया है। 'अणुव्रत-आन्दोलन' मानव-मानव को चरित्र शुद्धि की दिशा प्रदान कर रहा है।

रामवन का कार्य विशेष रूप से स्तुत्य है। उन्नीस वर्ष पूर्व मानस प्रचार की दृष्टि से श्री शारदाप्रसाद जी (मानस संघ मन्त्री) ने एक छोटे रूप में कार्यारम्भ किया था। उस समय यह पता तक न था कि मानस संघ की स्थिति इतनी उच्च होगी। आज मानस संघ के चालीस हजार से अधिक सक्रिय सदस्य, दो हजार से अधिक शाखाएँ देश के कोने-कोने में अपना कार्य कर रही हैं। रामवन सांस्कृतिक केन्द्रों में अपना अद्वितीय स्थान रखता है। तुलसी पुस्तकालय एवं संग्रहालय, श्री मारुति विग्रह, राम-नाम मन्दिर, गौशाला, साधक कुटीर, मानस सर आदि प्राचीन भारतीय सभ्यता की याद दिलाते हैं। हम अपनी शाखा माधवकुंज एवं सम्पर्क में आने वाले मानस प्रेमियों की ओर से रामवन के निर्माण में जीवनदानी ६२ वर्षीय श्री शारदाप्रसाद जी को बधाई देते हैं, जो २७ अक्टूबर १९५८ में ६३ वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। श्री मारुतिलाल आपको दीर्घायु प्रदान करें हम सब की यही आकांक्षा है। रामवन सदैव प्रगति करता रहे, मानव को नैतिक दिशा देता रहे। यह चिर अभिलाषा मारुत-सुत के चरणों में निवेदित है।

मानस के चमत्कार

(१) श्री काशीराम जी कार्य वश इन्दौर गये। लौटते समय डाकगाड़ी में बड़ी भीड़ थी। आप खाली डिब्बा न मिलने के कारण सर्वेन्ट डिब्बा में बैठे। उसमें भी ८ के स्थान में २६ आदमी थे। टी० टी० आई० ने ८ आदमियों को उसमें से उतार दिया और आप से भी उतरने को कहा तब आपने *"जाकर नाम लेत जग माहीं। सकल अमंगल मूल नसाहीं॥" "करतल होहिं पदारथ चारी। तेइ सिय राम कहेउ कामारी॥"* चौपाई का जाप किया। फलस्वरूप सब विघ्न शान्त हुआ। आपको आदर से बैठने को स्थान दिया गया। —राधेश्याम, व्यथनी

(२) श्री गयाप्रसाद जी स्थापक की धर्मपत्नी जन्म से ही पागल थी। हमेशा अनर्गल बकना, रात्रि में निद्रा का न आना लक्षण थे। करीब ४ मास से तो गर्दन अकड़ गई थी जिससे सिर हिलाया करती थी। अनेकों उपचार होने पर भी लाभ प्राप्त नहीं हुआ। श्री स्थापक जी ने उन्हें पुरुषोत्तम मास से प्रतिदिन रामचरित मानस सुन्दर सोपान का पाठ सुनाया। १०८ पाठ सुनने पर वे पूर्ण स्वस्थ हो गई तथा उपरोक्त सभी बिमारी भी दूर हो गई। —रा० च० नेमा, बसुरिया

(३) अनावृष्टि के कारण आस-पास के गावों में त्राहि त्राहि थी। सर्व सम्मति से अखण्ड कीर्तन २४ घन्टे का किया गया। कहना न होगा कि रात्रि से ही अखण्ड वृष्टि शुरू हो गई। सभी के मुख से यही निकलने लगा कि—*'मज्जन फल पेखिय ततकाला।'* —केशवप्रसाद सिंह, सर्सी

(४) श्री ओंकारलाल जी अग्रवाल श्री इच्छापूरन हनुमान जी के मन्दिर के सामने १० महीने से लगातार खड़े खड़े श्री मानस का एक पाठ पूरा प्रतिदिन कर रहे हैं। ब्रह्मचर्य जीवन तथा एक समय भोजन, करते हैं। जब से ऐसा नियम किया तब से उनका घर सम्पन्न होता जा रहा है।

—रामगोपाल शर्मा, ईसागढ़

'हिय हारा भय मानि'

(श्री हरिमोहनसिंह जी)

बहु छल बल सुग्रीव करि, हिय हारा भय मानि।
मारा बालि राम तब, हृदय मांझ सर तानि॥

किष्किन्धा काण्ड में बालि और सुग्रीव की लड़ाई के प्रसंग में गोस्वामी जी ने उपरोक्त दोहा लिखा है। इस दोहे का अर्थ टीकाकारों एवं कथा वाचकों द्वारा यह किया जाता है कि—'जब सुग्रीव जी ने बहुत छल बल के साथ लड़ाई करली और हृदय में हार मानकर भयभीत हुए, तब सुग्रीव जी को भयभीत देखकर श्री रामचन्द्र जी ने तानकर बालि के हृदय में बाण मारा।'

टीकाकारों का यह मत है कि इस दोहे में 'हिय हारि भय मानि' सुग्रीव जी के लिए प्रयुक्त हुआ है। परन्तु मैं यह समझता हूँ कि इस पद को सुग्रीव जी के साथ न जोड़ कर बालि के साथ जोड़ने में भाव में एक विशेष चमत्कार आ जाता है। यह पद 'बहु छल बल सुग्रीव करि' सुग्रीव जी के लिए और 'हिय हारि भय मानि' बालि के लिए आया है। अब इस प्रसंग पर विस्तार से विचार कीजिये।

जब प्रथम लड़ाई में श्री रामचन्द्र जी सुग्रीवजी को साथ लेकर जाते हैं —

लै सुग्रीव संग रघुनाथा। चले चाप सायक गहि हाथा॥
तव रघुपति सुग्रीव पठावा। गर्जेसि जाइ निकट बल पावा॥
सुनत बालि क्रोधातुर धावा। गहिकर चरन नारि समुझावा॥

श्री रामचन्द्र जी सुग्रीव जी को भेजते हैं कि तुम जाकर बालि को ललकारो तो वह लड़ने के लिये आवे। रामचन्द्र जी के कहने के अनुसार सुग्रीव ने बालि के भवन के पास जाकर श्री रामचंद्र जी की सहायता के बल को पाकर के गर्जना की। सुग्रीव की गर्जना को सुनकर बालि बड़े क्रोध के साथ दौड़कर चला; किन्तु बालि की पत्नी (तारा) उसके चरण को पकड़कर समझाने लगी। मगर बालि ने अपने क्रोध के आवेग में आकर नहीं माना और अत्यन्त क्रोध के साथ अपने अभिमान में मस्त होकर चल दिया—

अस कहि चला महा अभिमानी।
तृन समान सुग्रीवहीं जानी॥
भिरे उभौ बाली अति तर्जा।
मुठिका मारि महा धुनि गर्जा॥
तब सुग्रीव बिकल होइ भागा।
मुष्टि प्रहार बज्र सम लागा॥

जब बालि लड़ाई के मैदान में आया तो सुग्रीव को तृणवत समझ कर अत्यन्त गर्जना करके भिड़ गया और उसके एक घूंसे की मार सुग्रीव को वज्र के समान लगी तथा उनसे सहन न हो सकी। तब व्याकुल होकर के वे भाग गये और श्री रामचन्द्र जी से कहने लगे—

मैं जो कहा रघुबीर कृपाला।
बन्धु न होइ मोर यह काला॥

हे प्रभो ! यह मेरा भाई नहीं है, मेरा काल है। मैं इसी दुष्ट के डर से चौदहों भुवन में विकल होकर भागा फिरता था। आपने मुझको उसी काल से लड़ने के लिए भेज दिया, मैं उससे पार नहीं पाऊंगा।

नट मरकट इव सबहिं नचावत।
राम खगेस बेद अस गावत॥

परन्तु अभी तो श्री रामचन्द्र जी को बालि को मारना नहीं है क्योंकि सुग्रीव पहले कह चुके हैं—

बालि परम हित जासु प्रसादा।
मिलेहु राम तुम समन बिषादा॥

सुग्रीव के इस वचन को सुनकर श्री रामचन्द्र जी सोचने लगे कि मैंने बालि को मारने का प्रण किया और मेरा मित्र बालि को अपना हित कह रहा

है। जब बालि मेरे मित्र का हित हुआ तो मेरा भी हित हो गया। अब इस हित को कैसे मारूं। इसलिये श्री रामचन्द्र जी सुग्रीव कहते हैं—

एक रूप तुम्ह भ्राता दोऊ।
तेहि भ्रम से मारेउ नहिं सोऊ॥

"हे मित्र! तुम दोनों भाई एक समान हो। मुझसे पहिचान नहीं हुई कि कौन बालि है और कौन तुम हो, मैं इसी भ्रम में पड़ गया। इसी कारण बालि को मैं मार नहीं सका।"

जब सुग्रीव ने बालि को 'बन्धु न होइ मोर यह काला' कहा तब श्री रामचन्द्र जी बालि को मारने के लिए तैयार हो गये कि यह बालि मेरे मित्र का काल है।

श्री रामचन्द्र जी में वह शक्ति है कि—'तृन ते कुलिस कुलिस तृन करई' उन्होंने सुग्रीव के शरीर पर अपना कमलवत हाथ स्पर्श करके सुग्रीव के शरीर को वज्रवत बना दिया और उनके दर्द को हर लिया।

कर परसा सुग्रीव सरीरा।
तनु भा कुलिस गई सब पीरा॥
मेली कण्ठ सुमन कै माला।
पठवा पुनि बल देइ बिसाला॥
पुनि नाना बिधि भई लराई।
बिटप ओट देखहि रघुराई॥

अब सुग्रीव के शरीर को वज्रवत बनाकर और गले में फूल की माला डालकर अपना विशाल बल देकर बालि से लड़ने के लिए श्री रामचन्द्र जी ने उन्हें फिर भेज दिया।

श्री रामचन्द्र जी में वह शक्ति है कि—'भृकुटि बिलास सृष्टि लय होई'। अब सुग्रीव श्री रामचन्द्र जी के उस बल को पाकर दुबारा बालि से लड़ने के लिए गये और अनेक प्रकार से बालि के साथ लड़ने लगे। उनकी लड़ाई को श्री रामचन्द्र जी वृक्ष की ओट लेकर देखने लगे।

बालि ने अपने मन में विचार किया कि जो सुग्रीव मेरे सामने आंख उठाकर नहीं देखता था और अभी मेरी मार से घायल हो व्याकुल होकर भाग गया था इसमें अब कौनसी शक्ति आ गई है जिससे मेरे साथ इतनी देर तक लड़ रहा है—

बहु छल बल सुग्रीव कर, हिय हारा भय मानि।
मारा बालि राम तब, हृदय मांझ सर तानि॥

अतः अब सुग्रीव जी की छल बल की लड़ाई को देख करके बालि अपने हृदय में हार मानकर भयभीत हो जाता है। यदि यहां पर सुग्रीव जी को भयभीत और हारा माना जायगा तो श्री रामचन्द्र जी के बल की मर्यादा का महत्व मिट जायगा क्योंकि सुग्रीव जी श्री रामचन्द्र जी के ही बल को लेकर बालि के साथ लड़ने के लिए गये हैं।

अब श्री रामचन्द्र जी ने देखा कि अब बालि हार मानकर भयभीत हो गया है तो यह न हो कि सुग्रीव से प्रेम करले क्योंकि 'बिन भय होइ न प्रीति' बिना भय के प्रीति नहीं होती। श्री रामचन्द्र जी ने अपने मन में सोचा कि जब बालि मेरे मित्र सुग्रीव से प्रेम कर लेगा तो हमारा बना बनाया काम बिगड़ जायगा। जब वह सुग्रीव से प्रेम कर लेगा तो फिर हम बालि को नहीं मार सकेंगे क्योंकि वह हमारे मित्र का प्रेमी बन जायगा और इधर बालि को मारने का मैं प्रण कर चुका हूँ। इसलिए श्रीरामचन्द्र जी ने बालि को सुग्रीव जी से प्रेम करने के पहले ही मार दिया।

हनुमज्जन्म

(संकलयिता) "आचार्य"

महाराज दशरथ के द्वारा प्राप्त पायसपिंड महारानी कैकेयी ले जा रही थी। एक गृध्री ने इसे छीन लिया और ले जाकर अंजनाचल पर्वत पर डाल दिया। वहां देवी अंजना ने उस पायसपिंड का भक्षण किया। इसीसे हनुमान का जन्म हुआ। —आनन्दरामायण से

रामायण : मेरे दो शब्द

(ले० श्रीमती त्रिवेणी बाई)

रामायण इस संसार में एक दिव्य प्रकाश मयी ज्योति है। जो रामायण से प्रेम रखते हैं वे धन्य हैं। उनका जीवन सुख मय, सर्व श्रेष्ट और सुलभ मार्ग से व्यतीत होता है। उनके कुटुम्ब धन्य हैं। जो रामायण का पूजन अर्चन विधि पूर्वक करते हैं उनके सारे पाप छूट जाते हैं और अन्त में वे उस सच्चिदानन्द के धाम को चले जाते हैं। श्री रामचरित मानस की चौपाइयों में कितना रस भरा हुआ है इसका प्रतिपादन करना असम्भव है। जो भक्त जन इस रस को पान करते हैं उनके दर्शन मात्र से पाप छूट जाते हैं।

गोस्वामी तुलसीदास जी महान आचार्य थे, उन्होंने सारे भारतवर्ष के कल्याण हेतु 'रामायण रचकर तैयार की। रामायण का प्रचार तथा पाठ घर घर में होना लाभकारी है। नेम प्रेम और भक्ति से भगवान प्रगट होते हैं। रामायण एक ऐसा धार्मिक ग्रन्थ है जिसके निकट जाने मात्र से ही मनुष्य-मनुष्यता को प्राप्त हो जाता है। कहा गया है—*'रामायण सुर तरु की छाया, दुःख भये दूरि निकट जो आया।'* सच तो है रामायण सुसज्जन वृन्दों की रोग नाशक औषधि है। श्री रामचरित मानस के वक्ता गोस्वामी तुलसीदास और श्रोता सुसज्जन वृन्द हैं, सज्जनों को प्रेम से पान करना चाहिये। इसकी अमृत रूप बूंद हृदय में जाकर एक प्रकाश मयी ज्योति प्रगट करती है। इसका प्रकाश सदैव अमर है। श्री रामचरित मानस में प्रधानता भगवत चरित्र की तो है ही इसमें पांच भागवतों के भी चरित्र हैं (१) उमा चरित, (२) शम्भु चरित, (३) भरत चरित, (४ हनुमान चरित और (५) भुशुण्डि चरित।

'राम रामेति रामेति रमे रामे मनोरमे,
सहस्त्र नाम तत्तुल्यं राम–नाम वरानने'

राम राम शुभ नाम रटि, सब कहें आनन्द धाम।
सहस्त्र नाम के तुल्य है, राम नाम शुभ नाम॥

रामायण की चौपाइयों में रस भरा हुआ है। शिव जी तथा सती के वार्तालाप में देवी–सती को जब अपनी करनी पर अत्यन्त पश्चात्ताप हुआ, तब उन्होंने भी उन्हीं रघुनाथ जी की आराधना की और कहा कि हे दीनदयाल मेरा यह शरीर शीघ्र ही छूट जावे जिससे दुःख सागर को पार कर भगवान् शिव जी को प्राप्त कर सकूँ—

कहि न जाय कछु हृदय गलानी।
मन महँ रामहिं सुमिरि सयानी॥
जो प्रभु दीनदयाल कहावा।
आरत हरन बेद जस गावा॥
तो मैं बिनय करौं कर जोरी।
छूटै बेगि देह यह मोरी॥
जो मोरे सिव चरन सनेहू।
मन क्रम बचन सत्य व्रत एहू॥

तो सम दरसी सुनिय प्रभु, करौ सो बेग उपाय।
होय मरन जेहिं बिनहिं श्रम, दुसह बिपत्ति बिहाय॥

भगवान की कृपा से अपने पिता दक्ष प्रजापति के यज्ञ में जाकर योगानल से शरीर को त्याग कर सती जी ने हिमाचल के घर पारवती के रूप में अवतार लिया और भगवान शिव को पुनः पति रूप में प्राप्त कर लिया।

भगवान शिव ने केवल सीता का वेष धारण करने पर सती का त्याग कर दिया था, यह उनकी भक्ति की भावना थी।

इस संसारी नौका को पार करने के लिये एक मात्र प्रभु का ही सहारा है। श्री गोस्वामी जी ने सूक्ष्म स्थूल शरीर पार करने हेतु हिन्दी में चारों वेद, छहों शास्त्र और अठारह पुराण का तात्पर्य इस श्री रामचरित मानस में रख दिया है जिसको पढ़कर हर एक श्रेणी के स्त्री पुरुष लाभ उठा सकते हैं।

कैकेयी का अन्तर प्रेम

(श्री रामचन्द्र जी शर्मा, छाँगाणी)

'प्रान ते अधिक राम प्रिय मोरे'

कहने वाली माता कैकेयी के अगम मातृ-प्रेम से भरे उस प्याले को मन्थरा ने छलका दिया। वह प्याल शीशे का न था। वही राम था, जिसमें माता का स्नेह लबालब भरा था। उसने अपने अन्तर-परिताप से अपने राम के लिये अश्रु बहाये।

अपने राम को वन भेजकर माता का हृदय कितना व्यथित था। उसका निर्मल प्रेम अपने राम को पाने के लिये विलाप कर रहा था। भावो के आगे माता को विवश रह कर मौन हो जाना पड़ा। अपने दुःख को वह कैसे प्रगट करती। भावी को वह कुछ न कह सकी। पतित विचारों की मन्थरा ने मातृत्व प्रेम को अपने पुत्र-प्रेम से विलग कर दिया था। माँ को अपने राम की दुहाई में या राजतिलक में तनिक भी क्षोभ न था किन्तु मन्थरा की चपलता ने उसके हृदय पर वार कर दिया। कविवर मैथिली-शरण जी ने कितना सुन्दर विचार प्रस्तुत किया है—

'गूँजते थे रानी के कान,
तीर सी लगती थी वह तान।'

वह तान न थी किन्तु अपने राम को खोने का एक आसान तरीका था, जो मन्थरा ने उस भोली माँ को सिखा दिया—

'भरत से सुत पर भी सन्देह,
बुलाया तक न जिसे निज गेह।'

यही वे तीर थे, जो माँ के कानों में गूंज रहे थे। वह अपने पर शासन न कर सकी। उसके मातृ-प्रेम का प्याला आज पृथ्वी पर गिरकर चकनाचूर हो गया। बह चला वह प्रेम-धारा के रूप में।

आज माता को सभी ने क्या क्या न कहा? उसका कितना पश्चाताप था, उसके मातृ-हृदय में। वह कैसे प्रगट कर देती उस दुःख को, जो राम के वन चले जाने से उसे भोगना पड़ रहा था। उसके अन्तर में आज शान्ति का स्वर न था—

'धन्य तेरा क्षुधित पुत्र-स्नेह,
खा गया जो भून कर पति-देह।'

यह सारा वातावरण शून्य था। उसका राम उससे दूर, घोर पश्चाताप 'पति का मरण' व्यथित कर दिया उसने माता को।

आज वह जरूर अपने राम को मना लेगी। वह अपने राम को लौटाने का भरसक प्रयत्न करेगी अपनी समस्त भावनाओं द्वारा अपने राम को वह नहीं भूल सकेगी। वह चली अपने राम को मनाने। "अपने राम को मनाकर लौटालूंगी।" यह प्रेम कितना अनुपम और अलौकिक है? वह आज किसी से नहीं डरेगी। डरे भी क्यों? क्या राम पर उसका कोई अधिकार नहीं? क्यों नहीं—

'यह सच है तो अब लौट चलो तुम घर को,
चौंके सब सुनकर अटल कैकेयी स्वर को।'

भगवान श्री राम भी भावुक थे, मातृ प्रेम पाने को लालायित नैन अपनी स्नेहमयी माता की ओर लग गये। भगवान ने अपनी माता के दुःख को निहार लिया—

'देखी राम दुखित महतारी।'

फिर वे थे भी तो करुणाकर राम, न देख सके अपनी माँ का दुःख और दौड़ पड़े अपनी माँ को सान्त्वना देने—

'प्रथम राम भेटी कैकेयी।'

और—*'पग परि कीन्ह प्रबोध बहोरी।*
काल करम बिधि सिर धरि खोरी॥'

कितनी दर्शनीय होगी वह पुत्र और माता की परम मिलन दशा! अपने राम को पाते ही वह न छुपा सकी, अपने अन्तर के प्रेम को—

'अब कटे सभी वे पाश-नाश के मेरे।
क्यों न कटते उसके पाश—

'मैं वही कैकेयी वही राम तुम मेरे।

आज अपने पुत्र को पाकर माँ को कितना आनन्द हुआ। हृदय के प्रेमावेग को वह न रोक सकी। भगवान ने भी अपनी माँ की बान को पुष्ट कर दिया।

'हे अम्ब ! तुम्हारा राम जानता है सब,
इस कारण वह कुछ खेद मानता है कब ?'

वह अपने राम की प्रेम-पात्र बन चुकी थी। अपना सारा परिताप अपने राम को बतलाकर उसने सब कुछ पा लिया। भगवान ने अपनी माँ के दुःख को अमृत के रूप में परिवर्तन कर दिया। वे भी मातृ-स्नेह को न भूल सके। आज पुनः राम साकेत लौटे तो अपनी माँ को उन्हीं नेत्रों से निहार कर उसे प्रेम और सुख प्रदान किया—

'ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा।'

आनन्द में भगवान ने अपनी माँ को एक बहुत बड़ी धरोहर देदी सुख !

धन्य माँ का स्नेह !

तुलसी संग्रहालय में ग्रन्थ संग्रह प्रगति

नीचे लिखे महानुभावों ने पांच या अधिक पुस्तकें प्रदान करने की कृपा की हैं।

	मुद्रित	हस्त लिखित	कुल
१—विदर्भ हिन्दी साहित्य सम्मेलन	७	+	७
२—श्री नीरज जैन सतना	६	+	६
३—श्री बालाप्रसाद जी जोशी बन्डी	+	३०	३०

दाताओं की कुल संख्या अब ५६ हो गई है। इस संख्या में विशेष प्रगति होना आवश्यक है।

—शारदाप्रसाद

साहित्यिक चोरी

पं० श्री जानकीनाथ जी शर्मा ने कृपा पूर्वक हमें यह सूचना दी कि अभी गत नवम्बर के 'मानस मणि' में प्रकाशित 'श्री राघवेन्द्र का स्नेह' शीर्षक लेख 'कल्याण' के वर्ष ३० अङ्क ११ में प्रकाशित उनके लेख के एक भाग की अक्षरशः प्रति लिपि है।

किसी भी पत्र का सम्पादक न तो दूसरी सब पत्र-पत्रिकायें पढ़ सकता और जो पढ़ता भी है उसे सदा स्मरण रखने में तो वह असमर्थ ही है। अतः ऐसी भूलें सम्पादक से नहीं हो जायँगी, यह आश्वासन कैसे दिया जा सकता है; किन्तु है यह बड़ी भूल और इसके लिये हम श्री शर्मा जी से क्षमा प्रार्थी हैं।

जो कोई भी इस प्रकार दूसरे के लेख को अपने नाम से छपवाता है, वह साहित्यिक चोरी तो करता ही है, पत्र के सम्पादक-पाठकों को धोखा भी देता है। इस प्रकार की चेष्टा अत्यन्त निन्दित है। इससे यश तो होता नहीं, व्यर्थ पाप होता है। अतः हम सभी सज्जनों से प्रार्थना करते हैं कि नाम छपने के मिथ्या लोभ में पड़कर वे ऐसी निन्द्य चेष्टा न करें।

—सम्पादक

समालोचना

संयम अंक (अणुव्रत मासिक)—

प्रकाशक—अ० भा० अणुव्रत समिति ३. पोर्चुगीज स्ट्रीट कलकत्ता—१

'अणुव्रत' मानवता का महान आन्दोलन लेकर चला है और यह पत्र उसी आन्दोलन की वाणी है। बिना जाति, धर्म, देश या सम्प्रदायका कोई भेद किये- मानवता की महावाणी एवं उसी वाणी में यह 'संयम अंक' संयम की उद्घोषणा लेकर आया है। आर्थिक कांटे पर ही प्रत्येक वस्तु को तौलने वालों से कहना है—मासिक पत्र 'अणुव्रत' का वार्षिक शुल्क ६) है और इस लगभग तीन सौ पृष्ठ के विशेषाङ्क का ४) लेकिन हर वस्तु अर्थ की तुला पर नहीं तुलती। जीवन को कोई तौल सका है? उसी जीवन को परिमार्जित, प्रोज्वल, प्रबुद्ध करने के लिये जो ज्योति जागृत हुई है, अर्थ मूल्य बन सकेगा उसका?

संयम अंक में सब कुछ है- गम्भीर चिन्तन, जीवन की अनुभूतियां, प्रेरणाप्रद कहानियां एवं सत्पुरुषों के मार्ग दर्शन। संयम हीन जीवन पशु जीवन है और पशुत्व की ओर बढ़ते-गिरते समाज के लिये इस अंक में बचाने का अवलम्ब है, उद्बोधन है। इतने भव्य आयोजन के लिये मानवता आयोजकों की आभारी रहेगी।

—श्री 'चक्र'

मानस प्रसंग—

लेखक—मानस राजहंस स्वर्गीय पंडित विजयानन्द त्रिपाठी

प्रकाशक—मानस संघ, रामवन (सतना) मूल्य ३॥)

बड़े सौभाग्य से मुझे 'मानस प्रसंग' पढ़ने को मिला। प्रसंग कितने सुन्दर ढंग से सजाया गया है उसे तो पढ़ कर ही अनुभव कर सकेंगे लेकिन इतना जरूर कहूँगा कि हमारे मानस प्रेमी बन्धुओं को एक ही पुस्तक के अवलोकन से पूरे श्री रामचरित मानस का प्रसंग जानकारी में आ जाता है, अर्थात् यों कहिये, 'मानस प्रसंग' रामायण समझने वालों के लिये कुञ्जी है। पुस्तक अवश्य ही पढ़ने योग्य है।

—पं० 'सनेही' जी, सोनपांडर

सीता—

रचयिता—श्री चन्द्रप्रकाश जी वर्मा पृष्ठ संख्या २३० मूल्य ४)

प्रकाशक—श्री नरेन्द्रनाथ सिंह, अर्चना प्रकाशन, सिवनी (म० प्र०)

सीता काव्य है जो जगज्जननी श्री जानकी के उत्तर चरित अर्थात् राज्याभिषेक के अनन्तर श्री रघुनाथ द्वारा श्री वैदेही के त्याग की पृष्ठभूमि को लेकर लिखा गया है। श्री चन्द्रप्रकाश जी वर्मा हिन्दी के तरुण कवियों में विशिष्ठ स्थान रखते हैं। उनकी रचनाओं में जहाँ अनुभूति की गहराई एवं कल्पना की रंगीनी होती हैं, वहीं शुचिता एवं मङ्गल का सुन्दर विधान भी होता है। उनका यह काव्य वैसे ही अत्यन्त करुण एवं मर्मस्पर्शी पृष्ठभूमि लेकर चला है। दूसरे भावावेग में सब कुछ न कहकर बुद्धि का पर्याप्त सामञ्जस्य रखा है कबि ने। परिस्थिति से ऊपर उठकर श्री राम का त्याग अमर हुआ यह भव्य सन्देश और कवि की मर्मस्पर्शिनी-वाणी को वीणापाणि ने पूरा आशीर्वाद दे दिया है। इस कान्त-कला की सृष्टि के लिये वर्मा जी का अभिनन्दन।

—श्री 'चक्र'

संघ-समाचार

नवम्बर मास में संघ के १३५ नये सदस्य बने तथा ५ नई शाखायें स्थापित हुईं जिनका विवरण इस प्रकार है—

शाखा संख्या ७७ खरमसेड़ा [सतना] सदस्य १२, मन्त्री श्री पं० रघुवरशरण जी त्रिपाठी 'कलंकी'। शाखा सं० ७८ हरदुवाकलां [सतना] स० ६, मं० श्रीयुत श्रीकृष्ण जी त्रिपाठी। शाखा सं० ७६ खिरिया फैजुल्ला [ग्वालियर] स० १०, मं० श्री पं० शालिगराम जी। शाखा सं० ८१ डूमर तालाव [रायपुर] स० १०, मं० श्री सुमनसिंह जी भट्ट। शाखा संख्या ८३ पुरगांव [रायपुर] सदस्य ४६, मन्त्री श्री सुदामाराम जी डडसेना।

आश्विन पारायण समाचार

मोहभट्टा—व्यक्तिगत नवाह हुआ। —हरीराम

डग—६ पाठ हुए। — चन्द्रलाल

सारंगगढ़—सामूहिक एवं व्यक्तिगत नवाह पाठ हुए। —पुनीराम

भरौली—मानस का अखंड एवं नवाह पाठ हुआ। —मदनमोहन

कोटेरा—नवाह पाठ हुआ। — नैपालसिंह

माफो— नवाह पाठ हुआ। —शीतल शर्मा

कटारी—व्यक्तिगत नवाह पाठ हुआ। —गंगाप्रसाद

रामपिपरिया—मानस के पाठ हुए। —रामधुन

भारकच्छ—सामूहिक पाठ हुआ। —बेनीप्रसाद

(नीचे लिखे स्थानों में पारायण के साथ हवन, ब्राह्मण भोजन एवं प्रसाद वितरण आदि हुआ)

चेचटा—५१ व्यक्तियों द्वारा सामूहिक पाठ हुआ। अखंडदीप, श्री हनुमान चालीसा पाठ, गायत्री जप भी हुआ। —कन्हैयालाल

खरगोण—३२ पाठ मानस के हुए। —हीरालाल

अकलेरा—६ प्रेमियों द्वारा नवाह पाठ हुआ। महात्मा श्री रामचरणदास जी ने नवाह पाठ किया। समाप्ति पर देहात के बालक बालिकाओं को भोजन कराया। भक्त श्री ख्वाजू खाँ मुसलमान ने इस कार्य में पूरा खर्चा दिया। —कन्हैयालाल

भौंरा—व्यक्तिगत नवाह हुआ। — दुर्गाप्रसाद

बड़गाँव—७ व्यक्तिगत नवाह पाठ हुए। — नारायण बाबने

पचरूखी—नवाह पाठ हुए। —राघोलाल

पतौना—नवाह पाठ हुआ। - रघुवंशप्रसाद

पाण्डू—१४ सदस्यों द्वारा नवाह पाठ हुआ। — भोलानाथ पाण्डेय

सरसी—व्यक्तिगत १३ नवाह पाठ हुए। — केशवप्रसाद सिंह

गढ़पुर - ६ व्यक्तियों द्वारा पाठ हुआ। —मिश्रीलाल

लेंदरी—२ अखंड पाठ एवं नवाह पाठ हुआ। —यमुनाप्रसाद सिंह

अमलिहा—अखंड पाठ हुआ। —गंगाप्रसाद

अजयगढ़—४५ व्यक्तियों द्वारा मानस के नवाह पाठ हुए। —पीताम्बर राव तैलंग

सोहसराय—व्यक्तिगत नवाह पाठ हुए। —प्रयागनारायण

विविध समाचार

नयागाँव—ता० २६-११-५८ को श्री तेंमराज पाण्डेय के घर पर मानस का अखंड पाठ ज्योति जलाकर हुआ। समाप्ति पर सुन्दरकाण्ड का सामूहिक पाठ होकर प्रवचन हुआ। —भोपतसिंह

बारडोली—ता० २५-११-५८ को श्रीमद्भागवत एवं कार्तिक पुराण की चर्चा की गई। रात्रि में जागरण, सुबह महानदी में स्नान करके प्रसाद वितरण हुआ। ब्राह्मण भोजन भी हुआ। —एस० आर०

बाराबंकी—ता० २५-११-५८ को मानस का नवाह पाठ पूर्ण हुआ। बाद में हवन हुआ। —पं० शंकरदयाल

डगनिया—कार्तिक शुक्ल १ से ६ तक श्री रामाश्रय शर्मा के द्वारा मानस का नवाह पाठ शिवमन्दिर में हुआ। समाप्ति पर हवन करके ४८ घंटे बिना अन्न जल ग्रहण किये शंकर भगवान की शरण एक आसन से रह गये। बाद में श्री सत्यनारायण की कथा हुई। कार्तिक कृष्ण ८ से १५ तक श्री बजरंग मन्दिर के पास श्री पं० काशीप्रसाद जी मिश्र द्वारा श्रीमद्भागवत सप्ताह यज्ञ हुआ। रात्रि में श्री रामलीला होती थी। अन्तिम दिन ब्राह्मण भोजन हुआ। —मूढ़

रामपिपरिया—कार्तिक सुदी ६ से नवाह पाठ हुआ। पूर्णिमा को अखंड कीर्तन हुआ। —रामधुन

धनवाद—शंभूनाथ धर्मशाला में श्री पं० मिहीलाल शर्मा जी द्वारा प्रवचन हुआ। बाद में प्रसाद वितरण हुआ। —रामरत्नसिंह

जौनपुर—ता० २५-११-५८ को श्री रामचर्चा यज्ञ, हवन होकर प्रसाद वितरण हुआ। —जगदेवप्रसाद

मुंगेली—श्री रामगुलाम जी के बाड़े में श्री सुखरू प्रसाद जी सोनी की व्यवस्था से श्री पं० रामरक्षित जी रामायणी द्वारा मानस पर प्रवचन हुआ। अन्तिम दिन सुन्दरकाण्ड का सामूहिक हुआ। —राजधर बड़गैया

श्री रामगुलाम साव सुखरूप्रसाद जी सोनी के यहाँ ता० १७ से २३ अक्टूबर तक श्री रामरक्षित जी रामायणी द्वारा प्रवचन हुआ तथा सुन्दरकाण्ड का सामूहिक पाठ हुआ। —मिट्ठूलाल सोनी

कानपुर—गांधी पार्क में ता० २६-१०-५८ से ६-११-५८ तक श्री पं० रामरक्षित जी रामायणी द्वारा मानस पर भावपूर्ण अनुरागमय प्रवचन हुआ। ता० ७-११-५८ को हाई स्कूल में ३ से ४ बजे तक प्रवचन हुआ। अन्तिम दिन सुन्दरकाण्ड का सामूहिक पाठ हुआ। पाठ के अन्त में कथावाचक श्री मंजुल जी का प्रवचन हुआ। —जागेश्वरदयाल

होशंगाबाद—नर्मदा जी के तट पर ता ३०-१०-५८ से ३-११-५८ तक श्री संतदत्त जी द्वारा पंचकुण्डात्मक महायज्ञ का आयोजन हुआ। सर्व श्री स्वामी धर्मानन्द, स्वामी प्रकाशानन्द, मञ्जुल जी और बलैया महाराज जी के प्रवचन हुए। जनता ने प्रवचन एवं यज्ञ, भगवान के दर्शन तथा परिक्रमा से अपना जीवन कृतार्थ किया। यह इस नगर का प्रथम यज्ञ था। —प्रेमनारायण

पन्ना—श्री रामचरण जी थानेदार के डेरे पर ४ व ५ नवम्बर को श्री सुरेन्द्रकुमार जी रामायणी द्वारा प्रवचन, आरती होकर प्रसाद वितरण हुआ। ता० १२-११-५८ को श्री मिठाईलाल जी के यहाँ भी प्रवचन हुआ।

चित्रकूट—धर्मशाला में ता० १०-११-५८ को श्री सुरेन्द्रकुमार जी रामायणी द्वारा प्रवचन हुआ।

सिद्धपुर—श्री मुखिया साहब के यहाँ तारीख ७-११-५८ को श्री सुरेन्द्रकुमार जी रामायणी द्वारा प्रवचन हुआ। —यमुनाप्रसाद

मनियारी—ता० ४-११-५८ से १२-११-५८ तक पं० श्री मालिक राम जी शर्मा द्वारा मानस पर सारगर्भित प्रवचन हुआ। —एक प्रेमी

बेलसोंड़ा—श्री गंगा प्रसाद तिवारी ने माघ शुक्ल ५ सम्वत् २०१३ से माघ शुक्ल ५ सम्वत् २०१४ तक मानस का एकाह पाठ प्रति दिन माता देवालार्क स्थान में किया। समाप्ति पर श्री रामयज्ञ, भजन, कीर्तन, प्रवचन आदि हुआ। इसके बाद दूसरे वर्ष अर्थात सम्वत् २०१४ से फिर एकाह पाठ चल रहा है। —सम्वाददाता

बाकानेर—श्री रामायण मण्डल की ओर से श्री सातमात्र देवी जी के स्थान पर कार्तिक सुदी ८ की रात्रि को सप्तसती का पाठ, सुन्दरकाण्ड के सामूहिक ग्यारह पाठ एवं भजन, कीर्तन, रात्रि जागरण करके प्रातः आरती होकर प्रसाद वितरण हुआ। —शोभाराम

दुर्ग—मानस-भवन में कार्तिक शुक्ल १२ से १५ तक श्री खेमपुरी जी का मानस पर प्रवचन हुआ।

परसबोड़—श्री घासीराम पटेल के यहाँ कार्तिक वदी ११ से १४ तक श्री खेमपुरी जी का मानस पर प्रवचन हुआ। —एक मानस श्रोता

हीरापुर—माइन्स बोर्ड में ता० १२-११-५८ से ४-१२-५८ तक रामलीला हुई। —रामरक्षासिंह

गोंड़ा—संत भूपाल देव परमहंस मानस प्रचार सुचारु रूप से कर रहे हैं। —ब्रह्मदेव

गोरखपुर—श्री राम नाम प्रचार समिति की एक बैठक ६-११-५८ को श्री विसेश्वरलाल गनेड़ीवाला के यहां हुई। श्री राम-नाम भवन निर्माण के सम्बन्ध में विचार हुआ। ६ सज्जनों की एक समिति निर्माण की गई। श्री राम कृष्णकिशोर चन्द्र जी इसके अध्यक्ष, श्री सत्यनारायण शर्मा, इसके मन्त्री, और श्री विसेश्वरलाल गनेड़ीवाला कोषाध्यक्ष हैं। बाद का समाचार है कि श्री मुक्तेश्वरनाथ जी के प्राचीन स्थान के समीप की भूमि भवन के लिये प्राप्त हो गई है। कार्तिकी पूर्णिमा को वहां १३ घंटे का अखंड कीर्तन और राम-नाम लेखन हुआ।

(मानस संघ की गोरखपुर शाखा में रामवन के सदृश ही एक श्री राम-नाम मन्दिर स्थापित करना निश्चित किया है। यह बड़े हर्ष की बात है। शाखा राम-नाम लड्डू केन्द्रों से सहयोग चाहती है। आशा है वे इसे प्रदान करेंगी। —शारदाप्रसाद)

सक्रिय सदस्य

मानस संघ के नये १० या अधिक सदस्य बनाने वालों की सूची—

		पूर्व प्रकाशित	नये	कुल
१—श्री रामसुपाल जी भट्ट, खरमसेंड़ा,	—	५८	२१	७९
२—श्री सुदामाराम जी, पुरगांव	—	...	४६	४६
३—श्री सीताराम जी वैद्य, आसोप	—	१७	३	२०
४—श्री विन्द्रावन जी, निमधा	—	...	२०	२०
५—श्री हरगोविन्दसिंह ब्रह्मवंशी, जबलपुर	—	२	१०	१०
६—श्री विनीत विहारीदास जी, चिरगाँव	—	...	१०	१०
७—श्री सुमनसिंह जी, डूमरतालाब	—	...	१०	१०

नोट—अब तक सक्रिय सदस्यों की संख्या ३५ हो गई है।

रामवन-समाचार

श्रीमारुति सेवा—नवम्बर मास में मानस का एक अखण्ड पाठ नित्य होता रहा। इस मास में खर्च १३७३.८२ हुआ और आय ५९५.४५ की हुई। कमी ७७८.३७ की रही, जो पिछली कमी ११९३.१० में मिलाने पर अब १९७१.४७ की पूर्त्ति करना बाकी रहा। इस मास में 'गान्धी घर' के लिये कुछ सामान खरीदा गया इससे खर्च अधिक हुआ है। आगामी मास में सरकारी अनुदान से इसकी पूर्त्ति होगी।

१-११-५८

५.०० श्री गोपीलाल बोंदर जी, सुसारी
५.०० ,, गोवर्धनदास, पथौड़ी
५.०० मानस संघ शाखा भैसांतरा श्री भुवनलाल जी द्वारा
१.२५ श्री पचकौड़, भैसांतरा
१.०० ,, छगनलाल दुबे, भैसांतरा
३.२५ ,, भागवतप्रसाद शुक्ल, चोरिया
१०.०० मानस संघ शाखा, भटगांव श्री विवेकदास जी द्वारा
१.२५ ,, देवगुन साव, पहरिया
१.२५ ,, रामदयाल, ,,
१.२५ श्री साधराम साव ,,
१.२५ ,, डोमसिंह, ,,
१.२५ ,, मंगतराम जी अग्रवाल, पहरिया
१.२५ श्रीमती समुन्द कुँवर, ,,

३-११-५८

५.०० श्री साखूराम कुर्मी, मुनुन्द

४-११-५८

३.३१ श्री पूरनलाल तिवारी, वरही
५.५० ,, मनराखन साहू, खैरा

५-११-५८

१.२५ श्री वैजनाथ गुप्ता, भाटापारा
६.०० ,, गिरीराम, विरकोना

७-११-५८

५.०० श्री नन्दकुमार पाठक, मुरी
१.२५ ,, उदिया जी गेहलोद, तलवाड़ा
१.२५ ,, प्रेमदास जी पुजारी ,,
५.०० ,, जगन्नाथप्रसाद पाण्डे, पुलगांव
१५.०० ,, नरेन्द्रसिंह, अछल्दा
१.२५ ,, शिवप्रसादलाल, वारसलीगंज
२.०० ,, रामचन्द्र शर्मा दिल्ली
५.०० ,, हरीहर वावा जी, जलालखेड़ी
१.२५ ,, दीनदयाल कोरी, झींझक
१.०० ,, सालकराम, मनमांड
३.०० ,, घनश्यामसिंह, मनमांड
१.२५ ,, गौरीशंकर तिवारी, मनमांड

८-११-५८

५.०० ,, सी० पी० शर्मा, इन्दौर
५.२५ श्रीमती रामकुमारी देवी, भिनगा
१०.०० श्री कुं० पुरुषोत्तमसिंह, जगन्नाथपुर
१०.०० ,, कालीनाथ कपूर, इलाहावाद

१०-११-५८

१२.२५ श्री जगदीशप्रसाद जी गोयल, गोरखपुर
१.२५ ,, रामरतन शर्मा, झांसी
१.२५ ,, आनन्दस्वरूप भटनागर, झांसी
१.२५ ,, पं० रामकुमार, शाहनगर
५.२५ ,, पं० हरिश्चन्द्र, रीवा
२०.०० ,, डा० के० सी० मिश्र, डुमरिया

१२-११-५८

११.०० श्री नवनीतप्रसाद गुप्त, गोरखपुर
१.२५ ,, रामरत्नसिंह, हीरापुर
५.०० ,, बाबू रामचन्द्र जायसवाल, सोहागपुर
६.५० शाखा मरायता
८.०० शाखा कवल्दा
२.०० श्री मदनलाल जी, मनोहरथाना

१.२५ श्री रविशंकर शर्मा, नागपुर
१.२५ ,, वृजपाल शर्मा, ,,
५.०० ,, वैद्य सीताराम शर्मा, आसो५

१४-११-५८

५.०० श्री रामकिशन अग्रवाल, नागपुर
५.०० ,, मदनलाल गुप्त, मुरार

१५-११-५८

१.२५ श्री रतनलाल रामलाल जी, राजनांदगांव
१.२५ ,, मुरारीलाल वाजपेई, ,,

१७-११-५८

१.०० श्री शीतलसिंह, नहला

१८-११-५८

५.०० श्री रामनारायण दुलीचन्द्र अग्रवाल, सरसीवां
५.०० श्री राधाकृष्ण मुकुन्दराम जोशी, होशंगाबाद
२.२५ ,, मूलचन्द्र मिश्र, आमली
२.०० ,, पं० बच्चा जी पाण्डेय, कानपुर

१९-११-५८

५.०० श्री विनायकप्रसाद सिरौठिया, कटनी
६.६४ ,, कोमलदास दयाल, मोम्बासा

२०-११-५८

१.५० श्री ललन जी पाण्डे, लोहरदगा
२.५० ,, भानप्रकाश, पटना
११.०० ,, बालमुकुन्द शारडा, वेटमा

२१-११-५८

५.०० श्री रामभरोसा दाऊ, राजिम
५.०० ,, प्रधान पाठक, बांधाबाजार
११.०० ,, सत्यनारायण काशीप्रसाद, वेरहामपुर
११.०० ,, सीताराम कम्पनी, ,,

२२-११-५८

४५.०० श्री टीकाराम स्वर्णकार, कोटमी
१०१.०० ,, चुन्नीलाल पन्नालाल जी, पानीतुला
१००.०० ,, बजरंगदास एडवोकेट, सिरसा

२४-११-५८

५.०० श्री जगन्नाथ रामनाथ, कलकत्ता
७.०० ,, कन्हैयालाल गौतम, चेचट
११.०० ,, बी० एल० कोटी, मगरूलपीर

२८-११-५८

१.०० श्री रामरक्षासिंह, हीरापुर
५.०० ,, मोहनलाल जी, नागपुर
१३.७० चढ़ोत्री

५६५.४५ कुल। दाताओं को धन्यवाद।

मानस प्रचार—इस मास में सदस्य शुल्क से ५३.५० तथा श्री रामनाम लड्डू विभाग से ९.२७ कुल ६२.६७ की आय हुई। खर्च पत्र व्यवहार में ५०.५७ तथा फार्म छपाई में २३.०० कुल ८३.५७ हुआ। कमी २०.९० की रही। पिछली कमी १४५५.८१ सहित अब १४७६.७१ की पूर्त्ति करना बाकी रहा।

तुलसी संग्रहालय—इस मास में आय ३८०.०० की हुई और खर्च १८६.३७ हुआ। बचत १९३.६३ की हुई। पिछली कमी ३६०२.०९ में यह घटाने पर अब ३४०८.४६ की पूर्त्ति करना बाकी है। दाताओं ने जिन पुस्तकों की खरीद के लिये रुपये भेजने की कृपा की है वे क्रमशः खरीदी जा रही हैं।

१-११-५८

५.०० श्री ठा० रामशरणसिंह भुवाल, सोनपांडर

१२-११-५८

९.०० श्री बालदन साव, गुतुरुमा
५०.०० गुप्तदान
५.०० श्री विष्णुदास जी साधु, घेगाँव
११.०० ,, बाबू शारदाप्रसाद जी, रामवन

२२-११-५८

३००.०० श्री बजरंगदास एडवोकेट, सिरसा

३८०.००

श्री रामनाम लड्डू—११ नवम्बर से ३० नवम्बर तक ३८७ लड्डू तैयार हुए। दैनिक क्रम में १०० लड्डू समर्पण हुए। शेष अक्षय तृतीया के लिये रखे गये। केन्द्रों की स्थिति इस प्रकार है—

डुमरिया १८०, व्यावर १०४, कोहड़िया २८, करगीरोड २६।

मानस संघ द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

१—तुलसी मुक्तावली (प्रथम किरण)—(श्री शम्भूप्रसाद बहुगुना, एम०ए०डिप०साइ०) |||–)
२— ,, ,, (द्वितीय किरण) |||)
३—शबरी मङ्गल (श्री शम्भूप्रसाद बहुगुना) |||)
४—मानस मूल (मानस राजहंस, स्व० पं० श्री विजयानन्द जी त्रिपाठी) ||)
५—शतपञ्च चौपाई (,,) २|||)
६—मानस प्रसंग (,,) ३||)
७—मानस-व्याकरण (,,) २)
८—सचिव सुमन्त्र (श्री सुदर्शनसिंह) |–)
९—विवेकी विभीषण (,,) ||)
१०—महात्मा बाली (,,) |–)
११—श्रीभगवन्नाम संकीर्तन (,,) –)||
१२—विधाता बिश्वामित्र (,,) ||)
१३—जरठ जटायु (,,) |–)
१४—देवर्षि नारद (,,) |=)
१५—श्री हनुमान चरित (,,) ३|)
१६—श्री रामचरित मानस में वेदान्त दर्शन— (रायसाहब हीरालाल वर्मा) १|)
१७—स्व स्वरूप दर्शन (,,) १)
१८—सब ग्रन्थन को रस (,,) १)
१९—दिव्य दशमी (श्री 'चक्र') |=)
२०—मानस मन्दाकिनी प्रथम हिलोर (,,) |)||
२१— ,, ,, द्वितीय ,, (,,) |–)
२२— ,, ,, तृतीय ,, (,,) |–)
२३—महा भागवत चरित्र (पहिला भाग) (महात्मा श्री बालकराम जी विनायक) १)
२४—महाभागवत चरित्र (दूसरा भाग) १)
२५—मानस महत्व (पं० भैरवानन्द) १)
२६—विश्व साहित्य में रामचरित मानस (काव्य समीक्षा)—(श्री राजबहादुर लमगोड़ा) १=)
२७—श्री रामचरित मानस में मिथिलाधाम— (श्री अवधकिशोरदास श्री वैष्णव) |)
२८—मानस प्रणेताशंकर (आचार्य पीठाधिपति श्री राघवाचार्य स्वामी जी) =)
२९—अनुरागी केवट (श्री रामरचित जी रामायणी) |=)
३० मानस हिलोर (,,) |=)
३१ श्री मानस सिद्धान्त (वेदान्तभूषण श्री पं० रामकुमारदासजी रामायणी) २||)
३२—सखी गीता (,,) |)
३३—मानस पारायण पूजन पद्धति (,,) |=)
३४—धर्मरथ (,,) |||)
३५—वेदों में रामकथा (,,) ४)
३६ सन्तवाणी (श्री महन्त रामदास नागा) =)
३७—हनुमान साठिका (श्री बलदेवदास जी) =)
३८ सुख शान्ति के दो मन्त्र (श्रीसन्त विनीत बिहारी दास जी) =)
३९—भगवद् कीर्तन (,,) =)
४०—अनसुइया चरित्र (,,) =)
४१—व्यंगोपदेश (,,) |=)
४२—वीर वधू उर्मिला (,,) =)
४३—बाल्मीकि तुलसी भये (नाटक)— (श्री डा० भगवानदास सफड़िया) |||)
४४—मानवता के चरण (,,) ||)

संचालक
मानस प्रकाशन लिमिटेड
पो०—रामवन (सतना)

'मानस मणि' के अधिक से अधिक ग्राहक बनाकर वार्षिक शुल्क मनीआर्डर द्वारा ही भेजवाइये

इस अङ्क की झाँकी

१. श्री सत्योपाख्यान– यह एक प्राचीन ग्रन्थ है। इसमें भगवान् श्रीराम का पुण्य चरित है। इस संस्कृत ग्रन्थ का वेदान्त भूषण पं. श्री रामकुमारदास जी रामायणी द्वारा किया अनुवाद इस अंक से प्रारम्भ किया गया है। आप 'मणि' में धीरे धीरे यह पूरा ग्रन्थ पा लेंगे।

२. राक्षस-राज– इस धारावाहिक उपन्यास का तेरहवां 'वेदवती' अध्याय इस अंक में है। सतीत्व की शक्ति कितनी महान है और वासना से अन्ध प्राणी क्षणिक आवेश में कैसे अपना सर्वनाश आमन्त्रित कर लेता है- ये दोनों बातें यह अध्याय स्पष्ट करता है।

३. यश-अपयश—छोटा लेख होकर भी पर्याप्त शिक्षाप्रद है।

४. उचित-उत्तर—महन्त श्री रोशनपुरी जी ने 'मानस' के आधार पर उचित-उत्तर का रूप स्पष्ट किया है। किसी को उत्तर देते समय हम आपको भी उचित-अनुचित सोचना चाहिये।

५. दुनियां क्यों रोती है—किसके जीवन में दुःख नहीं है। इस महारोग का निदान और चिकित्सा की ओर इस लेख का संकेत है।

६. सन्त-असन्त मिलन, प्रभु-प्रताप, रामायण : मेरे दो शब्द, कैकेयी का अन्तर प्रेम—ये चारों लेख मानस के अपने विषय के भावों पर प्रकाश डालते हैं।

७. मर्यादा पालक रावण—यह शीर्षक आपको चौंका सकता है; किन्तु इसके लेखक ने 'मानस' के प्रमाण देकर अपना मत पुष्ट किया है कि रावण मर्यादा पालक था।

८. अणुअस्त्रों की घुड़ दौड़ में भारत की दिशा—श्री ब्रह्मदेव सिंह जी ने यह एक महत्वपूर्ण सामयिक प्रश्न उठाया है और भारत की शाश्वत सौम्य दिशा का निर्देश किया है।

९. 'हिय हारा भय मानि'—यह मानस के किस प्रसंग का विवेचन है—आप लेख बिना पढ़े बताइये तो ?

१०. मानस के चमत्कार—सच्ची घटनायें हैं। किसी भी विपत्ति में मानस आपका सहायक हो सकता है। यह आश्वासन देती हैं ये घटनायें।

११. माघ में रामवन आइये, मानस संघ के आय-व्यय का वार्षिक विवरण, कालिदास करण्डिका, मीरामञ्जूषा, मानसयज्ञ रमपुरा, वसन्तोत्सव आदि संस्था की सूचनायें हैं आपकी जानकारी तथा आपके सहयोग के लिये और समालोचना जानकारी के लिये।

१२. मानस महिमा– प्रारम्भिक कविता तथा हनुमज्जन्म का मधु-विन्दु आपको मधुर लगेगा।

इनके अतिरिक्त संघ-समाचार, मानस-पारायण समाचार तथा रामवन समाचार तो यथापूर्व जा ही रहे हैं।

ग्राहक संख्या—२६
श्री सम्पादक जी, 'गुरुकुल पत्रिका', गुरुकुल कांगड़ी, पो० गुरुकुल कांगड़ी

"मानस मणि" पो०—रामवन (सतना) मध्यप्रदेश

प्रकाशक—शारदाप्रसाद, मंत्री मानससंघ, रामवन (सतना) मुद्रक—नीरज जैन, सुषमा प्रेस सतना

मानसमणि

१८] रामवन—फरवरी, १९५९ [आलोक २



"'रामायण को काव्य कहना उसका अपमान करना है। उसमें तो भक्तिरस का प्रवाह बहता है जो जीवन को पवित्र कर देता है।'"मैं चाहता हूँ सब लोग प्रतिदिन नियम पूर्वक रामायण का पाठ करें।"'

—स्व० महामना मालवीय जी



सम्पादक—

भगवानदास सिंघाड़िया

अनुक्रमणिका

——:o:X:o:——

॥ श्री सीताराम ॥



राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके ॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं ॥

मणि १८	रामवर्ष—माघ, मानस सम्वत् ३८५ फरवरी १९५९ ई०	आलोक २

कर्ता राम

करता राम करै सोइ होय ।
कल बल छल बुधि ज्ञान सयानप, कोटि करै जो कोय ॥१॥
देई देवा सेवा करि के, भरम भुले नर लोय ।
आवत जात मरत औ जनमत, करम काँट अरुझोय ॥२॥
काहे भवन तजि भेष बनायो, ममता मैल न धोय ।
मन मवास चवरि नहिं तोड़ेउ, आस फाँस नहिं छोय ॥३॥
सतगुरु चरन सरन सचपायो, अपनी देह विलोय ।
'धरनी' धरनि फिरत जेहि कारन, घरहिं मिले प्रभु सोय ॥४॥

—सन्त धरनीदास

श्री [illegible] सत्योपाख्यान

(अनुवादक--मानस तत्त्वान्वेषी पं० श्री [illegible]मकुमारदास जी रामायणी, वेदान्त भूषण, साहित्यरत्न)

[illegible]तुर्थ अध्याय

सूत जी के जरा सा विश्राम लेते ही कथा ब[illegible]न्द कर दिया ऐसा समझकर श्री शौनक जी ने प्रार्थना[illegible] की कि हे महाभाग ! श्री रघुनन्द आनन्द का[illegible] चरितामृत पान करते करते मेरी प्यास तो और बढ़ी जाती है अतः रुकिये मत, यह आनन्दामृत पिलाते चलिये । सूत जी कहने लगे कि तब महाराज ने श्री कैकेयी जी को इशारे से सिखाया कि आज तुम्हारे आँगन में तुम्हारी सभी सौतें एक साथ ही आगईं हैं अतः इनका सत्कार, माला, चन्दन, पान आदि से करो । मझली रानी ने अपनी सभी सपत्नियों का खूब सत्कार किया और सबको स्थलपद्म के इत्र से तर कर दिया ॥१-५॥ तब महाराज अपनी सभी रानियों को सम्बोधित करके बोले—देवियो ! तुम्हीं लोगों के पुण्य प्रभाव से ये वंश वर्द्धक चारों सुकुमार कुमार उत्पन्न हुये हैं । जिसके पुत्र नहीं होता उस नर के पितरगण स्वर्ग में बड़े उदास रहा करते हैं । ब्राह्मणों ने मुझे कुल के भूषण रूप ये चार कुमार दिये हैं, जिससे वेदज्ञ ब्राह्मण सन्तुष्ट न रहें उसका जन्म व्यर्थ गया समझना चाहिये । इसलिये तुम लोग सर्व-सत् प्रयत्नों से वेदज्ञ ब्राह्मणों एवं विष्णुभक्त साधुओं को तुष्ट करके उनका श्री चरणामृत लो । उनके पाद जल-चरणामृत पीने से मनुष्य निष्पाप हो जाता है । आप श्रीमती लोग इन कुमारों का बहुत बहुत लाड़ प्यार करती हैं इसीसे मैं कहता हूँ कि इन्हीं के लाड़ प्यार में हरदम व्यस्त रहने से किसी साधु ब्राह्मण की सेवा में कोई त्रुटि न पड़ने पाये ॥ ६-११ ॥

राजा की बात सुनकर श्री राम प्रेम मूर्ति रानियों ने कहा कि हे राजन् ! आप तो अद्वितीय धर्म मूर्ति हैं । ये चारों कुमार तो हम सब साढ़े तीन सौ रानियों के प्राण ही हैं और सम्पूर्ण पुरवासियों के प्राण तुल्य प्रिय हैं । हम सब नित्य ही भगवान् श्री रङ्गनाथ जी से अञ्चल फैला फैला कर माँगती हैं कि जैसे अनुपम हमारे कुमार हैं ऐसी ही अपूर्व [illegible]रूपवती चार कन्यायें भी कहीं भगवान् उत्पन्न कर [illegible] जिससे किशोर होने पर इनका विवाह उनके साथ हो, [illegible] हम इनको बहुओं के साथ देखें । जब श्वेत छत्र शो[illegible] शत्रुंजयनामक महाग्रण्डील चतुर्दन्त गज-राज प[illegible] राजमुकुट धारण किये हुये श्री रामलाल जी जनाकी[illegible] सभ्य लोगों से भरे हुये राजमार्ग से निकलेंगे, [illegible]नों ओर अनेकों रङ्ग विरङ्गी चँवर चलती रहेंगी और [illegible] अनेक वाद्ययुक्त चतुरङ्गिणी सेना आगे पीछे चलती [illegible] रहेगी लोग युवराज राम की जय जय-कार करते र[illegible]गे, और इसी मझली रानी के प्राँगण में इसी तरह ([illegible] राज की तरह) हम आप सब एक रहेंगे और चारों [illegible] राजकुमार यहीं आकर आपको, हमें प्रणाम करेंगे, व[illegible] छटा जब हम देखेंगी तो हम लोग अपने मनुष्य जन्म को सफल मानेंगी । सपत्नि की बात से सबसे अधिक प्रसन्नता मझली पट्ट महिषी श्री कैकेयी जी को हुई उ[illegible] अनेकों बहुमूल्य रत्न-वस्त्र, 'स्वर्ण,' गाय बालक राम [illegible] निछावर करके वितरण करवाया ॥ १२-२५ ॥

यह देखकर कैकेयी जी की एक दासी जिसका नाम उसके नीच स्वभाव के अनुसार ही मंथरा था जो मन्द आचरण वाली त्रिवक्रा और क्रूरगामिनी थी वह कैकेयी को घूर घूर कर एकान्त में चलने का इशारा करने लगी । तब कैकेयी ने मुसकाते हुये कौशिल्या जी से प्रार्थना की कि जीजी ! वक्र गामिनी मंथरा लाल-लाल आंख किये घूर रही है यह आप सब देखती ही हैं, आज्ञा हो तो अलग जाकर इस कुटिला की बात भी सुनलूँ । ॥२६-३०॥

सपत्नियों से आज्ञा लेकर एकान्त में जाते ही कुब्जा ने कहा कि हे मुग्धे! सौन्दर्य गर्विते !! तुम अपने पूर्व वृत्तान्त को बिना जाने ही ऐश्वर्य मद-मत्त होकर घर में क्रीड़ा करते घूमती हो, और वहां से दूर एकान्त महल में जाकर रत्नजटित पलंग पर बैठाकर पहले सुन्दर ताम्बूल बीड़ा देकर चंवर डुलाने लगी। पान खाकर महारानी ने कहा अरे! तुझे जो कहना हो जल्दी कह। मुझे क्यों रानियों के पास से उठाकर [illegible]ई है मेरा मन बबुआ राम में लगा है मैं जल्दी [illegible]ऊँगी। मंथरा ने ओष्ठ पर तर्जनी रखते हुये [illegible] से कहा क्या रानी जी ने सौतों की बातें नहीं [illegible]नीं जो राम को युवराज बनवाना चाहती हैं? उन[illegible] बातें सुनकर तो मुझे आपके विवाह की बात याद आ गई। महारानी कैकेयी ने कहा कि मेरे स्वयंवर की कौन सी बात तुझे याद आ गई ॥ ३१-३६॥

पंच[illegible] अध्याय

मंथरा कहने लगी—एक बार देवर्षि नार[illegible] जी राजा दशरथ के पास आये। राजा ने यथोचित[illegible]पूजन प्रणाम करके पूछा कि महात्मन्! आप[illegible] तीनों लोकों में अबाध रूप से घूमते हैं कहीं [illegible] नवीन आश्चर्य देखा हो तो बताइये ॥१-४॥ [illegible]रद जी ने कहा किमैं ब्रह्मलोक से पृथ्वी मण्डल पर [illegible]आकर अनेक शहरों एवं तीर्थों में घूमा पर कैकयनरे[illegible] श्री अश्वपति जी की कन्या के समान [illegible] सुन्दरी मैंने कहीं नहीं देखी। मैंने उसकी हस्त[illegible]रेखा भी देखी थी कि उसके महान् यशस्वी, म[illegible] तपस्वी एवं महान् ज्ञानी अथच वीर पुत्र हो[illegible], अतः आप अवश्य उसके साथ जैसे भी बने [illegible]विवाह कीजिये। ऐसा कह कह कर नारद जी [illegible]लोक चले गये ॥५-१२॥ राजा दशरथ [illegible] कैकयनरेश की कन्या कैसे प्राप्त हो' [illegible]चिन्तन करते ही थे कि उसी समय एक देवयोगिनी ने जाकर राजा से पूछा कि आप क्या विचार रहे हैं? आपके पास अनेक अक्षौहिणी सैन्य, अकण्टक विशाल राज्य, सुयोग्य मन्त्रिमण्डल, रति से भी बढ़कर सुन्दरी साढ़े सात सौ पतिव्रता रानियां हैं। देवताओं को चकित कर देने वाला आपका प्रभाव है फिर आप किस शोक में उदास हैं ॥१३-१७॥

राजा ने कहा हे पण्डिते! नारद जी कैकयकुमारी का रूप, गुण, भाग्य बखान करके मेरे हृदय में नई आग लगा गये हैं और कह गये हैं कि उससे विवाह करो। अब यदि मैं राजा अश्वपति के पास दूत भेजं तो लोग मेरा उपहास करेंगे कि परमधार्मिक सत्यसन्ध अथच वृद्धोपसेवक होकर रघुकुल भूषण दशरथ स्वयंवर की प्रतीक्षा न करके या विजय न करके राजा से कन्या भीख मांग रहे हैं ॥१८-२२॥ देवयोगिनी ने कहा—मैं अपनी माया से देवी और गंधर्वी तक को मोह सकती हूँ मानुषी किस गणना में है, मैं अभी ही कैकेयी को तुम्हारे पास ला सकती हूँ। परन्तु यह सज्जनों का धर्म नहीं है, जो छल से परस्त्री या पर कन्या की इच्छा करता है उसे यमदूत गण बहुत बहुत ताड़ना देते हुये घोर नरक में भेजते हैं। इसलिये मैं उसे तुम्हारे साथ विवाह करने के लिये ही तैयार कर दूंगी। ऐसा कह कर वह योगिनी ग्रामों, जनपदों, नदियों, पर्वतों, वनों को आकाश मार्ग से पार करती हुई अल्पकाल में ही कैकय की राजधानी में नगर के बाहर एक सुन्दर तालाब पर उतरी। वह तालाब अनेकों पक्षियों एवं रङ्ग बिरङ्गी कमलों से परम शोभित था। उस तालाब का निःपंक जल साधुओं के हृदय के सामान स्वच्छ एवं शीतल था ॥ २२-३१ ॥

योगिनी ने विचार किया कि मैं यही पर्णकुटी बनाकर कायक्लेश का ढोंग रचकर महान् तपस्विनी के रूप में अपना विज्ञापन करूँ। यहां लोग नित्य स्नान करने आते ही हैं प्रसिद्धि सुनकर जब कभी राजकन्या मेरे पास आयेगी तो उसे अपने वाक्जाल में फँसाकर उस राज कन्या के ले जाने से जब

महल में प्रवेश करूँगी तो मेरा सारा [illegible]म बन जायेगा । ऐसा निश्चय करके वह योगि[illegible] वहीं तालाब पर रहने लगी ॥ ३२-३६ ॥

मंथरा ने आगे कहा कि—नगर की अनेक संभ्र[illegible] नारियों से सुनकर तुमने भी स्नान करने जाकर तपस्विनी को देखा, तुमतो सब जानती ही हो अथवा निन्दनीय बात होने से तुम भूल गई होगी, परन्तु मैं तुमसे प्रेम करने के कारण न भूल सकी। तुम्हें नख सिख तक परम सुन्दरी देखकर अंदाज से अश्वपति राजा की कन्या जानकर कहने लगी कि अहा ! ऐसा अप्रतिम सुन्दर रूप तो मैंने तीनलोक चौदहो भुवन में कहीं नहीं देखा है, तुम्हारा रूप और लक्षण तो किसी चक्रवर्ती की महिषी होने योग्य है ऐसा कहकर योगिनी चुप हो गई ॥३७-४५॥ तब तुम हँसते हुये प्रार्थना करके उस कपट योगिनी को अपने साथ महल में लिवा ले गई और अपनी माता से प्रार्थना करके अपने राज प्रासाद के ऊपरी खण्ड में उसका वास स्थान देकर उसका समस्त सुख सुविधाओं का प्रबन्ध कर दिया । एक दिन योगिनी ने तुमसे कहा कि राजपुत्रि ऐसे यशस्वी तुम्हारे पिता, शीलमति माता, आश्चर्यमय भवन, काम की सेना समान सखियाँ, माता-पिता का यश [illegible]ढ़ाने वाला महाबली तुम्हारा भाई और ऐसा देव-[illegible]भ तुम्हारा कान्ति यौवन सम्पन्न रूप और कहां तक [illegible]कहा जाय संसार में कोई भी तुम्हारे तुल्य नहीं है प[illेgible]न्तु इतना होते हुये भी तुम्हारी जवानी व्यर्थ जा रही है । इस तुम्हारे रूप यौवन को सफल करने वाला को[illegible]ई तुम्हारे योग्य रूप यौवन सम्पन्न चक्रवर्ती नरेश तुम्[illegible] अपनाये तभी तुम्हारा जीवन सफल है, ऐसा कहक[illegible] वह जन-मन मोहिनी-योगिनी चुप हो गई ॥ ४६-५५ ॥

षष्ठ अध्याय

मंथरा ने आगे कहा कि योगिनी की उपर्युक्त बातें सुनकर तुम (कैकेयी) ने कहा कि 'हे योगिनी जी ! आपतो परोपकार के लिये ही साधन करते हुये समस्त पृथ्वी पर घूमा करती हैं । जो भगवद्-ध्यान में तत्पर भगवान् के शरणागत होते हैं वे सभी परोपकारी होते हैं । अतः कृपा करके मुझे ऐसा पति प्राप्त कराइये जो महा प्रतापी, शत्रु विजयी, धर्मज्ञ, सुशील सदाचारी और कहां तक कहूँ सर्व लक्षण सम्पन्न राज शार्दूल हो। तुम्हारी (कैकेयी की) बात सुनकर तुम्हें अपने वश में जानकर योगिनी कहने लगी ॥ १-६ ॥ हे रम्भोरु ! वरानने ! यदि तुम्हें मेरा विश्वास है तो सुनो, एक ऐसा महा-प्रतापी सुदर्शनीय राजा है जिनको देवता दैत्य असुरादि सभी डरकर प्रणाम करते हैं और जो समस्त देवासुर से वन्दनीय ब्रह्मा-विष्णु से सेवित परब्रह्म की आद्यपुरी-अयोध्या जी का प्रशासन करते हैं । जिनके राज्य में देवता, किन्नर, सिद्ध, चारण, मनुष्यों में चारों वर्ण, चारों आश्रम सभी धर्म वाले अपने अ[illegible]पने धर्म में तत्पर रहते हैं । वहां के स्त्री-पुरुष सभी र[illegible] एवं काम के समान सुन्दर हैं, वहां अनेकों रङ्ग के [illegible]मलों से एवं रङ्ग-विरङ्गी जलपक्षियों से सम्पन्न विवि[illegible]धप्रकार के मणिजटित घाटों से शोभित श्री सरयू नदी [illegible] सर यू जी के किनारे के प्रासाद-महल तो ऐसे सुन्दर [illegible] मानो देवताओं की कल्पना से प्रसूत हैं । उन सरयू जी [illegible] दर्शन-मात्र से समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं और दर्शक परम्पद महा वैकुण्ठ के अधिकारी हो जाते हैं ॥ ६-१२ ॥ उस अयोध्यानगरी के शासक इस समय श्री दशरथ जी हैं, जो महान् भाग्यवान्, धर्मज्ञ सभी धर्मात्माओं के रक्षक, राजाओं में मुख्य, ज्ञानियों के सत्संगी एवं चक्रवर्ती हैं । शत्रुहन्ता, सत्यसन्ध महाराज दशरथ जी महेन्द्र के समान दुर्धष, तेज में मानो दूसरे अग्निदेव, शंकर जी के समान कृपालु, माता-पिता के समान सहिष्णु, वृहस्पति के समान ज्ञानी और कामदेव से भी बढ़ कर सुन्दर हैं, जिन्होंने अपने महान् धनुष की टंकार

मात्र से शत्रुओं का गर्व खर्व कर दिया है। हे सुलोचने यदि किसी तरह उन दशरथ जी को पति रूप में प्राप्त कर लो तब तो तुम्हारे इस सौन्दर्य एवं युवावस्था की सार्थकता है ॥ १३-१८॥ ऐसा सुनकर तुम (कैकेयी) योगिनी से कहा कि—जैसा आपने कहा ऐसे ही नारद जी भी एक दिन कह रहे थे, और तभी से मैं उन राजसिंह अयोध्यानरेश को चाहने लगी हूँ। आज आपकी बात से मेरी उत्कण्ठा और भी बढ़ गई, अब कोई ऐसा उचित एवं सुन्दर उपाय बताइये जिससे वे मेरे पति बनें। योगिनी ने कहा कि उचित उपाय तो यह है कि तुम अन्न जल का परित्याग करके उदासीनता धारण करलो तो तुम्हारा काम जल्दी बन जायेगा। तुमने योगिनी के उपदेश से वैसा ही किया। तुम्हरी सखियों ने देखा कि राजकुमारी जी अपने वस्त्रों तक का ख्याल नहीं रखतीं, न पान खातीं हैं न शृंगार करतीं हैं न सजावट और नृत्य तमाशा देखती हैं, सुन्दर सखियों से घिरी रहने पर भी हरदम घुटती सी रहती हैं, भीतर भीतर रुदन को दाब रखने से हरदम हिचकी लेती रहती हैं ॥ १६-२७॥ तब सखियों ने एक दिन तुम्हारी माता से तुम्हारी दशा बताकर कहा कि जबसे वह मायाविनी योगिनी आई है तबसे राजकुमारी जी की यह दशा है। उसीने अनेक राजाओं की चित्र-विचित्र कथायें सुनाकर राजकुमारी जी पर कोई जादू सा कर दिया है। सखियों की बात सुनकर महारानी जी तुरन्त अपनी प्राण-प्रिय पुत्री कैकेयी के (तुम्हारे) पास गई और मलीन एवं कृश देख कर पूछने लगीं ॥ २८-३६॥ *इति षष्ठो ऽध्यायः ॥*

अयोध्यानरेश और कोशलराजकुमारी का विवाह

(संकलयिता) "*आचार्य*"

अयोध्यानरेश दशरथ और राजकुमारी कौशिल्या का विवाह निश्चित हो चुका था। जिस दिन विवाह होने वाला था उसके केवल पांच दिन पहिले 'राक्षसराज' रावण को पितामह ब्रह्मा से इसका पता लग गया था। उसने अयोध्या पहुँच कर महाराज दशरथ को और उनके मन्त्री सुमन्त को सरयू में डुबा दिया। दैवयोग से ये दोनों बहते-डूबते सरयू से गंगा की धारा में पहुँच गये और वहां से समुद्र में निकल गये।

फिर उसने जाकर रावण ने राजकुमारी को हर लिया और उनको एक पेटी में बन्द कर अपने मित्र मत्स्यराज को सौंप दिया। अकस्मात मत्स्यराज को अपने शत्रु से लड़ने की आवश्यकता पड़ी। अतः उसने पेटी को एक टापू में रखकर लड़ने की ठानी। पेटी का टापू पर पहुँचना था कि बहते हुये दशरथ और सुमन्त भी वहीं पहुँच गये।

उन्होंने पेटी खोली। देखा! राजकुमारी कौशल्या वहां मौजूद थी। सौभाग्य से उस समय मुहूर्त भी वही था जिसमें विवाह का होना निश्चित हुआ था बस उसी घड़ी महाराज और राजकुमारी का वहीं विवाह हो गया।

विवाह होते ही महाराज ने अपने भाग्य को राजकुमारी के साथ जोड़ दिया। सुमन्त के साथ वह भी उसी पेटी में बैठ गये। पेटी बन्द करली गई। अपने शत्रु पर विजय पाकर मत्स्यराज आये और पेटी ले गया। बाद में जब रावण ने पेटी मंगाकर खोली और दशरथ को वहां पाया तब वह चकित रह गये। उसने दोनों को मारना चाहा। किन्तु पितामह ब्रह्मा के यह समझाने पर कि "जो होना है वह होकर रहेगा, उस होनी को स्वयं बुलाना उचित नहीं," उसने उनको अयोध्या पहुँचा दिया।

—आनन्द रामायण से

श्रीं मारुति-मन्दिर

(श्री 'च[illegible]')



"अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं,
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं,
रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥"

हिन्दू धर्म चैतन्य का उपासक है। चेतन रहित जड़ की सत्ता ही हमें स्वीकार नहीं। लोग जिसे जड़ कहते हैं, वह है, इसलिये उसमें चेतन अवश्य है। शरीर सभी का जड़ है, इसमें तो कोई शंका-सन्देह है नहीं; किन्तु शरीर में जब चेतन नहीं रहता—आप उसे न जलावें, न गाड़ें तो भी वह कितनी देर रह सकेगा ? क्या यह सिद्ध नहीं करता कि जिसे भी आप जड़ देखते-जानते हैं, वह अपने चेतन के सहारे ही स्थित है। इस चेतन को अधिष्ठाता कहते हैं। जैसे देह का अधिष्ठाता जीव है, वैसे ही प्रत्येक पदार्थ, कार्य का भी एक अधिष्ठाता होता है—अधिष्ठाता देवता। उसी अधिष्ठाता देवता के सहारे, उसी की प्रेरणा से उस पदार्थ या कार्य की स्थिति है और उसी देवता की अनुकूलता प्रतिकूलता से वह कार्य या पदार्थ उन्नत, अवनत, किसी के लिये सुखद-दुखद होता है, ऐसा हमारे शास्त्र कहते हैं।

चेतन नित्य हैं और जड़ अनित्य। जन्म एवं नाश जड़ का होता है, चेतन का नहीं हुआ करता। जन्मता-मरता शरीर है, जीव नहीं। शरीर की उत्पत्ति माता-पिता के मिलन से, माता के उदर में होती है। सम्भव है सौ दो सौ वर्ष बाद वैज्ञानिक अपने यन्त्रों में भी शरीर बनाने लगें। लेकिन शरीर माता के पेट में या यन्त्र में जड़ का निर्माण है, अतः जड़ माध्यमों से सम्पन्न होता है। शरीर का निर्माण उपयुक्त स्थिति में पहुँचने पर चेतन स्वत; कर्मविवश (प्रारब्धवश) अथवा कृपावश उसका अधिष्ठाता बन जाता है।

शरी[illegible] माता के उदर में या यन्त्र में बने; किन्तु वह तभी [illegible] रहेगा जब तक उसका अधिष्ठाता जीव उसमें है। अधिष्ठाता को यन्त्र रोक नहीं सकते और उ[illegible]के चले जाने पर शरीर को बनाये भी नहीं रह [illegible]ते। इसी प्रकार मकान, दूकान, कुर्सी या गाड़ी ज[illegible]भी आप बनाते हैं या जो कुछ आप करते हैं, वह प[illegible]र्थ या क्रिया जड़ है—आपका निर्माण है; किन्तु शास्[illegible] कहता है कि निर्माण पूरा होते ही उसमें अधिदेवता [illegible] जाता है। वह अधिदेवता जिस दिन उस पदा[illegible] कार्य को छोड़ देगा, आपका कोई प्रयत्न उस का[illegible] पदार्थ को नष्ट होने से बचा नहीं सकता। जब तक [illegible] देवता अनुकूल है वह कार्य या पदार्थ उन्नति करता है, सुखद होता है और अधिदेवता के प्रतिकूल होने पर अवनति प्रारम्भ होती है, वह पदार्थ अशुभ बन जाता है।

मानस संघ श्रीराम चरित मानस का प्रचार करने के लिये स्थापित संस्था है और रामवन उसका प्रधान कार्यालय है। इस प्रकार मानस संघ एक महत्तर कार्य देह है और रामवन उसका हृदय है। मानस संघ के अध्यक्ष हैं श्री मारुति भगवान और वही श्रीराम दूत रामवन के अधिष्ठाता देवता हैं।

श्रीराम कथा के उन अनन्यव्रती को छोड़कर मानस के प्रचार का अधिदेवता और कोई हो भी कैसे सकता है।

मानस संघ श्री मारुति की अध्यक्षता में अपना कार्य करता है। रामवन में बे श्री विग्रहरूप से विराजमान हैं और उनकी कृपा का क्षण क्षण अनुभव करता रामवन का यह स्वरूप उनके संकेत पर चल रहा है। श्री विग्रहरूप में रामवन श्रीमारुति भगवान के पधारने की एक कथा है और वह पुण्य कथा आप श्रवण करना चाहेंगे।

रामवन की भूमि में श्रीराम चरित मानस का अखण्ड पारायण गुरुपूर्णिमा सं० २००० को प्रारम्भ हुआ और लगभग पाँच वर्ष तक अहर्निश यह भूमि मानस' के पाठ तथ 'सीताराम' क्रम ध्वनि से गुञ्जित होती रही।

चैत्र नवरात्र संवत् २००१ से कुछ ही पूर्व मैं रामवन आया यहीं रहने के लिए। वैसे तो एक बार पहिले कुछ देर को आ चुका था। नवरात्र में नवाह मानस पाठ सामूहिक रूप से तो होना ही था, कुछ विशेष आयोजन भी कर ... विचार हुआ। मैं और श्री शारदाप्रसाद जी ... दो ही थे जो परस्पर विचार करके कुछ निश्चय कर सकते थे। पुस्तकों तथा मूर्तियों की ... प्रदर्शनी थोड़े से स्थान में सजा दी गई।

... श्री शारदाप्रसाद जी के प्राचीन मूर्ति संग्रह में एक श्रीहनुमान जी की विशाल प्राचीन मूर्ति के खंड भी हैं। मूर्ति के एक चरण को छोड़कर बाकी सभी अंगों के टुकड़े हैं। जहां अखण्ड मानस पाठ होता था, उस चबूतरे के सामने पूर्व दिशा में एक मिट्टी का ढेर इकट्ठा करके मैंने उस प्राचीन मूर्ति के खण्ड उस ढेर के सहारे इस प्रकार टिकाकर खड़े कर दिये कि वह एक पूरी मूर्ति दीखने लगी। जो चरण नहीं है, उसे मिट्टी से बना दिया गया और पूरी मूर्ति पर सिन्दूर लगा दिया गया। अब देखने पर वह एक अखण्ड मूर्ति प्रतीत होने लगी। यह सब केवल प्रदर्शन की शोभा सजावट की भावना से ही मैंने किया था। श्री शारदाप्रसाद जी ने मेरे प्रयत्न को स्वीकृति दी थी।

... समय तपस्वी जी (श्री रामदयालुदास जी) रामवन पधारे। तपस्वी जी जब भी रामवन आते थे ... मील डेढ़ मील में जितने भी श्री हनुमान जी के स्थान हैं, सब पर एक बार जाकर पूजन कर आते थे। इस बार रामवन में उन्होंने स्वभावतः ही उस खण्डित मूर्ति का भी पूजन कर दिया, जिसकी मैंने ऊपर चर्चा की है। हम में से किसी को यह ध्यान नहीं आया कि उन्हें मना करते।

लगभग महीने डेढ़ महीने से रामवन के आस-पास के गांव ही में नहीं, इधर के प्रदेश में प्लेग फैला हुआ था। आस-पास के गांवों में भी बीमारी फैली; किन्तु रामवन में कोई उपद्रव नहीं था और अब तो आस-पास के गांवों में बीमारी का बल समाप्त प्राय था।

सहसा रामवन में एक के बाद दूसरे पाठ करने वाले बीमार पड़ने लगे। तीव्रज्वर, गिल्टी, सभी उपद्रव थे। मैंने मन्त्री जी से कहा—'डरने की बात नहीं है। किसी की मृत्यु टाली नहीं जा सकती; किन्तु प्लेग से यहां कोई नहीं मरेगा।'

मिट्टी के दीपक में राख भरकर उसे मिट्टी के तेल से तर करके गिल्टी पर लगभग आधे घण्टे बंधवा देना केवल एक बार–बस इतनी चिकित्सा थी मेरी। लोग बीमार पड़ते, घर जाते और चार पांच दिन में टीक होकर आ जाते। क्रम क्रम से सबके साथ यही हो रहा था।

धौलपुर वाले बाबा रामदास जी महाराज उसी समय रामवन पधारे थे। राम नौमी उन्होंने यहीं की। दो रात्रि रहकर वे पांच अप्रैल को यहाँ से चले गये उचेहरा। तपस्वी जी भी उनके साथ ही गये और मन्त्री जी उन्हें पहुँचाने गये।

बाबा रामदास जी के रामवन रहते ही मन्त्री जी (श्री शारदाप्रसाद जी) को भी ज्वर आया और गिल्टी उठी। स्वभावतः सतना से उनके लौटने में दो-तीन दिन लग गये। मैं रह गया था रामवन और

श्रीं मारुति–मन्दिर

(श्री '[illegible]

"अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं,
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं,
रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥"

हिन्दू धर्म चैतन्य का उपासक है। चेतन रहित जड़ की सत्ता ही हमें स्वीकार नहीं। लोग जिसे जड़ कहते है, वह है, इसलिये उसमें चेतन अवश्य है। शरीर सभी का जड़ है, इसमें तो कोई शंका-सन्देह है नहीं; किन्तु शरीर में जब चेतन नहीं रहता—आप उसे न जलावें, न गाड़ें तो भी वह कितनी देर रह सकेगा ? क्या यह सिद्ध नहीं करता कि जिसे भी आप जड़ देखते-जानते है, वह अपने चेतन के सहारे ही स्थित है। इस चेतन को अधिष्ठाता कहते हैं। जैसे देह का अधिष्ठाता जीव है, वैसे ही प्रत्येक पदार्थ, कार्य का भी एक अधिष्ठाता होता है—अधिष्ठाता देवता। उसी अधिष्ठाता देवता के सहारे, उसी की प्रेरणा से उस पदार्थ या कार्य की स्थिति है और उसी देवता की अनुकूलता प्रतिकूलता से वह कार्य या पदार्थ उन्नत, अवनत, किसी के लिये सुखद-दुखद होता है, ऐसा हमारे शास्त्र कहते हैं।

चेतन नित्य हैं और जड़ अनित्य। जन्म एवं नाश जड़ का होता है, चेतन का नहीं हुआ करता। जन्मता-मरता शरीर है, जीव नहीं। शरीर की उत्पत्ति माता-पिता के मिलन से, माता के उदर में होती है। सम्भव है सौ दो सौ वर्ष बाद वैज्ञानिक अपने यन्त्रों में भी शरीर बनाने लगें। लेकिन शरीर माता के पेट में या यन्त्र में जड़ का निर्माण है, अतः जड़ माध्यमों से सम्पन्न होता है। शरीर का निर्माण उपयुक्त स्थिति में पहुँचने पर चेतन स्वतः कर्मविवश (प्रारब्धवश) अथवा कृपावश उसका अधिष्ठाता बन जाता है।

महाराज पन्ना से रामवन पधारे। हम सभी जानते हैं कि श्री महाराज जी को श्री हनुमान जी के साक्षात् दर्शन प्रायः होते रहते हैं। श्रीशारदाप्रसाद जी ने महाराज से प्रार्थना की कि वे श्रीहनुमान जी से पूछकर बतावें कि रामवन में यह विपत्ति क्यों आई।

श्री महाराज जी ने दो-तीन दिन पीछे बताया—'श्रीहनुमान जी नाराज हो रहे थे। उनकी खण्डित मूर्ति स्थापित की गई और उसकी तपस्वी ने पूजा [illegible]करदी। श्रद्धा सहित की गई पूजा वे अस्वीकार कैसे [illegible]दें और खण्डित प्रतिमा में प्रवेश करने में उन्हें [illegible] हुआ है। ऐसी भी भूल कहीं की जाती है।'

श्रीमहाराज जी को तब तक न खण्डित प्रतिमा
[illegible]न का पता था और न तपस्वी जी के द्वारा
[illegible]। खण्डित प्रतिमा की पूजा शास्त्र-
शरी[illegible] यह मैं जानता हूँ। हमने उसी दिन उस
वह तभी दे[illegible] दिया। उसके खण्ड हटाते ही अलग-
जीव उसमें [illegible] और अब भी वे वैसे ही धरे हैं।
सकते और उ[illegible] सीमा से लगभग दो फर्लांग दक्षिण
भी नहीं रह स[illegible]ई कच्ची मढ़िया में श्रीहनुमान
कुर्सी या गाड़ी ज[illegible]ीन मूर्ति है। रामवन में पाठ
आप करते हैं, वह प[illegible]े ही उनकी पूजा प्रति-दिन
निर्माण है; किन्तु शास्त्र[illegible] कोई कर आता है। यह
होते ही उसमें अधिदेवता [illegible]
देवता जिस दिन उस पदार्थ [illegible] ढिला दिया
देगा, आपका कोई प्रयत्न उस कार्य [illegible]
नष्ट होने से बचा नहीं सकता। जब तक [illegible]
देवता अनुकूल है वह कार्य या पदार्थ उन्नति करता है, सुखद होता है और अधिदेवता के प्रतिकूल होने पर अवनति प्रारम्भ होती है, वह पदार्थ अशुभ बन जाता है।

मानस संघ श्रीराम चरित मानस का प्रचार करने के लिये स्थापित संस्था है और रामवन उसका प्रधान कार्यालय है। इस प्रकार मानस संघ एक महत्तर कार्य देह है और रामवन उसका हृदय है। मानस संघ के अध्यक्ष हैं श्री मारुति भगवान और वही श्रीराम दूत रामवन के अधिष्ठाता देवता हैं।

"हरिपद रति रस बेद,

[पं० श्री भैरवप्रसाद जी द्विवेदी

मैंने आज समझा। ओह ! मैं अपने जीवन में कितना भटकता रहा। अस्तु; कोई बात नहीं—"*कह कबीर हम युग-युग कहीं। जबहीं चेतो तबहीं सही॥*"

अभी अभी मेरी एक मानस-मर्मज्ञ रामायणी जी से भेंट हो गई, मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई उनके दर्शन से। मैंने विनीत भाव से उनसे कुछ प्रश्न करना प्रारंभ कर दिया।

मैं—महाराज ! मैं आप से कुछ पूछना चाहता ... का

रामायणी—पूछो भैया ! अवश्य पूछो। ...आरम्भ प्रश्न है ? ...रा यह

मैं—महाराज ! मुझे एक बहुत बड़ा ...म ध्वनि और उसे कहने में कुछ संकोच-सा लग रहा

रामायणी—नहीं, नहीं ! संकोच ... ही पूर्व में सब एक ही पिता (परमात्मा) के पुत्र ... तो एक बार आप संकोच न करें। पूछें क्या प्रश्न ...रात्र में नवाह

मैं—महाराज ! मैं एक इन्द्रि...ना ही था, कुछ बड़ा व्यसनी हो गया हूँ कि ... विचार हुआ। मैं देखता हूँ, वहीं विमुग्ध ... दो ही थे जो परस्पर भूल जाता हूँ। लोग मुझे ... कर सकते थे। पुस्तकों करूं, महाराज ? ... प्रदर्शनी थोड़े से स्थान में सजा

रामायण ...

में ... शारदाप्रसाद जी के प्राचीन मूर्ति संग्रह में एक श्रीहनुमान जी की विशाल प्राचीन मूर्ति के खंड भी हैं। मूर्ति के एक चरण को छोड़कर बाकी सभी अंगों के टुकड़े हैं। जहां अखण्ड मानस पाठ होता था, उस चबूतरे के सामने पूर्व दिशा में एक मिट्टी का ढेर इकट्ठा करके मैंने उस प्राचीन मूर्ति के खण्ड उस ढेर के सहारे इस प्रकार टिकाकर खड़े कर दिये कि वह एक पूरी मूर्ति दीखने लगी। जो चरण नहीं है, उसे मिट्टी से बना दिया गया और पूरी मूर्ति पर सिन्दूर लगा दिया गया। अब देखने पर वह एक अखण्ड मूर्ति प्रतीत होने लगी। यह सब केवल प्रदर्शन की शोभा सजावट की भावना से ही मैंने ... श्री शारदाप्रसाद जी ने मेरे प्रयत्न को ...दी थी।

...समय तपस्वी जी (श्री रामदयालुदास जी) ...न पधारे। तपस्वी जी जब भी रामवन आते मुझे ...मील डेढ़ मील में जितने भी श्री हनुमान जी ...स्थान हैं, सब पर एक बार जाकर पूजन कर आते थे। इस बार रामवन में उन्होंने स्वभावतः ही उस खण्डित मूर्ति का भी पूजन कर दिया, जिसकी मैंने ऊपर चर्चा की है। हम में से किसी को यह ध्यान नहीं आया कि उन्हें मना करते।

लगभग महीने डेढ़ महीने से रामवन के आस-पास के गांव ही में नहीं, इधर के प्रदेश में प्लेग फैला हुआ था। आस-पास के गांवों में भी बीमारी फैली; किन्तु रामवन में कोई उपद्रव नहीं था और अब तो आस-पास के गांवों में बीमारी का बल समाप्त प्राय था।

सहसा रामवन में एक के बाद दूसरे पाठ करने वाले बीमार पड़ने लगे। तीव्रज्वर, गिल्टी, सभी उपद्रव थे। मैंने मन्त्री जी से कहा—'डरने की बात नहीं है। किसी की मृत्यु टाली नहीं जा सकती; किन्तु प्लेग से यहां कोई नहीं मरेगा।'

मिट्टी के दीपक में राख भरकर उसे मिट्टी के तेल से तर करके गिल्टी पर लगभग आधे घण्टे बंधवा देना केवल एक बार-बस इतनी चिकित्सा थी मेरी। लोग बीमार पड़ते, घर जाते और चार पांच दिन में ठीक होकर आ जाते। क्रम क्रम से सबके साथ यही हो रहा था।

धौलपुर वाले बाबा रामदास जी महाराज उसी समय रामवन पधारे थे। राम नौमी उन्होंने यहीं की। दो रात्रि रहकर वे पांच अप्रैल को यहाँ से चले गये उचेहरा। तपस्वी जी भी उनके साथ ही गये और मन्त्री जी उन्हें पहुँचाने गये।

बाबा रामदास जी के रामवन रहते ही मन्त्री जी (श्री शारदाप्रसाद जी) को भी ज्वर आया और गिल्टी उठी। स्वभावतः सतना से उनके लौटने में दो-तीन दिन लग गये। मैं रह गया था रामवन और

एक शाम जब मैं भोजन करके कुटिय... लगा कि गिल्टियां उठ रही हैं और ज्वर... तपस्वी, मुझे चिन्ता हुई—'मन्त्री जी हैं नहीं। मैं ...है परन्तु होता हूँ तो पाठ करने वाले सब घबड़ाक... त्माओं जायँगे। उनका जो साहस अब तक मैने ... कर रखा है, वह नष्ट हो जायगा और तब अखण्ड ... बन्द हो जायगा।' लेकिन मेरे पास उपाय क्या था... मैने किसी से कुछ नहीं कहा। मिट्टी का दीपक, राख आदि लेता तो भी बात फैलती। एक सूखे उपले को लालटेन के तेल से भिगाकर मैने गिल्टी के स्थान पर बांध दिया सबेरे नींद टूटी तो मैं पूरा स्वस्थ था। केवल गिल्टियों में तनिक दर्द था जो धीरे धीरे कई दिनों में गया।

मन्त्री जी अच्छे होकर आ गये। श्री गणेशदत्त जी कटारे उन दिनों यहीं थे। वे जब बीमार हुये तो समाचार पाकर उनके चाचा श्री नर्मदाप्रसाद जी कटारे यहां उन्हें देखने आ गये और आकर स्वयं भी बीमार पड़े। उनका भी सबके समान ही उपचार हुआ। प्लेग ने उन्हें छोड़ दिया; किन्तु तुरन्त पेचिश हो गई और फिर भयंकर हिचकी आने लगी।

मेरे कन्हाई ने मेरी बात रखली थी। प्लेग से कोई नहीं मरा। श्री नर्मदाप्रसाद जी भी प्लेग से तो अच्छे हो ही गये; किन्तु हिचकी के दौरे तथा पेचिश से १४-४-१९४४ को रात में उनका शरीरान्त हो गया। प्रातःकाल फिर एक संकट उपस्थित हुआ। शव को श्मशान ले जाना था और रामवन में बहुत कम साधक थे। विवश होकर निर्णय करना पड़ा कि अखण्ड पाठ बन्द कर दिया जाय। 'मानस' पूर्ण होने पर आरती करने को कह दिया गया; किन्तु आरती समाप्त होने से पूर्व ही दैवी सहायता आई। सज्जनपुर (इस समय दुर्जनपुर नाम था) की पाठशाला के एक अध्यापक आ गये। उन्होंने पाठ बन्द न करने का आग्रह किया। पाठ का क्रम कुछ देर अध्यापकों ने चलाया। इस प्रकार अखण्ड पाठ बन्द नहीं हुआ। वह चलता रहा।

कुछ दिन बाद २४ अप्रैल को पन्ना वाले बाबा [श्री रामविजयशरण जी] श्री शङ्करदास जी

रामायणी—हां, भैया! सब साधनों का लक्ष्य तो ज्ञान (फल) ही है।

कहहिं सन्त मुनि बेद पुराना।
नहिं कछु दुर्लभ ज्ञान समाना॥

भला बताओ कि जिस पेड़ में केवल फूल ही फूल लगे और उसमें फल न फले तो वृक्ष लगाने वाले का प्रयास व्यर्थ ही तो रहा?

मैं—महाराज! मैं समझ गया कि सभी साधनों का फल ज्ञान है। ज्ञान से भी कुछ बड़ा है महाराज!

क... रामायणी—नहीं बेटा! सोचो! पहले तो वृक्ष ...या, फिर पुष्प निकला, आगे फल मिलेगा। ...फल से उत्तम वस्तु क्या हो सकती है? अत

के स्था... बड़ा फल ज्ञान ही है।

पूजन ... -महाराज! आप तो एक दिन कथा में का

वर्जित है, ... ज्ञान से भी भक्ति (प्रेम) का स्थान ऊँच

मूर्ति को ह... ज ज्ञान को बड़ा कह रहे हैं?

अलग हो ग... ी—नहीं, भैया! भक्ति (प्रेम) तो सभ

रामवन क...

एक खपरैल से ...! कभी तो ज्ञान बड़ा—कभी भक्ति

जी की अत्यन्त प्र... नों परस्पर विरोधी बातें कैसे

प्रारम्भ होने के समय

रामवन की ओर से कोई ...! तुम इसे और स्पष्ट

व्यवस्था बराबर चल रही है... न और भक्ति

इस घटना ने हम सब को ... कि रामवन का अधिष्ठाता होना उन श्रीरा... स्वतः स्वीकार कर लिया है। बच्चों के अपराध करने पर माता जो मधुर ताड़ना देती है, उसमें उसका कितना असीम वात्सल्य होता है, यह सभी जानते हैं। ऊपर के वर्णित संकट ने श्रीहनुमान जी के उसी वात्सल्य का हमें अनुभव कराया। हमें हमारी भूल के विरुद्ध चेतावनी मिली, साथ ही प्रत्येक स्थिति में हमें अभय संरक्षण देने वे दयालु उपस्थित रहे।

इस प्रकार अपने अधिष्ठाता की कृपा का प्रथम परिचय रामवन को प्राप्त हुआ। रामवन में उन्होंने स्वयं आदेश देकर अपने मन्दिर का निर्माण कराया, यह चर्चा अब आगामी अङ्क में।

पहले पुष्प ही प्रधान मानता था किन्तु आपके प्रसाद से फल का ज्ञान हुआ। आज परम रहस्यमयी यह बात भी समझ ली कि फल से भी बड़ा तो रस है।

रामायणी—हाँ बेटा! सब से श्रेष्ठ तो भक्ति (प्रेम) ही है। सम, यम, नियम-यह तो फूल (साधन) हैं और ज्ञान-फल है तथा उस फल में भी मधुर रस तो भगवान् की भक्ति ही है।

मैं—महाराज! क्या इस पूरे रूपक को मानस से भी स्पष्ट कर सकते हैं?

रामायणी—हां! यह तो मानस का ही सिद्धांत ...

... सुक्या

... व्यसन है
... है।
... यों? हम
... है। भैया!
... है?

... -विषय पुष्प का
... हा भी कहीं पुष्प
... की तरह अपने को

प्रायः एक ... पागल भी कहते हैं। क्या की मूर्ति ...

... (हँसते हुए) भैया! तुम बड़े भाग्य-... जो तुम्हें गन्ध रूपी विषय का व्यसन पड़ गया है। देखो! विषय बुरे नहीं, किन्तु इसे बारीकी से समझना होगा।

मैं—क्या? क्या कहा आपने? विषय बुरे नहीं होते? अरे महाराज! इसकी निन्दा तो वेद, पुराण और सन्त सभी एक मत से करते हैं फिर आप यह आश्चर्यजनक वाणी कैसे कहते हैं?

रामायणी—(हँसते हुए) बेटा! यही तो बारीकी से समझना है। वेद, पुराण, शास्त्र तथा साधु के वाक्यों में बड़ा रहस्य है। उसको बहुत सम्हाल कर समझना पड़ता है।

मैंने कहा ... बखाना"
सुनलो— ...

(१) ... रामायणी]

(२) ...

... —महाराज! इस विषय को आप स्पष्ट करें। ... तो बड़ा आश्चर्य हो रहा है।

... रामायणी—बेटा! ध्यान से सुनो तो तुम्हारा आश्चर्य दूर हो जायगा। जो कुछ भी तुम बाह्य विश्व में विषयादि का अनुभव कर रहे हो, वह व्यर्थ नहीं है। यह प्रकृति-पाठशाला की प्राथमिक शिक्षा है जैसे किसी को वेद पढ़ाना है तो उसे वर्ण-माला का ज्ञान पहिले कराना होगा। बिना वर्णमाला के ज्ञान के वेद की शिक्षा कैसे होगी? उद्देश्य है वेद-ज्ञान और प्रारंभिक शिक्षा है वर्णमाला। समझे इस रहस्य को?

मैं—हाँ, महाराज! अर्थात् केवल वर्णमाला के ज्ञान तक ही संतोष नहीं कर लेना है अपितु उसके आगे वेद का बहुत बड़ा महान् ज्ञान प्राप्त करना है किन्तु वर्णमाला प्राथमिक शिक्षा है।

रामायणी—हां, बेटा! तुमने खूब समझा। जिस प्रकार वेद-ज्ञान के लिये वर्ण-माला-ज्ञान प्राथमिक शिक्षा है। उसी प्रकार प्रकृति-पाठशाला में ब्रह्म-ज्ञान के लिये विषय ज्ञान प्राथमिक शिक्षा है। वेद-ज्ञान हो जाने से जैसे वर्णमाला का रटना नितान्त अरुचि पूर्ण और अनावश्यक हो जाता है, उसी प्रकार प्रकृति की प्राथमिक शिक्षा के विषय को भी समझो।

मैं—महाराज! इस प्रश्नोत्तर से मुझे बहुत ही आनन्द मिल रहा है। उसे कुछ और स्पष्ट करें।

रामायणी—बेटा! तुम सुगन्ध के प्रेमी हो। यह गन्ध क्षणिक, नाशवान और कुछही दूर तक सीमित रहने वाली है। फिर भी तुम उस पर विमुग्ध हो।

मैं—हां, महाराज!

रामायणी—यदि मैं ऐसी दिव्य गन्ध को बता दूँ जो अक्षुण्ण, शाश्वत् तथा विश्व-व्याप्त हो तो?

मैं—महाराज! यह दास सदा आभारी रहेगा।

एक शाम जब मैं भोजन करके कुटिया ... लगा कि गिल्टियां उठ रही हैं और ज्वर ... मुझे चिन्ता हुई—'मन्त्री जी हैं नहीं। मैं ... होता हूँ तो पाठ करने वाले सब घबड़ा ... जायँगे। उनका जो साहस अब तक मैंने ... रखा है, वह नष्ट हो जायगा और तब अखण्ड ... बन्द हो जायगा।' लेकिन मेरे पास उपाय क्या था ... मैंने किसी से कुछ नहीं कहा। मिट्टी का दीपक, राख आदि लेता तो भी बात फैलती। एक सूखे उपले को लालटेन के तेल से भिगाकर मैंने गिल्टी के स्थान पर बांध दिया सबेरे नींद टूटी तो मैं पूरा स्वस्थ था। केवल गिल्टियों में तनिक दर्द था जो धीरे धीरे कई दिनों में गया।

मन्त्री जी अच्छे होकर आ गये। श्री गणेशदत्त जी कटारे उन दिनों यहीं थे। वे जब बीमार हुये तो समाचार पाकर उनके चाचा श्री नर्मदाप्रसाद जी कटारे यहां उन्हें देखने आ गये और आकर स्वयं भी बीमार पड़े। उनका भी सबके समान ही उपचार हुआ। प्लेग ने उन्हें छोड़ दिया; किन्तु तुरन्त पेचिश हो गई और फिर भयंकर हिचकी आने लगी।

मेरे कन्हाई ने मेरी बात रखली थी। प्लेग से कोई नहीं मरा। श्री नर्मदाप्रसाद जी भी प्लेग से तो अच्छे हो ही गये; किन्तु हिचकी के दौरे तथा पेचिश से १४-४-१९४४ को रात में उनका शरीरान्त हो गया। प्रातःकाल फिर एक संकट उपस्थित हुआ। शव को श्मशान ले जाना था और रामवन में बहुत कम साधक थे। विवश होकर निर्णय करना पड़ा कि अखण्ड पाठ बन्द कर दिया जाय। 'मानस' पूर्ण होने पर आरती करने को कह दिया गया; किन्तु आरती समाप्त होने से पूर्व ही दैवी सहायता आई। सज्जनपुर (इस समय दुर्जनपुर नाम था) की पाठशाला के एक अध्यापक आ गये। उन्होंने पाठ बन्द न करने का आग्रह किया। पाठ का क्रम कुछ देर अध्यापकों ने चलाया। इस प्रकार अखण्ड पाठ बन्द नहीं हुआ। वह चलता रहा।

कुछ दिन बाद २४ अप्रैल को पन्ना वाले बाबा [श्री रामविजयशरण जी] श्री शङ्करदास जी

...ी आज्ञा के बिना लक्ष्मण जी ... क्यों बोल उठे?

[... ...नीप्रसाद जी द्विवेदी]

... अनुचित बानी।
... मनि जानी॥

...समय जो सेवक "रदपट फरकत नयन रिसौंहैं ... क...ा को प्राप्त था वह जनक जी का आदर करेगा ... स्वामी निन्दक को प्रतिष्ठा देना सेवक का ध... के स्थ... गुरुवर वशिष्ठ को तथा बड़े भाई भरत को ... पूजन ... राम जी से विरोधाभास के कारण कु... वर्जित है, ...ी नहीं, फिर उनके आगे जनक की कौ... मूर्ति को ह... ? अतः वह अनुचित कथन का समय थ... अलग हो ग...यों मना करता। किसी को वह बुरा भ... ...लिक उससे सभी बुद्धिमानों को हर्ष प्रा...

रामवन के ... ...नक जी भी अपनी गलती पर सकुच... एक खपरैल से ... ...ा कि उन्हें बिना आज्ञा बीच ... जी की अत्यन्त प्र... ...श्यकता थी? इसका समाधा... प्रारम्भ होने के समय ... धर्म था। वैसा न कर... रामवन की ओर से कोई ... पर सब लोग 'अनुचि... व्यवस्था बराबर चल रही है ... से क्रोधावेश

इस घटना ने हम सब को ... घरा ... कि रामवन का अधिष्ठाता होना उन श्री... स्वतः स्वीकार कर लिया है। बच्चों के अपराध करने पर माता जो मधुर ताड़ना देती है, उसमें उसका कितना असीम वात्सल्य होता है, यह सभी जानते हैं। ऊपर के वर्णित संकट ने श्रीहनुमान जी के उसी वात्सल्य का हमें अनुभव कराया। हमें हमारी भूल के विरुद्ध चेतावनी मिली, साथ ही प्रत्येक स्थिति में हमें अभय संरक्षण देने वे दयालु उपस्थित रहे।

इस प्रकार अपने अधिष्ठाता की कृपा का प्रथम परिचय रामवन को प्राप्त हुआ। रामवन में उन्होंने स्वयं आदेश देकर अपने मन्दिर का निर्माण कराया, यह चर्चा अब आगामी अङ्क में।

"पराधीन सुख सप[illegible] बखाना"

(श्री पं० केशरीकिशोर शरण [illegible] रामायणी]

'*पराधीन सुख सपनेहु नाहीं*' का नारा लगाकर पूज्य-पाद गोस्वामी जी ने आज से लगभग चार सौ वर्ष पूर्व गुलामी के विरुद्ध आवाज बुलन्द की थी। जिस समय इस महान् व्यक्ति का प्रादुर्भाव हुआ [illegible] हमारा देश पराधीन ही था। पराधीनता में प्रजा [illegible] कैसी दशा रहती है उसका सम्यक अवलोकन [illegible] किया, उसका अनुभव भी किया एवं [illegible] प्राणियों को इस असह्यभार से मुक्त करने [illegible] संकल्प कर नव-निर्माण की ओर [illegible] उठाया। उस सुराज्य की कल्पना भी क[illegible] सन है सभी प्राणी सुख-शान्ति पूर्वक जीवन य[illegible] है। तथा उसके संविधान की ओर भी सं[illegible] यों ? हम '*जिमि सुराज खल उद्यम गयउ*।' वे [illegible] हैं। भैया ! विचारों को 'मानस' के पृष्ठों पर [illegible] ? गये, आने वाली अपनी संस्कृति [illegible] विषय पुष्प का का ह्रास देख कर इस दूर[illegible] हीं भी कहीं पुष्प दुर्दशा का अनुमान लगा [illegible] की तरह अपने को अवश्यम्भावी थी। [illegible] गल भी कहते हैं। क्या करने के लि[illegible]

[illegible] (हँसते हुए) भैया ! तुम बड़े भाग्य-[illegible] में [illegible] जो तुम्हें गन्ध रूपी विषय का व्यसन पड़ गया है। देखो ! विषय बुरे नहीं, किन्तु इसे बारीकी से समझना होगा।

मैं—क्या ? क्या कहा आपने ? विषय बुरे नहीं होते ? अरे महाराज ! इसकी निन्दा तो वेद, पुराण और सन्त सभी एक मत से करते हैं फिर आप यह आश्चर्यजनक वाणी कैसे कहते हैं ?

रामायणी—(हँसते हुए) बेटा ! यही तो बारीकी से समझना है। वेद, पुराण, शास्त्र तथा साधु के वाक्यों में बड़ा रहस्य है। उसको बहुत सम्हाल कर समझना पड़ता है।

[illegible]—महाराज ! इस विषय को आप स्पष्ट करें। [illegible] तो बड़ा आश्चर्य हो रहा है।

[illegible] रामायणी—बेटा ! ध्यान से सुनो तो तुम्हारा आश्चर्य दूर हो जायगा। जो कुछ भी तुम बाह्य विश्व में विषयादि का अनुभव कर रहे हो, वह व्यर्थ नहीं है। वह प्रकृति-पाठशाला की प्राथमिक शिक्षा है जैसे किसी को वेद पढ़ाना है तो उसे वर्ण-माला का ज्ञान पहिले कराना होगा। बिना वर्णमाला के ज्ञान के वेद की शिक्षा कैसे होगी ? उद्देश्य है वेद-ज्ञान और प्रारंभिक शिक्षा है वर्णमाला। समझे इस रहस्य को ?

मैं—हाँ, महाराज ! अर्थात् केवल वर्णमाला के ज्ञान तक ही संतोष नहीं कर लेना है अपितु उसके आगे वेद का बहुत बड़ा महान् ज्ञान प्राप्त करना है किन्तु वर्णमाला प्राथमिक शिक्षा है।

रामायणी—हां, बेटा ! तुमने खूब समझा। जिस प्रकार वेद-ज्ञान के लिये वर्ण-माला-ज्ञान प्राथमिक शिक्षा है। उसी प्रकार प्रकृति-पाठशाला में ब्रह्म-ज्ञान के लिये विषय ज्ञान प्राथमिक शिक्षा है। वेद-ज्ञान हो जाने से जैसे वर्णमाला का रटना नितान्त अरुचि पूर्ण और अनावश्यक हो जाता है, उसी प्रकार प्रकृति की प्राथमिक शिक्षा के विषय को भी समझो।

मैं—महाराज ! इस प्रश्नोत्तर से मुझे बहुत ही आनन्द मिल रहा है। उसे कुछ और स्पष्ट करें।

रामायणी—बेटा ! तुम सुगन्ध के प्रेमी हो। यह गन्ध क्षणिक, नाशवान और कुछही दूर तक सीमित रहने वाली है। फिर भी तुम उस पर विमुग्ध हो।

मैं—हां, महाराज !

रामायणी—यदि मैं ऐसी दिव्य गन्ध को बता दूँ जो अक्षुण्ण, शाश्वत् तथा विश्व-व्याप्त हो तो ?

मैं—महाराज ! यह दास सदा आभारी रहेगा।

एक शाम जब मैं भोजन करके कुटिया को चला-लगा कि गिल्टियां उठ रही हैं और ज्वर आवेगा। मुझे चिन्ता हुई—'मन्त्री जी हैं नहीं। मैं भी बीमार होता हूँ तो पाठ करने वाले सब घबड़ाकर भाग जायँगे। उनका जो साहस अब तक मैंने बनाये रखा है, वह नष्ट हो जायगा और तब अखण्ड पाठ बन्द हो जायगा।' लेकिन मेरे पास उपाय क्या था। मैंने किसी से कुछ नहीं कहा। मिट्टी का दीपक, राख आदि लेता तो भी बात फैलती। एक सूखे उपले को लालटेन के तेल से भिगाकर मैंने गिल्टी के स्थान पर बांध दिया सबेरे नींद टूटी तो मैं पूरा स्वस्थ था। केवल गिल्टियों में तनिक दर्द था जो धीरे धीरे कई दिनों में गया।

मन्त्री जी अच्छे होकर आ गये। श्री गणेशदत्त जी कटारे उन दिनों यहीं थे। वे जब बीमार हुये तो समाचार पाकर उनके चाचा श्री नर्मदाप्रसाद जी कटारे यहां उन्हें देखने आ गये और आकर स्वयं भी बीमार पड़े। उनका भी सबके समान ही उपचार हुआ। प्लेग ने उन्हें छोड़ दिया; किन्तु तुरन्त पेचिश हो गई और फिर भयंकर हिचकी आने लगी।

मेरे कन्हाई ने मेरी बात रखली थी। प्लेग से कोई नहीं मरा। श्री नर्मदाप्रसाद जी भी प्लेग से तो अच्छे हो ही गये; किन्तु हिचकी के दौरे तथा पेचिश से १४-४-१६४४ को रात में उनका शरीरान्त हो गया। प्रातःकाल फिर एक संकट उपस्थित हुआ। शव को श्मशान ले जाना था और रामवन में बहुत कम साधक थे। विवश होकर निर्णय करना पड़ा कि अखण्ड पाठ बन्द कर दिया जाय। 'मानस' पूर्ण होने पर आरती करने को कह दिया गया; किन्तु आरती समाप्त होने से पूर्व ही दैवी सहायता आई। सज्जनपुर (इस समय दुर्जनपुर नाम था) की पाठशाला के एक अध्यापक आ गये। उन्होंने पाठ बन्द न करने का आग्रह किया। पाठ का क्रम कुछ देर अध्यापकों ने चलाया। इस प्रकार अखण्ड पाठ बन्द नहीं हुआ। वह चलता रहा।

इस दिन बाद २४ अप्रैल को पन्ना वाले बाबा [श्री रामकिङ्करशरण जी] श्री शङ्करदास जी महाराज पन्ना से रामवन पधारे। हम सभी जानते हैं कि श्री महाराज जी को श्री हनुमान जी के साक्षात् दर्शन प्रायः होते रहते हैं। श्रीशारदाप्रसाद जी ने महाराज से प्रार्थना की कि वे श्रीहनुमान जी से पूछकर बतावें कि रामवन में यह विपत्ति क्यों आई।

श्री महाराज जी ने दो-तीन दिन पीछे बताया—'श्रीहनुमान जी नाराज हो रहे थे। उनकी खण्डित मूर्ति स्थापित की गई और उसकी तपस्वी ने पूजा करदी। श्रद्धा सहित की गई पूजा वे अस्वीकार कैसे करदें और खण्डित प्रतिमा में प्रवेश करने में उन्हें कष्ट हुआ है। ऐसी भी भूल कहीं की जाती है।'

श्रीमहाराज जी को तब तक न खण्डित प्रतिमा के स्थान का पता था और न तपस्वी जी के द्वारा पूजन का। खण्डित प्रतिमा की पूजा शास्त्र-वर्जित है यह मैं जानता हूँ। हमने उसी दिन उस मूर्ति को हटा दिया। उसके खण्ड हटाते ही अलग-अलग हो गये और अब भी वे वैसे ही धरे हैं।

रामवन की सीमा से लगभग दो फर्लांग दक्षिण एक खपरैल से छाई कच्ची मढ़िया में श्रीहनुमान जी की अत्यन्त प्राचीन मूर्ति है। रामवन में पाठ प्रारम्भ होने के समय से ही उनकी पूजा प्रति-दिन रामवन की ओर से कोई न कोई कर आता है। यह व्यवस्था बराबर चल रही है।

इस घटना ने हम सब को फिर से याद दिला दिया कि रामवन का अधिष्ठाता होना उन श्रीराम-दूत ने स्वतः स्वीकार कर लिया है। बच्चों के अपराध करने पर माता जो मधुर ताड़ना देती है, उसमें उसका कितना असीम वात्सल्य होता है, यह सभी जानते हैं। ऊपर के वर्णित संकट ने श्रीहनुमान जी के उस वात्सल्य का हमें अनुभव कराया। हमें हमारी भूल के विरुद्ध चेतावनी मिली, साथ ही प्रत्येक स्थिति में हमें अभय संरक्षण देने वे दयालु उपस्थित रहे।

इस प्रकार अपने अधिष्ठाता की कृपा का प्रथम परिचय रामवन को प्राप्त हुआ। रामवन में उन्होंने स्वयं आदेश देकर अपने मन्दिर का निर्माण कराया यह चर्चा अब आगामी अङ्क में।

"हरिपद रति रस बेद बखाना"

[पं० श्री भैरवप्रसाद जी द्विवेदी, रामायणी]

मैंने आज समझा । ओह ! मैं अपने जीवन में कितना भटकता रहा । अस्तु; कोई बात नहीं—"*कह कबीर हम युग-युग कहीं । जबहीं चेतो तबहीं सही ॥*"

अभी अभी मेरी एक मानस-मर्मज्ञ रामायणी जी से भेंट हो गई, मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई उनके दर्शन से । मैंने विनीत भाव से उनसे कुछ प्रश्न करना प्रारंभ कर दिया ।

मैं—महाराज ! मैं आप से कुछ पूछना चाहता हूँ ।

रामायणी—पूछो भैया ! अवश्य पूछो । क्या प्रश्न है ?

मैं—महाराज ! मुझे एक बहुत बड़ा व्यसन है और उसे कहने में कुछ संकोच-सा लग रहा है ।

रामायणी—नहीं, नहीं ! संकोच क्यों ? हम सब एक ही पिता (परमात्मा) के पुत्र हैं । भैया ! आप संकोच न करें । पूछें क्या प्रश्न है ?

मैं—महाराज ! मैं एक इन्द्रिय-विषय पुष्प का बड़ा व्यसनी हो गया हूँ कि जहां भी कहीं पुष्प देखता हूँ, वहीं विमुग्ध भ्रमर की तरह अपने को भूल जाता हूँ । लोग मुझे पागल भी कहते हैं । क्या करूं, महाराज ?

रामायणी—(हँसते हुए) भैया ! तुम बड़े भाग्यशाली हो जो तुम्हें गन्ध रूपी विषय का व्यसन पड़ गया है । देखो ! विषय बुरे नहीं, किन्तु इसे बारीकी से समझना होगा ।

मैं—क्या ? क्या कहा आपने ? विषय बुरे नहीं होते ? अरे महाराज ! इसकी निन्दा तो वेद, पुराण और सन्त सभी एक मत से करते हैं फिर आप यह आश्चर्यजनक वाणी कैसे कहते हैं ?

रामायणी—(हँसते हुए) बेटा ! यही तो बारीकी से समझना है । वेद, पुराण, शास्त्र तथा साधु के वाक्यों में बड़ा रहस्य है । उसको बहुत सम्हाल कर समझना पड़ता है ।

मैं—महाराज ! इस विषय को आप स्पष्ट करें । मुझे तो बड़ा आश्चर्य हो रहा है ।

श्री रामायणी—बेटा ! ध्यान से सुनो तो तुम्हारा आश्चर्य दूर हो जायगा । जो कुछ भी तुम बाह्य विश्व में विषयादि का अनुभव कर रहे हो, वह व्यर्थ नहीं है । यह प्रकृति-पाठशाला की प्राथमिक शिक्षा है जैसे किसी को वेद पढ़ाना है तो उसे वर्णमाला का ज्ञान पहिले कराना होगा । बिना वर्णमाला के ज्ञान के वेद की शिक्षा कैसे होगी ? उद्देश्य है वेद-ज्ञान और प्रारंभिक शिक्षा है वर्णमाला । समझे इस रहस्य को ?

मैं—हाँ, महाराज ! अर्थात् केवल वर्णमाला के ज्ञान तक ही संतोष नहीं कर लेना है अपितु उसके आगे वेद का बहुत बड़ा महान् ज्ञान प्राप्त करना है किन्तु वर्णमाला प्राथमिक शिक्षा है ।

रामायणी—हां, बेटा ! तुमने खूब समझा । जिस प्रकार वेद-ज्ञान के लिये वर्ण-माला-ज्ञान प्राथमिक शिक्षा है । उसी प्रकार प्रकृति-पाठशाला में ब्रह्म-ज्ञान के लिये विषय ज्ञान प्राथमिक शिक्षा है । वेद-ज्ञान हो जाने से जैसे वर्णमाला का रटना नितान्त अरुचि पूर्ण और अनावश्यक हो जाता है, उसी प्रकार प्रकृति की प्राथमिक शिक्षा के विषय को भी समझो ।

मैं—महाराज ! इस प्रश्नोत्तर से मुझे बहुत ही आनन्द मिल रहा है । उसे कुछ और स्पष्ट करें ।

रामायणी—बेटा ! तुम सुगन्ध के प्रेमी हो । यह गन्ध क्षणिक, नाशवान और कुछही दूर तक सीमित रहने वाली है । फिर भी तुम उस पर विमुग्ध हो ।

मैं—हां, महाराज !

रामायणी—यदि मैं ऐसी दिव्य गन्ध को बता दूँ जो अक्षुण्ण, शाश्वत् तथा विश्व-व्याप्त हो तो ?

मैं—महाराज ! यह दास सदा आभारी रहेगा ।

रामायणी—बेटा, देखो ! बड़े ब[illegible] तपस्वी, महात्मा जन बहुत दूर निर्जन वन में रहते हैं परन्तु उनकी सुगंध सारे विश्व में व्याप्त है। उन म[illegible]त्माओं ने अपनी बाह्य मुखी इन्द्रियों को अन्तमु[illegible] कर लिया है।

मैं—महाराज ! उस गन्ध वाले फूल का न[illegible] क्या है ?

रामायणी—भैया, सुनो ! हमारे मानसकार ने उस फूल का नाम लिखा है—मानस में । '*सम यम नियम फूल*' बेटा ! जब तुम इन तीनों का अर्थात् (१) सम, (२) यम और (३) नियम तीनों का सम्यक पालन कर लोगे तब देखोगे सुगन्ध ।

मैं—महाराज ! मैं समझ गया। सम,यम और नियम का सम्यक पालन कर लेने से विश्व में दिव्य कीर्त्ति रूपी सुगन्धि फैलने लगती है । बस ! जीवन का परम लक्ष्य तो यही है न, महाराज ?

रामायणी—नहीं, नहीं बेटा ! सम, यम और नियम-यह तो फूल मात्र हैं। क्या वृक्ष लगाकर फूलों से ही तुम सन्तुष्ट हो जाओगे ?

मैं—(सोचकर) नहीं, महाराज !

रामायणी—फिर बोलो ! फूलों से आगे अब और क्या चाहते हो ?

मैं—(हंसकर) महाराज ! फल ।

रामायणी—हां ! भैया तो सुनो ! '*सम, यम, नियम फूल, फल ज्ञाना*' सम, यम और नियम ये तीनों फूल हैं और ज्ञान फल है, समझे ?

मैं—ओह ! महाराज ! कितने ही भ्रमर तो फूलों में ही विमुग्ध हो कर मर गये । उन्हें फलों का ज्ञान ही नहीं ।

रामायणी—हाँ बेटा ! कितने ही साधक सम, यम और नियम (फूल) साधन करते करते ही मर गये किन्तु उन्हें ज्ञान (फल) की प्राप्ति ही नहीं हुई ।

मैं—महाराज ! अब मैं समझ गया कि पुष्प रूपी साधन में ही सन्तुष्ट न होना चाहिये । अपितु ज्ञान रूपी फल के लिये पुरुषार्थ करना चाहिये ।

रामायणी—हां, भैया ! सब साधनों का लक्ष्य तो ज्ञान (फल) ही है ।

कहहिं सन्त मुनि बेद पुराना ।
नहिं कछु दुर्लभ ज्ञान समाना ॥

भला बताओ कि जिस पेड़ में केवल फूल ही फूल लगे और उसमें फल न फले तो वृक्ष लगाने वाले का प्रयास व्यर्थ ही तो रहा ?

मैं—महाराज ! मैं समझ गया कि सभी साधनों का फल ज्ञान है । ज्ञान से भी कुछ बड़ा है महाराज !

रामायणी—नहीं बेटा ! सोचो ! पहले तो वृक्ष ल[illegible]या, फिर पुष्प निकला, आगे फल मिलेगा। अब [illegible]फल से उत्तम वस्तु क्या हो सकती है ? अतः सब [illegible] बड़ा फल ज्ञान ही है ।

मैं[illegible]-महाराज ! आप तो एक दिन कथा में कह रहे थे कि ज्ञान से भी भक्ति (प्रेम) का स्थान ऊँचा है और आज ज्ञान को बड़ा कह रहे हैं ?

रामाय[illegible]—नहीं, भैया ! भक्ति (प्रेम) तो सभी से श्रेष्ठ है ।

मैं—महारा[illegible]! कभी तो ज्ञान बड़ा-कभी भक्ति बड़ी । आप यह [illegible]नों परस्पर विरोधी बातें कैसे कहते हैं ?

रामायणी—अच्छा [illegible] ! तुम इसे और स्पष्ट सुनो और स्वयं निर्णय दो । [illegible]न और भक्ति दोनों में कौन श्रेयष्कर है ।

मैं—अच्छा ! कहिये देव ?

रामायणी—बेटा ! सब से अन्तिम तो फल है किन्तु जिस फल में रस न हो अर्थात् नीरस (सूखा हुआ) हो तो वह किसी काम का होगा ?

मैं—नहीं महाराज ! वह किसी काम का नहीं ।

रामायणी—तो भैया ! ज्ञान फल तो है परन्तु उसमें रस क्या है ! सुनो-ज्ञान रूपी फल में भक्ति (प्रेम) रूपी मधुर रस भरा रहता है। यदि फल में रस न रहे तो क्या करेगा कोई नीरस गुठली और कटु छिलका लेकर

मैं—(चरणों में गिरकर) धन्य हैं, देव ! धन्य हैं ! बड़ा ही सुन्दर रहस्य बताया आपने। मैं तो

पहले पु[illegible] से फल [illegible] बात भी [illegible] राम[illegible] (प्रेम) ह[illegible] हैं और [illegible] तो भगव[illegible] मैं-[illegible] से भी स[illegible] राम[illegible] की [illegible] नत [illegible] मार्ग[illegible] मूर्त्ति[illegible] बन[illegible] था उ[illegible] मनुष्[illegible]

पहले पुष्प ही प्रधान मानता था किन्तु आपके प्रसाद से फल का ज्ञान हुआ। आज परम रहस्यमयी यह बात भी समझ ली कि फल से भी बड़ा तो रस है।

रामायणी—हाँ बेटा! सब से श्रेष्ठ तो भक्ति (प्रेम) ही है। सम, यम, नियम-यह तो फूल (साधन) हैं और ज्ञान-फल है तथा उस फल में भी मधुर रस तो भगवान् की भक्ति ही है।

मैं—महाराज! क्या इस पूरे रूपक को मानस से भी स्पष्ट कर सकते हैं?

रामायणी—हां! यह तो मानस का ही सिद्धांत है।

मैंने कहा [illegible]! अब उसे मानस के ही शब्दों में सुनलो—

(१) "सम, यम, नियम फूल,
(२) "फल ज्ञाना,
(३) "हरिपद-रति-रस बेद बखाना।"

[illegible] ज्ञान से भक्ति का स्थान कितना ऊँचा है- यह [illegible] मानस में भरा पड़ा है। किन्तु ज्ञान रूपी फल में [illegible]स तो भक्ति ही है, अर्थात् प्रभु के चरणों में रति का होना। इससे बड़ी बात क्या हो सकती है?

भगवान् और भक्ति की जय।

भगवान राम की मूर्ति

प्रायः एक [illegible] पूर्व मानस-मणि में यह प्रश्न उठाया गया था कि रामवन में भगवान राम की मूर्ति [illegible] रहना उपयुक्त है या नहीं। केवल १६ पाठकों ने इसका उत्तर दिया था—१५ ने [illegible]वश्यक माना था और एक ने विरोध किया था। इतने कम प्रेमियों ने अपनी सम्मति में प्रकट की कि हमने मान लिया कि पाठक गण उदासीन हैं।

पर जिन्होंने पक्ष में लिखा था उनमें से पांच से हमें ३६) भी प्राप्त हो गये थे। उनकी यह अमानत जमा है। हमने जयपुर से मूर्त्तियों की निछावर का पता लगाया तो समाचार आया है कि मार्ग व्यय सहित २॥ फुट की भगवान राम तथा माता जानकी की मूर्त्ति में ८००), २ फुट की मूर्त्ति में ६५०), १॥ फुट की में ५५०) और १। फुट की में ४५०) लगने की सम्भावना है।

अब हमारे पाठकों को पुनः विचार करना चाहिये और निर्णय करना चाहिये कि मूर्तियाँ बनवाई जांय या नहीं और बनवाई जांय तो कितनी बड़ी। जो चित्र कारीगर के पास भेजा गया था उसमें भगवान तथा माता जी एक एक पैर लटका कर बैठे हैं। इस क्रम में २॥ फुट की मूर्त्ति मनुष्याकार से कुछ छोटी रहेगी और १। फुट वाली को देवाकार मानने में विशेष बाधा न होगी।

हम प्रेमी पाठकों की सम्मति की प्रतीक्षा करेंगे और उनके आदेश का पालन करेंगे।

—शारदाप्रसाद

गुरु और भाई [की] आज्ञा के बिना लक्ष्मण जी बीच [में] क्यों बोल उठे ?

[पं० श्री मो[ह]नीप्रसाद जी द्विवेदी]

कही जनक ज[स] [अ]नुचित बानी ।
बिद्यमान रघुकु[ल] [म]नि जानी ॥

एक सभ्यकुल के राजकुमार और रामचन्द्र के भाई अपने भ्राता को तो आदर सूचक शब्दों से सम्बोधित करते हैं, परन्तु भरी सभा में विदेह राज को केवल जनक कह कर सम्बोधित करते हैं उस समय कोई भी उन्हें मना नहीं करता। इसी तरह परशुराम संबाद में भी पहले पहल कड़े शब्द का प्रयोग करने पर कोई नहीं बोलता परन्तु जहां:—

मिले न कबहुँ सुभट रन गाढ़े ।
द्विज देवता घरहि के बाढ़े ॥

कहते ही सारी सभा 'अनुचित, अनुचित' कहने लगती है। फिर बिना गुरु या भाई की आज्ञा के लक्ष्मण जी के बीच में बोलने की क्या आवश्यकता थी। इस प्रश्न का समाधान भी वहीं मौजूद है।

यह रघुकुल मणि श्रीराम जी, लखनलाल के कौन हैं ? केवल भाई ही नहीं है बरन्—

बारेहि ते निज हित पति जानी ।
लछिमन राम चरन रति मानी ॥

वनयात्रा के प्रसंग से नाता भली भांति स्पष्ट है—

मोरे सबइ एक तुम्ह स्वामी ।
दीन बन्धु उर अन्तरजामी ॥

अतः सच्चा सेवक अपने प्रभु की न्यूनता भला कब सह सकता है ? जनक जी ने 'बीर बिहीन मही' कह कर जब श्रीराम जी का निरादर किया तब उस [स]मय जो सेवक "रदपट फरकत नयन रिसौं[हैं]" [की दश]ा को प्राप्त था वह जनक जी का आदर करेगा [क्या] [?] स्वामी निन्दक को प्रतिष्ठा देना सेबक का ध[र्म] है ? [ग]ुरुवर वशिष्ठ को तथा बड़े भाई भरत को [जब] उन्होंने [श्री] राम जी से विरोधाभास के कारण कु[छ] समझा [ह]ी नहीं, फिर उनके आगे जनक की कौ[न] गिनती थ[ी] ? अतः वह अनुचित कथन का समय थ[ा] उन्हें कोई [क]्यों मना करता। किसी को वह बुरा भ[ी] नहीं लगा, [ब]ल्कि उससे सभी बुद्धिमानों को हर्ष प्रा[प्त] हुआ। स्वयं [ज]नक जी भी अपनी गलती पर सकुच गये। रही यह [शं]का कि उन्हें बिना आज्ञा बीच [में] बोलने की क्या [आव]श्यकता थी ? इसका समाधा[न] यही है कि वह सेवक [क]ा धर्म था। वैसा न कर[ने से] ही अपचार होता और जहां पर सब लोग 'अनुचि[त]' पुकारते हैं वहां श्री लखनलाल [कै]से क्रोधावेश [में] अनुचित हो रहा है कहते हैं। क्योंकि 'द्वि[ज देवता] घरहि के बाढ़े' कहने में सुर और महिसुर दोनों का [ही] असम्मान हो रहा था, जिनके विषय में पहले [स्व]यं लखनलाल जी ही कह चुके हैं कि—

सुर महिसुर हरिजन अरु गाई ।
हमरे कुल इन्ह पर न सुराई ॥

अतः जहां अनुचित हुआ वहां रोके गये। इ[स] लिये सभी प्रसङ्ग यथार्थ हैं।

वसन्तोत्सव

माघ शुक्ल ४, ५, ६ तारीख ११, १२, १३ फरवरी को है। मेले में रामवन आइये।

"पराधीन सुख सप[illegible]नेहुँ नाहीं"

(श्री पं० केशरीकिशोर शर[illegible] जी रामायणी)

'पराधीन सुख सपनेहु नाहीं' का नारा लगाकर पूज्य-पाद गोस्वामी जी ने आज से लगभग चार सौ वर्ष पूर्व गुलामी के विरुद्ध आवाज बुलन्द की थी। जिस समय इस महान् व्यक्ति का प्रादुर्भाव हुआ[illegible] हमारा देश पराधीन ही था। पराधीनता में प्रजा[illegible] कैसी दशा रहती है उसका सम्यक अवलोकन [illegible]ने किया, उसका अनुभव भी किया एवं [illegible]अनेक प्राणियों को इस असह्यभार से मुक्त करने [illegible]का दृढ़ संकल्प कर नव-निर्माण की ओर [illegible] कदम उठाया। उस सुराज्य की कल्पना भी क[illegible]ती जिसमें सभी प्राणी सुख-शान्ति पूर्वक जीवन य[illegible]न कर सकें तथा उसके संविधान की ओर भी संके[illegible]त किया है। 'जिमि सुराज खल उद्यम गयउ।' वे [illegible]अपने मानस के विचारों को 'मानस' के पृष्ठों पर [illegible] अंकित कर छोड़ गये, आने वाली अपनी संस्कृति[illegible] के लाभार्थ। संस्कृति का ह्रास देख कर इस दूर[illegible]ी ने भारत की उस दुर्दशा का अनुमान लगा[illegible]लिया जो कुछ ही काल में अवश्यम्भावी थी। [illegible]न से उत्थान की ओर अग्रसर करने के लि[illegible] उन्होंने आदर्श मर्यादापुरुषोत्तम [illegible] का चरित्र-चित्रण किया, भारतीयों की [illegible] को पहचान कर ही धर्म के अवगुन्ठन में उन गूढ़ रहस्यों को छिपाकर रक्खा। धार्मिक प्रवृत्ति भारत से हटने वाली नहीं, इसकी जड़ इतनी कस कर जमी हुई है कि यदि कोई तूफान कभी इस धर्म-वृक्ष को धराशायी करने में समर्थ होता भी है तो पुनः उसी स्थल पर उसी जड़ से नवीन कोंपल निकल आती है और वही मूल विशाल वृक्ष में परिणित हो, क्लान्त-श्रान्त जनसमूह को शीतलता प्रदान करते हुये शान्ति देने वाला हो जाता है।

धर्मधुरीण श्री राम के मुँह से महान् कवि—भविष्य-स्रष्टा—कह रहा है—

चौ०—'सुनु कपीस अंगद लंकेसा।
पावन पुरी रुचिर यह देसा॥'

सुग्रीव, अंगद एवं लंकेश रूपी शक्ति से सब परिचित हैं। राम ने उसे संगठित कर शक्ति-संचय किया एवं फलस्वरूप विजयश्री प्राप्ति की। आर्यों की संस्कृति या यों कहिये भारतीय संस्कृति के रूप में सीता थीं। विदेशी रावण ने उसका अपहरण किया। संगठन के बल पर ही श्री राम उसे पुनः प्राप्त करने में समर्थ हो सके। उसके बाद उन लोगों से कहते हैं कि—

'पावन पुरी रुचिर यह देसा'

अयोध्यापुरी मेरी जन्म-भूमि होने के नाते अत्यन्त पवित्र तो है ही, किन्तु जिस देश के अन्तर्गत यह पुरी है, वह अतिशय रुचिर है। पुष्पकारूढ़ हो प्रायः समस्त भारत का भ्रमण कराकर उनसे नर-रत्न राम ऐसा कह रहे हैं कि इस देश में गंगा, यमुना, सरयू एवं गोदावरी जैसी पुण्य सलिला नदियां, विन्ध्य, हिमालय एवं चित्रकूट जैसे नगराज तथा पंचवटी, सुन्दर तथा कामद जैसे बन जिनमें सदा प्रकृति का पालना लगा रहता है। अतिशय रुचिर है हमारी पुरी? उसका तो कहना ही क्या—

'जद्यपि सब बैकुण्ठ बखाना'

❀ ❀ ❀ ❀

'अवधपुरी सम प्रिय नहिं सोऊ'......

उपर्युक्त-उक्तियों द्वारा श्री राम ने भालु, कपियों मानवेतरों के अन्तःकरण में भी स्वदेश प्रेम बढ़ाया है।

'यह प्रसंग जानै कोउ-कोऊ' कह कर उन्होंने स्पष्टतया व्यक्त किया है कि इसके महत्व को कोई कोई जानता है। वास्तव में जो जानते हैं वे उसकी रक्षा के लिये बड़ा से बड़ा त्याग करने को उद्यत होते

हैं। उनके अन्दर अदम्य उत्साह, असी... बल, एवं अद्भुत् कार्य दक्षता स्वतः ही आ जाती है...

'एक बार कैसेहु सुधि पावउँ।
कालहु जीति निमिष महँ लावउँ॥'

वह ओजपूर्ण उक्ति अपनी संस्कृति ... सीता की ही रक्षा और पुनः प्राप्ति के लिये निकली थ... समुद्र पर भी पुल बंध गया। विश्व वंद्य बापू की... जीर्ण अस्थियों में इसी की रक्षार्थ शक्ति सिन्धु हिलोरें ले रहा था। भारत छोड़ो--शब्द मात्र में इतनी अपार शक्तियाँ थीं कि विश्व की सबसे अधिक शक्तिशालिनी जाति, जिसके राज्य में, सूर्यास्त नहीं होता था दूर—अतिदूर चली गई। इसलिये गोस्वामी जी ने कहा कि—

'यह प्रसंग जानै कोउ कोऊ'

इतना बतलाकर गोस्वामी जी ने हमारे आदर्श को मौन नहीं होने दिया। उन्हें तो अभी सिद्धी प्राप्त करने लिये मन्त्र बतलाना है, उन्नतोन्मुख जाति को। देखिये मन्त्र क्या है—

'अति प्रिय मोहिं इहां के बासी'

विभीषण एवं सुग्रीव राजा हैं न? उन्हें बतला रहे हैं, देखो, तुम भी अपने देश के लोगों को प्यार करना। उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न देना। राज-मद में चूर मत होना। इसका परिणाम बहुत बुरा होता है। परिणाम का उल्लेख गोस्वामी जी ने अन्यत्र किया है—

यथा--जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी।
सो नृप अवसि नरक अधिकारी॥

यह तो राजाओं की बात हुई। हमारा आदर्श हमारे लिये क्या क्या कह रहा है। कहता है, अपने ...शवासियों को प्यार करो। आपस में मिलकर ...ई भाई की तरह रहो। रावण-विभीषण, बालि-सुग्री... जैसे भाई की भाँति नहीं बल्कि राम-भरत या रा...--लक्ष्मण की तरह। इससे होने वाला विद्रोह भी शा... हो जायेगा। देश में सुख-शान्ति की धारा प्रवाहित ...गी। देश स्वर्ग के सदृश सुखों को देने वाला हो... जावेगा। देव-गण यहां आने के लिये तरसेंगे...—

'...स धामदा पुरी सुख रासी'

वैकुण्ठ का सु...ख भी यहीं प्राप्त होने लगेगा। यह संदेश-सदियों पूर्व ...इस दूर-दर्शी महात्मा ने हमें सुनाकर गुलाम रक्त ... स्वतन्त्रता के अणु प्रविष्ट करा दिये। आज हम ...ी महात्मा की कृपा से स्वतंत्र हुये हैं।

मानस सर और श्री रामनाम

श्री हनुमज्जयन्ती पर श्री राम नाम मन्दिर के निर्माता श्री डा० के० सी० मिश्रा रामवन आये थे। अब उन्होंने अपना सुझाव भेजा है कि श्री राम नाम लिख कर आटे में रख कर गोली बनाई जाया करें और मानस सर में लाल मछली पाल कर उन्हें खिलाई जाया करें। इससे विश्व का तथा खिलाने वालों का कल्याण होगा।

मानस सर बहुत बड़ा है। उसमें लाल मछली नहीं पाली जा सकतीं। देशी मछली उसमें बहुत हैं, वे इन्हें खा जाँयगी। देशी मछलियों को ही श्री राम-नाम गोली खिलाने का प्रबन्ध हो सकता है। यह विशेष परिश्रम साध्य कार्य है। प्रेमी पाठक इस पर विचार करें। यदि वे गोली भेजने की कृपा करेंगे तो चुगाने का प्रबन्ध हम सहर्ष किया करेंगे।

—शारदाप्रसाद

मानस में सु-राज्य एवं स्वराज्य

[श्री हरिभजनलाल अ...वाल]

रामराज्य के प्रति लोगों की इतनी श्रद्धा है कि बहुमत यही है कि जहां रामराज्य है, वहां सुराज्य है और जहां सुराज्य वहाँ रामराज्य। यह प्रश्न विचारणीय है कि हमारे देश में रामराज्य स्थापित करने की चर्चायें अधिक होती हैं पर भारत रामराज्य नहीं बन पाता। आज-कल रामराज्य केवल एक कल्पना सी हो गई है जिसका निर्माण हमारे सामर्थ्य के बाहर है। रामराज्य एक आदर्श शासन की संज्ञा है।

जब हम किसी वस्तु की इच्छा करते हैं और पाने में असमर्थ रहते हैं, तब इसके प्रति कुछ कारण अवश्य होता है। फिर रामराज्य जैसे आदर्श की कामना तो एक बहुत अच्छी बात है पर उसका प्राप्त न होना एक गम्भीर प्रश्न है। प्रभु अपनी सृष्टि में सर्वत्र सुख साम्राज्य देखना चाहते हैं अतः यह सर्वथा निर्मूल तर्क है कि हमारी इच्छित वस्तु की प्राप्ति ईश्वरेच्छा के प्रतिकूल है। अतएव जब प्रभु की भी इच्छा अनुकूल है एवं वस्तु अप्राप्य है इसका अर्थ है हमारा प्राप्ति साधन त्रुटिपूर्ण है। उदाहरणार्थ आपके घर में ...यो है एवं आप दिल्ली का कार्यक्रम ... चाहते हैं पर जब तक आप रेडियो में ... सुई को दिल्ली के मीटर की ओर उन्मुख नहीं करेंगे आप कार्यक्रम नहीं सुन सकेंगे। उसी प्रकार राम-कृपा स्वरलहरी की भाँति सर्वत्र वातावरण में विद्यमान है, पर जब तक आप अपने को, अपने हृदय को उनकी ओर प्रेरित नहीं करते, उनकी कृपा-दृष्टि आप पर कैसे पड़ेगी ? वे इतने कृपालु एवं दयालु हैं कि अकारण ही उनकी दयावृष्टि होती है इसलिये तुलसीदास जी कहते हैं:—

अस प्रभु दीनबन्धु हरि, कारन रहित दयाल।
तुलसिदास सठ तेहिं भजु, छाड़ि कपट जंजाल॥

अतएव, रामराज्य स्थापित करने के कुछ नियम बता दिये गये हैं जिनका पूर्णरूपेण पालन करने से आदर्श कल्पना साकार हो जायेगी।

मानस में श्री राम को देवपुरुष या भगवान का अवतार माना गया है पर इतना निःसंदेह है कि श्री राम एक मानव थे और मानवीय राजा थे। प्रत्येक राजा का कर्तव्य है कि वह अपनी प्रजा को सुखी रखे क्योंकि—

'जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी।
सो नृपु अवसि नरक अधिकारी॥'

मानस में तुलसीदास जी ने सु-राज्य की कल्पना एक अलौकिक एवं सुन्दर ढंग से की है। इसकी भूमिका है राम बनवास। कैकेयी ने वर मांगा था कि—

'तापस वेष बिसेषि उदासी।
चौदह बरिस रामु बनवासी॥'

अर्थात् श्री रामचन्द्र जी को तपस्वी के वेष में रह कर चौदह वर्ष वनवास करना था। अब प्रश्न यह उठता है कि श्री रामचन्द्र जी ने दक्षिण की ओर ही वनवास करने की क्यों ठानी ? प्राचीन समय में वानप्रस्थ आश्रम का निर्माण हिमतराइयों में होता था। वह तपोभूमि मानी जाती थी। वस्तुतः राम का दक्षिण की ओर जाना ही उनके लक्ष्य का प्रथम चरण था। दक्षिण उस समय नर-राक्षसों से परिपूर्ण था और प्रजा को उनसे भय-रहित करना ही उनका प्रमुख लक्ष्य था।

सु-राज्य के यथार्थ अंग जिनका वर्णन मानस में किया गया है, सात हैं। (१) स्वामी—राज्य का शासन मुख्यतः दो प्रकार से होता है (अ) एकतांत्रिक (Autocracy) रूप से (ब) प्रजातांत्रिक रूप से (Democracy)। मानस में एकतन्त्री राज्य को प्रधानता दी गई है जिसके अनुसार राज्य में एक

स्वामी या राजा होता था; क्योंकि ... गवान ने ...स सहित विभीषण को संबोधित किया है। 'कहु ल... ईश्वर *परिवारा*।' राजा को नरेश या जनता ... को माना जाता था। (२) अमात्य-प्रशासन में रा... लिये समय समय पर उचित मार्ग का दर्शन कराने के ... अमात्य या सचिव का होना आवश्यक है। ... सिद्धान्त का पालन करते हुये श्री राम ने अंगद को सुग्रीव का सचिव नियुक्त किया। '*राजु दीन्हु सुग्रीव कहँ, अंगद कहँ जुबराज*।' सचिव के बचनों की उपेक्षा राज्य को विनाश की ओर ले जा सकती है; जैसे रावण ने—'*माल्यवन्त अति सचिव सयाना*' का कहना नहीं माना। (३) सुहृद-राज्य में प्रजा केकष्टों की समय समय पर जानकारी प्राप्त करने के लिये इन कर्मचारियों की नियुक्ति करना आवश्यक है। राजा-राम को आदर्शता की उच्च श्रेणी तक पहुँचाने में इन्हीं को श्रेय है। इन्हीं के कारण राजा-राम ने सीता वनवास की आज्ञा दी थी। (४) प्रतिष्ठा-प्रजा में राजा की प्रतिष्ठा एवं उसके प्रति आदर-भाव होना आवश्यक है। अन्यथा विद्रोह का झण्डा शासन के पाये हिला सकता है। राजा राम का शासन सुदृढ़ था क्योंकि उन्होंने इसे प्रेम रूप से प्राप्त किया था। प्रजा को उपदेश देते हुये वे कहते हैं—

> '*सोइ सेवक प्रियतम मम सोई।*
> *मम अनुसासन मानै जोई॥*
> *जौ अनीति कछु भाषौं भाई।*
> *तौ मोहिं बरजहु भय बिसराई॥*'

अन्त में राज्य एवं शासन के आवश्यक अंग हैं, (५) जनता (*People*) (६) केन्द्र (*Capital*) एवं (७) बल (*Army*). जिनमें अंतिम दो अंगों द्वारा प्रजा की समुचित व्यवस्था, सुरक्षा एवं जीवन-यापन में सुविधा होती है। केन्द्र या राजधानी होने से उनके सुख हेतु विचार विमर्श एवं संचालन व्यवस्था की जाती है। इसके अतिरिक्त राजा का बल सेना रूप में उसके सुदृढ़ शासन का द्योतक है।

केवल कुशल प्रशासन ही सु-राज्य की विशेषता नहीं है। प्रजा के कष्टों का निवारण भी ए अनिवार्य अंग है। राज्य में प्रजा के बीच इन तीन कष्टों की उपस्थिति होती है। दरिद्रता, अज्ञान एवं रोग (*Poverty, ignorance and disease*). राम-राज्य में इनका कितना (क्षीण) प्रभुत्व था?

स्वराज्य का पालन जिस तरह मानस में हुआ है वैसा उदाहरण मिलना मुश्किल है। किष्किन्धा-काण्ड में बालि का बध होने पर बालि-पुत्र अंगद को ही राज्याधिकारी माना गया है। सुग्रीव को इसकी देख-भाल के लिए नियुक्त किया गया है। क्योंकि—

> ...*राजु दीन्ह सुग्रीव कहँ, अंगद कहँ जुबराज।*

...दि राम चाहते तो किष्किन्धापुरी को वे अवध...री में मिला सकते थे पर उनका उद्देश्य केवल ...राज्य अर्थात् स्वतन्त्र राज्य का निर्माण करना था... साथ ही रामचन्द्र जी ने दूर-दर्शिता से काम लिय... था। भविष्य के लिए उनके एवं किष्किन्धा-रा...ज्य में एक प्रेमपूर्ण संपर्क स्थापित हो जाने से आ...श्यक सहायता की अपेक्षा की जा सकती थी। यह... श्री रामचन्द्र जी का एक अप्रत्यक्ष अवगुण प्रशासन... हेतु सहायक हुआ है जैसे कि तुलसीदास जी ने कह...है—

> '*सुर-नर मुनि ...ब कै यह रीती।*
> *स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती॥*'

स्वराज्य स्थापित करने का ए... ...रा उदाहरण है—'विभीषण का राज्याभिषेक।' ऐसा ... में उद्देश्य की पूर्ति का पूरक तो था ही पर साथ ही विभीषण के राम भक्त होने के कारण उनके राज्य की ओर से उपद्रव एवं भय की लेश-मात्र भी आशंका नहीं थी। वरन् विभीषण उनके शासन को सुदृढ़ बनाने हेतु एक संबल का कार्य कर सकता था। इस प्रकार उनके उद्देश्य का प्रमुख भाग, विभीषण के राजतिलक से पूर्ण हुआ। अन्य स्वतन्त्र राक्षसों का विनाश रास्ते ही में श्री राम द्वारा हो गया था।

हमें मानस से ऐसी प्रेरणा लेनी चाहिए जो कि एक बार फिर रामराज्य के निर्माण की कल्पना को साकार करने में सहायक हो।

इन चौंसठ अपराधों से बचिये

['प्रेम दर्शन' से]

वैष्णव ग्रन्थों में निम्नलिखित ६४ अपराध बतलाये गए है इन पर ध्यान रख कर चलने से बहुत लाभ हो सकता है—

१—श्री भगवान को कोई देवता या तत्व विशेष मानना।
२—वेदों में ग्रन्थ या पौरुषेय बुद्धि।
३—भक्तों में जाति भेद बुद्धि।
४—गुरु को साधारण मनुष्य समझना।
५—भगवान की प्रतिमा को काठ, पत्थर, धातु, कागज या मिट्टी समझना।
६—भगवान के प्रसाद को साधारण खाने की चीज समझना।
७—भगवान के चरणोदक को साधारण जल समझना।
८—तुलसी को साधारण वृक्ष समझना।
९—गौ को साधारण पशु समझना।
१०—भागवत और गीता को साधारण पुस्तक समझना।
११—भगवान की लीलाओं को मनुष्य की की हुई मानना।
१२—सांसारिक प्रेम या स्त्री सुख के साथ भगवान की लीला की तुलना करना।
१३—गोपियों को (भगवान के लिये) परनारी समझना।
१४—रासलीला को काम चेष्टा समझना।
१५—भगवान के महोत्सव के समय स्पर्शास्पर्श बुद्धि रखना।
१६—ईश्वर और शास्त्रों को न मानकर नास्तिक हो जाना।
१७—सन्देह पूर्वक धर्म का आचरण करना।
१८—धर्म के पालन में आलस्य करना।
१९—भक्तों को बाहरी बातों पर कसना।
२०—साधु महात्माओं के गुण दोषो की आलोचना करना।
२१—अपने को उत्तम समझना।
२२—किसी भी देवता या किसी भी शास्त्र की निन्दा करना।
२३—भगवान की मूर्ति के सामने पीठ देकर बैठना।
२४—भगवान की मूर्ति के सामने जूते पहन कर बैठना।
२५—भगवान की मूर्ति के सामने माला धारण करना।
२६—भगवान की मूर्ति के सामने छड़ी लेकर जाना।
२७—भगवान की मूर्ति के सामने नीले कपड़े पहनकर जाना।
२८—दतुअन कुल्ला किये बिना जाना।
२९—मल त्याग या मैथुनादि के बाद कपड़े बदले बिना मन्दिर में प्रवेश करना।
३०—भगवान की मूर्ति के सामने हाँथ पैर फैलाना।

३१—भगवान की मूर्ति के सामने पान खाना।

३२—भगवान की मूर्ति के सामने जोर से हँसना।

३३—कुचेष्टा करना।

३४—स्त्रियों के चारों ओर घूमना।

३५—क्रोध करना।

३६—भगवान की मूर्ति के सामने किसी दूसरे का अभिवादन करना।

३७—दुर्गन्ध वाली कोई चीज खाकर दुर्गन्ध दूर हुये पहले मन्दिर में जाना।

३८—मादक द्रव्य सेवन करना।

३९—किसी को अपमानित करना या मारना।

४०—काम क्रोधादि की चेष्टा करना।

४१—अतिथि या साधु की आवभगत न करना।

४२—अपने को भक्त, धर्मात्मा, पण्डित या पुण्यवान समझना।

४३—नास्तिक, व्यभिचारी, हिंसक, लोभी और झूठ बोलने वाले मनुष्य का सङ्ग करना।

४४—विपत्ति में ईश्वर पर दोष लगाना।

४५—पाप के लिये धर्म करना।

४६—किसी को किञ्चित भी कष्ट देकर अपने को धार्मिक समझना।

४७—स्त्री, पुत्र, परिवार, आश्रित, दीन और साधु का पालन-पोषण न करना।

४८—किसी वस्तु को अपनी भोग्य समझकर भगवान के निवेदन करना या बिना निवेदन किये भोगना।

४९—अपने इष्ट देव के नाम की शपथ करना।

५०—धर्म और भगवान के नाम को बेच कर धन कमाना।

५१—अपने इष्टदेव को छोड़कर दूसरे से आशा करना।

५२—शास्त्रों की मर्यादा को तोड़ना।

५३—ब्रह्मज्ञान न होने पर भी ब्रह्मज्ञानी के समान आचरण करना।

५४—सम्प्रदाय भेद से वैष्णवों में किसी को ऊँचा नीचा समझना।

५५—देवता के समान आचरण करना।

५६—अवतारों की लीलाओं को तारतम्य देकर उनकी निन्दा करना।

५७—दिल्लगी में भी किसी को 'आप ही भगवान हैं' ऐसा कहना।

५८—'भगवान किसी के मुखापेक्षी हैं'—भूल कर भी ऐसा समझना।

५९—लोभवश किसी को भगवत्प्रसाद या चरणोदक देना।

६०—भगवान के चित्र, प्रतिमा या नाम का अपमान करना।

६१—किसी भी जीव को किसी प्रकार से कष्ट पहुँचाना, भय दिखलाना या किसी का अहित करना।

६२—तर्क वितर्क में हार जाने या सिद्धान्त स्थापित न कर सकने पर आस्तिकता को त्याग देना।

६३—भगवान के अवतारों के जन्म कर्मों को साधारण समझना।

६४—भगवान के युगल रूप में द्वैत बुद्धि करना।



राक्षसराज

[श्री सुदर्शनसिंह जी]

(१४) राक्षस

उस प्रदेश का नाम उशीरवीज बताया है महर्षि बाल्मीकि ने। मुझे ठीक पता नहीं, वर्तमान मानचित्र में उसका ठीक स्थल कहां होगा। वैसे महाराज मरुत की यज्ञ भूमि वर्तमान अफ्रिका की वनस्थली भी रह चुकी है।

मन्त्रियों के साथ रावण उस प्रदेश के समीप ऊपर गगन में पहुँचा। सुरभित धूम्र अम्बर को आच्छादित किये था। महाराज मरुत का युगान्त व्यापी यज्ञ चल रहा था उस स्थान पर।

'मातुल!' दशग्रीव ने प्रहस्त की ओर देखा- 'यह अपनी स्वर्णपुरी की स्पर्धा करने वाली नगरी! यहां पूरी यज्ञशाला स्वर्ण निर्मित है।'

'मैंने सुना है, राजा मरुत् कोई यज्ञ कर रहा है!' प्रहस्त ने क्षुब्ध कण्ठ से कहा-'हमारे शत्रु सुरों को सबसे अधिक सुपुष्ट करता है यह अपने यज्ञीय हविष्य से।'

'अच्छा!' दशानन का अट्टहास गूंजा- 'मुझे भी क्षुधा पीड़ित कर रही है मातुल! मैं इस सुरों के सेवक को देखूंगा। आज इच्छा होती है कि अनुज कुम्भकर्ण के समान मैं भी यहाँ इन पशुओं को उदर में भर लूं।'

'अवश्य!' अनुचरों में उल्लास आया-' हम सब भी क्षुधातुर हैं श्रीमान्!'

नरभक्षी राक्षसों के मुख में पानी आ गया होगा अवश्य उस समय।

❀ ❀ ❀

'दुर्दान्त दशग्रीव आ रहा है!' यज्ञशाला में अचानक आतंक फैला—'यह दारुण दुष्ट सृष्टिकर्ता के वरदान से अजेय है। सुरों का यह सहज शत्रु अवश्य हमें उत्पीड़ित करेगा'

महाराज मरुत की श्रद्धा से आकृष्ट सुर साक्षात् साकार उपस्थित थे यज्ञशाला में। सुरगुरु वृहस्पति के सहोदर ब्रह्मर्षि संवर्त जहाँ आचार्य हों- देवता आह्वान की उपेक्षा कैसे कर सकते थे; किन्तु दशानन को आता देख देवताओं को अपने अपमान की आशंका हुई। उन्होंने अपने आकार आतुरता पूर्वक परिवर्तित कर लिये।

महेन्द्र मयूर के रूप में दृष्टि पड़े, यम ने काक के रूप को कृतार्थ किया, कुबेर कृकलास बन गये, वरुण ने हंस होना उत्तम माना-सभी देवता पक्षियों के रूप धारण कर चुके थे।

अनधिकार अपवित्र श्वान के समान रावण सहचरों के साथ यज्ञशाला के समीप आया और भयानक स्वर में भूंकने लगा- 'मरुत्! मृग चर्म आच्छादित कर लेने से तुम्हें परित्राण नहीं प्राप्त होगा। पराजित करो समर में मुझे या स्वयं पराजय स्वीकार करो!'

'अकारण शत्रुता करने वाले शूर! आप हैं कौन?' महाराज मरुत ने उपेक्षा पूर्वक देखा द्वार पर खड़े दशग्रीव को।

'सन्तुष्ट हुआ मैं तुम्हारी सरलता पर!' अट्टहास करता बोला राक्षस राज- 'अपने अग्रज कुबेर को पराजित करके जिसने उनका यह पुष्पक प्राप्त कर लिया है, उस त्रिभुवन विख्यात पराक्रमी दशग्रीव को भी तुम नहीं जानते?'

'सचमुच आप श्लाघ्य शूर हैं। अपने श्री मुख से आपने अपने सद्गुणों का समुचित परिचय दिया है।' विषम व्यंग था महाराज मरुत की वाणी में-- 'युगों से मेरा यज्ञ चल रहा है। सम्पूर्ण स्पर्धा एवं शत्रुता का सन्यास करके मैं कब से दीक्षित हूँ। कहां कौन क्या करता है, कुछ पता नहीं मुझे।'

दशग्रीव द्वार पर ही खड़ा रहा। महाराज मरुत ने पार्श्व से धनुष उठाया और ज्या चढ़ाते हुये बोले-

'आप आ ही गये हैं अनधिकृत कुत्ते के समान और युद्धोद्यत भी हैं तो मुझे आपका उचित आतिथ्य करना होगा। आशा है अपने कुकर्मों का कदर्य परिणाम पाने को प्रस्तुत होकर आप यहां पधारे होंगे!'

रावण इन व्यंग बाणों से अवश्य क्रुद्ध हो उठता किन्तु वह हतप्रभ हो गया। उसकी दृष्टि ने देखा महाराज मरुत के करों में प्रलयाग्नि के समान प्रज्वलित महाशर। दिव्यास्त्रों का महान मर्मज्ञ दशग्रीव भी नहीं समझ सका उस शर का स्वरूप एवं शक्ति। प्रतिकार कैसे पावेगा वह– बाण के दर्शन ने ही उसे विमूढ़ कर दिया था।

'महाराज! यह माहेश्वर मख है।' सहसा आचार्य महर्षि सांवर्त उठे और मरुत तथा दशानन के मध्य स्थित हो गये– 'इस मख में दीक्षित यजमान इसे अपूर्ण छोड़ दे तो उसके कुल का विनाश अवश्यम्भावी है। यज्ञ दीक्षित के लिये क्रोध या युद्ध वर्जित है। आप धनुष रख दें और यज्ञीय कार्य में मन स्थिर करें।'

'आपकी आज्ञा मेरे लिये अनुलंघनीय है।' महाराज मरुत ने तीक्ष्ण शर त्रोण में डाल दिया। धनुष की ज्या उतार कर उसे पार्श्व में धर दिया। वे इस प्रकार यज्ञ में एकाग्र हो गये जैसे दशानन की उपस्थिति नितान्त उपेक्षणीय हो।

❀ ❀ ❀

'मातुल?' दशग्रीव ने पुनः प्रहस्त की ओर देखा वह अब अपने कर्तव्य की जिज्ञासा कर रहा था।

'उस दक्षिणाग्नि के कुण्ड पर बैठे कृष्णवर्ण ऋषि को देख रहे हैं न आप!' प्रहस्त पास आ गया और प्रायः कर्ण में फुसफुसाता बोला—'वह सुरासुर सब के लिए भयंकर है!'

दशग्रीव ने केवल मस्तक के संकेत से सूचित किया कि वह समझ रहा है। वह श्रुति का सम्मान्य ज्ञाता—उसे कहां अविदित है कि यज्ञ की रक्षा का दायित्व यजमान पर नहीं, अध्वर्यु पर होता है। ये अमित पराक्रम अध्वर्यु—अमोघ हैं इनके मन्त्र। इनके करों से आहुति पड़ जाय–ये तो अपने संकल्प से दशानन को भी यज्ञकुण्ड में हवन करने में समर्थ हैं। इनके सावधान रहते यजमान क्यों चिन्ता करे कि कोई उत्पातशक्य है।

'यह माहेश्वर मख है और वे आपके भी आराध्य हैं। यज्ञ में उत्पात उचित नहीं होगा!' प्रहस्त ने पुकार कर अब घोषणा प्रारम्भ की—'मरुत् ने शस्त्र त्याग दिया है। उन्हें पराजित मानना चाहिये। हमारे सम्राट् विजयी हुये।'

'इन ऋषियों से हम अपनी क्षुधा शान्त करलें!' यज्ञशाला से लौटते क्रुद्ध रावण की दृष्टि में एकत्र कुछ ऋषि पड़े। जो असावधान थे, अपवित्र थे, राक्षसों के वे आखेट हो गये। आज पौलस्त्य रावण अपने अनुचरों के संग से नरभक्षी राक्षस बन गया।

(१५) शत्रुता का सूत्रपात

दशानन दिग्विजय करने निकला था। महाराज मरुत की मखशाला से उसने विजय का मुहूर्त किया था।

'हम राक्षस हैं! सृष्टिकर्ता ने हमें संसार का संरक्षक बनाया है!' दशग्रीव को दिशाओं में जय-घोषणा कराने का एक सूत्र सूझ गया था —'पृथ्वी के समस्त प्रजापाल हमारे प्रतिनिधि बनकर रह सकते हैं। एक ही मार्ग है, नरेशों के लिए युद्ध करें या पराजय स्वीकार करें।'

'भगवान ब्रह्मा ने बरदान दे दिया है इसे।' भारत के भूपतियों में मृत्यु का भय तो कभी नहीं आया। कम से कम त्रेता में वे भीत नहीं थे; किन्तु ऐसे युद्ध से क्या लाभ जिसमें अकारण प्राण ही देना परिणाम हो। 'यह अजेय हो गया है।'

'आप विजयी हैं। हम आपके सम्मुख अवल हैं।' दुष्यन्त, सुरथ, गाधि, गय, पुरूरवा आदि अवनीशों ने पराजय स्वीकार करली। अहंकार ने अन्धा कर दिया है जिसे शक्ति के मद में उसका सुधार तो सम्भावना से परे है। सज्जन यदि अपनी शालीनता उसके सम्मुख सिर झुका देने में समझते हैं तो यह उनकी सौम्यता ही समझनी होगी। नरेशों ने 'राक्षसराज' से कहा—'आप प्रतापी हैं। आशा है हमारी पराजय की स्वीकृति आपको परितुष्ट कर देगी।'

स्पष्ट था कि प्रजा से जो कर दान वे पाते थे, उसे प्रजा-पोषण में ही व्यय कर देते थे। किसी को अतिरिक्त कर देने के लिये उनके पास अर्थ नहीं था।

दशानन को अपेक्षा नहीं थी अर्थ संग्रह की। स्वर्णपुरी का स्वामी कंगाल नहीं था कि अधीनस्थ हुये नरेशों से 'कर' माँगने की नीचता तक उतरे।

लेकिन सब समान नहीं हुआ करते। दशग्रीव का दर्प अयोध्या के अधीश्वर महाराज अनरण्य को स्वीकार नहीं हुआ। उन्होंने 'राक्षसराज' की रण-पिपासा परितुष्ट करने का निश्चय किया। रघुवंशी किसी की संग्राम घोषणा सन्तुष्ट न करके पराजय स्वीकार करले, यह अशक्य था।

सैन्य सज्जा में समय नहीं लगा। क्षत्रिय शूर सदा संग्राम के लिये समुद्यत रहते हैं। अफल था ... वीरों का उद्यम। वे शूर थे, साहसी, थे, शस्त्रज्ञ थे; किन्तु छल-कपट नहीं था उनमें। सम्मुख संहार ही उन्होंने सीखा था। मायावी राक्षसों से कहां पार पाना था, उन्हें। सब के सब सो गये संग्राम-शैय्या पर। अवश्य शत्रु उनके पृष्ठ देश पर आघात करने में समर्थ नहीं हुआ।

अन्ततः स्वयं महाराज अनरण्य युद्ध में उतरे। अद्भुत था उनका अस्त्रकौशल। उनके आघातों से आकुल रावण के अनुचर राक्षस भाग गये रण-भूमि से। कुछ क्षणों में महाराज ने शत्रुसैन्य से रण-भूमि रिक्त करदी। दशानन भी एकाकी हो गया।

वार्धक्य ने जि... यद्यपि प्रथम वरण कर लिया था, उन अयोध्याधीश का विषम द्वन्द युद्ध चला, दशग्रीव से। वरदान से अजेय था राक्षस। माया का उपयोग करने में उसे अपनी महत्ता जान पड़ती थी। अन्त में उसके आघात से आकुल अवध नरेश गिर पड़े अवनि पर। विजयी रावण अट्टहास कर उठा।

'मेरी पराजय में काल ही कारण है रावण।' अपने अन्तिम क्षण में महाराज अनरण्य ने शाप दिया-'अकारण तूने अयोध्या पर आक्रमण किया है, इसलिये मेरे वंशज के हाथ से तेरा वध होगा।'

उन पवित्र कीर्ति के प्राण प्रस्थान कर गये। उनके शाप का समर्थ सुनाई पड़ा गगन के मेघगर्जन स्वर में।

❀ ❀ ❀

'आपके पावन पदों में यह पौलस्त्य प्रणिपात करता है!' पुष्पक से दशग्रीव चला जा रहा था। सहसा उसके कर्ण में वीणा के स्वर पड़े और दो ही क्षण में गगन पथ से पार्श्व की ओर देवर्षि दृष्टि पड़े। अपने पितामह के भाई देवर्षि को दशानन ने अभिवादन किया-'आप कहां पधार रहे हैं। पूज्य चरण?'

'मैं तो नित्य परिव्राजक हूँ। पर्यटन ही मेरा प्राण है। मैं तुम पर प्रसन्न हूँ पौलस्त्य! प्रशंसनीय है तुम्हारा पराक्रम!' नारद जी ने सरल शान्त स्वर में कहा—'कुछ क्षण पुष्पक को मेरा सहपथिक बनने दो और मेरे शब्द सावधानी से सुनो!'

'आप आज्ञा करें!' रावण ने अञ्जलि बाँधली। अजात शत्रु हैं देवर्षि। उनका सुर एवं असुर सभी समादर करते हैं।

'तुम सुरों से भी अवध्य हो! अतः मनुष्यों को सताना तुम्हें शोभा नहीं देता' देवर्षि ने उकसाया—'ये मानव तो स्वयं मर्त्य हैं—मृत्यु के मुख में पड़े हैं। इन अल्पप्राण, अल्प पराक्रम अज्ञ जीवों से तुमसा शक्तिशाली क्यों उलझे।'

'जो जरा-व्याधि से नित्य जर्जर हैं, अनेक अनिष्टों से आवृत हैं, दैव से ही निहत हैं, सामान्य पुरुषार्थ में ही संसक्त हैं, क्लेशाक्रान्त है,' दो क्षण रुक कर देवर्षि पुनः बोल रहे थे-'उन्हें पराजित करने, पीड़ित करने में क्या पराक्रम ! दशग्रीव ! प्रतापी तो तुम कहलाओगे जब सर्वनियन्ता यमराज को परास्त करलो। संयमिनी के स्वामी से समर शोभा देगा तुम्हें। मृत्यु को जीत लेने में तुम्हारी वास्तविक विजय है।'

'आपके इस सुन्दर सुझाव के लिये आभार !' दशग्रीव सन्तुष्ट हुआ देवर्षि की बातों से।

'तब ठीक' देवर्षि ने बताया—'देखो, यह सीधा मार्ग प्रेतराज की भयंकर संयमिनी पुरी के सम्मुख ही पहुँचता है।'

❀ ❀ ❀

अयोध्या से शत्रुता का सूत्रपात हुआ ही, इसी दिन सुरों से भी शत्रुता का सूत्रपात हो गया। दशानन उतावला हो उठा था दिग्पालों को पराजित करने के लिये।



मानस के पक्षी

यहां उन पक्षियों की सूची बनाई गई है जिनके नाम श्री रामचरित मानस में आये हैं। वह इस प्रकार हैं !

(१) मुर्गा (२) गीध (३) गरुड़ (४) उलूक (५) कंक [चमरगीधा] (६) कपोत (७) कोकिला (८) काग (९) सुक (१०) चील (११) मोर (१२) चकई (१३) खंजन (१४) टिट्टिभ (१५) चमगादुर (१६) चातक (१७) तीतर (१८) नीलकण्ठ (१९) बग (२०) बाज (२१) महोख (२२) रायमुनी (२३) लवा (२४) सारिका (२५) श्यामा (२६) चकोर (२७) क्षेमकरी [सफेद चील] (२८) हंस (२९) राजहंस (३०) सारस (३१) जलमुर्गा (३२) कुर्री (३३) ढेंक।

प्रेमी पाठकों से निवेदन है कि वे मानस में आये हुये उस पक्षी का नाम लिखने की कृपा करें जो इस सूची में न हो।

'मणि' के पुराने अंक

हमें कुछ ग्राहकों के पत्र सदैव मिला करते हैं जिनमें मानसमणि की फाइलों की मांग रहती है। निवेदन है कि जिन सज्जनों को १९५८ की फाइल चाहिए वे १) डाक व्यय के सहित कुल ४) मनीआर्डर द्वारा भेज कर तुरंत प्राप्त कर लें।

पिछले वर्ष डा० बलदेवप्रसाद मिश्र कृत मानस के सुन्दरकांड की टीका एवं श्री सुदर्शन सिंह जी का धारावाहिक उपन्यास "राक्षस राज" क्रमशः प्रकाशित हुआ है।

अन्य कुछ फाइलें जो स्टाक में हैं—मणि (वर्ष) ५ मू० ३), ११ मू० ४), १४ मू० ४) तथा १६ मू० ४)। मूल्य मनीआर्डर द्वारा भेजें।

—व्यवस्थापक

सन्त-महिमा

[श्री शोभाराम जी पाण्डे बाकानेर]

बाकानेर ग्राम के उत्तर की ओर त्रिवेणी नाला और घटवाल नदी के संगम पर छोटी सी पहाड़ी है जिसे नरसिंह टेकरी कहते हैं जिस पर अति प्राचीन एक छोटा सा सुन्दर श्री नरसिंह महाप्रभु का मन्दिर तथा हाटवालेश्वर सती चबुतरा एवं त्रिवेणेश्वर महादेव आदि के पुराने स्थान हैं। मन्दिर के पास एक छोटी सी कुटिया बनी हुई है उस कुटिया में करीब २० वर्ष से तपस्वी, त्यागी एवं साधना संपन्न एक संत 'बाबा' श्यामदास जी निवास करते थे। उनकी उम्र करीब ८० वर्ष की थी उन्होंने एक छोटा सा बगीचा लगा रखा था। उस स्थान की छटा देखकर, उस छोटे से बगीचे में मोगरा, चमेली एवं चम्पा इत्यादि के फूलों की सुगंध पाकर आने वाले दर्शनार्थियों का मन आनन्द से परिपूर्ण हो जाता है। 'बाबा' कहा करते थे कि यहां जो कोई साधना करेगा सफल होगा। यह अत्यन्त प्राचीन चैतन्य स्थान है।

'बाबा' श्यामदास जी का स्वास्थ्य मिती श्रावण कृष्ण पक्ष १ सम्वत २०१३ से बिगडता गया। उनके मृत्यु के चार दिन पूर्व श्रावण मास में श्री रामायण मण्डल बाकानेर की ओर से शंकर मन्दिर में रामायण का सामूहिक मास-पारायण चल रहा था। सारे पाठक-गणों को बुलाकर कहा कि आप लोग मेरे पास जो सामान है उसे लिखा पढ़ी करके ले लें, और इस मन्दिर का भार आप लोगों के अधिकार में लेकर यहां की व्यवस्था रखना। मैं तो आज से चार दिवस पश्चात् याने श्रावण कृष्ण पक्ष की अमावस्या के १२ बजे दिन को इस लोक से रवाना हो रहा हूँ। आप लोग मुझे सत्य श्यामला माँ नर्मदा जी की गोद में भेज देना। उनके कहे अनुसार गांव के पटेल, पटवारी व प्रतिष्ठित लोगों के समक्ष रामायण मण्डल के अध्यक्ष श्री कालुराम जी गुप्ता कोषाध्यक्ष श्री रामनारायण जी गुप्ता, ओंकारलाल जी जाट आदि सज्जनों ने लिखा पढ़ी करके जो सामान था उसे अधिकार में लेकर 'बाबा' को धर्मशाला जो गांव में थी वहां ले आकर उनका वैद्य द्वारा उपचार करने की व्यवस्था कर दी। श्रावण बदी ३० के ४ बजे प्रातःकाल से ही बादलों की गड़गड़ाहट के साथ घनघोर वर्षा होने लगी। नदियों में बाढ़ें आने लगी वे अपने किनारों से टकराती हुई आगे बढ़ने लगी। वाहन आवागमन बन्द हो गया। यहां से नर्मदा जी ७ मील दूर पड़ती हैं। नित्य की भाँति पाठ करीब ११ बजे समाप्त होने के पश्चात् प्रसाद वितरण हुआ सारे पाठक-गण 'बाबा' के पास पहुँचे तो उन्होंने सब को बिठाकर कहा कि हम सारे 'रघुपति राघव राजाराम' का भजन सामुहिक करें। भजन करीब ५ मिनट तक चलता रहा। बाद में 'बाबा' ने कहा कि भाइयों आप लोग प्रति एकादशी पर अखण्ड रामायण जी का पाठ चलाते रहें। प्रतिवर्ष श्रावण मास में सामुहिक मास-परायण करा करेंगे तो आप लोगों को मनोवांछित फल प्राप्त होगा इसमें कोई शंका नहीं, और लोक कल्याण भी होगा। बस प्रभु का भजन करो। इतने में दिवाल पर टंगी घड़ी ने १२ बजने का संकेत टन्-टन के रूप में किया। ॐ शांति शांति 'सीताराम' कहते हुये 'बाबा' साकेत सिधारे।

उस समय वर्षा बन्द होगई थी। थोड़े समय पहले जो बादलों को घटा टोप दिखाई देती थी न मालुम कहां अदृश्य हो गई। नदियों में भी पानी कम होने लगा। शायद नदियों औ बादलों ने भी 'बाबा' के निधन पर शोक मनाया हो। अतः उन्होंने अपना अपना कार्य कुछ समय के लिये रोक सा दिया। स्पष्ट ही इन्द्रदेव ने 'बाबा' का स्वागत किया था।

'बाबा' की अर्थी बड़े ही सुन्दर ढंग से फूलों की मालाओं से सजाई गई। रामायण मण्डल के तत्वावधान में 'रघुपति राघव राजाराम' की पावन धुनि के साथ अर्थी निकालकर मेलघाट में ले जाकर जहां दोनों नदियां अपनी अपनी पानी की गति का अनुमान लगा रही थी, और बाद में एक होकर तूफान के समान दौड़ती हुई चली जा रही थी वहां 'बाबा' की अर्थी को नाव द्वारा पार करके हृष्ट-पुष्ट नौजवानों ने 'बाबा' की अर्थी को कन्धों पर रखकर घुटने २ कीचड़ में चलकर महान् कष्टों को झेलकर माँ नर्मदा को उनके लाड़ले सन्त को गोदी में दे दिया। महाराज के गोलोक सिधारने के १२ दिवस पश्चात् सन्तों की जमात आई। रामायण मण्डल की ओर से भंगुण किया गया। उनकी पावन स्मृति में रामायण मण्डल की ओर से श्री नरसिंह प्रभु के मन्दिर के समीप ही रामायण कुटी बनाई गई। कुटी का उद्घाटन मिती कुँवार शुक्ल शरद-पूर्णिमा के पावन पर्व पर मूल रामायण का ११ पाठ श्री नरसिंह महाप्रभु की आरती ब्राह्मण व पांच कन्याओं को भोजन कराके प्रसाद वितरण द्वारा किया गया था।

तुलसी संग्रहालय में ग्रन्थ संग्रह प्रगति

नीचे लिखे महानुभावों ने पाँच या अधिक पुस्तकें प्रदान करने की कृपा की है।

		मुद्रित	हस्तलिखित	कुल
१—	श्री डा० सुखवन्तकिशोर नागौद	३	४	७
२—	श्री प्यारेलाल जी गुप्त बिलासपुर	१७	....	१७
३—	श्री सन्त कवि स्वामी नारायणदास जी पुष्कर	१८	....	१८
४—	श्री सम्पतिकुमार पीड़िया माधवगढ़	...	६	६
५—	श्री पं० रामलगन उरमलिया शिवराजपुर	....	८	८
६—	श्री बालाप्रसाद जी हेडमास्टर छिवौरा	....	८	८
७—	श्री पं० गंगाप्रसाद जी बेला	...	६	६

दाताओं की कुल संख्या ६३ हो गई है। इस संख्या में विशेष प्रगति होना आवश्यक है।

—शारदाप्रसाद

गुरु ग्रन्थ साहब की प्रतिष्ठा

अपने तुलसी संग्रहालय में सभी धर्मों तथा सम्प्रदायों का साहित्य संग्रह किया जा रहा है। हमने गुरु ग्रन्थ साहब भी मँगाना चाहा तो विदित हुआ कि इन्हें डाक से भेजने का नियम नहीं है। श्री जे० एन० भगत दिल्ली गये थे। उन्हें पत्र लिख दिया गया तो वे ग्रन्थ ले आये। इसके उपरान्त यह उचित समझा गया कि इन्हें उसी क्रम से रखा जाय जो सिख सम्प्रदाय की भावनाओं के अनुकूल हो। सतना के सिख बन्धुओं से हमने प्रार्थना की तो समुचित व्यवस्था करके उन्होंने एक पूरे महोत्सव के द्वारा गुरु ग्रन्थ साहब की स्थापना विगत ता० १४-१२-५८ को करदी। अभी एक कमरे में प्रतिष्ठित हैं। सिख साहित्य भी इसमें ही रखा जा रहा है। आगे का क्रम सिख बन्धुओं पर निर्भर करेगा।

—शारदाप्रसाद

प्रभु की कृपा का युगल स्वरूप दर्शन

[श्री रामचरणलाल जी श्रीवास्तव]

प्रभु की कृपा के दो स्वरूप हैं' अर्थात् प्रभु की कृपा दो प्रकार की होती है।

(१) सामान्य या समकृपा (२) विशेष कृपा

प्रभु की सामान्य या समकृपा—प्रभु की बयारि रूपी समकृपा तो सदैव सब के लिये सम ही चलती रहती है, जिसका प्रमाण प्रभु के ही बचन हैं—

अखिल विश्व यह मम उपजाया।
सब पर मोरि बराबर दाया॥

तब सम प्रिय के सम्बन्ध में आगे जो वचन हैं, वे समकृपा के ही सूचक हैं। यथा—

भगति हीन बिरंचि किन होई।
सब जीवहु सम प्रिय मोहिं सोई॥

विशेष कृपा—सुपात्र अथवा अधिकारी पर प्रभु खास तौर से जो कृपा करते हैं वही प्रभु की विशेष कृपा अथवा विशेष दया कहलाती है। विशेष प्रिय या प्रानप्रिय पर 'भगवान' की विशेष दया होती है—

भगतिवंत अति नीचउ प्रानी।
मोहिं प्रानप्रिय असि मम बानी॥
पुनि पुनि सत्य कहउँ तोहि पाहीं।
मोहिं सेवक सम प्रिय कोउ नाहीं॥

पहले सम प्रिय या सब पर सम दया के सम्बन्ध में कहा जा चुका है और फिर दूसरी बार प्रभु कहते हैं कि मुझे सेवक के समान कोई भी प्रिय नहीं है, अर्थात् उन्हें सेवक सबसे प्यारा है। सबसे प्यारा ही प्रानप्रिय कहलाता है। प्रभु ने जो जहां तहां अपनी विशेष कृपा के लिये कहा है, वह मानस में कहीं कृपा शब्द और कहीं विशेष कृपा से सूचित किया गया है। सर्वत्र कृपा के साथ विशेष-विशेषण का प्रयोग नहीं किया गया, किन्तु उसका अर्थ विशेष कृपा ही स्पष्ट होता है। श्री गोस्वामी जी ने प्रत्येक स्थल पर इसलिये विशेष का विशेषण लगाना उचित नहीं समझा कि प्रभु के प्यारे (अधिकारी सुपात्र जन) उन प्रभु की विशेष कृपा को स्वयं समझ लेंगे। इसीलिये उन्होंने 'मानस' के बालकाण्ड में एक स्थल पर सभी बातों को समझने के लिये स्पष्ट संकेत कर दिया है। यथा—

जे एहि कथहिं सनेह समेता।
कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता॥
होइहहिं रामचरन अनुरागी।
कलिमल रहित सुमंगल भागी॥

इस प्रकार सिद्ध हो गया कि श्री भगवद्भक्तों के लिये भगवान अवश्य विशेष कृपा करते हैं। विशेष कृपा के सम्बन्ध में और भी प्रमाण दिये गये हैं—

तदपि तुम्हारि साधुता देखी।
करिहउँ एहि पर कृपा बिसेषी॥

यह ब्रह्मवाणी 'श्री भगवत' के ही वाक्य है। श्री शंकर जी के वचनों पर ध्यान दीजिये—

अति हरि कृपा जाहि पर होई।
पाउँ देइ एहि मारग सोई॥
यह सुभ चरित जान पै सोई।
कृपा राम कै जा पर होई॥

भक्ति प्राप्ति हेतु प्रभु को दया करनी पड़ती है, इससे यह दया विशेष दया ही कहलाई। क्योंकि सम दया के लिये दया का करना नहीं बताया गया, बल्कि '*सब पर मोरि बराबर दाया*' कहा गया।

यह प्रभु की कृपा किस प्रकार होती है? इसके लिये वे ही साधन हैं जो श्री हरि भक्ति प्राप्त करने के लिये बताये गये हैं। उन्हीं साधनों पर चलने से राम जी कृपा करते हैं और तब जीव श्री राम का कृपा-पात्र बनता है। मानस में एक स्थल पर श्री शंकर जी ने भी श्री पार्वती जी से कहा है। यथा—

मन क्रम बचन छाँड़ि चतुराई।
भजत कृपा करिहहिं रघुराई॥



सक्रिय सदस्य

"मानस मणि" के सन् १९५९ के दो या दो से अधिक ग्राहक बनाने वाले सदस्य —

चौबिस ग्राहक बनाने वाले—श्री पं० रामसुपाल जी भट्ट, खरमसेड़ा
ग्यारह ग्राहक बनाने वाले—श्री तोरन सिंह जी, कुम्हड़ा
दस ग्राहक बनाने वाले—श्री परसराम जी तिवारी, बीना
सात ग्राहक बनाने वाले—श्री हरनाथ सिंह ठाकुर, घोघड़ा
छः ग्राहक बनाने वाले—श्री जगन्नाथ साधु, ननोदा
पाँच ग्राहक बनाने वाले—श्री गंगाप्रसाद जी तिवारी, बेलसोड़ा
चार ग्राहक बनाने वाले—(१) श्री द्वारिकाप्रसाद जी, झींट
(२) श्री पं० भैरव प्रसाद रामायणी, इलाहाबाद
तीन ग्राहक बनाने वाले—(१) श्री गंगाप्रसाद जी, कटारी
(२) ठा० आनन्द सिंह पटवारी, चोरभट्ठी
(३) श्री तरुणेन्द्रशेखर जी, नवरोजाबाद
(४) श्री मिट्ठू लाल सोनी, मुँगेली
दो ग्राहक बनाने वाले—(१) श्री ब्रह्मदेव सिंह जी, कलकत्ता
(२) श्री रमेश प्रसाद जी षटेरिया, उन्नाव
(३) श्री रामनाथ जी तिवारी, बीना
(४) श्री फकीरराम जी देवांगन, उरमाल
(५) श्री लालन प्रसाद जी पाण्डेय, मौहापाली
(६) श्री मोहनसिंह वर्मा, सिरपन
(७) श्री नीरज जी जैन, सतना
(८) श्री केवल प्रसाद वैष्णव, अहिल्दा
(९) श्री रघुनन्दन सिंह जी, नवरोजाबाद
(१०) श्री लक्ष्मीप्रसाद रमेशचन्द पटवा. बनखेड़ी
(११) श्री नन्दनप्रसाद जी, होसिर
(१२) श्री गुरुप्रसादराम जी महावीरप्रसाद, रायरंगपुर
(१३) श्री विशालप्रसाद जी, खरथुली
(१४) श्री परमानन्द जी शंसा, दिल्ली
(१५) श्री रामनारायण जी खरे, दरौली
(१६) श्री मोतीलाल जी, रामवन
(१७) श्री पं० वेनीमाधव जी पाण्डेय; कहला
(१८) श्री स्वामीप्रसाद जी यादव, छवलाहुवे
(१९) श्री रघुवीरप्रसाद जी, वड़तुँगा
(२०) श्री केशरीकिशोर शरण जी व्यास, चौबेवेल

नोटः—जो सज्जन और नये ग्राहक बनाकर सक्रिय सदस्यता प्राप्त करेंगे उनकी नामावली अगले मास दी जायगी। इस वर्ष के सक्रिय सदस्यों की संख्या ३२ है।

संघ-समाचार

दिसम्बर मास में संघ के ६८ नये सदस्य बने तथा तीन नई शाखायें स्थापित हुईं जिनका विवरण इस प्रकार है—

शाखा संख्या ८६ हेडपोस्ट आफिस जबलपुर [म० प्र०] सदस्य १० मन्त्री श्री गोविन्दराव जी भट्ट। शा० सं० ८७ बैतूल [म० प्र०] स० १० मं० श्री आत्माराम जी मानकर। शाखा सं० ८८ पिपरौवाकलां [गिर्द] सदस्य १८ मन्त्री श्री प्रेमनारायण जी पाण्डेय।



विविध समाचार

अटंग—मानस के पाठ होकर हवन हुआ। बरात का जलूस निकाला गया। ध्वजारोपण हुआ।

—हिरऊराम

ठासरा—कार्तिक वदी ५ से अगहन सुदी ६ तक श्री पं० बालकृष्ण जी व्यास द्वारा मानस प्रवचन हुआ। प्रतिदिन प्रसाद वितरण हुआ।

—मफतलाल चुन्नीलाल

झाँसी—श्री १००८ पूज्य श्री बाबा रामदास जी महाराज (करह) की अध्यक्षता में अष्टम श्री रामचरित मानस सम्मेलन ता० ८ से १२ दिसम्बर तक हुआ। सर्व श्री बाबा प्रेमदास जी रामायणी, सीताशरण जी, शिवनारायण व्यास, सूर्यप्रकाश मिश्र, बासुदेवशरण जी, श्रीमती प्रेमादेवी आदि का नित्य ७ से १२ बजे रात्रि तक मानस पर प्रवचन होता था १५-२० हजार श्रोताओं ने कथा श्रवण किया।

—नारायणदास

धूमा—ता० २० से २७ दिसम्बर तक श्री पं० काशीप्रसाद जी पयासी द्वारा मानस प्रवचन हुआ।

—ए० के० सिंह

सरसी—नित्य सुबह शाम विद्यार्थियों द्वारा कीर्तन होता है।

—केशवप्रसादसिंह

उमरेठ—गीता मन्दिर में ता० ११ से १६ दिसम्बर तक मानस का नवाह पाठ हुआ। ता० २१-१२-५८ को गीता जयन्ती उत्सव, पाठ, प्रवचन होकर प्रसाद वितरण हुआ। ता० २२ से २६ दिसम्बर तक श्रीसंतराम मन्दिर में श्री महारुद्र तथा शतचंडी यज्ञ हुआ। ब्राह्मण भोजन हुआ।

—मंगुभाई मंछाराम

बांका—श्री महावीर जी के मन्दिर में ता० २१-१२-५८ को गीता जयन्ती मनाई गई।

—गिरीश्वरप्रसादसिंह

भागलपुर—ता० २७-१२-५८ को श्री अखिलेश्वर प्रसाद जी के यहां १६ व्यक्तियों द्वारा सुन्दर काण्ड का सामूहिक पाठ हुआ। बाद में आरती होकर प्रसाद वितरण हुआ।

—जगदीशप्रसाद

खंडसरा—पशु कष्ट निवारण हेतु कार्तिक सुदी १ से १५ तक राधेश्याम कीर्तन हुआ।

—खेमसिंह

गोरखपुर—ता० २०-२१ दिसम्बर को २४ घंटे का अखंड कीर्तन हुआ।

—हीरालाल मिश्र

खपरी—ता० २४-१२-५८ को श्री पं० चिन्ताप्रसाद जी द्वारा रामायण प्रवचन हुआ। बाद में आरती होकर प्रसाद वितरण हुआ।

—रामविश्वास

बाराद्वार—ता० २१-१२-५८ को गीता जयन्ती पर गीता पूजन, रामायण प्रवचन, आरती, प्रसाद वितरण आदि हुआ। —धनसाय साहू

हर्रई—२ साल से नित्य प्रभात फेरी होती है और मङ्गलवार, शनिवार को कीर्तन शिवमन्दिर में होता है। —हरिराम

मुकुन्दपुर—श्री हनुमज्जयन्ती को दस मन्दिरों में जन्मोत्सव मनाया गया। —रामसुन्दर

बिहटा—शिव स्थान में ता० २५ दिसम्बर को अष्टयाम कीर्तन २४ घन्टे का हुआ। बाद में जलूस निकाला गया प्रसाद वितरण हुआ।

—वासुदेवराय

बनारी—ता० १२-१२-५८ को रामायण प्रवचन हुआ। —बृजमोहनलाल

धनगाँव—श्री जगदीशसिंह जी के यहां मानस पाठ, आरती, होकर प्रसाद वितरण हुआ।

—रघुनन्दनसिंह

गन्धवानी—भादों सुदी ६ को १८ व्यक्तियों द्वारा दो पाठ मानस के एवं चार पाठ सुन्दरकाण्ड के हुए। कुवाँर सुदी १५ को सुन्दरकाण्ड का पाठ हुआ। —नन्दलाल

भागलपुर—श्री केदारनाथ जी, श्री बद्रीनाथ सहाय, श्री विश्वनाथप्रसाद के यहां मानस का सामूहिक पाठ हुआ। श्री कमलेश्वरीप्रसाद जी के यहां श्री रामविवाहोत्सव मनाया गया। ता० २१-१२-५८ को गीता जयन्ती मनाई गई।

—जगदीशप्रसाद

अमौना—प्रत्येक एकादशी को सत्संग समिति की बैठक में सदुपदेश एवं सत्संग होता है।

—नागेश्वर

तमनार—कार्तिक पूर्णिमा को २४ घन्टे का अखंड पाठ हुआ। सरयूप्रसाद

खैरा—ता० १०-१२-५८ को मानस पाठ हुआ।

—मनराखन साहू

छिबौरा—कार्तिक मास का पूरा उत्सव मनाया गया। —"खिन्न"

कन्हवारा—ता० २८-११-५८ से ५-१२-५८ तक श्री रामसुपाल जी भट्ट द्वारा मानस पर प्रवचन हुआ। मणि के ग्राहक बनें। —रामप्रसाद

भलका—प्रति मंगलवार व शनिवार को क्रमशः श्री निहालसिंह एवं श्री नारायणसिंह जी की कचहरी पर राम सभा की बैठक में कीर्तन, होकर प्रसाद वितरण होता है। —कुँ० इन्द्रसिंह

कोहड़िया—कार्तिक शुक्ल ११ से १५ तक श्री पं० पूर्णानन्द जी के आचार्यत्व में श्रीमती कृष्णाबाई एवं मातेश्वरी श्रीमती लक्ष्मीबाई ने कार्तिक व्रत का उद्यापन किया। तुलसी व्याह हुआ। दत्तक पुत्री तुलसी के कन्यादान पर बर्तन, सोना, चाँदी अन्न आदि का दहेज दिया गया। तीन दिन तक हवन हुआ। —होरिलगिरि

बम्बई—विट्ठल मन्दिर में ता० २४-११-५८ से १४-१२-५८ तक श्री पं० केदारनाथ जी रामायणी द्वारा मानस पर प्रवचन हुआ। अन्तिम दिन कीर्तन तथा हवन हुआ। —जगनारायण द्विवेदी

हटिया—दीपावली पर दक्ष प्रजापति यज्ञ एवं सत्यनारायण की पूजा करके पाठ हुआ। माइन्स बोर्ड क्लब एवं वाटर बोर्ड झरिया के प्रेमियों द्वारा मानस प्रचार श्री रामलीला द्वारा हो रहा है।

—रामरक्षासिंह

रायगढ़—ता० ५-११-५८ को सुविख्यात रामायणी श्री पं० रामरक्षित जी द्वारा मानस पर प्रवचन हुआ। ता० ७-१२-५८ को श्री हनुमान मन्दिर में प्रबचन हुआ। जनता कथा श्रावण कर मुग्ध हो गई। —व्यासनारायण

मुँगारी—स्कूल में ता० १६-१२-५८ को भारत प्रसिद्ध रामायणी कविरत्न पं० श्री भैरवप्रसाद जी द्विवेदी द्वारा मानस पर भावपूर्ण प्रवचन हुआ। जनता कथा से बड़ी प्रसन्न हुई। —रामबहादुरसिंह

जसरा—कालेज में ता० १५-१२-५८ को श्री पं० भैरवप्रसाद रामायणी द्वारा पीयूष प्रवाही प्रवचन हुआ, श्रोतागण रसोन्मत्त होकर झूम उठे।

—रामविशाल

करछना—श्री लालबिहारी जी मिश्र नायब तहसीलदार एवं श्री बलबीरसिंह जी तहसीलदार के यहां क्रमशः ता० १०-१२-५८ तथा १२-१२-५८ को को श्री पं० भैरवप्रसाद जी रामायणी द्वारा सारगर्भित प्रवचन हुआ। मानसमणि के १७ ग्राहक बने। —शारदाप्रसाद

लहेरियासराय—श्री हनुमज्जयन्ती बड़े उत्सव से मनाई गई। —सूर्यनारायण चौधरी

रघुनाथपुर—श्री सेठ सुबलाल जी के गोले में भारत विख्यात रामायणी मानस मार्तण्ड श्री पं० केशरीकिशोर शरण जी द्वारा ता० १ से २२ दिसम्बर तक मानस प्रवचन हुआ। ता० २० से २३ फरवरी माघ शुक्ल १२ से १५ तक श्री रामायणी जी के तत्वावधान में सम्मेलन होगा, मानस प्रेमी कथा से लाभ उठावें। —भूषणसिंह

चक्रधरपुर—ता० २७ दिसम्बर से २ जनवरी तक श्री मानस केशरी पं० जगदीशनारायण जी कुमुद रामायणी द्वारा राम वन गमन पर सुललित प्रवचन हुआ। पूर्णाहुति पर कीर्तन होकर प्रसाद वितरण हुआ। —हरीशंकर

धुरकोट—ता० २४ दिसम्बर से २६ दिसम्बर तक श्री पं० रामरक्षित जी रामायणी द्वारा मानस पर प्रवचन हुआ। अपार जनता की भीड़ होती थी। —रणजीतसिंह

रायरंगपुर—मार्गशीर्ष वदी १ से १५ तक मानस का मास पारायण, हनुमान-चलीसा पाठ, श्रीमद्-भगवत् गीता का पाठ हुआ। —गुरुप्रसादराम

सिसवाँ—श्री ठा० बहादुरसिंह जी की अध्यक्षता में मानस का अखंड पाठ 'दीनदयाल'..... सम्पुट से हुआ। —राधेश्याम

मगरौल—भाद्रपद शुक्ल ८ और कुवांर शुक्ल ५ को क्रमशः सर्व श्री प्रभुदयाल जी यादव और छोटेलाल जी मिश्र के यहां अखंड ज्योति जलाकर मानस का अखंड पाठ हुआ। समाप्ति पर कीर्तन, ब्राह्मण भोजन होकर प्रसाद वितरण हुआ। —सम्वाददाता

सफीपुर—सत्संग का छठवां वार्षिकोत्सव ता० २८, २९, ३० दिसम्बर को हुआ जिसमें महात्माओं एवं विद्वानों के सुन्दर प्रवचन हुए। —मंत्री शाखा

मेरठ—सैनिक प्रेमी बन्धुओं द्वारा मानस का ४८ घन्टे का अखंड पाठ हुआ। —रामसुन्दर त्रिपाठी

पटेहरा—श्री हनुमान जी के मन्दिर में कार्तिक शुक्ल पक्ष में मानस का एक नवाह पाठ तथा २४ घन्टे का अखंड कीर्तन हुआ। समाप्ति पर हवन, आरती, ब्राह्मण भोजन होकर प्रसाद वितरण हुआ। —रमाशंकर

ओंकारेश्वर गुफा—(हनुमना) २४ घन्टे का अखंड कीर्तन हुआ। —रमाशंकर

अंजार (कच्छ)—रघुनाथ मन्दिर में समूह ज्ञान समिति के सदस्यों द्वारा गीता के ११ पाठ ता० २१-१२-५८ को हुए। श्री गायत्री परिवार मण्डल द्वारा यज्ञ होकर प्रसाद बांटा गया। —लौ० आनन्द

चेरिया वरियारपुर—आनन्द बाजार के एक शिवालय से ता० ३१-१२-५८ को ११ बजे दिन श्री हनुमान जी की पाषाण की ११ सेर वजन की मूर्त्ति आकाश की ओर उड़ गई जो कुछ दूर तक उड़ती दिखाई दी और आकाश में अन्तर ध्यान हो गई। —मन्त्री

चित्रकूट धाम—विश्व कल्याणार्थ श्री सीता यज्ञ एवं राम कृष्ण यश संकीर्तन सम्मेलन वैष्णवाचार्य भगवान श्री रामानन्द जी की जन्म तिथि माघ कृष्ण ७ शनिवार ता० ३१-१-५९ से माघ कृष्ण १५ शनिवार ता० ७-२-५९ तक होगा। अयोध्या के संगीत सम्राट श्री व्याकुल जी महाराज सितारे हिन्द भी पधार रहे हैं। सभी भक्त समुदाय सम्मिलित होने की कृपा करें। —सर्वेश्वरी श्रीकिशोरी जी

आश्विन पारायण समाचार

छिंदवाड़ा—मानस का पाठ हुआ।
—दशरथकुमार लाठ

कन्हईबन्द—३ प्रेमियों ने नवाह पाठ किया।
—रामसहाय राठौर

रांची—नवाह पाठ हुआ। —हनुमानशरण सिंघानिया

खैरा—सामूहिक नवाह पाठ हुआ।
—मनराखन साहु

खैरादीप—नवाह पाठ हुआ। —रामप्रसाददुबे

लहेरियासरांय—सामूहिक नवाह पाठ हुआ।
—सूर्यनारायण चौधरी

मोहरेंगा—२३ सदस्यों द्वारा नवाह पाठ हुआ। ६ सदस्यों द्वारा गीता का पाठ हुआ। —मेघराय

नीचे लिखे स्थानों में पाठ के पश्चात् हवन, आरती, ब्राह्मण भोजन हुआ।

मुकुन्दपुर—नवाह पाठ हुआ। —रामसुन्दर

कबीद—९ पाठ मानस के हुए। —बाबूलाल

आसोप—१४ सदस्यों द्वारा नवाह पाठ हुआ।

भनगवाँ—दो व्यक्तिगत नवाह पाठ हुए।
—रामफल

आमोरा—नवाह पाठ हुआ।

मौछ—नवाह पाठ हुआ। —हरप्रसाद दुबे

भमरहा—दो नवाह पाठ हुये। —रमाशंकर

तलवाड़ा—८ व्यक्तियों द्वारा सामूहिक पाठ हुआ।
—प्रेमदास

शोक

बरौदिया—के पं० श्री हरिगोविन्द जी शर्मा रामायणी का ता० १०-१२-५८ को ८५ वर्ष की आयु में साकेतवास हो गया है। आप इस प्रान्त के प्रसिद्ध रामायणी थे। भगवान से प्रार्थना है कि इनकी आत्मा को शान्ति एवं दुखित परिवार को सहिष्णुता प्रदान करें। —पं० राधेश्याम शर्मा

गरौठा—के मानस मर्मज्ञ बालब्रह्मचारी श्री द्वारिकाप्रसाद जी गुप्त आश्विन सुदी ११ ता० ६-६-५८ की रात्रि को बैकुंठवासी हुए। आपका व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभावशाली था। साधना गुप्त थी। मानस के सम्बन्ध में आपका कथन था—'प्रत्येक अर्धाली मन्त्र रूप है।' मानस प्रेमियों की ओर से हम उन्हें सादर श्रद्धाञ्जलि समर्पित करते हैं।

—ब्रजनन्दन गुप्त

सरसीवा—श्री कृष्णकिंकर प्रसाद जी दुबे ने मृत्यु होने के कुछ घन्टे पूर्व अपने परिजनों मित्रों एवं ग्राम के गण्यमान व्यक्तियों को बुलाकर वर्तमान समाज और भावी जीवन के सम्बन्ध में व्याख्या करते हुए कुछ देर तक उनका कर्तव्य समझाया तदनन्तर 'रघुपति राघव राजाराम' की धुन के साथ उनका महाप्रयाण हुआ। उनकी आत्म शान्ति हेतु ईश्वर से प्रार्थना है। —गिरवरप्रसाद

सक्रिय सदस्य

मानस संघ के नये १० या अधिक सदस्य बनाने वालों की सूची—

		पूर्व प्रकाशित	नये	कुल
१—श्री पं० रामरक्षित जी रामायणी बनारी	—	११७	३	११०
२—श्री कुँ० इन्द्रसिंह जी भलका	—	११	१	१३
३—श्री रामधुन जी तिवारी पिपरिया	—	१०	४	१४
४—श्री शिवनारायण जी श्रीवास्तव बैतूल	—	+	१०	१०
५—श्री साहबसिंह जी बहबलपुर	—	+	१०	१०
६—श्री प्रेमनारायण जी पाण्डेय पिपरौवाकलाँ	—	+	१८	१८

नोट—अब तक सक्रिय सदस्यों की संख्या ३८ हो गई है।

रामवन-समाचार

श्री मारुति सेवा—दिसम्बर मास में मानस का एक नवाह पाठ नित्य होता रहा। इस मास में १७७२.७१ की आय हुई और खर्च १३३२.४५ हुआ। बचत ४४०.२६ की रही। पिछली कमी १९७१.४७ से यह घटाने पर अब १५३१.२१ की पूर्ति करना बाकी है। इस मास की मुख्य आय गांधी घर के लिये प्राप्त सरकार की सहायता १०००.०० रु० है। आशा है जनवरी मास में यह घर तैयार हो जायगा।

१-१२-५८

११.०० श्री नारायण गेहलोत, इन्दौर
३२.०० श्रीमती हकीम रामस्वरूप मेहरोत्रा, लाहरपुर
३००.०० श्री विष्णुलार्ड कम्पनी, नकुरू
२.०० ,, महादेवप्रसाद, बैतूल

३-१२-५८

१.२५ श्री उदिया जी गेहलोद, तलवाड़ा
१.२५ ,, प्रेमदास जी पुजारी, ,,
१०००.०० ,, वी० डी० ओ० साहब, सोहावल

५-१२-५८

५.०० श्री रविराव जाधव, भेलसा
५.०० ,, मालिकराम जी पटवारी, डोड़की
२.०० ,, मानकलाल जी शर्मा, होशंगाबाद

६-१२-५८

५.२५ श्री रामकिशन अग्रवाल, नागपुर
२.०० ,, रामबाबू, भिण्ड
३.०० श्रीमती बाई, ,,
१००.०० श्री सेठ बिरदीचन्द जी पोद्दार, नागपुर
२५.०० ,, सेठ रामकिशन अग्रवाल, ,,

८-१२-५८

५.०० श्री रामलालसिंह मुख्तार, देवरिया
१.२५ ,, शिवप्रसादलाल, बारसलीगंज
१.२५ ,, अकलहा ध्रुव, डाही

९-१२-५८

५.०० श्री सत्यव्रतलाल यादव, राजनांदगांव
२०.०० ,, व्रजभूषण जी गनेड़ीवाला, गोरखपुर
८.०० ,, पं० अहरवादीन जी मिश्र, शेषपुर
३.७५ ,, दिनेश्वरप्रसाद, फतेहपुर
१०.०० ,, पुरुषोत्तमसिंह, जगन्नाथपुर

१०-१२-५८

१.२५ श्री रामरतन शर्मा, झांसी
१.२५ ,, आनन्द स्वरूप भटनागर, ,,

११-१२-५८

५.०० श्री इन्द्रदत्त जी पुरोहित द्वारा शाखा नं० ४३१, ४३२ जबलपुर
२.०० श्री भीकूलाल पालीवाल, रोशंगपुर

१२-१२-५८

३२.०० श्री गोविन्दलाल जायसवाल, कटोरी
१.०० ,, हरिप्रसाद जी नेमा, अमरवाड़ा

१३-१२-५८

१.२५ श्री रामजीलाल मेहरोत्रा,
२. ० ,, केशरीलाल शर्मा, अकलेहरा
४.८४ श्रीमती लीलावती, परौंठ
४.०० ,, आई. के. एम. इन्टर कालेज, इलाहाबाद द्वारा श्री भगवतीलाल श्रीवास्तव

१५-१२-५८

८.०० श्री गणेशप्रसाद तिवारी, भेलसा
२.०० ,, शङ्करगणेश शप्रे, बड़ोदा
२.०० ,, मानसप्रपन्न त्रिपाठी, सेमरखेड़ी

१७-१२-५८

५.०० श्री सोनी नारायणदास करसन जी, जूनागढ़
१०.०० ,, शिवप्रसाद जी कपूर, पलासूर
२.०० ,, मुकुटसिंह भदौरिया, सेंथरी
१.२५ ,, टीकमसिंह यदु, ढिंगसरा
१.२५ ,, मनराखनलाल साहू, खैरा

२.५० श्री जयराम साहू, पुरवा
१०.०० ,, भाई अम्बालाल कालिदास पटेल नैरोबी
५.०० ,, जीवनदास हरिदास तन्ना, नैरोबी

१८–१२–५८

२.०० श्री कमलाकान्त उपाध्याय, फुलवरिया
५.०० श्री सेठ रामचन्द्र सफड़िया, सतना

१९–१२–५८

५.०० श्री मारोती राव वाकरे, मुड़पार
४.०० ,, रामचन्द्र त्रिपाठी, दुर्ग
१०.०० ,, कालीनाथ कपूर, इलाहाबाद

२०–१२–५८

१.२५ श्री ब्रह्मदेवसिंह जी, कलकत्ता
१.२५ ,, पुरन्दर मिश्र ,,
१.२५ ,, सीताराम दूधवाला ,,
०.६२ फुटकर
१.०० ,, भगवती प्रसाद गुप्ता. पचमढ़ी

२२–१२–५८

१.०० श्री वी० वी० व्यास, ठासरा
२.०० ,, विश्रामसिंह, चैतमा
१७.०० ,, गोविन्दलाल जायसवाल, कटोरी

२३–१२–५८

१.०० श्री गणेश गंगाधर पुरन्दर, जवलपुर
१.२५ ,, जुगुलकिशोर जोशी, महू

२४–१२–५८

१.०० श्री अमृतलाल पाण्डेय, रतनपुर
५.०० ,, त्रियुगीनारायण, करगीरोड

२६–१२–५८

३.०० श्री बनमालीलाल त्रिपाठी, सिरसा
१५.०० श्रीमती लक्ष्मीदेवी, ताकू
२.०० ,, शीतलसिंह, सिरसा
५.०० ,, अयोध्याप्रसाद वाजपेई, कलकत्ता
१.२५ ,, जगदीशप्रसाद, खम्हारिया
४.०० ,, राधाकृष्ण रामेश्वरलाल, बलवाड़ा
१.२५ ,, सरयूप्रसाह साव, तमनार

३०–१२–५८

५.०० श्री वैजनाथ जी त्रिपाठी, कुदरकोट
२३.६६ चढ़ोत्री

१७७२.७१ कुल । दाताओं को धन्यवाद

मानस प्रचार—इस मास में सदस्य शुल्क से १५.५० और श्रीराम-नामलड्डू विभाग से ७.९० कुल २३.४० की आय हुई और खर्च पत्र व्यवहार में ४७.०३ हुआ । कमी २३.६३ की रही । पिछली कमी १४७६.७१ सहित अब १५००.३४ की पूर्त्ति करना बाकी रहा ।

तुलसी संग्रहालय—इस मास में खर्च २०१.८[illegible] हुआ और आय ५०.५० की हुई । कमी १५१.३[illegible] की रही । पिछली कमी ३४०८.४६ सहित अब ६५५९.८२ की पूर्त्ति करना बाकी है ।

१२–१२–५८

५०.०० गुप्तदान

१७–१२–५८

५० श्री जयराम साहु, पुरवा

५०.५०

श्री रामनामलड्डू—दिसम्बर मास में ८५० लड्डू तैयार हुए । दैनिक क्रम में १५५ लड्डू समर्पण हुए शेष अक्षय तृतीया के लिये रखे गये । केन्द्रों की स्थिति इस प्रकार है—इन्दौर ४८५, डुमरिया १८[illegible] ब्यावर १०४, भाटापारा ९६, जलालखेड़ी ७[illegible] परौंख ८६ ।

मानस मणि के अधिक से अधिक ग्राहक बनाकर इसे स्वावलम्बी बनाइये

तपोवन के पथ पर

मनुष्य के लिये वायु परम आवश्यक है। इसके बिना वह कुछ क्षण भी नहीं रह सकता। जल के बिना एक दो दिन रह भी जाता है। भोजन के बिना कई दिन रह सकता है पर है वह भी नितान्त आवश्यक। परम-प्रभु ने इन तीनों की व्यवस्था प्रचुर मात्रा में कर दी है। वायु हर स्थान में परिपूर्ण है तो जल भी सर्वथा सुलभ है। प्रभु का प्यारा पुरुष बन के सुलभ कन्द, मूल, फल, अल्प प्रयास से प्राप्त कर आनन्द से जीवन बिताता था। शुद्ध जल वायु और अहार उसे प्रभु से मिलाने सहायक होते थे। यही थी भारत की आरण्यक सभ्यता।

तब हमें बड़े बड़े भवनों की चाह न थी, घास-फूस की कुटियों से काम चल जाता था। पर आज तो बड़े बड़े नगर बस गये हैं और उनकी विशाल अट्टालिकाओं में दूषित जल, वायु और मिलावटी भोजन पर रहने वाले मनुष्य शारीरिक और मानसिक सुख के लिये तरसते हैं। एक मित्र ने कहा था कि कलकत्ते में केवल एक वस्तु शुद्ध मिलती है—डाब का पानी। पर वह भी यदि गिलास में न पिया जाय। नगरों के निवासी विशेष कर बड़े आदमियों को शुद्ध जल-वायु अलभ्य है। ग्रामों में जाकर वे इसे उपलब्ध नहीं कर सकते। जिस प्रकार के भवनों में रहने का उनका अभ्यास पड़ गया है वैसे वहां नहीं हैं, न।

रामवन की जल-वायु शुद्ध है—भौतिक दृष्टि से तथा आध्यात्मिक दृष्टि से भी। अब छोटी छोटी पक्की कुटियाँ भी बन गई हैं। भले ही यह कोट्याधीशों के उपयुक्त न हों, साधारण और मध्यवित्त का काम इनमें खूब चलता है। आहार भी यहाँ शुद्ध प्राप्त होता है। तुलसी संग्रहालय के ग्रन्थ रत्न उन्हें समय के सदुपयोग की सुविधा प्रदान करते हैं।

हम यहाँ पर प्राप्य सुविधायें बढ़ाना चाहते हैं। विगत मई मास में रामवन में भारत सेवक समाज का प्रौढ़ शिविर लगा। व्यवस्थापकों ने कहा आप सामान दें तो हम भवन निर्माण करें। हमने सामान दिया और बालकों ने श्रमदान दिया। गांधी घर में काम लग गया। इसमें १६ फुट लम्बा चौड़ा एक कमरा है जिसके सामने ६ फुट चौड़ा बरामदा है। २१ दिन में प्रायः आधा भवन तैयार हो गया। इसके बाद राज्य शासन से पत्र व्यवहार किया गया और वहां से दो हजार रुपयों का अनुदान मिला। यह पंक्तियाँ लिखते समय भवन में काम लगा है और आशा है कि पाठकों के पास अंक पहुँचने तक भवन निर्मित हो जायगा।

तुलसी संग्रहालय में सभी प्रकार की पुस्तकें संग्रह हो रही हैं। गांधी साहित्य भी संग्रह होना ही था। यह नया गांधी घर तुलसी संग्रहालय का ही एक अंग माना जायगा और गांधी साहित्य इसमें रखा जायगा। सरकार ने रामवन में सूचना केन्द्र भी स्थापित किया है वह भी इसमें रहेगा।

आश्रम के आवश्यक निर्माण कार्य पूरे हो गये। अब कन्नी बसूली को अवकाश दिया जायगा और शुद्ध आहार उत्पादन क्रम में हम लगेंगे। आश्रम की भूमि का क्षरण रोकना, उसे उर्वरा बनाने का उद्योग करना, सिंचाई के लिये नाली आदि बनवाना ऐसे काम हैं जिसमें श्रम और धन दोनों ही लगाने पड़ेंगे। श्री हनुमान जी की कृपा से व्यवस्था होगी ही। हम चाहते हैं आश्रमवासियों के लिये यथेष्ट अन्न, शाक, फल तथा ईंधन आश्रम की भूमि ही प्रदान कर दिया करे। प्राचीन तपोवन वाला आदर्श पुनः स्थापित हो।

—शारदाप्रसाद



इस अङ्क की झाँकी

१. **श्री सत्योपाख्यान**—*यह ग्रन्थ क्रमशः चलेगा ही। इस अंक में जो अंश जा रहा है, उसमें महारानी कैकेयी के विवाह का एक नवीन रहस्य आप जान सकेंगे।*

२. **श्रीमारुति मन्दिर**—*रामवन में श्रीमारुति मन्दिर बना क्यों? यह एक कथा है और वह अद्भुत कथा आपको इस अंक में तथा अगले अंक में पूरी मिल जायगी।*

३. **'हरिपद रतिरस वेद बखाना'**—*पं० श्री भैरव प्रसाद जी द्विवेदी रामायणी ने अत्यन्त मनोरञ्जक सम्वादात्मक रूप में रसतत्त्व का निरूपण किया है।*

४. **इन चौंसठ अपराधों से बचिये**—*उपासना में सावधानी आवश्यक है। ६४ वैष्णवापराधों को जानलेना आपके लिये अच्छा होगा।*

५. **राक्षस-राज**—*धारावाहिक उपन्यास के अध्याय १४-१५ इसमें हैं।* '*उत्तम* **कुल पुलस्त्य कर नाती**' *रावण संग-दोष से नर भक्षी राक्षस हो गया।* **'को न कुसंगति पाइ नसाई'** *और अयोध्या से उसकी शत्रुता पुरानी है--कब कैसे प्रारम्भ हुई वह भी आप इस अंक से जान लेंगे।*

६. **मानस के पक्षी**—*सूची मात्र है, परन्तु आपको 'मानस' को एक विशेष दृष्टिकोण से पढ़ने की प्रेरणा देगा।*

७. **सन्त महिमा**—*कौन कह सकता है संतों की महिमा। इसमें एक संत का महिमामय चरित है।*

८. **गुरु और भाई की आज्ञा के बिना लक्ष्मण जी क्यों बोले? 'पराधीन सपनेहुँ सुख नाहीं', मानस में सु-राज्य एवं स्वराज्य, प्रभु की कृपा का युगल स्वरूप दर्शन,**—*ये चारों ही लेख मानस के अधिकारी मर्मज्ञों के विवेचन हैं। ये अपने विषयों पर गम्भीर प्रकाश डालते हैं। मानस तो रत्नाकर है, उसमें डुबकी लगाकर रत्न प्राप्त कर लेना सहज सम्भव है।*

९. *संत धरनीदास की प्रारम्भिक कविता* **'कर्ताराम,'** *आचार्य का आनन्द रामायण का संकलन,* **'अयोध्यानरेश और कौशलराजकुमारी का विवाह'** *ये दो मधु-बिंदु हैं और आप मधु-बिंदु के मधुर रस से परिचित हैं।*

१०. **भगवान राम कीमूर्ति, वसन्तोत्सव, मानससर और श्री राम-नाम, मणि के पुराने अंक, तुलसी संग्रहालय में ग्रन्थ संग्रह प्रगति** *तथा* **गुरु-ग्रन्थ साहब की प्रतिष्ठा,** *ये सूचनायें हैं आपके लिये।*

११. **संघ समाचार, विविध समाचार** *तथा* **रामवन समाचार** *तो सदा की भाँति इस अंक में हैं ही।*

ग्राहक संख्या — ३

श्री

'मानस मणि'
पो०—रामवन (सतना)
मध्यप्रदेश

प्रकाशक — शारदाप्रसाद, मंत्री, मानस संघ, रामवन (सतना)   मुद्रक नीरज जैन, सुषमा प्रेस सतना

मानस मणि



रश्मि ११

जनवरी १९५३

अलोक १

वार्षिक मूल्य तीन रुपया
वी० पी० से तीन रुपया छः आना

मानस यज्ञ

आगामी चैत्र नवरात्र में होने वाले मानस यज्ञ की सूचना पहिले प्रकाशित हो चुकी है। अब इसके विविध अंग लगभग निश्चित हो गये हैं। वे इस प्रकार हैं:—

१—१२५ साधकों द्वारा मानस का सामूहिक पाठ तथा हवन,
२—मानस गायन नवाह (वाद्य युक्त)
३—नित्य श्रीरामार्चा
४—अखण्ड मानस पाठ—९ दिन रात
५—अखण्ड जप—९ दिन रात
६—एक नौका (९०९०९९०९) नाम जप
७—एक नौका लिखित राम नाम समर्पण,
८—श्री राम नाम मंदिर की सवा लाख परिक्रमा,
९—प्रभातफेरी, स्फुट मानस गायन, संकीर्तन, सामूहिक प्रार्थना, व्यक्तिगत पाठ, श्रीहनूमान चालीसा के पाठ, गोसेवा, कथा आदि।

इतना बड़ा आयोजन अब तक रामवन में नहीं हुआ है। सब प्रेमियों के सहयोग से ही यह सफल होगा। हमें हर्ष है कि यह सूचना लिखते समय तक ५५ साधकों के नाम लिखे जा चुके हैं। छप कर आप तक पहुँचने तक यह संख्या और बढ़ जायगी। जो प्रेमी साधक अथवा दर्शक रूप में भाग लेना चाहते हैं वे शीघ्र सूचना भेजने की कृपा करें। साधक एक दिन पूर्व रामवन आयेंगे तथा एक दिन उपरा[ंत] वापस जा सकेंगे। वे सामूहिक पाठ तथा [अन्य] सभी अंगो में आवश्यकतानुसार भाग ले सकें[गे।] दर्शक चाहे जब आ जा सकेंगे। सामूहिक [पाठ] के अतिरिक्त अन्य सभी अंगों में वे भा[ग ले] सकेंगे। जितने अधिक प्रेमी रामवन आ[ने की] कृपा करेंगे, उतना ही अधिक यज्ञ सफल हो[गा।]

विविध अंगों के वृद्धि के साथ खर्च बढ़ेगा ही। हम इसकी व्यवस्था में लगे [हैं।] प्रार्थना है कि जो प्रेमी आर्थिक सहयोग [देना] चाहें सीधे रामवन भेजने की कृपा करें। [कि]सी अपरिचित व्यक्ति को न दें। हमें यह [सुन] कर दुख हुआ है कि राँची जिले में [कि]सी अज्ञात व्यक्ति ने इस यज्ञ के नाम पर धन संग्रह कर लिया है। दाताओं को [ऐसे] से सावधान रहना चाहिये।

पुनः निवेदन है कि आपका सर्व[श्रेष्ठ] सहयोग होगा—रामवन आकर विविध [अंगों] में भाग लेना, उन्हें पूर्ण करना।

शारदा प्रसा[द]
मंत्री
मानस सं[घ]
पो०— रामव[न]
(जि० सतना)

'मानस-मणि' की पुरानी फाइलें

निम्नलिखित फाइलें स्टाक में है। मंगाकर लाभ उठावें।

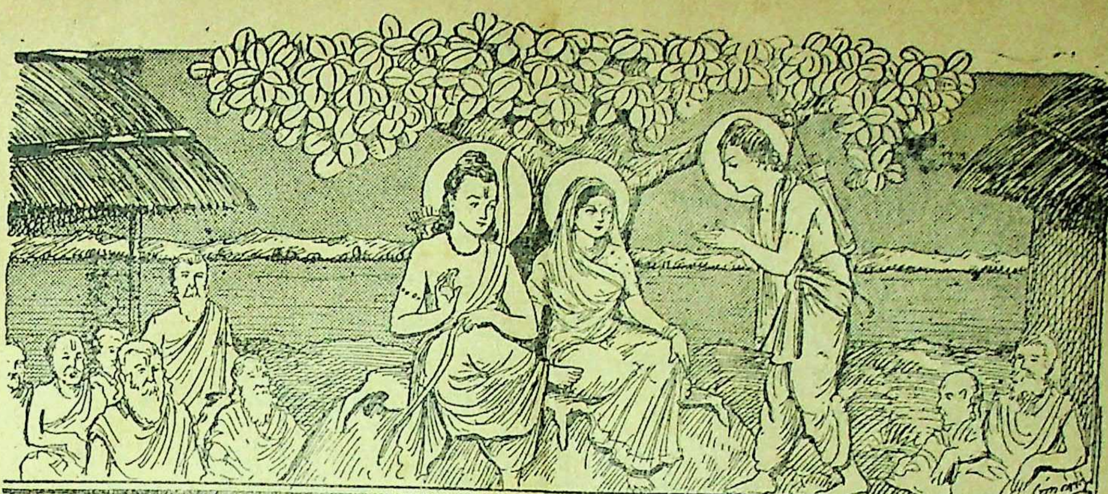
वर्ष २—३) वर्ष ३—२॥)

वर्ष ५—२) वर्ष ६—२) वर्ष ७—३)

प्रत्येक आर्डर के साथ रजिस्ट्री खर्च का मिलाकर रुपया मनीआर्डर से भेजें। फाइलें वी० पी० द्वारा नहीं भेजी जातीं। वर्ष १ तथ[ा ४ की] फाइलें स्टाक में नहीं हैं।

मँगाने का पता

म[ंत्री]
मानस [संघ]
पो०—रामवन जि०
विन्ध्य-प्रदेश



मानस मणि

राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं॥

मणि १२ रामवन—माघ, मानस संवत् ३७९—जनवरी १९५३ ई० आलोक १

मानस की सूक्तियाँ

वेद पुरान सन्त मत एहू। सकल सुकृत फल राम सनेहू॥

+ + +

जे गुरु चरन रेनु सिर धरहीं। ते जनु सकल विभव बस करहीं॥

+ + +

सेवक सदन स्वामि आगमनू। मंगल मूल अमंगल दमनू॥

+ + +

प्रभुता तजि प्रभु कीन्ह सनेहू। भयउ पुनीत आजु मम गेहू॥

+ + +

एकहिं बार आस सब पूजी। अब कुछ कहब जीभ करि दूजी॥

+ + +

कोउ नृप होउ हमहिं का हानी। चेरि छाँड़ि अब होब कि रानी॥

+ + +

रहा प्रथम अब ते दिन बीते। समय फिरे रिपु होहिं पिरीते॥
भानु कमल कुल पोषनि हारा। बिनु जल जारि करइ सोइ छारा॥

+ + +

को न कुसंगति पाइ नसाई। रहइ न नीच मते चतुराई॥

सहस्र रश्मि

(५४७)

निन्दक से द्वेष मत करो। वही तुम्हारा सच्चा मार्ग दर्शक है, जो तुम्हारी कमियों को बतला रहा है। उसका तो कृतज्ञ होना चाहिये।

(५४८)

चाहे नाव जल में रहे पर नाव में जल का रहना घातक है। ऐसे ही साधक चाहे संसार में रहेपर साधक के मन में संसार का रहना घातक है।

(५४९)

तृष्णा भोग से शान्त नहीं होती। घृताहुति दी हुई अग्नि के सामन बढ़ती है।

(५५०)

यदि साधन के आरम्भ में लाभ न हुआ तो साधन को व्यर्थ मत समझो। यदि प्रथम डुबकी में रत्न न मिले तो क्या रत्नाकर रत्नहीन है ?

(५५१)

सुख तो निश्चिन्तता में ही है जो वासनाओं के रहते सम्भव नहीं।

(५५२)

सम्पूर्ण इन्द्रियों में रसनेन्द्रिय और जननेन्द्रिय ही प्रधान हैं। इन्हें वश में कर लेने पर सब स्वतः वश में हो जाती हैं।

(५५३)

उपवास से सब इन्द्रियाँ सूख जाती हैं, अशक्त हो जाती हैं पर रसना प्रबल।

(५५४)

यदि रसना वश में नहीं तो सब इन्द्रियों का वश में रहना बराबर है।

(५५५)

जैसा भोजन करोगे मन का भी ठीक वैसा ही निर्माण होगा।

(५५६)

जो इन्द्रियों को रोक कर मन से विषय चिन्तन करता है वह धूर्त है। वस्तुतः तो मन में ही विषय-वासना नहीं उठनी चाहिये।

(५५७)

यदि मन पवित्र है, निष्काम है तो इन्द्रियाँ विष[illegible] में प्रवृत्त होंगी ही नहीं।

(५५८)

पुण्य करने में तो कष्ट कर प्रतीत होता है पर फ[illegible] है उसका अनन्त सुख।

(५५९)

जो सोता है उसका भाग्य सोता है।

(५६०)

तभी कल्याण है जब सर्प दंशित अंगुली की भां[illegible] बन्धन दायी इन प्रिय विषयों को छोड़ दें।

(५६१)

पापी निर्भय नहीं हो सकता। उसे सदा भय ल[illegible] रहेगा।

(५६२)

पाप का विचार आते ही धर्म, धैर्य और श[illegible] का ह्रास हो जाता है।

(५६३)

भय और पाप, ईश्वर में विश्वास न होने[illegible] चिह्न हैं।

(५६४)

ऐसा कोई भी धर्म नहीं जिसमें सभी बातें अ[illegible] या सभी बुरी ही हों।

(५६५)

धर्म हृदय में रहता है, स्थान विशेष में नहीं। स्थान विशेष श्रद्धानुसार उसे उद्दीप्त करने में सहा[illegible] हो सकते हैं।

(५६६)

किसी के इष्ट या धार्मिक पूज्य स्थानों को अप[illegible] करना अपने ही इष्ट और पूज्य स्थानों का अप[illegible] करना है।

(५६७)

चित्त को पवित्र रखने का सर्वश्रेष्ठ साधन है [illegible] और प्रार्थना।

ऋषि-गीता

[उपक्रम]—सुदर्शन सिंह

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम पिता के सत्य की रक्षा के लिए श्री विदेह राजकुमारी तथा छोटे भाई लक्ष्मण जी के साथ चौदह वर्ष का बनवास स्वीकार करके तपस्वी के वेश में अयोध्या से निकल पड़े। शृंगवेर पुर में ही उन्होंने अपनी घुँघराली काली स्निग्ध सुकोमल अलकों को वट के दूध के सहारे जटा जूट बना लिया। महामंत्री सुमन्त्र को वहीं से अयोध्या लौटा दिया। गंगा पार होकर श्री भरद्वाज मुनि के आश्रम में प्रयाग आये और वहाँ मुनि का आतिथ्य स्वीकार करके, यमुना पार करके वन-पथ में प्रविष्ट हुये। वन की यात्रा करते हुये ये तीन दिव्य पथिक आदि कवि महर्षि वाल्मीकि जी के आश्रम में पधारे। महर्षि की युगान्त व्यापिनी साधना आज सफल हुई। अपनी वाणी एवं अपने हृदय के आराध्य का उन्होंने स्वागत किया, आतिथ्य किया कन्द-मूल-फल से और स्तवन किया उनका। महर्षि का आतिथ्य स्वीकार करके मर्यादा पुरुषोत्तम ने कहा—

देखि पाय मुनिराय तुम्हारे।
भये सुकृत सब सुफल हमारे॥
अब जहँ राउर आयसु होई।
मुनि उद्बेग न पावै कोई॥
मुनि तापस जिन्ह तें दुःख लहहीं।
ते नरेस बिनु पावक दहहीं॥
मंगल मूल विप्र परितोषू।
दहइ कोटि कुल भूसुर रोषू॥
अस जिय जानि कहिअ सोइ ठाऊँ।
सिय सौमित्र सहित जहँ जाऊँ॥
तहँ रचि रुचिर परन तृन साला।
बास करौं कछु काल कृपाला॥

"चौदह वर्ष बनवास करना है। इतने दीर्घकाल तक ऐसे ही नहीं रहा जा सकता। कहीं पर्णकुटी बनाकर रहना है; किन्तु दो बातें आवश्यक हैं इसके लिये। पहिली बात सर्वोपरि तो यह कि ऐसा स्थान हो जहाँ हमारे रहने से किसी मुनि, को किसी तपस्वी को उद्वेग न हो। उसके मन को कोई अशान्ति न मिले। हम पूरी सावधानी रखेंगे, फिर भी हम राजकुमार ठहरे, आस पास आखेट का प्रसंग भी आ सकता है, साथ में स्त्री और छोटा भाई है सो हँसी विनोद भी होगा ही, दोचार दिन रहने की बात होती तो इन्हें बचाया भी जा सकता, पर 'कुछ काल' रहना है, अतः स्थान ही ऐसा होना चाहिये कि वहाँ हम स्वतन्त्रता पूर्वक रहें, तो भी हमारे किसी भी आचरण से किसी मुनि को तनिक भी अशान्ति न हो। ऋषि-मुनियों का हम पर अपार स्नेह है, वे हमसे कभी कुछ नहीं कहेंगे; पर उन्हें तनिक भी असुविधा या मन में उद्वेग हमारे कारण हो, यह हमें सर्वथा अभीष्ट नहीं है।

'दूसरी विशेषता स्थान में यह होनी चाहिये कि वहां 'रुचिर पर्ण शाला' बनाई जा सके। स्थान उजाड़ न हो, हरे भरे वृक्ष हो, पुष्प हों, कन्द मूलादि हों, जल हो समीप और किसी प्रकार उपद्रव ग्रस्त स्थान न हो।' पर्णशाला रुचिर बने—न तो घिरा स्थान हो कि वायु न लगे और न इतना खुला कि आंधी में कुटिया ही उड़ जाय। वातावरण अनुकूल, स्थल सुरम्य, आवश्यक वस्तुयें समीप हों, तभी पर्णशाला रम्य होगी। यह भाव है श्री राघवेन्द्र के प्रश्न का।

सहज सरल सुनि रघुवर बानी।
साधु साधु बोले मुनि ग्यानी॥
कस न कहहु अस रघुकुल केतू।
तुम्ह पालक संतत श्रुति-सेतू॥

मर्यादा पुरुषोत्तम की बात सहज-स्वाभाविक है। उन्हें बन में रहना है, अतः उस ओर के बन को भली प्रकार जानने वाले महर्षि वाल्मीकि से वे स्थल पूछ रहे हैं। पूछा भी उन्होंने सरल ढंग से। अपनी

आवश्यकता और दृष्टि कोण स्पष्ट कर दिया। महर्षि ने 'साधु साधु' कहकर प्रश्न की प्रशंसा भी की; किन्तु महर्षि ठहरे ज्ञानी मुनि। उनकी ज्ञान दृष्टि कभी ढकती है नहीं। अतः वे पहिले तो स्तुति करते रहे दोनों भाइयों की ओर अन्त में बोले—

चिदानंदमय देह तुम्हारी।
विगत विकार जान अधिकारी॥
नरतन धरेहु संत सुरकाजा।
कहहु करहु जस प्राकृत राजा॥
राम देखि सुनि चरित तुम्हारे।
जड़ मोहहिं बुध होहिं सुखारे॥
तुम्ह जो कहहु करहु सब साँचा।
जस काछिअ तस चाहिअ नाचा॥
पूछेहु मोहि कि रहउँ कहँ, मैं पूँछत सकुचाउँ।
जहँ न होहु तहँ देहु कहि, तुम्हहि देखावौं ठाउँ॥

'आप पूछते तो हैं कि मैं कहां रहूँ, आप पहिले यह बता दीजिये कि आप कहाँ नहीं हैं? मुझे तो सर्वत्र आप पहिले से उपस्थित दीखते हैं। अब मैं आपको रहने के लिये नवीन स्थान भला कहां बतादूं? अब भला महर्षि की इस बात का क्या उत्तर है मर्यादा पुरुषोत्तम के पास?

सुनि मुनि बचन प्रेम रस साने।
सकुचि राम मन महँ मुसकाने॥

'हासो जनोन्माद करी च माया' लेकिन महर्षि पर तो वह माया चलने से रही, अतः मन में मुस्करा कर प्रभु रह गये।

बालमीकि हँसि कहहिं बहोरी।
बानी मधुर अमिअ रस बोरी॥
सुनहु राम अब कहउँ निकेता।
जहाँ बसहु सियलखन समेता॥

अब महर्षि हँस पड़े कि 'प्रभो! आप अ[illegible] करुणा वरुणालय हैं। कहीं आप की माया मुझे मोहि[त] न करे, इस भक्तवात्सल्य वश आप खुलकर हंसते [भी] नहीं। अच्छा (अब मैं आपको रहने के स्थान बतलाता हूँ) निर्विशेषरूपसे तो) आपसर्वव्यापक हैं, सर्वरूप हैं [और] अन्तर्यामी रूपसे सभी जीवों के हृदय में रहते ही [हैं] किन्तु सविशेष निखिल सौन्दर्य माधुर्यैक धाम अपने [इस] दिव्य साकार रूप से स्वयं कृपा करके किसी भाग्य[वान] अपने अनन्य भक्त के हृदय को ही आप पवित्र करते हैं। विश्वेश्वर! आपने इस चतुर्दश भुवनात्मक ब्रह्माण्ड बनाया और फिर स्वयं इसमें प्रविष्ट हो गये; किन्तु [मैं] दूसरे चतुर्दश भवन बता रहा हूं। अब अपने इस [सु]न्दर धनुर्धर रूप से छोटे भाई लक्ष्मण जी [और] महारानी श्री जानकी जी के साथ आप मेरे बताये [हुए] भवनों से निवास करें।'

—o—

हार्दिक भावना

हम चाहते हैं हर योम यही, मम मानस हंसभुलावै नहीं।
चित चौगुनो राम में लागो करै, जग के परपंच में जावै नहीं॥
जगदीस यही वर दो चित से, भ्रम भूल के पास में आवै नहीं।
ये 'किशोर' सदा तुम दास रहै, जग का प्रभु दास कहावै नहीं॥
नित आप को नाम रटै रसना, अनुराग के रंग में पागी रहै।
चित की शुचि वृत्ति निरन्तरही, नित नूतन रंग की रागी रहै॥
भ्रम जाल का फन्द न फांस सकै, नित चाहसुभक्ति की लागी रहै।
ये 'किशोर' की ओर जो होवै कृपा, जग प्रीति की भावना भागी रहै॥

—नन्दकिशोर गौड़

श्रीमानस की एक अर्धाली

[श्री पं० हरि प्रसाद जी उपाध्याय]

अंगद कहा जाउँ मैं पारा।
जिय संशय कछु फिरती बारा॥

श्री मानसांतर्गत किष्कंधा कांड की इस अर्धाली के कुछ विद्वानों तथा महानुभावों ने तरह तरह की अटकल लगाकर भी सुन्दर भाव व्यक्त किये हैं। वास्तव में मानस मानस की प्रत्येक चौपाई का अर्थ बताता है और यही काव्य कुल भूषण श्री तुलसी दास के मानस की विशेष-ताओं में विशेषता है। मानस सागर में जो जितना गहरा गोता लगा कर जितने अधिक समय तक रत्न ढूंढने की सामर्थ्य रखता है वह उतना ही अधिक प्राप्त करता है। इस अगाध समुद्र में श्री सीता राम का वास जो है।

माँगत तुलसि दास कर जोरे।
बसहु राम सिय मानस मोरे।'

मानसकार की यह प्रार्थना स्वीकार हुई और श्री सीताराम जी ने उनके इस काव्य, 'मानस' में सच मुच वास किया।

चतुर कवि ने ऊपर की अर्धाली में उस समय की परिस्थिति का कैसा सुन्दर सजीव चित्रण किया है जब कि समुद्र पार जानेमें सब वीरों ने संदेह प्रगट किया पाठक तनिक ध्यान दें।

फटिक सिला अति सुभ्र सुहाई।
सुख आसीन तहाँ दोउ भाई॥

प्रवर्षण शैल की एक स्फटिक शिला के ऊपर प्रभु श्री राम जी विराजमान हैं, श्री लक्ष्मण जी ने श्री सुग्रीव जी और उनके मन्त्री सुभटों को ला उपस्थित किया है। इसके उपरान्त श्री सीता माता की खोज के लिये पश्चिम दिशा की ओर सुषेण सुभट को, उत्तर की ओर शतवलि, और पूर्व की ओर विनत को अपनी, अपनी सेना के साथ भेज दिया गया है (वाल्मी० ४।४५)

बचन सुनत सब बानर, जहँ तहँ चले तुरन्त।
तब सुग्रीव बोलाये, अंगद नल हनुमंत।

अब दक्षिण की दिशा शेष रहती है जिस में समस्त सुभटों को भेजते हैं क्योंकि गीधराज जटायु द्वारा सूचना जो मिल चुकी है कि रावण श्री सीता जी को हरकर दक्षिण की ओर ले गया है और वहां युद्ध हो जाने की भी अधिक सम्भावना है अतः वानाराणामधीश्वर श्री सुग्रीव जी महाभट श्री अंगद जी और उनके यूथ के सुभटों को बुला कर आज्ञा देते हैं, बुलाने में प्रथम श्री अंगद जी का नाम लेना सूचित करता है कि किष्कंधापति श्री सुग्रीव जी ने इन महा भट युवराज को ही यूथ पति बना कर भेजा है।

सकल सुभट मिलि दच्छिन जाहू।
सीता सुधि पूछेहु सब काहू॥
मन क्रम वचन सो जतन विचारेहु।
राम चन्द्र कर काज सवाँरेहु॥

अपने राजा की इस आज्ञा से सुभट नायक श्री अङ्गद जी अपने साथ के सुभटों को लेकर लवण समुद्र पर पहुंचते हैं और वहां गीधराज जटायु के भाई सम्पाती से भेंट होती है जो अपने भाई ही की तरह निम्न चौपाई की बात कह कर चला जाता है—

जो नाघइ सत जोजन सागर।
करइ सो राम काज मति-आगर॥

अब तो सब सुभटों के समक्ष समुद्र पार लांघ कर जाने का प्रस्ताव उपस्थित है, सम्भवतः सब सुभटों के नायक श्री अङ्गग जी ने प्रत्येक वीर से यह प्रश्न करना आरम्भ कर दिया है।

निज निज बल सब काहू भाखा।
पार जाय कै संसय राखा॥

विस्मय के साथ के सब सुभटों ने अपने, अपने बल की सीमा बताकर १०० जोजन के भीतर ही इति लगा दी, फिर भी यदि १०० योजन पार कर गये तो भी लंका में जाकर कार्य करने में संशय है ही।

स्मरण रहे कि यह प्रश्न ध्यान मग्न वीर नायक श्री महावीर जी के कानो तक नहीं पहुंचा है, इसी बीच में ऋक्षराज श्री जाम्बवान जी को भी प्रस्ताव पर बोलने का समय दे दिया गया।

जरठ भयउँ अब कहै रिछेसा।
नहि तन रहा प्रथम बल लेसा॥

अधिक बूढे होने के कारण ऋक्ष पति भी तुम दबा गये परन्तु यूथ के पति के साथ मंत्री बना कर भेजे गये हैं अतःअपनी बुद्धि और युक्ति से काम लेंगे। अभी इन की युक्ति का प्रारम्भ होने नहीं पाया था कि सबके नायक श्री अङ्गद जी बूढे मंत्री का उत्तर समाप्त होते, होते और अपने साथ के वीरों को हतोत्साह देखकर क्रोध के मारे तमतमा उठे कि आज उनके यूथ के वीर कायर बन अपयश, और मौत के कारण बन रहे हैं। उन्होंने तो प्रथम ही कह दिया था—

इहाँ न सुधि सीता कै पाई।
उहाँ गये मारिहि कपिराई॥

भला एक सेना नायक सुभट को कायरता की मृत्यु कैसे सहन हो सकती है वह तो कार्य पूरा करके लौटेगा अथवा प्राण ही दे देगा यही सोच कर क्रोध से लाल हुये अङ्गद जी ने स्वयं ही अपने प्रस्ताव को उठा लिया और लगे कहने,

अंगद कहइ जाउँ मैं पारा।
जिय संसय कछु फिरती बारा॥

अच्छा, तो अब, मैं ही पार जाता हूँ, इतना समय बल बखानने में बेकार खो दिया, यदि तुम लोगों को पार जाने में संशय था तो तुरन्त मुझ से कह दिया होता, क्या मेरे भी पार जाने में तुम लगों को संशय था जो मुझ से न कह सके, और टाल मटोल करते हो।

यदि तुम लोगों को मेरी ताकत में भी सन्देह है तो 'फिर तीवारा' एक दो नहीं तीन चक्कर इस पार से उस पार, और उस पार से इस पार और फिर तीसरी बार में सीता माता की सुधि लेकर आऊँगा अर्थात् ३०० योजन का अभी अभी चक्कर लगा कर दिखाता हूँ। अपने नायक को क्रोधित होकर समुद्र लांघने में उद्धत देख कर मंत्री जाम्बवान जी अङ्गद जी के बल की सराहना करके क्रोध शान्त कर देते हैं और कार्य पूरा हो जाने का आश्वासन दिलाते हैं।

जामवन्त कहइ तुम्ह सब लायक।
पठइय किमि सब ही कर नायक॥

यहां जाम्वंत जी ने अपना नायक बता याद दिलायी कि वास्तव में तुम सब लायक हो सब काम पूरा करने की अकेले ही क्षमता रखते हो, परन्तु स्वामी प्रेषक होता है प्रेष्य नहीं अतएव हम तुम को लङ्का कैसे भेज सकते हैं, हमारे, तुम्हारे परम स्वामी ने मुद्रिका देकर लङ्का पार जाने की आज्ञा केवल महावीर जी को ही दी है इसी कारण साथ के सुभटों ने '**संसय राखा**' जान बूझ कर सन्देह प्रकट किया है।

नायक श्री अंगद जी में बुद्धि के आठों अङ्ग परिपूर्ण रूप में प्रतिष्ठित हैं 'यथा,

बुद्ध्याह्याष्टाङ्गयायुक्तं चतुर्बल समन्वितम्।
चतुर्दशगुणं मेने हनूमान वालिनः सुतम्॥
बाल्मीः ३, ५४, २

अतः वे शान्त हो जाते हैं कि ऋक्ष राज ही बड़े और बूढ़े हैं अतएव ये ही श्री हनूमाज जी को प्रेरित करके कार्य सम्पन्न करा सकेंगे।

अब मंत्री जाम्ववान् जी ने अपनी दृष्टि महावीर श्री हनूमान जीं की ओर दौड़ाई जो थोड़ी ही दूरी पर भगवान श्री राम के नाम जप और ध्यान में स्थित थे और लगे एक बार ललकार देने।

कहइ रीछ पति सुन हनुमाना।
का चुप साधि रहेहु बलवाना॥

ऋक्षराज महोदय ने विचारा कि संसार में प्रशंसा करके कार्य अधिक सरलता से हो जाते हैं, हनूमान जी लाल लंगोट वाले अखाड़े के प्रेमी हैं अतः इन को 'बलवान' की डिग्री देने से यह प्रसन्न हो कर छलांग मार कर लङ्का चले ही जावेंगे, परन्तु इस डिग्री

का श्री हनूमान भगवत भक्त पर कोई प्रभाव न पड़ा देख कर लगे एक के बाद एक डिग्रियां देने—

पवन तनय बल पवन समाना।
बुधि बिवेक, बिज्ञान निधाना॥

पवन पुत्र कह कर अपार बलशाली होने की डिग्री दी परन्तु श्री महावीर जी का ध्यान भी न छूटा अतः पुनः पुनः बुधि, विवेक, विज्ञान निधान की डिग्रियां देकर सारी डिग्रियां ही समाप्त कर डाली अंत में यह सोच कर कि रामकार्य में मग्न इस भगवद्भक्त के लिए यह शाब्दिक डिग्रियां उपाधि रूप हो कर रह गईं।

अस अभिमान जाइ जनि भोरे।
मैं सेवक रघुपति पति मोरे॥

भक्त के लिये तो रघुपति भगवान राम का सेवक होने का ही अभिमान रहता है (जो कि महान कल्याण कारी है) विचार कर श्री महावीर जी के कर्तव्य का स्मरण दिलाते हैं

राम काज लगि तव अवतारा।
.................................॥

अभी तक श्री महावीर जी की प्रशंसा सूचक शब्द थे इसी से संकोच के साथ चुप थे, जब श्री राम कार्य के लिये ही इनका अवतार होना जनाया, तब तो

'सुनतहिं भयउ पर्वताकारा।'

हर्ष के मारे शरीर बढ़ाकर पर्वताकार हो गये और जाम्बवान जी के प्रश्नों के (जो पीछे उन्होंने किये थे **'काचुप साधि रहेहु बलवाना।'** आदि) के उत्तर देने लगे। यथा

सिंहनाद करि बारहिं बारा।
लीलहिं नाघउँ जलनिधि खारा॥
सहित सहाय रावनहि मारी।
आनउँ इहाँ त्रिकूट उपारी॥

कह कर वीर-रस में भर गये और अपना कर्तव्य पूछने लगे। अतः जाम्बवान जी बतलाते हैं।

एतना करहु तात तुम्ह जाई।
सीतहि देखि कहहु सुधि आई॥

अर्थात् अभी अधिक पराक्रम का समय नहीं है केवल लङ्का को 'तात' तत्ती गरम करो और श्री सीता जी को देख कर खबर बता दो—यह है इस, मानस की अर्धाली '

'जिय संसय कछु फिरती बारा॥

में गुप्त भाव।

वानराणामधीशं रघुपति प्रिय भक्तं वात-जातं नमामि।

———

मानस मणि

सावन के घन में औ भक्तों के मन में,
झलक श्याम की औ लगन राम की है।
चकोरी के प्रन में, मयूरों के तन में,
विजय प्रीत की औ छटा श्याम की है॥
कभी राम बन के अयोध्या में आये,
कभी श्याम बन के, तुम मथुरा को भाये;
कभी हाथ धारण किये तीर तरकस,
कभी कंठ मुक्ता औ मुरली बजाये॥

कभी शक्ति ले निज चढ़े लंक पे तुम,
कभी हार अबलन से मोहन तुम खाये।
कभी ले प्रलय संग रघुकुल रहे तुम,
कभी ग्वाल बन के, तुम गउअन चराये॥
कभी रूप धारण किये जग में आये,
हरे दुख जनों का और नटवर कहाये;
कभी बन निराकार मानव में बस कर,
हे रघुकुल, 'रसिक,'मानस मणि' तुम कहाये॥

रसिक बिहारी 'रसिक'

रावण का पराभव और सीता का प्राकट्य

(श्री स्वामी रामानन्द सरस्वती)

रावण परिवार के आतंक से चराचर क्षुब्ध हो उठे थे। वे देवताओं को ढूंढ़ ढूंढ़ कर सताने लगे। बनवासी सन्तों और तपस्वियों को पकड़ पकड़ कर मूली की तरह मरोड़ देते। अबला नारियों और कन्याओं को विविध रीति से पीड़ा देते। उन्हें अधिराज रावण की ओर से आज्ञा थी—

'द्विज भोजन मख होम सराधा।
सब कै जाइ करहु तुम बाधा॥

सबके सब मही को द्विज धेनु से रहित करने को कमर कस चुके थ। ये मुनिजन अनाथ और असहाय की नाईं—

'कहं पाइअ प्रभु करब्धि पुकारा'—

कहते यत्र तत्र बिललाने लगे। सबकी बुरी तरह आ बनी थी इनके भय से सप्त द्वीप (जम्बू, शाक, कुश, क्रौंच, पुष्कर, शाल्मली; प्लक्ष) और सप्त पाताल (तल,अतल,वितल, सुतल तलातल,रसातल) के प्राणिवर्ग त्राहि-त्राहि मचा रहे थे। नव-खंड (इलावृत्ति, रम्यक, हिरण्यमय, कुरु, हरि, भारत, केतुमाल, भद्राश्व और किंपुरुष) की धरती चीख-चीख कर डोल उठती। आकाश थर्राता तथा सागर की लहरें खलखला कर खमण्डल की ओर दौड़ पड़ती थीं। रावण जब दिग्विजय को चला तो देवता गिरिकन्दर तकने लगे। मुनिजन मृग की भाँति इधर उधर छिपने लगे। तथा त्रयचर (जलचर, थलचर और नभचर) रह रह कर उच्छ्वास भरने लगे। मग में ही करतल वीणा लिए देवर्षि नारद जी मिले। रावण ने विहंसते हुये कहा :' 'हे मुनीश देवतागण किधर को पलायन कर गये ? कुछ को मुझे दिखाइये।' नारद जी ने उसे झिड़क दिया और तब रावण श्वेतकेतु चलता बना।

रावण सत्वर ही सागर को लांघ कर दूसरे तट पर आया जहां आमोद-प्रमोद में सुकुमारियां क्रीड़ायें कर रह थीं। वह रावण निःशंक उन सबों के पास चला गया और निर्लज्ज की भांति चुनौती देता हुआ कहने लगा : 'हे सुन्दरियों, जाकर अपने अपने पतिदेव से कह दो कि दिग्विजयी रावण आया है। उन्हें मुझ से जूझने कहो। उनका भक्षण कर में तुम सबों को अपने राज्य में ले जाऊंगा और अपने पुर कोष की स्वामिनी बनाऊंगा।' रावण के ये वचन कटु लगे और तभी एक वृद्धा महिला रावण के पास आ गुजरी। दूसरे ही क्षण उसके पांव पकड़ कर वह गगन-मार्ग पर चढ़ गई। उसे खेला कर फिर —'कांचे घट जिमि'— सिन्धु के बीच झकझोर कर छोड़ दिया। वह गति से पाताल को पहुँच गया।

यद्यपि अचेत हो गया परन्तु ब्रह्मा के वरदान स्वरूप विगत प्राण नहीं हुआ। एक लम्बी सांस ली और उठकर भीषण चीत्कार किया। उसका हृदय हर्ष विषाद से विस्पर्श ही रहा। अनायास ही उसने नागलोक पर आक्रमण कर दिया। उनका पराभव कर वह सुरारि बलि के नगर निअराया। वैरोचन सुत बलि ने उसका यथावत् सत्कार किया। उसने मङ्गल पीठिका पर आसीन कर पुनः कुशल क्षेम पूछा। रावण ने सहर्ष आतिथ्य ग्रहण करते हुए कहा।' हे बालिराज, ये देवगण हमारे विपक्षी हैं और सामने भी नहीं आते। आपकी सम्मति पूछता हूँ। क्यों नहीं इन्हें बन्दी बनाकर भूलोक पर अचल राज्य करो।' बलि बोला—'हो तो सकता है, पर हे मित्र, तुम भी मेरे पितामह हिरण्यकशिपु के इन आभूषणों को पहन लो जिससे क्लेशों का शमन और शत्रु का दमन कर सकोगे। विजय श्री के ये प्रदाता और सद्भाग्य के विधाता हैं।' रावण

लपक कर उसे उठाने लगा। पर यह क्या? ये तो उठते ही नहीं थे; जैसे शिवजी का धनुष और अङ्गद के पांव रावण मुंह की खाकर आ बैठा। इसी पर राजा बलि को भी परिहास सूझी और उन्होंने कहा। —'आह, ये गहने भी जब तुम से नहीं उठते तो किस पौरुष से अमर देवताओं पर विजय की बकाण्ड आशा रखते हो? टिटिट्भ की टांग मत बनो। भला जिन्होंने इन्हें पहन कर भी युद्ध किया और फिर भी पराजित हुए। तुम तो उठाने में भी पराजित हुए। तुम तो उठाने में भी असमर्थ दीखते हो तो यह काल हांकने की प्रेरणा कैसे मिली? अच्छा कोई चिन्ता नहीं। अपना सा मुंह लेकर घर लौट जाओ नहीं तो नाकों चने चबाने पड़ेंगे।' रावण विचारमग्न घर को लौटने लगा।

इसी बीच भगवान् वामन जी को विदित हुआ कि रावण म्लान चित राह पर जा रहा है। पास ही गांव के बालवृन्द वहां किलकारी भरकर खेल रहे थे। उन्हें भगवाग् की महनी शक्ति सहित ऐसी अज्ञात प्रेरणा मिली कि वे दौड़ कर रावण के समीप आ गए और उसे बरबस पकड़ लिया, फिर कुतूहलवश नगर की राह ले आये। वे आपस में कह कह कर ठुमकते—'ओहो, यह भी कहां का खिलौना है? इसके तो दश शीश और बीस भुजायें हैं। सब मिलकर उसे खिजाने लगे और हाथ पैर बांध कर रख लिया। रावण उनकी ताड़नाओं को भली प्रकार सहता गया पर बारंबार पूछने पर भी अपना नाम 'रावण' ऐसा नहीं बताया। अन्त में कृपालु भागवान वामन ने उसकी दुर्दशा देखी और आकर मुक्त कर दिया।

रावण की निर्लज्जता कही नहीं जाती। इसपर भी शरणागति नहीं लेकर वह देवताओं के विमुख षड-यंत्र का सर्जन कर रहा था। वह सचमुच विधाता की आंखों का कांटा था तभी तो उसकी नियति में मणि मुक्ता के बदले कौड़ी कांच लगी। उसके दुराचरण का न तो अन्त था न उसके मनोमालिन्य का निस्तार ही। तब वहां से चलकर उसने पम्पासर पर कपीश बालि के राज्य में प्रवेश किया। शलिलाशय की शोभा देखकर वह छक गया। और वहीं एक तरुवर की सुशीतल छाया में बैठकर उसने विश्रान्ति बितायी। समीप ही राजा बालि सन्ध्या-ध्यान में निमग्न था। वह भी रावण की ओर एक दृष्टि देखकर विहंसा। पर वह जगत विदित अभिमानी रावण तो चट बीसों भुजाओं से ताल ठोककर अतिनाद करता हुआ बालि के चारों ओर कूद फाँद मचाने लगा। वह बोला—ओ बकध्यानी, तेरे काल का काल सामने खड़ा है। तेरी भी बड़ी प्रशंसा सुन चुका हूं आज मुझ से निपटकर देख।' बालि ने ध्यान का समय जानदर क्रोध को प्राप्त नहीं हुआ और उसकी बातों पर कान न देकर अपना कार्य करता रहा। पर यह राक्षस कहां किसकी सुनने वाला था। उसने तो चिल्लपों मचाकर उसके ध्यान में बड़ी बाधा पहुँचाई। बालि ने नम्रता पूर्वक कहा. 'भाई, तुम्हारी शूरता अवश्य अपरिमेय है। तुम मुझे भी पराजित करके जाओगे। पर तनिक मुझे सूर्य को अंजलि दे लेने दो फिर मैं तुम्हारी इच्छा के अनुकूल पेश आऊँगा। थोड़ा गम खाओ।' रावण तुरत डांटकर बोला—'अरे ढोंगी जब मैं यहां खड़ा हूँ तो तू सूर्यचन्द्र की सीख सिखाता है। तू कदापि मेरे रहते सूर्य को अर्ध्य नहीं दे सकता। मैं कह रहा हूँ, तू पास फटक। बाई दाई बात करने से यहां तेरी दाल नहीं गलने की। मुझे युद्ध से संतुष्ट कर। यहीं ......।' राजा बालि ने देखा कि इसने वृथा ही सिर पर आकाश उठा रखा है। अच्छा. वरदान है, अतएव, मरेगा तो नहीं। फिर क्या करना चाहिये? ऐसा सोच कर बालि ने आगे बढ़कर उसे मुट्ठी में पकड़ लिया और लेकर कुक्षि के नीचे दबा रखा। महाप्रतापी रावण बालि की कांख में दुबक कर पड़ रहा।

तदनन्तर उसने ध्यान कर्म का फिर सूत्रपात किया। मनसा वाचा कर्मणा सूर्यदेव की अर्चना की और सात समुद्र में लवण, इक्षु, सुरा, सर्पि, दधि, क्षीर, शुद्धोदक के जल से आचमन किया। आदि शङ्कर का नाम स्मरण कर सन्ध्या बन्दन से निवृत्त हुआ। फिर तो कपिराज बालि घर को आया और 'रावण कांख में है' यह बात ही भूल गया। इधर दिग्विजयी रावण कांख

में उकस बुकस करके दिग्विजय के सुनहरे सपने देख रह था। ६ मास बीत गए। रावण उसी में कलमलाता अहोरात्रों की सन्ध्या मनाता। (इस विषय में कई मत है। यहां पर रूपक का ही आधार लिया गया है) परन्तु इतने मास बीत जाने के कारण कांख में दुर्गन्धि सी पैदा हो गई और प्रस्वेद की कीच में उसका देह लिथड़ गया। वह अत्यन्त उताहुल हो कर दाँतों से कांख को कुदेरने लगा। बालि को लगा जैसे जूँ काट रहा हो। बांह उठाकर एक दिन जब वह सूर्य को अंजलि दे रहा था तो रावण हांफता हुआ बाहर निकला। निकलकर जोरों से गरजा। कौतुक से बालि ने पुनः पकड़ लिया और बांधकर अंगद के पास भेज दिया। उसने रावण को झोरे की तरह समेट कर बांध लिया और चारपाई पर डाल खेल खेल कर चरण प्रहार करने लगा। रावण किलकारता और आघात सहता। यह देखकर तारा को बड़ी दया आई। उसने बन्धन खोल दिये और कहा—'हे निशाचरराज, जाओ घर लौट जाओ नहीं तो बालि कहीं फिर न पकड़ ले। व्यर्थ की यातना सहनी होगी।'

इधर शुभ्र सलिला रेवा के तटवर्ती जल प्रान्त में सहस्रबाहु अपनी मृगनयनी कामिनियों को लेकर जल विहार कर रहा था। चतुर्दिश प्रकृति के अभिराम दृश्य दृष्टिगोचर हो रहे थे। पास ही शिवालय भी था। रावण उन वीथियों से निकलकर शिवालय के कक्ष से गुजरा और फिर आकर जलक्रीड़ा देखने लगा। वह कामोद्दीप्त हो कर जल में उतर पड़ा और अपने विशाल शरीर से प्रवाह का गतिरोध किया। जल एकाएक बढ़ने लगा और सहस्रबाहु नारियों सहित घबड़ाया। उसने पीछे मुड़कर देखा तो अभागा रावण था। उसने झट पकड़ लिया और दो चार चाटे लगाकर भिजवा दिया, कहां, तो हथशाला में। वह भी एक घोड़े की रास से बांध दिया गया। सहस्रभुज की नारियां आकर इस कौतुक को चकित-चित देखतीं। लात मारती और खिझातीं। नाम पूछतीं तो यह विश्वविजयी रावण मुंह फेर लेता। रम्भादि अप्सरायें इसके दशों माथे पर दीप जलाकर दीपमालका मनातीं। हर्ष मोद से भरकर नाचतीं औ[र] गातीं। अपने कुल की मर्यादा को दृष्टिकोण में र[ख] हुए मुनि पुलस्त्य जी ने आकर इन्हें बताया और रा[वण] को मुक्त कर लंका जाने कह गए।

मदान्ध रावण ने रास्ते में एक और भी आ[फत] मोल ले ली। उर्वशी षोडष शृंगार कर नलकूब[र] आध्यान पर जा रही थी। रावण बीच में ही छेड़छा[ड़] करने लगा। वह बड़ी रुष्ट हुई और जाकर [सब] कथा नलकूबर से कह दी। नलकूबर जलभुन गया [और] उसके प्रायश्चित के लिए एक शाप भेजा जो चला [और] ससह लंका पहुँच गया। रावण लंका आ चुका [था।] शाप सम्मुख देखकर रावण घबड़ाया फिर भी विवश होकर अंगीकार करना पड़ा।

रावण ने सोचा—'ये महर्षिगण जङ्गलों में [मौज] मारते हैं। इन्हें 'कर' मुआफ कर मैंने क्या दया [की?] ये कादर तापस लोग दया के पात्र नहीं।' उसने दूतों को बुलाकर इन सबों से कर वसूल करने भेज [दिया] जो यथा समय मुनियों के आश्रम पर जा लगे। भीत मुनिराज पूछने लगे—'अच्छा, आये, कहो [हमारे] अधिपति रावण का कुशल-क्षेम कहो। वे सानन्द सौभाग्य सम्पन्न तो हैं न?' दूतों ने कहा—'वे [ठीक] ठीक हैं। आप लोग अपना-अपना कर निका[लिए।] रावण के राज्य में विना कर दिए कोई नहीं रह [सकता।'] मुनिजन गिड़गिड़ाने लगे—'रावण हमारे आशीर्वा[द से] सकुशल रहेगा। हम सब मूल्य रूप में क्या दे सकते [हैं?'] दूत ने झिड़की सुनाई—'अपने आशीर्वाद की [पोटली] बनाकर बगल वाली नदी में छोड़ दीजिए। यह [काम] कर दीजिए वरना पेट में आइए। हीला हवाला [करना हो] तो कहिए, दरवाजा खोलूँ?' ये मुनिगण बड़े [दुःखी] हुए। सबों ने मिलकर एक घड़ा मँगाया और [उसमें] रक्त भरकर दूतों को देते हुए कहा—'रे अना[र्य] राक्षसों, यह घड़ा उघड़ते ही तेरा वंश सहित [नाश] हो जायेगा?'

दूतों ने घड़ा लाकर दरबार में रखा और मु[नियों] की वाणी भी कह सुनाई। रावण मन ही मन डरा

उनसे बोला—'जाओ इसे ले जाकर उत्तर दिशा में राजा जनक के राज्य में धरती के नीचे दबा आओ। कोई जानने नहीं पावे।' रावण ने समझा कि जिस राज्य में यह खुलेगा उसी राजा का सकुल नाश होगा और राजा जनक से उसकी गहरी शत्रुता थी जिसका कारण यह था कि श्री शिवजी के दरबार में एक बार राजा जनक ने वेदान्त तत्व पर वादविवाद में इसकी नाक काटी थी। इसी समय उसे 'एक पन्थ दो काज' भी सूझ रहा था। अतएव अपने शत्रु के उन्मूलनार्थ इसके मन में ऐसे कुत्सित विचार आये।

दूत जाकर घड़ा गाड़ आया। समय पाकर उस राज्य में एकबार भयङ्कर अनावृष्टि हुई! दुर्भिक्ष पड़ गया। लोग अन्न अन्न के लिए बेहाल होने लगे। हाहाकार मच गया और जनता ने राजद्वार पर पुकार मचाई। पुरोहितों ने यह विधान बताया कि—'यदि राजा स्वयं स्वर्ण के हल से पृथ्वी को जोते तो वृष्टि की संभावना है।' ऐसा ही होने को चला।

पृथ्वी का वक्षस्थल विदीर्ण हुआ और यह क्या। एक चकाचौंध···। एक मणि-मुक्ता-मय सिंहासन पर पर समासीन यह 'भूमिजा'। चारो ओर चंवर डुलाती हुई चार सखियाँ तथा क्षण प्रतिक्षण विद्युत् की कौंध सी यह क्या? जनक ने सकरुण प्रार्थना की और देखते ही देखते सब विलुप्त। जानकी सद्य:जाता शिशु केरूप में रुदन करने लगी और तभी सुनयना का वात्सल्य उभर आया और वह उसे गोद में उठा कर पयपान कराने लगी। यह जनक की जाया जानकी हुई। इधर से 'श्रीमन्नारायण नारायण' करते ब्रह्मर्षि नारद जी भी ऐसी लीला देखने करतल वीणा लिए आ पहुँचे। उन्होंने लाड़ से बालिका का चुम्बन किया और नाम रखा 'सीता' जिसका अर्थ 'हल की लकीर' होता है। हस्तरेखा देखी तो दङ्ग रह गए। कहने लगे—'इसके पति तो परात्पर परब्रह्म परमात्मा ही होंगे। जिनके द्वारा भूभार-निशिचरों का उच्छेदन और सुर सन्तों का कल्याण होगा।'

एक बात और बहुत पहले की है। महाराजा जनक ने तपोवन से निकलकर सदाशिव का प्रसाद पाया था कि उन्हें घर पर बैठे सनातन साकार ब्रह्म का परिदर्शन होगा जिससे उनके नयन कृत-कृत्य होंगे और जीवन सार्थक होगा। निमित्त बनाकर शिवजी ने अपना धनुष दे दिया था। विदेह नित्य नियमित रूप से धनुष की पूजा करते थे। एक दिन की घटना से इसके रहस्य का परिज्ञान हो गया। श्री सीता जी ने सेवा करते करते इसे सहज ही में उठा कर टाल दिया। जनक जी स्तब्ध रह गए और प्रतिज्ञा की कि जो इस धनुष का खंडन कर डालेगा, सीता उसी की परिणीता होगी।

यह दीपक कथा बालकांड के रनमदमत्त फिरै जग धावा। प्रतिभट खोजत कतहुं न पावा—'और—रबि ससि पवन बरुन धन धारी: अगिन काल जम सब अधिकारी—'के बीच आती है।

प्रार्थना

जो प्रेमी आगामी चैत्र के मानस यज्ञ में रामवन न आ सकें वे श्री रामनाम लड्डू भेजें। अधिक से अधिक भेजें। सहयोग के अन्य सम्भव कर्मों के सम्बन्ध में पत्र व्यवहार करें।

मानस से सुख प्राप्ति

(पं श्री राम रक्षित जी रामायणी)

परम मधुर पावनि करनि, चार पदारथ दानि।
तुलसी कृत रघुवर कथा, कै सुरसरि सुखखानि॥

श्री राम चरित मानस सर की महिमा वर्णन करते हुए कलिपावनावतार श्रीमद्गोस्वामी जी ने वर्णन किया है कि :—

मन करि विषय अनल बन जरई।
होइ सुखी जो एहि सर परई॥

विषय विनाग्नि में जलता हुआ मन रूपी हाथी इस सर (रामचरित मानस सर) में पड़े तो सुखी हो जाय। विषय अनल वन इसलिए कहा गया है कि सांसारिक विषय शांत नहीं करते अपितु परिणाम में दाहक ही होते हैं। मन को हाथी इसलिए कहा कि मन विषय में भ्रमण की ही रुचि रखने वाला है और स्वच्छन्द भ्रमण करना चाहता है। एहि सर कह कर दिखाया गया है कि मानस में और सर भी हैं :—

जप तप नेम जलासय भारी।

जप तप नेम रूपी तालाब हैं उस में मज्जन करने को नहीं कहा गया। 'एहि सर' राम चरित्र रूपी सर में पड़ने से सुखी होंगे। अब यह देखना है कि रामचरित मानस सरमें पड़ने वाले श्रोता वक्ता दोनों सुखी हुए कि नहीं। प्रथमवक्ता हैं श्री गोस्वामी जी उन्हें देख लें—

नाना पुराण निगमागम सम्मतं यद्-
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि
स्वान्तःसुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा-
भाषा निबन्ध मति मञ्जुल मातनोति

इनके श्रोता सन्त-समाज भी सुखी हैं—

शंभु कीन्ह यह चरित सुहावा,
बहुरि कृपा करि उमहि सुनावा।
\+ \+ \+
कहिहों सोइ सम्वाद बखानी,
सुनहु सकल सज्जन सुखमानी।

दूसरे वक्ता श्री याज्ञवल्क्य जी हैं—यह तो श्री भरद्वाज जी के द्वारा राम रहस्य पूछने पर श्री रामकथा का अनुभव करके स्पष्ट कहने लगे—

सुनु मुनि आजु समागम तोरे,
कहि न जाइ जस सुख मन मोरे।

इस सुख प्रवाह में श्रोता भरद्वाज जी प्रवाहित हुए बिना नहीं रहें—

शंभु चरित सुनि सरस सुहावा,
भरद्वाज मुनि अति सुख पावा।

तीसरे वक्ता भगवान शंकर जी हैं। इनसे जिस समय भगवती पार्वती जी ने प्रश्न पूछा तो सुनते ही सुखानुभूति होने लगी —

प्रश्न उमा के सहज सुहाई,
छल विहीन सुन सिव मन भाई।
हर हिय राम चरित सब आये,
प्रेम पुलक लोचन जल छाये॥
श्री रघुनाथ रूप उर आवा।
परमानन्द अमित सुख पावा॥

इनकी श्रोता श्री गिरजा जी मानस सर मज्जन के उपक्रम में ही कहने लगीं—

शशिकर सम सुनि गिरातुम्हारी।
मिटा मोह सरदातप भारी॥
नाथ कृपा, अब गयउ विषादा।
सुखी भयेउँ प्रभु चरन प्रसादा॥

चौथे वक्ता श्री काकराज जी हैं, इनकी दशा देख लें—

सुनि उरगारि वचन सुख माना।
सादर बोलेउ काग सुजाना॥

सुखी हो गद्गद् होकर बोले, इसका ही परिणाम वह हुआ है कि गरुड़ जी कहने लगे —

राम चन्द्र कैसे

श्री पं० रामकुमार उपाध्याय सा० विशारद

राम शब्द के सङ्ग ही चन्द्र नहीं प्रत्युक्त कृष्ण नाम के भी पश्चात् चन्द्र का योग हुआ है, अर्थात् भगवान विष्णु के दशावतार मध्य केवल दो अवतारों में ही 'चन्द्र' शब्द प्रयुक्त हुआ है। ऐसा क्यों ?

प्रभु राम तथा शिव दोनों सर्वोपरि देव अत्यंत निकटतर्वी सम्पर्कता के परस्पर प्रेमी माने जाते हैं।

'सेवक, स्वामि, सखा, सिय पियके,
हित निरूपधि सब विधि तुलसी के'॥

यदा कदा सेवक, स्वामि तथा सखा भाव से परस्पर उपास्य एवं उपासक बन जाया करते हैं। प्रासंगिक कथन है कि:—

दिवांत हो चुका था। नैश एवं निशानाथ का प्रवेश काल था। अत्यंत मधुरा सांध्य सुवेला थी। बाल रूप कौशलकिशोर माता श्री कौशिल्या जी के सन्निकट बाल्य क्रीड़ा मनोविनोद में निमग्न हो रहे थे। सहसा शुक्ल पक्ष द्वितीया का सितासित शशि गगन मंडल में क्षीण आलोक प्रसार करता हुआ उदीयमान हुआ। शुभ शुभ्र शशि होने के सम्बंध स्वरूप दर्शनार्थ माता कौशिल्या जी बाल रूप राम को मञ्जुल स्वकर कञ्ज आंगुल्य से सांकेत निदर्शन करती हुई उस नील नभ स्थल में उदित बाल विधु को दिग्दर्शन कराने लगीं। एकाएक बालराम की मनमोहक दृष्टि जब बाल कलाधर पर जा पड़ी तो वह उसे प्राप्त करने हेतु मचल पड़े। वह उसे करतल गत करना चाह रहे थे, फलतः रुदन गति तीव्रतम होती गई।

अन्ततोगत्वा करुण क्रन्दन सीमोलंघन कर पूर्ण-तया कोहराम रूप में परिवर्त्तित होने लगा किंवा येन केन प्रकारेण मातृ सुखद गोद भी शांति का सफल अवलम्बन प्रदायक न बन सकी क्योंकि वह लीलाधारी की लीलामात्र थी उन्हें चंद्र प्रेम इस हेतु था कि वह उनके अद्वितीय असाधारण भक्त श्री शिव भूतभावन भगवान शङ्कर जी का अंगवासी बन गया था न।

उसी समय असमर्थ होकर मन्त्री द्वारा घटना स्थल पर मंत्रणा हेतु चक्रवर्ती महाराजाधिराज श्री दशरथ जी का अवाहन किया गया। श्रीमान् जी पधारते हैं। परन्तु वह भी अनेकों उपाय से अपने प्राण प्रिय पुत्र को सान्त्वना प्रदान करने में सर्वथा व्यर्थ प्रयास सिद्ध हुये यद्यपि विवाद किञ्चित मात्र ही था तथापि बखेड़ा इतना बढ़ गया था कि क्या कभी महाराजाधिराज अपने आराध्य, प्राणों से प्यारे पुत्र का इस भांति अधिक समय तक बिलखना स्वप्न में भी अवलोकन करने का अनुमान तथा साहस कर सकते थे ? कदापि सम्भव नहीं था। उनका अपूर्व वात्सल्य उन्हें प्रेम पाश में आबद्ध कर देता था। यह उनके जीवन की प्रथम व्यथाजनित घटना थी। अवाक होकर सहसा क्षणिक अधीर हो गये। यथा -

धीरज छूकर धीरज भागा युक्त होकर चिन्तवन करने लगे।

शीघ्र ही समस्या सुलझाने हेतु उन्होंने स्वकुल पूज्य श्रीवसिष्ठ जी को घटना की यथातथ्य सूचना दी। श्री गुरुवर अविलम्ब पधारते हैं। उन्होंने परिस्थिति को ध्यान करते ही उस पर पूर्ण नियंत्रण करने की अति सरल, सुन्दर युक्ति सोच निकाली। गुरुदेव का सत्वर आदेश हुआ कि नाईनिज प्रखर नख विच्छेदन यंत्र सहित प्रस्तुत किया जावे। आदेश पालन किया गया। नाई ने प्रवेश करते ही बाल रूप राम के दायें अंगुष्ठ पद नख को आंगुल्य विच्छिन्न किया जिसका स्वतः आकार ठीक बाल चंद्राकार हो गया इस क्रिया के समाप्त होते होते स्वल्प समय आलोकित होने वाला द्वितीया का बाल-विधु प्रायः प्रतीची में तिरोहित हो चला था।

आंगुल्यावछिन्न चंद्राकार अरुण नख क्रमशः चक्रवर्त्ती तथा महारानी की हथेली पर रखा गया जिसका आलोक उस नभवर्त्ती विलीन शशि से अत्यधिक अलौकिक सुषमायुत देदीप्यमान भासित होने लगा। उसका बोध बाल-रूप श्री राम जी को भी कराया गया। राम शिशु-शशि प्राप्त कर आनंद विभोर हो उछलने लगे।

उपरोक्त कथन प्रश्लेष मात्र नहीं। प्रमाण रूप धन्य! भक्त प्रवर संत शिरोमणि श्री तुलसीदास जी की परमश्लाघनीय वाणी। जिन्होंने कौशल-किशोर के पदज नख की उत्तर कांड में अत्यंत सोभा-मीमांसा की है। तथा जो अनिर्वचनीय भाव की प्रदायक है। यथा:-

'नव राजीव अरुन मृदु चरना।
पदज रुचिर नख ससि दुति हरना॥'

सुतरां आशुतोष भूत भावन मङ्गल की मूर्त्ति श्री शंकर भगवान ने स्वामी के श्री अङ्ग से परिवच्छिन्न तथा शीघ्र ही व्यर्थ परित्यक्त किये जाने वाले भाग पर सूक्ष्म चिंतवन किया। सम्मत दिया कि मैं उसे कदापि न त्याज्य होने दूंगा।

फलतः कलंकित वक्र चंद्र को अपने शुभ्र ललाट पर आसीन किया। यथा:—'यमाश्रितोहि वक्रोऽपि चंद्रः सर्व त्रवन्दते।'

'जस द्वितिया के चन्द्र को शीस नवै सबकोय॥

मर्यादा पुरूषोत्तम राम ने इतना समादर प्रदान करते हुवे जब स्वसखा कल्याणकारी भगवान शंकर को देखा तो निश्चय किया कि मैं भी उनके श्री अङ्ग में विभूषित अति उपेक्षित भूषण के नाम को अपने नाम के पश्चात् योग करूंगा। अतः दो अवतारों तक ऐसा ही हुआ। चंद्र को समादरित योग दान दिया गया।

परिणामतः विष्णु भगवान के दशावतार मध्य केवल दो अवतारों में विशेषतया राम-कृष्ण के नाम पश्चात् 'चन्द्र' शब्द प्रयुक्त हुआ है।

राम-सिसु शशि नभ, निरखि मचलि पर्‌यो।
मातृ पितृ-गुरू हारे, जान्यो विधि वाम है।
अंगुष्ठ दहिन पग नख काटि धार्‌यो।
पदज-द्विजहिं दुति हरत ललाम है॥
शंभु, स्वामि चन्द्राकार नख लखि 'कुश' ससि
दूषित विभूषित स्वभाल दीन्हो ठाम है।
राम, भाल चन्द्र सखा भूषण, स्वनाम जोर्‌यो।
कोटि कोटि कृष्ण-राम-चन्द्र को प्रणाम है॥

संगठन के प्रति

हम मस्तों में आन मिले, कोई हिम्मत वाला रे।
दल बादल सा निकल पड़ा, यह दल मतवाला रे।
बिजली सी तड़पन नस नस में, आज नहीं हम अपने बस में,
नये खून में लहरें ले रहीं, जीवन ज्वाला रे।
हम मस्तों में आन मिले, कोई हिम्मत वाला रे॥
तूफानों से टक्कर ले, पर्वत के दो टूक करें हम।
बहुत दिनों अन्याय का हमने, बोझ संभाला रे।
हम मस्तों में आन मिले, कोई हिम्मत वाला रे।

—प्रेषक:—श्री अम्बिकेश्वर श्री अवध धाम

मेरे अपने 'तुलसी' के चरणों में

(श्री अवध किशोर दास जी-श्री वैष्णव)

'तुलसी' तेरी महिमा अपार है, तू भारत का भाग्य है और विन्ध का वन्दनीय महापुरुष। तुलसी तू ने कर्तव्य कर दिखाया, ऊसर बंजर खेतों में उपजने वाली भांग जैसा अपावन जीवन, नसीला, उन्मादी जीवन भी तुलसी जैसा परम पवित्र जीवन सुर सन्त वन्दनीय जीवन तथा भगवान को अत्यन्त प्रिय जीवन कैसे हो सकता है प्रत्यक्ष कर दिखाया। संसार ने तेरा जीवन देखा तेरा साहित्य समझा और कृतार्थ हो गया। तूने किसी भी आवश्यक अङ्ग की आलोचना किये बिना न छोड़ा। नारी और पुरुष के उत्तम तथा अधम, उत्तम में भी उत्तम तथा अधम में भी अधम आचरण व्यावहारिक भाषा में भी प्रकट कर दिया, प्रत्यक्ष कर दिया। वन्दनीय और निन्दनीय का सुन्दर चित्र-ऐसा चित्र जिसको मूर्ख से मूर्ख भी समझने में भूल न कर सके-चित्रण करने में अपना सानी नहीं रखा। सन्त और असन्त, वेष धारी और सच्चा साधु, दम्भकी पराकाष्टा और सचाई की सीमा, कुछ भी समझाने में कोर कसर न रखी। उपासना भावना के नाम पर चलने वाली धांधली, मारा मारी-खींचा तानी का 'निज प्रभु मय देखहिं जगत' और 'सिया राम मय सब जग जानी' भाव व्यक्त कर अन्त ही कर दिया, प्रेत तथा रजनिजर की बन्दना प्रभु मय भाव की परिशुद्ध प्रणाली नहीं तो और क्या हो सकती है। राजसत्ता के मद की पराकाष्ठा तथा प्रजावात्सल्य की परिधि, दुखियों का उत्पीड़न हाहाकार और दीन दयालु की अनन्त करुणा पाषाण को भी पिघलाने वाली वाणी में व्यस्त करना 'तुलसी' तेरे ही काम हैं। अपने अपने पद पर रहना ही अपनी प्रतिष्ठा है, बड़ों का पद हड़प जाना अनधिकार चेष्टा अतएव पाप है, मर्यादा का उल्लंघन ही विनाश की जड़ है इस सत्य का साक्षात् कराने में रामायण के पात्रों द्वारा-पद पर तूने कैसे नये तुले शब्दों का प्रयोग किया है वास्तव में अन्य कथाकारों की अपेक्षा यहां तू बहुत आगे बढ़ गया है। भक्ति-ज्ञान-वैराग्य-धर्म व्यवहार-राजनीति लोक परलोक न जाने और क्या-क्या। जानने योग्य विषय तूने अछूत छोड़े हैं तूही जाने हम तो तेरा छोटा कि या मोटा कोई ग्रन्थ उठाते हैं उसमें नन्दन वन की भांति नाना प्रकार के रङ्ग बिरङ्गे शब्द सुमनों का सौरभ पाकर झूम उठते हैं, जिस विषय का प्रतिपादन तूने किया है उसका तलस्पर्शी विवेचन तेरी गहन गवेषणा का ही प्रतिफल है। किस बात को किसके द्वारा कैसे प्रसङ्ग पर कस प्रकार कहानी सुननी चाहिये उसको नाट्य कला साहित्य कला-काव्य कला तथा राजनीति धर्म नीति सभी कसौटियों पर कस कर कोई देख ले तेरी त्रुटि कहीं कोई नहीं पकड़ सकता। न जाने कौन सा जादू छू मन्तर तूने सिद्ध किया था ? तेरे विपक्षी भी तेरी महानता स्वीकार करने में पीछे नहीं रहते। 'जासु स्वभाव अरिहु अनुकूला' तूने अपने इष्ट देव का प्रसाद पाकर ही लेखनी उठाई है।

उपास्य देव, चुनने में भी तूने अपनी महानता सिद्ध कर दिखायी है, जो जैसा रहता है वह अपना उपास्य भी वैसा ही तो चाहता है। ब्रह्मा विष्णु-शिव-गणेश-सूर्य-शक्ति, कोई तेरी दृष्टि में नहीं गड़े, 'कोटि विष्णु सम पालन कर्ता और कोटि रुद्रसम प्रभु संहर्ता, साकेताधीश सर्व तन्त्र स्वतन्त्र श्री राम प्रभु को ही तूने अपना आत्म समर्पण किया। देवाधि देव भगवान शंकर, धर्म शास्त्र प्रणेताओं में अग्रणी आदि महाराजा मनु ज्ञानि निधान काग भुशुण्डि योगी याज्ञवल्क्य तथा चिरंजीवी लोमश जो जो महान विभूति तुन्हें प्राप्त हुई सबसे अपने उस सर्वेश्वर की महिमा का उत्कृष्ट वर्णन करवा कर संसार में अपने इष्ट देव के श्री चरणों में अनायास झुकाने का जो अप्रतिम गुण तेरे साहित्य में है वह कहीं दृष्टि गोचर नहीं होता।

अनन्यता की उंची चोटी पर बैठ कर सभी को अपने हृदय लगाना तेरा ही प्रेमादि पुनीत उज्वल भावका दिव्य आनन्द है। वैष्णव धर्म के सभी व्यापक सिद्धान्त तेरी वाणी में ओत प्रोत हैं, यही कारण है कि आज तेरा 'श्रीरामचरिमानस' वैष्णवों का वेद हो रहा है, तथा उसका प्रतिदिन पाठ किये बिना अधिकांश वैष्णवों का मन भरता ही नहीं है।

भगवान श्री रामानन्दाचार्य जी महाराज ने जिस महान् सङ्कल्प को पूर्ण करने के लिये अपना उदार सिद्धान्त कवीर सेना पीपा-रैदास तथा अपने उच्चकोटि के शिष्य श्री अनन्तानन्दाचार्य्य जी महाराज आदि को प्रसाद रूप में दिये थे उसका पल्लवित-पुष्पित एवं प्रतिफलित रूप तेरी काव्य बाटिका में देखकर श्रीरामोपासक आनन्द विभोर हो जाते हैं। तूने अपने परमाचार्य्य की सिद्धान्त प्रणाली का संरक्षण किया और सभी सम्प्रदाय वालों को एक सूत्र में बांधने का निर्मल प्रयास किया भारत तेरा यह उपकार कभी नहीं भूलेगा।

आजके महापुरुष विश्व वन्द्य महात्मा गांधी 'राम राज्य' और रघुपति राघव के गीत गाकर अघाते नही थे, तेरा मानस पढ़कर उन्होंने आनन्द मग्न होकर कहा 'संसार में हिन्दू धर्म का एक यही ग्रन्थ रह जाय तो-दूसरे ग्रन्थों के बिना भी हिन्दू धर्म सुरक्षित रह सकता है। हिन्दू धर्म की समझने लायक कोई बात इस ग्रन्थ में बाकी नहीं रह गयी है।' मदोन्मत्त म्लेच्छ युग में ऐसा महान काव्य निर्माण करने वाले महापुरुष 'तुलसी' तूँ अपने युग का ही नहीं आज के युग का और आगे आने वाले युग का भी एक महान् तत्व द्रष्टा महर्षि है। तेरी वाणी शान्ति-आनन्द-प्रेम तथा प्रभु की प्राप्ति कराने में परम सहायक होकर अगणित जीवों के परम कल्याण का मङ्गल मग प्रशस्त करती है।

सन्त तुलसी तुझे प्रणाम हैं तेरे हृदय में श्री सीता राम हैं, तेरे मुख में श्री राम नाम है, तेरे रक्षक स्वयं महावीर श्री हनुमान हैं, तेरी वाणी में प्रेम रस पूर्ण भक्ति है तेरे साहित्य में दिव्य शक्ति है, तेरे ग्रन्थ ज्ञान का गौरव हैं, तेरे काव्य में स्नेह का सौरभ है। तेरा चरित्र पवित्रता की सीमा है। तेरा नाम आनन्द का धाम है, तू स्वयं लोकललाम है। आज तेरी जन्म जयन्ती है भक्त जनों के लिये तेरी वाणी विजय वैजयन्ती है। ले श्रद्धा-प्रेम-स्नेह-भक्ति-अनुराग-आदर और विनय से परिपूर्ण यह शब्द सुमनाञ्जलि तेरे चरणों में समर्पित है।

आज अपनी जयन्ती के अवसर यह 'प्रेम निधि' की प्रेम पुष्पांजलि स्वीकार कर अपने प्रियतम का प्यार दे और पहुंचा दे उसके पुनीत चरणों के पास—

यज्ञ समारोह

आगामी चैत्र नवरात्र के मानस यज्ञ में जिला गया के दधपा मानस आश्रम के पंडित श्री जानकी कुमार मिश्र ने श्री गोविन्द विद्यालय के प्रधानध्यापक तथा छात्रों सहित रामवन आना स्वीकार किया है। यह छात्र गायन करके नवाह करेंगे।

बनारी जिला बिलासपुर की भी मानस मंडली यज्ञ में आयेगी।

श्री मारुति भगवान की कृपा से यज्ञ के आकर्षण बढ़ते जा रहे हैं। प्रेमी जन आकर लाभ उठावें। आने की पूर्व सूचना अवश्य भेजें।

शारदा प्रसाद
मन्त्री मानस संघ

मानव कर्त्तव्य

[श्री विरञ्जी लाल गुप्त]

प्रायः अनेक मनुष्य कहा करतें हैं 'मैं भजन साधन करना चाहता हूँ। परन्तु समय न मिलने के कारण असमर्थ हूँ। ऐसे मनुष्यों को कभी किसी महान कार्य करने के लिये समय नहीं मिलता परन्तु कितने दुःख की बात है कि वह नित्य अपने अमूल्य समय को यों ही अपव्यय करते है। जितने समय वे किसी धार्मिक विषय पर वार्तालाप कर लाभ और मनोविनोद कर धर्माचरण कर सके उतने समय को व्यर्थ हा हा, हूँ, हो हल्ला में उड़ा देते हैं। बात में मनुष्य कहा करते है जब सुअवसर बुढ़ापा–आयेगा तब हम भगवान का भजन कर लेंगे। परन्तु वे यह नहीं सोचते कि अच्छे कार्य के लिये प्रत्येक समय ही सुअवसर है। समय के लिये बैठना बुरा है। साधारण समय को ही उत्तम अवसर में परिणत कर देना चाहिये। जैसा कि एक देहाती कहावत भी है—

वन मरे मुठी भर अन्न बिना,
षट रस अहार बेकार है फिर।
दो घूंट नीर बिन मरने पर,
अमृत की धार असार है फिर॥
जब खेत उजर और सूख गया,
फिर जल आये क्या होता है।
जब समय पड़े पर चूक गये,
फिर पछताये क्या होता है॥

इसलिये जब इस देव दुर्लभ मानव शरीर को पाकर जब हम सत्कर्म करने में स्वतन्त्र हैं और जब हमें उस कार्य मे भगवान की शक्ति है, तब जीवन के अमूल्य समय को व्यर्थ के कर्मों में गँवाना दुख के कारण है। इस कलियुग मानव शरीर इतना अनिश्चित और क्षण भंगुर है कि पता नहीं कब इसका अन्तहो जाय।

ऐसी अवस्था में संसार के प्रपञ्चों और विषय भोगों में समय लगाना अच्छा नहीं है। धर्म कार्य परोपकारके लिये ही यह शरीर मिला है, श्रद्धा विश्वास व्रत, साधन, आदि के द्वारा ही हम इस भवसागर को पार कर सकते हैं। अजर अमर सभी प्राणियों में ईश्वर का निवास है ऐसी अवस्था में किसी प्रकार से भी किसी का आसरा या कृपा का भरोसा नहीं रखना चाहिये। यह याद कर लो कि जवानी ही शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा को पुष्ट करने का सबसे उत्तम समय हैं। हर व्यक्ति को साधना के पथ पर चल कर अनुभव और ज्ञान प्राप्त करना न अपने शरीर से मोह करना चाहिये न अपने परिवार से मोह करना चाहिये। जबकि जन्म का अर्थ है मृत्यु याने जिसका सृजन उसका संहार अवश्य होगा। जो एक दूसरे से मिलता है उसका विछोह अवश्य होगा। एकान्त में जाकर लोकालय से हट कर लोगों की भीड़ भाड़ और व्यर्थ कोलाहल से बच कर भगवान में ही प्रीति जोड़ो। जगत के विषय सुखों से मुंह मोड़ कर परम पावन धर्म पथ से भागना, स्वजनों, परिजनो, आदरणीय बन्धुओ, मित्रों से अलग रह कर, भगवान की सेवा सुश्रूसा में जीवन लगाना, समाजी उत्सवों, त्योहारों, से तटस्थ हो कर एकान्त में ईश्वर चिन्तन करना ही परम सुन्दर साधन है। सरल निश्चय जीवन, वैभव ऐश्वर्य के लोभ से सर्वथा अलग रहना। संसार के लुभाने वाले, भटकाने वाले प्रलोभन से मुंह मोड़ कर सत्य का ज्ञान करना शरीर पर वाणी मन संयम करना और समय का सदुपयोग कर सरल मार्ग में भगवान का चिन्तन करना ही कल्याण का मंगलमय पथ हैं। व्यवहार में कभी प्रिय विषयों की प्राप्ति तो कभी अप्रिय है। अनुकूल में प्रियता प्रतिकूल में अप्रियता होती है। साधक को उनमें प्रिय अथवा अप्रिय बुद्धि

करके ब्रह्मभाव करना चाहिये. और परमात्मा में अभि-न्नाभाव से स्थिति होकर विचरन करना चाहिये। कहीं भी राग द्वेष नही होना चाहिये।

जैसा कि श्री कृष्ण भगवान का उपदेश है :—

न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम।
स्थिर बुद्धिरसंमूढ़ो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः
॥गी० अ० ५ श्लोक २०

अर्थात् :—जो पुरुष प्रिय प्राप्त होकर हर्षित नही हो और अप्रिय को प्राप्त होकर उदग्नि न हो, वह स्थिर बुद्धि-शंसय रहित ब्रह्मवेता पुरुष सच्चिदा-नन्दघन परब्रह्म परमात्मा में एकीभाव से नित्य स्थित है। किन्ही का वक्तव्य है प्रमाण रामायण में भी है—

आगम निगम धर्मशास्त्र न्याय नीति आदि के प्रमाण रामायण में।
वैभव विकास पायी पातकी की गान रामायण में॥

एक बार श्री लक्ष्मण जी ने निष्कपट अन्तःकरण से दोनों हाथ जोड़ कर बड़ी नम्रता के साथ श्रीभगवान रामचन्द्र जी से निवेदन किया :—

सुर नर मुनि सचराचर साईं।
मैं पूछौं निज प्रभु की नाईं॥
मोहि समुझाइ कहहु सोर देवा।
सब तजि करौं चरन रज सेवा॥
कहहु ग्यान विराग अरु माया।
कहहु सो भगति करहु जेहि दाया॥

ईश्वर जीवहि भेद प्रभु सकल कहहु समुझाइ।
जाते होइ चरण रति सोक मोह भ्रम जाइ॥

भक्तवत्सल भगवान ने सरल हृदय, परम श्रद्धालु, एकान्त प्रेमी के या ण के लिये संक्षेप में उत्तर दिया :—

मैं अरु मोर तोर तैं माया।
जेहि बस कीन्हें जीव निकाया॥
गो गोचर जहँ लगि मन जाई।
सो सब माया जनेहु भाई॥

तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ॥
विद्या अमर अविद्या दोउ॥
एक दुष्ट अतिसय दुख रूपा।
जा बस जीव परा भव कूपा॥
एक रचइ जग गुन बस जाके।
प्रभु प्रेरित नहि निजबल ताके॥
ग्यान मान जहँ एकौ नाहीं।
देख ब्रह्म समान सब माहीं॥
कहिअ तात सो परम बिरागी।
तृन सम सिद्ध तीन गुन त्यागी॥

माया ईस नआपु कहँ, जान कहिअ सो जीव।
बंध मोच्छप्रद सर्व पर, माया प्रेरक सीव।

धर्म त विरति जोग ते ग्याना।
ग्यान मोच्छप्रद बेद बखाना॥
जाते वेगि द्रवउँ मैं भाई।
सो मम भगति भगत सुख दाई॥
सो सुतन्त्र अवलम्बन आना।
तेहि आधीन ग्यान विग्याना॥
भगति तात अनुपम सुख मूला।
मिलइ जो संत होइँ अनुकूला॥
भगति के साधन कहौं बखानी।
सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी॥
प्रथमहि विप्र चरन अति प्रीती।
निज निज कर्म निरत श्रुति रीती॥
यहि कर फल पुनि विषय विरागा।
तब मम धर्म उपज अनुरागा॥
श्रवणादिक इव भक्ति दृढ़ाहीं।
मम लीला रति अति मन माहीं॥
संत चरन पंकज अति प्रेमा।

मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा॥
गुरु पि धु पति देवा।
सब मोहि कहँ जानै दृढ़ सेवा॥
मम गुन गावत पुलक सरीरा।
गद्‌गद गिरा नयन बह नीरा॥

काम आदि मद दंभ न जाके।
तात निरन्तर बस मैं ताके॥
वचन करम मन मोरि गति, भजन करहिं निःकाम।
तिन्हके हृदय कमल महुँ, करौं सदा विश्राम॥

तथा योग दर्शन, में भी यम, नियम, आसन, प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान समाधि इस तरह से साधकों को भगवत प्राप्ति का उपदेश मिलता है। इसमें सबसे पहला यम है। इसका अर्थ है :—

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य अपरिग्रह॥

तथा कहा भी है :—

हिंसा नृतास्तेय ब्राह्म परिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम्
॥तत्वा० ७।२

अर्थात :—प्राणहिंसा करना, झूठ बोलना चोरी करना, स्त्री संग करना परिग्रह (किसी का) करना इन पापों को छोड़ना ही व्रत है।

सन्यासी वही है, होगा जो सम्पूर्ण धर्मों को त्याग करके वो ममता अहंकार से शून्य हो।

मनुष्यों के तीस धर्म जैसा कि श्री मद्भागवत ७।११।८-१२ का उपदेश है

सत्यं दया तपः शौचं: तितिक्षेक्षा शमो दमः।
अहिंसा ब्रह्मचर्यं च त्यागः स्वाध्याय आर्जवम्
सन्तोषः समदृक सेवा ग्राम्येहो परमः शनैः
नृणां विपर्ययेहेक्षा मौनमात्मम् विमर्शनम्।
अन्नाद्यादेः सं विभागों भूतेभ्यश्च यथार्हतः
तेष्वात्मदेवता बुद्धिः सुतरां नृपु पाण्डव॥
श्रवणं कीर्तनं चास्य स्मरणं महतां गतेः
सेवेज्या वनर्तिर्द्रास्यं शख्यमात्म समर्पणम्॥

नृणामयं परोधर्मः सर्वेषांसमुदाहृतः।
त्रिशंल्ल लक्षणवान राजन् सर्वात्मादेन तुष्यति॥

भावार्थ :—सत्य, दया, स्वधर्म पालन के लिए कष्ट सहना, पवित्रता, शीत, उष्ण आदि को सहना, उचित-अनुचित का विचार, मन एवं इन्द्रियों को काबू में रखना सब प्रकारकी हिंसा से दूर रहना, वीर्य रक्षा करना निषिद्ध कर्मों का त्याग करना तथा अपनी कमाई का कुछ अंश दानकरना, वेदशास्त्रों का नियमित रूप से अध्ययनकरना तथा भगवान के नाम का कीर्तन करना, सरलता सन्तोष, समदर्शी महात्माओं की सेवा करना धीरे धीरे सांसारिकभोगों की चेष्टा से विरतहोना। मनुष्य के अभिमान पूर्ण प्रयत्नों का फल प्रायः उल्टा ही होता है – ऐसा विचार मननशीलता आत्म चिन्तन प्राणि मात्र में अन्न आदि जीवनोपयोगी सामग्री का यथा योग्य विभाग करना उनमें और विशेषकर मनुष्यों में अपने आत्मा का अथवा इष्टदेव का भाव रखना इत्यादि यह सब सभी मनुष्यों का सर्वश्रेष्ट धर्म कहा गया है।

हे बन्धु ! क्यों खोते हो क्षनिक मद हेतु निज आयु बल को।
कर देते हो त्यानाश उसीसे निज तन मन धन को॥
एक संतान हेतु कभी न करते हो आराम।
पर करलोविदित देगा न अन्त में काम॥
यदि विश्वास कर एक बार कहदो 'राम'।
मिटा शोक संताप जाओगे सुरधाम॥

———

'मानस में भारी आनन्द'

(श्री हरि शंकर मिश्र 'शंकर' व्यास)

इस प्रस्तुत प्रसंग में निर्गुण तथा सगुण का कुछ परिचय आवश्यक है। वेद-शास्त्र तथा पुराणस्मृति आदि सब आदि सब एक स्वर से निर्गुण ब्रह्म का प्रतिपादन करते हैं कि वह आज अरूप, अव्यक्त अनाम, अकल और शून्य है। इसी आधार पर गोस्वामी जी ने भी लिखा है:—

व्यापक अकल अनीह अज निर्गुण नाम न रूप'

किन्तु इस अरूप, शून्य, बुद्धिमनोऽतीत, अव्यक्त परस्पर ब्रह्म को अपनी इस स्थिति में कुछ आनंद न रहा, अतः अभिलाषा की पूर्ति में प्रतिज्ञा कर ली उन्होंने :—'एकोऽहं बहु स्याम।' बस; विलम्ब तो इच्छा की प्रबल प्रतीक्षा का था—वह अव्यक्त व्यक्त होकर, वह अरूप रूपवान होकर, वह अनाम नामधारी होकर वह एक अनेक होकर परम रमणीय एक सृष्टि के रूप में दृष्टि पथ पर आया। यही निर्गुण का सगुण होता है।

ये विविध रूप वेष सम्पन्न नर-वानर-सुर दानवादि, गोमहिषा श्रगजादि पशु, चातक-शुक-पिक-मयूरादि पक्षी, जम्बूप्लक्ष-न्यग्रोध-अश्वत्थ-रसाल-तमालादि तरुवर, मल्लिका-माधवी-वकुलकादि लतावली, हिम-महेन्द्र-विंध्यादि भूधर, सरयू-यमुना; जाह्नवी आदि सरित सरोवरादि, सुरम्य रत्नजटित-धवल-धाम एवं तृणापल्लवादि निर्मितपर्ण कुटीरादि ही विकसित विविध कमल हैं तथा इस सृष्टि का यह व्यास (विस्तार) ही सरोवर है भला यह कमनीय दर्शनानंद कैसे सुलभ होता यदि वह निर्गुण-अरूप ब्रह्म इस संसार-सरोवर में कमल स्वरूप स्थावर जंगमादि का रूप न धारण कर लेता। प्रवर्षण गिरि पर छोटे भाई श्री लक्ष्मण जी से शरद सुन्दरी का सौन्दर्य वर्णन करते हुये श्री भगवान इसी भाव की ओर संकेत कर रहे हैं :—

'फूले कमल सोह सर कैसे।
निर्गुन ब्रह्म सगुन भये जैसे॥'

भाव यह कि सर में कमल मूल तो पहले भी था किन्तु उसकी शून्य गति में क्या आनंद न तो वहाँ गुण ही था न गुणग्राहक ही तो शोभा कैसी ? किन्तु अब तो यहाँ की दसों दिशायें कमल सौरभ से सुरभित हो रही हैं और कमल पराग से रंजित हो भ्रमर मकरंद पान कर मानो उनका गुण गान कर रहा है :—

गुंजत मधुकर मुखर अनूपा।
सुंदर खगरव नाना रूपा॥

अब तो श्री प्रभु के ही इन वचनों से :—निर्गुन ब्रह्म सगुन भये जैसे' स्पष्ट है कि निर्गुण ब्रह्म से सगुन ब्रह्म का आनंद बड़ा है।

प्रस्तुत प्रसंग में अब एक यह प्रश्न उठ सकता है कि :—बाल्मीकिजी तो इस समय श्री राम जी के दर्शन में भारी आनंद का अनुभव कर रहे हैं, न कि विश्व के दर्शन में। अतः सगुणरूप सृष्टि (विश्व) के आनंद का यह उद्धरण समुचित नहीं प्रतीत हो रहा है।

इस विषय में यदि हम गोस्वामी जी के रचना कौशल एवं भाव गाम्भीर्य की दिशा में चलें तो हमारी सारी समस्या सुलझ जाती है। इस स्थल पर गोस्वामी जी ने कूट कूटकर विश्व सेवा का आदर्श भर दिया है।

आज श्री मुनि जी के समक्ष श्रीराम जी हैं विश्व नहीं, जैसे यह मानते हैं वैसे ही यह भी मन्तव्य होगा कि बाल्मीकि जी के श्री राम जी

अनन्य भक्त हैं। साथ ही यह भी विचारणीय है कि अनन्य भक्त की परिभाषा क्या है :—

'सो अनन्य जाके असि, मति न टरइ हनुमन्त'
'मैं सेवक सचराचर, रूप स्वामिभगवन्त'

इससे तो स्पष्ट है कि सचराचर विश्वकी सेवा श्री राम की सेवा है। सचराचर विश्व की प्रसन्नता ही श्री राम की प्रसन्नता है तथा विश्व का द्रोह ही श्री राम का द्रोह है। यह बात श्री हनुमान जी के वचनों से और स्पष्ट हो रहा है—जो कि रावण के समझाने के प्रसंग में है :—

सुनु दसकंठ कहउ पन रोपी।
विमुख राम त्राता नहि कोपी।
संकर सहस विष्नु अजतोही।
सकहिं न राखि राम कर द्रोही।

अर्थात् रामद्रोही की रक्षा कोई नहीं कर सकता, रामद्रोही जीवित नहीं रह सकता, बच नहीं सकता। इसका और स्पष्टीकरण श्री विभीषण जी के निम्नलिखित वचनों से हो जायगा जो कि रावण-के समझाने के ही प्रसंग में है :—

चौदह भुवन एक पति होई।
भूत द्रोह तिष्ठइ नहि सोई॥

यहाँ 'भूतद्रोह' शब्द में 'भूत' शब्द विश्व प्राणियों के ही अर्थ में प्रयुक्त है। विभीषण जी कहते हैं 'विश्वद्रोही बच नहीं सकता है' तथा हनुमान जी कहते हैं जो ऊपर कहा जा चुका है :— कि रामद्रोही नहीं बच सकता है। दोनों में अन्तर यह है कि एक जगह 'विश्वद्रोही' नष्ट, दूसरी जगह 'राम द्रोही' नष्ट कहा गया। किन्तु आगे चल कर दोनों वचनों की एकता देखने को मिलेगी। इसी भाव को लेकर युद्धोपरान्त श्री प्रभु की प्रार्थना करते हुये देव गण कह रहे हैं :—

'विश्व द्रोह रत यह खल कामी।
निज अघ गयउ कुमारग गामी॥

अर्थात विश्वद्रोह से रावण का नाश हुआ। यही ऊपर विभीषण जी के 'भूत द्रोह' शब्द का भाव है जो ऊपर कहे हुये हनुमान जी के 'राम कर द्रोही' तथा 'विमुख राम' शब्द से भिन्न नहीं है। क्योंकि विश्व से भिन्न राम जी नहीं हैं :—

'बिस्व रूप रघुबंसमनि, करहु बचन बिस्वासु।
लोक कल्पना बेद कर, अंग अंग प्रति जासु॥

जैसे उक्त उद्धरणों से यह स्वीकार कर लेने में कोई आपत्ति नहीं है कि :—विश्वद्रोह ही श्री राम द्रोह है वैसे ही यह भी स्वीकार करने में आपत्ति नहीं होनी चाहिये कि विश्व की सेवा ही श्री प्रभु की सेवा है। अर्थात् जो विश्व के प्राणियों पर दया करके विश्व का प्रिय बन जाय वही राम सेवक तथा राम प्रिय है। अन्यथा रामसेवका भिमान ही व्यर्थ है। यह है विश्व सेवा का आदर्श है।

श्री बाल्मीकि जी श्री राम जी के इस कोटि के भक्त होकर यदि श्री राम के साक्षात्कार में 'भारी आनंद' की अनुभूति कर रहे हैं तो विश्व का कोई भी प्राणी इनकी दृष्टि में आकर इनकी भावुकता का अतिथि होगा और इन्हें वही आनंद होगा जो कि श्री प्रभु के दर्शन में। इन महामुनियों की दृष्टि में तो समस्त विश्व ही श्री राम जी की भाँति दर्शनीय है, सेव्य है। अतः इस शंका को स्थान कहाँ ? जब कि:—

'मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवन्त'

श्री काक भुसुंडि जी कुछ जिज्ञासा लेकर श्री लोमश जी के आश्रम पर पधारे (यह इनके पूर्व जन्म की बात है)। सतसंग के प्रवाह में ही उत्तर प्रत्युत्तर द्वारा क्रुद्ध होकर मुनि ने शाप दे दिया।

सठ सपच्छ तव हृदय विसाला।
सपदि होहि पच्छी चंडाला॥

किन्तु अनन्य जनों के यहाँ तो द्वन्द्व है ही नहीं। क्या शाप और क्या आशीर्वाद—वहाँ तो सब कुछ भी भगवत्प्रसाद है; अतएव शिरोधार्य है :—

लीन्ह साप में सीस चढ़ाई।
नहिं कछु भय न दीनता आई॥

यह कथा श्रवण करती हुई जगज्जननी श्री पार्वती जी के हृदय में महामुनि के इस कठोर व्यवहार पर दुःख हुआ और कुछ रुष्ट सी होती हुई भगवान शंकर जी से सहसा बोल उठीं—प्रभो! क्या भक्त काकभुसुंडि जी में यह शक्ति नहीं थी कि उनका प्रतीकार कर सकते? गिरिजा जी के इस भोले प्रश्न पर हँस कर भूत भावन भगवान शंकर जी उनके रोष को शान्त करते हुये परम मृदुल वाणी में बोले :—

उमा जे रामचरन रत, विगत काममद क्रोध।
निज प्रभुमय देखहिं जगत केहि सन करहिं विरोध।

भाव यह कि विश्वरूप श्रीराम का दर्शनानंद भारी है विशेष है। यही इस प्रसंग का आदर्श है।

इस चराचर जगत में निर्गुण ब्रह्म व्याप्त है। सभी जड़ चेतन शरीर में सततनिवास करने पर भी निर्गुण ब्रह्म किसी को सुखी नहीं कर सका :—

अस प्रभु हृदय अछत अविकारी।
सकल जीव जग दीन दुखारी॥

किन्तु वही अव्यक्त जब व्यक्त हो जाता है दाशरथि श्री राम के रूप में इस भूतल को सुशोभित करता है तब तो जड़ जीव भी इस आनंद सिंधु में हिलोरें ले ले कर फूले नहीं समाते हैं :—

परसि राम पद पदुम परागा।
मानत भूमि भूरि निज भागा॥
विन्ध्य मुदित मन सुख न समाई।
श्रम बिनु विपुल बड़ाई पाई॥

कैसा आनंद है। ये परम मनोहर मृग गण हरी हरी घास मुँह में लिये हुये जड़ से न जाने क्या एकटक देख रहे हैं। तो क्या ये जड़ ही हैं, बनावटी हैं नहीं नहीं, अरे! इनकी नासिका से तो स्वाँस का संचार हो रहा है तथा स्वाँस के ही कारण इनकी कुक्षि भी बराबर ऊँची नीची हो रही है। किन्तु आश्चर्य तो यह कि न ये हिल रहे हैं न बोल रहे हैं न तो तृण ही खा रहे हैं। इधर तो देखिये यह परम पराक्रमी हिंसक सिंह भी अपनी भयावनी आखों से आर्द्रता सूचक जलबिंदु टपकाता दिखाई दे रहा है। कारण समझ में नहीं आ रहा है आज तो सत्य ही, यह अपने केशरों को कन्धों पर छिटकाये हुये जटाधारी साधु की ही शोभा पा रहा है। समीप में ही बाज के रहने पर भी यत्र तत्र पक्षियों के झुण्ड परम निर्भय मौन चित्रित से शोभा पा रहे हैं। बाज का तो आज कुछ लुट सा गया है। नहीं नहीं! बाज का ही नहीं, सभी पशुपक्षियों का, और सर्वस्व लुट गया है :—

खगमृग मगन देखि छबि होही।
लिये चोरि चित राम बटोही।

पाठक सोचे- इस सगुन रूप आनंद के पूर्व भी इन जड़ चेतन में निर्गुण ब्रह्म था तब भी परस्पर भक्ष्य भक्षक के कारण बैर था अतः यह आनंद नाम को न था, किन्तु, अब तो आप देख रहे हैं कि :

खगमृग सहज बयर बिसराई।
सबन्हि परस्पर प्रीति बढ़ाई॥

इसी से तो गोस्वामी जी ने कहा कि मंगल रूप भयउ बन तबते ; कीन्ह निवास रमापति जबते । भला यह आनंद कैसे वर्णन हो । यह तो नभचर और थलचरों की आनंद-मयी दशा का कुछ दिग्दर्शनमात्र है । आइये, इन जलचरों की इस विचित्र दशा को तो देखिये :— सेतु बँध चुका है, श्री प्रभु अपनी वानरी सेना सहित समुद्र पार जारहे हैं। वाहिनी की बहुलता से सेतु पर से जाने को मार्ग न रह गया । अत : कतिपय वीर उछल २ कर आकाश मार्ग से जाते हुये नभ मंडल को आच्छादित कर लिये । इधर तो देखिये ये बन्दर भालु थल की भाँति जल पर ही कौतुक करते हुये सिंधु पार जारहे हैं । अहा ! यहाँ तो जल है ही नहीं । जलचरों से जल ऐसा आच्छादित हो रहा है मानो थल ही है । आश्चर्य तो यह है कि एक जलचर दूसरे को खा जाते हैं, किन्तु यहाँ तो सब को अपने २ शरीर की भी सुधि नहीं है तो दूसरे का ज्ञान कहाँ ? प्रकृति चपल बन्दर इन जलचरों को पैरों से दबा २ कर हटाना भी चाहते हैं किन्तु वे तो जड़ की भाँति किसी विशेष आनंद में मग्न तनिक भी नहीं हट रहे हैं ।

देखन कहुँ प्रभु करुना कंदा ।
प्रगट भये सब जलचर बृन्दा ॥
तिन्ह की ओट न देखिय वारी ।
मगन भये हरी रूप निहारी ॥
अइसेउ एक तिनहिं जेखाहीं ।
एकन्ह के डर एक डेराहीं ॥
प्रभुहिं विलोकहिं टरहिं नटारे ।
मन हरषित सब भये सुखारे ॥

यह अवर्णनीय आनंद इन जलचरों को कैसे सुलभ होता यदि वह निर्गुण ब्रह्म सगुन रूप श्री राम के रूप में अवतरित न होते । जो कि उस ब्रह्म के आनंद से भारी आनंद-प्रद हैं । अन्त में गोस्वामीजी नेलिखा :—

बालमीकि मन आनंद भारी ।
मंगलमूरति नयन निहारी ॥
बोलिये सियावर रामचन्द्र की जय ।

सत्संग की महिमा

(श्री नन्द किशोर शर्मा)

श्रीरामचरितमानस में पूज्य गोस्वामी जी ने निर्देश किया है ।

'तात स्वर्ग अपवर्ग सुख,
धरिय तुला इक संग ।'
'तुले न ताहि सकल मिली,
जो सुख लों सतसंग ॥'

इस संसार में संत महात्माओं का आधे क्षण का सतसंग भी मनुष्यों के लिए बड़ी भारी निधि के समान लाभदायक है । सतसंग से मनुष्य सुधरते हैं; और कुसंग से बिगड़ते हैं । सदाचारी महानुभावों का संसर्ग कीर्ति एवं उन्नति का कारण है; यद्यपि ललाट में किया हुआ सिन्दूर का टीका शोभा पाता है, परन्तु वही टीका विधवा ललाट के सम्बन्ध में निंदित होता है । इसी प्रकार सज्जन पुरुष भी किंचित कुसंग से निंदित होजाता है । वर्षा आदि के अनुकूल होने पर भी रद्दी भूमि के संसर्ग से अच्छा-बीज यथेष्ट फल नहीं देता । सतसंग की महिमा अपार है। अज्ञानी सतसंग से ज्ञानी हो जाता है। रागी विरागी बन जाता है। विपद्ग्रस्त मनुष्य भी सतसंग के प्रभाव से सम्पति शाली बनता है। मुमुक्षुओं के लिए कल्याण का साधन एक मात्र सतसंग है। सतसंग दिव्य सुख का खजाना है। सतसंग

की महिमा में श्री भागीरथी गंगाजी से भी बढ़कर हैं, गंगा स्नान से केवल पाप निवृति होती है परन्तु पाप करने की बुद्धि निवृत्ति नहीं होती। सतसंग रूपी गंगा के अवगाहन से सकल पाप तो निवृत होते ही हैं परन्तु पाप करने की बुद्धि का भी नाश हो जाता है; जिसमें सतसंगी को भावी कभी पाप का स्पर्श होता ही नहीं। सतसंग कल्प वृक्ष से भी अतीव श्रेष्ट है। कल्प वृक्ष के पास जाने से तत्काल ही सकल इच्छाओं की पूर्ति होती है। परन्तु इच्छाओं का समूल विनाश नहीं होता। सतसंग से समूल इच्छाओं का नाश हो जाता है और सतसंगी सदा के लिए आप्त काम और पूर्ण तृप्त हो जाता है। सतसंग की महिमा चन्द्रमा से भी बढ़कर है। चंद्रमा बाहर के ताप को निवारण कर सकता है परन्तु आंतरिक काम क्रोधादि के ताप को निवारण नहीं कर सकता; सतसंग बाहर एवं भीतर के सम्पूर्ण ताप का निवारण कर सतसंगी को पूर्ण शांत बना देता है।

यदि उपरोक्त कथित समस्त बातों का पूर्ण लाभ लेकर सहज ही में भवनिधी को पार करना है तो श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी कृत 'रामचरित मानस' का स्वाध्याय रूपी सतसंग करें—कलिकाल में यह प्रधान सतसंग है।

'सर्वे सन्तु निरामया ?'

'मानसमणि' के प्रेमी पाठकों से निवेदन

'मानसमणि' मानस प्रचार के लिये प्रकाशित होता है। इसके जितने ही ग्राहक बढ़ेंगे उतना ही यह अपने उद्देश्य में सफल होगा। अतः सानुरोध प्रार्थना है कि आप कम से कम अपने एक मित्र को तो 'मानसमणि' का ग्राहक अवश्य बनाने की कृपा करें। आपकी इस कृपा पर ही इसका जीवन तथा भविष्य निर्भर है।

३) मनी आर्डर द्वारा भेजें अथवा ३।=) की वी॰ पी॰ भेजने की आज्ञा दें चाहे जिस मास से ग्राहक बन सकते हैं।

व्यवस्थापक
मानस-मणि
पो॰ रामवन
बाया-सतना



नवम्बर मास में संघ के ४२० नये सदस्य बने । इस मास में २६ नई शाखायें स्थापित हुई, जिनका विवरण इस प्रकार है:—

शाखा संख्या १२४८ सनवाड़ (राजस्थान) सदस्य १२ मन्त्री श्री गिरधारी लाल जी । शा० सं० १२४९ सखनखेड़ा (कानपुर) स० ६ मं० श्री सुधारसिंह जी । शा० सं० १२५० आकोली (राजस्थान) स० ६ मं० श्री जमनालाल जी व्यास । शा० सं० १२५१ लहरापुर (फैजाबाद) स० १० मं० श्री राममनोरथ जी पाठक । शा० सं० १२५२ पिटरास (होशंगाबाद) स० ११ मं० श्री शंकर सिंह जी । शा० सं० १२५३ मेकरार्बटगंज, कानपुर (यू० पी०) स० १० मं० श्री रामसूरत जी । शा० सं० १२५४ तौंधकपुर (कानपुर) स० ६ मं० श्री नवाबसिंह जी । शा० सं० १२५५ पाण्डू (पलामू) स० १२ मं० श्री भोलानाथ जी पाण्डे । शा० सं० १२५६ शहपुर (जबलपुर) स० ६ मं० श्री बटूलाल जी पाठक । शा० सं० १२५७ कामती सुर्गीठावां (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री चेतराम चौकसे शा० सं० १२५८ बनवारी (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री सुन्दरलाल जी श्रीवास्तव । शा० सं० १२५९ बावई (होशंगाबाद) स० ११ मं० श्री बाबूरामकृष्ण जी जैसवाल । शा० सं० १२६० बनवारी (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री हरदयाल जी शर्मा । शा० सं० १२६१ बनवारी (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री सीताराम जी खटीक । शा० सं० १२६२ बनवारी (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री प्रेमनारायण जी शर्मा । शा० सं० १२६३ (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री तीरथप्रसाद जी चौकसे । शा० सं० १२६४ बनवारी (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री दुलीचन्द जी पेटिया । शा० सं० १२६५ बनवारी (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री बीरनलाल जी सोनी । शा० सं० १२६६ बनवारी (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री गोपीकिशन जी साहू । शा० सं० १२६७ दाँतला कालरी (छिन्दवाड़ा) स० ३० मं० श्री नरसिंहदास जी वैष्णव । शा० सं० १२६८ बरईगढ़ (कानपुर) स० ६ मं० श्री । शा० सं० १२६९ बन्देमऊ (कानपुर) स० ६ मं० श्री कन्हैयालाल जी त्रिपाठी । शा० सं० १२७० पानोड़ (इन्दौर) स० १४ मं० श्री हरीरामदास जी महन्त । शा० सं० १२७१ फतहनगर (राजस्थान) स० १२ मं० श्री गोपालदास खण्डेलवाल । शा० सं० १२७२ गोबरगाँव उर्फ तीर्थनगर (होशंगाबाद) स० २० मं० श्री मनमोहनलाल जी । शाखा संख्या १२७३ चित्तौरगढ़ (राजस्थान) सदस्य १६ मंत्री श्री लक्ष्मीनारायण जी कावरा ।

इस मास में प्रेमियों ने इस प्रकार शाखा स्थापित कराई हैं —

१—श्री कंज जी रामायणी काशी १०, पूर्व-स्थापित ५४ = ६४

२—कुँ० श्री धनसिंह जी भदौरिया परीख ६, पूर्व स्थापित १६ = २२

३—श्री सुरेन्द्रनाथ जी ब्रह्मचारी (बेधड़क जी) ३, पूर्व स्थापित १९ = २२

आश्विन पारायण समाचार

अयोध्या :—नवाह पाठ के साथ ही श्री दुर्गा सप्तशती का भी पारायण हुआ।

—अम्बिकेश्वरपति त्रिपाठी

खेतड़ी :—७२ घंटे तक सामूहिक अखंड पाठ हुआ। समाप्ति पर हवन् कीर्तन, ब्रह्मभोज तथा प्रसाद वितरण किया गया।

—फूलचन्द्र धंवालिया

मोगरा:—सामूहिक पारायण हुआ। बाद में हवन आदि हुआ।

—मिट्ठूलाल

तुल्मी :—६ सदस्यों ने पाठ किये।

—वल्देव रामजी

कुस्मी :—८ स्थानों पर पाठ हुआ।

—कृपाराम

लोफन्दी :—सामूहिक पारायण हुआ। बाद में हवन, ब्रह्मभोज होकर कीर्तन, व जलूस निकाला गया।

—चन्द्रिकाप्रसाद

गिधोरी :—१५ सदस्यों ने पाठ किये।

—बाबूराम तिवारी

शुक्लनपुरवा :—६ पाठ हुए। समाप्ति पर कीर्तन होकर प्रसाद वितरण हुआ।

—शिवप्रसाद त्रिपाठी

उमरेठ :—पारायण हुआ।

—मंगुभाई मंछाराम

लोधिया :—२२ सदस्यों द्वारा व्यक्तगत पाठ तथा श्रीमद्भागवत महापुराण का सप्ताह यज्ञ भी हुआ। समाप्ति पर ब्राह्मण भोजन हुआ।

—विजयशंकर

खुदगड़ा :—नवाह हुआ। समाप्ति पर श्री हनुमान चालीसा के पाठ, अस्तुति, आरती तथा ब्राह्मणभोजन हुआ।

—गुनाराम

बिलारी :—श्री महादेव जी के मंदिर में १२ सदस्यों ने पाठ किया। अंतिम दिन होम, सहस्त्रधारा एवं भण्डारा हुआ। एकादशी को भगवान का जलूस निकाला गया। सलखन—७ पाठ। खरौद तिवारी पारा :—५ पाठ।

—ताँतीराम साव

पन्ना :—श्री महावीर जी की मढ़िया पर प्रतिपदा को श्रीरामार्चा पूजन हुआ। तत्पश्चात् मानस का पारायण सम्पन्न हुआ। श्री सुरेश चन्द्र जी शर्मा का प्रतिदिन प्रवचन होता था। दशमी को पूर्ण होने के बाद हवन, यज्ञ एवं ब्रह्मभोज हुआ। सायंकाल श्री राघवेन्द्र की सवारी नगर का परिभ्रमण करते हुए बाद में रावणवध हुआ। एकादशी को भरतमिलाप तथा द्वादशी को राजगद्दी की लीला दिखाई गई। जनता की भीड़ अपार थी। इसमें शिक्षित वर्ग का विशेष सहयोग था।

—सुरेन्द्र कुमार

विविध समाचार

शेगाँव:—सोमवती अमावस्या को २८ सदस्यों द्वारा अखंड पारायण हुआ। समाप्ति पर कीर्तन हुआ।

—विष्णुदास साधु

दातमा ईस्ट कालरी:—कार्तिक शुक्ला १५ को श्रीरामराव जी क्लर्क की ओर से सामूहिक पाठ, हवन पद्धति सहित हुआ।

—नरसिंहदास वैष्णवाचार्य

छपरा:—श्री हरिहर क्षेत्र मेला के अवसर पर कार्तिक पूर्णिमा को कालीघाट मंदिर में ज्योतिषाचार्य पं० रामनजर शर्मा मानसी के आचार्यत्व में अखण्ड पाठ हुआ। श्री हनुमान चालीसा का पाठ तथा नाम जप हुआ। अन्त में आरती, विनयपद हुए।

पटना:—मिर्दाहा टोली स्थित श्री महावीर स्थान में प्रति मास शुक्ल पक्ष की एकादशी तथा पूर्णिमा को अखण्ड पाठ होता है। रीठीताल स्थित श्री महावीर स्थान और गुड़ की मंडी स्थित श्री अमरदास की ठाकुरवाड़ी में प्रत्येक पूर्णिमा को अखण्ड पाठ होता है। पाठकाल में सर्वत्र श्री हनुमान चालीसा का पाठ और जप होता है।

—रामदेव

इन्दौर:—सर्व श्रीधन्नालाल जी शर्मा व्यास कला, गुलाबचन्द्र जी पाठक, पाटनीपुरा, रतनलाल जी शर्मा वजिलपुर, हरनारायण जी चवेर कुमावतपुरा, सूरजप्रसादजी पंचोरी पाटनीपुरा में सुन्दर काण्ड का पाठ तथा कई स्थानों में श्री पं० गौरीशंकर जी द्विवेदी द्वारा मानस पर प्रवचन भी हुआ। सर्व श्री रामदयाल जी पक्कीचाल में २४ घंटे का अखण्ड पाठ, रेवांशंकर जी काशिव, राव जी बाजार में २ घंटे का पाठ तथा अंतरसिंह जी पानेर के यहाँ २४ घंटे का अखंड पाठ हुआ।

—सुन्दरलाल तिवारी

परौंख:—ता० ११-११-५२ को श्री हनुमान चालीसा के ११ पाठ तथा २० सदस्यों द्वारा रामायण गान हुआ। ता० १८-११-५२ को श्री हनुमान चालीसा का पाठ तथा १२ सदस्यों द्वारा रामायण गान हुआ। समाप्ति पर मानस कंठाग्र योजना, मानस अन्ताक्षरी, आरती एवं प्रसाद वितरण हुआ।

—कुँ० धनसिंह भदौरिया

बन्देमऊ:—श्रावण शुक्ल ११ को अखंड पाठ तथा कीर्तन हुआ। श्रावणी को चन्द्रग्रहण पर १५ सदस्यों द्वारा शिवपार्वती विवाह के १५ दोहों का विवेचन हुआ। भाद्रपद १३ को १०८ पाठ श्री हनुमान चालीसा के तथा बालकाण्ड के दोनों का विवेचन हुआ।

—राजाराम वर्मा

डुमरिया:—ता०११-११-५२ मंगलवार अगहन कृष्ण ९ को श्री कमलेश्वरी चरण मिश्र ने अपनी स्वर्गीय पत्नी के वार्षिक श्राद्ध के अवसर पर २४ घन्टे का अखण्ड कीर्तन अखंडदीप जलाकर हुआ। दूसरे दिन भैगरा ग्राम के सुविख्यात 'श्री पति शिव संकीर्तन मंडल' ने पूर्णाहुति दी।

—राजेश्वर मिश्र 'राजेश'

बलवाड़ा:— ता-१६-८-५२ से २८-८-५२ तक श्री मानस का अहर्निशि पाठ हुआ। समाप्त पर हवन, प्रसाद तथा ब्राह्मण भोजन हुआ और रामवन को ७) सहयोग प्रदान किया गया।

—नारायण दुबे

बांदा—श्रीहाटकेश्वर जी के मन्दिर में ता-२७-११-५२ को ५ बजे से ७ तक सामूहिक कीर्तन द्वारा कीर्तन वार्षिकोत्सव मनाया गया। बाद में भजन हुआ।

—लक्ष्मणकरण

उमरेठः—ता-२४-१०-५२ से १-११-५२ तक १४ सदस्यों द्वारा पारायण, ता-३-११-५२ से १६-११-५२ तक गर्ग संहिता का वाचन ता-१८-१२-५२ से २४-११-५२ तक पारायण ११ साधकों द्वारा और ता-२५-११-५२ से १-१२-५२ तक भागवत परायण हुआ।

—मंगुभाई मंछाराम

आसराः—श्रावण अमावस्या से मार्गशीर्ष बदी ६ तक सटीक मानस का पाठ हुआ। अन्तिम दिन श्री सत्यनारायण जी की कथा हो कर प्रसाद वितरण किया गया।

—घासीराम

बिलारीः—कार्तिक कृष्ण ८ से अगहन बदी २ तक नवाह पाठ अर्थ सहित हुआ। पंडित श्री जगदीश प्रसाद जी का प्रवचन हुआ। २ को हवन एवं प्रसाद वितरण हुआ।

—तातीराम साव

नगरियाइटावाः—श्री पं० कन्हैयालाल जी पांडे के यहाँ भारती आश्रम में, अछल्दा इटावा में पं० पन्नालाल, श्री पालीवाल के यहाँ मानस का पाठ हुआ। अन्त में हवन, ब्राह्मण भोजन कीर्तन तथा प्रसाद वितरण किया गया।

— देवी प्रसाद गौड़

रामवन समाचार

मानस आश्रमः—नवम्बर मास में मानस का एक सम्पूर्ण पाठ नित्य होता रहा। इस मास में श्री मारुति रागभोग में २०५॥)॥ खर्च हुआ और आय ३३≡)। हुई। १७२।-)। की कमी रही। मानस आश्रम में १८५॥)॥ खर्च हुआ और आय १६५-)। हुई। २०।≡) की कमी रही। कुल कमी १६२॥।)॥ की रही। पिछली कमी ६१६॥।) सहित अब कुल कमी ८०६॥)॥। की रही। आशा है प्रेमीजन इसे पूर्ण करेंगे।

मानस आश्रमः—

७-११-५२

१।) श्री खेमसिंह मंत्री खेडसरा

८-११-५२

१२॥) श्री लक्ष्मण गोपाल काकड़े, खरोरा

१७-११-५२

५१) श्री रामगोपाल बया, सतना

२८-११-५२

१००) श्री शिवभजन चोखानी, डिब्रूगढ़

।-)। चढ़ोत्री

१६५-)।

श्रीमारुति रागभोग

४-११-५२

५) श्री ठा० सुरेन्द्र प्रसाद गर्ग, जयपुर

५-११-५२

२) श्री छोटेलाल अग्रवाल, इलाहाबाद

७-११-५२

५) श्री रामकिशोर, लाहरपुर

८-११-५२

२≡)। श्री गोपाल लाल, सतना

१२-११-५२

२) श्री कुँ० धनसिंह भदौरिया, परौंख

१४-११-५२

२।) श्री बेनीप्रसाद दुबे, कटनी द्वारा सर्व

,, द्रोपदीबाई १।), रामशंकर १)

१७-११ ५२

७) ,, भीमराज ज्वालाप्रसाद, सतना

२१-११-५२

४।) श्री सुन्दरलाल तिवारी, इन्दौर

२६-११-५२

१।) ,, रघुराज वन पटवारी, मरोद

२८-११-५२

२) ,, राजबहादुर सक्सेना, झांसी

३३≡।) कुल। दाताओं को धन्यवाद!

श्रीराम संस्कृत विद्यालयः—नवम्बर मास में २६३-)। खर्च हुआ। पिछली कमी ५०९-) सहित अब ८०२=)। की पूर्ति करना बाकी है। यह भावी मानस आश्रम पर ही है।

पारायण मंदिर :—नवम्बर मास में श्री सीताराम पण्ड कं० फैजाबाद से ५) प्राप्त हुए १६-)॥ में यह घटाकर अब ११-)॥ की पूर्ति करना बाकी है।

कुटीर विभाग

सेंधवा कुटीरः—में ६६।।-)॥ खर्च हुए। ४६) जमा थे। अब ५०।-)॥ बाकी रहे। इसमें अब भी काम बाकी है।

कोरी कुटीरः—नवम्बर मास में ३०) प्राप्त हुए। और २८५=)। खर्च हुए। पहिले के जमा ३६८।≡)। में अधिक खर्च हुई रकम २५५=)। घटाने से अब ११३-) जमा रहा। दिसम्बर मास में इसमें अधिक काम होगा।

१७-११-५२

५) श्री मंगलीप्रसाद कोरी, कुढ़ौल

२०-११-५२

८) श्री घसीटे कोरी, सिलहरा द्वारा (सर्व-श्री कालीचरन, २) पुल्ला, १) बल्लू १) भोला, १) जियालाल, १) डनकू २)

७) श्री पुत्तीलाल ५) श्री रामेश्वरलाल, २) विरमा

५) श्री बद्रीलाल झब्बूलाल, कुवापुर

५) श्री होरीलाल कोरी, हिमापुर

३०)

नर्मदाखंड कुटीरः—नवम्बर मास में ७) प्राप्त हुये और ४।-) खर्च हुआ। पहिले की बाकी १८६।≡)।।। में २।।≡)घटाकर अब १८६।।।)।।। की पूर्ति करना बाकी है।

१२-११-५२

५) श्री ठा० आनन्दसिंह पटवारी, पुटपुरा

२) ,, पं० अम्बिकेश्वर पति त्रिपाठी, अयोध्या

७)

श्री रामनाम मन्दिरः—नवम्बर मास में ७८।।=)। खर्च हुए। पिछली कमी ७५६।=) सहित ८३५)। आना बाकी है। दूसरे विभाग में १।।।) श्री बेनी प्रसाद दुबे, कटनी द्वारा प्राप्त हुए है। पिछली बचत २१२॥) सहित २१४) जमा रहे।

श्री तुलसी मन्दिर—पूर्ववत् ३४।)।।। जमा है।

पाकशालाः—नवम्बर मास में ५५१≡)।। खर्च हुए। ४३६≡)। जमा थे। इस प्रकार ११५) अधिक खर्च हुए।

श्री राम संस्कृत विद्यालय भवनः—नवम्बर मास में ८८५) प्राप्त हुए। पिछली बचत ३६।।।=)।।। सहित ८६४।।।=)।।। जमा हैं। इसमें शीघ्र काम लगाने का विचार है।

६-११-५२

२०१) श्री भाऊ राम जोघराज जी, डिब्रूगढ़

२०१) ,, जुहारमल मुरलीधर जी, माकूमजंकशन

२०१) ,, हनुमान बकश केशरदेव चौधरी, डिग-बोई

१७-११-५२

५०) श्री सतना स्टोन लाइम कं० सतना

२८-११-५२

१०१) " रामलाल ओंकारमल, पोआई

१०१) " मांगीलाल सीताराम जाजोदिया, नोगांव

———

८५५)

मानस प्रचारः—नवम्बर मास में सदस्य शुल्क में १२१।।।-) की आय हुई। खर्च कार्यालय में १५१।=)।। पत्र व्यवहार के ८६)। और मानस प्रचार में १४=)।।। कुल २५४।-)।। हुआ। इस मास की कमी १३२।।।)।। पिछली बचत १४१।=)।।। में से घटाकर अब ८।=)। की बचत रही।

श्रीतुलसी संग्रहालयः—के लिये श्रीव्योहार राजेन्द्र सिंह जबलपुर ने मानसुधा तथा कुँ० श्री धनसिंह भदौरिया परौंख ने १ श्री वेदान्त-तरंगिणी २-आनन्द की लहरें ३-ध्यानावस्था में प्रभु से वार्तालाभ, पुस्तकें भेजने की कृपा की है।

श्री रामनाम लड्डूः—नवम्बर मास में ६३३ लड्डू तैयार हुए जिसमें १५० श्री मारुति जी को समर्पण हुए। बाकी अक्षयतृतीया के लिए रखे गये हैं। केन्द्रों की स्थिति इस प्रकार है—गुलजारबाग पटना-५०४, करकेड़ी ३५८, जबलपुर २४१, सादीगढ़ १८५, रामवन १६६।

मानस यज्ञः—अक्टूबर तथा नवम्बर मास में मानस यज्ञ के लिये २७४ प्राप्त हुए। अबतक कुल ५५ साधकों की स्वीकृत आचुकी है। आशा है शेष ७० नाम भी शीघ्र लिखे जाँयगे।

६-१०-५२

२५) श्री रामचन्द्र गाँधी, सूरत

२८-१०-५२

२५) " भागवतप्रसाद पाण्डेय, विरार

११-११-५२

४६) " रामचन्द्र शर्मा, कन्ट्रेक्टर, तितलागढ़

२५) " रामप्रसाद पोद्दार, देहली

१४-११-५२

२५) " रामपूजन तिवारी, कलकत्ता

१८-११-५२

२५) चौधरी श्री रामनारायण जी, देवरी

१६-११-५२

१५) " चम्पालाल द्वारकाप्रसाद, कलकत्ता

२४-११-५२

२५) " नन्दकिशोर जी, दिल्ली

२५) " ओमप्रकाश जी, "

२५) " विशन स्वरूप जी माथुर दिल्ली

———

२७४)

———

मानससङ्घ द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

श्री महेन्द्र पुस्तकमाला

२—श्री रामचरितमानस में वीर रस (श्री शारदा प्रसाद जी) ।-)

३—ध्यानके समय ए.क.जे. अलेक्जराडर)॥≡)

४—श्रीरामचरितमानस में माता सुमित्रा (श्री सुदर्शन सिंह जी) ≡)॥

५—समुझाई (मानस राजहंस पं० श्री विजयानन्द त्रिपाठी) ॥)

६—श्री रामचरितमानस में महाराज जनक (वेदान्तरत्न रामायण-भूषण श्री अवध किशोर दास जी श्रीवैष्णव) ।-)

७—भक्त शबरी (पं० भागवत द्विवेदी आयुर्वेदाचार्य) ≡)॥

८—श्रीमानस पारायण पूजन विधि(वेदान्त-भूषण पं०श्री रामकुमार दास जी) ।=)

९—महासती अनसूया (पं०देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।-)

१०—ब्रह्मर्षि वसिष्ट (श्रीसुदर्शन सिंहजी) ।)

११—धर्मशीला कौशिल्या (पं० देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।-)

१२—स्नेहमयी कैकई (पं० देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।-)

१३—तुलसी मुक्तावली प्रथम किरण (श्री शम्भुप्रसाद बहुगुना, एम०ए०डिप०साइ० ।॥-)

१४—तुलसी मुक्तावली द्वितीयकिरण (श्री शम्भु प्रसाद बहुगुना एम० ए० डिप० साइ०) ।॥)

१५—मानस मूल (मानस राजहंस पं० श्री विजयानन्द जी त्रिपाठी) ॥)

१६—मानस-व्याकरण (श्री मानसराजहंस पं० विजयानन्द जी त्रिपाठी) २)

१७—सचिव सुमन्त्र(सुदर्शनसिंह) ।-)

१८—विवेकी विभीषण (सुदर्शनसिंह) ।)

१९—मानस महत्व (पं० भैरवानन्द) १)

श्री मानस-रत्नावली ग्रंथमाला

२—संगीत रामायण (द्वितीय संस्करण) =)

३—रामवन(श्री सुदर्शनसिंह जी 'चक्र') ।≡)

४—सार्थ श्री रामतारक प्रयोग विधि (महान्त श्री रामपदार्थ दास जी महाराज एवं वेदान्त भूषण पं० श्रीराम कुमार दास जी रामायणी) ॥)

५—कीर्तन मुक्तावली (पं० बाबूराम शर्मा) ॥-)

६—सब ग्रंथन को रस[रा० सा०हीरालाल] १)

श्री कौशलेन्द्र कथामाला

१—नव निर्झरिणी (नवधा भक्ति पर ९ कहानियाँ) (श्री चक्र) ।-)

२—अष्टदल (कहानियाँ) (श्री चक्र) ।=)

३—नूतन नवरत्न(कहानियाँ)(श्री चक्र)।=)

४—दिव्य दशमी (श्री चक्र) ।=)

५—मानस मन्दाकिनी प्रथम हिलोर (श्री चक्र) ।)॥

६— " " द्वितीय " (श्री चक्र) ।-)

७— " " तृतीय " (श्री चक्र) ।-)

रामदास भक्तमाला

१—महाभागवत चरित (पहिला भाग) (महात्मा श्री बालकरामजी विनायक) १)

२ महाभागवत चरित (दूसरा भाग) (महात्मा बालक रामजी विनायक) ।)

पीयूष प्रवाह

१—विश्व साहित्य में रामचरित मानस (काव्य समीक्षा) श्री राजबहादुर लमगोड़ा) १=)

२—श्री भगवन्नाम संकीर्तन (श्री सुदर्शन सिंह) -)॥

रजिस्टर्ड नं० —एन८७३

मानस संघ के विविध कार्य

१—वर्ष में श्रीरामचरितमानस का दो पाठ करने की प्रतिज्ञा करने वाले सज्जन मानस संघ के सदस्य बनाए जाते हैं। आजीवन शुल्क ॥) है। जहाँ नौ सदस्य हो जाते हैं, वहाँ शाखा बन जाती है। इस समय देश में मानस संघ के २६५०० सदस्य हैं और १३२५ शाखायें हैं।

२—रामचरितमानस का प्रचार एवं अध्ययन व्यापक करने के लिए यह 'मानस मणि' मासिक पत्र ग्यारह वर्ष से निकल रहा है। इस का वार्षिक मूल्य ३) है।

३—तुलसी साहित्य का प्रकाशन मानस प्रकाशन लिमिटेड द्वारा होता है। कम्पनी का प्रत्येक शेयर १०) का है। कम्पनी १६ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है। स्थायी ग्राहक शुल्क २) है। स्थायी ग्राहकों को प्रकाशित ग्रंथों पर २५ % कमीशन दिया जाता है।

४—श्रीरामचरितमानस पत्र व्यवहार विद्यालय द्वारा मानस संघ घर बैठे श्रीरामचरितमानस की शिक्षा देता है। विद्यालय का पाठ्य विषय तीन वर्षों का है और प्रथम वर्ष का शुल्क १०) है।

५—मानस आश्रम में नित्य अखण्ड मानस पाठ होता है। यहाँ रह कर साधक एकान्त में साधन भजन करते हैं।

६—तुलसी संग्रहालय भी रामवन में है।

७—मानस संघ राम नाम लड्डू लेखन का प्रचार करता है। ये लिखित रामनाम श्रीमारुति जी को अर्पण किये जाते हैं। २७ करोड़ अर्पित हो चुके हैं।

८—श्री राम संस्कृत विद्यालय में वाराणसेय-परीक्षा के पाठ्यक्रम के साथ मानस अध्ययन की भी सुविधा रखी गई है।

हर विभाग में आपका सहयोग अपेक्षित है।



'मानस मणि'

पो०—रामवन (सतन)

ग्रा० न०—

श्री सम्पादक जी गुरुकुल पत्रिका
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार
पो०- गुरुकुल कांगड़ी



सम्पादक—सुदर्शन सिंह

प्रकाशक—शारदा प्रसाद, मन्त्री, मानस सङ्घ, रामवन, (सतना)। मुद्रक—माधो प्रिंटिङ्ग वर्क्स, प्रयाग।

मानस मणि



१२

अशोक २

फरवरी १९५३
वार्षिक मूल्य तीन रुपया
[illegible] तीन रुपया छः आना

जिलों की शाखा मालायें

धन्य होशंगाबाद

मानस-मणि के अक्टूबर अंक में प्रकाशित स्थिति में जो परिवर्तन हुआ है वह इस प्रकार है।

जिला	कुल शाखायें	वृद्धि
विलासपुर	२०६	२
होशंगाबाद	१२४	५५
दुर्ग	६०	४
रायपुर	६५	२
हजारीबाग	३२	-
कानपुर	२६	८
छिंदवाड़ा	२६	४
रायगढ़	२६	-
रांची	२०	-
बलिया	१८	१

होशंगाबाद की अनुपम वृद्धि श्री कंज जी के अथक परिश्रम का परिणाम है। वहाँ की वास्तविक वृद्धि १०० शाखायें है। ४५ के फार्म आने वाले हैं। आशा है उनका वर्तमान क्रम बराबर चलेगा और अप्रैल या मई के अङ्क में हम उन्हें तहसील नरसिंहपुर की प्रथम शाखा माला तथा जिला होशंगाबाद की द्वितीय शाखा माला स्थापन पर बधाई दे सकेंगे। श्री कंज जी मानस प्रचार का झंडा लिये आगे बढ़ रहे हैं और जिला होशंगाबाद उन्हें पूर्ण सहयोग प्रदान कर रहा है। श्री कंज जी को बधाई और सहयोगी प्रेमियों को बधाई। प्रभु से प्रार्थना है कि एक वर्ष के अन्दर आपका जिला होशंगाबाद के व्यापक प्रचार का संकल्प पूर्ण करें।

जिला विलासपुर अपना प्रथम स्थान छोड़कर अब द्वितीय में आने वाला है। सबसे कितना आगे था यह जिला। अब भी औरों से बहुत आगे है पर प्रगति न होगी तो दूसरे तो आगे बढ़ेंगे ही। दुर्ग में अब शीघ्र शाखा माला पूर्त्ति का उद्योग होना चाहिये। ११ शाखाओं की ही तो कमी है शेष जिलों में कानपुर की प्रगति अच्छी है। आशा के विपरीत रांची ठंडा है। हर जिले में प्रगति आवश्यक है। होशंगाबाद के प्रेमियों ने अपने जिले को आदर्श बनाना निश्चित किया है। जिलों के प्रेमियों को भी ऐसा संकल्प करना चाहिये।

'मानस-मणि' की पुरानी फाइलें

निम्नलिखित फाइलें स्टाक में हैं। मंगाकर लाभ उठावें।

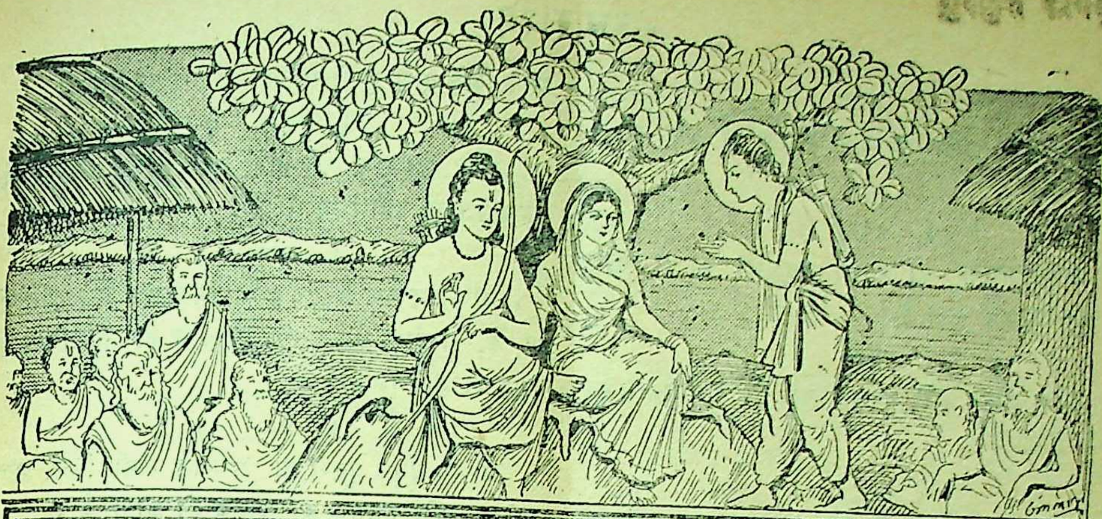
वर्ष २—३)   वर्ष ३—२॥)

वर्ष ५—२) वर्ष ६—२) वर्ष ७—३)

प्रत्येक आर्डर के साथ ।)रजिस्ट्री खर्च का मिलाकर रुपया मनीआर्डर से भेजें। फाइलें वी० पी० द्वारा नहीं भेजी जातीं। वर्ष १ तथा ४ की फाइलें स्टाक में नहीं हैं।

मँगाने का पता

मन्त्री
मानस संघ
पो०—रामवन जि० सतना
(विन्ध्य-प्रदेश)



मानस मणि

राम भगति मनि उर बस जाके दुख लवलेस न सपनेहु ताके
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं जे मनि लागि सुजतन कराहीं

मणि १२ | रामवन—फाल्गुन, मानस संवत् ३७६—फरवरी १९५३ ई० | आलोक २

मानस की सूक्तियाँ

नहिं असत्य सम पातक पुंजा । गिरि सम होंहिं कि कोटिक गुञ्जा ॥
सत्यमूल सब सुकृत सुहाये । बेद पुरान बिदित मनु गाये ॥

\+ + +

दुइ कि होइ एक सङ्ग भुआला । हँसब ठठाइ फुलाउब गाला ॥

\+ + +

तनु तिय तनय धाम धन धरनी । सत्यसन्ध कहँ तृन सम बरनी ॥

\+ + +

फिरि पछितैहसिं अन्त अभागी । मारसि गाइ नहारू लागी ॥

\+ + +

सुनु जननी सोइ सुत बड़भागी । जो पितु मातु बचन अनुरागी ॥
तनय मातु पितु तोषनि हारा । दुरलभ जननि सकल संसारा ॥

\+ + +

लागहिं कुमुख बचन सुभ कैसे । मगह गयादिक तीरथ जैसे ॥

\+ + +

धन्य जनम जगतीतल तासू । पितहि प्रमोद चरित सुनि जासू ॥
चारि पदारथ करतल ताके । प्रिय पितु मातु प्रान सम जाके ॥

(५६८)

दुष्ट एवं पापी के अन्न भक्षण से मन दूषित होता है।

(५६९)

ऊपरी बनावट की अपेक्षा सद्गुणों को ही बढ़ाने में कल्याण एवं सुख है।

(५७०)

सादा जीवन और उच्च विचार ही आत्मोन्नति की प्रथम सीढ़ी है।

(५७१)

यदि बात उचित है यह तुम्हारा मन स्वीकार करता है तो हठधर्मी ठीक नहीं।

(५७२)

लोगों के सम्मान और उनके दिये भोगों में मत पड़ो। ये तुम्हारा नहीं, तुम्हारे त्याग का आदर करते हैं। ऐसा न हो कि तुम उसे ही खो बैठो।

(५७३)

सावधान! 'इस काम के कर लेने में हानि ही क्या?' यह प्रवञ्चना है। मन धोखा देता है।

(५७४)

तुम विचार तो स्वतन्त्र रख सकते हो पर आचरण तो वही करना होगा जो समाज का है। क्योंकि यही बहुमत है। यदि ऐसा नहीं कर सकते तो समाज का दण्ड सहने को तत्पर रहो।

(५७५)

पापी में त्याग तो क्या आत्महत्या करने की भी शक्ति नहीं होती।

(५७६)

दुख मनुष्यत्व के विकास का साधन है। सच्चे मनुष्य का जीवन दुख में खिल उठता है।

(५७७)

ममता, आशक्ति और अहङ्कार ही दुखों के कारण हैं।

(५७८)

त्रिगुणमयी सृष्टि में निर्भयता और शान्ति कहां? इसके लिये तुम्हें गुणों से ऊपर उठना ही होगा।

(५७९)

सबसे बड़ा शत्रु मन है। पर इसे वश में कर लो तो यही सबसे बड़ा मित्र भी है।

(५८०)

जीवन मनुष्य के हृदय से निकलता है। वह जो था, है, या होगा सब उसके हृदय के ही प्रतिबिम्ब हैं, हृदय पर ही निर्भर हैं।

(५८१)

जहां सचमुच दूसरों का सम्मान नहीं किया जाता वहां धर्म और सद्गुण का अभाव हो जाता है।

(५८२)

दुख और अशान्ति बुरे विचार वाले का पीछा नहीं छोड़ते।

(५८३)

दैवी विधान के आचरण से ही मनुष्य देवताओं से भी श्रेष्ठ हो सकता है।

(५८४)

जो विश्वासघात करता है वह हत्यारे से भी बड़ा अपराधी है।

(५८५)

जो शब्द सच्चे हृदय से नहीं निकलता, उसका न निकलना ही अच्छा।

(५८६)

गिरने में गौरव नहीं। गिर कर भी उठ जाने में गौरव है।

(५८७)

सद्गुण शरीर के साथ नष्ट नहीं होते। वे अपने साथ व्यक्ति को भी अमर कर देते हैं।

(५८८)

ये मोक्ष के द्वार हैं—दान, पश्चात्ताप, संयम, सन्तोष, दीनता और सत्य।

(५८९)

सभी चलो चलो की पुकार करते हैं। पर कनक और कामिनी की घाटियों को कोई ही पार कर पाते हैं।

आर्ष गीता

सुदर्शन सिंह

(प्रथम भवन)

जिन्ह के श्रव समुद्र समाना।
कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना॥
भरहिं निरन्तर होंहि न पूरे।
तिन्हके हिय तुम कहँ गृह रूरे॥

तुम्हारी अनेक प्रकार की कथा रूपी सरिताओं के लिए जिनके कान समुद्र के समान हैं। उन कथाओं की सरिताओं से निरन्तर भरते रहने पर भी जो पूर्ण नहीं होते, जिन्हें कथा सुनने से कभी तृप्ति नही होती, जिन्हें तुम्हारी कथा सुनने की उत्कट प्यास सदा बनी ही रहती है, उनके हृदय तुम्हारे रहने के योग्य अत्यन्त सुन्दर भवन हैं।

नवधा भक्ति के वर्णन में चाहे आप 'श्रवण कीर्तन' में से 'श्रवण' को प्रथम भक्ति मानें या 'प्रथम भगति सन्तन कर संगा।' कहें, तात्पर्य दोनों का एक ही है। सन्तों के समाज में बराबर भगवद् गुणानुवाद होता रहता है।

'सतां प्रसङ्गान् ममवीर्य संविदो, भवन्ति हृत्कर्णरसायनाः—कथा,

भगवान की मंगलमय कथा सुनने में रुचि हो, यही समस्त धर्माचरण का परम फल है। श्री सूतजी ने बताया है—

धर्मः स्वनुष्ठितः पुंसां विष्वक्सेनकथासु यः।
नोत्पादयेद्यदि रतिं श्रम एव हि केवलम्॥

भली प्रकार अपने वर्णाश्रम धर्म का पालन करने पर भी यदि श्री हरि की परम मनोहर मंगलमय कथा सुनने में रुचि न उत्पन्न हुई तो उस धर्म का पालन करने से केवल परिश्रम करना ही पुरुष के हाथ लगा।

अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष ये चार पुरुषार्थ पुरुष के लिए कहे गये हैं। इनमें भी अर्थ और धर्म कोई स्वतन्त्र पुरुषार्थ नहीं हैं। अर्थ स्वयं प्रयोजन नहीं हैं। उसका प्रयोजन या तो कामनाओं की तृप्ति के लिए है या धर्म के लिए। इसी प्रकार धर्म का प्रयोजन भी या तो स्वर्ग सुख रूप लोकान्तर में कामनाओं की प्राप्ति के लिए है या अन्तःकरण की शुद्धि करके मोक्ष का हेतु बनने के लिए। स्वतन्त्र पुरुषार्थ हैं काम और मोक्ष। इनमें काम पतन का कारण है और अज्ञानी, अविचारी, पामर लोगों का पुरुषार्थ है वह। उसमें तृप्ति नहीं है। केवल क्लेश, श्रम और अशान्ति ही उसमें है। जो भी विचारशील होगा उसे मानना पड़ेगा कि मनुष्य का सच्चा पुरुषार्थ केवल मोक्ष है। मोक्ष की प्रप्ति होती है चित्तकी पूर्णतः शुद्धि होने पर। वैसे तो चित्तशुद्धि के अनेक साधन हैं; किन्तु भगवत्कथा श्रवण जैसा सुगम साधन दूसरा कोई भी नहीं है।

पिबन्ति ये भगवत आत्मनः सतां,
कथामृतं श्रवणपुटेषु सम्भृतम्।
पुनन्ति ते विषयविदूषिताशयं
व्रजन्ति तच्चरणसरोरुहान्तिकम्।

जो सत्पुरुष अपने कानों के द्वारा भगवान की कथा रूप अमृत का पान करते हैं, उनका विषयों से दूषित चित्त पवित्र हो जाता है और वे भगवान के चरण कमलों के पास पहुँच जाते हैं।

श्वविड्वराहोष्ट्रखरैः संस्तुतः पुरुषः पशुः।
न यत्कर्णपथोपेतो जातु नाम गदाग्रजः॥

वह पुरुष तो पशुओं में भी कुत्ता, विष्टाकीट, ग्रामसूकर, ऊँट या गधा है, जिसके कानों में भगवान का मंगलमय नाम नहीं पहुँचा।

निवृत्ततर्षैरुपगीयमानाद्,
भवौषधाच्छ्रोत्रमनोभिरामात्।

क उत्तमश्लोकगुणानुवादात्,
पुमान् विरज्येत विनापशुघ्नात्
१०।१।४

वीतराग आत्माराम आप्तकाम वासनाहीन महापुरुष भी जिसका निरन्तर गान करते हैं, जो संसार रूपी रोग की एक मात्र महौषधि है और इतना होने पर भी जो कानों को और मन को भी अत्यन्त प्रिय लगती है, उत्तम श्लोक भगवान की उस यशोगाथा को सुनने से भला कौन अपने को अलग रख सकता है। ऐसा तो केवल आत्म हत्यारा ही कर सकता है।

संसारसिन्धुमतिदुस्तरमुक्तितीर्षोर्नान्यः,
प्लवो भगवतः पुरुषोत्तमस्य।
लीला कथारसनिषेवणमन्तरेण,
पुंसो भवेद् विविधदुःखदवार्दितस्य॥
१२।४।१०

यह संसार बड़ा ही अद्भुत समुद्र है। इसमें डूबता उतराता प्राणी अनन्तकाल से नाना प्रकार के दुःख रूप दावाग्नि में अहर्निश झुलस रहा है। ऐसे प्राणी के लिये इस भयंकर भवसागर से पार होने के लिये भगवान पुरुषोत्तम की लीला कथा के रस का सेवन करना ही एक मात्र नौका है। दूसरा कोई भी उपाय उसके लिये इस क्लेश के दावानल से निकलने का नहीं है।

श्रीमद्भागवत के ये श्लोक किसी व्याख्या की अपेक्षा नहीं करते। लेकिन बात भगवत्कथा सुनने मात्र की नहीं है। महर्षि वाल्मीकि श्रीराम को निवास बतला रहे हैं--ऐसा निवास जहां अनुज जानकी सहित प्रभु कुछ काल निवास कर सकें। 'यदा कदा कथा भी सुन आते हैं,' वाले सज्जनों का हृदय तो वह निवास हो नहीं सकता। वह निवास तो उनका हृदय होगा- 'जिनके स्रवन समुद्र समाना।' हैं कथा सुननेके लिये जिनमें समुद्र जैसी गम्भीरता है और वैसी ही क्षोभ रहित निश्चलता भी है।

'कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना'।

समुद्र कभी अस्वीकार नहीं करता किसी छोटी नदी को अपने में मिलाने से। नदी छोटी हो या बड़ी, उथली हो या गहरी, आती जाय और मिलती जाय। न वहाँ 'ना' है, न बस है। ऐसे ही जो नहीं देखते कि वक्ता विद्वान है या नहीं, कथा की भाषा लच्छेदार है या नहीं, हँसाने-रुलाने की कला है या नहीं कथा में जिन्हें यह आग्रह भी नहीं कि भगवान के अमुक अवतार की कथा हो और अमुक की नहीं। केवल भगवान की कथा हो, सांसारिक वार्ता न हो—बस; फिर जिनके कान बराबर सुनने को प्यासे रहते हैं, जिन्हें न आलस्य आता और न ऊबना आता, जो सुनना चाहते हैं-बराबर सुनने को उत्सुक रहते हैं, कोई बालक-वृद्ध-विद्वान-मूर्ख पढ़ा-अनपढ़ा उन्हें भगवान की कथा भर सुनावे। ऐसे श्रवननिष्ठ भक्तों के हृदय ही श्रीराम के सुन्दरतम सदन हैं। श्रीमद्भागवत में श्रवण की ऐसी उत्कट निष्ठा आदिराज महाराज पृथु में वर्णित है। वे भगवान से वरदान मांगते हुये प्रार्थना करते हैं—

न कामये नाथ तदप्यहं क्वचिन्,
न यत्र युष्मच्चरणाम्बुजासवः।
महत्तमान्तर्हृदयान्मुखच्युतो,
विधत्स्व कर्णायुत मेष मे वरः॥
—४।२०।२४

मेरे स्वामी! मुझे ऐसी किसी वस्तु या स्थान की कामना नहीं जहां आपके श्री चरणों से झरता वह अमृत जो महापुरुषों के हृदय से उनके मुख के द्वारा निकला न करता हो अर्थात् जहां सन्त सत्पुरुष निरंतर आपके अमृत रूप लीला चरितों का वर्णन न करते हों। प्रभो, आपकी वह अमृतमय कथा सुनने के लिये मुझे एक सहस्र कान (मेरे कानों में सहस्र कानों की शक्ति) दे दीजिये. यही वरदान चाहिये मुझे!

———

विजय

(श्रीपान्डे जी पोस्टमास्टर)

बात यथार्थ थी रावण ने प्रथम ही स्पष्ट कह दिया था कि - अरे तपस्वी सुन :—

जीतेहु जे भट संजुग माहीं ।
सुन तापस मैं तिन सम नाहीं ॥
रावन नाम जगत जस जाना ।
लोकप जाके बंदी खाना ॥

जिन योद्धाओं को तुमने युद्ध में जीता है मै उनका सा नहीं हूँ मेरा नाम रावण है सारा संसार जिसके यश को जानता है जिसके बंदी खाने में लोकपाल पड़े हैं 'रावण नाम' मात्र कि जगत मात्र को रुलाने वाला मैं हूं ......

विभीषण भाई के बल को जानते थे अतः राम दल की त्रुटियों को देखकर अधीर हो उठे ।

रावन रथी विरथ रघुवीरा ।
देखि विभीषन भयउ अधीरा ॥

विभीषण को यद्यपि प्रभु के ऐश्वर्य का ज्ञान था उन्होंने रघुनाथ जी से भेट होने के पहिले ही महाभिमानी रावण से कह रखा था कि :—

तात राम नहिं नर भूपाला ।
भुवनेस्वर कालहु कर काला ॥
ब्रह्म अनामय अज भगवंता ।
व्यापक अजित अनादि अनन्ता॥

फिर भी माधुर्य्य ने ऐश्वर्य ज्ञान पर विजय पाई और विभीषण वास्तव में अधीर हो उठें ।

नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना ।
केहिविधि जितब बीरबलवाना ॥

हे नाथ न तो रथ है न तन की रक्षा करने वाला कवच है न पद रक्षक जूता ही हैं फिर महा बलवान वीर रावण किस प्रकार जीता जायगा—भक्त विभीषण को अधीर देख कर भक्तवत्सल प्रभु बोले—

सुनहु सखा कह कृपा निधाना ।
जेहि जयहोय सो स्यंदन आना ॥

करुणा सागर ने कहा, हे सखे तुम्हारा विषाद व्यर्थ है । इन भौतिक रथों से विजय नहीं होती । जिस रथ से विजय श्री की प्राप्ति होती है वह रथ और ही हैं...

सौरज धीरज जेहि रथ चाका ।
सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका ॥
बल विवेक दम पर हित घोरे ।
छमा दया समता रजु जोरे ॥
सखा धर्म मय अस रथजाके ।
जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताके ॥

....

महा अजय संसार रिपु जीति सकै सो बीर ।
जाके अस रथ होय दृढ़ सुनहु सखा मति धीर ॥

हे सखे जिस वीर के पास ऐसा दृढ़ रथहो वह महा दुर्जय संसार शत्रुओं को जीत सकता है रावणादि को जीतना क्या बात है । तात्पर्य यह है कि शस्त्रबल और जन बल से विजय श्री प्राप्त नहीं होती, इसे चाहिये आत्म बल, नैतिक बल ......

पिछले योरोपीय युद्ध में जर्मनी की पराजय उसके शत्रुओं के बल से नहीं हुई, बल्कि अपने नैतिक पतन से हुई - भारत की विजय श्री का कारण है उस का आत्मबल व नैतिक बल, और यदि ये बल स्थायी बनें रहें तो उस करुणा वरुणालय का आशीर्वाद ही समझिये —

सखा धर्म मय अस रथजाके ।
जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताके ॥

स्मरण रहे कि जिस राष्ट्र, जाति या व्यक्ति का अधः पतन होता है उसका सर्वप्रथम नैतिक पतन होता है अन्यथा हो नही सकता

बोलिये भक्त और भगवान की जय ।

पूज्य गोस्वामीजीका भक्ति दर्शन

[श्री पं० जानकी नाथ जी शर्मा]

पूज्यपाद, प्रातःस्मरणीय, कलिपावनावतार, सत्कुल कमल दिवाकर गुरुवर्य श्री गोस्वामी जी महाराज त्रिगुणातीत, स्थित प्रज्ञ परम भक्त, महा भागवत तथा अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि के सन्त थे। आपकी बुद्धि सर्वथा, निर्मल, शुद्ध, भ्रम प्रमादादि दोष विनिर्मुक्त अथच व्यवसायात्मिका निश्चयात्मिका—ऋतंभरा प्रज्ञा सम्पन्न थी। आपके बुद्धि वैभवका पता आपके ग्रन्थों में आये हुए प्रखर तर्कों तथा दिव्य अचिन्त्याद्भुत लोकोतम विवेक युक्त सदुपदेशों से लगता है। आपकी प्रतिभा तथा बुद्धि की कुशाग्रता देख कर मुझसा साधारण जीव तो बस हतप्रभ रह जाता है। अपनी अबाध, दिक्दृष्टि का निश्छल सात्विक शब्दों में स्वयं आपने भी वर्णन करते हुए लिखा है—

'श्री गुरु पद नख मनिगन जोती।
सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती॥'
दलन मोह तम सो सुप्रकासू।
बड़े भाग उर आवइ जासू॥'

ऐसा लगता है कि आप का मन बराबर

जानिय तब मन विरुज गुसाई।
जब उर बल बिराग अधिकाई॥
सुमति सुधा बाढ़ै नित नई।
बिषय आस दुर्बलता गई॥'

की पुनीत दशा में रहता था और सर्वथा नित्य नवीन सुमति उत्पन्न होती रहती थी। आपकी पीयूष वर्षिणी वाणी में सन्देह की तो कहीं गुंजाइशही नहीं। वह तो सर्व सन्देह भेदिका है और भवभन्जन गञ्जन सन्देहा की उस पर जबरदस्त मुहर है। भक्ति के गण्य मान्य आचार्य भूर्धन्यों में आपका स्थान बड़े महत्त्व का है और आपकी प्रायः सभी पुस्तकें विशेषतया विनय पत्रिका और रामचरित्रमानस तो'भक्ति मीमांसा दर्शन' ही हैं।

भक्ति की महत्ता

यतीन्द्र श्री मधुसूदन सरस्वती न बड़े ही अद्भुत आकर्षक, सरस शब्दों में अपने भक्ति रसायन में कहा है "नवरस मिलिनं वा केवल वा पुमर्थं परममिह मुकुन्दे भक्ति योगं वदन्ति। निरुपम सुख संविद्रूपमस्पृष्ट दुःखं, तमहमखिल तुष्टये शास्त्र दृष्ट्या व्यनज्मि। अर्थात् भक्ति शृंगारादि रसों में कौन सा रस है। या धर्मादि पुरुषार्थ चतुष्टयों में वह कौन पुरुषार्थ है तो कहते हैं कि यदि श्रंगार, वीरादि नवों रसों को एक में मिला दिया जाय तो वह भक्ति रस होगा और धर्म, काम, अर्थ मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों को भी एक में मिला दिया जाय तो फिर भक्ति पुरुषार्थ का रूप होगा। पूज्य गोस्वामी जी ने भी रामभगति रस सिद्धि हित, भा एहि समय गणेश कह कर इस भाव का ध्यान कराया है।

भक्ति की परम पुरुषार्थता के प्रमाण में,

'न ध्यतोऽन्यः शिवो पन्था विशनः संसृताविह।
वासुदेवे भगवति भक्ति योगः प्रयोजितः।
(श्री मद् भागवत २।२। ३३)

'भवक्त्याऽहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयात्मा प्रियः सताम्।
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि संभवात्।
(भाग ११।१४।२१)

भक्त्यात्वनन्यया शक्यअहमेवं विधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप। गीता ११।५४

ये गीता तथा भागवत के वचन प्रमाण हैं। गोस्वामीजी ने भक्ति मणि की जो छवि खींची है,

वह प्रत्येक मानस पाठी जानता है। पर गोस्वामीजी का भक्ति दर्शन एक अत्यन्त वैचित्र्य लिये हुए है और वह विचित्रताहै भक्तिमें दैन्य की, जो वस्तुतः सर्वथा पाप ताप से मुक्त होने तथा प्रभु के मंगलमय, वरद चरणों के पास पहुँचने की सर्वोत्तम सरणि है।

भक्ति में दैन्य

आत्म शुध्यर्थ, तप की, कष्ट सहने की परमावश्यकता होती है और एतदर्थ ही नाना विध उपवास, तीर्थयात्रा, यम, नियमादि साधन समुदायों का अनुष्ठान किया जाता है, किन्तु इनमें यदि भगवत्स्मरण तत्त्वगोष्ठी सनादि का योग दे दिया जाय तो अत्यन्त सरसता तथा मधुरता आ जाती है इससे अनेक जन्मों की संचित पापराशि नष्ट हो जाती है। कभी कभी काल विपर्यय हठात्, अनिच्छा होते हुए भी आधि, व्याधि, शोक,मोह, जरा क्षुत्पीपासादि अच्छे संकटों का सामना करना पड़ता है। ऐसे समय में प्रभु के चरणों की शरणागति में स्वतः ही दैन्य का आविर्भाव होता है। वस्तुतः दैन्य का आविर्भाव तो तब ही हो जब कभी उसे विश्वके प्राणियों में सभीसे सभी प्रकार - नीचा दीखना पड़े - यद्यपि अद्योतमम् पश्यतः लोके कस्य महिमा न जीर्यते ' के नाते ऐसा मौका मिलना दुष्कर हैं फिर भी वैसी समझ होने की संभावना तो हो ही सकती है। ऐसी परिस्थिति में भी यदि जीव सन्तुष्ट हो सके और उसे स्वंय वरण कर उसी में प्रसन्नता मानता हुआ प्रभु का प्रेम पूर्वक स्मरण, भजन, नमन, श्रवण कीर्तनादि करता चले तो यह परमोत्कृष्ट कोटि की भक्ति होती है। इसी को लक्ष्य कर गोस्वामीजी ने - कियेउ कुवेष साधु सन्मानू। जिमि जग जामवन्त हनुमानू॥ रहहि अपनपौ सदा दुराये। सब विधि कुसल कुवेष बनाये॥ तेहिते कहत सन्त श्रुति टेरे। परम अकिंचन प्रिय हरि केरे,, आदि चौपाइयां लिखी हैं। श्री काकभुशुण्डि तथा भगवान शंङ्कर को भी आपने दैन्य प्राधान्य माना है और जेहि सुख लागि पुरारि अशुभ वेष कृत शिव सुखद ' आदि बातें लिखी हैं। अपने को तो आप सर्वोपरि दीन मानते ही थे -- 'मो सम दीन न दीन हित, तुम समान रघुवीर।' 'तुलसी त्रिकाल तिहुँ लोक तोसो दीन को। राम नाम ही की जाति जैसे जल मीन को। आदि वचन तो उनके स्वाभाविक उद्गार थे जिनकी सर्वत्र भरमार है।

भक्ति में ज्ञान वैराग्य का सामंजस्य

गोस्वामीजी के मतानुसार भक्ति ज्ञान वैराग्य की जननि है - यह जेहि आधीन ज्ञान विज्ञाना ' आदि वचनों से सिद्ध है। वैराग्य हीन भक्ति को वे महत्व नहीं देते - राम चरनपंकज रति जिनहीं। विषय भोगि बस करैं कि तिनहीं। 'रमा बिलास राम अनुरागी। तजत वमन जिमि जन बड भागी आदि शब्दों से ' ''बाधमोऽपि......मद्भक्तः विषयैरभिभूयते का स्पष्ट ही समर्थन होता है और प्रकृष्ट दैन्य के अन्तर्गत इसका अन्तर्भाव होजाता है। पूज्य गुरुदेव के मतानुसार प्रभु जिस पर कृपा दृष्टि से वीक्षण करते हैं, उसे संभोगों को प्राप्ति ही नहींहोने देते यह उन्होंने नारद विवाह'की आख्यायिका से सिद्ध किया है, और नारद-राम के प्रश्नोत्तर—तब विवाह मैं चाहउँ कीन्हा। प्रभु केहि कारन करै न दीन्हा, 'करउं' सदा तिन्हकै रखवारी से लेकर ताते कीन्ह निवारन मुनि मैं यह जिय जानि तक' से भी निरूपित किया है।

भक्ति में मान प्रतिष्ठा का सर्वथा त्याग

पूज्य गोस्वामी जी के अनुसार भगवान अपने भक्त को मान प्रतिष्ठादि से भी मुक्त रखते हैं—'लोक मान्यता अनलसम कर तप कानन दाहु' से प्रतिष्ठा की हेयता तो ये दिखलाते ही हैं 'तिमि रघुपति निज दास कर, हरहिं मानहित लागि' से इसका स्पष्ट ही प्रतिपादन करते हैं। यदि मान प्रतिष्ठा प्राप्त हो तो दैन्य का कुछ अर्थ ही न रहे। भक्त को तो सर्वथा तृणादपि सुनीच तरु से भी सहिष्णु होना चाहिये। भले ही

जनको यह बुरा लगे पर प्रभु बच्चे के व्रण की नाईं उसे चिरवा ही डालते हैं।

भक्ति में नम्रता तथा सुहृदता

भक्त को सर्वथा मद-मान विहीन होना चाहिये साथ ही अन्यों के प्रति नम्रता का भाव भी। 'सबहिं मान प्रद आपु अमानी। अमानी मामको नित्यं का यही भाव है। इसकी साधना बनती है। मनसैतानि भूतानि प्रणमेद बहु मानयन्। ईश्वरो जीव कलया प्रविष्टो भगवानिति। 'सरित्समुद्रश्च हरेः शरीरं यत्किंचभूतं प्रणमेदनन्यः प्रणमेद्दण्वद्भूमौ अश्व चाण्डाल गो खरम् मैं सेवक सचराचर रूप राशि भगवन्त। निजप्रभु मय देखहि जगत् आदि द्वारा। इसमें प्रभु का भक्त सम्पूर्ण सचराचर को देव दनुज नर नाग खग, सकल राम मय जानि। बन्दौं सबके पद कमल सदा जोरि जुग पानि हाथ जोड़ कर प्रणाम करता है साथ ही सभी प्रकार सेवा करता है और सबोंसे अपने को तुच्छ मानता है। संक्षिप्त में अत्यल्प हैं।

भक्ति में सरलता

सर्वथा निश्छल हृदय होना भी भक्त के लिए परमावश्यक है। निर्मलमन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा। मन क्रम वचन छाड़ि चतुराई। भजतहि कृपा करहि रघुराई आदि वचनों से पूज्य गुरदेव जी सूचित करते हैं। भिद्यते हृदयग्रन्थिः आदि श्रुतियों में भी तत्वज्ञ भक्त के लिए निश्छल हृदय की बात कही गयी है। यही संक्षेप में गोस्वामीजी का भक्ति दर्शन है जिसमें हीनता सरलता सर्वभूतमैत्री विरति पूर्वक भगवान की आत्यन्तिक प्रीति की बात कही गयी है। कुछ लोगों को यह शङ्का हो सकती है कि हरेराधान पुंसः किं किं न कुरुतेवत। पुत्र मित्र कलत्रार्थान् राज्य स्वर्गादि वर्गकम् 'अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उद्यमम्। तीव्रेण भक्तियोगेन भजते पुरुषं परम' सर्व कर्म विभागादि हरेश्चरण आस्पदम् से क्या गोस्वामीजी सहमत न थे और यदि नहीं थे तो फिर राम नाम काम तरु देत फल चारि रे। कहत पुराण वेद पण्डित पुरारि रे'। राम नाम कलि अभिमत दाता नाम कामतरु काल कराला क्यों लिखे। इसका समाधान यह है कि वे इनसे सहमत थे और रामभगत जग चारि प्रकारा 'में अर्थाथी की स्वीकृति देते हैं, रामचरणपंकजउर धरहू। लंका अचलराज तुम करहू 'रामविमुख संपति प्रभुताई। गई रही पाई बिनु पाई 'में तो वेभगवच्चरणोंपसमर्पण को अर्थोपार्जन का सर्वोत्तम मार्ग मानते हैं। यह आदर्श भक्ति तो उनके मनसे पूर्वोक्त ही है।

———

प्रार्थना

चौदह वर्ष बाद आगामी चैत्र नवरात्र में रामवन में मानस यज्ञ होगा। आकर भाग लीजिये अथवा दर्शन कीजिये। नहीं ही आ सकें तो वहीं से सेवा कीजिये— श्री राम नाम लड्डू भेजकर अथवा अन्य प्रकार से।

श्री रामचन्द्र को हर्ष

[श्री दंडी स्वामी प्रज्ञानानन्द जी सरस्वती]

श्रीरामजी तो 'हर्ष विषाद रहित हैं'। हृदयँ न हरष विषाद कछु' ऐसा मानसमें अनेक बार कहा है तथापि 'हरषि चले' 'हरषि उठे' ऐसे उल्लेख भी अनेक पाये जाते हैं। क्या यह काव्य दोष है कि ऐसे विरुद्ध वचन पाये जाते हैं। इसका समाधान यह कि यह भासमान विरोध दोष नहीं है। भगवान में हर्ष केवल दो कारणों के लिये ही देखने में आता है - (१) जहाँ किसी भक्त का अनन्य प्रेम देखते हैं या किसी भक्त पर परम अनुग्रह करना चाहते हैं तब श्रीरामजी प्रसन्न, परम प्रसन्न, हर्षित होते हैं। इस प्रकार के हर्ष के कुछ उदाहरण देख लीजिये - (१) 'माँगहु बर जोइ भाव मन **अति प्रसन्न** मोहि जानि, (१४ बा,) शतरूपाजी की अनन्य भक्तियुक्त तपश्चर्या से हर्षित होकर वर देने को तैयार हो गये हैं। (२) '**परम प्रसन्न** जानु मनि मोही' (अर० ११) सुतीक्ष्णजी की अनन्य भक्ति से हर्षित हो गये हैं और वर माँगने को कहते हैं। (३) 'पुनि हनुमान हरषि उर लाये' (सुं.३०।७) जामवंत के मुख से पवनतनय के हाए चरित सुनकर इतने हर्षित हो गये कि हियलाये' (४) 'तुरत उठे प्रभु हरष बिसेषा' (सुं० ४६।१) बिभीषणजी जब शरण आये तब उनकी भक्ति से इतना हर्ष हो गया हैं कि भक्तप्रवर को मिलने भगवान उठे। जहाँ जहाँ भगवान प्रसन्न या अति प्रसन्न देखने में आते हैं वहाँ वहाँ समझना कि अब किसी प्रेमी भक्त पर अनुग्रह हो जायगा। देखिये उठे परम प्रसन्न कृपाला' (अर०-४१।४) इत्यादि पढ़ते ही हैं तब नारद मुनि आते हैं और वर माँगते हैं और प्रभु सहजही नारद की इच्छा पूर्ण कर देते हैं। यह है भगवान के हर्ष का एक कारण, अब दूसरा देखिये।

जब अवतार कार्य करने को निकलतें हैं तब भी राम जी को हर्ष होता है। तथापि ऐसे स्थानों में 'हर्ष' का अर्थ 'आनन्द', 'प्रसन्नता', न लेकर, उत्साह, ही लेना समुचित जान पड़ता है। कारण जिस कार्य के आरम्भ में जब किसी को आनन्द होता है तो उस कार्य की सफलता में विशेष आनंद होता ही है। तथापि रामजी को जहाँ कार्यरम्भ में 'हर्ष' हुआ है वहां उस कार्य की सफलता में हर्ष होने का एक भी प्रमाण नहीं मिलता है। अब इस प्रकार के हर्ष के कुछ उदाहरण देखिये—(१) 'हरषि चले मुनिभय हरन' (बा.२४) विश्वामित्र जी के साथ प्रयाण करने के अवसर पर यह हर्ष हुआ है। कार्य की सिद्धि में तीन प्रकार की शक्ति होनी चाहिये १ प्रभाव शक्ति, २ उत्साह शक्ति, ३ मंत्र शक्ति [प्रभावोत्साहमन्त्रजाः तिस्रः शक्तयः, (अमर)] और कार्य सुफलता होने पर उत्साह निकल जाता है यह हमेशा देखने में आता ही है व्यवहार में। तथा जब किसी कार्य में प्रयाण के समय उत्साह-हर्ष होता है, तब वह हर्ष, वह उत्साह, कार्य की सु-सिद्धि बतलाता है यथा 'होइहि काजु मोहि हरष बिसेषी' (सुं-१-३) यहाँ मुनिभय हरण मुख्य कार्य नहीं है, रावण वध रूपी नाटक के एक महत्व के पात्र मारीच को वश करके सुदूर रख देना यह मुख्य कार्य है। इस हर्ष के दोनों अर्थ हो सकते हैं—मुनिपर कृपा करने में प्रसन्नता और खल वध करने के लिये उत्साह। ताटिका, सुबाहु का वध और मुनिमख रक्षण हो जाने पर राम जी को हर्ष नहीं हुआ है। (२) 'हरषि चले मुनिबर के साथा' (बा-२१०। १०) यह हर्ष धनुष यज्ञ की बात सुनने से हो गया है तथापि इसमें श्रीमुनिनारी अहल्याजी पर कृपा करने के लिये प्रसन्नता है। (३) 'हरषि चले मुनिबृंद सहाया' यह भी प्रयाण के समय काही उत्साह है और हेतु है रावण- वधादिक अवतार नाटक की मुख्य पात्र 'सीता जी' को प्राप्त करना। धनुष भंग करने पर, अथवा जयमाला पहनाने के समय, अथवा संपूर्ण विवाहोत्सव में रामजी को हर्ष नहीं हुआ है। (४) बनगमन

के समय 'मुख प्रसन्न चित चौगुन चाऊ (चाऊ-उत्साह) प्रसन्नता और उत्साह दोनों का साफ़-साफ़ निर्देश किया ही है। प्रसन्नता इसलिये कि अनेकानेक भक्तों पर अनुग्रह करने को मिलेगा, और उत्साह इसलिये कि 'निशिचर हीन मही' करने का कार्य अब हो जायगा। (५) 'हरषि चले कुंभज रिषि पासा' यह हर्ष भी प्रयाण के समय ही है। कुंभज जैसे महातपस्वी ऋषी से निशिचर विनाश का मंत्र प्राप्त करना है, अवतार कार्य करने का साधन, माधुर्यभाव से प्राप्त करना है। (६) 'हरषि राम तब कीन्ह पयाना' (सु०३४४) यह हर्ष भी प्रयाण के समय ही है। तथापि समुद्र के तट पर जब पहुंचते हैं तब, या रावण का बध करने पर भी हर्ष नहीं हुआ है। (७) अरण्य० ४३।४- सहरोसा-सहर्ष और अरण्य २१ 'हरषि-आनंद, प्रसन्नता के अर्थ में प्रयुक्त है। बाल्मीकीय में जब जनकसुता के विरह से व्यथित होकर संक्रुद्ध होते हैं भगवान्, तब लक्ष्मण जी उत्साह की महत्ता कहते हैं— यथा

'उत्साहो बलवान् आर्य नास्त्युसाहात्परं बलम्
सोत्साहस्य हि लोकेषु न किन्चिदपि दुर्लभम्॥
(कि०स०१-२२१)
उत्साहवन्ताःपुरुषा नावसीदानी कर्मसु।
उत्साहमात्रमाश्रित्य प्रतिकलरायाम् जानकीम्॥

(३) श्री राम जी को व्यक्ति, कुटुंब या अपनी के सुख दुःखादि के लिये हर्ष, विषाद नहीं होता है तथापि भक्त के सुख में प्रसन्न होते हैं, भक्त के दुःख दुखी होते हैं 'प्रभु उठाइ उर लायउ सजल नयन राजी सुख अवसर पर दुःख प्राप्त होने पर भी विषाद नहीं है और अभिषेक होने का सुनने पर हर्षित नहीं गये हैं।

'तदपि भगत दुख दुखित सुजाना'
'कुलिसहु चाहि कठोर अति कोमल कुसुमहु चाहि
'चित खगेस राम कर समुझि परइ कहु काहि
(उ. ११)

श्री रघुवीरचरण पंकजापि तमस्तु

रामवन का मार्ग

रामवन सतना स्टेशन से १० मील है। प्रेमियों को रामवन आने के लिये इलाहाबाद और जबलपुर के बीच में स्थित सतना स्टेशन पर उतरना चाहिये। छत्तीसगढ़ वालों को कटनी में गाड़ी बदलनी होगी और झांसी बाँदा वालों को मानिकपुर में। सतना से दिन रात लारियाँ रीवा जाती हैं। इन पर ही आइये। लारी वाला आश्रम के सामने आपको उतार देगा। आश्रम सड़क से चौथाई मील हट कर है। यदि साथ में सामान अधिक हो तो मोड़ पर न उतरिये। कह दीजिये हम डाकखाने में उतरेंगे। आधा मील आगे बढ़ कर आश्रम डाकखाने में उतरिये। सामान वहाँ रखवाकर रामवन आजाइये। यहाँ से आदमी भेजकर सामान मंगवा लिया जायगा।

मानस यज्ञ के लिये आने वाले बराबर आश्रम के सामने उतरेंगे। उन दिनों वहाँ आदमियों की विशेष व्यवस्था रहेगी।

मानस यज्ञ में अपने शुभागमन की पूर्व सूचना भेजिये। जो प्रेमी पूरे समय के लिये न आ सके कम समय के लिये आवें।

महात्मा श्रीरामदासजी

(श्री रामरक्षित जी)

छत्तीसगढ़ की इनी-गिनी कुछ खास जमींदारियों में चांपा भी एक है। सदा सलिला हरदो नदी के तीर पर कोसासिल्क और फूल कांस के बर्तनों के लिये भारतवर्ष भर में प्रसिद्ध यह छोटा-मोटा शहर बसा हुआ है। आस पास जंगलों और छोटे-छोटे नालों और पहाड़ों से घिरा हुआ यह मनोहर स्थान बंगाल नागपुर रेलवे लाइन का मुख्य स्टेशन है। उपर्युक्त महात्मा ने आज से लगभग ३५ वर्ष पहिले न जाने कहां से एक पागल के रूप में पदार्पण किया। दिनरात चुप्पी साधे अपनी धुन में मस्त चारों तरफ घूमा करते। किसीने खिला दिया तो खालिया, किसीने पिलाया तो पीलिया। इस में से भी बहुत कुछ अच्छा हिस्सा पीछे-पीछे घूमने वाले बालकों के झुंड, गाय या कुत्तों को बँट जाया करता। कपड़ों की भी यही दशा थी - कैसा भी कीमती और सुंदर कपड़ा होता - तुरंत ही वह किसी गरीब के बदन पर होता या अग्नि देव को समर्पित हो जाता - खुद एक चिथड़ा लपेटे गर्मी, बरसात और जाड़ा काट करते। सोते तो उन्हें किसी ने देखा ही नहीं। लोगों के सामने प्रायः चुप रहना और अकेले में कुछ तो भी बड़बड़ाना। नदी के किनारे गोंदई घाट पर एक जीर्ण और खंडित मंदिर आज भी है। बहुत पुराना होने और अंदर हमेशा - अंधकार - होने के कारण उसमें सांप, बिच्छू, छिपकिली आदि का वासस्थान बन गया था। दिन को भी लोग उसके अंदर जाने में हिचकते थे। लेकिन हमारे महात्मा रामदासजी का वही वासस्थान था। जब कभी भी वे जन-कलरव से ऊब जाते तब घंटों इसी मंदिर के अंदर बैठे रहते, या घूमते रहते। बहुत ही जल्द इनकी निर्लोकिता निस्पृहता, विरक्तता और समदृष्टि ने लोगों के हृदय में घर कर लिया। उनके आशीर्वाद पर लोग जान देने लगे। जो कुछ भी वे कहें लोग शिर - आंखों पर उसे धारण कर उसका पालन करते और मनोवांछित फल प्राप्त करते। बच्चों के लिये तो महाराज पूरे खिलौना थे। उनको हँसाने और खिलाने में उन्हें भी बड़ा रस आता। अक्सर उन्हें लोग एकांत में हँसते, रोते और गाते हुये देखते थे। इन्हीं महात्मा के कुछ चमत्कारपूर्ण चरित्र हम यहां देने की चेष्टा कर रहें हैं जिसे आज भी चांपा के लोग बड़ी भक्ति-भाव से कहते और सुनते हैं।

शुरू-शुरू में जब आप चांपा पधारे तो लोग इन्हें नाम पूछ पूछ कर तंग करते रहते। आखिर एक दिन तंग आकर चिल्ला पड़े "मैं रामदास हूँ - बोलो क्या करना है', और उसी रोज से सब उन्हें बाबा रामदास या रामदासजी के नाम से जानने लगे।

किसी भी व्यापारी या महाजन के यहां दिन में घुस पड़ते। तिजोरी के पास जा बैठते। कभी रुपयों को इधर उधर करते या चुपचाप एक तरफ बैठे रहते। थोड़ी देर बाद एक पैसा, सिर्फ एक ही पैसा उठाते और चल देते। किसी के यहां बैठ जाते और बैठे-बैठे पचीसों बीड़ियां उसकी पीपी कर फेंक देते। एक तो वे कभी किसी का कुछ भी नुकसान न करते थे और यदि कर भी देते तो उसकी मजाल न थी कि वह कुछ बोल सके। ऐसा भक्ति भाव उनके प्रति लोगों का हो गया था। एक बार एक व्यापारी के यहां से जो कुछ कंजूस सरीखा सा था, सौ रूपये का एक नोट उठा लिया और चल दिये। वह दिन भर हाय हाय करता रहा। अंत में शाम को जब वह शांत हो प्रार्थना करने लगा तो निकाल कर दे दिया और हंसने लगे।

एक बार कुछ लोगों ने एक महिला को सिखा पढ़ा कर इनके पास भेज दिया। रात का समय था-ये अपने उसी-अनोखे मंदिर के बाहर बैठे थे। जबतक वह छेड़-छाड़ करती रही ये चुपचाप बैठे रहे फिर उससे आता

हूँ कह कर मंदिर के पीछे गये और फौरन ही लौटकर आगये। लेकिन उस समय जो उनका वह रूप उसने देखा तो वह बदहवास हो गई और गिरते पड़ते घर भागी - उसका कहना था कि उस समय वे बड़े बिकराल और भयंकर दीख रहे थे। सारे शरीर में मैला थोपा हुआ था। और बड़े बड़े दांत निकाले अट्टहास करते हुये उसे पास बुला रहे थे।

एक नाई उनकी बड़ी भक्ति करता था। एक दिन आये और उससे सिर मूड़ देने के लिये कहा। नाई ने देखा तो उनके सारे सिरमें ताजा मैला पुता हुआ था और बड़ी दुर्गंध आ रही है। उसने नाक पर कपड़ा लगा लिया और कहा कि महाराज इसे धो आइये तो बनाऊंगा। इन्होंने वैसे ही बना देने की जिद की लेकिन उसने नहीं बनाया - तब 'अच्छा जाता हूं' कह कर चलदिये और- दस बारह कदम जाकर लौट आये। नाई यह देख कर अचंभित रहगया कि उनके सिरमें चंदन पुता हुआ है और उसकी भीनी भीनी बढ़िया सुगंध आरही है। बार बार क्षमा मांग कर वह पैरों तले गिर पड़ा और उनका विशेष भक्त हो गया। एक बार उसी नाई की पत्नि बहुत बीमार पड़ी। उसे खूनकी टट्टी एक एक दिन में पचासों बार होने लगी। वैद्य डाक्टरों ने जवाब दे दिया। रात को २ बजे निराश भाव से नाई उसकी मृत्यु का इंतजार कर रहा था। रामदासजी पहुंचे। नाई को सिर मूंडने की उसी वक्त आज्ञा हुई। वैसे कठिन समय में उस दुःखी नाई ने उनके बाल श्रद्धा सहित बनाए। तत्पश्चात आग तापने की इच्छा प्रगट की। नाई ने एक गोरसी में छेना कंडे जला रक्खे थे। लाकर आंगन में रख दिया। आप आग तापने लगे। कुछ देर बाद बोले कि आंच कम है और छेने ले आओ। गरीब नाई के यहाँ छेने समाप्त थे। कुछ इधर उधर करने लगा। आंगन के एक कोने में पुराने कपड़ों की चिंदियाँ इकट्ठी पड़ी थीं। नाइन को बार बार आबदस्त न कराकर, चिंदियां से पोंछ-पोंछ कर एक कोने में ढेर कर रक्खे थे कि सवेरे फेंक दिया जायगा। आपने उसी से—नाई के लाख मना करने पर भी ईंधन का काम लिया। एक एक करके सब को जला कर ताप डाला और चल दिये। नाई भीतर अपनी गृहिणी का अंतिम दर्शन करने गया तो वह बैठी हुई मिली और पीने के लिये पानी माँगा। कुछ ही दिन में बिलकुल चंगी हो गई और उनका गुण गाते हुये आज तक जिंदा है?

एक मुसलमान सेठ की दूकान के सामने एक बछिया कहीं से आई और चक्कर खाकर गिर पड़ी। थोड़ा फटफटाने के बाद मर गई। कुछ ही देर बाद आप उधर से निकले। एकत्रित लोंगों में से किसी ने कहा देखिये रामदास जी, यह बेचारी बछिया मर गई हैं, आपने बड़ा आश्चर्य का भाव प्रगट किया फिर हँसने लगे। फिर एक दम से बछिया के पास पहुंच कर सस्नेह उसे चुमकारते हुये धीरे से एक चपत जमाकर उठने के लिये कहा और सचमुच में वह बछिया उठकर चलती बनी।

कठिन गर्मी के दिनों में धधकती चिता की आग रात भर तापते रहना, भद्दर जाड़े में गले तक पानी में खड़े हो सारी रात बिता देना आदि तो उनके नित्य के खेल थे। एक दिन एक भक्त भोजन लेकर, उसी खंडहर में, रात को उन्हें देने गया जब कि लगातार दो दिन तक वे उसी के भीतर रहें। दरवाजे पर एक बड़ा सा काला बिच्छू बैठा देख उसने उसे अपने हाथ के डंडे से मार देना चाहा। आपने फौरन बाहर आकर उसका हाथ पकड़ लिया और उसे उसी समय भाग जाने को कहा। उसके बार-बार क्षमा मांगने और हाथ पाँव जोड़ने से बमुश्किल उसका भोजन स्वीकार किया लेकिन फिर भी केवल थाली और लालटेन वहीं छोड़ कर उसे फौरन ही घर चले जाने का आदेश दे दिया। सुबह खुद ही उसकी थाली पहुंचाने गये तो थाली तो साबुत थी लेकिन लालटेन की दशा खराब थी। कई जगह से तोड़मरोड़ डाली गई थी। उसने पूछा महाशय यह क्या तो थे। फौरन ही उत्तर यिदा' 'तो फिर हमारी बिछिया को तुम कल कैसे मार रहे थे।'

ऐसी ऐसी बहुत सी बातें उनके चमत्कार की हैं। इसके अलावे वे बहुत से अटपटे दोहे वगैरह कहा

करते थे। जिनमें किसी-किसी के बड़े सुंदर अर्थ होते थे। बड़े दुःख का विषय है कि एक धार्मिक सज्जन अपनी भक्ति भाव से प्रेरित होकर एक दिन लगभग ३४ वर्ष पहिले—उन्हें, उनकी इच्छा के विरुद्ध, एक प्रकार से जबर्दस्ती ही—इलाहाबाद गंगा स्नान को ले गये। आप रास्ते से ही कहीं गायब हो गये और फिर आज तक बहुत खोज खाज करने पर भी उनका कहीं पता न चल सका। कहते हैं कि उनके जाने के बाद ही चांपा बड़ी दुरावस्था को प्राप्त हो गया है। जब तक वे चांपा में रहे उसकी हर वक्त उन्नति ही होती रही।

आज भी चांपा के घर घर में महात्मा रामदास जी का नाम बड़ी श्रद्धा और प्रेम से लिया जाता है।

बोलो भक्त और भगवान की जै।

लै जीउ पराने

श्री रघुनाथ चले बनको जब संग लगे सब लोग लोगाई।
का करिहैं रहि के अवधा, अवधि लगिके, उर धीर न आई।
नर नारि भये सब दीन मलीन ज्यों मीन विकल जल जात सुखाई
"तकि कै कुटिला यह घात करी, बनते-बनते सब बात नसाई

"ठानि लियो हिय में सिय लक्खनु राम विनु जग जीउब नाहीं
कुठौर बसे पुनि मंजुल से, प्रभु के पद पंकज सेवन माहीं
रखिहौं जियरा रघुवीर विनु सहिहौं दुख दारुन दारिद दाही"
सब प्रेम रंगे, प्रभु के रथ के संग बेग बनाई के धावतु जाहीं॥

रघुनाथ विलोकि प्रजा जन को मुख अंबुज सो अस बैन उचारे
"नगरी फिरि जाहु कृपा करिके जनि आवहु भाइन साथ हमारे'
"चलि जाउब नाथ तजीं हमको, हम जीउंक हौंकित कौन सहारे
है नहिं जीवन आश, तजी जब नाथ चले तुम प्राण पियारे"

दारुन प्रेम लखी तिनके हियमें रघुनाथ अति सकुचाने
संगन छाड़ि सकै बस प्रेम गुनी हिय में बहु भाँति बुझाने
जब हारि गये, तब राति भये, जन सोवत जानि सचीव जगाने
सत्य के हेतु चढ़ी रथ पै अति बेग "श्रीकान्त" लैजीउ पराने॥

—श्रीकान्त ठाकुर

शिव-समाधि

(पं० रामदत्तजी उपाध्याय)

श्रीमाता सती जी शिवजी की शिक्षा न मान कर अपने पिता दक्ष प्रजापति जी के घर जा देखने लगीं कि पिता जी के आतंक से दास दासियाँ तक अपने प्रति उदासीनता दिखा रहे हैं। माता का हृदय जो ठहरा, वे ही एक आदर से सती जी से मिली हैं। पर बहिनें मुसकाती हुई ही मिली हैं। पिता के घर में भी उन्हीं बेटियों का आदर विशेष होता है, जिनको कमाऊ संपन्न पति मिला हो। यहाँ तो सब बातें विपरीत ही हैं।

दक्ष ने सती जी से कुशल मङ्गल तक नहीं पूछा, उन्हें देख कर उलटा उसकी विरोधाग्नि भड़क उठी। यहाँ तक सती जी पिता के घर अपनी निरादर सहती हुई यज्ञ स्थल देखने गई। वहाँ अपने पति श्री शंकर जी का यज्ञ भाग कहीं नहीं देखकर प्रभु का अपमान समझ माता जी का हृदय महापरिताप से जल उठा। पति परित्याग का दुःख दुसह्य था ही, यहाँ पति का अपमान असह्य हो उठा। गृहस्थ के दांपत्य जीवन में ऐसे अनेकों अवसर आते ही रहते हैं, जब कि आपस में कुछ क्षण या दिवस अनबोल, वैमनस्यता तथा तनाव आदि होते हैं। यदि यह समय उचित सीमा के भीतर हो तो भविष्य में दाम्पत्य जीवन को अधिक सरस बनाने वाला ही होता है। क्योंकि दाम्पत्य कलह प्रायः अधिक दिनों तक ठहरने वाली वस्तु नहीं है। किसी का कथन है—

अजा युद्धं ऋषि श्राद्धं, प्रभाते मेघ डंबरं।
दम्पत्योः कलहश्चैव बह्वारंभाः लघु क्रियाः॥

अर्थ—बकरी का युद्ध, ऋषियों का श्राद्ध, प्रातःकाल का मेघ, और स्त्री पुरुष का झगड़ा, इनका आरंभ काल बड़ा होता है, और क्रिया छोटी ही होती है।

पति परायणा पत्नी के लिये, जहाँ कहीं पति की निन्दा, अपमान को देख सुन कर महा-परितापसे उसके हृदय का जलउठना स्वाभाविक ही होता है। उस पर वह मौका जब कि जाति बिरादरी के समक्ष अपमान पाने की समस्या उपस्थित हो सर्वथा असह्य ही होता है।

समुझि सो सतिहिं भयउ अति क्रोधा।
बहु बिधि जननी कीन्ह प्रबोधा॥

प्रबल क्रोध में प्रबोध होता ही नहीं। यदि प्रबोध हो गया तो वह क्रोध ही कैसा। क्रुधित माता सती जी उस यज्ञ के संचालकों सभासदों से कहने लगीं—

सुनहु सभासद सकल मुनिंदा।
कही सुनी जिन्ह संकर निन्दा॥
सो फल तुरत लहब सब काहू।
भली भाँति पछिताब पिताहू॥
संत संभु श्रीपति अपवादा।
सुनिअ जहाँ तहँ अस मरजादा॥
काटिअ तासु जीभ जो बसाई।
श्रवन मूंदि न तु चलिअ पराई॥
जगदातमा महेसु पुरारी।
जगत जनक सबके हितकारी॥
पिता मंद मति निंदत तेही।
दक्ष शुक्र संभव यह देही॥
तजिहउँ तुरत देह तेहि हेतू।
उर धरि चन्द्र मौलि वृष केतू॥
अस कहि जोग अगिन तनु जारा।
भयउ सकल मख हा हा कारा॥

सभासदो ! तुम लोगों में से जिन्होंने शङ्कर जी की निन्दा की अथवा सुनी हो, उसका प्रतिफल तुम लोगों को शीघ्र मिलेगा। मेरे पिता भी भली-भाँति पछतायेंगे। जहाँ संतों का, शङ्कर जी का एवं विष्णु भगवान का अपवाद सुनने को मिले,वहाँ मर्य्यादा तो यही है कि निंदक की जवान ही काट डाले। यदि बस न चले तो कान मूंदकर भाग जावे। जीव मात्र पर दया करने वाले, सारे संसार के पिता, श्री शिव जी की मंद मति पिता निन्दा कर रहा है। मेरा यह शरीर उन्हीं के वीर्य्य से बना है, इसलिये इसे अविलम्ब त्याग दूँगी।

मर्य्यादा के मुताविक माता जी ने निन्दकों की न तो जवान ही काटी, न कान मून्दकर भाग चलीं, किन्तु दक्ष वीर्य संभूत कलुषित देह को ही त्याग देना समुचित समझ कर योगाग्नि से जल मरीं ! यज्ञ स्थल स्वाहाकार की जगह हा-हा कार से भर गया। इधर शंकर जी के मुख्य गण जो माता जी को पहुँचाने आये थे उनका मरण सुनकर यज्ञ का विध्वंस करने लगे। महामुनि भृगु जी किसी तरह यज्ञ की रक्षा करते रहे। इधर कैलास में शंकर जी को यह सब समाचार मिलने से उन्होंने अपने मुख्य गणों के मुखिया वीर भद्र को क्रोध करके भेजा। वीरभद्र उस यज्ञ को पूरी तरह विध्वंस करके उसमें योग देने वाले देवों की खूब खबर लेते हैं !

भै जगविदित दक्ष गति सोई।
जस कछु संभु बिमुख कै होई॥

माता सतीजी ने देह त्यागते समय श्रीहरि भगवान से वर माँग लिया था, कि मेरा जन्म अवश्य हो, और शंकर जी पति मिलें। तदनुसार पातिव्रत योग से भ्रष्ट सती जी शुचीनां श्रीमतां हिमाचल राजा के घर पार्वती तनु धारण करके महा कठिन तपश्चर्य्या करने लगीं।

इधर सती जी के वियोग का लंबा समय शंकर जी यत्र तत्र भ्रमण करते हुए बिताने लगे।

जपहिं सदा रघुनायक नामा।
जहँ तहँ सुनहिँ राम गुन ग्रामा॥
× × × ×
कतहुँ मुनिन्ह उपदेसहिँ ज्ञाना।
कतहुँ राम गुन करहिँ वखाना॥
जदपि अकाम तदपि भगवाना।
भगत विरह दुख दुखित सुजाना॥
एहि विधि गयउ काल बहु बीती।
नित नइ होइ राम पद प्रीती॥

इसी भ्रमण काल के सिलसिले में, शंकरजी ने उत्तर दिशा में गमन किया। मनोहर वन पर्वत विलोकते हुये नील गिरि जाकर हंस स्वरूप से भुसुंडी से कथा श्रवण कर पुनः कैलाश लौट पड़े हैं। माता पार्वती जी की प्रेम परीक्षा करके सप्त ऋषि गण यह सुंदर संवाद शंकर जी को सुनाते हैं। पार्वती जी का घोर तप, तथा अपने प्रति अटूट प्रेम श्रवण कर शिव जी स्नेहमग्न हो गये।

मनु थिर करि तब संभु सुजाना।
लगे करन रघुनायक ध्याना॥

उनका यह ध्यान समाधि के रूप में परिणत होगया। ठीक उन्हीं दिनों तारकासुर के प्रबल दौर्दंड्य के आतंक से, देव गण त्रसित होकर ब्रह्मा जी से उस राक्षस के मरण का उपाय पूछने लगे। तब—

सब सन कहा बुझाइ बिधि,
दनुज निधन तब होइ।
संभु शुक्र संभूत सुत,
एहि जीतइ रन सोइ॥

हे देवताओ ! शंकर जी का वीर्य जात पुत्र ही तारकासुर को मार सकता है। अतः उपाय करो, सती जी का जन्म हिमाचल राजा के घर

हुआ है। वे पार्वती नाम से हुई हैं। शंकर जी को पति बनाने के लिये वे कठिन तप कर चुकी हैं। इधर शंकर जी कैलास में समाधि लगाये हुये बैठे हैं। अब तुम लोग कामदेव को भेज कर शिव जी को जगाने का प्रयत्न करो। जब वे जाग जाँयगे—

तब हम जाइ सिवहिँ सिर नाई।
करबाउब बिबाहु बरियाई॥

यहि विधि भलेहि देव हित होई।
मति अति नीक कहइ सब कोई॥

ध्यान रहे। शिव जी की यह समाधि दूसरी समाधि है। सत्तासी हजार वर्ष वाली समाधि तो सती त्याग के समय की थी। उसे वे स्वतः त्यागे थे और यह समाधि,पार्वती जी की तपश्चर्या वरदान प्राप्ति आदि के समय की हैं। जिससे कामदेव ने विषम विशिख मार कर शिव जी को जगाया था।

बोलो, आशुतोष भगवान शंकर जी की जय।

गोरक्षार्थ अखंड मानस पारायण

मिडिल स्कूल सिंहासन ग्राम (जिला सीकर राजस्थान) में कार्तिक शुक्ला १ से पूर्णिमा तक १५ दिन रात अध्यापक छात्र तथा ग्रामीण जनता ने "गोवध सर्वथा बन्द हो" गोरक्षार्थ प्रभु अवतरण हो इस संकल्प से मानस का अखण्ड पाठ किया। ५० व्यक्ति सम्मिलित हुए। कुल १२४ पाठ का विचार था पर हुए १३५। कुल खर्च ३०=)॥ हुआ।

इस प्रकार के आडम्बर रहित अल्प व्यय साध्य अनुष्ठान के हर नगर तथा ग्राम में हों तो ध्येय प्राप्ति में विशेष सहायक होंगे।

परशुराम इन्दौरिया

तुम्हीं सर्वत्र व्यापक हो

तुम्ही सर्वत्र व्यापक हो, लताओं और फूलों में।
धरा में और नभ में वायु में, सर सरित कूलों में॥
तुम्हारा दिव्य दर्शन नित्य होता सूर्य औ शशि में।
उषा की लालिमा में और सन्ध्या के दुकूलों में॥
बरसता जब सघन घन, घोष करके धरणि के ऊपर।
तुम्हीं तब डालते हो प्राण, सूखे वृक्ष मूलों में॥
प्रियक अश्वत्थ शाल्मलि करक विटपों में विराजे हो।
कभी लखता हूँ मैं तुमको करीलों में बबूलों में॥

श्यामबाबू मिश्र "भ्रमरेश"

लघुकथा

(श्री भागवत प्रसाद द्विवेदी)

'मैं रामवन से आया हूँ मानस का विश्व व्यापी प्रचार ही मेरा उद्देश्य है।' नवागत व्यक्ति ने संक्षेप में अपना परिचय दिया।

'ठहरो जी, वहाँ बैठो। हुक्का पी लूँ तब बात करूँगा।' उनके निवेदन पर ध्यान दिए बिना ही वे बोल पड़े। चौधरी जी का उत्तर उनकी मुखाकृति के अनुकूल ही था। बड़ी-बड़ी लाल आँखें, भूरी मूँछ, तनी हुई और स्वर नितान्त कर्कश। नीम के नीचे चबूतरे पर एक खाट में चौधरी जी हुक्का पी रहे थे। दो भृत्य पास में बैठे हुए थे। 'पिल पड़े हैं लोगों को तंग करने के लिए, सांस तक नहीं लेने देते। हुँ !!'

'धन्यवाद ! मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई आप से मिलकर। थोड़ी देर बाद ही सही आप मेरा निवेदन श्रवण करेंगे इसका मुझे हर्ष है।' बिना किसी प्रकार के भावपरिवर्तन के नवागन्तुक ने सरलता पूर्वक ही यह उत्तर दिया और थोड़ी दूर पर बैठ कर अपनी डायरी निकाल पन्ने उलटने लगे।

बरसात में मोटरों का चलना बन्द हो गया था अतः पैदल चलकर ही इन्होंने प्रचार करने का निर्णय कर लिया था। आज उन्हें इसी देहात में संध्या हो गई। अतः यहीं रात्रि व्यतीत करने का विचार था। चौधरी को आश्चर्य हुआ उनकी विनम्रता और धीरता पर साथ ही अपने कठोर उत्तर के लिए खेद भी। वे हुक्का पीने में लगे रहे पर बीच २ में चुपके से उनकी ओर गहरी दृष्टि डाल लेते। एक चिलम समाप्त हो गई। एक भृत्य ने दूसरी चिलम भर दी, वह भी समाप्त हुई। कुण्डली बनाते उड़ते हुए धुएँ को उन्होंने लंबी फूँक से उड़ा दिया और एक कुर्सी लाने के लिये नौकर को आदेश दिया। फिर बोले 'अच्छा आओ पन्डित जी, बोलो, भोजन की क्या व्यवस्था की जाय।'

'मैं तो एक ही समय भोजन करता हूँ अतः इस समय भोजन व्यवस्था की आवश्यकता न होगी।' कुर्सी पर बैठते हुए पूर्ववत अविचलित भाव से उन्होंने कहा।

'तब तो आपके लिये यहाँ स्थान नहीं है। हम भूखे आदमी अपने यहाँ ठहरने नहीं देंगे।'

'लेकिन मैं भूखा नहीं हूँ, एकाहार का मेरा नियम है।'

'अच्छा। तब दूध तो पियोगे।'

'हाँ, दूध तो ले सकता हूँ।' पास एक व्यक्ति दूध लाने चला गया। 'मानस संघ रामायण के प्रचार करने वाली एक संस्था है उसका राजनैतिक क्षेत्र से कोई लगाव नहीं। उसका विश्वास है कि यदि प्रत्येक व्यक्ति रामचरितमानस को नित्य स्वाध्याय का ग्रन्थ बना ले तो समस्त विश्व में शान्ति स्थापित हो सकती है। नित्य या कम से कम वर्ष में दो मानस पाठ की प्रतिज्ञा करने वाला व्यक्ति बिना देश, काल, धर्म सम्प्रदाय-भेद पर ध्यान दिये मानस संघ का सदस्य मान लिया जाता है। पास के गाँवों में प्रचार करता हुआ आज आप के गाँव में आ पड़ा और सौभाग्य से ही आप से भेंट हो गई।'

'ओ हो ! क्षमा कीजिएगा, आपकी खादी वेशभूषा को देखकर मैंने आपको वोट भिक्षुक राजनैतिक कार्यकर्ता समझा था। हमारे धन्य भाग्य जो आपने दर्शन दिये। आज तो रामायण हो, कल यह कार्य अवश्य हो जायगा।

रात्रि में रामायण हुई श्रोताओं ने सुमधुर कथा का रसास्वादन किया। दूसरे दिन गाँव के सभी मान्य सज्जनों को चौधरी ने बुलाया। सबोंने सदस्य फार्म पर हस्ताक्षर किये और उन्होंने दूसरे देहात के लिए प्रस्थान किया।

कौशल-कशोर को एकत्र नवरस भेंट

(पं० रामकुमार उपाध्याय विशारद)

'राज कुवँर तेहि अवसर आये,
मनहुँ मनोहरता तन छाये॥
+ × +
जाकी रही भावना जैसी,
प्रभु मूरति देखी तिन तैसी॥

भक्त शिरोमणि संत श्रीं तुलसीदासजी ने मनन किया कि इष्टदेव प्रभु राम का मख-शाला में पदार्पण हो रहा है। सभी उपस्थिति (महानुभावगण) हार्दिक भावनाओं को लेकर श्रीचरण के पदार्पण में स्वागतार्थ अग्रसर हो रहे हैं अतएव मुझे भी 'पत्रं पुष्पं फलं तोयं' से स्वागत करना ही अभीष्ट तथा अत्यन्त अनिवार्य है। सुतरां काव्य की नव रस पूर्ण भावना प्रभु इष्ट के सन्मानार्थ सन्मुख अर्पण किया। यथाः—

१—वीर रसः—
देखँहि रूप महारनधीरा,
मनहु वीर रस धरे सरीरा।

१—भयानक रसः—
डरे कुटिल नृप प्रभुहि निहारी,
मनहु भयानक मूरति भारी॥

३—रौद्र रसः—
रहे असुर छल छोनिप वेषा,
तिन्ह प्रभु प्रगट कालसम देखा।

४—शृङ्गार रसः—
पुरवासिन्ह देखे दोउ भाई,
नर भूषन लोचन सुखदाई॥
नारि विलोकहिं हर्षि हिय,
निज-निज रुचि अनुरूप।
जनु सोहत शृङ्गार धरि,
मूरति परम अनूप॥

५—वीभत्स रसः—
विदुषन्ह प्रभु विराट मय दीसा,
बहु मुख कर पग लोचन सीसा।

७—करुणा रसः—
जनक जाति अवलोकहिँ कैसे,
सजन सगे प्रिय लागँहि जैसे॥
सहित विदेह विलोकहि रानी,
सिसुसम प्रीति न जात बखानी॥

७—शान्त रसः—
निराकार योगी भी प्रभु को देखते हैं यथा
जोगिन्ह परमतत्व मय भासा,
सांत सुद्ध समसहज प्रकासा।

८—अद्भुत रसः—
हरि भगतन्ह देखे दोउ भ्राता,
इष्टदेव इव सब सुख दाता॥
+ + +
यहि विधि रहा जाहि जसभाऊ,
तेहि तस देखेउ कौसल राऊ।

६—हास्य रसः—
राजत राज समाज महँ,
कौसल राज किसोर।
सुन्दर श्यामल गौर तन,
विस्व विलोचन चोर॥

तदनन्तर जगतज्जननी श्री जनकनन्दि[illegible] ने इष्टदेव सर्वस्व प्रभु श्रीरामजी का जि[illegible] भावना से ओत-प्रोत हो दर्शन लाभ किया, व[illegible] भाव तो अत्यन्त ही विलक्षण तथा नव रस [illegible] भी परे जा चुका था। पूज्यपाद गोस्वामी ज[illegible] ने इस स्थान पर देखा, विलोका, अवलो[illegible] भाषा, निहारा तथा दीसा आदि क्रियायों [illegible] सुन्दर प्रयोग निर्वाह करते हुये नितान्त भि[illegible]

जहाँ सुमति तहँ सम्पति नाना
जहाँ कुमति तहँ बिपति निदाना

(श्री सूर्य प्रकाश जी)

देवों और असुरों के समुद्र-मन्थन का प्रसंग पुराणों में प्रसिद्ध है। दोनों ने मिलकर सागर का जो मन्थन किया, इससे सर्व प्रथम हलाहल का दर्शन हुआ। उस समय उसका दर्शन क्या था, वह तो साक्षात् मृत्यु का मूर्तिमान् गोला था। उसे देखकर दोनों पक्षों के छक्के छूट गए और इससे बचने के लिए दोनों ने उमापति श्री शंकर जी की प्रार्थना की। बहुत ही अनुनय विनय करने के बाद भोलेनाथ प्रकट हुए। अवढर दानीने हँसते हुए अभय और मृदु वाणी में कहा आप क्या चाहते हैं ? दोनों पक्षों ने कातर स्वर में अपनी वेदना प्रकट करते हुए कहा सर्वसमर्थ प्रभो ! अग्नि से भी कई गुना दाहक भयङ्कर हलाहल को कोई उचित स्थान पर रखने की कृपा करें, नहीं तो हम सब इसी में क्षण भर में भस्म हो जाँयगे। देव और दैत्यों के वेदना युक्त वचन सुनकर परहित निरत श्री भोलेनाथ जी ने हलाहल से कहा भैया यहाँ आओ। तुम्हें आसन देते हैं बैठो। इस प्रकार कहकर रकार के आसन पर बैठाया और उसके ऊपर मकार का छत्र धर दिया। मतलब यह कि उसे अपने कन्ठ में स्थिर कर दिया तब से 'यथानाम तथागुणः' इस लोकोक्ति के अनुसार भोले नाथ का नाम सार्थक हुआ। उपर्युक्त प्रसंग से हमें शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। अब घर-घर में समुद्र मन्थन हो रहा है। बात बात में विचार भेद से वैमनस्य अपना अड्डा लगा रहा है। और काल की गति के साथ वही वचार भेद विष का स्वरूप धारण करता है। यह विचारभेद रूपी विष या हालाहल सामाजिक भ्रातृभाव को मिटाने में अत्यधिक सफल हो रहा है। सृष्टि में जहाँ दृष्टि डालते हैं वहाँ ऐसी ही दयनीय दशा दृष्टिगोचर हो रही है। यदि समाज के विचारशील और समझदार व्यक्ति उस जहर को पान करने का प्रयत्न करें तो सम्भव है कि संसार से निकला हुआ हलाहल सामाजिक भ्रातृ भावना और एकता को नष्ट करने में असफल हो जाय। वर्तमान समय में एक और रोग चारों ओर फैला हुआ है। प्रायः लोग कहा करते हैं कि भाई विरोध मिटा दो, तो इसके उत्तर में लोग कहते हैं कि हम विरोध मिटा देने के लिए बिलकुल तैयार हैं किन्तु प्रति-पक्षी जरा भी टस से मस नहीं होना चाहते हैं। इस लिए हम क्यों अपने विचार छोड़ें। वास्तव में बात यह है कि यदि इस प्रकार लोग अपनी २ बात पर डँट जायें तो कलह क्यों कर शान्त हो सकेगा। इस वास्ते प्रत्येक सभ्य या पक्ष को ध्यान में लाना चाहिए कि एक थोड़ा सा झुके इसके पहले हमें निःशंक झुक जाना चाहिए। इससे किसी प्रकार का विचार भेद और झगड़े का स्थान नहीं रह जाता। सभी प्रश्न अपने आप हल हो जाते हैं। यह भी है कि सामान्यतः स्वभाव सब को प्रिय होता है। इसलिये मनुष्य के मन में ऐसी विचार धारा उपस्थित हो जाती है कि यदि हमारी बात को किसी ने अस्वीकार किया तो हमारा अपमान हो जायगा। क्योंकि मानोहि महतांधनम्। इसी पर मनो योग ऐसा देना चाहिए कि जहाँ भाई भाई का प्रश्न है वहाँ मानापमान का ढकोसला ही नहीं होना चाहिए। यदि हम दूसरे के सम्मान की रक्षा करने में प्रस्तुत हों तो हमारे सम्मान की रक्षा अपने आप हो जायगी।

संक्षेप में पाठकों से मेरा नम्र निवेदन यह है कि यदि मानव को शान्ति के श्वास लेने की महत्वकांक्षा है और भविष्य की सन्तान के लिए उज्ज्वल भविष्य बनाने की उदारता है तो सामाजिक भ्रातृभाव को उदारचित्त और विकसित करने का शुभ प्रयास अवश्य करना चाहिए। इस अमृतोपम विशाल प्रयास के आवरण में अनेक आत्माओं के कल्याण की भावना धारा अखण्ड बहती रहेगी।

श्रीरामचरित मानस की उपयोगिता

(श्री पं० शिवबालक शर्मा)

सत पंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरै।
दारुन अविद्या पंच जनित विकार श्रीरघुवर हरै।

श्री हरिवल्लभाग्रगण्य प्रातः स्मरणीय श्री रामपद पद्ममकरंद मधुप श्री राम चरितामृत पान मत्त श्रीमद्गोस्वामीजी ने रामचरित मानस के उपसंहार में उसका माहात्म्य वर्णन किया है। इस सप्त प्रबंध मंडित, चारु चतुः संवाद सुगुम्फित श्री राम नाम स्वरूप ऐश्वर्य रहस्य माहात्म्य परिचायक कविविधोक्तियों से समन्वित भक्ति ज्ञान वैराग्य कर्म यागादि प्रसंगों से विभूषित ललित ऐतिहासिक पौराणिक कथावों से सबद्ध अनेक पात्रों न प्रदर्शित मानव जीवन की विचित्र परिस्थितियों, भावनाओं, सुख दुःख की वृत्तियों, आनन्दोत्सवों, उल्लास उमंगों हास-परिहासों विषाद उन्मादों, शोक संतापों के चित्रण से संयुक्त समग्र ग्रंथरत्न के पठन पाठन के माहात्म्य का क्या कहना है।

उसकी वात्सल्य माधुर्य करुणा वीर और शान्त रस पूर्ण रामकथा सुधा का पान कर कौन नहीं आत्माराम हो जाता। किसका वक्षःस्थल आनन्दाश्रुवों से नहीं परिसिक्त हो जाता। किसके हृदय में करुणा की लहर उछल कर रोमाञ्च गद्गदादि सात्विक भावों को नहीं प्रदर्शित करती। ऐसा कौन प्राणी हो सकता है जिसको सरस विविध भावपूर्ण श्रेय विस्तारणी राम कथा न सुहावनी लगेगी। कौन नहीं अपने क्षण भंगुर जीवन की दुःखद घटिकावों के संताप को इसे पढ़कर समव्यञ्जनावों से प्रभावित हो नहीं भुला देता। ऐसा कौन होगा जिसे वीणा के झनकार सदृश सुमधुर अनुप्रास माधुर्य प्रसादादि अलंकारों से परिपूरित स्वतः गंगधारवत् स्वरलहरी में बहती हुईं चौपाइयाँ न मुग्ध कर देती होंगी। ऐसी कोमल कान्त अर्धालियाँ पद्मावत विश्रामसागर बृज विलास भाषा महाभारत कृष्णायनादि अन्यान्य ग्रन्थों में कहाँ एक रस बिखरी मिलेंगी। इनमें ही जब कि परात्परतम त्रिपाद् विभूति नायक लीला वपुधारी आर्यावतंश महानपुरुष तथा महेश्वरी आदि शक्ति जगज्जननी रामाभिन्नाम् विदेह तनया के कीर्तन योग्य चरित्र अंकित हों तब तो श्रोता-वक्ता के महत्पुण्य अहोभाग्य की जितनी ही प्रशंसा की जाय उतनी ही थोड़ी है।

अब श्री गोस्वामी जी भी गीता पुराण रामायणादि के प्रणेतावों के समान ही अपने रचित रामचरित मानस के माहात्म्य में सूचित करते हैं कि श्रद्धा भक्ति पूर्वक सुचित्त हो मनन ध्यान पूर्वक जिससे जितना बन पड़े इसकी थोड़ी बहुत चौपाइयों का ही उनका स्वारस्य हृदयंगम करते हुए अपने मानस पटल पर अंकित करते हुए अपने जीवन को साधन धाम और मोक्ष का द्वार समझ कर उन पर ही दृढ़ निष्ठावान बनकर चल पड़े अथवा अधिक न हो सके तो दस पाँच चौपाइयों का ही जो नियम पूर्वक मनः संयोग से पठन पाठ न करे तो उसकी पंचपर्वा अविद्या का समूल नाश श्री रघुनाथ जी करेंगे जिससे जीव भव पार हो जायगा।

अविद्या के पंच अंग हैं। (१) तम-अन्धकार अर्थात अनित्य में नित्य की भावना यथा—

मोह निसा सब सोवन हारा।
देखहिं स्वप्न अनेक प्रकारा

(क) अनातम में आत्मभाव यथाः—

सब बिधि सोचिय पर अपकारी।
निज तन पोषक निरदय भारी॥

(ख) भ्रमसे अशुचि में शुचिता जानना यथाः—

सेवहिं ... ...
जिमि अविवेकी पुरुष सरीरहिं

सङ्घ समाचार

दिसम्बर मास में संघ के ४१५ नये सदस्य बने। इस मास में ३२ नई शाखायें स्थापित हुईं, जिनका विवरण इस प्रकार है :—

शाखा संख्या १२७४ भीलवाड़ा (राजस्थान) स० ६ मंत्री श्री जानकी दास श्री महन्त। शा० सं० १२७५ चाईबासा (सिंगभूमि) स० २० मं० श्री गजाधर प्रसाद जी शर्मा। शा० सं० १२७६ जुन्हेटा (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री परमानन्द राय जी। शा० सं० १२०७ चौतलाय (होशंगाबाद) स० ६ मं० श्री शंकरलाल जी गौर। शा० सं० १२७८ अकलेरा। (राजस्थान) स० ६ मं० श्रीरामचन्द्र जी। शा० सं० १२७६ कामती मुर्गीठाना (होशंगाबाद) स० १२ मं० श्री दमरूलाल चौकसे। शा० सं० १२८० जसापुर (कानपुर) स० ६ मं० श्री राजारामजी तिवारी। शा० सं० १२८१ भंगहा (बहराइच) स०६ मं० श्री ठाकुरप्रसाद जी महन्त। शा०सं० १२८२ जाट (मध्यभारत) स० ६ मं० श्री मांगी लाल जी। शा० सं० १२८३ सिमरिया कलां (होशंगाबाद) स० २७ मं० श्री कोमलसिंह जी। शा० सं० १२८४ बसुरिया (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री भैयालाल जी। शा० सं० १२८५ बसुरिया (होशङ्गाबाद) स० १० मं० श्रीबाल-कृष्ण जी वर्मा। शा० सं० १२८६ बसुरिया (होशङ्गाबाद) स० १० मं० श्री सेवाराम जी पटैल। शा०सं०१२८७ बसुरिया (होशङ्गाबाद) स० १० मं० श्री छोटेलाल जी ब्रा०। शा० सं० १२८८ बसुरिया (होशङ्गाबाद) स० १० मं० श्री पं० मनबोध प्रसाद जी। शा० सं०१२८६ बसुरिया (होशङ्गाबाद) स०१० मं० श्रीसेवा राम ठिकवार। शा० सं० १२६० बसुरिया (होशङ्गाबाद) स० १० मं० श्री कालूराम जी कुतरहा। शा० सं० १२६१ बसुरिया (होशङ्गा-बाद) स० १०मंत्री श्री बालकिशनजी पड़हार। शा० सं० १२६२ बसुरिया (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री गया प्रसाद जी थापक। शा० सं० १२६३ बसुरिया (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री नर्मदा प्रसाद जी टेलर। शा० सं० १२६४ उमरिया चिनकी (होशङ्गाबाद) स०१४ मं०श्री भैरो प्रसाद जी। शा० सं० १२६५ नया खेड़ा (होशङ्गाबाद) स० ६ मं०। शा० सं० १२६६ मुहया खैरुवा (होशङ्गाबाद) स० १० मं० श्री मुरलीदास जी बैरागी। शा० सं० १२६७ मुहया खैरुवा (होशङ्गाबाद) स० १२ मं० श्री हरनाम सिंह पटैल। शाखा सं० १२६८ मुहया खैरुवा (होशङ्गाबाद) स० १० मं०। शा० सं० १२६६ बाबई कलाँ (होशङ्गाबाद) स० १० मं०। शा० सं० १३०० साले चौका रोड (होशङ्गाबाद) स० १० मं० श्रीयुत श्रीलाल स्थापक। शा० सं० १३०१ साले चौका रोड (होशङ्गाबाद स० १० मं० श्री शोभाराम राय जी। शा० सं० १३०२ बाबई कलां (होशङ्गाबाद) स० १० मं०। शाखा सं० १३०३ बधुवार (होशङ्गाबाद) स० ६ मं०। शाखा सं० १३०४ करपगाँव (होशंगाबाद) स० ६ मं०...। शाखा संख्या १३०५ (होशंगा-बाद) सदस्य ११ मंत्री...।

इस मास में प्रेमियों ने इस प्रकार शाखायें स्थापित कराई हैं—

१—श्री कंज जी रामायणी काशी २० पूर्व स्थापित ६४=८४

२—श्री बेधड़क जी ब्रह्मचारी १ पूर्व स्थापित २२=२३

३—श्री बद्रीदत्त जी व्यास १ पूर्व स्थापित २१=२२

४—श्री कुँ धनसिंह जी भदौरिया परौंख १ पूर्व स्थापित २२=२३।

श्री कंज जी द्वारा स्थापित शाखाओं की माला पूर्ण होने वाली है। उन्होंने जिला होशं-गाबाद में ११०० शाखायें पूर्ण करने का संकल्प किया है। उनकी लगन, लोक प्रियता तथा निःस्वार्थ सेवा भावना सराहनीय है। वे अवश्य सफल होंगे। अन्य प्रेमी भी एक एक जिला लेकर उद्योग करें तो सफल होंगे और ठोस प्रचार होगा।

द्वादश मानस संघ सम्मेलन भेलसा

मार्ग शीर्ष शुक्ल ३ गुरुवार तारीख २० नवम्बर से मार्गशीर्ष शुक्ल ६ रविवार तारीख २३ नवम्बर १९५२ तक भेलसा में मानस संघ सम्मेलन का द्वादश अधिवेशन हुआ। साथ में विष्णु यज्ञ का भी आयोजन किया गया था। इसका प्रारम्भिक कार्य एक दिन पूर्व मार्गशीर्ष शुक्ल २ को हुआ और पूर्णाहुति एक दिन पश्चात् मार्गशीर्ष शुक्ल ७ को हुई।

मार्ग शीर्ष शुक्ल ३ को प्रभात फेरी हुई श्रीहनुमान चालीसा के पाठ हुए अपरान्ह मेंश्री मारुति भगवान की शोभा यात्रा नगर में हुई। इसकी सुन्दर व्यवस्था थी तथा नागरिकों में अच्छा उत्साह था। मार्ग शीर्ष शुक्ल ४ से ७ तक नित्य प्रातः काल सूर्योदय के समय उज्जैन के बन्धुद्वय द्वारा प्रार्थना का सुन्दर क्रम चला। तीसरे पहर महिलाओं के लिये विशेष सभा होती थी और रात्रि में पुरुषों तथा महिलाओं की सम्मिलित बैठक। दोनों ही क्रम बन्धुद्वय की कथा से प्रारम्भ होते थे। वाद्य पर इनकी कथा बहुत रोचक होती थी। आगत व्यासों में प्रमुख थे (१) श्री बाबा रामदास जी ग्वालियर (२) वेदान्त भूषण पं० श्री रामकुमार दास जी अयोध्या (३) श्री पं० नर्मदा प्रसाद जी होशंगाबाद (४) श्री राम रक्षित जी रामवन (५) श्री पं० रामकृष्णजी सागर (६) श्रीबन्धुद्वय उज्जैन (७) श्री पं० विष्णु दत्त जी। इस सम्मेलन की विशेषतायें थीं (१) विष्णु यज्ञ (२) साधुमण्डली द्वारा भगवान की झांकी (३) और मार्गशीर्ष शुक्ल ६ को हुई श्री रामार्चा। यज्ञ की पूर्णाहुति के बाद श्री राम जी के रथ का चल समारोह दर्शनीय था। (४) रामवन के मानस यज्ञ के लिये श्री रामनाम लड्डू का मार्गशीर्ष ६ को समर्पण। लड्डू तथा कापियों आदि के मिला के कुल ११०५४५५६ नाम समर्पित किये गये। भेलसा जैन कालेज के विद्यार्थी चित्रेशचन्द्र ने सुन्दर चित्रमय रामनाम लिखे उन्हें एक व्यक्ति ने सुवर्ण पदक प्रदान किया।

मार्गशीर्ष शुक्ल ६ को श्रोताओं तथा कार्यकर्ताओं को धन्यवाद देकर सम्मेलन का कार्यक्रम समाप्त हुआ। मार्ग शीर्ष शुक्ल ७ को यज्ञ की पूर्णाहुति हुई। यथेष्ट प्रचार न होने के कारण शाखाओं से प्रतिनिधि नहीं आये और सम्मेलन का स्थानीय रूप ही रहा। पूरा भार था श्री गुरुदयाल ताम्रकार पर और उनके कुटुम्ब भर ने अथक परिश्रम किया। श्री श्याम लाल जी श्रीवास्तव शाखा मंत्री तथा पं० राम विहारी शुक्ल स्वागत मंत्री ने सराहनीय सहयोग प्रदान किया। लश्कर से आकर पं० राम स्वरूप दुबे जी ने भी पर्याप्त परिश्रम किया। स्वागताध्यक्ष पं० चन्द्रशेखर मिश्र शास्त्री पर यज्ञ का भार था। कार्य क्रम इतना भरा रखा गया था कि मुख्य ध्येय-मानस प्रचार पर विचार करने तक का किसी को अवसर नहीं मिला।

प्रभु को धन्यवाद है कि अनेक बाधाओं के रहते हुए भी अधिवेशन सफल हुआ।

त्रयोदश मानस संघ सम्मेलन डांगीढाना

होशंगाबाद जिले में नरसिंहपुर स्टेशन से ४ मील पर डांगीढ़ाना एक छोटा, पर सम्पन्न ग्राम है। जनसंख्या तो वहाँ की कुल ३७५ ही है पर ग्राम का महत्व है उसकी साप्ताहिक बाजार के कारण। काफी बड़ी बाजार लगती है हर गुरवार को। इसी ग्राम में त्रयोदश मानस संघ सम्मेलन का आयोजन हुआ मिती पूस सुदी १२ से १८ तारीख २७ से ३० दिसम्बर तक।

बड़ा सा मंडप बना और उसमें सुन्दर कलापूर्ण मंच। पक्की बाजार मंडप को सहयोग प्रदान कर रही थी! प्रथम दिवस पहिला सम्मेलन हुआ प्रभात फेरियों का। कितने ही ग्रामों की मण्डलियाँ आ गईं, उन्होंने ग्राम की फेरा लगाई, फिर समष्टि कीर्तन किया और अपने-अपने ग्रामों को वापस गईं। फिर हनुमान चालीसा के सामूहिक पाठ होकर हवन हुआ। सुन्दरकाण्ड का सामूहिक पाठ हुआ। दोपहर में श्री मारुति भगवान का जलूस निकला। प्रचार इतना श्रेष्ठ किया गया था। कि जलूस लौटने के पूर्व ही सभा मंडप जनता से भर गया था। दो बजे मंगलाचरण होकर कार्यारम्भ हुआ। स्वागताध्यक्ष श्री मुरलीधर पटैल ने अभिवादन किया। प्रवचन हुआ। जनता का उत्साह देखकर रात में भी प्रवचन की व्यवस्था की गई।

नित्य प्रभात फेरी, पाठ, दोपहर १२ बजे से साम ६ बजे तक और रात ८ बजे से १२ बजे तक प्रवचन का क्रम चलता था। आमंत्रित व्यासों के अतिरिक्त अनेक बिना बुलाये भी आ गये थे। कुल २० हो गये होंगे। अनवरत क्रम चलाकर भी सबको समय नहीं दिया जा सका। प्रमुख व्यास थे (१) मानस मार्तण्ड रामायणी श्री प्रेमदास जी मण्डलेश्वर, अयोध्या (२) श्री विनीत विहारी दास जी, चिरगाँव (३) श्री रामरक्षित जी, रामवन (४) श्री पं० नर्मदा प्रसाद जी होशंगाबाद (५) श्री कंज जी (६) श्री पं० भैरवप्रसाद जी, निरौंधा (७) श्री पं० कन्हैया लाल जी, कांटी (८) श्री रामकृष्ण जी, सागर आदि। ता० २९-१२-५२ को श्री स्वामी स्वरूपानन्द जी का प्रवचन हुआ और ता० ३०-१२-५२ को प्रयाग विश्वविद्यालय के डा० रामकुमार वर्मा एम० ए० पी० एच० डी० का प्रवचन राम नाम के वैज्ञानिक अनुसन्धान पर हुआ।

पूर्व निश्चित तिथि तक कुल कार्य पूरे नहीं हो सके इससे ३१-१२-५२ को भी दिन का कार्यक्रम रखा गया। इसमें प्रवचनादि के अतिरिक्त रामवन के मानस यज्ञ के लिये ११४३ श्री रामनाम लड्डू समर्पण किये गये। सभा में एक सूरदास आकर उपस्थित हो गये। उन्होंने कहा कि जब से यहाँ मानस संघ प्रचार प्रारंभ हुआ है मैं बड़ा सुखी हूँ। सुन-सुन कर मुझे रामायण कंठ होती जा रही है! उन्होंने रामायण सुनाई भी। स्वागतमन्त्री श्रीज्वाला प्रसाद जी कृषक ने अपना कार्य विवरण सुनाया और संघ के मन्त्री श्री शारदा प्रसाद जी ने श्रोताओं वक्ताओं और प्रबन्धकर्त्ताओं को धन्यवाद दिया।

इस सम्मेलन में इतनी जनता आती थी जितनी इसके पूर्व किसी में नहीं आयी। पूरा मैदान भर जाता था। एक दिन का लगभग १५००० का अन्दाज किया गया था। स्थानाभाव के कारण कई हजार व्यक्ति सभा में बैठ नहीं सके। बाजार से सुनते थे। बिना बाजार वाले ग्राम में एक पूरी बाजार भी लगी थी

और दूकानदारों की पर्याप्त बिक्री हुई। मंडप बाईं ओर की अमराई सैकड़ों बैल गाड़ियों से भर गई थी। कितने ही प्रेमी सकुटुम्ब अपनी बैलगाड़ियों पर बैठ कर कथा सुनते थे। भोजन व्यवस्था में प्राचीन भारतीय आदर्श का पालन था। हर समय भंडार खुला रहता था। कोई भी पहुंचे उसे भोजन कराया जाता था।

विभिन्न शाखाओं के मंत्री तथा प्रतिनिधि बड़ी संख्या में आये थे। सम्मेलन के अनवरत कार्यक्रम के कारण उनकी नियमित सभायें नहीं हुई; अनौपचारिक वार्तायें ही होती रहीं। मानस प्रचार का दृढ़ संकल्प हुआ और कार्यारम्भ कर दिया गया। सम्मेलन में २२ नई शाखायें स्थापित हुई। इसके बाद यह विवरण लिखने तक ४५ और स्थापित होने के समाचार आचुके हैं। प्रेमियों का संकल्प एक वर्ष में ११०० शाखायें स्थापित कराने का है।

आपसी वार्तालाप में रामवन के लिये एक मुट्ठी चना की चर्चा हो गई तो नीचे लिखे अनुसार चने के वचन प्राप्त हुए।

(१) श्री छोटे लाल पटैल, चौलाचोन—१S (२) श्री भैरोंप्रसाद बड़कुर, वसुरिया १ बोरा (३) श्री चौधरी राम नारायण जी देवरी—१S (४) श्रीमती सावित्री बाई, छोटी कोदारा १S१ (५) श्री फूलसिंह गुमाश्ता, तिरकाना। S५ (६) श्री ठा० हरशंकर ला० वधुवार। S (प्राप्त) (७) श्री किशोरीलालनेमा करेली बस्ती S५ (८),, रामचरन लालपटेल, करेली बस्ती S५। कुल १ बोरा + ४S६

इस सम्बन्ध में बाद हुई व्यवस्था का विवरण भविष्य में छपेगा।

प्रेमियों ने रामवन में डांगीढ़ाना कुटीर बनवाने का भी विचार किया है। आशा है सेंधवा कुटीर के सदृश यह भी शीघ्र सफल होगा।

हर दृष्टिकोण से यह सम्मेलन सफल हुआ। यहाँ के कार्यकर्त्ताओं का प्रेम सेवाभाव तथा उनकी लगन देखने लायक थी। स्वागताध्यक्ष शब्द का सच्चा चरितार्थ यहाँ देखा जा सकता था। श्री मुरलीधर पटैल घर द्वार, जन बच्चों और धन धान्य से स्वागत में लगे थे। स्वागत मंत्री श्री ज्वाला प्रसाद जी कृषक दो मील समनापुर में रहते हुए हर समय डांगीढ़ाना में उपस्थित रहते थे। आपका सौम्य स्वभाव और अथक परिश्रम दर्शनीय था। श्रीरोशनसिंह जी धौरेलिया तो ताके ही रहते थे कि कहीं त्रुटि न पड़ने पावे। श्री तुलसीराम जी की भोजन व्यवस्था अत्यन्त सराहनीय थी। नाम कहाँ तक लिखे जाँय जब जन जन में सेवा भाव था।

इस सम्मेलन के केन्द्र बिन्दु थे श्री कंज जी रामायणी। वह कौन था जिसकी दृष्टि इन पर न हो। कितने मानस संघ केन्द्र आपने स्थापित करा दिये हैं। उनके प्रधान मंत्री चले आ रहे थे श्री कंज जी के प्रेमपाश में बंधे हुए और सबको कंज जी सिर माथे पर ले रहे थे। दौड़ दौड़ कर चारों ओर की सम्हाल आपने रखी, सबकी सुविधा की व्यवस्था आपने की और जिले भर को मानस प्रचार का मंत्र आपने प्रदान किया। आपके शुभ प्रयासों ने क्या भावना जागृत की है जानना है तो श्री मुरलीधर पटैल के भाषण का निम्न अंश पढ़िये—

"हमारे पूज्य कंज जी ने हमारी दोनों तहसीलों में जहाँ लगभग ११ सौ गाँव होंगे, कुल १०८ शाखायें बनाकर यहाँ का काम पूरा हुआ समझ लिया तो यह मेरी छोटी बुद्धि में एक किस्त मात्र है। हमें तो इसके लिये सतत् प्रयत्न करना होगा, ताकि मानस पीयूष पीकर जन २ अमृत पुरुष बन सकें। पूरे ११ सौ गाँवों में कम से कम ३३ सौ मानस शाखायें बन जाँय। खुद आदर्श बनें, लोगों को प्रेरणा दें और सच्चे मार्ग में महात्मा तुलसीदास की राम राज्य कल्पना को साकारत्व दें।'

हर प्रकार यह सम्मेलन सफल हुआ। निकट भविष्य में इसमें हुए संकल्पों की सफलता की आशा है।

विविध समाचार

सुसारीः—ता० २०-६-५२ से २८-६-५२ तक ५७ सदस्यों द्वारा नवाह तथा व्यक्तिगत पाठ हुआ। अंतिम दिन जलूस तथा ब्राह्मण भोजन हुआ।

—गिरधर

जाटः—६ सदस्यों द्वारा नवाह पाठ हुआ। मंगलवार को सुन्दरकाण्ड का पाठ हुआ।

—मांगीलाल

वसहाः—आश्विन शुक्ल १ से ६ तक श्री दुलहा भगवान के मन्दिर में सामूहिक नवाह पाठ हुआ।

—सूर्यनारायण चौधरी

गोमियाँः—२४,२८,३१ दिसम्बर को सर्व श्री केशवसिंह, गोकुलचन्द्र, हीरालाल जी के गृह में रामायण एवं हरिकीर्तन बड़ी धूम-धाम से हुआ। बाद में प्रसादी वितरण हुई।

—उमाशंकर शर्मा

कुदरकोटः—अगहन शुक्ल १० से ११ तक अखंड पाठ तथा ११ से १४ तक हरे राम मंत्र का अखंड कीर्तन हुआ। तत्पश्चात् हवन ब्रह्म-भोज हुआ।

—पन्नालाल पालीवाल

चीचलीः—मिती क्वार वदी १५ तथा पौष कृष्ण ३० को अखंड पाठ हुआ।

—कन्हैयालाल श्रीवंश

सुरकुण्डाः—ता० २६-१०-५२ को गोपाष्टमी जलूस तथा हरिकीर्तन हुआ।

—अवधविहारी लाल

प्रागपुरा(पावटा):—गौहत्या बन्द होने तथा विश्वशान्त्यर्थ श्री पं० भूरामल जी शर्मा की अध्यक्षता में श्री मानस का अखंड नवाह पाठ पौष शुक्ला सप्तमी से पूर्णिमा तक हुआ।

—पं० गुलझारी लाल शर्मा

जरगाँवः—श्री ठा० शिवाधर सिंह के यहाँ अखंड मानस का पाठ हुआ। पूर्ति पर हवन, कीर्तन तथा प्रसाद वितरण हुआ। हर मंगलवार को सुन्दरकाण्ड का पाठ सम्पुट से होता है।

—सरस्वती प्रसाद त्रिवेदी

परौंखः—ता० २५-११-५२ को श्री हनुमान चालीसा के ११ पाठ तथा १५ सदस्यों द्वारा सामूहिक मानस के कुछ दोहों का गान, ता० २-१२-५२ को श्री हनुमान चालीसा के १५ पाठ तथा १८ सदस्यों द्वारा मानस के कुछ दोहों का गान, ता० ६-१२-५२ को श्री हनुमान चालीसा के २२ पाठ तथा २० सदस्यों द्वारा सामूहिक मानस गान हुआ। सभी के अन्त में मानस अन्ताक्षरी, कण्ठाग्र योजना तथा आरती एवं प्रसाद वितरण हुआ।

—कुँ० धनसिंह भदौरिया

बन्देमऊः—पौष शुक्ल २ को श्री शुशीला कुटी में पारिवारिक श्री अखंड रामायण हुई। समाप्ति पर हवन हुआ।

—राजाराम वर्मा

हसामपुरः—पौष सुदी ११ से २४ घण्टे का अखंडकीर्तन तथा मंगल के दो अखंड पाठ हुए।

—विद्याधर शर्मा

शहवाजपुरः—पौष पूर्णिमा को श्री थव-ईश्वर महादेव जी के दरबार में मंगल भवन अमंगल हारी, द्रवहु सो दशरथ अजिर बिहारी के दोहरे सम्पुट के साथ अखंड रामायण हुई। हवन समय पर ग्यारह पारायणी ने अपनी दो-दो पूर्ण रामायण पाठ की आहुति दी। २०५ ब्राह्मणों को मिठाई तथा फलाहार कराया गया।

—चन्द्रशेखर शास्त्री

परौंखः—ता० १६, २३, ३० जनवरी ५२ को क्रमशः श्री हनुमान चालीसा के १५,१५,१० पाठ तथा १८,१५,१० सदस्यों द्वारा सामूहिक मानस गान, मय विवेचन, मानस अन्ताक्षरी

कंठाग्र योजना पर प्रकाश डाला गया। पूर्त्ति पर आरती तथा प्रसाद वितरण हुआ।

—कुँ० धनसिंह भदौरिया

बेलखेड़ीसेढ़:—ता० ३-१-५० को श्री कंज जी की रामायण की कथा हुई। शाखा स्थापित हुई और रामवन एक बोरा चना भेजना निश्चित हुआ। यहाँ प्रचार केन्द्र स्थापित हुआ।

मगरधाः—श्री कंज जी की रामायण की कथा हुई। ४ नई शाखा स्थापित हुई और रामवन एक बोरा चना भेजना निश्चित हुआ। ता० ७-१-५३ को रीछा ग्राम में भी प्रवचन तथा ३ नई शाखा स्थापित हुई और एक बोरा चना रामवन भेजना निश्चित हुआ।

—तारापत पटेल

गयाः—अ० भ० रूपकला संकीर्तन का अधिवेशन ता० २८ से ३१ दिसम्बर तक हुआ। उद्घाटन विहार के राज्यपाल श्री रंगनाथ रामचन्द्र दिवाकर ने किया। विभिन्न प्रान्तों से लगभग १००० सन्त, महात्मा, उपदेशक तथा अन्य सज्जन आये थे। ३०-१२-५२ को श्रीरमाकान्त शास्त्री जी ने लगभग ५००० व्यक्तियों द्वारा श्री हनुमान चालीसा का सामूहिक पाठ कराया। ता० २९ को नगर कीर्तन हुआ। ता० ३१ को सन्ध्या समय 'जय जय सुर नायक' सामूहिक प्रार्थना हुई। चारों दिन कीर्तन, भजन व्याख्यान आदि की धूम रही। रात्रि में रामलीला, रासलीला होती थी।

—बैद्नाथ मिश्र

बौछारः—तीन दिन तक श्री कंज जी की रामायण की कथा हुई। दस शाखायें तथा केन्द्र स्थापित हुआ। रामवन एक बोरा चना देना निश्चित हुआ है। यहाँ से चलकर ग्राम वासनपाली में भी प्रवचन, शाखा तथा १ बोरा चना रामवन भेजना निश्चित हुआ है।

—थोवनसिंह पटेल

चाईबासा:—ता० २०-१२-५२ व २७-१२-५२ को अखंड पाठ हुआ। शाखा सदस्यों की बैठक में यह तय हुआ कि प्रत्येक एकादशी को अखंड पाठ हो।

—गजाधर वर्मा

दिघारीः—श्री कंज जी की रामायण की कथा हुई। ११ नई शाखायें स्थापित हुई।

—इमरतसिंह

सिमरियाः—श्री कंजजी का प्रवचन हुआ। ३ शाखा स्थापित हुईं। रामवन के लिये १ बोरा चना देना निश्चित हुआ है।

—हिम्मतसिंह

गोटेगाँवः—श्री कंज जी का प्रवचन हुआ। एक शाखा स्थापित हुई। १ बोरा चना रामवन भेजना निश्चित हुआ है।

—विश्वनाथसिंह माफीदार

प्रचार सहयोग

होशंगाबाद जिले के विभिन्न प्रेमियों ने कई प्रकार के सूचना पत्रक छपवा कर वितरण कराये हैं। संघ उनका आभारी है। विवरण नीचे लिखे अनुसार है।

श्री मुरलीधर पटैल, डाँगीढ़ाना ने ११०० शाखायें बनाने के लिये दो हजार पत्रक तथा दो हजार प्रार्थना पत्र। श्री रोशनसिंह धौरेलिया, खुरपा ने ११०० शाखायें बनाने के लिये दो हजार पत्रक तथा दो हजार नियम और सातपाँच चौपाई। श्री ज्वाला प्रसाद जी कृषक, समनापुर ने दो हजार सदस्य बनाने के पत्रक। श्री रामकृष्ण जायसवाल सालेचौका रोड—ने दो हजार मानस संघ के नियम तथा सातपाँच चौपाई। श्री लेखराम प्रागवार, चीचली, श्री कालूराम सोनी, साईखेड़ा, और श्री खजान्ची श्यामसुन्दर अग्रवाल वकील, गाडरवारा, प्रत्येक ने दो-दो हजार मानस संघ के नियम तथा श्रीकंज जी रामायणी द्वारा संकलित सातपाँच चौपाई। सब को इन सहयोग के लिये अनेक धन्यवाद।

—शारदाप्रसाद

रामवन समाचार

<u>मानस आश्रम</u> :—दिसम्बर मास में मानस का एक सम्पूर्ण पाठ नित्य होता रहा। इस मास में श्री मारुतिरागभोग में २४८।=)।।। खर्च हुआ और आय ४८।।) की हुई। १९९।।।=)।।। की कमी रही। मानस आश्रम में ३९९।)।। की आय हुई और खर्च २२३।-)।।। हुआ। इसमें १४५।।=)।।। की बचत हुई। कुल कमी ५४।) की रही। जो पिछली कमी ८०९।।)।।। सहित अब ८६३।)।।। हो गई। आशा है प्रेमी जन इसे पूर्ण करेंगे।

मानस आश्रम

४-१२-५२

९।) श्री गणेशदत्त कटारा, विजुरी

१८५) " गुप्तदान

६-१२-५२

३) " वी० पी० शुक्ला पन्ना

८-१२-५२

९।) " भीमराज ज्वाला प्रसाद, सतना

१०-१२-५२

७) " अश्विनी कुमार कुर्मी, बोरदा

११-१२-५२

९।) " रामचन्द्र लक्ष्मीचन्द्र, सतना

१७-१२-५२

२) " रामचन्द्र लक्ष्मीचन्द्र, सतना

३।।।=) " भीमराज ज्वाला प्रसाद, सतना

२३-१२-५२

५१) " बद्रीलाल रामप्रताप, चाटली

५) " दुर्गा तारापेन अग्रवाल, करगीरोड

३०-१२-५२

७५) " रामचन्द्र शर्मा कन्ट्रैक्टर तितलागढ़

३१-१२-५२

१५) " विट ठलदास मथुरालाल मोदी, मह्न

।।=)।। चढ़ोत्री

———

३९९।)।।

श्री मारुति रागभोग

४-१२-५२

११) " झाड़ूराम यादव, नैला

५) " कन्हैयालाल शर्मा पटवारी, घाटोली

५) " गणेशदत्त कटारा, विजुरी

५-१२-५२

२) " छोटेलाल अग्रवाल, इलाहाबाद

१०-१२-५२

५) " भागवत पाण्डेय, विरार

११-१२-५२

५) " रामनाथ कानोड़िया, कलकत्ता

१२-१२-५२

१०) " श्यामसुन्दर शर्मा, देहरादून

१५-१२-५२

२) " बाला प्रसाद पैगवार, जबलपुर

१) " कुँ० धनसिंह भदौरिया, परौंख

१६-१२-५२

५) " सहदेव प्रसाद ओवरसियर दुमका

२७-१२-५२

११) " जगमोहनलाल, जानसठ

३०-१२-५२

) " पन्नालाल, पालीवाल, कुदरकोट

———

४८।।) कुल दाताओं को धन्यवाद!

<u>श्री राम संस्कृत विद्यालय रामवन</u> :—में खर्च १८७।।-)। हुआ। श्री दयाराम अग्रवाल टिटिलागढ़ से ३ मास के लिये एक छात्र की छात्रवृत्ति के १५) प्राप्त हुये। इस प्रकार १७०।।-)।। की कमी रही। पिछली कमी ८०२=)। सहित अब ९७४।।।≡)।।। की पूर्ति करना बाकी है।

<u>पारायण मंदिर</u>:—श्री पं० भगवतीप्रसाद शाखा मंत्री रामपुर से ५) प्राप्त हुए। पिछली कमी ११-) में यह घटकर अब ६-)।। की कमी रही।

कुटीर विभागः—

सेंधवा कुटीरः—३१॥=) खर्च हुए। पिछली बाकी ५०।।-)॥ सहित अब ८२≡)।। बाकी है। हमें खेद है कि इसमें कुछ काम फिर भी बाकी रह गया है।

कोरी कुटियाः—दिसम्बर मास में २८७) प्राप्त हुए और २८३=) खर्च हुए। ३॥=) बाकी रहा। पिछली बचत ११३।-) सहित अब ११७≡) जमा रहे। हम उद्योग करेंगे कि जनवरी मास में यह कुटिया पूर्ण हो जाय।

४-१२-५२

१००) श्री रघुवर कोरी, खानपुर

१०) श्री मैकूलाल कोरी, रसधान

१५) श्री घसीट कोरी, सिलहरा

३०) सर्व श्री विशुनदयाल, ५) पंचमलाल सूबेलाल गुलरहा ५)

१०) सर्व श्री बहुरीप्रसाद, ५) सूबेलाल, २) बाबा मनफूल, १) बालीराम, १) मैकूलाल १)

७) सर्व श्री भजनलाल, २।) मुस्सां, १) मथुराप्रसाद, १) परसराम, १) शंकरलाल, ।।) मैकूलाल १)

११-१२-५२

१००) श्री दुलारे कोरी, झींझक

२६-१२-५२

५) श्री दीनदयाल कोरी, झींझक

१८-१२-५२

५) श्री श्यामलाल कोरी, परौंख

१६-१२-५२

२५) श्री मैकूलाल मोहनलाल कोरी, परौंख

———

२८७)

नर्मदाखण्ड कुटीरः—दिसम्बर मास में श्री पं० अम्बिकेश्वर पति त्रिपाठी, श्री अयोध्या जी से २) प्राप्त हुए। १८६॥।)॥। में यह घटाकर अब १८४॥।)॥। की पूर्ति करना बाकी है।

श्रीरामनाम मन्दिरः—इस मास में ३५३॥=)॥ खर्च हुए। पिछली कमी ८३५)। सहित अब ११८८॥≡) आना बाकी रहा। इसके दूसरे विभाग में पूर्ववत् २१४) जमा है।

श्री तुलसी मन्दिरः—पूर्ववत् ३४।)॥।जमा है।

पाकशालाः—दिसम्बर मास में ५११)। खर्च हुए और ५००) प्राप्त हुए। पिछली कमी ११५)। सहित अब १२६।)। प्राप्त होना बाकी है।

श्री राम संस्कृत विद्यालय भवन—पूर्ववत् ८६४॥-)॥ जमा है।

मानस प्रचारः—दिसम्बर मास में सदस्य शुल्क में ८४।) तथा श्री चोवाराम वर्मा, बारगाँव से ।=)।मानस प्रचार के लिये कुल ८५=)। की आय हुई। खर्च कार्यालय में १२६-) पत्र व्यवहार में ४८॥=)॥ कुल १७७॥≡)॥ हुआ। ६३॥-)। की कमी रही। पिछली बचत ८।=)। घटाकर ८४।≡) की कमी रही।

श्री तुलसी संग्रहालयः—के लिये श्री कुँ० धर्नासिंह भदौरिया परांखने,१—सुन्दर विलास २—कपिल गीता ३—मानव धर्म ४—श्री कृष्ण चरितामृत सागर ५—परमार्थ पत्रावली ६—सामवेदी सन्ध्या ७—देवर्षि पितृतर्पण विधि तथा श्रीमान महराज साहब शिवदानसिंह जी उदयपुर ने श्री बेधड़क जी द्वारा १—श्री गीता जी मेवाड़ी बोली में २—श्री चतुर शिरोमणि ३—सांख्य कारिका ४—अनुभव प्रकाश ५—महिम्नस्तोत्र ६—श्री योग सूत्र ७—श्री मानव मित्र रामचरित्र ८—परमार्थ विचार ९—रामायण के अमूल्य रत्न १०—समान बत्तीसी ११—चन्द्रशेखर स्तोत्रम् पुस्तकें भेजने की कृपा की है।

श्री राम नाम लड्डूः—दिसम्बर मास में १६८ लड्डू तैयार हुये जिसमें १५५ लड्डू श्री मारुति जी को समर्पण हुये। बाकी मानस

तृतीय के लिये रखे गये हैं केन्द्रों की स्थिति इस प्रकार है—गुलजारबाग पटना ५०४, करकेड़ी ३५८, जबलपुर २४१, लादीगढ़ २२१, रामवन १८२।

मानस यज्ञ:—दिसम्बर मास में मानसयज्ञ के लिये ४२६॥) प्राप्त हुए। पूर्व प्राप्त २७४) सहित अब ७०३॥) जमा है। अब तक कुल ६६ साधकों की स्वीकृत आ चुकी है।

४-१२-५२

२५) श्री रामेश्वर प्रसाद पटैरिया रमेश, उन्नाव बालाजी

२५) श्री मीठालाल राठी, दुर्ग

५-१२-५२

१०१) सर्व श्री नन्दकिशोर जी, किशन स्वरूप माथुर, लाला जौहरी मल, ओम प्रकाश, दिल्ली

८-१२-५२

१५) श्री गिरधर सहाय अगोसिया, झालावाड़

२५) श्री तीरथराम, मन्त्री शाखा बुन्देली

६-१२-५२

१२।) श्री कुँ० धनसिंह भदौरिया, परौंख

१०-१२-५२

२५) श्री किशनलाल मुंदड़ा बम्बई

१५-१२-५२

२५) श्री लाला लक्ष्मीनारायण जैसवाल, कटोरी

१६-१२-५२

२५) श्री गोविन्दलाल जैसवाल, कटोरी

१८-१२-५२

२५) श्री कृष्ण मिल, बरहिया

१६-१२-५२

२५) श्री लक्ष्मण करण वि० मेहता, बाँदा

२३-१२-५२

१।) श्री शिवराज तिवारी, सौरहवा

२४-१२-५२

२५) श्री सीताराम शान्त प्रभाकर, बनारस

३०-१२-५२

२५) श्री बृजभूषन गनेड़ीवाला, गोरखपुर

२५) श्री हीरालाल वर्मा, भण्डारा

२५) हरिश्चन्द्र जी, रीवां

———

४२६॥)

———

मानस यज्ञ को अपना सहयोग दीजिये।

मानस संघ के नियम

उद्देश्य—विश्व कल्याण

उपाय—गो० तुलसीदास-कृत रामचरितमानस का समुचित प्रचार।

सदस्य—इसके सदस्य रामचरितमानस के पाठ करने वाले सभी स्त्री-पुरुष हो सकेंगे।

कर्त्तव्य—(१) प्रत्येक सदस्य को वर्ष में कम से कम दो बार रामचरितमानस के नवान्हिक या मासिक पारायण का वचन, अथवा नित्य पारायण करने का वचन देना होगा।

(२) नवान्हिक पारायण यथासम्भव चैत शुल्क १ से ९ तक तथा आश्विन शुल्क १ से ९ तक के शुभ अवसर पर किये जायँगे।

(३) पारायण अधिक संख्या में करना उत्तम है।

(४) प्रत्येक सदस्य का कर्त्तव्य होगा कि वह कम से कम दो नये सदस्य अवश्य बनावें।

शुल्क—प्रत्येक सदस्य को प्रवेश शुल्क ।।) प्रधान कर्यालय को भेजना होगा। वार्षिक या मासिक चन्दा न लगेगा। प्रधान कार्यालय से नियमादि की प्रतियाँ तथा अन्य वितरणार्थ प्रकाशित सूचनएँ आदि बिना मूल्य मिला करेंगी।

कार्यालय—संघ का प्रधान कार्यालय रामवन (विन्ध्य-प्रदेश) में है।

शाखा—(१) जिस स्थान में ९ सदस्य हो जायँगे वहाँ एक शाखा स्थापित हो जायगी।

(२) शाखा के सदस्यों को अपना मंत्री बहुमत से चुन लेना चाहिये।

(३) चैत्र तथा आश्विन में सामूहिक पारायण कराने का प्रयत्न करना शाखा का कर्त्तव्य होगा।

(४) मन्त्री, शाखा के प्रचार तथा पत्र-व्यवहार आदि का काम किया करेंगे।

शारदा प्रसाद
मन्त्री, मानस संघ (रजि०) पो० रामवन वाया सतना।

मानससङ्घ द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

श्री महेन्द्र पुस्तकमाला

१—श्री रामचरितमानस में वीर रस (श्री शारदा प्रसाद जी) -)
२—ध्यान के समय एफ.जे. अलेकजएडर) ॥≡)
३—श्रीरामचरितमानस में माता सुमित्रा (श्री सुदर्शन सिंह जी) ≡)॥
४—समुझाई (मानस राजहंस पं० श्री विजयानन्द त्रिपाठी) ॥)
५—श्री रामचरितमानस में महाराज जनक (वेदान्तरत्न रामयण-भूषण श्री अवध किशोर दास जी श्रीवैष्णव) ।-)
६—भक्त शबरी (पं० भागवत द्विवेदी आयुर्वेदाचार्य) ≡)॥
७—श्रीमानस पारायण पूजन विधि(वेदान्त-भूषण पं०श्री रामकुमार दास जी) ।=)
८—महासती अनसूया (पं० देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।-)
९—ब्रह्मर्षि वसिष्ट (श्रीसुदर्शन सिंहजी) ।)
१०—धर्मशीला कौशिल्या (पं० देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।-)
११—स्नेहमयी कैकई (पं० देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।-)
१२—तुलसी मुक्तावली प्रथम किरण (श्री शम्भुप्रसाद बहगुना, एम०ए०डिप०साइ० ।॥-)
१३—तुलसी मुक्तावली द्वितीय किरण (श्री शम्भु प्रसाद बहगुना एम० ए० डिप० साइ०) ।॥)
१४—मानस मूल (मानस राजहंस पं० श्री विजयानन्द जी त्रिपाठी) ॥)
१५—मानस-व्याकरण (श्री मानसराजहंस पं० विजयानन्द जी त्रिपाठी) -)
१६—सचिव सुमन्त्र (सुदर्शसिंह) ।-)
१७—विवेकी विभीषण (सुदर्शनसिंह) ॥)
१८—मानस महत्व (पं० भैरवानन्द) १)

श्री मानस-रत्नावली ग्रंथमाला

१—संगीत रामायण (द्वितीय संस्करण) =)
२—रामवन 'श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र') ।≡)
३—सार्थ श्री रामतारक प्रयोग विधि (महान्त श्री रामपदार्थ दास जी महाराज एवं वेदान्त भूषण पं० श्रीराम कुमार दास जी रामायणी) ॥)
४—कीर्तन मुक्तावली (पं० बाबूराम शर्मा) ॥-)
५—सब ग्रंथन को रस(रा०सा० हीरालाल) १)

श्री कौशलेन्द्र कथामाला

१—नव निर्झरिणी (नवधा भक्ति पर ९ कहानियाँ) (श्री चक्र) ।=)
२—अष्टदल (कहानियाँ) (श्री चक्र) ।=)
३—नूतन नवरत्न (कहानियाँ) (श्रीचक्र) ।=)
४—दिव्य दशमी (श्री चक्र) ।=)
५—मानस मन्दाकिनी प्रथम हिलोर (श्री चक्र) ।)॥
६— ,, ,, द्वितीय ,, (श्री चक्र) ।-)
७— ,, ,, तृतीय ,, (श्री चक्र) ।-)

रामदास भक्तमाला

१—महाभागवत चरित: (पहिला भाग) (महात्मा श्री बालकरामजी विनायक) १)
२—महाभागवत चरित (दूसरा भाग) (महात्मा बालक रामजी विनायक) ।)

पीयूष प्रवाह

१—विश्व साहित्य में रामचरित मानस (काव्य समीक्षा) (श्री राजबहादुर लमगोड़ा) १=)
२—श्री भगवन्नाम संकीर्तन (श्री सुदर्शन सिंह) -)॥

रजिस्टर्ड नं०—

मानस संघ के विविध कार्य

१—वर्ष में श्रीरामचरितमानस का दो पाठ करने की प्रतिज्ञा करने वाले सज्जन मानस संघ के सदस्य बनाए जाते हैं। आजीवन शुल्क ॥) है। जहाँ नौ सदस्य हो जाते हैं, वहाँ शाखा बन जाती है। इस समय देश में मानस संघ के २६२०० सदस्य हैं और १३२६ शाखायें हैं।

२—रामचरितमानस का प्रचार एवं अध्ययन व्यापक करने के लिए यह 'मानस मणि' मासिक पत्र ग्यारह वर्ष से निकल रहा है। इस का वार्षिक मूल्य ३) है।

३—तुलसी साहित्य का प्रकाशन मानस प्रकाशन लिमिटेड द्वारा होता है। कम्पनी का प्रत्येक शेयर १०) का है। कम्पनी १६ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है। स्थायी ग्राहक शुल्क २) है। स्थायी ग्राहकों को प्रकाशित ग्रंथों पर २५ % कमीशन दिया जाता है।

४—श्रीरामचरितमानस पत्र व्यवहार विद्यालय द्वारा मानस संघ घर बैठे श्रीरामचरितमानस की शिक्षा देता है। विद्यालय का पाठ्य विषय तीन वर्षों का है और प्रथम वर्ष का शुल्क १०) है।

५—मानस आश्रम में नित्य अखण्ड मानस पाठ होता है। यहाँ रह कर साधक एकान्त में साधन भजन करते हैं।

६—तुलसी संग्रहालय भी रामवन में है।

७—मानस संघ राम नाम लड्डू लेखन का प्रचार करता है। ये लिखित रामनाम श्रीमारुति जी को अर्पण किये जाते हैं। २७ करोड़ अर्पित हो चुके हैं।

८—श्री राम संस्कृत विद्यालय में वाराणसेय-परीक्षा के पाठ्यक्रम के साथ मानस अध्ययन की भी सुविधा रखी गई है।

हर विभाग में आपका सहयोग अपेक्षित है।

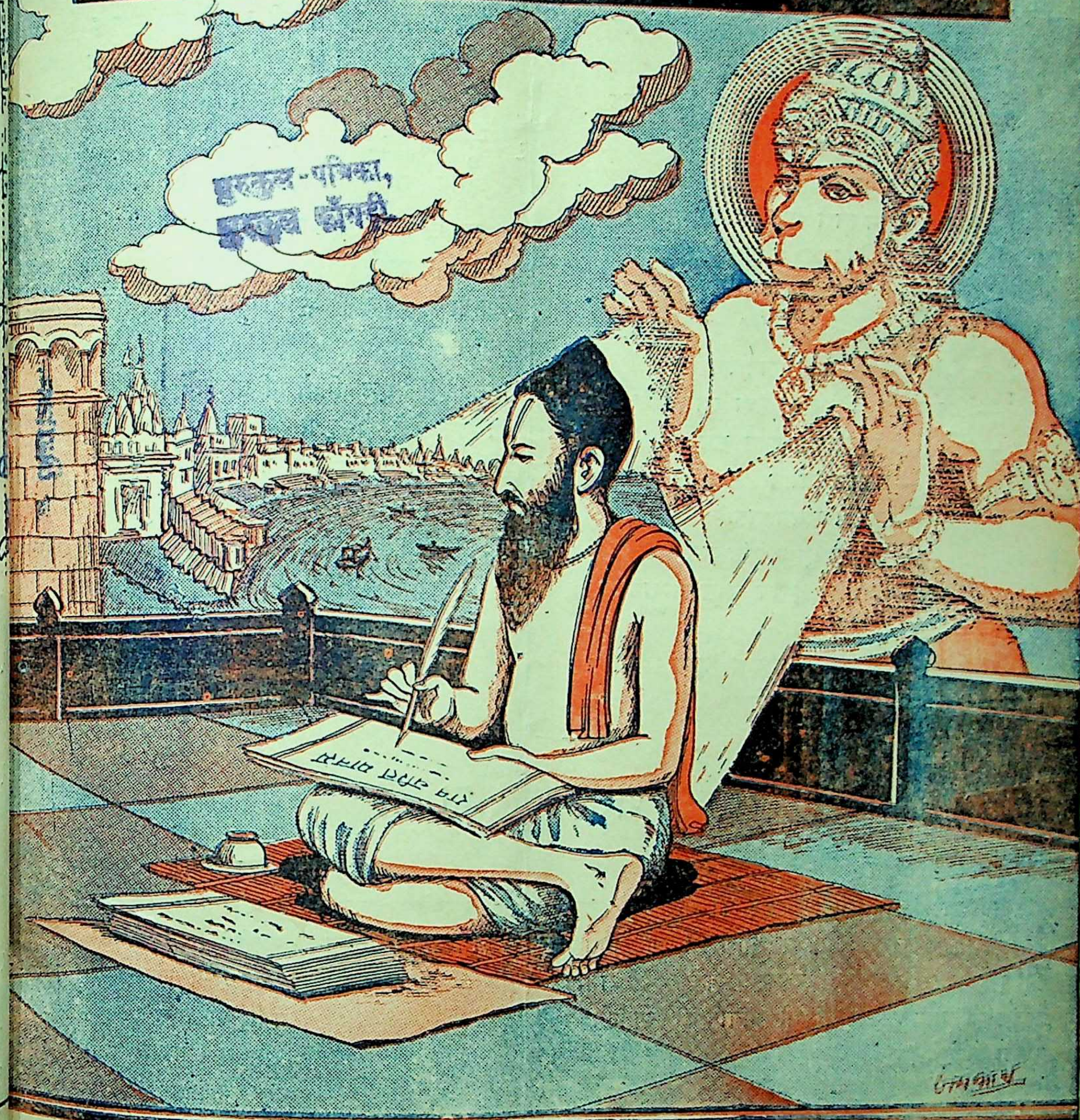


'मानस मणि'
पो०— रामवन (सतना)

ग्रा० नं०— ८

श्री— सम्पादक जी
गुरुकुल पत्रिका, गुरुकुल कांगड़ी

सम्पादक—सुदर्शन सिंह
प्रकाशक—शारदा प्रसाद, मन्त्री, मानस सङ्घ, रामबन, (सतना)। मुद्रक—माधो प्रिंटिंग वर्क्स, प्रयाग



मणि ११ | मार्च १९५३ | आलोक ३

वार्षिक मूल्य तीन रुपया
वी० पी० से तीन रुपया छः आना

सूचना

आगामी चैत्र नवरात्र में रामवन में मानस यज्ञ होना निश्चित हुआ हैं। यह चैत्र शुक्ल १ सोमवार तारीख १६ मार्च को प्रारम्भ होगा और पूर्णाहुति चैत्र शुक्ल ६ मंगलवार तारीख २४ मार्च को होगी। निम्न कार्यों की व्यवस्था हो रही है।

१—१२५ साधकों द्वारा मानस का सामूहिक पाठ तथा हवन

२—नित्य श्री रामार्चा

३—मानस गायन द्वारा यज्ञ (अन्य मंडप में) श्री गोविन्द विद्यालय दधपा जिला गया के अध्यापकों तथा छात्रों द्वारा।

४—एक नौका (६०६०६६०६) नाम जप

५—एक नौका लिखित रामनाम समर्पण

६—श्री रामनाम मंदिर की सवा लाख परिक्रमा

७—नीचे लिखे अनुसार अखण्ड क्रम

१—अखण्ड ज्योति

२—अखण्ड मानस पाठ

३—अखण्ड सुन्दर कांड पाठ

४—अखण्ड हनुमान चालीसा पाठ

५—अखण्ड जप

६—अखण्ड रामनाम परिक्रमा

७—अखण्ड संकीर्तन

८—अखण्ड मानस गायन (बिलासपुर मंडलियों द्वारा)

८—प्रवचन, कथा। मानस के मराठी पद्य में अनुवादक महात्मा श्री स्वामी प्रज्ञानानन्द जी सरस्वती पूना से आवेंगे। श्री रामरक्षित जी तथा अन्य व्यास भी आवेंगे।

६—नूतन संवत्सर पूजन, प्रभात फेरी, सामूहिक प्रार्थना, गो-सेवा आदि कार्य भी होंगे।

यह यज्ञ स्वयं उसमें भाग लेने वालों की ओर से होगा। विविध कार्य विविध मंदिरों तथा मंडपों में होंगे। आशा है प्राचीन ऋषि आश्रमों की झलक प्राप्त होगी।

प्रार्थना है कि इष्ट मित्रों सहित इसमें पधार कर आप भी भाग लेने की कृपा करें। महिलाओं तथा बालकों को भी भारतीय संस्कृति के आदर्श जीवन का दर्शन करायें। प्रत्येक दिन का कार्यक्रम बराबर महत्वपूर्ण रहेगा। कभी भी आइये।

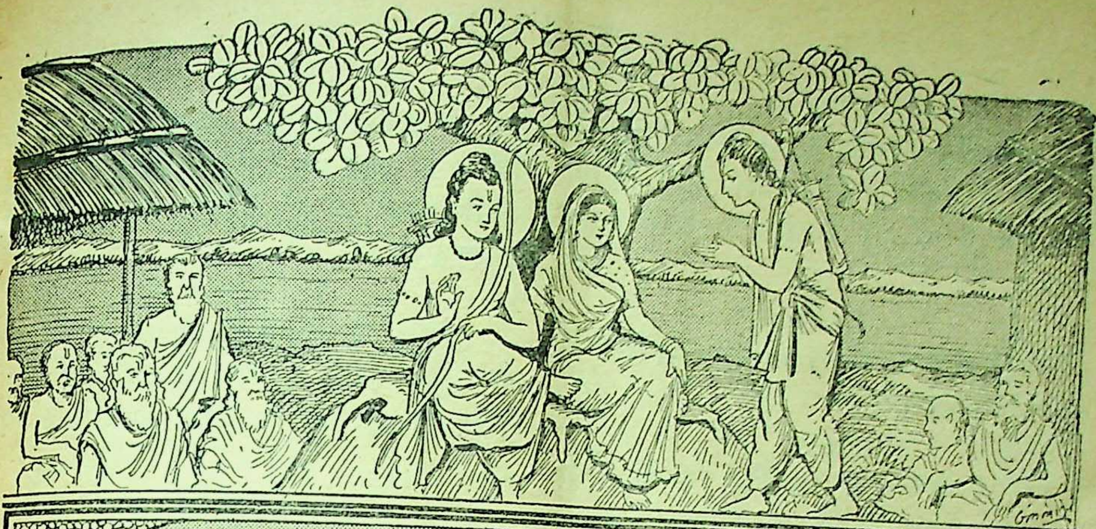
शारदा प्रसाद
मंत्री मानस संघ
पो० रामवन (वाया 'सतना')

चैत्र पारायण सूचना

इस वर्ष नवरात्र के पारायण चैत्र शुक्ल १ सोमवार तारीख १६ मार्च १६५३ को प्रारम्भ होकर चैत्र शुक्ल ६ मंगलवार ता० २४ मार्च को पूर्ण होंगे। आशा है आप अपने यहां व्यवस्था करेंगे। श्री राम नवमी को मानस जयन्ती भी मनाने की व्यवस्था करना चाहिये।

प्रति वर्ष के सदृश संघ के नये सदस्य बनाने, शाखायें स्थापित कराने तथा मानस-मणि के ग्राहक बनाने का उद्योग तो होना ही चाहिये।

शारदा प्रसाद
मंत्री, मानस संघ
पो० रामवन (वाया सतना)



मानस मणि

राम भगति मनि उर बस जाकें। दुख लवलेस न सपनेहु ताकें॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं॥

णि १२ | रामवन—चैत्र, मानस संवत् ३७९—मार्च १९५३ | आलोक ३

मानस की सूक्तियाँ

सत्य कहहिं कवि नारि सुभाऊ। सब बिधि अगहु अगाध दुराऊ॥

+ + +

काह न पावक जारि सक, का न समुद्र समाइ।
का न करै अबला प्रबल, केहि जग कालु न खाइ॥

+ + +

लिखत सुधाकर गा लिखि राहू। बिधि गति बाम सदा सब काहू॥
धरम सनेह उभय मति घेरी। भइ गति साँप छुछूँदर केरी॥

+ + +

सुरसर सुभग बनज बनचारी। डाबर जोग कि हंसकुमारी॥

+ + +

एहि ते अधिक धरम नहिं दूजा। सादर सास ससुर पद पूजा॥

+ + +

गुर श्रुति संमत धरम फल, पाइअ बिनहिं कलेस।
हठ बस सब संकट सहे, गालव नहुष नरेस॥

+ + +

मानस सलिल सुधा प्रतिपाली। जिअइ कि लवन पयोधि मराली।
नव रसाल बन बिहरन सीला। सोह कि कोकिल बिपिन करीला॥

—:*:—

(५९०)

असन्तोष की कोई सीमा नहीं। विश्व का समस्त धन, सम्पूर्ण अन्न और सभी स्त्रियाँ एक व्यक्ति के भी सन्तोष के लिये पर्याप्त नहीं।

(५९१)

वही बुद्धिमान है जो जीते हुये या मरों का भी सोच नहीं करता।

(५९२)

विषय चिन्तन से आसक्ति, आसक्ति से काम, कामपूर्ति न होने से क्रोध, पूर्ति होने से मोह, फिर मोह या क्रोध से सम्मोह, सम्मोह से स्मृति नाश और स्मृति नाश से बुद्धि नाश होकर सर्व नाश होजाता है। अतः विषय चिन्तन ही मत करो।

(५९३)

कर्मों का आरम्भ न करने या उनका त्याग कर देने से ही सिद्धि नहीं मिलती। सिद्धि तो मन की असंगता से मिलती है।

(५९४)

जो मरने से पूर्व यहीं काम और क्रोध के वेग को सह सकता है वही योगी और वही सुखी पुरुष है।

(५९५)

जो जिसका चिन्तन करता हुआ मरता है उसे वही योनि प्राप्त होती है।

(५९६)

मनुष्य जीवन भर जिसका स्मरण करता है, मृत्यु के समय भी वह स्मरण होता है।

(५९७)

जिसका आहार-विहार, सोना-जागना नियमित है वही साधन कर सकता है जो इन्हें अधिक या बहुत कम करता है वह नहीं।

(५९८)

धन और कुटुम्ब का त्याग सरल है। पर कीर्ति लोभ का त्याग बहुत कठिन।

(५९९)

जो शास्त्र या पूर्व पुरुषों द्वारा निश्चि नियम का उल्लंघन करके कार्य करता है, उ न तो कार्य सिद्धि होती, न सुख, और परलोक ही।

(६००)

दुष्कर्म आरम्भ में सुखद पर परिणाम घोर दुखद होता है। पर सुकर्म आरम्भ दुखद पर परिणाम में महान सुखदायी हो है।

(६०१)

विश्वास ही मूल है। यदि विश्वास तो किसी भी कार्य के पूर्ण होने में स है।

(६०२)

सज्जनों का यह स्वभाव होता है दूसरों के अपराध नहीं देखते। पर अ अपराध उन्हें खटकता है।

(६०३)

जो महापुरुष की निन्दा करता है वह निन्दित बनता है। महापुरुषों का तो निन्दा से कुछ बिगड़ता नहीं।

(६०४)

क्या गुलाब में कांटा होता है इसी वह त्याज्य है?

(६०५)

जुआरी में सत्यवादिता और आचार में धैर्य होना असम्भव है

(६०६)

नशेबाज कभी ज्ञानी हो ही नहीं सकता

(६०७)

क्रोध ही सबसे बड़ा शत्रु है। श चाहे छोड़ भी दे पर यह आते ही ह सुसंस्कारों को चौपट कर देता है।

(६०८)

कठोरता बुरी है। पर विपत्ति में कठो महापुरुषों में ही होती है।

ऋषि गीता

—सुदर्शन सिंह

(द्वितीय भवन)

लोचन चातक जिन करि राखे।
रहहिं दरस जलधर अभिलाखे॥
निदरहिं सरित सिन्धु सर भारी।
रूप बिन्दु जल होंहिं सुखारी॥
तिन्हके हृदय सदन सुखदायक।
बसहु बन्धु सिय सह रघुनायक॥

जिन्होंने अपने नेत्रों को चातक बना रखा है। वे चातक बने नेत्र केवल आपके घनश्याम श्रीअंग की छटा रूप मेघ के दर्शन की ही नित्य अभिलाषा करते हैं। चातक जैसे सरिताओं तथा समुद्रों की जलराशि का तिरस्कार करके केवल स्वाती की एक बूँद से तृप्त होता है, वैसे ही जो सांसारिक तथा स्वर्गीय सौन्दर्य की ओर से सर्वथा मुख मोड़ चुके हैं और आपके रूप की एक झांकी से आनन्दित होते हैं, ऐसे दर्शन के अभीप्सु भावुक भक्तों के हृदय आपके लिये सुखदायी सदन हैं। रघुनाथजी, आप श्री जानकी तथा लक्ष्मणजी के साथ उनके हृदय में निवास करें।

दोहावली में श्री गोस्वामीजी ने चातक के प्रेम के विषय में बहुत कुछ कहा है। चातक चाहे प्यासों मर जाय, पर उसे दूसरे किसी पानी की चाह नहीं। उसकी प्यास तो स्वाती के मेघ की बूँद ही बुझा सकती है। मरते मरते वह गंगा जी में पड़ जाय तो भी अपना मुख बन्द कर लेगा या चोंच ऊपर उठा देगा कि कहीं उसके मुख में गंगाजल न चला जाय। वह मेघ का अनन्य प्रेमी है। स्वाती नक्षत्र वर्ष में एक बार आता है और उसमें भी कभी वर्षा होती है, कभी नहीं होती। चातक को भूमि में पड़ा जल पीना नहीं है। स्वाती की वर्षा की बूंद भी जब उसके मुख में सीधे गिरे, तभी वह उसे पियेगा। बेचारे चातक को मेघों से जल की वह दो चार बूंदें तो भाग्यवश कभी मिलती हैं, हाँ दूसरे नक्षत्रों में मेघ उसके पंख भिगाता है, उस पर ओले भी पड़ते हैं और कभी कभी बिजली भी गिरती है। इतने पर भी चातक के मन में मेघ के एक भी दोष नहीं आते। वह कभी रूठना जानता ही नहीं। उसका प्रेम अटूट है, अपार है।

जिनके नेत्रों में वही प्यास है श्रीराम की एक झांकी पाने के लिये जो चातक में स्वाती की बूंद के लिये होती है, जिनकी प्रतीक्षा चातकके समान निरन्तर चलती है, कभी टूटती या थकती नहीं, जिनका विश्वास कभी डिगता नहीं, जिन्हें कभी निराशा नहीं घेरती, अनेकों कष्ट आने पर भी जो न तो आराध्य में दोष देखते और न एक क्षण के लिये भी दर्शन की प्रतीक्षा से विचलित होते, जिनके मन को एवं नेत्रों को संसारके रूप तो भला खींच ही क्या सकते हैं, आराध्यरूप से भिन्न भगवान के भी दूसरे रूप खींच नहीं पाते, सफलता शीघ्र हो इस लोभ में स्वप्न में भी जो इष्ट रूप तथा मन्त्र के परिवर्तन की बात सोच नहीं सकते, वे ही महाभाग ऐसे हैं कि श्रीराम उनके हृदय में निवास करें। श्री कौशलराजकुमार को आनन्द देनेवाला सदन तो उनका ही हृदय मन्दिर है।

'निदरहिं सरित सिन्धु सर भारी।'

यह चातक प्रेम का आदर्श यदि अध्यात्म-मार्ग के पथिक के सम्मुख न रहे तो उसकी प्रगति कभी सम्भव नहीं है। भगवान के अनन्त नाम हैं, अनन्त रूप हैं और उन सर्वेश्वर को प्राप्त करने के साधन भी अनेक हैं। शास्त्रों में साधनों के वर्णन की ऐसी शैली है कि जहाँ जिस साधन या भगवद्रूप का वर्णन किया जाता है, वहाँ उसी को सर्व श्रेष्ठ, सर्व सुलभ, सर्वोपरि प्रतिपादित किया जाता है, क्योंकि जो जिस साधन का अधिकारी है, उसके लिये वही सर्वश्रेष्ठ है। शास्त्र केवल अधिकारी के लिये वर्णन करते हैं। जो जिसका अधिकारी नहीं है, उसके लिये वह वर्णन भी नहीं है। जिसमें दृढ़ निष्ठा नहीं है, वह जब अपने अधिकार के प्रतिपादक शास्त्रों से भिन्न अन्य अधिकार प्रतिपादक शास्त्रों को पढ़ता है तो उसकी बुद्धि में भ्रम उत्पन्न हो जाता है। वह कभी एक और कभी दूसरे साधन को अपनाने की बात सोचने लगता है।

जो बात शास्त्रों के विषय में है, वही आचार्यों, सन्तों एवं भक्तों के विषय में भी है। फिर वे गृहस्थ हों या साधु। जो जिसका उपासक है, उसके लिये वह परात्पर भगवद्-रूप है। जो जिस साधन पथ का पथिक है, वह उसको सुगम मानता है और उसके लाभ उसने देखे हैं। फलतः वह उसी को सर्व श्रेष्ठ एवं सुगम बतावेगा। जब श्रीगोस्वामी जी से किसी ने श्रीराम को द्वादश कलावतार एवं श्रीकृष्ण को षोड़शकलावतार कहा तो गोस्वामीजी ने उत्तर में एक दोहा सुना दिया—

जौं जगदीस तौ अति भलो, जौं महीस बड़भाग।
तुलसी चाहत रामपद, जनम जनम अनुराग॥

जैसे अयोध्या जाने के अनेक मार्ग हैं। आप पूछते हैं—'सबसे छोटा और सुगम मार्ग कौन सा?' अरे भाई, यह प्रश्न ही ठीक नहीं। जो जहाँ है, वहाँ से अयोध्या जो मार्ग जाता हो, वही उसके लिए छोटा और सुगम मार्ग है। दूसरे मार्ग उसके लिए चक्करदार मार्ग हैं। ऐसे ही भगवान के सभी रूप तथा सभी नाम नित्य, दिव्य, चिन्मय, मङ्गलमय हैं। उन सबमें अपार प्रभाव है। उनमें कोई छोटा-बड़ा या सुगम दुर्गम नहीं। जिसका जो इष्ट है, जिस का जो अधिकार है, उसके लिए वही सुगम तथा सर्वोपरि है। ग्रन्थों को पढ़कर या लोगों की बातें सुनकर चित्त को डावाँडोल नहीं करना चाहिए। जहाँ जिस भगवद्रूप तथा मन्त्र या नाम का जो प्रभाव, जो महिमा लिखी है या सुनी जाती है, वह सब हमारे ही आराध्य रूप एवं आराध्य नाम की महिमा है, यही परम सत्य है। उपासक की निष्ठा का तो यह रूप है—

'बनै तो रघुबर ते बनै, बिगरै तो भरपूर।
तुलसी औरनि ते बनै, वा बनिबे में धूर॥'

भगवत्प्राप्ति में यह सबसे बड़ा विघ्न है कि हम अपनी अयोग्यता की ओर ही देखते हैं और सोचते हैं कि भला हमें भगवान कैसे मिलेंगे। भगवान अनन्त कृपासमुद्र हैं, वे हम पर भी अवश्य कृपा करेंगे, यह दृढ़ विश्वास उपासक में नितान्त आवश्यक है। सांसारिक कष्टों से, विघ्नों से और बहुत देर होने से भी जिसका विश्वास डिगता नहीं, वही सच्चा भक्त है। उसीकी निष्ठा चातक के समान अनन्य है। जिसके नेत्रों में श्री राघवेन्द्र के दर्शनों की ऐसी पिपासा है; जैसे प्यासे मनुष्य को होती है। जब तक पानी न मिले, उसे दूसरा कुछ नहीं सूझता। चाहे जितनी देर हो पानी की माँग उसकी बन्द होने के बदले बढ़ती जाती है। जिन धन्य लोचनों में ऐसी प्यास लगती है, उनके हृदय में 'अनुज जानकी सहित' श्रीराम उसी क्षण से निवास करने लगते हैं। वह हृदय उन आनन्दसिन्धु को भी आनन्द देनेवाला भवन बन जाता है।

श्री मङ्गल पचीसी

(ले० मानस तत्वान्वेषी पं० श्रीरामकुमारदास जी रामायणी 'वेदान्त-भूषण, साहित्य-रत्न, मणिपर्वत, अयोध्या)

(१)

रामसीय पितु मातु बन्धु सुत सखा दास गन।
सबही के पद पद्म नमौं सिर कर्म वचन मन॥
जिनकी कृपाकटाक्ष त्यागि सब मायिक बन्धन।
गाइ विमल यश राम कुमारहिं पावैं पद जन॥
सानुकूल तिनहूँन पै नाम लिहाड़ी जौन जन।
सो हमैं सदा सबभाँति सों होहु राम मङ्गल करन॥

(२)

अशरन शरन उदार दार सुत मोह विनाशन।
रचित त्रिगुणमय जगत चतुर्मुख वेद प्रकाशन॥
गजमुख षणमुख इष्ट पंचमुख मान वढ़ावन।
दशमुख सकुल विनाशि सहस मुखहिय छविछावन॥
मनुशतरूपा विमलतप-फल दायक भवभय हरन।
सोहमैं सदा सबभाँतिसों होहु राममङ्गल करन॥

(३)

पुरजन परिजन सहित रानि दशरथ सुख कारन।
मुनिमखशुचि रखवार ससुतताटिकदल दारन॥
मग मुनितिय उद्धरन पिनाकि - पिनाक विहण्डन॥
सप्त द्वीप नृप सहित परशुधर मद अति खण्डन॥
बन्धुसहित निज व्याह करि आइ अवध जन दुख हरन॥
सो हमैं सदा सब भाँति सों होहु राम मङ्गल करन॥

(४)

पितु निदेश धरि शीश चले बन सुर दुख दारन।
अनुज सीय संग केश मुकुट धनुशर कर धारन॥
गुह प्रच्छालित चरण शरण गत मान बढ़ावन।
मगवासिन कृत कृत्य-करत मुनिआश्रम पावन॥
चित्रकूट नितनिवसि प्रभु मुनि कुमार भव दुख हरन।
सो हमैं सदा सब भाँति सौं होहु राम मङ्गल करन॥

(५)

मातु व्यथित लखि व्यथित भावसिय सह उरधारन।
प्रिय सनेह बस विकल दुखित परिवार संभारन॥
पुरजन परिजन जनक रिषि मुनिन मान वढ़ावन।
मिथिला अवध समाज मध्य नृप नीति पढ़ावन॥
चरण पादुका दै विमल भरत हृदय धीरज धरन।
सो हमैं सदा सब भाँति सो होहु राम मङ्गल करन॥

(६)

फटिक शिला रचि पुष्पहार सिय उर पहिरावन।
सिय कपोल रचि विविध रंग दल फूल बनावन॥
सुरपतिसुत करि घात लखेउ तेहि बल दिखरावन।
तीनिहुँ लोक भ्रमाय फेरि आनेहु निज पावन॥

पुरुष कारिता सियहिं लखि जियत छाँड़ि इक दृग हरन।
सो हमैं सदा सब भाँति सों होहु राम मङ्गल करन॥

(७)

मिलि शरभंग सुतीक्ष्ण घटज आश्रम पग धारन।
पञ्चवटी करि पर्णकुटी सुरकाज सँवारन॥
करि सुपनखहिं विरूप खरादिक खल दल दारन।
बाँध मृग-माया-सीय हरइ बच शोक उचारन॥
पितु सों अधिक जटायु की अंत क्रिया करि किय तरन।
सो हमैं सदा सब भाँति सों होहु राम मङ्गल करन॥

(८)

खोजत माया सीय विकल नर नाट्य दिखावन।
हति कवन्ध नशि श्राप ताहि सुरपुर पहुँचावन॥
तजि मुनि गन थल परम प्रेम शबरिहिं प्रगटावन।
तृण फल अंकुर मूल फूल दल जल मनभावन॥
तिसु पद रज सर शुद्ध करि नित शबरी फल उरधरन।
सो हमैं सदा सब भाँति सों होहु राम मंगल करन॥

(९)

पंपा सर शुचि मज्जि देवरिषि संसय टारन।
सन्तन गुन गन बरनि शरनगत कह्यो सँभारन॥
रिष्यमूक गिरि चले भक्त कपि उर दुख दारन।
मिलि केशरी कुमार सूर्य सुत मैत्री धारन॥
सप्त ताल हनि एक शर अस्थि फेंकि संसय हरन।
सो हमैं सदा सब भाँति सों होहु राम मंगल करन॥

(१०)

निज जन कारज साधि एक शर बालि विदारन।
करि कपि पति सुग्रीव तासु सब भव भय टारन॥
रिष्यमूक सुर रचित गुहावसि पावस कारन।
लखि सुग्रीव असावधान तेहि सीख सँवारन॥
आये वानर भट जितक मिलि सबसों सब दुख दरन।
सो हमैं सदा सब भांति सों होहु राम मंगल करन॥

(११)

दै मुद्रिका निदेश मारुतिहिं सिय समुझावन।
कपिन प्रेरे भुवि बिबर पठइ पथ श्रम विनसावन॥
बदरी बन तापसिहिं कपिन वारिधि पहुँचावन।
सम्पातिहिं नव पत्त विरचि नव चाव बढ़ावन॥
बल कहि हारे सकल कपि मारुति उर साहस धरन।
सो हमैं सदा सब भांति सों होहु राम मंगल करन॥

(१२)

सुर मुख सुरसहिं प्रेरि दास बुधि बल दिखरावन।
राहु जननि मरवाइ कपिहिं रिपु पुर पहुँचावन॥
करि लंकिनि अनुकूल पवनसुत लंक दिखावन।
मिलइ विभीषण, पठइ सीय ढिग बोध दिवावन॥
करि मारुतिहिं निमित्त, रिपु-बाग, पुत्र, पुर दल दरन।
सो हमैं सदा सब भांति सों होहु राम मंगल करन॥

(१३)

प्रेरि शारदहिं दसमुखमुख कपि पूंछ बँधावन।
निकर निशिचरन करन वस्त्र धरि आगि लगावन॥
लङ्क जरइ जन भवन बँचइ जग जश प्रगटावन।
चूड़ामणिहिं दिवाइ कपिहिं निज ढिग पहुँचावन॥

कीश भालु दल संग लइ वारिधि तट डेरा धरन।
सो हमैं सदा सब भाँति सों होहु राम मंगल करन॥

(१४)

मिलत दशानन अनुज विभीषण मीत बनावन।
रावण आछत ताहि लङ्कपति तिलक लगावन॥
हृदय कृपा अति धारि सिन्धु सन मार्ग मँगावन॥
लखि सागर अवहेल कोपि सर तीव्र चढ़ावन।
सिन्धु शत्रु खल वल दलन आश्रित जन दुख दल दरन।
सो हमैं सदा सब भाँति सों होहु राम मंगल करन॥

(१५)

बाँधि सेतु दल कीश भालु रिपु पुर पहुँचावन।
हनि अलक्ष्य शर छत्र मुकुट ताटंक गिरावन॥
पठइ बालि सुत दूत रावणहिं नय समुझावन।
अंगद पद रोपवाइ शत्रुबलदर्प नशावन॥
चारि अनी करि कपिकटक लंकघेरि खल दल दरन।
सो हमैं सदा सबभाँति सों होहु राम मंगलकरन॥

(१६)

ब्रह्मशक्ति लहि लखन हृदय नर गति दिखरावन।
पठइ पवन सुत वैद्य आनि जनमान करावन॥
माँगि द्रोणगिरि पवन तनय अतिबल जतरावन।
कालनेमि मरवाइ भरतशर कपि विद्रावन॥
लहि औषधि लक्ष्मण जिअइ कपिदल सुर हर्षित करन।
सो हमैं सदा सब भाँति सों होहु राम मंगल करन॥

(१७)

कुम्भकर्ण हनि बिनु प्रयास जन दुख विनसावन।
लक्ष्मण कर घननाद नशाइ जनयश विकसावन॥
लहि प्रचण्ड दशकण्ठ शक्ति जन त्रास नसावन।
दिव्य धर्म रथ सिखइ विभीषण हिय हुलसावन॥
दशमुख हति निजपुर पठइ सकल जगत सब दुखदरन।
सो हमैं सदा सब भाँति सों होहु राम मंगल करन॥

(१८)

सिय साखी हित अनल डारि पुनि काढ़ि दिखावन।
देइ विभीषण लंक विविधि नर नीति सिखावन।
चढ़ि पुष्पक सिय अनुज सखन युत उत्तर धावन।
मिलि निषादपति भरद्वाज ऋषि मानबढ़ावन॥
पठइ पवन सुत विप्रबपु भरत हृदय धीरज धरन।
सोहमैं सदा सब भाँति सों होहु राम मंगल करन॥

(१९)

आइ अवधढिग सखन दिव्य पुर विभव बढ़ावन।
पुष्पक पठइ कुबेरि पाँहि पुरजन ढिग आवन॥
गुरु पद रज धरि-शीश-सकल द्विज चरनन नावन।
सकल मातु पद परशि भेंटि हिय सुख उपजावन॥
चरन परत भेंटे भरत दलि दुख-सब-हिय सुख भरन।
सो हमैं सदा सब भाँति सों होहु राम मंगल करन॥

(२०)

लहि निदेश गुरु विप्र करन सिंहासन पावन।
सकल जगत करि सुखित शुद्ध नृप नय प्रगटावन॥

राजसूय हयमेधादिक सब यज्ञ करावन।
कीन्ह राज्य बहुकाल चरित शुचिमुनि मन भावन।
जो जन चाहत भाँति जेहि सो भाव आश पूरन करन।
सो हमैं सदा सब भांति सौं होहु राम मंगल करन॥

(२१)

मातु, बन्धु, सिय, सुतन सहित जग अति छवि छावन।
साम, दाम अरु दण्ड भेद नृपनीति निभावन॥
सारमेय प्रति लखि अनीति यति दूरि करावन।
बक उलूक खग न्याउ चुकइ जग यश प्रगटावन॥
चारि खानि जग जीव जत सबके हिय आनँद भरन।
सो हमैं सदा सबभाँति सौं होहु राम मङ्गल करन॥

(२२)

सब तीर्थनि यश थापि देव मर्याद बढ़ावन।
थपि मानव मर्याद आसुरी मत बिनशावन।
पुरजन परिजन प्रीति रीति करि जग दिखरावन।
अनुजन सुतन समेत धर्म नृप नय सिखरावन॥
प्रेम प्रगटि हनुमन्त पर निजतन मर्यादित करन।
सो हमैं सदा सबभाँति सौं होहु राम मङ्गल करन॥

(२३)

उलटा नाम जपाइ व्याधते ब्रह्म बनावन।
दै महत्व कवि आदि सुयश आपन प्रगटावन॥
नाम नेम दै शिवहिं जीव अघ दूर करावन॥
कहइ हराम हराम यवन निजधाम पठावन॥
शिव सुत कहँ निज नाम बल सकल प्रथम पूजित करन।
सो हमैं सदा सब भाँतिं सौं होहु राम मङ्गल करन॥

(२४)

अति अनूप अवतार कोउ समता कछु आवन।
परम दिव्य नर भूप रूप रस एक रहावन॥
करि परास्त अवतार तत्व परतम प्रगटावन।
पुर परिजन सँग लेइ सबपु साकेत सिधावन॥
अपर नाहिं हरि रूप कोउ मुनि मन तिय भावहिं भरन।
सो हमैं सदा सब भाँति सो होहु राम मङ्गल करन॥

(२५)

परम पवित्र विचित्र अर्थ मय नाम सुपावन।
अद्भुत अमित चरित्र गाइ श्रुति पारहिं पावन॥
समता पूर्ण सुअर्थ कहाँ कोउ आवत पाव न।
दूरि दलन दुख दास सु दौरत नाँगे पाँवन॥
रामकुमार जु दास हित डांटि दूरि माया करन।
सो हमैं सदा सब भाँति सो होहु राम मङ्गल करन॥

(२६)

श्री रामानन्दाचार्य वंश श्री राम प्रसादा।
तिन शिष बगही थान ख्यात थापित मर्यादा॥
रामार्याण श्री सदाराम शिष-शिष्य सोमभगुरु।
रामकुमार सु रचित निवसि नित मणि पर्वत धुर।
मङ्गल पच्चीसीहिं जो नेम सहित नित गाइहैं।
सकल लोक सुख भोगि जग अन्तरामपुर जाइहैं॥

मोरे हिय हरि सम नहिं कोऊ

(श्री स्वामी श्री सूर्य प्रकाश जी महाराज)

यह एक मानी हुई बात है कि, यदि हम किसी के प्रति प्रेमभावना रखें, उसके प्रत्येक कार्य के लिए श्रद्धा और विश्वास प्रदर्शित करें; तो हमारे प्रति उसके हृदय में अवश्य प्रेम का श्रोत बहने लगेगा अर्थात समयानुसार दया, सहानुभूति ममतादि कल्याण-धाराओं का प्रवाह स्वाभाविक ही होता है, यह हुई मानव जाति की बात। उसी प्रकार यदि मनुष्य अपने हृदय में उस परमात्मा के प्रति श्रद्धा और भावना बनाए रखे, विश्वास और प्रेम के जल से हार्दिक अभिषेक किया करे, ये सब साधनों का अभाव भी हो तो

'भाव कुभाव अनख आलसहू।
नाम जपत मंगल दिसि दसहू॥'

उस करुणा सिन्धु का केवल नाम स्मरण करे तो भी वह पतितोद्धारक विरद वाले प्रभु उस ईश्वर अंश अविनाशी को इस संसार सागर से पार लगा ही देता है। मृत्यु लोक का मानव माया के आवरण से घिरा हुआ है; काम-क्रोध-लोभ-मोह-मदादि के चक्कर में ऐसा पड़ जाता है कि—

'जिहि तनु दियो ताहि बिसरायो।'

आराध्य को भूल जाता है, भौतिक सुख को अन्त सुख और शान्ति मान बैठता है। यही उसके देह मन्दिर का अज्ञान रूपी अन्धकार है। इस अन्धकार में भी उसको एक लगन रहे—

'मोरे हित हरि सम नहिं कोऊ।'

की गुञ्जार प्रचलित रहे। जब यही ध्वनि मानव देह धारी के मन-मन्दिर में व्याप्त हो जाती है तब कोई अलौकिक ज्योति का उदय होता है; उसका अनुभव होते ही सांसारिक जीवन की निरर्थकता प्रतीत होती है। तत्पश्चात् वह सियाराम मय मान कर भगवान के चरणारविन्दों में ऐसा चित्त जोड़ देता है जो उसकी हृदय रागनी से—

'मोरे हित हरि सम नहिं कोऊ।'

ध्वनि लहरी उत्पन्न होती है और गगन मंडल में फैलकर सारे वायुमंडल को पावन बनाती है। यदि हम उपरोक्त वृत्तान्त को दृष्टान्त के रूप में देखना चाहें तो तुलसीकृत रामचरितमानस के बालकांड में नारद के प्रसंगान्तर्गत देख सकते हैं। एक बार नारदजी के हृदय में तप करने की भावना जागृत हुई। अतः आप हिमालय प्रदेश की ओर गये। वहाँ तुषारावृत हिमालिया के ऊँचे शिखरों को देखकर, कल-कल निनाद करती हुई सरिताओं की कोमल-मधुर ध्वनियाँ सुनकर एवं मन्द-मन्द विहार करने वाले समीर के झोकों में झूमती हुयी प्रकृति नटी के सौंदर्य को पानकर नारदजी के हृदय में आनन्द की बाढ़ आयी, आप उसी स्थान पर अविचल तप करने बैठ ही तो गये। उनकी अखंड और कठिन तपस्या देखकर सुरपति के हृदय में अधीर सन्देह हुआ कि शायद देवर्षि मेरे इन्द्रासन को छीन लेंगे। इसलिए उसने नारद जी के घोर तप को विचलित करने की आज्ञा अपने अनुचरों को दी क्योंकि—

'जे कामी लोलुप जग माहीं।
कुटिल काक इव सबहिं डराहीं।'

जो कामना लोलुप होते हैं, उनका हृदय शीघ्र डाँवाडोल हो ही जाता है; अस्तु काम ने नारद

जी को डिगाने को ससैन्य धावा बोल ही तो दिया; चारों तरफ बसन्त विस्तरित हुयी त्रिविध समीर हिलोर लेने लगा अपने सौंदर्य को बिखेरती हुई रम्भादि कमनीय अप्सरायें विविध प्रकार की संगीत ध्वनियां अलापने लगीं। किन्तु इस ठाठ माठ का असर मनःजात ब्रह्मपुत्र पर नहीं हो सका। कामदेव को देवर्षि का भय हुआ इसीलिये वह उनकी शरण में गया। तपोनिधि ने साधना निवृत्ति लेकर उसे क्षमा देते हुये कहा—तुम सुख और आराम से स्वर्ग में विहरन कर सकते हो। जाओ मुझे किसी की इच्छा नहीं। काम के बिदा होने पर नारद जी कैलाशपति के पास पहुँचे और कह उठे—

'मार चरित सङ्करहिं सुनाये।
अति प्रिय जान महेस सिखाये॥
बार बार बिनवहु मुनि तोहीं।
जिमि यह कथा सुनायहु मोहीं॥
तिमि जनि हरिहिं सुनाये कबहूँ।
चलहि प्रसङ्ग दुरायेउ तबहूँ॥

किन्तु शङ्कर जी का कथन नारद जी को खटक गया कारण कि;—आपके मन में काम और क्रोध के जीतने का घमण्ड पैदा हो गया था। नारद ने मन ही मन कहा, महादेव ने तो केवल काम को ही परास्त किया है किन्तु उसका छोटा भाई क्रोध तो उनके शिर पर सवार ही रहा इसीलिये ऐसा सोचा होगा कि हमने केवल काम को ही परास्त किया है; परन्तु नारद ने तो उन दोनों को बस में कर लिया है। इसी भय के मारे कि इनका यश अधिक बढ़ जायेगा इसीलिये कहा—

'जनि हरिहिं सुनायेउ कबहूँ'

वहाँ से तीनों लोक में विहरन करने वाले नारद जी सीधे वैकुण्ठनाथ के समीप क्षीर सिन्धु दरबार में दाखिल हो गये। भगवान स्वागत करते हुये बोले—

'बहुत दिनन कीन्हीं मुनि दाया।
काम चरित नारद सब भाषे।
जद्यपि बरजि प्रथम सिव राखे॥

सविस्तार बड़े शौक के साथ काम विजय-प्रकरण कह सुनाया। इसे सुन कर भगवान बोले—काम तो सब को अपनी माया से नष्ट कर डालता है। किन्तु आप जैसे महामुनि का वह क्या कर सकता है, बैखरी वाणी का उपयोग करते हुये नारद जी बोले—

'कृपा तुम्हारि सकल भगवाना'।

और इस प्रकार नारद के चले जाने के पश्चात् भगवान ने सोचा; मेरे भक्त के हृदय में मिथ्याभिमान के भारी वृक्ष का बीज लग गया है; वह मुझे शीघ्र ही उखाड़ कर फेंक देना होगा, इसलिये ? कि हमारे आश्रित पर दूषण लगा रहेगा तो सारा जीवन नष्ट कर देगा। भगवान से बिदा लेकर नारद जी जिस रास्ते जा रहे थे उसी मार्ग में भगवान की 'अघटित घटना पटीयसी' माया ने एक आकर्षक नगर का निर्माण कर दिया। देवर्षि नारद जी इस नगर का ठाठ देख कर आश्चर्य चकित हो गये। उसकी शोभा देखने के हेतु आपने नगरी के भीतर पदार्पण किया। पूछने पर विदित हुआ कि आज ही इस नगर के राजा की कन्या का स्वयंवर है। नारद जी राजा के यहां पधारे। राजा ने भक्ति भाव से उनका स्वागत किया और अपनी कन्या को दिखाकर नारद जी से श्रद्धा संयुक्त पूछा—इस बच्ची को घर और वर कैसा मिलेगा। नारद जी तो विश्व मोहिनी के सौन्दर्य पर मुग्ध हो ही गये थे अतः सोचने लगे, यदि यह कन्या मुझे मिल जाय तो मेरा सौभाग्य। कन्या के उच्च लक्षणों को देखकर

आप दङ्ग हो गये और अच्छे भाव को छिपाकर—

'कछुक बनाइ भूप सन भाषे'

राजा से इधर उधर की बात बतला दी; राजा के यहां से चल कर मुनि अनिष्ट विचार में पड़ गये कि इस मोहिनी को किस उपाय से प्राप्त कर सकूँगा।

'करउँ जाइ सोइ जतन विचारी।
जिहि प्रकार मोहि बरहि कुमारी॥'

सहसा उनकी हृदय रागिनी से स्वर निकल पड़ा—

'मोरे हित हरि सम नहिं कोऊ'

देवर्षि के मन मन्दिर में आह्लाद की रश्मियां प्रकाशित हो उठीं; आपने भगवान का स्मरण किया तुरन्त ही—

'प्रगटे प्रभु कौतुकी कृपाला'

भक्त की सेवा में उपस्थित हो गये, नारद जी ने विश्वम्भर भगवान को वन्दन करते हुये—

'अति आरत कहि कथा सुनाई'

अपनी सब व्यथा कह दी और आर्त स्वर से बोले—

'जिहि विधि होय नाथ हित मोरा'

बस उसी प्रकार कीजिये समय स्वल्प है इसलिये शीघ्रता करें। हितकर हरि ने कहा आप निश्चिन्त रहें। जिस प्रकार आपका हित होगा उस मार्ग को अवश्य निर्धारित करूँगा। किन्तु हरि जानते थे कि,

'माया विवस भये मुनि मूढ़ा'

भगवान ने निश्चय किया कि माया ने मुनि को मूढ़ अर्थात मजबूत मूर्ख बनाकर छोड़ दिया है, उन्हें मोहिनी के सिवाय कुछ दिखता ही नहीं था। त्रैलोक्य मुक्त देवर्षि जैसे महान् तपस्वी ज्ञानी और विवेक शील महात्मा जब माया के चक्कर में फँस गये तब मृत्यु लोक के सामान्य मानव किस गिनती में। किन्तु सर्वेश्वर यह सम्बन्ध निभाना चाहते हैं कि—

'हम भक्तन के भक्त हमारे'

अतः नारद जी को माया विमुक्त करना प्रभु का मुख्य कार्य था, इधर नारद बाबा सभा मण्डप में अपने आसन पर विराजमान हो गये उसी समय शङ्कर जी के दो पार्षद ब्राह्मण भेष में उनके पास आकर बैठ गये। धीरे-धीरे प्रत्येक राजा को निरखती हुयी विश्व मोहिनी हाथ में वरमाला लिये हुये मण्डप में चलने लगी। नारद जी के मन में होने लगा कि मेरे पास क्यों नहीं आती है। शायद उसने मुझे देखा ही नहीं होगा इसलिये आप और भी व्याकुल होने लगे, किन्तु जब उनके समीप आकर बिना दृष्टि डाले ही चली गयी तो मुनि गर्म श्वास लेते आश्चर्य में पड़ गये। निकट में बैठे हुये गणों ने हँसते हुये कहा—कृपया अपना मुख स्थिर जल में देख लीजिये, इतना कह कर वे भयभीत होकर वहाँ से भाग चले। जब नारद जी ने स्थिर जल में बन्दर सा अपना मुँह देखा तो उनके क्रोध का पारा चढ़ गया। इसी क्रोध के आवेश में आकर उन दोनों को शाप दे दिया और विष्णुभगवान पर इतना क्रोध धमका जो कि असीम रहा। वहाँ से ही भगवान को कोसते चले। भगवान उस कुमारी और रमा को साथ लिये हुये मार्ग में ही मिल गये। जगदीश्वर को देखकर नारद जी अत्यन्त क्रोधित स्वर में बड़बड़ाने लगे। परन्तु जब प्रभु ने माया का आवरण हटा दिया तब तो मुनि का नशा उतर गया और होश हुआ, अन्तर्यामी से क्षमा याचना की सर्वशक्तिमान का स्वभाव तो अमृत तुल्य ही ठहरा आप बोले:—मुनि जी कोई बात नहीं यह सब तो मेरी इच्छा से हुआ, मेरे अवतार के हेतु भूमिका की आवश्यकता थी; आप निश्चिन्त रहें उद्वेग

न करें। उपरोक्त उदाहरण पर यदि हम दृष्टिपात करें तो समझ में आ सकता है कि इस लोक में तथा परलोक में प्राणि मात्र का हित करने वाले एक हरि ही है। क्योंकि नारद जी के ऊपर इन सभी ने आक्रमण किया था।

'जिता काम अहमिति मन माहीं। अहङ्कार 'नहि नारदहिं सुहान। 'संभु वचन मुनि मनहि न भाये'। ईर्षा 'विरत बिसारी' अर्थात मोह 'येहि बरे अमर सो होई' भ्रम 'कछुक बनाइ भूप सन भाषे' असत्य भाषण 'नारद चले सोच मन माहीं' चिन्ता 'करौं जाय सोइ जतन बिचारी। जेहि प्रकार मोहि बरै कुमारी' मिथ्या प्रयास 'हे विधि मिले कवन बिधि वाला' आकुलता 'हरि सन मांगहुँ सुन्दरताई' विपरीत बुद्धि अति आरत सब कथा सुनाई, अत्यन्त दुःखी होना। 'आपन रूप देहु प्रभु मोहीं' विरुद्धभाव 'निज माया बल देख बिसाला।' मायावश होना जहां माया वहां अनेक दुर्गुण अतः—

व्याप रहेउ संसार महँ, माया कटक प्रचंड।
सेनापति कामादि भट, दम्भ कपट पाखंड॥

'कुपथ मांग रुज व्याकुल रोगी।' व्याकुलता 'माया बिवस भये मुनि मूढ़ा।' मूर्खता के भी वश में हो गये 'मुनि मन हरष रूप अति मोरे। मोहि तजि आनहि बरहि न भोरे।' विपरीत भाव 'मुनिहि मोह मन हाथ पराये।' मोह के वश मन पराये हाथ में गया। 'समुझि न परै बुद्धि भ्रम सानी।' बुद्धि में भ्रम घुस गया— 'मुनि अति बिकल मोहमति नाठी।' अति विकलता 'बेष बिलोकि क्रोध अति बाढ़ा।' अति क्रोध तदपि हृदय में सन्तोष न हुआ बल्कि असन्तोष होना इतना ही नहीं स्वयं भगवान से भी अड़ गए और न कहने योग्य कुवाक्यों का उपयोग भी किया। यों देखा जाय तो अनेक दूषणों ने नारद जी को घेर लिया। अतः सुदृढ़ विरद व्रतधारी सर्वेश्वर प्रभु ने निर्णय कर रखा था कि नारदजी ने कोई भी भाव से यह उच्चारण किया था— 'मोरे हित हरि सम नहि कोऊ।' अर्थात श्री रघुनाथजी ने देवर्षि पर आये हुये जाल को तोड़ दिया—

'तब हरि माया दूरि निवारी।' नारदजी जी को विशुद्ध करके अन्तर्यामी—ने प्रसन्नमुख दर्शन दे ही तो दिया। इसीलिए हमें—'हितकर एक हरि की शरण ग्रहण करना ध्येय बना लेना चाहिए।

मानस-महिमा

मानस-मानुस मानस को कर शुद्ध प्रभू प्रति प्रीति बढ़ाती।
भाव मलीन मिटे मनके उरमें प्रभु भक्ति की ज्योति जगाती॥
धर्म करो शुभ कर्म करो सतसङ्ग करो अस नित्य सिखाती।
वेद पुराण सुधारस वारि सदा वर मानस है बरसाती॥

—श्री राजाराम वर्मा

(प्रापंचिक दुखों) की औषधि है। जो नरनारी इसका सेवन करते हैं उनके सकल मनोरथ शिव जी पूरे करते हैं।

लाक्षणिक—आत्मतत्व की चर्चा सुनते रहने से मनुष्यों के सांसारिक दुःख घटते जाते हैं और त्रिगुणातीत अवस्था में पहुँचने से सकल मनोरथ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) क्रमशः पूरे होते हैं।

जासु नाम भय (भव)भेषज हरन घोर त्रय सूल।
सो कृपाल मोहिं तोहि पर सदा रहौ अनुकूल॥

यहाँ भी भयंकर तीनों शूलों को हटाने वाली संसार (भय) की औषधि नाम ही है। सो सदा मुझ और तुझ पर अनुकूल रहे।

ध्वनि है कि मैं और तुम (व्यष्टि समष्टि के साथ और समष्टि व्यष्टि के साथ) दोनों उन कृपालु के अनुकूल काम करते रहे। ऐसे अनुकूल काम करने से संसार की बुराइयां मिटती हैं।

महान लाभ :—

गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन।
बिनु हरि कृपा न होइसु गावहिं वेद पुरान॥

संत—साधु, अंतःकरण। समागम परस्पर मिलाप सम + आगम—समान पहुँच। वेद—आगम, ज्ञान व्यंजना गिरिजा ने पहिले सभी रूप में विरोध किया था सो अब शिव जी कहते हैं कि अंतःकरण में समान पहुँच हो जाना ही बड़ा लाभ है, इसके बराबर कुछ नहीं है। पर वेद और पुराण अथवा प्राचीन ज्ञान कहता है कि यह अंतःकरण का मिलाप हरि कृपा (तमोगुण, रजोगुण को अपहरण की वृत्ति का पालन किये) बिना नहीं होता है। अब शिव और गिरिजा (जड़ से उत्पन्न) दोनों अपने अंतःकरण में रामतत्व को समान रीति से समझ रहे हैं। संत समागम हो गया है।

गृहस्थी में दम्पति का अंतःकरण एक होने से बड़ा लाभ होता है। यह बात प्राचीन अनुभवी जन कहा करते हैं। इसके लिए हरि-कृपा पर निर्भर रह कर स्वार्थ त्याग करते रहना आवश्यक है। शुभम् भवतु—

अतुल-छवि

कौशिला सुमातु मैथिली के पंकजात पाणि,
श्वेत युग मोती वर वधू कर वारी है।
लालिमा हथेली प्रतिबिम्ब मोती मूँगा भास्यो,
पुनि नैन-कालिमा भा गुञ्ज रूप धारी है॥
कौतुक विलोकि तब भूमिजा विहँसि पड़ी,
द्विज-पंक्ति धवलता गुञ्जन प्रसारी है।
गुञ्जा बने उज्ज्वल स्वरूप मोती पुनि 'कुश',
सुषमा अतुल आर्य्य सती सीता नारी है॥

श्री पं० रामकुमार उपाध्याय

श्री सीता हरण रहस्य

(लेखक—श्री दण्डी स्वामी प्रज्ञानानंद सरस्वती, ईश्वरपूर, दक्षिण सातारा)

सीता हरण हेतु जेहि होई।
इदमित्थं कहि सकइ न कोई॥
हरि विधि सिव सुक नारद आदी।
रिषि, मुनिगन परमारथ वादी॥
तेउ न जानहिं मर्म राम को।
को जानइ सिय हरन मर्म को॥
सीय हरण के हेतु अनन्ता।
को सब जानै बिनु भगवन्ता॥
तदपि गुरु कृपाँ जसि मतिमोरें।
प्रज्ञा कहत हेतु ये थोरे॥ ५॥

श्री सीता हरण "मैं कछुकरव ललित॥ नर लीला"में से प्रधान लीला चरित है। सीता और राम बारि वीचि इव अभिन्न होने से'सीता हरण हो गया' ऐसा कहना भी एक साहस है। तथापि श्रीरामजी का 'लता तरु पाँती को पूछना और राम जी की विरह विकलता,विलापादि देखकर जब सतीजी के समान भवानी (भव + अनी) जी को भी संशय हो गया तब सीता हरण हुआ हीं नहीं' ऐसा मानना भी दुःसाहस है। 'तदपि कहे बिनु रहइ न कोई' इस न्याय से श्री हरि गुरु प्रेरणा से सागर में से गागर के समान जो कुछ समझ में आया है सो मानसमणि के पाठकों की सेवा में लगाने के हेतु से ही लिखा जाता है।

(१) सीता जी आदि शक्ति हैं, आदिमाया हैं 'आदि सक्ति जेहि जग उपजाया सो अवतरिहि मोर यह माया' (बा. १५२।४) 'हरि माया अति दुस्तर तार न जाइ विहगेश'। सीता और राम 'कहिअत भिन्न न भिन्न'।

(२) श्रीमानस के अनुसार जनकनन्दिनी सीताजी का हरण हुआ ही नहीं है। जनकसुता का प्रतिबिंब, अर्थात् प्रतिकृति ही हरायी गयी हैं 'पुनि माया सीता कर हरना'। जैसे महायोगी भी एक ही समय अनेक, समान देह धारण कर सकते हैं और मूल वास्तव देह में और उन मायानिर्मित देहों में जरा सा भी कायिक, वाचिक, मानसिक फरक (अन्तर) नहीं होता है वैसा ही इधर हुआ है। देखिये जो चूड़ामनि—इन्द्र ने दशरथ जी को, दशरथजी ने कौसल्याजी को और कौसल्याजी ने जनकनन्दिनी-सीता को दी थी—वही देना, रामनामांकित मुद्रा को पहिचानना, जयन्त चरित्र का स्मरण देना और सीता हरण तक के समस्त रामचरित्र का स्मरण; अनुसूया जी ने वस्त्राभूषण दिये थे उनका ही माया सीता शरीर पर रहना, लक्ष्मणजी का उस माया सीतात्यक्त वस्त्र को जनकनन्दिनी का ही पहचानना।

(३) वाल्मीकीय अरण्य सर्ग ४५।३७ में जनकनन्दिनी प्रतिज्ञा कर रही है, लक्ष्मणजी के सामने, कि 'नत्वहं राघवादन्यं कदापि पुरुषं स्पृशे'। इस वचन के आधार पर (रामतिलक) टीकाकार, कूर्म पुराण का अवतरण 'जगाय शरणं वन्हिमावसथ्यं शुचिस्मिता…' इत्यादि देकर कहते हैं कि वाल्मीकीय के अनुसार भी असली सीताजी-जनकनन्दिनी अग्नि में समा गयीं और माया सीताजी को ही अग्नि देव के उधर रख देने पर उनको ही रावण ले गया। अन्यथा जनक-दुहिता की प्रतिज्ञा मिथ्या हो जाती जो असंभव है। पर यह वाल्मीकीय से ही विरोधी कल्पना है

कारण कवन्ध ने सीताजी को उठाकर अपने गोदी में ले लिया था।

आपन मोर नीक जौं चहहू।
बचन हमार मानि गृह रहहू' ॥
जौं हठ करहु प्रेम बस बामा।
तौ तुम्ह दुख पाउब परिनामा ॥

इत्यादि रामाज्ञाओं को भंग करने से जनकनन्दिनी को दारुण विरह दुःख और रावण के समान राक्षस का स्पर्श लंका में दुःसह कष्ट, चिंता, व्यथा भोगनी पड़ी ऐसा मानना उचित और सयुक्तिक नहीं लगता है। कारण मानस में तो माया सीता को ही दुःख हुआ है।

(५) प्रेम वश होकर हठ करके लखनलाल जैसे अनन्य रामभक्त-सेवक-का आधिक्षेप अनादर जिस माया सीता ने किया, उस माया सीता को ही उस कृत्य का दुष्परिणाम भोगना पड़ा है। इससे यह सिद्ध होता है कि 'भक्ति,पच्छहठ नहिं सठताई' यह सिद्धान्तनिरपवाद नहीं है। अथवा इस अर्धाली का अन्वय इस रीति से करना—भक्ति पच्छ (में), हठ नहि सठताई'। तथापि 'भक्तिपच्छ हठ करि रहेउँ—' में हठ का दुष्परिणाम नहीं हुआ, इतना ही नहीं, बल्कि 'मुनि दुर्लभवर पायउँ' ऐसा अद्भुत दुर्लभ लाभ सुलभ हो गया। इससे प्रथम पर्याय लेना ही उचित है।

(६) लक्ष्मण जी के समान महातपस्वी, ब्रह्मचारी भगवद्भक्त का अधिक्षेप, अपमान करना पुरुष हो या स्त्री, उनको दुःसह दुःख सहना पड़ेगा ही यह उपदेश मिलता है।

(७) परदारापहरण का परिणाम कितना भयंकर और कुलविध्वंसक होता है यह भी इससे सिद्ध होता है।

(८) आर्य सती का अपमान करने वाले को भीषण दण्ड देना ही चाहिये। उसको क्षमा करना कायरों का काम है। वे कुलकलंक कहलाने योग्य होंगे।

'क्षमा शत्रौ च मित्रे च यतीनामेव भूषणम्।
अपराधिषु सत्वेषु नृपाणां सैव दूषणम्'।

(९) एक स्त्री के अविचार के फल स्वरूप राम लक्ष्मण जैसे महावीरों को, महापुरुषों को, रीछ कीशों का सहाय लेना पड़ा।

(१०) मानस में सीता हरणादि समस्त घटनाओं का मूल केवल 'हरि इच्छा' 'रामरुख' ही है।

(११) सीता हरण घटना राजनैतिक दृष्टि से भी अत्यन्त महत्व की है। इससे यह उपदेश मिलता है कि राजकारण में केवल शक्ति और धर्माचरण से शत्रु विनाश का कार्य सिद्ध नहीं होगा, युक्ति का आश्रय भी लेना चाहिये। और युक्ति चतुष्कर्ण भी नहीं होनी चाहिये। इससे तो राम जी ने 'सुमुति बनाई।'

(१२) पति को आज्ञा देना, स्त्रियों का धर्म नहीं है। तथापि एकाध बार परिस्थितिवश मोह में पड़कर आज्ञा देने से कितना संहार होता है।

(१३) जो स्त्री कभी कुछ माँगती नहीं है वह कचित्, यत्न साध्य पदार्थ माँगे तो उसकी चाह पूर्ण करना पुरुषों का कर्तव्य है।

(१४) सुर नर नाग असुर गंधर्व किन्नरों की सुंदर रमणियों को रावण ने अपने अन्तःपुर में, बलात्कार से, रखा था। उनको विमुक्त करने के लिये आदिमाया ने भी यह प्रयोग किया होगा!

(१५) तेजस्वी सुशील तपस्विनी पतिव्रता और तेजस्वी, तपस्वी, ब्रह्मचारी, भक्त इनमें सधिक विवेक और संयमी कौन होता

है यह भी इस घटना में देखा जाता है। तेज, तप, शील, बल शौर्य, धैर्य वीर्य, ज्ञान, वैराग्य, भक्ति आदि अमित गुणों के निदान लक्ष्मण जी के समान महापुरुषों में भी ऐसे प्रसंग में अपनी निष्ठा से च्युत होना पड़ता है यह एक आश्चर्य भी देखने योग्य है।

(१६) जनकनन्दिनी ने वन में आने के लिये जो हठ किया इसका मर्म भी श्रीमद् गोस्वामीजी ने केवल एक शब्द में ही ध्वनित किया है, यथा—

'धरि धीरजु कह अवनि कुमारी'
(अयो० ६४।४)।

धीरज धारण करने में 'धरा धरणी' ही प्रसिद्ध है और अन्यत्र

'धरनि-सुता धीरज धरेउ'

ऐसा कहा भी है। जो केवल पुनरुक्ति दोष से बचने के लिये फेर करना होता तो 'कह धीरजु धरिधराकुमारी' ऐसा कुछ लिख सकते थे, अनुप्रास भी रुचितर हो जाता। तथापि अवनि शब्द भाव गर्भित है, अवन करती है सो 'अवनि'। अवन = त्राण = रक्षण = पालन अर्थ का शब्द 'अवनि' प्रयुक्त करके 'विप्र धेनु सुर संत मही' अवन करने के हेतु से ही वन में जाने का हठ किया, यह भाव केवल एक शब्द से ध्वनित किया है। मानस में ऐसे अनेकानेक शब्द हैं। तुलसी मानस के समान ध्वनि इतस्र नहीं पायी जाती है। धन्य ! धन्य ! तुलसी को।

(१७) वेदवती ने रावण को कृत्य युग के अन्त में जो शाप दिया था उस शाप को सत्य करने के लिये—सकुल रावण का संहार करने के लिये—उसको लंका में जाना ही था (पूर्व प्रतिज्ञा के अनुसार)। इससे तो 'प्रभु प्रेरित लछिमन मन डोला।

(१८) यह माया सीता ही वेदवती है यह स्कन्धपुराण के आधार से,'निज प्रतिबिम्ब राखि तहँ सीता' अरण्य० २४-४) में कहा गया है।

(१९) इच्छ्वाकु के प्रपौत्र के पुत्र और पृथु के पिता, अनरण्य राजा ने मरने के समय रावण को शाप दिया है वह सत्य करना है देवों का बन्धविमोचन, सुग्रीव पर के वाली के अन्याय का परिमार्जन। विभीषण का उद्धार और उसको राज्य समर्पण। मातंग ऋषि का वचन सत्य करके शबरी का उद्धार, वृक्ष लता रूप में संस्थित ऋषि मुनि उपनिषदों की शाखाएँ इत्यादि अनेकों को मिलना, इत्यादि कार्य करने हैं। तथा रावणादि को जो शाप उच्छापादि मिले हैं उनको भी प्रत्यक्ष व्यावहारिक सृष्टि में लाना हैं। ऐसे अनेकानेक हेतु हो सकते हैं 'श्रीसीता हरण में।

जैसे हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता' तैसे 'सीय हरण के हेतु अनन्ता'। तथापि—

(२०) जिस एक मुख्य हेतु में अनन्त हेतु गागर में सागर के समान, अथवा शहद में अनेक रसों के समान निहित हैं वह है

सुरमुनि सुखदायक लीला चरित्र करना, यहाँ 'सुर' शब्द का विशेषार्थ क्या है सो 'करत चरित सुर मुनि सुखदायक' की टीका में श्री मानस पीयूष में देखना चाहिये। श्री सीता हरण लीला—और इस लीला के अंगभूत लीलाओं को गाइ गाइ भव निधि नट तरहीं'

'कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं।
ते गोपद इव भव निधि तरहीं'।
जे संसृति दुख दुखित,
अति दग्ध त्रिविध संताप।
तरहिं गाइ सुनि हरि चरित,
कलिमल विमुक्त पाप॥ १॥

श्री कृष्णावतार का सार भूत हेतु, पशुपकुमार नन्दनन्दन को चतुराननने बताया है—

सुरेष्वृष्विीश तथैव नृष्वपि तिर्यक्षु,
यादस्स्वपि तेऽजनस्य।
जन्माऽसतां दुर्मदनिग्रहाय प्रभो विधातः
सदनुग्रहाय। (श्रीमतभाग० १०।१४)

भगवान की लीलाओं का पार किसी ने भी पाया नहीं यह ब्रह्माजी के शब्दों में ही कह कर यह सीता हरण-रहस्य विवेचन पूर्ण किया जाता है।

को वेत्ति भूमन् भगवन् परात्मन्,
योगेश्वरोतीर्भवतस्त्रिलोक्याम्।
क्व वा कथं वा कति वा कदेति,
विस्तारयन् क्रीडसि योगमायाम्॥
श्री भागवत १०-१४)

सुजन सुमति सुनि लेहु सुधारि॥

श्री सीताहरण-कौतुक-कारी, भक्त मानस-मानस विहारी अनन्य-शरण चिन्तापहारी. त्रिविधतापहारी, श्रीजनककुमारी-भिन्नाभिन्नरूपधारी, दशरथ अजिरविहारी,

दशाननादि दुष्ट दानवोद्धारि
श्री कोसल्यानन्द-वृद्धिकारी
श्री रामचन्द्र की जय॥

विनय

तिहारो को पावै प्रभु पार !
विपुल सृष्टि नित नव विचित्र के, चित्रकार आधार ?
तिहारो को पावै प्रभु पार ?
मकरी के सम, जगत-जाल महि, सृजन और विस्तारत।
कौतुक ही में हरत ताहि पुन, बेद पुरान उचारत॥
जग में तुम और तुम में सब जग वासुदेव अभिराम।
सकल रंग तन बसत आपके याहीं सों घनश्याम॥
परम पुरूष तुम प्रकृति नटि संग लीला रचत अपार।
जग व्यापन सों विष्णु कहावत अचरज तउ अविकार॥
जितने जात समीप, दूर अति होत जात तव ज्ञान।
सत्य क्षितिज सम तरसावत नित विश्वरूप भगवान॥

श्री जुगल किशोर जरगर "मौर"

श्री रामायणजी के पठन से अलौकिक सिद्धि

(सूर्य-चिकित्सा-विशारद श्री पंडित नन्दकिशोर शर्मा)

श्रीरामचरितमानस साक्षात भगवान श्री रामचन्द्रजी का ही स्वरूप है। श्री रामायण जी के पठन तथा पूजन से वही फल प्राप्त होता है जो कामधेनु, कल्पवृक्ष एवं चिन्तामणि से। जिस प्रकार कामधेनु, कल्पवृक्ष एवं चिन्तामणि से जो कामनाएँ की जाती हैं वे ही पूर्ण फलीभूत होती हैं ठीक उसी प्रकार श्रीमानस से भी यथा :—

राम कथा सुरधेनु सम, सेवत सब सुख दानि।।
राम भक्ति चिन्तामणि चारू॥
जाहि छांह पहिचानि तरु,
समन सकल भव सोच।
माँगत अभिमत पाव जग,
रङ्क राउ भल पोच ॥

प्रायः लोग रामायण जी का पाठ कई प्रकार से करते हैं। सर्व प्रथम नवाह ! नवाह को नौ दिन में समाप्त करना चाहिये। जो सज्जन या देवियाँ नवाह न करते हों वह चैत्र व आश्विन (कुँवार) मास के नवरात्रि में तो अवश्य नवाह पाठ करें, नवाह पाठ करने से सारी मनोकामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं। स्नान करके अपने आचार्य (पुरोहित) द्वारा कलश गणपति गौरि नवग्रह का पूजन कराके और भगवान श्री रामचन्द्रजी का चित्रपट रखकर पाठ किया जाय। यदि ऊपर कही हुई विधि न मिले तो किसी देवस्थान या गङ्गातट पर या तुलसी वृक्ष के पास करे। पहले जल, फूल चन्दन अक्षत, भोग से श्री रामायण जी का सप्रेम पूजन करे। परन्तु अति श्रद्धा और प्रेम से मन्त्र इत्यादि जाने या न जाने, श्रीरामजी का नाम लेकर आरती, पूजन, चन्दन, तुलसी, फूल अर्पण करे और यदि मन्त्र जानता हो तो मन्त्र से करे। ठीक यही विधि अखंड रामायण की भी है।

दो तीन प्रेमी मिलकर या ब्राह्मणों द्वारा अखंड पाठ से तत्काल मनोकामना सिद्ध होकर सङ्कट दूर होता है। इसी प्रकार मासिक पाठ—१ माह में रामचरित के पाठ को समाप्त करना। चौथे किसी विशेष कामना की सिद्धि के लिए किसी विशेष चौपाई द्वारा सम्पुट लगाकर पाठ करना—सम्पुट में यह अवश्य ध्यान देना चाहिये कि जिस प्रकार का कार्य हो उसी प्रकार की चौपाई से सम्पुट पाठ करे और उसी चौपाई से पाठ शुरू करे, उस चौपाई के पूर्व उसी चौपाई को दो बार पढ़े फिर वह चौपाई पढ़े फिर दो वार बाद में चौपाई पढ़े यानी कुल पाँच बार पढ़े और जहाँ जहां जितने भी दोहा, छंद, सोरठा, श्लोक हो जावें पर प्रति दोहे, सोरठे, छंद, श्लोक के पहिले भी और पीछे भी पढ़ने से सम्पुट होता है। सम्पुट पाठ से सब प्रकार की कामनाएँ सिद्ध हो जाती हैं। सम्पुट पाठ चाहे पाँच दिन में चाहे १ माह में चाहे १ वर्ष में समाप्त करे, यह अपने विचार पर या समयावकाश पर निर्धारित है। उदाहरण स्वरूप—जैसे संकट दूर करने के हेतु सम्पुट-पाठ करना है तो सुन्दर कांड की इस चौपाई से पाठ करना शुरू करे—

दीनदयाल बिरद संभारी।
हरहु नाथ मम संकट भारी॥

इसी प्रकार पाँच बार पाठ करने से इस चौपाई का सम्पुट प्रारम्भ होता है। जितने इसके आगे जो भी दोहा छन्द सोरठा पढ़े इस

चौपाई को नीचे ऊपर दो बार पढ़े और उत्तर काड तक पढ़कर फिर बालकांड से प्रारम्भ करके ठीक इसी चौपाई पर समाप्त करे तो ग्रन्थ सम्पूर्ण हो जाता है। यही नियम सब जगह का है कि जो जिस कामना से पाठ करे अपने मन से चौपाई मानस से छाँट ले क्योंकि 'मानस की सभी चौपाइयाँ मन्त्र हैं। कुछ चौपाइयों को मैं यहाँ उद्धृत कर देता हूँ जो कि आप सब कार्य में लगाकर सम्पुट-पाठ कर सकते हैं। यथा—

जिहि विधि होइ नाथ हित मोरा।
करहु सो वेगि दास मैं तोरा॥
मोरे हित हरि सम नहिं कोई।
यह अवसर सहाय सो होई॥
मोर सुधारहु सो सब भाँती।
जासु कृपा नहिं कृपा अघाती॥
जनक-सुता पद कमल मनावों।
जासु कृपा निर्मल मति पावों॥
राजिव नयन धरे धनु सायक।
भकित विपत्ति भंजन सुख दायक॥

ये पाँचों चौपाइयाँ तत्काल फल देने वाली हैं। इन चौपाइयों के सम्पुट पाठ करने से सब कार्य की सिद्धि हो जाती है परन्तु इतना अवश्य ध्यान हो कि जब इन चौपाइयों द्वारा सम्पुट किया जाय तो इनका उसी जगह (आसन) पर बैठकर एक दो बार अवश्य जप कर ले। यदि समय न हो तो रास्ते चलते, उठते, सोते, जागते जब कि किसी लौकिक व्यवहार में बात न करना हो या कोई अपना निजी कार्य उस समय न हो तो इनको मन में पढ़ता रहे। ये तत्काल अत्यन्त सुख, मंगल, लक्ष्मी, भकित, मान देने वाली हैं। यह मेरा निजी अनुभव है। जो कुछ न कुछ रोज रामायण जी का पाठ करते हैं इनको भी सम्पुट, मासिक, अखन्ड, नवाह का फल प्राप्त होता है। परन्तु पाठ में कभी नागा न करें चाहे दिन में किसी समय करें चाहे भोजन करके करें या खाली मुँह करे। रामायण जी का पाठ अवश्य करना चाहिये।

इस प्रकार सब मनोकामनाएँ सिद्ध होकर प्रत्यक्ष फल की प्राप्ति होगी तथा अकाल मृत्यु भी सामने से टल सकेगी—यह मेरा प्रत्यक्ष अनुभव है। पूर्वोक्त नियमों से पाठ करने से सब कुछ की प्राप्ति होती है। यथा :—

जो सप्रेम नर सुनहिं जे नर गावहिं।
सुख सम्पत्ति नाना विधि पावहिं॥

———

श्री राम नाम लड्डू की सेवा का यह श्रेष्ठ अवसर है।

मानस में शाब्दिक चमत्कार

(श्री सुरेन्द्र कुमार जी 'साहित्य-रत्न')

मानसकार ने डंके की चोट पर रहस्योद्घाटन किया है कि यह महाकाव्य श्री शंकर जी द्वारा रचित है—

रचि महेस निज मानस राखा।
पाइ सुसमउ सिवा सन भाखा॥
तातें रामचरित मानस बर।
धरेउ नाम हिय हेरि हरष हर॥

अस्तु इसमें 'जुगुति मंजु मनि सीप सुहाई की सघनता प्रदर्शित करने के लिए पूर्वार्द्ध में 'पुरइन सघन चारु चौपाई' न होती तभी विडम्बना थी, परन्तु यहाँ तो—

आखर अरथ अलंकृति नाना।
छंद प्रबंध अनेक बिधाना॥
भावभेद रसभेद अपारा।
कवित दोष गुन विविध प्रकारा॥

आदि से संयुक्त रामचरित—

हृदय सिंधु मति सीप समाना।
स्वाती सारद कहहिं सुजाना॥
जौं बरखइ बर बारि बिचारू।
होंहि कवित मुकुतामनि चारू॥

के रूप में सुशोभित होकर—

जुगुति बेधि पुनि बोहिअहिं
रामचरित बर ताग।
पहिरहिं सज्जन बिमल उर
सोभा अति अनुराग॥

मनुष्य मात्र के लिए मुक्ता-हार वत् है जिसे रहीम के शब्दों में

रामचरित मानस बिमल, संतन जीवन प्रान।
हिन्दुवान को बेद सम, जमनहिं प्रगट कुरान॥

द्वारा व्यक्त किया गया है एवं 'हरिऔध' ने कविता करके तुलसी नल से कविता लसी पा तुलसी की कला द्वारा गागर में सागर भर दिया है।

जिमि निज बल अनुरूप तें माछी उड़इ अकास।

महाकवि का शाब्दिक-चयन चित्र प्रस्तुत करने में कितना सफल है। 'कंकन किंकिन नूपुर धुनि सुनि' में नूपुरों की झंकार 'घन घमंड नभ गरजत घोरा' में बादलों की गर्जन 'धरु धरु मारु मारु धरि मारू' में युद्ध की चिल्लाहट प्रत्यक्ष सुनकर इसका अनुभव किया जा सकता है। 'धरनि धसइ धर धाव प्रचंडा' में भयङ्कर पलायन और 'जानु पानि धाये मोंहि धरना' में बाल चापल्यवश 'ठुमुकि ठुमुकि प्रभु चलहिं पराई' का दृश्य देखा जा सकता है। यदि 'नयन' की उपमा प्रस्तुत करने को 'नीरज' शब्द मिलेगा तो 'पद' के साथ 'पंकज' या 'पदुम' प्रयुक्त होगा। इसे ही शाब्दिक-चयन की सजगता कहते हैं।

कविता के तीन गुण हैं—प्रसाद, माधुर्य एवं ओज। इनमें महाकवि की जागरूकता का प्रमाण पद-पद पर देखने को प्राप्त होता है। भक्तिवर्णन में प्रसाद गुण का प्रयोग होता है। अतः इस प्रसंग में प्रयुक्त वृक्ष शब्द के लिए प्रसाद-गुण-संयुक्त पयार्य 'तरु' का प्रयोग है।

अविरल प्रेम भक्ति मुनि पाई।
प्रभु देखहिं तरु ओट लुकाई॥

शृंगार वर्णन में माधुर्य गुण का प्रयोग 'लता' पयार्य द्वारा प्रकट किया गया है—

लता ओट तब सखिन्ह लखाये।
स्यामल गौर किसोर सुहाये॥

युद्ध वर्णन में ओजगुण वाले कठोर कर्कश 'विटप' शब्द का प्रयोग देखने को मिलेगा।

पुनि नाना विधि भई लराई।
बिटप ओट देखहिं रघुराई॥

एक ही शब्द 'ओट' के साथ तीन विभिन्न गुणों में रसभेद के अनुसार वृक्ष के उचित पर्यायवाची शब्द देखकर कवि की निरीक्षण शक्ति की प्रशंसा जैसी यहाँ करनी पड़ती है वैसी ही ग्राम, पुर एवं नगर का अंतर प्रकट करते हुए एक ही समस्या पर तीन विभिन्न स्थानों पर चरित्र नायक राम द्वारा वर्णित शब्द देखकर दाँतों तले अँगुली दबानी पड़ती है। निषाद-राज गुह की राजधानी शृंगबेरपुर एक छोटी बस्ती है जिसके लिए 'ग्राम' शब्द का उपयुक्त प्रयोग है।

बरस चारिदस बास बन, मुनि व्रत बेष अहार।
ग्रामवास नहिं उचित सुनि, गुहहिं भयउ दुखभार॥

आगे चलने पर वानर राज सुग्रीव की राजधानी किष्किंधा 'पुर' शब्द द्वारा संबोधित की गई है।

कह प्रभु सुनु सुग्रीव हरीसा।
पुर न जाउँ दस चारि बरीसा॥

अन्त में राक्षस-राज विभीषण की बृहत राजधानी लंकापुरी के लिए 'नगर' शब्द का प्रयोग वांछनीय है। अतः

पिता बचन मैं नगर न आवउँ।
आपु सरिस कपि अनुज पठावउँ॥

यदि पृथ्वी में स्थित बाग की प्रशंसा में प्रयुक्त राजा शब्द के स्थान पर 'भूप बाग वर देखेउ जाई' है तो नरों में सर्वश्रेष्ठ बालकों के लिए तुरन्त ही 'एक कहइ नृपसुत तेइ आली' है। इनमें राजा के पर्याय भूप और नृप का उपयुक्त प्रयोग दर्शनीय है। वैद्यक के सिद्धाँतानुसार पथ्य एवं अपथ्य वस्तुओं का उपयुक्त चयन भी महाकवि की दृष्टि से ओझल नहीं हो पाता। ज्ञान से विश्व की वास्तविकता का रहस्य देखना ग्राह्य है अतः पथ्य वस्तु 'आमलक' का प्रयोग।

देखहिं तीन काल जिज ग्याना।
करतल गत आमलक समाना।

इसकी तुलना में अग्राह्य वस्तु विश्व प्रपंच के लिए अपथ्य वस्तु बदर (बेर) का प्रयोग है।

तुम्ह त्रिकाल दरसी मुनि नाथा।
बिस्व बदर जिमि तुम्हरे हाथा॥

कहा जाता है कि लक्ष्मण जी राम की पहरेदारी करते हुए रात भर जागते रहते थे। इस तथ्य को प्रमाणित करने के लिए महाकवि के शब्द ही चित्र प्रस्तुत कर देते हैं उन्हें स्पष्ट तथ्य कथन नहीं करना पड़ता। जनकपुर में धनुषभंग से पहले का प्रसंग इस सम्बन्ध में दर्शनीय है। मुनिवर विश्वामित्र और राम के लिए 'सयन कीन्ह' शब्द है जब कि लक्ष्मण केवल पौढ़े (लेटते) हैं।

विश्वामित्र :—

मुनिवर सयन कीन्ह तब जाई।
लगे चरन चापन दोउ भाई॥

रामः—

बार बार मुनि आग्या दीन्हीं।
रघुपति जाइ सयन तब कीन्हीं॥

लक्ष्मणः—

पुनि पुनि प्रभु कह सोवहु ताता।
पौढ़े धरि उर पद जल जाता॥

अस्तु आगे के दोहे में इनके लिए शब्द देखिये। जो सोया हुआ है वह 'जागे' द्वारा सम्बोधित होना ही चाहिये। जो जागता हुआ लेटा है वह उठ बैठेगा। देखिये

उठे लखन निसि बिगत सुनि
अरुन सिखा धुनि कान।
गुरु ते पहलेहिं जगतपति,
जागे राम सुजान॥

भक्त शिरोमणि तुलसी ने कलियुग में

नाम महिमा का प्रभाव सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शित किया है। इस स्थल पर महाकवि की लेखनी द्वारा ऐसे शब्द प्रयुक्त हुए हैं जो रामनाम की महिमा में चार चाँद लगा देते हैं। सतयुग, त्रेता और द्वापर में मनुष्य को अपने कर्म बल द्वारा तैरकर भवसागर पार पाना लिखा है—

कृत जुग सब जोगी बिग्यानी।
करि हरि ध्यान तरहिं भवप्रानी॥
त्रेता बिबिध जग्य नर करहीं।
प्रभुहिं समर्पि करम भव तरहीं॥
द्वापर करि रघुपति पद पूजा।
नर भव तरहिं उपाउ न दूजा॥

परन्तु कलियुग में भवसागर की थाह पाना लिखा गया है।

कलिजुग केवल हरि गुनगाहा।
गावत नर पावहिं भव थाहा॥

केवल इतना ही नहीं कलियुग के अधम पापियों के लिए भवसागर नाम महिमा द्वारा सरिता, कूप एवं गोपद में परिवर्तित कर दिया गया है। देखिये—

निजसंदेह मोह भ्रम हरनी।
कहउँ कथा भव सरिता तरनी॥
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं,
ते न परहिं भवकूपा॥
सादर सुमिरन जे नर करहीं।
भव बारिधि गोपद इव तरहीं॥

अन्त में गोपद के बन्धन को भी रखना उचित न समझ कर नाम महिमा ने भवसागर को पूर्णतः सुखा डाला।

नामलेत भवसिंधु सुखाहीं।
सुजन विचारि करहु मनमाहीं॥

यहां एक शब्द और दर्शनीय है। मानस के रुढ़िवाचक शब्दों का प्रयोग किसी विशेष अवस्था को सूचित करता है। उक्त प्रसंग में 'लेत' शब्द के पश्चात नष्ट होने की दशा है तुलना के लिये कुछ उदाहरण देखिये—

जिन्ह कर नाम लेत जग माहीं।
सकल अमंगल मूल नसाहीं॥

शिवधनुष पिनाक भंग के अवसर पर

लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े।
काहु न लखा देखि सब ठाढ़े॥

दशरथ मरण के अवसर पर—

लेइ उसास सोच एहि भाँती।
सुरपुर तें जनु खसेउ जजाती॥
लेत सोच भरि छिन छिन छाती।
जनु जरि पंख परेउ संपाती॥

इस प्रसंग में 'पैठि' शब्द भी दो वार प्रयुक्त हुआ है। वह भी इसी शब्द की तरह नाशवाचक रूढ़ि शब्द है।

पैठत नगर सचिव सकुचाई।
जनु मारेसि गुरु बाह्मन गाई॥
अवध प्रवेस कीन्ह अँधियारे।
पैठि भवन रथ राखि दुआरे॥

अन्यत्र हनुमान के लंकाप्रवेश पर नगर का दहन होना है अतः

अति लघु रूप धरेउ हनुमाना।
पैठा नगर सुमिरि भगवाना॥

फिर बाग भी उजाड़ा जाना है अतः

चलेउ नाइ सिर पैठेउ बागा।
फल खायेसि तरु तोरइ लागा॥

फिर संजीवनी बूटी लेने जाते समय मकरी-वध के अवसर पर—

सर पैठत कपिपद गहा, मकरी तब अकुलान।
मारी सो धरि दिव्य तनु, चली गगन चढ़ि जान॥

अंगद द्वारा रावणपुत्र के बध के अवसर पर—

पुर पैठत रावन कर बेटा।
खेलत रहा सो हो गई भेंटा॥

बालि द्वारा मायावी के बध पर।

गिरिवर गुहा पैठि सो जाई।

तब बाली मोंहि कहा बुझाई॥ आदि।

नाममहिमा की ही भांति संत महिमा का भी वर्णन शब्द प्रतिशब्द से स्पष्ट हो गया है। जिस महापापी जयंत का नाम लेना भी सभी अस्वीकार कर देते हैं और 'सुरपतिसुत' या 'शक्रसुत' द्वारा ही उसका परिचय कराया जाता है यथा—

सुरपतिसुत धरि बायस बेखा।

सठ चाहत रघुपति बल देखा॥

जिमि जिमि भाजत शक्रसुत,व्याकुलअतिदुखदीन।

तिमि तिमि धावत राम सर,पाछे परम प्रवीन॥

तात सक्रसुत कथा सुनायेहु।

बान प्रताप प्रभुहिं समुझायेहु॥

सुरपतिसुत जानत बल थोरा।

राखा जियत आँख गहि फोरा॥

भरत रहनि सुरपतिसुत करनी।

प्रभु अरु अत्रि भेंट पुनि बरनी॥

उसी का नाम संतदरश पर ही प्रकट कर दिया जाता है क्योंकि

'संत दरस सब पातक टरई' अस्तु

नारद देखा बिकल जयंता।

लागि दया कोमल चित संता॥

इसी संत महिमा का प्रभाव अन्यत्र भी अनायास ही अपने सत्संग से चार जड़ पदार्थों बिटप, सरिता, गिरि, धरणी को चेतन बनाकर परमार्थ पथ पर अग्रसर करने में समर्थ हुआ है देखिये—

संत बिटप सरिता गिरि धरनी।

पर हित हेतु सबन्ह कै करनी॥

जब कि एक असज्जन जड़ वस्तु के साथ अन्य चार चेतन जीव गँवार, शूद्र, पशु, नारी ताड़ना के पात्र बन जाते हैं।

ढोल गँवार सूद्र पसु नारी।

सकल ताड़ना के अधिकारी॥

जामवन्त के वचन हनुमान के हृदय में अति भाये हैं इसके प्रमाण में हनुमान द्वारा प्रयुक्त शब्द जामवन्त के वचनों की प्रतिध्वनि मात्र हैं। देखिये जामवन्त ने कहा था—

कपि सेन संग सँघारि निसिचर

राम सीतहिं आनिहैं।

त्रैलोक पावन सुजसु सुर

मुनि नारदादि बखानिहैं॥

हनुमान कहते हैं—

कछुक दिवस जननी धरु धीरा।

कपिन्ह सहित अइहहिं रघुबीरा॥

निसिचर मारि तोहिं लै जइहहिं।

तिहुँ पुर नारदादि जसु गैहहिं॥

इसी प्रसंग में एक बात और ध्यान देने योग्य है। हनुमान जब सीता की खोज में लंका को प्रयाण करते हैं। तब—

हनुमत जन्म सुफल करि माना।

चलेउ हृदय धरि कृपानिधाना॥

फिर समुद्र लंघन के समय राम की मूर्ति को सँभालते जाते हैं।

चलेउ हरषि हिय धरि रघुनाथा।

एवं बार बार रघुबीर सँभारी। अस्तु।

सीता के पास पहुँचकर जब तक हनुमान संदेश सुनाते हैं तब तक जननी और मातु शब्द का प्रयोग है। यथा—

रामदूत मैं मातु जानकी।

यह मुद्रिका मातु मैं आनी।

मातु कुसल प्रभु अनुज समेता।

जनि जननी मानहु जिय ऊना।

इसके बाद

रघुपति कर संदेसु अब सुनु जननी धरि धरि।

अस कहि कपि गदगद भयउ भरे बिलोचन नीर॥

स्पष्ट है कि वे राम के मुँह से ही संदेश सुनने का आग्रह कर रहे हैं क्योंकि वे गदगद होकर विक्षिप्तावस्था में हो गये हैं और अब राम की वह मूर्ति, जिसको वे सँभाल कर लाये

हैं स्वयं ही अपना वक्तव्य प्रस्तुत करती है। तभी तो प्रिया, सीता आदि सम्बोधन युक्त प्रेम की वार्ता है जो पुत्र माता के सम्मुख नहीं कह सकता। 'कहेउ राम' से सब कुछ स्पष्ट है।

कहेउ राम बियोग तव सीता।
मो कहुँ सकल भये विपरीता॥
तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा।
जानत प्रिया एक मन मोरा॥

जब हनुमान पुनः बोलते हैं तो प्रसंग एक ही होते हुए भी पृथक से 'कह कपि' शब्द हैं।

कह कपि हृदय धीर धरु माता।
सुमिरु राम सेवक सुखदाता॥

इस रहस्य का उद्घाटन हो जाने पर भक्त शिरोमणि महाकवि की लेखनी को चूमने के लिए दिल लालायित हो उठता है जिसने स्पष्ट रूप से तथ्य कथन न करते हुए शब्द चमत्कार ऐसा रख दिया जो उनके आशय को अपने आप प्रकट कर दें।

ईश्वर न जन्म लेता है, न उपजता है प्रत्युत प्रकट होता है अस्तु राम के जन्म के लिए प्रगटना शब्द प्रयुक्त किया गया है।

इच्छामय नर बेष सँवारे।
होइहउँ प्रगट निकेत तुम्हारे॥
सुखजुत कछुक काल चलि गयऊ।
जेहिं प्रभु प्रगट सो अवसर भयऊ॥
भये प्रगट कृपाला दीनदयाला
कौसल्या हितकारी॥
गृह गृह बाज बधाव सुभ प्रगटे सुखमाकंद॥
जग निवास प्रभु प्रगटे अखिल लोक विश्राम॥
प्रगटेउ जहं रघुपति ससि चारू।
विस्व सुखद खल कमल तुषारू॥

शंकर जी भी कहते हैं

हरि व्यापक सर्वत्र समाना।
प्रेम ते प्रगट होहिं मैं जाना॥
अग जगमय सब रहित बिरागी।
प्रेम ते प्रभु प्रगटइ जिमि आगी॥

जो गर्भ से पैदा नहीं होता उसे 'उपजना' द्वारा वर्णन किया है—

संभु विरंचि विष्नु भगवाना।
उपजहिं जासु अंस ते नाना॥
जासु अंस उपजहिं गुन खानी।
अगनित लच्छि उमा ब्रह्मानी॥
उपजहिं एक संग जग माहीं।
जलज जोंक जिमि गुन बिलगाहीं॥

गर्भ से उत्पन्न होने को जन्मना कहते हैं

कैकय सुता सुमित्रा दोऊ।
सुन्दर सुत जन्मत भईं ओऊ॥

पशुओं के लिए बियाना शब्द का प्रयोग होता है। राम विमुख नर को महा कवि पशु ही मानते हैं। अतएव

नतरु बाँझ भलि वादि बियानी।
राम विमुख सुतते बड़ि हानी॥

क्या हमारा कर्तव्य यह नहीं है कि हम इससे प्रेरणा ग्रहण कर इस 'बियाना' की श्रेणी पार करने के लिए सतत प्रयास करें। एवं 'जिय कै जरनि' मिटाने के लिए राम के उस स्वरूप की झाँकी के दर्शन करें जिसमें वे धनुषवाण पर करकमलों को 'फेर' रहे हैं। यह दर्शन केवल चार बार प्रस्तुत हुए हैं। अन्तिम तीन बार लंका में महाग्नि शांत करते हुए दर्शन हो रहे हैं। कुंभकर्ण के बध पर जब 'तासु तेज प्रभु वदन समाना' तब

भुज युगल फेरत सर सरासन
भालु कपि चहुँ दिसि बने।
कह दास तुलसी कहि न सक छबि
सेष जेहि आनन घने॥

रावण के बध के अवसर पर भी तासु तेज समान प्रभु आनन' है अतः दो बार धनुः शायक फेरते हैं।

कह दास तुलसी जबहिं प्रभु
सर चाप कर फेरन लगे।
ब्रह्मांड दिग्गज कमठ अहि
महि सिन्धु भूधर डगमगे॥
भुजदंड सरकोदंड फेरत
रुधिर कन तन अति बने।
जनु रायमुनी तमाल पर बैठीं
विपुल सुख आपने॥

प्रथम अग्नि सबसे दारुण है। जिसका स्वरूप देखिये —

विधि कैकयी किरातिन कीन्हीं।
जेहि द्रव दुसह दसहु दिसि दीन्ही॥
सहि न सके रघुबर बिरहागी।
चले लोग सब ब्याकुल भागी॥

दशरथ कहते हैं कि

अजहूँ हृदय दहत त्यहि आँचा।
रिस परिहास कि साँचहुँ साँचा॥

कौशल्या की दशा—

दारुन दुसह दाह उर ब्यापा।
बरनि न जाइ बिलाप कलापा॥

भरत तो उस अग्नि के मूल शिकार थे

एकहि बड़ उर दुसह दवारी।
मोंहि लगि भे सियराम दुखारी॥
यह दुख दाह दहै नित छाती।
भूख न बासर नींद न राती॥

इसकी एक मात्र औषधि—

देखे बिनु रघुबीर पद, जिय कै जरनि न जाइ॥

अस्तु ध्यान कीजिये —

बेदी पर मुनि साधु समाजू।
सीय सहित राजत रघुराजू॥
कर कमलनि धनु सायक फेरत।
जिय कै जरनि हरत हँसि हेरत॥



जनवरी मास में संघ के ३१२ नये सदस्य बने। इस मास में २१ नई शाखायें स्थापित हुईं, जिनका विवरण इस प्रकार है:—

शाखा संख्या १३०६ अमोदा [विलासपुर] सदस्य १० मन्त्री श्री नकछेद प्रसाद जी। शा० सं० १३०७ तुलसी [विलासपुर] स० ६ मं श्री घासीराम जी शुक्ल। शा० सं० १३०८ साखी [विन्ध्य प्रदेश] सं ६ मं० श्री रामकले जी पटेल। शा० सं० १३०६ खाम्हीडोल [विन्ध्य प्र०] स० १३ मं० श्री व्रजभान सिंह जी क्षत्री। शा० सं० १३१० कदौड़ी [विन्ध्य-प्रदेश] सं ११ मं० बाबू रामप्रतापसिह। शा० सं० १३११ बहोरीपार [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री जीवनलाल जी साहू। शा० सं० १३१२ वासनपाली (होशंगाबाद) स० २३ श्री शालिग्राम जी तिवारी। शा० सं० १३१३ मुरद्दू (रांची) स० १५ मं० श्री जगदीशप्रसाद जी चौधरी। शा० सं० १३१४ पांगरा (मध्य भारत) स० १० मं० श्री गणेशप्रसाद जी। शा० सं० १३१५ भोथली (रायपुर) स० ६ मं० श्री रमणीक प्रसाद जी तिवारी। शा० सं० १३१६ अँगनापारा (बहराइच) स० १२ मं० श्री ऋषिराम जी शुक्ल व मन्मथराम जी शुक्ल। शा० सं० १३१७ बम्बई स० १७ मं० श्री माता दीन जी द्विवेदी। शा० स० १३१८ बम्बई स० १२ मं० श्री राजदेव जी तिवारी। शा० सं० १३१६ हैदर गढ़ (बाराबंकी) स० १० मं० श्री साहब शरण लाल शा० सं० १३२० नवाबगंज (गोंड़ा) स० ६ मं०। शा० सं० १३२१ रांभी जबलपुर स० १२ मं०। शा० सं० १३२२ रांभी जबलपुर सं० १२ मं०। शा० सं० १३२३ मुतेड़ा नवागाँव (दुर्ग) स० २२ मं० श्री उमेदराम जी। शा० सं० १३२४ सीता उबरी (दुर्ग) स० १४ मं० श्री गुहाराम जी। शा० सं० १३२५ सूखारी (होशंगाबाद) स० २० मं० श्री जीवनलाल जी कायस्थ। शाखा संख्या १३२६ जहाँगीराबाद (कानपुर) सदस्य १६ मंत्री श्री गोविन्दराम जी तिवारी।

विविध समाचार

बन्देमऊ:—माघ कृष्ण ४ को श्री राम जी के राजगद्दी का उत्सव तथा कीर्तन, माघ पूर्णिमा को ग्रहण पर रात्रि-जागरण कीर्तन और माघ शुक्ल ११ को मानस अन्ताक्षरी हुई।

—छोटे लाल गुप्त

सालेचौकारोड (वावई):—ता० ३-२-५३ को १० सदस्यों द्वारा अखण्ड पाठ हुआ।

—लालचन्द्र वमनोतिया

हसामपुर:—ता० १-२-५३ को श्री हनुमान दल की स्थापना हुई।

—विद्याधर शर्मा

चोरीया:—ता० ११, १२ फरवरी को श्री महाबीर मंदिर में श्रीरामरक्षित जी रामायणी की कथा हुई।

—नाथूराम पटवारी

मधरदा :– ता ७-१-५३ को श्रीकंजजी रामायणी काशी वालों की कथा हुई। एक शाखा नई स्थापित हुई। एक बोरा चना रामवन भेजना निश्चित हुआ है।

—नारायणसिंह पटेल

उमरेठ :—ता० १८-१२-५२ से २६-१२-५२ और ता० १६-१-५३ से २४-१-५३ तक क्रमशः ११. ६ सदस्यों द्वारा पारायण हुआ। हर रोज अन्त में आरती तथा प्रसाद वितरण होता था।

—मंगुभाई मंछाराम

बाँदा—बसन्त पंचमी को अखंड रामायण, हवन और कीर्तन हुआ। बाद में प्रसाद वितरण हुआ। शिवरात्रि को किष्किन्ध्या काण्ड, सुन्दरकाण्ड के सामूहिक पाठ हुए।

—लक्ष्मणकरण वि० मेहता

गया:—बसंत पंचमी को सरस्वती पूजन, हवन तथा ब्राह्मण भोजन हुआ। दूसरे दिन प्रतिमा के विसर्जन में बहुत बड़ा जलूस निकला।

गोमियाँ :—२० जनवरी को श्री सरस्वती पूजन होकर १००० आदमियों को प्रसादी वितरण तथा रात्रि को अभिमन्यु ड्रामा हुआ। दूसरे दिन यज्ञ ब्राह्मण भोजन, रामायण एवं कीर्तन होकर मूर्त्ति का नगर भ्रमण कराकर मूर्त्ति प्रवाह किया गया। ता० २६, २७, २८ जनवरी को सर्व श्री केशव शर्मा, वंशी लाल धर्णेश्वर प्रसाद अग्रवाल के गृह में रामायण तथा कीर्तन हुआ। बाद में प्रसादी वितरण हुआ।

—हीरा लाल

शहजादपुर :—ता० १२-१-५३ को श्री किशोरी सहचरी लोध के यहां २४ घंटे तक अखंड कीर्तन हवन ता० २४-१-५३ को जना० के यहाँ २४ घंटे तक अखंड कीर्तन और ता० २५-१-५३ को श्री मानस का सामूहिक पाठ, हवन हुआ। ता० ७-२-५३ को श्री रामानन्द जी की ओर से २४ घंटे का अखंड कीर्तन हुआ।

—श्यामप्रकाश लाल

सिद्धौर :—माघसुदी ५ को ३१ छात्रों द्वारा प्रभात फेरी, नवाह पाठ १, सुन्दर काण्ड के २५ पाठ तथा श्री हनुमान चालीसा के १४० पाठ हुए। फिर श्री गीतावली बालकाण्ड, कवितावली दोहावली, विनय पूर्वार्द्ध, जानकी मंगल, पार्वतीमंगल, बरवा, रामलला नहछू आदि का पाठ हुआ। रात में कीर्तन हुआ।

—रामभरोसे स्वर्णकार

बिछुआ :—श्री कंज जी रामायणी का प्रवचन हुआ। ४ नई शाखायें बनीं। १ बोरा चना रामवन भेजना निश्चित हुआ है।

—बाबूलाल सोनी

उमरिया :—श्री कंज जी रामायणी की कथा ८ दिन तक हुई। ११ नई शाखायें स्थापित हुईं। १ बोरा चना रामवन भेजना निश्चित हुआ है।

—रावराजबल सिंह

सींहासन :—में ५० व्यक्तियों ने १५ दिन में १२४ अखण्ड पाठ किये।

तारपुरा—में गोवधबन्दी के लिये १२४ पारायण, ५० व्यक्तियों द्वारा हुआ।

—श्री निवासदास पोद्दार

बिलारी:—ता० २२ से २४, जनवरी तक श्री रामरक्षित जी रामायणी का प्रवचन हुआ।

—तातीराम साव

धनिया:—श्री पं० रामरक्षित जी रामायणी की कथा माघ शुक्ल ११ से १४ तक हुई। काफी जनता कथा से लाभ उठाती थी। संघ के ११ सदस्य भी बने।

—भुवनलाल पांडेय

पटना:—(मिर्दाहा टोली) बसंत पंचमी को एक करोड़ श्री रामनाम प्रतिष्ठा का उत्सव मनाया गया। कलश स्थापित करके श्री रामनाम महिमा का १०८ पाठ सुन्दर काण्ड और हनुमान चालीसा के अखण्ड पाठ, हवन और नाम जप हुए। बाद में नाम महात्म्य पर भाषण कीर्तन तथा आरती हुई जन्मप्रसङ्ग का पाठ होकर अन्त में प्रसाद वितरण हुआ।

—रामदेव

बम्बई:—ता० ७-१२-५२ से वेदान्त भूषण साहित्य रत्न मानसतत्वान्वेषी श्री स्वामी रामकुमार

दास जी महाराज रामायणी अयोध्या की कथा तथा ता० २२-१-५३ तक शहर के अनेक मुहल्लों और विभागों में हुई। श्री रामार्चा यज्ञ भी बड़े सज धज के साथ हुई। जो उत्तरीय विभाग के लिये नई वस्तु थी। संघ के अनेक ग्राहक और सदस्य बनें।

—सुन्दर लाल श्रीवास्तव

सरदाः—शिवरात्रि को १३ सज्जनों ने महादेव जी के मंदिर में नवाह पाठ राम राम के सम्पुट से किये। २७ पाठ सुन्दर काण्ड के राम राम सम्पुट से तथा आधी आधी चौपाई पर हवन साकल्य और घी की आहुति से हुआ। १ पाठ श्री हनुमान चालीसा का हुआ। अन्तिम दिन ब्राह्मण भोजन हुआ।

—लल्लू सिंह गर्ग

गुड़ गाँव छावनीः ७ दिसम्बर को अखण्ड पाठ पं० द्वारका प्रसाद जी के यहां हुआ।

—वृजभावन स्वरूप

काकेबारः—श्री पं० बद्रीदत्त व्यास जी सुमन बाटिका प्रसंग की कथा हुई। ता० ३०-१-५३ को ग्रहण समय २४ घंटे का कीर्तन हुआ। उसके बाद जलूस के साथ नगर कीर्तन, हवन, तथा श्री मारुतिजी को नैवेद्य भोग लगाया गया तथा प्रसाद वितरण किया गया। शतपंच चौपाई का अखण्ड पाठ १०८ बार हुआ।

—टेक लाल राम महती

हरसिंग पुरः—एकादशी को श्री शिवाजी और श्री मारुति जी के मंदिर में मानस का अखण्ड पाठ हुआ। पूर्णाहुति पर हवन, प्रसाद वितरण हुआ।

—धारा सिंह वि० वर्मा

परौंखः—ता० ६, १३, १८, और २६ जनवरी, तथा ३ फरवरी को क्रमशः श्री हनुमान चालीसा के पाठ १२, ११, २०, ११, १२ हुए। अधिकांश तारीखों में मानस गायन मय विवेचन के मानस अन्ताक्षरी तथा कंठाग्र योजना हुई। ता० १८ को श्री कुंज बिहारी लाल के यहां भागवत सप्ताह की पूर्ति हुई। माघ शुक्ल में वहवलपुर में श्री भागवत सप्ताह पारायण तथा भण्डरा हुआ।

—कुँ-धनसिंह भदौरिया

छतर पुरः—चैत्रनवरात्रि में कीर्तन सम्मेलन, अखंड पाठ, नगर परिक्रमा, हवन भोज और मानस सम्मेलन ता० २१-३-५३ से २६-३-५३ तक होगा।

बटका गढ़खापाः—शिवरात्रि को मानस का अखण्ड पाठ हुआ। बाद में पूजन, हवन हुआ।

—जगमोहन सिंह

रामबन समाचार

मानस आश्रमः—जनवरी मास में मानस का सम्पूर्ण अखंड पाठ नित्य होता रहा। इस मास में श्रीमारुति राग भोग में खर्च २७१।≈)॥ हुआ और आय ७६−)॥ हुई। १६५।−)। की कमी रही। मानस आश्रम में आय १६५॥)॥ हुई और और खर्च १५८॥।−) हुआ। इसमें ३६॥≡)॥ की बचत रही। कुल कमी १५८॥≈) की रही। जो पिछली कमी ८६३।)॥। सहित १०२१॥।≈)॥। की रही। आशा है प्रेमी जन इसे पूर्ण करेंगे।

मानस आश्रम

२-१-५३

१५) श्री मूलचन्द्र गणेश नारायण जी राजमहल

५) श्री गंगाप्रसाद बच्चूलाल, जावरा

५-१-५३

५।) श्री कुन्दनलाल तिवारी, मुगली शाखा

१।) श्री रमेशदत्त,

५) श्री कालूराम सोनी, साईखेंडा

७) श्री भीमराज ज्वालाप्रसाद, सतना

७-१-५३
३) श्री वी० पी० शुक्ला, पन्ना
६-१-५३
३) श्री गोपाललाल, सतना
२) श्री ठा० भागवतसिंह कोटमी
१६-१-५३
१।) श्री गन्नूराम साहू, धीरी
२॥) श्रीमती गीताबाई प्रियव्रती देवी, ढुन्डरी
१६-१-५३
१६) श्री सेठ रामचन्द्र जी, सतना
२७-१-५३
१००) गुप्तदान
३१-१-५३
२१) श्रीज्वालाप्रसाद केजड़ी वाल, कानपुर
१।) श्री गोपाललाल, सतना
२॥।) श्री भीमराज ज्वाला प्रसाद, सतना
१।)। चढ़ोत्री

१६५।।)।

श्री मारुति रागभोग

२-१-५३
५) श्री मूलचन्द्र गनेशनारायण जी. राजमहल
२) श्री जगमोहन साव, झड़ेकेला
१।) श्री भगवान विश्वनाथ, जगन्नाथपुर
१।) श्री उमरावसिंह साहू, हटकेश्वर
३-१-५३
१०) श्री पं० विद्याराम मिश्र, फूलापुर
१) श्री पं० रामदास पहलवान, "
१।) श्री पं० देवशरण जी कंज रामायणी, काशी
५-१-५३
१) श्री राजाराम मास्टर, कन्देली
५।) श्री शाखा महिला चीचली, श्रीमती कुटी वाली बाई
।≡)। श्री प्रभुदयाल लक्ष्मीप्रसाद, चीचली
१) श्री चौधरी हाकमसिंह राजपूत, वधवार

३=) श्री रामस्वरूपजी, भुगवारा द्वारा
२) श्री छोटेलाल अग्रवाल, इलाहाबाद
२०) श्री चन्देलसिंह ठाकुर, हल्दी
१०-१-५३
३) श्री कुँ० धनसिंह भदौरिया, परीख
१४-१-५३
१।) श्री झाड़ूराम वल्द सनूराम अहीर, नैला
१६-१-५३
४) श्री नाथूराम पटवारी, चोरिया
१६-१-५३
३) श्री पं० लखनलाल त्रिपाठी, सैंदा
२६-१-५३
१।) श्री सूर्य्यनन्द जी शर्मा, डुमरिया
२७-१-५३
१) श्री राम प्रकाश जी, दूधी
७) श्री नरेन्द्र सिंह प्रधानाध्यापक, अछल्दा
१) श्री रघुवरदयाल सक्सेना, कोटा

७६)। कुल। दाताओं को धन्यवाद।

श्रीराम संस्कृत विद्यालयः—में १६१।-)॥ खर्च हुआ। और श्री रघुवर दयाल सक्सेना कोटा से १) प्राप्त हुआ। पिछली कमी ६७४॥≡)॥ सहित अब कुल कमी ११६६।)॥ की पूर्त्ति करना बाकी है।

पारायण मन्दिरः—के लिये १) श्री रघुवर दयाल सक्सेना से प्राप्त हुआ पिछली कमी ६-)॥ में अब ५-)। रह गई।

कुटीर विभाग

सेंधवा कुटीरः— ३६)। खर्च हुए। पिछली कमी ८२≡)॥ सहित अब १२१।) है।

कोरी कुटियाः— जनवरी मास में ३८४=)॥ खर्च हुए और १०) की आय हुई। ३७४=)॥ अधिक खर्च हुए। ११७≡) पहिले के जमा थे। अब २५६॥≡)॥ आना बाकी रहे।

१०-१-५३
५) श्री सेवाराम कोरी, कानपुर

२१-१-५३
५) श्री दुज्जा कोरी, मौजपुर
१०)

नर्मदाखंड कुटीरः—में पूर्ववत १८४।।।)।।। की पूर्त्ति करना बाकी है।

श्रीरामनाम मन्दिरः—इस मास में ११८=) खर्च हुए। पिछली कमी ११८८।।≡) सहित १३०६।।।-) आना बाकी रहा। इसके दूसरे विभाग में श्री रघुबर दयाल सक्सेना कोटा से १) प्राप्त हुआ। अब २१५।) जमा है।

श्री तुलसी मन्दिरः—पूर्ववत् ३४।)।।। जमा है।

पाकशालाः—२२६।।।≡) खर्च हुआ। पिछले खर्च १२६।)।। सहित ३५६≡)।। हुआ। जिसमें ३००) प्राप्त हुए। अब ५६≡)।। बाकी रहे।

श्रीराम संस्कृत विद्यालय भवन रामवनः- इस मास में २२८) प्राप्त हुए। पिछली रकम ८६४।।।-)।।। सहित अब ११२२।।।-)।।। जमा है। मानस यज्ञ के बाद इसमें काम लगाने का विचार है।

२-१-५३
१२५) श्री सतना स्टोन लाइन कं०, सतना
१६-१-५३
५१) श्री गङ्गा विसन मोतीलाल, ओभाई
५१) श्री प्रहलाद राय सीताराम, खेतड़ी कामरूप
११) श्री नेमी चन्द्र सराव जी, डिब्रूगढ़
२२-१-५३
५०) श्री सतना स्टोन कं० सतना
२८८)

मानस प्रचार—जनवरी मास में सदस्य शुल्क २६३।।≡) प्राप्त हुआ। कार्यालय में ८४।≡)।। और चिट्ठी खर्च २६।।=)।। कुल ११४।=) खर्च हुआ। मानस प्रचार में जबलपुर सम्मेलन में आने जाने का खर्च ५८।।।-) हुआ और स्वागत समिति से ५८) प्राप्त हुये। श्री जमुनालालजी, खम्हरिया से ५) प्राप्त हुये। इस प्रकार ४≡) की बचत हुई। डागीढ़ाना सम्मेलन में आने जाने में ६३।=)। खर्च हुये और ६१) स्वागत समिति से ३) गाटेगांव शाखा और ३) श्री शिवचरण लाल वंसल ग्वालियर से प्राप्त हुये। इस प्रकार इसमें ३।।-)।।। की बचत हुई। ब्रह्मांडघाट के यज्ञ में ५२।।)।। खर्च हुये और यज्ञ समिति ने ४५) दिया। इसमें ७।।)।। अधिक खर्च हुये। जबलपुर तथा अन्य प्रचार में १३।।) और खर्च हुए। इस प्रकार प्रचार क्रम में कुल आय से १३≡)।।। अधिक खर्च हुये। कुल खर्च १२७।-)।।। हुआ। बचत १६६-)। हुई। पिछली कमी ८४।≡) घटा कर अब ८१।।=)। जमा है।

श्री रामनाम लड्डू :—जनवरी मास में ३६३५ लड्डू तैयार हुये। जिसमें १५५ लड्डू श्री मारुति जी को समर्पण हुये! बाकी मानस यज्ञ के लिये रखे गए हैं। केन्द्रों की स्थिति इस प्रकार है:—भेलसा—२०३०, डागीढ़ाना—११४३, गुलजारबाग पटना—५०४, करकेड़ी—३५८, जबलपुर—३४६।

मानस यज्ञ :—जनवरी मास में मानस यज्ञ के लिए २८१) प्राप्त हुए। पिछली रकम ७०३।।) सहित ६८४।।) जमा रहे। अब तक कुल ७७ साधकों की स्वीकृत आ चुकी है। आशा है शेष ४८ की पूर्ति शीघ्र हो जायगी।

२ १—५३
२५) श्री जीवन लाल सर्राफ, चाँपा
२५) श्री गंगाप्रसाद व बच्चूलाल, जावरा
१३-१-५३
२५) श्री उमाशङ्कर पांडेय, देवरिया
५) ,, कृष्ण किशोर प्रसाद पटना
१६-१-५३
२५) श्री रामशिरोमन दुबे, बम्बई
१६-१-५३
२५) श्री सीधनाथ रावत, इन्दौर
२३-१-५३
५१) श्री मगनीराम रामकुमार बांगड़, कलकत्ता
२७-१-५३
५०) श्री भागीरथजी भराड्या. सेंधवा
२६-१-५३
२५) श्री बद्री नारायण विद्यार्थी, कैमौर
३१-१-५३
२५) श्री लक्ष्मण गोपाल काकड़े, खरोरा
२८१)

मानससङ्घ द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

श्री महेन्द्र पुस्तकमाला

१—श्री रामचरितमानस में वीर रस (श्री शारदा प्रसाद जी) =।)
२—ध्यान के समय एफ.जे.अलेकजण्डर)॥≡)
३—श्रीरामचरितमानस में माता सुमित्रा (श्री सुदर्शन सिंह जी) ≡)॥
४—समुभाई (मानस राजहंस पं० श्री विजयानन्द त्रिपाठी) ॥)
५—श्री रामचरितमानस में महाराज जनक (वेदान्तरत्न रामयण-भूषण श्री अवध किशोर दास जी श्रीवैष्णव) ।=)
६—भक्त शबरी (पं० भागवत द्विवेदी आयुर्वेदाचार्य) ≡)॥
७—महासती अनसूया (पं० देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।=)
८—ब्रह्मर्षि वसिष्ट (श्रीसुदर्शन सिंहजी) ।)
९—धर्मशीला कौशिल्या (पं० देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।=)
१०—स्नेहमयी कैकई (पं० देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।=)
११—तुलसी मुक्तावली प्रथम किरण (श्री शम्भुप्रसाद वहगुना, एम०ए०डिप०साइ० ॥।=)
१२—तुलसी मुक्तावली द्वितीय किरण (श्री शम्भु प्रसाद वहगुना एम० ए० डिप० साइ०) ॥।)
१३—मानस मूल (मानस राजहंस पं० श्री विजयानन्द जी त्रिपाठी) ॥)
१४—मानस-व्याकरण (श्री मानसराजहंस पं० विजयानन्द जी त्रिपाठी) २)
१५—सचिव सुमन्त्र (सुदर्शसिंह) ।=)
१६—विवेकी विभीषण (सुदर्शनसिंह) ॥)
१७—मानस महत्व (पं० भैरवानन्द) १)

श्री मानस-रत्नावली ग्रंथमाला

१—रामवन (श्रीसुदर्शनसिंहजी 'चक्र') ।≡)
२—सार्थ श्री रामतारक प्रयोग विधि (महान्त श्री रामपदार्थ दास जी महाराज एवं वेदान्त भूषण पं० श्रीराम कुमार दास जी रामायणी) ॥)
३—सब ग्रंथन को रस(रा०सा० हीरालाल) १)

श्री कौशलेन्द्र कथामाला

१—नव निर्झरिणी (नवधा भक्ति पर ६ कहानियाँ) (श्री चक्र) ।≈)
२—नूतन नवरत्न (कहानियाँ) (श्रीचक्र) ।≈)
३—दिव्य दशमी (श्री चक्र) ।≈)
४—मानस मन्दाकिनी प्रथम हिलोर (श्री चक्र) ।)॥
५— ,, ,, द्वितीय ,, (श्री चक्र) ।=)
६— ,, ,, तृतीय ,, (श्री चक्र) ।=)

रामदास भक्तमाला

१—महाभागवत चरित (पहिला भाग) (महात्मा श्री बालकरामजी विनायक) १)
२—महाभागवत चरित (दूसरा भाग) (महात्मा बालक रामजी विनायक) ।)

पीयूष प्रवाह

१—विश्व साहित्य में रामचरित मानस (काव्य समीक्षा) (श्री राजबहादुर लमगोड़ा) १≈)
२—श्री भगवन्नाम संकीर्तन (श्री सुदर्शन सिंह) =)॥

मानस संघ के विविध कार्य

१—वर्ष में श्रीरामचरितमानस का दो पाठ करने की प्रतज्ञा करने वाले सज्जन मानस संघ के सदस्य बनाए जाते हैं। आजीवन शुल्क ॥) है। जहाँ नौ सदस्य हो जाते हैं, वहाँ शाखा बन जाती है। इस समय देश में मानस संघ के २६२०० सदस्य हैं और १३२६ शाखायें हैं।

२—रामचरितमानस का प्रचार एवं अध्ययन व्यापक करने के लिए यह 'मानस मणि' मासिक पत्र ग्यारह वर्ष से निकल रहा है। इस का वार्षिक मूल्य ३) है।

३—तुलसी साहित्य का प्रकाशन मानस प्रकाशन लिमिटेड द्वारा होता है। कम्पनी का प्रत्येक शेयर १०) का है। कम्पनी १६ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है। स्थायी ग्राहक शुल्क २) है। स्थायी ग्राहकों को प्रकाशित ग्रंथों पर २५ % कमीशन दिया जाता है।

४—श्रीरामचरितमानस पत्र व्यवहार विद्यालय द्वारा मानस संघ घर बैठे श्रीरामचरितमानस की शिक्षा देता है। विद्यालय का पाठ्य विषय तीन वर्षों का है और प्रथम वर्ष का शुल्क १०) है।

५—मानस आश्रम में नित्य अखण्ड मानस पाठ होता है। यहाँ रह कर साधक एकान्त में साधन भजन करते हैं।

६—तुलसी संग्रहालय भी रामवन में है।

७—मानस संघ राम नाम लड्डू लेखन का प्रचार करता है। ये लिखित रामनाम श्रीमारुति जी को अर्पण किये जाते हैं। २७ करोड़ अर्पित हो चुके हैं।

८—श्री राम संस्कृत विद्यालय में वाराणसेय-परीक्षा के पाठ्यक्रम के साथ मानस अध्ययन की भी सुविधा रखी गई है।

हर विभाग में आपका सहयोग अपेक्षित है।



'मानस मणि'

पो० – रामवन (सतना)

म० नं०—

श्री

सम्पादक—सुदर्शन सिंह
प्रकाशक—शारदा प्रसाद, मन्त्री, मानस सङ्घ, रामवन, (सतना)। मुद्रक—माधो प्रिंटिङ्ग वर्क्स प्रयाग

मानस मणि



मणि १२

अप्रैल १९५३

आलोक ४

वार्षिक मूल्य तीन रुपया

वी० पी० से तीन रुपया आठ आना

राम नाम मन्दिर

बालया सम्मेलन से लौटते समय काशी में पूज्य श्री पं० विजयानन्द जी त्रिपाठी के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। श्री रामनाम मन्दिर के निर्माण के समाचार से वे बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा ९९ करोड़ श्री रामनाम पूर्ण कीजिये। तब एक एक परिक्रमा का महान महत्व हो जायगा। ९९ करोड़ का बहुत बड़ा महात्म्य है। मैंने वर्तमान स्थिति अवगत कराई। २७ करोड़ नाम हैं। ९ करोड़ नवरात्र तक में पूर्ण होने की आशा है। ३६ करोड़ हो जायंगे। फिर भी ६० करोड़ की कमी रहेगी। इनके लिये उद्योग किया जायगा।

मिती फाल्गुन शुक्ल को श्रीरामनाम मंदिर की प्रतिष्ठा हो गई। अब रामवन आने वालों को इसकी परिक्रमा का सतत अवसर प्राप्त होता है। जब अवकाश हो तब ही रामवन आइये। (१) श्री रामनाम की परिक्रमा कीजिये (२) श्री मारूति भगवान के दर्शन कीजिये (३) यहाँ के शान्त वातावरण में भजन कीजिये।

हम आभारी डा० कमलेश्वरी चरण मिश्र के हैं जिन्होंने यह मन्दिर बनवाने की कृपा की है और प्रार्थी हैं सब प्रेमियों के कि वे शेष ६० करोड़ श्री रामनाम लिखकर इसे पुर्नतः प्रदान करें। अधिक से अधिक श्रीराम नाम लड्डू लिखकर भेजने की कृपा आप कीजिये। आगामी वैशाख पुरूषोत्तम मास में इसके लिये अवश्य समय निकालिये।

—शारदा प्रसाद

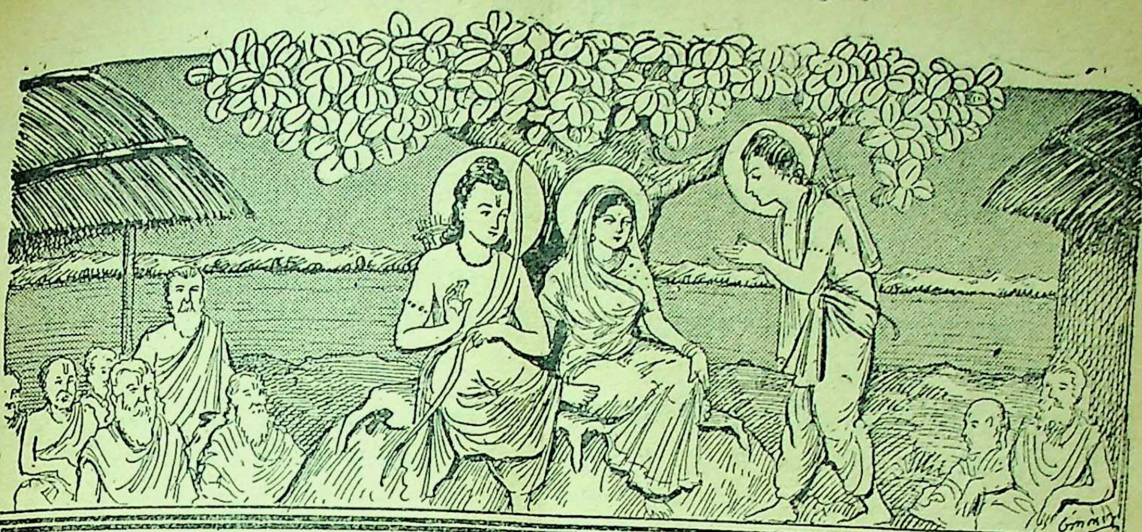
आभूषण और पार्षद

पूर्व प्राप्त आभूषणों तथा चाँदी के पार्षदों का विवरण मानसमणि में यथासमय प्रकाशित हो चुका है! अभी हाल में गोरखपुर के श्रीब्रजभूषण गनेड़ीवाला ने निम्न रजत पार्षदों की सेवा की है। हम आपके आभारी हैं।

१—धूपदानी— १
२—दीपदानी— १
३—चंदन कटोरी—१
४—कोपर—१
५—तस्तरी (फूल के लिये)—९
६—तस्तरी (तुलसी के लिये)—१
७—तिपाई—१
८—सिंहासन छत्र सहित (श्रीरामार्चा के लिए)

अब तो लगभग सभी आवश्यक आभूषण तथा पार्षद हो गये हैं। दो तीन ही और शेष हैं। जब कभी किन्हीं प्रेमी को श्री मारुति भगवान प्रेरित करेंगे, वे भी बन जाँयगे। पत्र आने पर विवरण दिया जा सकेगा। साधारण दैनिक सेवाओं तथा विशेष सेवाओं के सम्बन्ध में हम प्रेमियों के पत्र-व्यवहार का स्वागत करेंगे।

—मन्त्री



मानस मणि

राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके।।
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं।।

मणि १२ — रामवन—वैशाख, मानस संवत् ३८०—अप्रैल १९५३ ई० — आलोक ४

मानस की सूक्तियाँ

जहँ लगि नाथ नेह अरु नाते। पिय बिन तियहिं तरनिहु ते ताते।।
तनु धन धाम धरनि पुर राजू। पति बिहीन सब सोक समाजू।।
जिय बिनु देह नदी बिन बारी। तैसिअ नाथ पुरुष बिनु नारी।।

मातु पिता गुरु स्वामि सिख, सिर धरि करहिं सुभाय।
लहेउ लाभ तिन्ह जनम कर, नतरु जनम जग जाय।।

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी। सो नृप अवसि नरक अधिकारी।।
नरवर धीर धरम धुर धारी। निगम नीति कहँ ते अधिकारी।।
धरम नीति उपदेसिअ ताही। कीरति भूति सुगति प्रिय जाही।।
मन क्रम बचन चरन रत होई। कृपासिन्धु परिहरिअ कि सोई।।
गुरु पितु मातु बन्धु सुर साईं। सेइअ सबहिं प्रान की नाईं।।

(६०९)

मरण का ही दूसरा नाम निर्धनता है। यह बात विषयरतों के लिये परम सत्य है पर त्यागियों के लिये तो वह ईश्वरीय पुरस्कार है।

(६१०)

जब तक मन में काम क्रोध और लोभ हैं तब तक पंडित और मूर्ख दोनों समान हैं।

(६११)

जिनके चित्त में दोष है उन्हें ही पराया कार्य सदोष दीखता है।

(६१२)

जितना ही जिसके पास होता है वह उतना ही और को लालायित रहता है।

(६१३)

वह दान सच्चा दान नहीं जो देकर प्रसिद्ध किया जाता है।

(६१४)

जिसमें कृतज्ञता नहीं वह कुत्ते से भी गया बीता है।

(६१५)

जो मित्र के दुख में दुखी नहीं होता, सहायता नहीं करता वह मित्र नहीं स्वार्थी है। सुदिन में तो शत्रु भी मित्र हो जाते हैं।

(६१६)

खुशामदी हमारे सबसे बड़े शत्रु हैं। क्योंकि वे हमें पतन की ओर ले जाते हैं।

(६१७)

कटु, किन्तु स्पष्टवादी प्रायः निस्वार्थ और परोपकारी होते हैं।

(६१८)

हमारे शोक और दुखों का कारण वह सम्बन्ध है जो हमने दूसरों से कर रखा है।

(६१९)

जो विषयों में सुख को पाना चाहते हैं, वे अग्नि में जल के लिये हाथ डालते हैं।

(६२०)

विषयों में जो सुख है वह वैसा ही है जैसा दद्रु के खुजलाने में होता है।

(६२१)

यदि कुछ देना है तो उसे दो जिसे उसकी आवश्यकता है। जिसके पास प्रचुर सामग्री है उसे देने में कोई पुण्य नहीं।

(६२२)

जाति मत देखो, यदि देना है तो दीन को दो चाहे वह जो कोई भी हो।

(६२३)

जिनके पास प्रचुर धन है, जो धन का दुरुपयोग करते हैं उन्हें देना पाप है।

(६२४)

देने के पूर्व विचार कर लो, यदि लेने वाले ने तुम्हारी वस्तु का दुरुपयोग किया तो तुम्हें भी उस पाप में अवश्य ही भाग मिलेगा।

(६२५)

भूखे को भोजन और नंगे को वस्त्र देते समय जाति पांति का परिचय पूछना नीचता है।

(६२६)

वह दान ही नहीं जो परिचित समझकर लाभ की आशा से दिया गया है।

(६२७)

जो माँगने पर भूखे को भोजन नहीं देता, अवसर पड़ने पर उसे भी न मिलेगा।

(६२८)

किसी भय, प्रलोभन या आशा से देना कायरता या स्वार्थ है। दान नहीं।

(६२९)

सच्चे दान को दाता के अतिरिक्त और कोई नहीं जानता।

(६३०)

वह तुच्छ वस्तु जो प्रेम से दी गई है अनादर के दिये राज्य से सैकड़ों गुना अधिक है।

(६३१)

धर्म वही है जिसके द्वारा विश्व के समस्त प्राणियों का कल्याण हो।

ऋषि-गीता

—सुदर्शन सिंह

(तृतीय भवन)

जस तुम्हार मानस विमल, हंसिनि जीहा जासु।
मुकताहल गुन गन चुनइ, राम बसहु हिय तासु॥

आप के भुवन मंगल यश रूप निर्मल मानस सरोवर में ही जिसकी हंसिनी रूपी जिह्वा निवास करती है और आपके गुण गण रूपी मोतियों को ही चुगा करती है, श्रीराघव! आप अपने उन अनुरागियों के हृदय में निवास करें।

सुमति भूमि थल हृदय अगाधू।
बेद-पुरान उदधि घन साधू॥
बरषहिं राम सुजस वर वारी।
मधुर मनोहर मंगल कारी॥
+ + +
मेधा महिगत सो जल पावन।
सकिलि श्रवन मग चलेउ सुहावन॥
भरेउ सुमानस सुथल थिराना।
सुखद सीत रुचि चारु चिराना॥

'श्रीरामचरित मानस' के बालकाण्ड में दोहा नं० ३५ के आगे से लेकर दोहा नं० ४३ तक श्रीगोस्वामीजी ने विस्तार पूर्वक श्री राम-यश रूपी निर्मल मानसरोवर का पूरे रूपक में अंग-उपांगों आदि के साथ वर्णन किया है। अतः 'जस तुम्हार मानस विमल' को समझने के लिये उस पूरे प्रसंग को ही देखना चाहिये।*

*मानसराज हंस श्री पंडित विजयानंद जी त्रिपाठी (काशी) ने 'मानस-प्रसंग' नामक ग्रन्थ में बड़ी ही गम्भीरता से श्रीरामचरित मानस के 'मानस-प्रसंग' की विस्तृत विवेचना की है। यह ग्रन्थ पूरे श्रीरामचरित्र मानस की व्याख्या शैली सिखा देता है। इसे मानस प्रकाशन लि० ने प्रकाशित किया है। मानस संघ के प्रधान कार्यालय रामबन से इसे आप मंगा सकते हैं। इसका मूल्य ३॥) है।

भगवान श्रीराम का यश तो विमल मानसरोवर है। वह नित्य है, दिव्य है, अविकृत है अक्षय है। लेकिन सभी पक्षियों की वहाँ गति नहीं। बगुले, कौये आदि तो गन्दे गड्ढों के किनारे ही सन्तुष्ट हो सकते हैं।

'संबुक भेक सेवार समाना।
इहाँ न विषय कथा रस नाना॥
तेहि कारन आवत हिय हारे।
कामी काक बलाक बिचारे॥'

मानसरोवर में तो हँसों के जोड़े ही निवास करते हैं। अतः जिनकी जिह्वा हंसिनी है—नीर क्षीर-विवक में निपुण है, सांसारिक विषय कथा को छोड़ कर सर्वत्र भगवान के निर्मल गुणों को ही ग्रहण करने वाली है, वही इस मानस-सर में निवास कर सकती है। हंस मानसरोवर को ही अपना स्थिर निवास मानते हैं। आवश्यकता वश ही वे इधर उधर जाते हैं और फिर यथाशक्य शीघ्र लौट आते हैं। उसी प्रकार जिसकी जिह्वा श्रीराम यश रूप निर्मल मान सरोवर की हंसिनी हो गई है, वह उसी में निवास करती है। उसे बहुत आवश्यकता हो तभी केवल आवश्यकता भर को दूसरी बात करता है। सांसारिक बातें प्रयोजन से अधिक वह करता ही नहीं। उसका व्रत होता है—

रामहिं सुमिरिय गाइय रामहिं।
सन्तत सुनिय राम गुन ग्रामहिं॥

ऐसी हंसिनी जिह्वा का मुख्य आहार है 'मुकुताहल गुन गन, श्रीराघव के जो अनन्त दिव्य चिन्मय मंगलमय गुणगण हैं, दया, क्षमा

कृपा, भक्तवात्सल्य प्रभृति जो उन परम प्रभु के अलौकिक गुण हैं, वे ही मुक्ता हैं। जो आत्माराम आप्तकाम मुक्तपुरुष हैं, वे भी उन गुणों में ही अपने चित्त को लगाये रहते हैं—

आत्मारामोऽपि मुनयः निग्रन्थाप्युरुक्रमे ।
कुर्वन्त्यहैतुकीं भक्तिं इत्थंभूतगुणोहरिः ॥'
—भागवत

जिनकी हृदयग्रन्थि (चिज्जड़ग्रन्थि) छिन्न हो चुकी है, जो निरन्तर अन्तर्मुख ही रहते हैं, जिन्हें विषयों में कोई रस मिलता ही नहीं, ऐसे मुक्तात्मा मुनि गणभी भगवान की अहैतुकी (निष्काम भक्ति) करते हैं, क्योंकि श्रीहरि के दिव्यगुण ही ऐसे हैं।

मुक्तात्मा भी निखिल कल्याण गुण गणैक-धाम के जिन गुणों पर मुग्ध हो जाते हैं, वही गुण वास्तविक मुक्ता-मोती हैं। श्रीराम यश रूपी निर्मल मानसरोवर में रहने वाली हंसिनी उन मोतियों को ही चुना करती है। भगवद् गुणानुवाद रस रसिकों की इस हंसिनी जिह्वा का जीवन ही वे श्रीराघवेन्द्र के गुण रूपी मोती होते हैं। उन गुणों का वर्णन किये बिना वह रह नहीं सकती, उसके बिना उसका जीवन सम्भव नहीं है।

जिनको सांसारिक विषय-कथा सर्वथा नहीं रुचती। जो संसार के व्यवहार में प्रयोजन मात्र अत्यल्प भाषण करते हैं, दूसरों की जल मिले दूध जैसी साधारण बातों तथा सामान्य लौकिक ग्रन्थों में से भी जो जल के समान अन्य बातों को छोड़कर दूध के समान श्रीराम के यश, लीला, माहात्म्य को ही ग्रहण करते हैं, जिनका जीवन ही श्रीराम-गुण गान है, जिन्हें श्री रघुनाथ के गुणानुवाद वर्णन का व्यसन है, जो इसके बिना रह नहीं सकते, उनके हृदय में वे कौशलराज कुमार निवास करें यह महर्षि वाल्मीकि कह रहे हैं। भगवान ने स्वयं कहा है—

'नाहं बसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद॥

प्रभु कहते हैं—'देवर्षि नारद जी, मैं स्थायी रूप से न तो वैकुण्ठ में रहता और न योगियों के हृदयमें ही रहता। (इन स्थानों पर तो कभी कभी मैं पहुँच जाता हूँ) लेकिन मेरे भक्त जहाँ मेरे नाम, गुण, लीला आदि का गायन करते हैं, मैं वहाँ स्थायी रूप से रहता हूँ।'

इस प्रकार प्रथम-भवन के रूप में सत्संग अथवा श्रवण निष्ठा से भगवत्प्राप्ति, द्वितीय भवन के रूप में दर्शन की तीव्र लालसा से भगवत्प्राप्ति कहकर इस तीसरे भवन के रूप में गुण गान से भगवत्प्राप्ति बताई गई है। महाराज पृथु के समान किसी की दृढ़ निष्ठा केवल भगवान की कथा सुनने में ही हो, वह केवल सुने ही सुने, किन्तु प्यास पूर्वक सुने—ऐसी प्यास से सुने जो कभी बुझती नहीं, बराबर बढ़ती जाती है, तो उसे इस सुनने की उत्सुकता से ही प्रभु के श्रीचरण प्राप्त हो जायँगे। जब उन दयामय के दर्शनों के लिये किसी के प्राण तड़पने लगते हैं तो वे करुणा-वरुणालय उसे अवश्य दर्शन देते हैं, यह दर्शन के लिये तीव्र अभीप्साकी सफलता तो सर्व मान्य है ही। इसी प्रकार भगवद्गुण गान अर्थात गुण-कीर्तन से भगवत्प्राप्ति होती है, यह बात भी शास्त्रों में और महापुरुषों द्वारा बार-बार कही गई है। ये तीनों साधन अपने आप में पूर्ण हैं, इसके साथ उनमें एक क्रम भी है। पहिले भगवत्कथा सुनी जाती है, फिर भगवद्दर्शन की लालसा होती है और तब भगवत्प्राप्ति के लिए साधक भगवद्गुणानुवाद को अपनाता है। वह नाम जप तथा कीर्तनादि में प्रवृत्त होता है।

सुवेल शैल पर की मृग छाला

[दण्डी स्वामी श्री प्रज्ञानानन्द सरस्वतीजी]

श्री रघुबीर. सेना के समेत सुवेल शैल पर उतरे हैं। इसके एक उत्तुङ्ग परम रम्य सम शुभ्र शिखर पर—

तहँ तरु किसलय सुमन सुहाए।
लछिमन रचि निज हाथ डसाए॥
ता पर रुचिर मृदुल मृगछाला।
तेहि आसन आसीन कृपाला॥

यह है कथा संदर्भ। अब शंका की जाती है कि यह मृगछाला लखन लालजी ने कहाँ से लायी? इस लेख में इस शङ्का का समाधान मानसान्तर्गत प्रमाणों से यथामति किया जाता है।

सीताहरण के लिये मारीच ने जिस कपटमृग का रूप लिया था—

'अति विचित्र कछु बरनि न जाई।
कनक देह मनि रचित बनाई॥
सीता परम रुचिर मृग देखा।
अंग अंग सुमनोहर बेषा॥
सुनहु देव रघुबीर कृपाला।
यहि मृगकर अति सुन्दर छाला॥
सत्य संध प्रभु बधि कर एही।
आनहु चर्म कहति बैदेही॥

ऐसा जिसका वर्णन अरण्य २७।१-८ में किया है उसी मृग की यह छाला है, ऐसा कोई कोई रामायणी और मानस टीकाकार कहते हैं। तथापि यह मत इस अल्पमती को सुसंगत और सयुक्तिक नहीं लगता है। कारणः—

प्राण त्याग करते समय वह परमरुचिर मृग तो था ही नहीं, मारीच का, निशाचर का, शरीर ही वहाँ गिर पड़ा। (२) वे रामायणी कहते हैं कि प्रिया की वासना पूर्ण करने के लिये 'प्रभु' ने अपने ऐश्वर्य से वह मृग चर्म प्रगट किया। तथापि उस प्रसंग में भगवान केवल माधुर्य लीला ही कर रहे हैं, इससे प्रकरणार्थ से यह कल्पना विसंगत है। (३) वे कहते हैं कि उस कनक मृग का चर्म लक्ष्मण जी ने ही लाया। तथापि लक्ष्मण तो रामजी को रास्ते में ही मिलते हैं। वे जहाँ मारीच का वध हो गया और उसकी देह धरणी पर पड़ गयी, वहाँ तक (लक्ष्मण लाल) गये ही नहीं हैं। (४) जो रामजी ने ही ऐश्वर्य निर्मित मृगचर्म लिया था और वहीं लक्ष्मणजी को दे दिया ऐसा मान लिया जाय तो, विरह-विलापों में उस मृगछाला का उल्लेख जरूर कर देते, कारण वह चर्म तो विलाप के नाट्य का एक अत्यन्त सुलभ साधन हो जाता। (५) वे रामायणी कहते हैं कि उस मृगचर्म को देखने से रामजी की विरह व्यथा, और सीता स्मृति जागृत न हो जाय इस हेतु से लक्ष्मणजी, उस मृगछाला को अपने कटिप्रदेश में लपेट कर वल्कल चीर के अन्दर, गुप्त रखते थे। क्या जिस मृगचर्म को अपने कटिप्रदेश में १०।१२ मास लपेट कर रखा होगा, वह चर्म कोई, लक्ष्मणजी के समान, प्रेमी सेवक, भगवान के बैठने के लिए, उनके आसन के लिये, विछाएगा? (क) जब दोनों भाई साथ ही स्नान संध्यादिक कर्म करते थे तब एक साल तक उस चर्म को छिपाकर रखना संभव है? वे लोग गीतावली का आश्रय लेते हैं—

'हेम को हरिन हनि, फिरे रघुकुल मनि,

लखनललित कर लिए मृगछाल" (अ० ७)

परन्तु यह आधार काम नहीं आता है— (क) गीतावली में 'हरिन हनि।'

'रघुवर दूरि जाइ मृग मारयो'

ऐसा मृग के वध का उल्लेख है, मानस में मारीच बध के प्रकरण में 'मृगवध' नहीं है, अपितु—

'खल बधि तुरत फिरे रघुबीरा।'

ऐसा उल्लेख है। (ख) गीतावली में मारीच की अपनी असली देह प्रगट करने की बात है ही नहीं प्रत्युत सीता जी को समझाते समय लक्ष्मणजी ने गीतावली में 'हत्यो हरिन' ऐसा ही कहा है। (ग) गीतावली का चर्म लाने का उल्लेख गीतावली के पूर्वा पर कथा से सुसंगत है। तथापि मानस के पूर्वा पर संदर्भ से यह कथा विसंगत है। (६) जो वही चर्म लखन लालजी ने बिछाया ऐसा मान लिया जाय तो, जिस चर्म के लिये लङ्काकांड हो गया, उस अनुपम, अद्वितीय, अलौकिक, कनकमय, मणिजटित, चर्म को लखनलालजी ने सीता जी के चरणों में, अग्निदिव्य के बाद कैसे समर्पित नहीं किया? वह ऐसी चीज थी कि इन्द्रादि देवों के पास भी वैसा चर्म नहीं था। (७) सुबेल पर्वत पर की मृगछाला केवल 'रुचिर म दुल' है और वह कपट-कनक-मृग तो 'परम रुचिर' 'अति सुन्दर' था। उसमें भी साम्य नहीं है। (८) वे लोग पूछते हैं कि जो उसी चर्म को लक्ष्मण जी ने बिछाया ऐसा न मान लें तो वह मृग छाला कहाँ से लायी? कारण 'राम लक्ष्मण मृगचर्म का उपयोग करते थे इसके लिये मानस में प्रमाण उपलब्ध नहीं है।' (६) ऐसा उल्लेख मानस में ही है, तथापि सावधानी में देखने में न आने से कुछ कल्पना रूपी तरंग को तो स्वीकार करना पड़ा और पीछे उस कल्पना को सुसंगत बताने के लिये अनेक कल्पना तरंगों की मालिका लगानी पड़ी।

अब यह बताना चाहिए कि वह चर्म कहाँ से लाया गया। मानस में क्या प्रमाण है सो देखिये —

'अजिन बसन, फल असन महि सयन डासि कुसपात (अयो० २११)

यह भरत जी का बचन हैं, भरद्वाजाश्रम में भरद्वाज मुनि के समक्ष। इस वचन का इनकार किसी ने किया नहीं है। इससे सिद्ध हो गया कि राम लक्ष्मण अजिन—मृगाजिन—मृगछाला का उपयोग करते थे। 'अजिन चर्म कृतिः इति मृगादेश्रमणि (अमर)।

(२) बरस चारि दस वासु बन,
मुनि व्रत बेष अहारु।' (अयो० ८८)

मुनि वेष में मृगछाला का उल्लेख श्री मानस में ही देखिये यथा—

'चारु जनेउ माल मृगछाला। कटि मुनि बसन।' (बा० २६८+७६) यह है परशुरामजी के मुनि वेष का वर्णन।

'सुनि मुनि बचन लखन मुसुकाने।' इसमें और उसी प्रसंग में परशुराम जी को 'मुनि' कहा है। (३) परशुरामजी के मुनि वेष में, मुनि बसन वल्कल चीर का कटिप्रदेश में पहनना कहा है और मृगछाला का केवल उल्लेख है इसमें और 'अजिन बसन' से सिद्ध होता है कि मृगछाला का उपयोग मुनि लोग शरीर के ऊपर के भाग में आवरण के स्थान में करते थे। और मुनि व्रत बेष से यह भी अर्थ निकल सकता है कि मुनि लोग मृगछाला का उपयोग आसन के लिये और शयन के लिए भी करते थे और सुबेल शैलपर भी मुनिवलवेष अहार और ग्राम वास

नहिं उचित, इन नियमों का पालन जारी था। इसके लिये भी—

"पिता वचन मैं नगर न आवउँ"

(लं० १०६।४)

यह श्रीमुख का वचन ही प्रमाण है। ऊपर के साधक बाधक प्रमाणों से सिद्ध हो गया कि मृगछाला कनक कपट मृग की नहीं थी और मृगचर्मों का उपयोग दोनों भाई वनवास के चौदह वर्षों के कालमें मुनियों के समान करते थे।

(३) अब यह शंका की जायगी कि बा० का० ४६।६ में—

"मृग वधि बंधु सहित हरि आए"

ऐसा उल्लेख है, फिर उसी कपट मृग की छाला थी ऐसा क्यों न माना जाय? (१) अरण्य काण्ड के—

'प्रान तजत प्रगटेसि निज देहा'
और 'खल बधि तुरत फिरे रघुबीरा'
और 'मृगवधि बंधु सहित हरि आए'

इत्यादि वचनों में भेद है। (२) एक ही ग्रंथ में ऐसा विरोध क्यों? समाधान दो भिन्न कल्पों की कथाएँ हैं। इससे तो खल के साथ रघुबीरा, यह माधुर्यभाव सूचक शब्द लिखा है और मृगवधि के साथ हरि यह ऐश्वर्य सूचक शब्द है। 'बाल काण्ड के उक्त भाग के वक्ता याज्ञवल्क्य जी हैं। और अरण्य काण्ड के उक्त भाग के वक्ता काकभुशुंडिजी हैं यह—

'इमि कुपंथ पग देत खगेसा'

से सिद्ध होता है। कल्प भेद से कथा में ऐसे बहुत भेद मानस में हैं। मानस में चार कल्पों की कथाओं का सुन्दर मिश्रण है। तथापि जब कल्पभेद का अनुसंधान छूट जाता है तब विरोध सा लगता है अथवा अर्थ करने में गड़बड़ हो जाती है।

———

चेतावनी

धन संपति पाकरके जग में, कबहूँ फंसिकै भरमैयो नहीं।
सबही में सियाबर झूलत हैं, कहुँ भूलके काहू सतैयो नहीं॥
जग में यह जीवन थोरे दिना, कबहूँ रघुवीर भुलैयो नहीं।
यदि नेकी बने नहिं या तन में, तो बदी कर गाँठ उठैयो नहीं॥१॥

धन यौवन चंचल दामिनि ज्यों, थिर मानि के नेह लगाते हो क्यों।
इस जीवन में तुम दो दिन के, जग नाहक और सताते हो क्यों॥
हरि के हित है लघु आयु मिल्यो, विषयों में यहाँ छलकाते हो क्यों॥
कल आज में है जब जाना तुम्हें, तब 'रक्षित' यों इतराते हो क्यों॥२॥

नभ चुंबित चारु अटा तजिके, अवनी पर पाँव पसार हुए।
सुन दार सखा परिवार सबै, अपने जो रहे सो किनार हुए॥
गृह द्वार से फूले सदा निकले, उसको अब काँधे से पार हुए।
'रक्षित' आ करके जग में, मेहमान सभी दिन चार हुए॥३॥

—राम 'रक्षित'

किसने कहा ?

(श्री पं० रामकुमार उपाध्याय, विशारद)

मानस महाकाव्य के रात्रि प्रसंग वर्णन में संत प्रवर श्री गोस्वामी जी की लेखनी चल पड़ी—

पूरब दिसि गिरिगुहा निवासी,
परम प्रताप तेज बल रासी।
मत्त नाग तम कुंभ विदारी,
ससि केसरी गगन बन चारी॥
बिथुरे नभ मुकताहल तारा,
निसि सुन्दरी केर सिंगारा॥
कह प्रभु ससि महँ मेचकताई,
कहहु काह निज निज मति भाई॥

भगवान् राम जी ने प्रश्न किया कि शशि कालिमा क्या है ? अपने २ विचार व्यक्त कीजिये। सभी उपस्थित सज्जनों की जैसी हृदयगत भावना थी अथवा जो जिस विचार-धारा में प्रवाहित हो रहा था वही भावना कालिमा के हेतु प्रगट करने लगा। सर्व प्रथम श्री सुग्रीव जी जो शीघ्र ही राज्य प्राप्त कर चुके थे बोले। उनके भूमि व्यवस्था सम्बन्धी विचार धारा मस्तिष्क में आगत हो रही थी अतएव वह कहने लगेः—

कह सुग्रीव सुनहु रघुराई,
ससि महँ पड़ी भूमि की झाईं॥

पुनः सत्वर ही श्री विभीषण जी दशमुख के पाद प्रहार पश्चात भक्त वत्सल के शरणागत हो चुके थे। अतएव उनके मानस पटल पर वही अनादर युक्त पद-प्रहार विस्मृत नहीं हो रहा था, वे कहने लगे—

मारेहु राहु ससिहि कह कोई,
उर महँ परी स्यामता सोई॥

अब तृतीय उत्तर प्रदान करने वाले का क्रम आता है, जिसका पूर्ण रूपेण पता नहीं चल रहा कि किसके वाक्य हैं। ग्रन्थकार ने संकेत करना क्यों नहीं अभीष्ट समझा पता नहीं। अतःविचारक विचार करें कि यह किसके वाक्य हो सकते थेः—

कोउ कह जब विधि रति मुख कीन्हा।
सार भाग ससि कर हर लीन्हा।
छिद्र सो प्रगट इन्दु उर माहीं।
तेहि मग देखिय नभ परछाहीं॥

अभी शीघ्र मेरे प्रश्न पत्र पर श्री पोद्दार जी संपादक कल्याण मानस पीयूष का संकेत देते हुये अपने विचार व्यक्त करते हैं कि 'यह वाक्य श्री अंगद जी के हैं साथ ही यह भी सूचित किया ग्रन्थकार के गुप्त रहस्य का उद्घाटन करना मैं उत्तम नहीं समझता यह उपस्थित सभासदों में कोई एक होगा ही इतने ही से संतोष करना चाहिये।'

तत्वान्वेषण तथा सत्संग के सम्बन्ध में तो मैं उक्त भावना से सहमत नहीं हूँ। उक्त प्रसंग से अब यह सिद्ध ही हो गया कि वाक्य वास्तव में द्वितीय तथा जामवंत जी महामंत्री के तो हो नहीं सकते अतः उपयुक्त पात्र श्री अंगद जी ही हो सकते हैं पर यह घटित कैसे हो इसी पर विचार विमर्श करना है, देखियेः—

भावार्थ—जब ब्रह्माने कंदर्प की धर्मपत्नी रति का सृजन करना प्रारम्भ किया तो उसे अनुपम सौन्दर्य्य प्रदान करने की सोचने लगे क्योंकि पत्नी को जगदुलर्भ अद्वितीय सौष्ठव दान करना था न।

अतः गगनवर्त्ती मंजुल सुधाधर का सार भाग अर्थात प्रकाश हरण किया जिससे कलाधर के वक्षस्थल में छिद्र हो गया अतएव उसी मार्ग से होकर गगन-नीलिमा झाँकती हुई

प्रदर्शित हो रही है। सुतरां चन्द्र में श्यामता प्रतिबिंबित होकर कालिमा रूप भासित होने लगी है।

उस समय में श्री अंगद जी प्रायः इसी उधेड़बुन में पड़े रहते थे जो कि प्रभु श्री राम ने बालि के उत्तराधिकारी पुत्र अंगद को साम्राज्य दान न करके बन्धु सुग्रीव को शाखा-मृगों का सम्राट बनाया था यद्यपि पुत्र का प्रथम स्वत्व था। फलतः श्री अंगद की हृदयस्थ राज्य लिप्सा का उस समय तक बहिष्कार न हो सका था। जिस भाँति इन्दु का सार भाग है 'प्रकाश' उसी भाँति साम्राज्य का सार भाग राज्य श्री हुआ करती है।

इसी का संकेत करते हुये श्री अंगद जी प्रभु से विचार व्यक्त करने लगे कि भगवान् श्री मुख के ही वाक्य हैं कि:—

सनमुख आव जीव मोहिं जबहीं,
कोटि जन्म अघ नासँहि तबहीं ॥

इतना समय संसर्ग में आये हुआ तथा आपकी सेवा सुश्रूषा करते हुये आदेश पालन कर रहा हूँ तो भी मेरे उरस्थ चन्द्र छिद्र समान राज्य लिप्सा रूपी, न्यूनता अथवा निर्बलता अब भी अवशेष है। अर्थात राज्य प्राप्त की जिज्ञासा बनी रह गई, विनष्ट न हो सकी जिससे यदा कदा वह मोहममत्व, भय का भयंकर रूप धारण कर अत्यधिक कष्टदायक बन जाती वह विधु उरस्थ कलंक कालिमा नहीं मम उरस्थ न्यूनता अतीव दुःख प्रद है। अतः इससे तो अवश्य ही मुक्त कीजिये।

प्रभु ने भी तो १४ वर्ष पश्चात जब अवध में प्रवेश किया तो वहाँ तीन ही युवराजों को संकेत किया था क्योंकि वह समझते थे कि तीनों में अभी राज्य लिप्सा का अन्त नहीं हो सका था यथाः—

सुनु कपीस, अंगद, लंकेसा।
पावन पुरी रुचिर यह देसा॥

उस समय परम सेवक श्री बजरंग लालजी यद्यपि संग ही थे पर उनके नाम का सम्बोधन नहीं हुआ।

तत्पश्चात प्रभु श्री राम ने भी अपनी ही मानसिक भावना को उस वार्त्ता में स्थान दिया क्योंकि नर चरित्र का पूर्ण चित्रण होना आवश्यक था। मैथिलि खोज में अनुरक्त होने से वियोग प्रदर्शन वहाँ भी दर्शाया गया है यथाः-

प्रभु कह गरल बंधु ससि केरा,
अति प्रिय निज उर दीन्ह बसेरा।
विष संयुत कर निकर प्रसारी,
जारत विरहवंत नर नारी ॥

परन्तु परम भागवत यद्यपि उनकी भी भावना उनके मन, कर्म, बचनानुसार सेवक के ही कल्पना मय थी पर श्री बजरंग लालजी 'ज्ञानिनां अग्रगण्य' थे, जब समाधान भाव सामने व्यक्ति किया तो प्रभु अति ही प्रसन्न होकर भूरि २ काव्यमय साहित्यक उक्ति पूर्ण बुद्धि की सराहना करने लगे।

विचारणीय वस्तु है कि जिस भक्त की भगवान स्वयं प्रशंसा करें तथा कृतज्ञ हो जायें यथाः—

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं,
देखेउँ करि विचार मन माहीं।

तो भक्त तथा भगवान में क्या अंतर रहा ? तद्रूपता आ गई।

इससे आज भी तो इन्हीं भक्त प्रवर के नाम रूप का अमर गुण गान होता है:—

कह हनुमंत सुनहु प्रभु,
ससि तुम्हार प्रिय दास।
तव मूरति विधु उर बसत,
सोइ स्यामता भास ॥
दच्छिन दिसि अवलोकि कि प्रभु।
बोले कृपा निधाना ॥

एक बार बोलो भक्त तथा भगवान की जय ?

हम और धर्म

(श्री रामप्रसाद जी पाण्डेय)

यह कहना अत्युक्त न होगा कि इस युग में रजोगुण और तमोगुण के समावेश ने सत्वगुण पर कठोराघात किया है। फलःस्वरूप हम अपने धर्म मार्ग से विचलित हो रहे हैं।

लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा।
रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ॥
अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च।
तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरूनन्दन॥

उपर्युक्त गुण आधुनिक दुनियाँ के हरेक पहलू में मिलता है। यही भारतवर्ष क्या, दुनियाँ के विनाश का एक मात्र कारण हो सकता है। यह कोई काल्पनिक चीज नहीं, वल्कि सिद्ध है।

धर्महीन प्रभुपद विमुख, काल विवश दससीस।
आये गुण तजि रावनहिं, सुनो कोसला धीस;

और—बेद पुरान जसु गुन गावा,
तासु विमुख सुख काहु न पावा॥

मानव का विकाश स्तम्भ सत्य पर टिका है, परन्तु सत्य का आज कहीं भास नहीं। सांसारिक सुखों के पीछे लोग पागल हो रहे हैं, और उनमें काम वासना एवं विलासिता का रक्त नस-नस में प्रवाहित हो रहा है। यही है वास्तविक माया का रूप? संसार रूपी सागर में माया का जाल फेंका जा रहा है, अनेकों मछलियाँ (मानव) फंस जाती हैं। फंसी मछली काल के गाल में चली जाती है। इस युग में हम मछली नहीं तो और क्या? पानी नहीं बरसता है, और फसल मारी जा रही है। क्यों!

अन्ध भूतोऽयं लोकः तनु कोऽपि पश्यति।
शकुन्तो जाल मुक्त इवाल्पः स्वर्गाय गच्छति॥

हम वेद, उपनिषद की अवहेलना कर दिए हैं। केवल एक चीज के लिए, वह है सांसारिक सुख। हमें मालूम नहीं कि हमारे ऋषि, मुनियों जन्म से मरन तक भगवत् भक्ति में ही चिरन्तन सुख का अनुभव किया था। वे थे उस युग के नेता और यह देश आध्यात्मिक विकाश की उच्चातिउच्च अवस्था में था।

'Conquer self and love of self. And you conquer all the world.' यानी मनुष्य जब तक अपने मन पर विजय नहीं पा सकता तब तक वह कहीं भी विजयी नहीं हो सकता।

सामाजिक उन्नति के हेतु हमें अपनी संस्कृति से ही शिक्षा लेनी होगी तभी हमें लौकिक और पारलौकिक सुखों का अनुभव हो सकता है। यह हमें जानने की आवश्यकता नहीं, कि युग की प्रवृति किस ओर होनी चाहिए। हमारी उन्नति वेद, शास्त्र और सभ्यता की रक्षा में है। हमें पाश्चात सभ्यता को त्यागकर अपने देवों और ऋषियों की सभ्यता का ही अनुकरण करना चाहिए! हमारी सभ्यता के प्रतीक लक्ष्मण, सीता और राम प्रभु हैं। इन्हीं महापुरुषों के आचरण और कर्तव्य का अनुकरण ही हमारे यथेष्ट विकास का मार्ग है। मनुष्य संसार को अपने बस में कर सकता है, जब वह काम, क्रोध, मोह, लोभ, मद इन पंच शत्रुओं को विजय कर सके। प्रायः आजकल हमारे धर्म और संस्कृति के विरूद्ध कुछ धार्मिक ग्रन्थों में प्रमाण मिलते हैं, जैसे मांस भक्षण, गो हत्या, और मुनियों की पैदाइश। इसमें तो गलती सिर्फ उन शासकों की है, जो हमारे धर्म और संस्कृति को मिटाकर अपना झंडा ही ऊँचा करना चाहते थे। तरह-तरह के षड्यंत्र

से अन्य तरह की बेकार चीजों के भरवा दिए हैं। इससे हमें डिगना नहीं चाहिये।

सत्य को स्वीकार कर असत्य से मुँह मोड़ना ही हमारा धर्म है। आधुनिक युग की हरेक चीजें हमारे विनाश के कारण बने हुए हैं। यही कारण है कि हम जीवन आलोक की वास्तविक अनुभूति नहीं पाते। हम लोगों की जीवन नौका इने गिने महापुरुष के बल पर चल रही है। परधर्म का बोझ ज्यादा दिन तक कौन सम्भालेगा। सिनेमा तथा आज कल की नवीन रचना शृंगार रस से ओत प्रोत है, यह हमें काम वासना की ओर खींच रही है। यह सर्वथा त्याज्य है। इसके लिए हमें धार्मिक पुस्तकों का ही अध्ययन करना चाहिये! धार्मिक पुस्तकों में जीवन का संदेश भरा है। हमें दर्शन शास्त्र, विज्ञान, ज्यौतिष, राजनीतिक और मनोविज्ञान सिखाने के लिए हमारे प्राचीन महर्षियों की कृति ही पर्याप्त है। शरीर अनित्य है। परमात्मा ने सब की सृष्टि की है। हम लोगों को अपने नवीन जन्म के लिए सद् कर्तव्य का ही अवलम्बन लेना होगा! पिता, पुत्र सब उसी परमेश्वर की रचना है। सब का भार उन्हीं पर है। हम उनके लिए कुछ नहीं कर सकते! जीवन के पाँच शत्रुओं ने बड़े-बड़े साम्राज्यों को भी नष्ट कर दिया और हम तिनकों का क्या अस्तित्व? भगवत् भक्ति ही एक ऐसी चीज है, जो हमें इन चीजों पर विजय देने पर सार्थक है। हमारा सत्य सनातन धर्म ऐसा धर्म है, जो वास्तविकता का मूल है। अगर हमारा धर्म और हमारी संस्कृति कल्पना मात्र रहती तो, नरेन्द्र दत्त, स्वामी विवेकानन्द नहीं होते, और न होते सूरदास जो अन्धे होते भी श्री कृष्णचन्द्र के रूप को अन्तःकरण की आखों से देखा। धन्य है हमारी संस्कृत और धन्य है हमारा धर्म।

धर्मे सर्वर्षयस्तीर्णा धर्मे लोका प्रतिष्ठिताः।
धर्मेण देवता ववृधुर्धर्मे चार्थः समाहिताः॥

मनोहर झाँकी

देख उसकी ओर, पगले! देख उसकी ओर॥
पतित-पावन नाम जिसका,
रूप शोभा धाम जिसका;
देख जिसको नाचते हैं भक्त, बनकर मोर॥
शान्ति का संगीत है जो,
सज्जनों का मीत है जो;
चन्द्रमुख-छबि-पान करते सन्त-नयन चकोर॥
मदन-मोहन श्याम है जो,
धनुर्धारी राम है जो;
विरह में जिसके पपीहा नित्य करता शोर॥

निर्धनों का धन वही है,
जीव का साजन वही है;
सर्वगुण-सम्पन्न होकर विश्व का चितचोर॥
हृदय का आसन सजाकर,
प्रेम से उसको बिठाकर,
ज्ञान से ले देख, होजा आज आत्म विभोर।

—नर्मदा प्रसाद तिवारी

समयाष्टक

(मानस-तत्वान्वेषी पं० श्री रामकुमारदास जी 'रामायणी' वेदान्त-भूषण, साहित्यरत्न, अयोध्या)

तब प्रात जगैं अरुणोदय से,
नित मातु पिता गुरु के पग लागैं।
अब मातु पिता की न कानि करैं,
दिन तीनि घरी के चढ़े पर जागैं॥
तब प्रात नहाइ के पूजि हरीहर,
गावत वेद पुराण की रागैं।
अब बिस्कुट केक औ चाय, 'कुमार'
लै जूतन पौंछन में मति पागैं॥
॥ १ ॥

तब सुन्दर स्वच्छ शरीर रखैं सब,
पालैं सदा सदाचारन को।
अब होत न शौच सनीमा बिना,
ठठरी लखौ हाड़ कुमारन को॥
तब ज्योति मयी दृग है चश्मा,
अब व्यसन सु माँग सुवारन को।
तब मन्दिर में हरि लीला लखैं,
अब देखैं सिनेमा बजारन को॥ २ ॥

तब बालक बालिका सादे रहैं,
अब नित्य नवीन शृंगार बनावैं।
तब शास्त्र कला मन लाइ पढ़ैं,
अब काम कला की किताब मँगावैं॥
गृह कारज माँहि प्रवीण तबै,
अब देखत ही घर नाक चढ़ावैं।
तब कानि 'कुमार' करैं गुरु की,
अब लाज समाज को धोइ बहावैं॥३॥

तब भारत और रमायन को पढ़ि,
सुन्दर स्वच्छ चरित्र बनावैं।
अब नाविल और कहानिन को पढ़ि,
धर्म सुस्वास्थ्य औ द्रव्य नशावैं॥
तब भारत की परिपाटिन सों चलि,
उन्नत देश 'कुमार' करावैं।
अब मानैं गुरू निज लन्दन को,
शुचि भारत भाव भभेरि भगावैं॥ ४ ॥

तब राखैं युवा तक लौं ब्रह्मचर्य,
अब बालक दूध पियावत ब्याहैं।
तब युद्ध करैं रण-सिंह- गजेन्द्र सौं,
पै अब श्वान को देखि कराहैं॥
खेदे रहैं अरिकों निज देश सौं,
पै अब दासता में सुख चाहैं।
जीवन धर्म औ त्यागमयी तब,
पै अब स्वार्थ 'कुमार' उमाहैं॥ ५ ॥

तब वेद पढ़ैं तप याग करैं द्विज,
पै अब निन्द्य कबार कमावैं।
पालैं प्रजा नित प्राण समान तबै,
अब भूप प्रजै चहैं खावैं॥
दानरु धर्महिं वैश्य करैं तब,
पै अब सूमता वृत्ति रखावैं।
तीनिहुँ वर्णन सेवैं तबै,
अब शूद्र कुमार द्विजाति कहावैं॥६॥

तब साधु बनै हरि क हितसैं,
अब पेट जरे पर बेष बनावैं।
तब देह को छीण करैं तप सौं,
अब आठहु भोग से अँग सजावैं॥
तब फूस की टाटिन माहिं रहैं,
अब ऊँची अँटारी विमान लखावैं।
तब शास्त्र पढ़ैं हरि नाम जपैं,
अब मूर्ख कुमार रहैं गरिआवैं॥ ७ ॥

तब पूरब की रहनीहिं रहैं,
अब पूरब की कहनी कहि गावैं।
तब देश विदेशन के गुरु है,
अब पश्चिम के मलमों बहि जावैं॥
बक काक मलेच्छन खेदे रहैं,
अब डाँटत ही तिनके दबि आवैं।
इमि देखि दशा निज लालन की,
चुपचाप कुमारहु बैठि रहावैं॥ ८ ॥

रावण बध कब हुआ ?

(डाक्टर बालमुकुन्द स्वर्णकार आयुर्वेद सूचीवेध विशारद)

श्रीमद् गोस्वामी तुलसीदासजी कृत श्री रामचरितमानस में तो रावण बध की तिथि का उल्लेख किसी भी स्थल पर नहीं आया है यह तो सभी को ज्ञात ही होगा। परन्तु इसे तो प्रायः सभी को स्वीकार करना ही पड़ेगा कि गोस्वामी तुलसी दास जी ने अपना मनतव्य प्रगट किया है कि यह जो श्री रामचरित मानस है वह :—

नाना पुराण निगमागम सम्मतं यद्,
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि।
स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा,
भाषा निबन्ध मति मंजुल मातनोति॥

भावार्थ :—अनेक पुराण, वेद और (तन्त्र) से सम्मत तथा जो रामायण में वर्णित है, और कुछ अन्यत्र से भी उपलब्ध श्री रघुनाथ जी की कथा को तुलसी दास अपने अन्तः करण के सुख के लिये अत्यन्त मनोहर भाषा रचना में विस्तृत करता है।

अतः गोस्वामीजी ने तो साफ स्पष्ट कर दिया है कि यह जो राम चरित मानस है वह नाना पुराणादि का मन्थन किया हुवा सार भाग है। इसलिये वर्तमान कवि कल्पित (बिना किसी भी ग्रन्थाधार के) रावण बध तिथि सर्वथा भ्रमोत्पादक ही है। और किसी भी प्राचीन ग्रन्थवर्णित रावण वध तिथि निश्चित ही सत्य है, चाहे वह मत किन्हीं भी प्राचीन ऋषि मुनियों का ही क्यों न हो। जैसा कि मानस-मणि ११, आलोक ६ में वर्णित रावण बध तिथि अनेक लेखकों ने अग्निवेष रामायण आदि प्राचीन ग्रन्थाधार लेकर दर्शाया है। वे सभी तिथियां सत्य ही हैं, चाहे वे तिथियां किसी भी कल्प के रावण बधकी हों। जैसा कि:—

रामायण सत कोटि अपारा।
नाना भांति राम अवतारा॥

अब हमको यहाँ यह निश्चय करना है कि गोस्वामी जी विरचित रामचरित मानस में वर्णित प्रभु राम ने रावण का कब बध किया। परन्तु इसके पहले यह समझना होगा कि 'मानस' विशेषकर किस कल्प के जन्म के आधार पर रचा गया है। यथा :—

नारद श्राप दीन्ह एक बारा।
कलप एक तेहि लगि अवतारा॥

इसी कल्प के आधार पर इस रामचरित-मानस की रचना हुआ। क्योंकि आगे चल कर ये चौपाइयाँ उसे पुष्ट करते हैं। यथा :—
जानि सभय सुर भूमि सुनि बचन समेत सनेह
गगन गिरा गंभीर भई हरनि सोक संदेह
से लेक —

नारद बचन सत्य सब करिहउ।

परम सक्ति समेत अवतरिहउं॥ तक इसके बाद भगवान श्री राम और नारद जी की भेंट भी आरण्य काण्ड में बतायी गया है। यथा :—

बिरहवंत भगवंतहि देखी।
नारद मन भा सोच बिसेषी॥
मोर श्राप करि अंगीकारा।
सहत राम नाना दुःख भारा॥
यह बिचारि नारद कर बीना।
गये जहाँ प्रभु सुख आसीना॥

उक्त चौपाइयों से सिद्ध होता है कि 'मानस' की रचना विशेष कर इसी नारद वाले कल्प के आधार पर हुई है। ×

अतः अब रावण बध की तिथि निश्चित करना है।:—

'मानस' में वर्णन है कि :—

वर्षा गत निर्मल ऋतु आई।
सुधि न तात सीता कै पाई।।

ठीक यही ऋतु श्रीमद्देवी भागवत में भी वर्णित है। यथा :—व्यास जी ने कहा है राजा जनमयजेय कर्म के बन्धन में मनुष्य ही नहीं वरन् ब्रह्मा, विष्णु, महेश को भी बंधना पड़ता है। इसी प्रसंग में व्यास जी ने कहा कि एक बार भृगुपत्नि के शीश को काट डालने के फल स्वरूप भगवान विष्णु को भी चौबीस अवतार इस भूतल पर लेना पड़ा उसी चौबीस अवतार में रामावतार के प्रसंग में वर्णन है कि सीता हरण हो जाने के उपरान्त सुग्रीव से मित्रता आदि का वर्णन एवं वर्षा ऋतु के बीत जाने के उपरान्त नारद का भगवान श्री राम से देवी के महत्व का वर्णन करते हुए कहना कि हे प्रभु रामचन्द्रजी आप नव रात्रि में (आश्विन शुक्ल १ से ७ तक) देवी की उपासना कीजिये इससे माता सीता का अवश्य पता लगेगा और सब दुःखों का नाश हो जायगा ऐसा ब्रह्मा जी का कथन है। नारद वचनानुसार भगवान श्री राम ने देवी की नवरात्रि (अश्विन शुक्ल १ से ६ तक) में विशेष प्रकार से उपासना की इससे हनुमान जी के द्वारा लंका में सीता का पता लगा।

भगवान व्यास ने श्रीमद्देवी भागवत में बताया है कि इसी प्रकार राम रावण में ६ माह तक युद्ध हुवा औ शेष समय सीता की खोज, समुद्र बांधना आदि कार्यों में व्यतीत हुवा। फिर जब आश्विन शुक्ल पक्ष का आगमन हुआ तब श्री राम चन्द्र ने नवरात्रि (आश्विन शुक्ल १ से ७ तक) में देवी की विधि पूर्वक उपासना करके मातलि के लाये हुए रथ पर आरूढ़ हो कर जैसा कि मानस में बताया है :—

सुर पति निज रथ तुरत पठावा।
हरष सहित मातलि ले आवा॥

आश्विन शुक्ल १० (दशमी) को देव दुःखदायी एवं विश्व दुःखदाती रावण का वध किया, आकाश से फूलों की वर्षा हुई। चारों ओर जय जय कार हुवा। इसी यादगारी के लिये, अश्विन शुक्ल १० को रावण का वध और लंका का विजय हुवा था।

हिन्दुओं में उस दिन बड़ा उत्साह मनाया जाता है। और शमी वृक्ष के पत्ते खुशियाली में बाँटे जाते हैं। एवं कागज आदि के गढ़ बना कर उस पर विजय करते हैं।

नोट :—यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि युद्ध बन्धन सीता का पता समुद्र मंथन आदि में उमाह लगे (आश्विन शुक्ल १ से दूसरा···अश्विन शुक्ल १० तक) इस प्रकार इतना काम होने में पूर्ण एक वर्ष का समय प्रायः व्यतीत हो गया। क्योंकि मानस में वर्णन है कि :—

बानर कटक उमा मैं देखा।
मूरख सोजो करन चह लेखा॥
अस मैं श्रवण सुना दस कंधर।
पद्म अठारह जूथप बन्दर॥
गनै को जाय निसाचर जाती·········आदि॥

इतनी बड़ी सेना संहार के लिये ६ माह का समय लग जाना कोई भी आश्चर्य वाली बात नहीं है। एवं ६ माह सीता का पता समुद्र बांधना आदि में भी लग जाना कोई विशेष आश्चर्यजनक नहीं है।

अतः श्री मद्देवीभागवत मतानुसार रावण बध की निश्चित तिथि आश्विन शुक्ल दशमी ही तिथि निश्चित हो सकती है।

बोलो सियावर राम चन्द्र जी की जै

× मानस में एक कल्प की कथा न होकर चार कल्पों की कथाओं का समन्वय है। सं०

मानस में कैकेयी

[श्री जगत नारायण सिंह जी]

कैकेयी का राम साहित्य में एक विशिष्ट स्थान है। उसने यदि राम को वनवास न दिया होता तो घटनायें और की ओर होतीं। राम के जीवन की धारा दूसरी ओर मुड़ती। जो होना था वही हुआ। सबकी आँखों के तारे राम को कैकेयी के द्वारा वनवास मिला। क्या कैकेयी इसके लिये दोषी है? वे कारण क्या हैं जिनके वशीभूत होने से कैकेयी ने यह कार्य किया।

क्या राम कैकेयी को प्रिय नहीं थे? कैकेयी राम को प्राण के समान प्यार करती थी। मंथरा के कहने पर कि राम को छोड़कर किसी की कुशल नहीं है जिन्हें राजा राज्य दे रहे हैं, कैकेयी कहती है—

'सुदिन सुमंगल दायक सोई,
तोर कहा फुर जा दिन होई।
जेठ स्वामि सेवक लघु भाई,
यह दिनकर कुल रीति सुहाई।
राम तिलक जो सांचेहु काली,
देउँ माँगु मन भावत आली।
जो विधि जन्म देइ करि छोहू,
होहु राम सिय पूत पतोहू।
प्राण ते अधिक राम प्रिय मोरे,
तिन्ह के तिलक छोभ कस तोरे।

उसे यह ज्ञात नहीं था कि राम युवराज होने वाले हैं। यदि राम युवराज होने वाले हैं तो अपनी दासी को अभिलषित वस्तु देने के लिये प्रस्तुत होना कपट रहित प्रेम का ज्वलंत प्रमाण है। उसकी इसी निश्छल भावना का दिग्दर्शन कराने के लिये बड़ा उद्धरण उद्धृत किया गया है।'

क्या कैकेयी भरत को राज्य देने के लिये और उनके राज्य को निष्कंटक रखने के लिये राम को वनवास देने पर तुल गई? वह भरत का राज्य पर वैधानिक अधिकार नहीं समझती थी। कुल रीति विधान बड़े पुत्र को राज्य देने की थी। कैकेयी चाहती है कि कुल रीति का पालन ठीक है। बड़ा भाई ही स्वामी है और छोटे भाई उसके सेवक। वह कहती है—

जेठ स्वामि सेवक लघु भाई,
यह दिनकर कुल रीति सुहाई।

राजा दशरथ भरत को राज्य देते ही थे। राम इससे शोक मग्न थे कि केवल बड़े पुत्र को राज्याभिषेक होता है, छोटे भ्राता छोड़ दिये जाते हैं। यह बहुत बड़ा अनुचित कार्य है।

'दिनकर कुल यह अनुचित एकू,
अनुज विहाय बड़ेहि अभिषेकू।'
हरहु भक्त मन की कुटिलाई।'

राम भरत के राज्य में विघ्न करते यह असम्भव कल्पना है। इसके लिये भी उसने वनवास नहीं दिया।

सौतिया डाह—सपत्नियाँ आपस में अवश्य ही ईर्ष्या की भावना रखती हैं। साधारण लोगों के जीवन में ऐसा प्रायः देखा ही जाता है। परन्तु यदि कौशिल्या, सुमित्रा और कैकेयी आपस में सुन्दर व्यवहार और सुन्दर भावनायें रखती थीं तो यह एक अविज्ञात राज्य कुल के ही योग्य था। कैकेयी शंका शीला थी कि कहीं उसकी सौतें उसके साथ बुरा व्यवहार न करें। मंथरा कहती है कि कौशल्या ने राजा से कहकर भरत को ननिहाल भेज दिया, राम को राज्य देने के लिये तिथि रखवायी। इतना ही नहीं राम के राजा होने पर या तो तुम राम की माता की सेवा करोगी या घर से बाहर निकाल दी जावोगी।

कैकेयी ने विश्वास कर लिया। यदि कौशल्या ऐसा करेगी तो मैं भी उसकी सेवा न करूँगी।

नैहर जन्म भरब वरु जाई,
जियत न करब सवत सेवकाई।

इसीलिये वह कौशल्या से बदला लेने पर उतारू हो जाती है। कौशल्या से मैं सरलचित्त व्यवहार करती हूँ, और वे इस प्रकार का कपट जाल रच रही हैं। कैकेयी को क्षोभ हुआ। बदले की भावना जाग उठी। राम की माता से बदला ले तो किस प्रकार। उसने विचार किया कि फणि की मणि को ही दूर कर दो तब देखो उसकी व्याकुलता। तब उसे ज्ञात होगा कि मैं कैकेयी के साथ बुरा व्यवहार करने जा रही थी उसका दुःखद फल मुझे मिला। वह बदला लेने पर दृढ़ है। दशरथ से कहती है—

'राम साधु तुम साधु सयाने,
राम मातु भलि सब पहिचाने।
जस कौसिला मोर भल ताका,
तस फल उनहिं देउँ करि साका॥'

इससे स्पष्ट हो जाता है कि कैकेयी ने बदला की भावना से राम को वनवास दिया।

कुछ विद्वानों की राय है कि कैकेयी के चौदह वर्ष के वनवास देने का भी मनोवैज्ञानिक कारण है। उसे १४ दिन तक राम के तिलक का समाचार नहीं मिला था इसीसे उसने १४ वर्ष का बनवास माँगा। मंथरा का यह कथन उदाहरण स्वरूप सामने रक्खा जाता है—

भयउ पाखु दिन सजत समाजू,
तुम पाई सुधि मोहि सन आजू।

१५ दिन से समाज सजधज रहा है परन्तु तुम्हारे पास १५वें दिन मेरे द्वारा ही समाचार ले आया गया है, दूसरा कोई कहने तक नहीं आया।

राजा दशरथ दोषी—यदि १५ दिन का समय राम के राज्य तिलक के बीच में पड़ता तो दशरथ भरत को अवश्य ही राम के अभिषेकोत्सव में अवश्य बुलाते। 'राम भरत मोरे दुइ आँखा' कहने वाले दशरथ जी अवश्य ही बुलाते। दशरथ को 'भरत' पर पूर्ण विश्वास है कि वे राज्य को आँख उठाकर भी नहीं देखेंगे।

'चहत न भरत भूप पद भोरे,
विधि बस कुमति बसी उर तोरे।

यदि भरत पैदल अयोध्या वासियों के साथ (यद्यपि बहुत से लोग वाहन युक्त थे) ४ दिन में चित्रकूट पहुँच गये तो वे १५ दिन के अन्दर अवश्य ही तीव्रगामी रथ के द्वारा बुलाये जा सकते थे।

परन्तु ध्यान पूर्वक यदि उक्त चौपाई को देखें तो १५ दिन का अर्थ प्रासंगिक नहीं प्रतीत होता। पाखु दिन का अर्थ है—दो दिन। क्योंकि दो पक्ष होते हैं—कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष। तुलसीदास लिखते हैं—

'सम प्रकाश तम पाख दुहुँ,
नाम भेद विधि कीन्ह।
ससि पोषक सोषक समुझि,
जग यस अपजस दीन्ह॥'

कवि ऐसे प्रयोग किया करते थे विशेषकर ग्रंथ की तिथि बतलाते समय। अन्य समयों में भी इस प्रकार के प्रयोग कर दिया करते थे। तुलसीदास ने भी यहाँ पर पाखु दिन का प्रयोग उसी प्रकार से किया है।

यह प्रश्न भी स्वाभाविक ही है कि क्या मंथरा इतने दिनों तक उसके पास नहीं थी या छुट्टी लेकर घर गई थी? क्या कैकेयी इतने समय तक बिना दासी के रही होगी? क्या इतने दिनों में एक दिन पहले ही सजधज रही थी? छोटे से त्योहार की तैयारी जब साधारण जन कई दिन पहिले से करते हैं तो इस महान पर्व को मनाने के लिये पहिले से तैयारी अवश्य होती रही होगी।

यदि बुलाने का समय रहा होता और भरत न बुलाये गये होते तो कैकेयी अवश्य ही दशरथ को इनके लिए कुछ कहतीं ? मंथरा भला संकेत करने में चूक सकती थी जिसने वरदानों की भी याद दिला दी। इन प्रमाणों के रहने पर हम कभी भी १५ दिन वाला अर्थ न रक्खेंगे। उसका अर्थ दो दिन ही संगत और प्रामाणिक है। यदि यह तिथि दूर रहती तो वशिष्ठ जी शीघ्रता करने के लिये नहीं कहते।

कैकेयी ने भरत के लिये वात्सल्य प्रेम से प्रेरित होकर यह सब कुकृत्य कर डाला, सहसा इस पर विश्वास नहीं होता। उसने जो कुछ किया था वह बदला की भावना से, द्वेष से, यह हम ऊपर देख चुके हैं, यद्यपि उसमें भरत को राज्य गद्दी भी मिली थी। सभी को विश्वास था कि भरत राज्य नहीं लेंगे। यदि भरत कैकेयी को उसके इस कुकृत्य के लिये बुरा भला कहें, तो उसे ग्लानि अवश्य होगी। कुछ लोगों का विचार है कि कैकेयी ने भरत के लिये सब कुछ भला बुरा किया। भरत ही उनके इस कार्य के लिये उसे बुरा भला कहें तो उसे अकथनीय हानि होगी। देहाती कहावत है—'जिसके लिये चोरी किया वही कहे चोरवा।' परन्तु कैकेयी ने भरत के लिये आंशिक रूप से ही यह कुकृत्य किया था इसलिये ग्लानि की चरम सीमा नहीं हो पायी। गुप्त जी की कैकेयी भी भरत को राज्य लोभी होने से पहले संदेह करती है—

'भरत से सुत पर भी सन्देह'

अर्थ यह हुआ कि भरत जिस पर सदेह नहीं किया जा सकता, उसपर लोग सन्देह करते हैं।

सब से प्रथम राम चित्रकूट में कैकेयी से मिलते हैं। कैकेयी ने ही राम को वनवास दिया था, परन्तु उसका तनिक भी ध्यान न रखकर कैकेयी से पूर्ववत् प्रेम से मिलते हैं और शान्त्वना देते हैं। उस समय कैकेयी को असीम ग्लानि हुई। उसकी उस दशा का वर्णन कवि करता है

'गरइ गलानि कुटिल कैकेयी,
महि न बीचु बिधि मीचु न देई।'

'गुप्त जी की 'कैकेयी' और 'मानस की की 'कैकेयी'—तुलसी दास ने रामचरितमानस में कैकेयी को अपनी ग्लानि व्यक्त करने का अवसर नहीं दिया है। गुप्त जी ने 'कैकेयी, को अपनी भावनाओं के व्यक्त करने का अवसर दिया है। कैकेयी को अवसर देना चाहिये, यह बात भी विचारणीय है। राज सभा है, ऋषि मुनियों का समाज एकत्रित है। जनक जी हैं। सारी अयोध्या और जनकपुर के प्रजा गण हैं। इतने बड़े समाज में, जहाँ पर समधी, घर सभी लोग तथा गाँव लोग हों, लज्जा छोड़कर बात चीत करना मर्यादोचित कभी नहीं कहा जा सकता है। तुलसीदास जी मर्यादा वादी कवि थे इसलिये उन्होंने अवसर देना उचित न समझा। उसकी ग्लानि को एक अर्द्धाली में ही सुन्दर ढंग से व्यक्त कर दिया है, जिसका प्रभाव अनुभूतिपरक पाठक को हुये बिना नहीं रहता।

कलाकार अपने युग का प्रतिनिधि होता हैं या अप्रत्यच्छ रूप से उस पर अपने युग का प्रभाव अवश्य पड़ता है। आज का युग स्वच्छन्दतावादी युग है। स्त्रियाँ चारो ओर वक्तृता देती हैं। पुरुषों के साथ-साथ कंधा से कधा मिलाकर प्रत्येक क्षेत्र में अग्रसर होती हैं। ऐसे समय में कवि पर ऐसी बातों का प्रभाव पड़ना अवश्यम्भावी है। गुप्तजी ने कैकेयी को अवसर देकर उसके प्रति सहानुभूति दिखलाई है। यह गुप्त जी पर अपने युग का प्रभाव है, त्रेतायुग के अनुरूप यह वर्णन नहीं है।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि 'मानस' में कैकेयी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण उचित ढंग

रो हुआ है। वह स्वाभिमानिनी, पति परायणा, दृढ़ और द्वेषी के रूप में सामने आती है। कैकेयी की मनः स्थिति और विचार हमें शेक्सपीयर के नाटक 'जुलियससीजर' के एक पात्र ब्रुटस की याद दिला देते हैं। यही कारण है कि ब्रुटस का अंत दुःख में हुआ और कैकेयी को चिंतानल की दहकती अग्नि में सदा ध्यानस्थ बैठना पड़ा। वह कहती है—

'युग युग तक चलती रहे कठोर कहानी।
रघुकुल में भी थी एक अभागिन रानी॥'

मनहरण रामायण

(श्री माधव शरण जी एम्० ए०, एल, एल, बी०)

माता कौशल्या कौशलेश्वर दशरथ पिता,
वशिष्ठ से गुरु थाह जिनके न ज्ञान की।
विश्वामित्र साथ गए, ताड़का-सुबाहु आदि,
मारे, हुई रक्षा मुनि-यज्ञ अनुष्ठान की॥
तार मग अहल्या को, पहुँचे जनकपुर,
तोड़ शंभु-चाप, व्याही आदिशक्ति जानकी।
छोड़ राज, बन गए सीता लक्ष्मण समेत,
रक्खा माँ कैकेयी-मन, मान पित-आन की॥
वन में निवास कर ऋषि-मुनि सुखी किए,
करवाया शूर्पणखा विना नाक-कान की।
खर-दूषण, हेम-मृग मारे, गईं सीता हरी,
तार जटायु को, सुग्रीव से पहचान की॥
बालि वध सिन्धु पर सेतु बाँध, लंका गए,
रावण को मारा काटी सेना जातुधान की।
राज दे विभीषण को, लौट घर राज किया,
सब को लुभाती कथा राम भगवान की॥

संकीर्तन

(श्री गौरीशङ्कर जी द्विवेदी 'शङ्कर')

संसार में ऐसे विरले ही होंगे जिनको जगन्नियता की शक्ति पर श्रद्धा भक्ति न हो अन्यथा मानव मात्र पर ब्रह्म परमात्मा महान शक्ति को अनुभव करता है और कितने ही प्रकारों से उस की उपासना और भक्ति करता है।

भारत वर्ष धर्म-प्रधान देश होने के कारण इस दिशा में और सब देशों से आगे रहा है, भिन्न भिन्न देशों के भिन्न भिन्न मतावलम्बियों ने भव सागर से पार होने के लिए विविध धर्मों की सृष्टि की है किन्तु अंतिम लक्ष्य उन सब का एक ही सा हुआ करता है कि किस प्रकार प्रकृति के प्रपंचों से छुटकारा प्राप्त कर शाश्वत शाँति ली जाय; उसी को ईसाइयों ने सातवां स्वर्ग, मुसल्मानों ने बहिश्त बौद्धों ने निर्वाण, जैनियों ने कैवल्यों ज्ञान, सगुण उपासकों ने गोलोक, शिव लोक, साकेत आदि, दार्शनिकों ने मुक्ति और गीता कारों ने ब्रह्म निर्वाण माना है।

तात्पर्य यह है कि अनेकानेक धर्मावलम्बियों का अन्तिम ध्येय प्रायः एक ही सा हुआ करता है। हमारे धार्मिक-ग्रंथ श्रीमद भगवद्गीता को, समस्त संसार में सबही धर्मों के अनुयायियों द्वारा इस ही कारण से एक समान सन्मान प्राप्त है कि उस में मानव मात्र को एक सा ही ज्ञान प्राप्त होता है।

भारतवर्ष योग-सिद्धियों के लिए युग परम्परा से ख्याति पाए हुए है। सिद्धियों को प्राप्त करने के लिए साधन करना होता है। साधन में सफलता प्राप्त करने वाले महा पुरुष ही संत, साधू, सिद्ध और महात्मा कहलाने लगते हैं। हिमालय, विन्ध्याचल, अमर कंटक और यत्र तत्र पहाड़ों की कन्दराओं में अब भी कितने ही प्रकार के योगियों के दर्शन मिल जाया करते हैं। इनके अतिरिक्त नगरों में भी साधकों की कमी नहीं पाई जाती।

अन्य योगों से संकीर्तन-भक्ति-योग को लोक परलोक बनाने के लिए कलियुग में सब से सुविधा जनक और उत्तम योग माना है कहा भी है कि:—

कलियुग सम युग और नहिं,
जो नर कर विस्वास;
गाय राम गुन गन विसद,
भव तर बिनहिं प्रयास।

सत्ययुग, त्रेता और द्वापर में कितने ही सनाध और तपस्या करने के पश्चात मनुष्य को शाश्वत शांति मिला करती थी किन्तु यदि इस युग में मनुष्य श्रद्धा और विश्वास पूर्वक भगवन्नाम का उच्चारण करे तो संसार-सागर को सफलता पूर्वक पार कर जा सकता है, गोस्वामी तुलसी दास जी तो यहां तक कहते हैं कि यदि मनुष्य राम नाम का कीर्तन करता रहे तो उसके हृदय के नेत्र खुल जा सकते हैं, उसे ज्ञान का प्रकाश मिल सकता है और इस प्रकार वह अपना लोक और परलोक बना सकने में सफल हो सकता है यथा :—

राम नाम मनि दीपधर,
जीह देहरी द्वार;
तुलसी भीतर बाहिरहु,
जो चाहसि उजियार।

संकीर्तन की परम्परा अत्यंत ही प्राचीन है। महर्षि नारद सर्वोत्तम सिद्धहस्त कीर्तनकार माने गए हैं, रामवतार की पृष्ट भूमि में भी कीर्तन का उल्लेख मिलता है, रामचरित मानस में गोस्वामी तुलसी दास जी ने लिखा है कि जब राक्षसों के अन्यायों से सर्वत्र त्राहि त्राहि होने लगी तब मुनियों और देवताओं के साथ पृथ्वी गौ का रूप धर कर निष्कपट मन से प्रभु का कीर्तन करने लगी। प्रार्थना के वे छंद आज भी हमारा पथ प्रदर्शन और उद्धार कर सकते हैं यदि सामूहिक रूप में प्रतिदिन उनको हम गायें :--

जय जय सुर नायक, जन सुख दायक,
प्रनत पाल भगवन्ता।
गो द्विजहितकारी जय असुरारी,
सिन्धु-सुता प्रिया कन्ता।
पालन सुर धरनी, अद्भुत करनी,
मर्म न जाने कोई।
जो सहज कृपाला, दीन दयाला,
करौ अनुग्रह सोई।
जय जय अविनासी, सब घट वासी,
व्यापक परमानन्दा।
अविगत गोतीता चरित पुनिता,
माया रहित मुकुन्दा।
जेहि लागि बिरागी, अति अनुरागी,
बिगत मोह मुनि वृन्दा।
निसि वासर ध्यावहिं हरि गुन, गावहिं
जयति सच्चिदानन्दा
जेहि सृष्टि उपाई, त्रिविध बनाई,
सङ्ग सहाय न दूजा।
सो करहु अघारी, चिंत हमारी,
जानिय भक्ति न पूजा।
जो भव भय-भंजन, जन-मन, रंजन
गंजन विपति वरूथा।
मन बच क्रम बानी, छांड़ि सयानी,
सरन सकल सुर जूथा।
सारद श्रुति सेषा, ऋषय असेषा,
जा कहँ कोउ नहिँ जाना।
जेहि दीन पियारे बेद पुकारे,
द्रवहु सो श्री भगवाना।
भव वारिधि मन्दर, सब विधि, सुन्दर
गुन मन्दिर सुख पुंजन।
मुनि सिद्ध सकल सुर, परम, भयातुर,
नमत नाथ पद कंजा।

इसी कीर्तनकरने के पश्चात आकाश वाणी द्वारा कीर्तन कारों को रामावतार होने का आश्वासन मिला था। श्रीमद भगवद्गीता में भी भगवान कृष्ण ने कहा है कि:—

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा,
भूतानामीश्वरोऽपिसन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय,
संभवाम्यात्ममायया॥
यदा यदा हि धर्मस्य,
ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य,
तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
परित्राणाय साधूनां,
विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय,
संभवामि युगे युगे॥

+ + +

यद्यपि मै हूँ अज अबिनासी,
और प्रानियों का आधार॥
फिर भी स्व प्रकृति का आश्रित हो,
लूँ निज माया से अवतार।
जब जब ग्लानि धर्म की होती.
और अधर्मों का उत्थान।

तब तब मैं अपनी आत्मा को,
सृजता हूँ भारत सन्तान।
साधु-वृंद रक्षा करने को.
कर अधर्मियों का संहार।
—धर्म स्थापन के निमित्त मैं,
लेता हूँ प्रति युग अवतार।
(गीता अध्याय ४ पद्य ६, ७, ८)

संकीर्तन के लिए प्रातः काल और संध्या का समय अधिक उपयुक्त है। शीतकाल में प्रातः काल ५ से ६ बजे तक और संध्या काल में ७ से ८ या ८ से ६ बजे का समय सुविधा जनक हो सकता है। अन्य ऋतुओं में प्रातः काल का समय ४ १।२ से ५ १।२ बजे तक रक्खा जा सकता है। वैसे आवश्यक तो यह है कि घर घर में उपरिलिखित समय पर प्रति दिन परिवार भर के व्यक्तिय सम्मिलित होकर कीर्तन करें। जिन परिवारों में यह संभव न हो उनको सामुदायिक रूप में अपने मुहल्लों में एकत्रित होकर निष्काम भावना से प्रेम पूर्वक भगवन्नाम उच्चारण कर के संकीर्तन करना चाहिए।

संकीर्तन करने की कितनी ही शैलियाँ हैं, कोई कोई केवल 'सीताराम' 'राधाकृष्ण' 'नारायण हरी बोल' 'जय राधे गोविन्द' और 'जय शिवशङ्कर, जय शिवशङ्कर, शिव शङ्कर कैलाश पती अर्थात् नामोच्चारण तक ही उसे उचित मानते हैं।

कोई कोई नामोच्चरण के साथ बीच बीच में समयोचित उपदेशात्मक दोहे, कवित्त, चौपाई और १ श्लोक भी कह दिया करते हैं जिससे कीर्तन करने वाले महानुभावों के हृदयों पर भगवन्नाम और भक्ति की गहरी छाप बैठ जाया करती है।

भक्त प्रवर नारद, गजेन्द्र मोक्ष, द्रौपदी प्रहलाद और मीरा की कथाएँ संकीर्तन करने वाले भक्तों के हृदयों में बल और प्रेरणा का संचार करती हैं।

सांसारिक राग द्वेष आदि विकारों को दूर कर के ही कीर्तनकार को कीर्तन के लिए बैठना चाहिये, उसे आत्म सुधार के लिए प्रभु से प्रार्थना करना चाहिये। सच्चा कीर्तनकार पारस्परिक सद्भावनाएँ उत्पन्न करने और लोक कल्याण की भावनाओं के लिए भी प्रभु से प्रार्थना करता है।

आज कल सब से बड़ी आवश्यकता यही है कि हम आत्म सुधार की ओर अग्रसर हों, जिस समाज में आत्म सुधार किए हुए व्यक्ति एकत्रित होंगे उस समाज से ही नगर प्रान्त और देश का कल्याण हो सकना संभव है।

विश्व-वन्द्य बापू ने आत्म बल जागृत करके संसार को यह प्रत्यक्ष उदाहरण दे दिया है कि पवित्र भावनाओं वाला सच्चा भक्त सत्य और धर्म का आश्रय लेकर युगान्तर उपस्थित कर सकता है, भक्त प्रवर आचर्य विनोबा भावे अपना आत्म बल जागृत करके जो कार्य कर रहे हैं उसका दशमांश भी कितनी ही संस्थाएँ मिल कर न कर पातीं, संत तुकड़ोजी के कीर्तन में आज भी जो आनन्द प्राप्त होता है वह लिखने की नहीं अनुभव करने की बात है।

कीर्तन कार जहाँ भी एकत्रित हो कर बैठ जाते हैं, हरि का नाम लेते हैं वहीं मन्दिर बन जाता है, भगवान् आ जाते हैं यथाः—

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद॥

'हे नारद! मैं वैकुण्ठ में या योगियों के हृदयों में नहीं रहता, मेरे भक्त जहाँ मेरा गान करते हैं मैं वहीं रहता हूँ'।

संकीर्तन अथवा नाम-यज्ञ अन्य यज्ञों से

कम श्रेणी का नहीं माना जाता यदि हम उसे तन्मय हो कर करें। श्रीमद् भागवत में कहा गया है कि:—

तदश्मसारं हृदयं बतेदं
यद् गृह्यमाणै र्हरि नाम धेयैः।
न विक्रियेताथ यदा विकारो
नेत्रे जलं गात्ररुहेऽषुहर्षः ॥

'वह हृदय नहीं वज्र है जो श्री हरि के नामों का कीर्तन करते समय पिघल नहीं जाता है। जब हृदय पिघलता है तो नेत्रों में आँसू छलकने लगते हैं और शरीर में रोमांच हो जाता है,

कीर्तनकार को कीर्तन में सम्मिलित होकर शुद्ध मन से गगन भेदी स्वर में भगवन्नामोच्चारण करना चाहिये, जिससे वह स्वर जिन जिन मनुष्य और पशु पक्षियों के कानों तक पहुंच उनके भी पातक दूर कर देने में सहायक बन सके।

प्रायः देखा गया है कि कुछ व्यक्ति कीर्तन में सम्मिलित तो होते हैं किन्तु नामोच्चारण के लिए उनका कण्ठ नहीं खुलता इसी से उनको वास्तविक आनन्द प्राप्त नहीं होता वे केवल दर्शक बने रहना चाहते हैं जब कि आवश्यकता है कि यज्ञ के होता के रूप में उनको संकीर्तन में सम्मिलित होना चाहिए और निस्संकोच प्रभु का नाम लेना चाहिए।

कुछ व्यक्ति कहते हैं कि गाना न जानने के कारण वे स्वर में स्वर नहीं मिला सकते इस लिए चुपचाप बैठे रहते हैं किन्तु यह कहना भी ठीक नहीं—प्रमुख कीर्तनकार जिस स्वर में प्रभु का नाम लेता है उसी स्वर में अन्य सब नामोच्चारण किया करते हैं यदि प्रारम्भ में एक दो क्या दस पांच व्यक्ति भी स्वर में स्वर न मिला सकें तो कीर्तन में गड़बड़ी नहीं पड़ती। यदि कीर्तनकार का ध्यान भली प्रकार कीर्तन की ओर ही रहता है तो स्वर अपने आप स्वर में मिलने लगता है।

कुछ व्यक्ति यह शङ्का भी कर उठते हैं कि केवल नाम रटने से क्या लाभ? उनको यह भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि प्रभु का नामोच्चारण अपना ही आत्म बल जागृत करने के लिए किया जाता है, जब कीर्तनकार नामोच्चारण में तल्लीन होकर मनकी एकाग्रता प्राप्त करता हैं तब ही उसको अपने मन मन्दिर में स्थित प्रभु के दर्शन मिलने लगते हैं किन्तु यह अभ्यास करते करते ही कालान्तर में अनुभव ही से जाना जा सकता है।

संकीर्तन का वास्तविक उद्देश्य तो आत्म सुधार ही का हुआ करता है किन्तु प्रभु की कृपा से कभी कभी उसके द्वारा चमत्कारिक घटनाएँ भी, जिनको कि संसार असंभव समझता है, सम्भव हो जाती हैं। आनन्द-कुटीर ऋषीकेश के यशस्वी संचालक स्वामी शिवानन्द महाराज ने अपने अनुभवों में लिखा है कि:—

'सन्१९३४ में शिकोहाबाद के समीप बड़ी सराय में वे संकीर्तन कर रहे थे, कीर्तन-स्थल के समीप ही एक साँड़ मरणासन्न अवस्था में पड़ा था—कीर्तन तीन दिन तक होता रहा तीसरे दिन कीर्तन की समाप्ति पर साँड़ भी उठ कर चल दिया' यह प्रभु का चमत्कार ही है।

'मेरठ में एक जमींदार का लड़का इतना अधिक रोग-ग्रस्त हो गया था कि डाक्टरों ने कह दिया था कि उसे कोई अच्छा नहीं कर सकता, जब जमींदार सब ओर से निराश हो गया तब कीर्तनकारों ने उस रोगी को प्रभु के नाम पर लेकर, रोगी की शैया के चारों ओर एक सप्ताह तक अखण्ड कीर्तन किया, सातवें दिन रोगी शैया त्याग कर कीर्तनकारों के साथ कीर्तन करने लगा और तन्मय हो गया।

रावण वध कब ?

(श्री पं अयोध्यादास जी)

प्रथम कल्प—

राम जन्म के हेतु अनेका।
परम विचित्र एकते एका॥
जन्म एक दुइ कहउँ बखानी।
सावधान सुनु सुमति भवानी॥
द्वार पाल हरि के प्रिय दोउ।
जय अरु विजय जान सब कोउ॥
विप्र साप ते दूनउँ भाई।
तामस असुर देह तिन्ह पाई॥

दोहा

भये निसाचर जाइ तेइ, महावीर बलवान।
कुंभकरन रावन सुभट, सुर विजयी जगजान॥

एक बार तिन्हके हित लागी।
धरेउ सरीर भगत अनुरागी॥
एक कल्प यहि बिधि अवतारा।
चरित्र पवित्र किये संसारा॥

दूसरा कल्प—

एक कल्प सुर देखि दुखारे।
समर जलंधर सन सब हारे॥
परम सती असुराधिप नारी।
तेहि बल ताहि न जितहिं पुरारी॥

दोहा

छल करि टारेउ तासु व्रत, प्रभू सुर कारज कीन्ह।
जब तेहि जानेउ मरम तब, श्राप कोप करि दीन्ह॥

तासु श्राप हरि कीन्ह प्रमाना।
कौतुक निधि कृपालु भगवाना॥
तहाँ जलंधर रावन भयउ।
रन हति राम परम पद दयउ॥
एक जन्म कर कारन एहा।
जेहि लगि राम धरी नर देहा॥

तीसरा कल्प—

नारद साप दीन्ह एक बारा।
कल्प एक तेहि लगि अवतारा॥

दोहा

रहे तहाँ दुइ रुद्र गन, ते जानहिं सब भेउ।
विप्र बेष देखत फिरहिं, परम कौतुकी तेउ॥

तब हर गन बोले मुसकाई।
निज मुख मुकुर विलोकहु जाई॥
बेषु विलोकि क्रोध अति बाढ़ा।
तिन्हहिं साप दीन्हा अति गाढ़ा॥

दोहा

होहु निसाचर जाइ तुम, कपटी पापी दोउ।
हँसेहु हमहिं सो लेउ फल, बहुरि हँसहु मुनि कोउ।
एक कल्प एहि हेतु प्रभु, लीन्ह मनुज अवतार॥
सुर रंजन सज्जन सुखद, हरि भंजन भुविभार॥

चौथा कल्प—

अपर हेतु सुनु सैल कुमारी।
कहउँ विचित्र कथा विस्तारी॥
जेहि कारन अज अगुन अरूपा।
ब्रह्म भयउ कोसल पुर भूपा॥
जो प्रभु विपिन फिरत तुम्ह देखा।
बन्धु समेत धरे मुनि बेषा॥
जासु चरित अवलोकि भवानी।
सती सरीर रहेउ बौरानी॥
अजहु न छाया मिटति तुम्हारी।
तासु चरित सुनु भ्रम रुज हारी॥
स्वायंभू मनु अरु सतरूपा।
जिन्हते भइ नर सृष्टि अनूपा॥
वर वस राजसुतहि तब दीन्हा।
नारि समेत गवन वन कीन्हा॥

करहि अहार साक फल कन्दा।
सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानन्दा॥
संभु विरंचि विष्नु भगवाना।
उपजहिं जासु अंस ते नाना॥
प्रभु सर्वज्ञ दास निज जानी।
गति अनन्य तापस नृप रानी॥
माँगु माँगु वर भै नभवानी।
परम गम्भीर कृपामृत सानी।
सुनु सेवक सुर तरु सुर धेनू।
बिधि हरिहर बन्दि पद रेनू॥
जो सरूप बस सिव मन माहीं।
जेहि कारन मुनि जतन कराहीं॥
जो भुसुंडि मन मानस हँसा।
सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा॥
देखहि हम सो रूप भरि लोचन।
कृपा करहुँ प्रन तारति मोचन॥
भगत बछल प्रभु कृपा निधाना।
बिस्वबास प्रकटे भगवाना॥
बाम भाग सोभित अनुकूला।
आदि सक्ति छबि निधि जगमूला॥
जासु अंस उपजहिं गुन खानी।
अगिनित लच्छि उमा ब्रह्मानी॥

दोहा

बोले कृपानिधान पुनि, अति प्रसन्न मोहि जानि
मागहुँ वर जोइ भाव मन, महादानि अनुमानि॥

सुनि प्रभु वचन जोरि जुग पानी।
धरि धीरज बोले मृदु बानी।

दोहा

दानि सिरोमनि कृपा निधि, नाथ कहउँ सतिभाउ।
चाहउँ तुमहि समान सुत, प्रभु सन कवन दुराउ॥

आप सरिस खोजौं कँह जाई।
नृप तव तनय होव मै आई॥
सतरूपहिं बिलोकि कर जोरे।
देवि माँगु वर जो रुचि तोरे॥
तुम ब्रह्मादिक जनक जग स्वामी।
ब्रह्म सकल उर अन्तरजामी॥

दोहा

सोइ सुख सोइ गति सोइ भगति,
सोइ निज चरन सनेह।
सोइ विवेक सोइ रहनि प्रभु,
हमहि कृपा करि देहु॥

जो कछु रुचि तुम्हरे मन माही।
मैं सो दीन्ह सब संसय नाही॥
इच्छामय नर वेष सवारे।
होइहउँ प्रगट निकेत तुम्हारे॥
आदि सक्ति जेहि जग उपजाया।
सोउ अवतरहिं मोरि यह माया॥
पुरवउँ मैं अभिलाष तुम्हारा।
सत्य सत्य पन सत्य हमारा॥

दोहा

बोले विप्र सकोप तव, नहिं कुछ कीन्ह विचार।
जाइ निसाचर होहु नृप, मूढ़ सहित परिवार॥

काल पाइ मुनि सुनु सोइ राजा।
भयउ निसाचर सहित समाजा॥
दस सिर ताहि बीस भुज दंडा।
रावन नाम बीर वरि वंडा॥
भूप अनुज अरि मर्दन नामा।
भयउ सो कुम्भकरन बल धामा॥
सचिव जो रहा धरम रुचि जासू।
भयउ विमात्र बंधु लघु तासु॥
नाम बिभीषण जेहि जग जाना।
विष्णु भगत विग्यान निधाना॥
रहे जे सुत सेवक नृप केरे।
भये निसाचर घोर घनेरे॥

इस प्रकार चार कल्प के अवतारों की कथा मानस में स्पष्ट वर्णित है। जिसमें से अन्तिम चौथे कल्प का व्यास (विस्तार) प्रथम तीन कल्प का समास (संक्षेप) से है। कारण मानस निर्माता श्री शंकर भगवान तथा अनन्य भक्त मानस प्रेमी श्री कागभुसुंडी जी के परमाराध्य परम सेव्य परम सर्वस्व परम उपास्य परात

पर तर ब्रह्म श्री रघुनाथ जी ही हैं। न कि अन्य। तीन कल्प में श्री रामरूपेण अवतार धारी वैकुण्ठादि निवासी। क्योंकि श्री सती जी स्पष्ट रूप से बोल चुकी हैं कि—

विष्णु जो सुर हित नर तनु धारी,
सोउ सर्वग्य जथा त्रिपुरारी।

दोहा

ब्रह्म जोव्यापक विरज अज, निर्गुन अकल अभेद।
सो कि देह धरि होयनर, जाहिं न जानहिं बेद॥

यहां वैकुण्ठादि वासी श्री विष्णु भगवान से पृथक परधामी ब्रह्म को प्रतिपादन कर रही हैं। तथा भगवान शंकर ने भी सती के दूसरे जन्म के प्रश्नोत्तर में कहा है कि—

सोइ प्रभु मोहि चराचर स्वामी।
रघुवर सब उर अन्तर यामी॥

प्रथम मोहप्रसंग मेंभी सोइ मम इष्ट देवरघुवीरा
सेवहिं जाहि सदा मुनि धीरा॥

अब इस तरह मानस में चार कल्प की कथा पायी जाती है। और चारोहा में रावण क्रमशः चार जलधर सिवगण, प्रताप भानु, आदि हुए हैं। तथा दशरथ कौशल्यादि भी और ही और हुए हैं। जैसे कश्यप, अदिति, धर्मदत्त मनु सतरूपा आदि। एवं लङ्का की यात्रा और रावण वध भी भिन्न ही भिन्न समय में हुआ है। जिसमें से दो कल्प के रावण वध का समय पौष शुक्ल त्रियोदशी और चैत्र शुक्ल चतुर्दशी जून के अङ्क में मेरे भेजे हुए प्रकासित हो चुका है। अब तीसरे कल्प का निम्नलिखित देखिये—

बृहद धर्म पुराण

आश्विन शारदीय पूजा प्रसंग में-अ० १६ में
हत्वा च वालिनंबीर लागू लवद्ध रावणम्।
स्थापया मास किष्किन्धा राज्य सुग्रीवमीश्वरम्
॥ ६१॥

एवन्तु श्रावणे मासि कर्म्म कृत्वा वने स्थितः।
सुग्रीवश्च प्रतिज्ञाय सीतोद्धार पुरं ययौ॥६२॥
पौर्णमास्यान्तु कार्त्तिक्यां सुग्रीवो राममागमत्।
दूतैः कपीन् समानाय्य जगादरघुनन्दनम्॥६३॥
मासस्याभ्यन्तरे वृत्तं कथयिष्यन्ति मामिति।
अतीत काल नियमा मरणे निश्चयं दधु॥७२।
एतस्मिन्नेव काले तू सम्पाती पक्षसत्तमः
श्रुत्वा दग्धपक्षः पक्षौ प्राप जगाद च।
सीता वसति लंकाया रावण ने हतेति तानू
॥ ७३॥

अध्याय २० में—
विचिंत्य सतु रात्राणि लंकाया पवनात्मजः।
रहस्यातिरहस्यादि ददर्श न च जानकीम्
॥ ३॥
अशोकाली वनं रक्तं पुष्पितं प्रददर्शह।
तद्दत्वा राक्षसीमध्ये स्थिता परम सुन्दरीम्।
उवाच सीता मम वै मासोऽय श्रावणाख्यकः।
ददर्शश्च परम साथी नाथवृत्तान्तलाभकः।१०।

अ० २१ में—
अंगदाद्यै सह श्री मान ददर्श रघुनन्दम्॥
प्रणम्य सर्ववृत्तान्तं जगाद मुदिताननः॥१॥
रामोऽपि दशमीं शुक्लां श्रावणे मासि
निर्णयम्।
सर्वया सेनया सार्द्धं यात्रां चक्रे मुदान्वितः
॥ २॥
अहोरात्रे श्लत्नन्तस्ते षोडश प्रहरैः सखि।
द्वादश्यामपरान्हे वै समुद्रं ददृशुः समे॥ ३॥
समुद्रपारसंप्राप्तौ तेषां चिन्तेचतां ततः।
त्रयोदश्यां समायातः शरणार्थी विभीषणः॥४॥
तस्यैव मन्त्रणाद्राम सितरात्रनियमैः स्वयम्।
सिन्धु राज प्रसाद्येव चक्रे स्वीकृत बन्धनम्
॥ ६॥
श्रावणाया पौर्णमास्यांन्तु शेषयामद्वये स्थिते।
चकार सागरे सेतुं भोजनानि चतुर्दश॥ ६॥
रामः कृष्ण त्रयोदश्यां पुष्यायां दक्षिण तटम्

सिन्धोः प्रापन्महाबाहु विभीषण सहायवान्
॥१४॥-१६॥

सर्वया सेनया युक्तो भाद्रयाः परदिने प्रगे।
प्रविवेश पुरीं लङ्का व्याप्ता च वानरैः पुरी
॥ २० ॥ २१ ॥

अ० २२ में—

नवम्यामपराह्ने वै रावणोऽसौ पतिष्यन्ति। दशम्यां परमा नन्दो जयी रामो भविष्यति ॥२४॥ रामोऽपि नाशया मास नवम्यां रावणानुजम् ॥४१॥ ततोऽतिकाय मरणं यात्रा वै रावणस्य च। इन्द्रजिन्मरण ञ्चैव देवान्तक वधस्तथा। शुक्ल द्वितीया पर्यन्तं मकराक्षवधस्तथा ॥४२॥ ततस्तृतीयामारभ्य राम रावणयोर्महत्। महाभयानकं युद्धं दारुणं संबभूवह ॥४६॥ एवमष्टोत्तरशतं दिनान् कृत्वा रघूत्तमः। नवम्यामपराह्ने वै पातया मास रावणम् ॥४६॥ ततः प्रभाते विमले दशम्यां विजये जये। सीता मानाय्य सुकृशां ददर्श रघुनन्दन ॥४२॥

सारांश—श्रावण में वालि बध और प्रवर्षणगिरि वास। कार्तिक पूर्णमासी को श्री भगवान रामचन्द्र के समीप सुग्रीव का आना और वानरों को श्री सीता जी की खोज में चारों ओर भेजना, खोजते हुए श्री हनुमान आदि वानरों को ८ महीना ७ रोज व्यतीत हो गया। श्रावण कृष्ण अष्टमी को श्री महावीर जी का लंका प्रवेश। सात रोज तक श्री जनक नन्दनी जी का अन्वेषण, आठवें रोज अर्थात श्रावण अमावास्या को श्री सीता प्राप्ति। बाद बाग विध्वंस, लंकादाह, आदि के बाद ६ रोज मार्ग में बिताकर श्रावण शुक्ल दशमी को श्री रघुनाथ जी के पास पहुँचना। ततकाल ही उसी दिन लंका विजय के लिए श्री रघुनाथ जी की यात्रा, द्वादशी को दो बजे के बाद समुद्र दर्शन। त्रियोदशी को श्री रघुनाथ जी की शरण में विभीषण का आगमन। बाद तीन रात तक मार्ग के लिए समुद्र प्रार्थना। श्रावण पूर्णमासी बारह बजे के बाद से समुद्र बाँधना। भाद्रपद कृष्ण त्रियोदशी को समुद्र के दक्षिण तट पर जाना।

भाद्रपद शुक्ल प्रतिपदा को सेना सहित लङ्का प्रवेश। बाद पूर्णमासी तक सुक के द्वारा भगवान राम की सेना की गिनती स्वयं रावण का निरीक्षण अंगद का रावण की सभा में जाना। स्व स्वपक्ष में राम रावण का युद्ध के लिये विचार आदि करना। आश्विन कृष्ण परिवा से पितृश्राद्ध और युद्ध दोनों साथ साथ आरंभ। आश्विन कृष्ण नवमी को कुंभकरण अतिकाय का बध और रावण की युद्ध यात्रा। कृष्ण नवमी से शुक्लद्वितीया तक संग्राम और नवमी दो बजे के बाद रावण का बध। दशमी प्रातःकाल श्री महारनी श्री सीता जी का श्री रघुनाथ जी से पुनः सम्मेलन और उसी समय से विजय घोषणा विजया दशमी लोक में प्रसिद्ध।

———

रामनाम लेखन नाम-जप का सबसे प्रभावशाली उपाय है।



संघ-समाचार

फरवरी मास में संघ के ३६८ सदस्य बने। इस मास में २६ नई शाखाये स्थापित हुईं। जिनका विवरण इस प्रकार है:—

शाखा संख्या १३२७ काशी खैरी (होशंगाबाद) सदस्य ९ मन्त्री श्री टीकमसिंह उर्फ बाबू लाल। शा० सं० १३२८ खैरागढ़ (दुर्ग) स० ६ मं० श्री कपिशरण जी। शा० सं० १३२६ पथराड़ी पिपरिया (जबलपुर) स० ६ मं० श्री पंचमलाल जी विश्वकर्मा। शा० सं० १३३० टाटावाही (दुर्ग) स० १५ मं० श्री तेजनराम जी। शा० सं० १३३१ पतरझोरी (दुर्ग) स० १५ मं० श्री जोशीराम जी। शा० सं० १३३२ धनिया (विलासपुर) स० ११ मन्त्री श्री रामशरण जी। शा० सं० १३३३ उमरिया चिनकी (होशंगाबाद) स० ६ मं० श्री रामप्रसाद जी शा० सं० १३३४ छाता (बलिया) स० १४ मं० श्री रामचन्द्रजी पाण्डेय। शा०स० १३३५ छपरा (छिन्दवाड़ा) स० ६ मं० श्री रामनारायण जी पाठक। शा० सं० १३३६ बौछार (होशंगाबाद) स० १० श्री थोवनसिंह जी पटैल। शा० सं० १३३७ बौछार (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री छिदामीलाल जी। शा० सं० १३३८ बौछार (होशंगाबाद) स० १२ मं० श्री नर्मदाप्रसाद जी द्विवेदी। शा० सं० १३३६ बौछार (होशंगाबाद) स० ११ मं० श्री भैरोसिंह जी गुमास्ता शा० सं० १३४० बौछार (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री शङ्करलाल जी पटैल। शा० सं० १३४१ बौछार (होशंगाबाद) सं० १० मं० श्री छोटेलाल जी नेमा। शा० सं० १३४२ बौछार (होशंगाबाद) सं० ११ मं० श्रीघासीराम जी सोनी। शा० सं० १३४३ बौछार (होशंगाबाद) स० ११ मं० श्री छिदामीलाल जी सक्सेना। शा० सं० १३४४ कापरखेड़ा (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री थोवन सिंह जी। शा० सं० १३४५ बौछार (होशंगाबाद) स० ६ मं०। शा० सं० १३४६ बौछार (होशंगाबाद) स० ६ मं०—। शा० सं० १३४७ नरसिंहपुर (होशंगाबाद) स० १७ मं० श्री कोदूलाल जी। शा० सं० १३४८ हरसिंहपुर (मिर्जापुर) स० १६ मं० श्री रामकंकन जी तिवारी। शा० सं० १३४६ बसहा (दरभंगा) सं ६ मं० श्री सूर्यनारायण जी चौधरी। शा० सं० १३५० लहेरिया सराँय (दरभंगा) स० ६ मं०। शा० सं० १३५१ रीछा (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री जीवन लाल जी मुकद्दम। शा० सं० १३५२ रीछा (होशंगाबाद) स० १० मं०...। शा० सं० १३५३ रीछा (होशंगाबाद) स० १० मं०...। शा० सं० १३५४ चौसार (बहराइच) स० १७ मं० श्री काशी राम जी मिश्र। शाखा संख्या १३५५ बम्बई १२ सदस्य ६ मन्त्री श्री राम रूप जी द्विवेदी।

रामवन-समाचार

मानस आश्रम :—फरवरी मास में मानस का एक सम्पूर्ण अखंड पाठ नित्य होता रहा। इस मास में श्री मारुति रागभोग में खर्च १७३।-)॥ हुआ और आय ६०।।)। हुई। ८३॥।)।॥ की कमी रही। मानस आश्रम में आय २६४।)॥ की हुई और खर्च ६८)। हुआ। इसमें १६६।)॥ की बचत हुई। कुल बचत ११२।≡)॥ की रही पिछली कमी १०२१॥।=)।॥ में यह घटाने से ६०६≡) की कमी रही। आशा है प्रमीजन इसे पूर्ण करेंगे। विशेष ध्यान श्री मारुति रागभोग के सम्बन्ध में आकर्षित करना आवश्यक है। इसमें तो किसी भी मास में कमी पड़ना अनुचित ही है।

६-२-५३

२००) श्री सेठ रामेश्वर लाल सहारिया, कलकत्ता

७-२-५३

३) श्री रामचन्द्र लक्ष्मीचन्द्र, सतना

१) श्री गोपाल, सतना

११-२-५३

३) श्री वासुदेव प्रसाद जी शुक्ल, पन्ना

१४-२-५३

५०) श्री लक्ष्मण गोपाल काकड़े, खरोरा

१६-२-५३

१।) श्री रामवृत्तजी, दूधी

२२-२-५३

॥।) श्री गोपल सतना

५) श्री रामचन्द्र जी "

।)॥। चढ़ोत्री

श्री मारुतिरागभोग

२-२-५३

५) श्री गोकुल साव, चाँपा

२०) श्री ठा० चन्देलसिंह, हल्दी

६-२-५३

१।) श्री बनारसी लाल गोयनका, मिर्जापुर

२) श्री छोटेलाल अग्रवाल, इलाहाबाद

११-२-५३

५) श्री भागवत प्रसाद पाण्डे, विरार

१८-२-५३

२) श्री बी० एन० विद्यार्थी, कैमोर

२०-२-५३

२) श्री धनसिंह राठौर, कौंच

२२-२-५३

५१)॥ श्री ज्वाला प्रसाद, सतना

२७-२-५३

१।) श्री मुरलीधर भारद्वाज, छिंदवाड़ा

श्री रामसंस्कृत विद्यालयः—में १७३-)॥ खर्च हुए और श्रीदयाराम कृष्णकुमार अग्रवाल टिटिलागढ़ से ५) प्राप्त हुए। १६८-)॥ की कमी रही। पिछली कमी सहित अब कुल कमी १३३४।=) की पूर्त्ति करना बाकी है। मानस आश्रम पर ही इसका भार रहने के कारण भविष्य में उसी कमी में सम्मिलित की जायगी।

कुटीर विभाग

सेंधवा कुटीरः—में ४६)॥ खर्च हुए। पिछली कमी १२१) सहित अब १६७)॥ बाकी हैं।

कोरी कुटिया :—में १७६।-॥=) खर्च हुए और ३०) की आय हुई। १४६।=)॥ अधिक खर्च हुए। पिछली बाकी २५६॥≡)॥। सहित ४०६।=) आना बाकी रहे।

४-२-५३

३) श्री श्यामलाल कोरी, वरूँ

७) " पंचम कोरी, हरचनपुर

१५) श्रीलच्छा राम सुमेर प्रसाद वर्रु
१६-२-५३
५) श्रीछेदालाल कोरी, आसेनी
———
३०)

नर्मदाखंड कुटीर :—में पूर्ववत् १८४।।)।।। की पूर्ति करना बाकी है।

श्री रामनाम मन्दिर :—में इस मास में २५६।।-)।।। खर्च हुए। और१०१) की आय हुई। पिछली बाकी १३०६।।।) सहित कुल १४६५।=)।। हुआ। सितम्बर मास में ३००) प्राप्त हुए थे पर भूल से १००) ही छपे थे। वे शेष २००) घटाकर अब १२६५।=)।।। आना बाकी है। श्रीरामनाम मंदिर का काम पूरा हो चुका है और प्रतिष्ठा होकर परिक्रमाभी प्रारम्भ होगई है। आशा है श्री डा०के०सी० मिश्र शेष रकम शीघ्र भेजने की कृपा करेंगे।

इसके दूसरे विभाग में पूर्ववत् २१५।) जमा हैं।

श्री तुलसी मंदिर :—पूर्ववत् ३४।।)।। जमा है।

पाकशाला :—फरवरी मास में १७४।।।)।।। खर्च हुए। पिछली बाकी ५६≡)।।सहित २३१-)। आना बाकी रहे।

श्री राम संस्कृत विद्यालय भवन :—इस मास में १५०) प्राप्त हुए। पिछले ११२२।।।-)।।। सहित अब १२७२।-)।।। जमा है।

६-२-५३
४०) श्री सतना स्टोन लाइन कं० सतना
६-२-५३
५०) " सुन्दर दास जी, सतना
२२-२-५३
५०) " सतना स्टोन लाइन कं०, सतना
———
१५०)

मानस प्रचार :—फरवरी मास में सदस्य शुल्क में १७८।।)।।। प्राप्त हुए। कार्यालय में १०५।-)।। चिट्ठी खर्च हुए ३३-) कुल १३८।।≡)।। मानस प्रचार में बलिया सम्मेलन में जाने आने में २२०।=) खर्च हुए और स्वागत समिति से ११०) प्राप्त हुए। १०।=) की कमी रही। उपरोक्त १३८।।≡)। सहित कुल खर्च इस मास में १४६-)। हुआ। कुल बचत २७।≡)। की रही। पिछली बचत ८१।।=)। सहितअब १०६-)।। जमा है।

श्री राम नाम लड्डू :—फरवरी मास में ४ ४ लड्डू तैयार हुए। जिसमें १४०लड्डू श्री मारुतिजी को समर्पण हुए। बाकी मानस यज्ञ के लिये रखे गये। केन्द्रोंकी स्थिति इस प्रकार है :—भेलसा २०३०, डाँगीढ़ाना-११४३, गुलजार बाग पटना ५०४, करकेड़ी ३५८, जबलपुर ३५६)

मानस यज्ञ :—फरवरी मास में यज्ञ के लिये ६५२) प्राप्त हुए और ५२६=)।।। खर्च हुए। बचत १२५।।।)। की रही। पिछली रकम ६८४।।) सहित कुल १११०।-)। जमा रहे।

२-२-५३
५१) श्री मगनी राम रामकुआर बाँगड़, कलकत्ता
३-२-५३
२५) श्री ठा० जगदीशप्रसाद जी, कुटम्बू
६-२-५३
२५) " गयाप्रसाद चतुर्वेदी, धन्सौर
६-२ ५३
१०) " धूलीलाल चारन, अकलैरा
१४-२-५३
२५) " पं० जयलाल प्रसाद, खरथुली
२५) " नन्दन प्रसाद जी, होसिर
५) " अयोध्याप्रसाद बाजपेई, कलकत्ता
१०) " निरंजन लाल गोयनका, कजोड़ाग्राम
१६-२-५३
२५) " ला० नन्दकिशोर जी, देहली

१६-२-५३

२५) " प्राइवेट सेक्रेटरी, सांता मऊ

२०-२-५३

२५) " रामधारी शुक्ल, देवरिया

५०) " कुन्दनलाल सचदेव, बनारस

१०१) " आर० सी० शर्मा, तितिलागढ़

२५) " दयाराम कृष्ण कुमार, "

२१-२-५३

२५) " लालचन्द्र हिम्मतमल कटारे चासकमान

२४-२-५३

२५) " धनराज टीकमचन्द्र जड़िया राजनांदगाँव

२५) " महन्त मदन मोहन दास जी, सांरगढ़

२८-२-५३

६०) "बी० बी० गनेड़ीवाला, गोरखपुर

१०) " गणपतजी दुनिया भाई, स्वरगोंण

५०) श्रीतांतीरामसाव, २१) लहुरमनप्रसादजी, २५) विलारी

६५२)

श्रीहरिः

जो पै 'मानस' न पावतो

कलि कलुषित क्रूर कपटी कुचाली और,
निपट निलज्ज निरँकुश निरभाव जो।
चौर अरु चपल प्रमत्त बलवान अति,
ऐसो मन मत्त कैसे राम गुण गावतो॥
पावतो परम-पति कैसे कहु कविजन,
कैसे राम नामहू की चरचा चलावतो।
जावतो कवन विधि पार भव सागर के,
कैसे श्रीराम से सम्बन्ध निभावतो॥
जारतो तू काम कहु कौन सावधान के बल,
किमि गुरु-जन-रज सिर पर ठावतो।
वेद मत आगम निगम-मत सोधित हू,
जो पै तुलसी कृत 'मानस न पावतो॥

'रघुराज'

पुरषोत्तम मास

इस वर्ष वैशाख पुरुषोत्तम मास (अधिक मास) हो रहा है। मंगलवार ता० १५-४-५३ से बुधवार ता० २३-५-५३ तक वैशाद्व का पुरुषोत्तम मास होगा। वैसे तो वैशाख स्वयं अत्यन्त पुण्य मास है। इस महीने में व्रत, पूजा, पाठ, जप, दान आदि करने का बहुत महत्व कहा गया है और इसी प्रकार पुरुषोत्तम मास (अधिक मास) भी जप, पूजा, पाठ, दानादि का फल अनन्त गुणित कर देने वाला है; किन्तु इस वर्ष तो वैशाख मास अधिक मास हो रहा है। ऐसे सुअवसर बहुत कम मिला करते हैं। इस महीने में जो भी जप, पाठ, पूजन, दानादि पुण्य कर्म किये जायँगे, उनका फल साधारण समय में करने की अपेक्षा अनन्त गुणित अधिक होगा। अतः पूरे वैशाख भर दो महीने या कम से कम ऊपर बताये अधिक मास के पुण्यकाल में तो जप, पाठादि के लिये विशेष रूप से सर्वत्र प्रयत्न होना ही चाहिये।

१—जहाँ सम्भव हो सामुहिक रूप से अधिक से अधिक लोग मानस का नवाह या मासिक पाठ करें। सामुहिक पाठ न सम्भव हो तो व्यक्तिगत पाठ अधिक से अधिक करना तथा दूसरों से कराना चाहिये।

२—राम नाम लडडू अधिक से अधिक लिखवाइये और यहाँ भेजिये। राम नाम जप का सबसे उत्तम उपाय है नाम-लेखन।

३—अधिक से अधिक नाम-जप कीजिये।

४ - आप अपने यहाँ रामार्चा करा सकते हैं और आपके यहाँ सुविधा न हो तो आपकी ओर से रामवन में रामार्चा की व्यवस्था इस पवित्र महीने में हो सकती है।

५—श्री हनुमान जी की विशेष सेवा कोई प्रेमी सज्जन करना चाहेंगे तो वैसी व्यवस्था भी हो सकेगी।

इस पुण्यकाल को भजन, मानस पाठ, नाम जप, नाम लेखन में स्वयं व्यतीत कीजिये और अपने परिचितों को भी इस पवित्र उद्योग में लगाइये।

—मन्त्री

श्रीरामनाम लडडू के नियम

१—लिखते समय मुख से श्रीराम नाम का जप करना चाहिये।

२—केवल लाल स्याहीसे नाम लिखें।

३—केवल 'राम' यह नाम लिखें।

४—प्रत्येक पृष्ठ में १०८ नाम अर्थात् १२ पंक्ति और प्रत्येक पंक्ति में ९ नाम लिखें।

५—नाम लिखते समय शुद्ध होकर बैठें और मौन रहकर लिखें।

६—अपनी कापी में दूसरों से नाम न लिखवायें।

७—नाम स्पष्ट अक्षर में लिखें।

८—अशुद्ध लिखा जाने पर काटकर न सुधारें। उसे छोड़ दें और दूसरा लिखें।

९—लिखित नामों में पूज्य भाव रखें।

१०—लिखित 'राम' नाम की ५१ मालाओं का एक लड्डू माना जायगा और वह श्रीराम दूत को यहाँ समर्पित होगा।

११—फाउन्टेनपेन या फाउन्टेनपेन की स्याही से रामनाम नहीं लिखे जाँयगे।

१२—एक साथ चाहे जितने राम नाम लड्डू आप चढ़ाने को भेज सकते हैं।

१३—राम नाम लिखने के लिये एक लड्डू की एक पुस्तिका (कापी) का मूल्य एक आना।

१४—श्रीरामनाम लड्डू के छपे कवर पृष्ठ १) के १००।

मन्त्री, मानस संघ
पो० रामवन वाया सतना

रजिस्टर्ड नं०—एन८७१

रामवन के विविध कार्य

१—वर्ष में श्रीरामचरितमानस का दो पाठ करने की प्रतज्ञा करने वाले सज्जन मानस संघ के सदस्य बनाए जाते हैं। आजीवन शुल्क ।।) है। जहाँ नौ सदस्य हो जाते हैं, वहाँ शाखा बन जाती है। इस समय देश में मानस संघ के २६२०० सदस्य हैं और १३२६ शाखायें हैं।

२—रामचरितमानस का प्रचार एवं अध्ययन व्यापक करने के लिए यह 'मानस मणि' मासिक पत्र ग्यारह वर्ष से निकल रहा है। इस का वार्षिक मूल्य ३) है।

३—तुलसी साहित्य का प्रकाशन मानस प्रकाशन लिमिटेड द्वारा होता है। कम्पनी का प्रत्येक शेयर १०) का है। कम्पनी १६ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है। स्थायी ग्राहक शुल्क २) है। स्थायी ग्राहकों को प्रकाशित ग्रंथों पर २५ % कमीशन दिया जाता है।

४—श्रीरामचरितमानस पत्र व्यवहार विद्यालय द्वारा मानस संघ घर बैठे श्रीरामचरितमानस की शिक्षा देता है। विद्यालय का पाठ्य विषय तीन वर्षों का है और प्रथम वर्ष का शुल्क १०) है।

५—मानस आश्रम में नित्य अखण्ड मानस पाठ होता है। यहाँ रह कर साधक एकान्त में साधन भजन करते हैं।

६—तुलसी संग्रहालय भी रामवन में है।

७—मानस संघ राम नाम लड्डू लेखन का प्रचार करता है। ये लिखित रामनाम श्रीमारुति जी को अर्पण किये जाते हैं। २७ करोड़ अर्पित हो चुके हैं।

८—श्री राम संस्कृत विद्यालय में वाराणसेय-परीक्षा के पाठ्यक्रम के साथ मानस अध्ययन की भी सुविधा रखी गई है।

हरवि भाग में आपका सहयोग अपेक्षित है।



'मानस मणि'
पो०—रामवन (सतना)

ग्रा० न०— ८/

श्री सम्पादक जी
गुरुकुल पत्रिका
गुरुकुल कांगड़ी

सम्पादक—सुदर्शन सिंह
प्रकाशक—शारदा प्रसाद, मन्त्री, मानस सङ्घ, रामवन, (सतना)। मुद्रक—माधो प्रिंटिङ्ग वर्क्स प्रयाग

मानसमणि



मणि १२

मई १९५३

आलोक ५

वार्षिक मूल्य तीन रुपया

वी० पी० से तीन रुपया आठ आना

तुलसी जयन्ती

विगत मानस-यज्ञ की सफलता का प्रमुख कारण था उसके लिये खूब पहिले से की गई तैयारी। अतः मेरा सुझाव है कि अभीसे आप तुलसी जयन्ती की तैयारी प्रारम्भ कर दें। कुछ समय इस विचार में लगावें कि आपके यहाँ उसका क्या रूप होगा। फिर मित्रों में उसका परामर्श करें। रूपरेखा निश्चित हो जाने पर व्यवस्था करें।

रामवन में भी इस वार विशेष समारोह से जयन्ती मनाने का विचार हो रहा है। के लिये भी आप अपने सुझाव भेजने की करें। स्मरण रहे कि इस वर्ष श्रावण शु ७ सोमवार तारीख १७ अगस्त १९५३ को और नव निर्मित कुटियों के कारण वर्षा में हम बाहर के आने वाले लगभग २५ स को ठहरा सकेंगे। क्या आप आयेंगे?

शारदा प्रसाद

चतुर्दश मानस संघ सम्मेलन बलिया

फाल्गुन कृष्ण १३ बृहस्पतिवार ता० १२ फरवरी से फाल्गुन कृष्ण १५ शनिवार ता० १४ फरवरी १९५३ तक बलिया में मानस संघ सम्मेलन का चतुर्दश अधिवेशन हुआ।

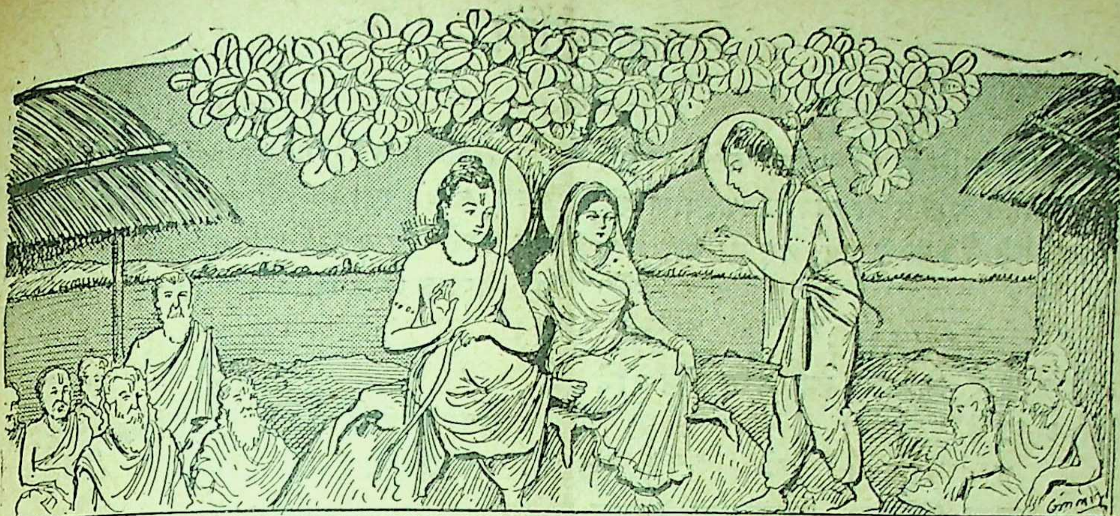
फाल्गुन कृष्ण १३ को श्रीहनुमान चालीसा के पाठ होकर हवन हुआ। अपराह्न में श्री शंकर जी की बरात का जलूस निकाला गया। शाम को प्रार्थना होकर श्रीमक्खन लाल केला द्वारा सम्मेलन का उद्‌घाटन हुआ। फाल्गुन कृष्ण १४ को प्रार्थना, कीर्तन, प्रतियोगिता तथा प्रवचन हुए। फाल्गुन कृष्ण १५ को प्रार्थना शंकर-कीर्तन प्रतियोगिता, श्री मन्त्री जी की रिपोर्ट तथा भाषण, पारितोषिक वि तथा प्रवचन, धन्यवाद, आरती, प्रसाद वि होकर सम्मेलन का कार्यक्रम पूर्ण हु आगत व्यासों में प्रमुख थे (१) श्रीशिवनारा जी व्यास, भागलपुर (२) श्री पं० केशरी कि शरण जी व्यास, चौबेबेल (३) श्री पं० प्रसाद जी रामायणी, निरौंधा; (४) श्री श्यामाचरण जी व्यास, बनारस (५) श्री रामनजर जी रामायणी। यथेष्ट प्रचार न के कारण शाखाओं से प्रतिनिधि नहीं आये सम्मेलन छोटे तथा स्थानीय रूप में ही हु

रामवन आइये

मानस यज्ञ रामवन पर अपनी अमिट छाप छोड़ गया है। रूपरेखा तथा वातावरण दोनों में ही विशेष उन्नति हुई है। आइये और इसका लाभ उठाइये। एकान्त में साधन-भजन कीजिये। स्वावलम्बी साधकों के लिये अनेक कुटिया खाली हैं। आश्रम पर आर्थिक भार बढ़ गया है अतः अभी आश्रम अवलम्बी साधक बढ़ाने का अवसर नहीं है।

स्थायी रूप से रहने वाले अथवा मा मास के लिये रहने के विचार वाले प्रेमी व्यवहार करें।

शारदा प्रसा
मानस आश्र
पो०— राम
(वाया सत



मानस मणि

राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके।।
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं।।

मणि १२ | रामवन—मानस संवत् ३८० — मई १९५३ ई० | आलोक ५

मानस की सूक्तियाँ

पूजनीय प्रिय परम जहाँ ते। मानिअ सबहिं राम के नाते।।

\+ + +

पुत्रवती जुवती जग सोई। रघुबर भगत जासु सुत होई।।
नतरु बाँझ भलि बादि बियानी। राम बिमुख सुत ते हित हानी।।

\+ + +

सकल सुकृत कर बड़ फल एहू। राम सीय पद सहज सनेहू।।

\+ + +

सुभ अरु असुभ करम अनुहारी। ईस देइ फल हृदय बिचारी।।
करइ जो करम पाव फल सोई। निगम नीति अस कह सब कोई।।
और करै अपराध कोउ, और पाव फल भोग।
अति विचित्र भगवन्त गति, को जग जानै जोग।।

\+ + +

जौं पै प्रिय बियोग बिधि कीन्हा। तौ कस मरन न माँगे दीन्हा।।

\+ + +

गंग सकल मुद मंगल मूला। सब सुख करनि हरनि सब सूला।।

(६३२)

जो दूसरे प्राणियों की हिंसा करके अपना कल्याण चाहते हैं वे स्वयं अपने अकल्याण को निमन्त्रण देते हैं। चाहे वह यज्ञ हो या और कुछ।

(६३३)

जो आचार निष्ठ है वह विद्या हीन होने पर भी श्रेष्ठ है, पूज्य है।

(६३४)

वही कर्तव्य है जिससे अन्तरात्मा प्रसन्न हो। जिससे पश्चाताप हो वह त्याज्य है।

(६३५)

केवल वाह्य शौच का नाम आचार नहीं। आचार की पूर्णता तो हृदय की पवित्रता में है।

(६३६)

अधर्माचरण से पहले लोग सुखी होते देखे जाते हैं। पर उनका नाश भी समूले ही होता है।

(६३७)

आदर्श आचरण वही है जिसका महापुरुषों ने उपदेश और पालन किया हो।

(६३८)

कर्म बन्धक नहीं, कर्मफल में होने वाली आसक्ति ही बन्धक है।

(६३९)

त्याग का सम्बन्ध हृदय से है, कर्मों से नहीं। जिनके हृदय में लालसा है वे चाहे जैसे और जहाँ रहें त्यागी नहीं हो सकते।

(६४०)

पाप करने का विचार करना भी पाप है और दूसरे को पाप करते देखना भी पाप है।

(६४१)

जो धर्म की रक्षा करता है धर्म उसकी भी रक्षा करता है।

(६४२)

हठधर्मी न होना या उदार होने का अर्थ उच्छृंखल होना नहीं है। अपने धर्म का आचरण करते हुये दूसरों की बातें भी सुनना, उन पर निष्पक्ष भाव से विचार करना ही उदारता है।

(६४३)

जहाँ पाप है, अधर्म है,वहाँ शान्ति तो हो ही नहीं सकती।

(६४४)

मांगना सबसे निकृष्ट कार्य है। पर अपने लिये। परोपकारार्थ माँगना बुरा नहीं।

(६४५)

क्षुद्र और कायर ही दूसरे की उन्नति से ईर्षा करते हैं। सज्जन तो प्रसन्न होते हैं।

(६४६)

तप और विद्या दोनों ही उत्तम साधन हैं। पर यदि साधक दुर्विनीत हो तो दोनों ही उलटे फल देते हैं।

(६४७)

मूर्ख अच्छा है,पर विद्वान कुतार्किक किसी काम का नहीं।

(६४८)

जहाँ पर द्रव्य और परस्त्री की अभिलाषा हुई वहाँ से धर्म और भाग्य विदा हुये। वहाँ तो दुख और अपयश ही रह सकते हैं।

(६४९)

दुखों का प्रतिकार वैसा ही है जैसे सिर के भार को कन्धे पर रख लिया जावे।

(६५०)

महापुरुषों की यही विशेषता है कि समर्थ होने पर भी सहन करते हैं।

(६५१)

वह धर्म ही नहीं हो सकता जिससे प्राणियों को कष्ट पहुँचे।

ऋषि-गीता

सुदर्शनसिंह

[चतुर्थ भवन]

प्रभु प्रसाद सुचि सुभग सुबासा ।
सादर जासु लहइ नित नासा ॥
तुम्हहिं निवेदित भोजन करहीं ।
प्रभु प्रसाद पट भूषन धरहीं ॥
सीस नवहिं सुर गुरु द्विज देखी ।
प्रीति सहित करि बिनय बिसेषी ॥
कर नित करहि रामपद पूजा ।
राम भरोस हृदय नहिं दूजा ॥
चरन राम तीरथ चलि जाहीं ।
राम बसहु तिन्ह के मन माहीं ॥

आराध्य पर चढ़ाये हुये पुष्प-माल्य आदि के निर्माल्य होने पर (उतार लिये जाने पर) उस निर्माल्य प्रसाद की सुगंधि जिनकी नासिका बड़े आदर पूर्वक ग्रहण करती है, (जो उसे आदर पूर्वक मस्तक से लगाकर तब सूंघते हैं) जो श्री रघुनाथजी को अर्पित नैवेद्य का ही प्रसाद भोजन रूप से सेवन करते हैं और उन प्रभु के प्रसाद के वस्त्र तथा आभूषण ही धारण करते हैं, देव मूर्तियाँ या देव स्थान, गुरु देव और ब्राह्मणों को देखकर जो (उदासीनता पूर्वक नहीं) प्रेम के साथ और (उपेक्षा पूर्वक नहीं) अत्यन्त विनम्रता के साथ मस्तक झुकाकर उन्हें नमस्कार करते हैं, जिनके हाथ सदा श्री राम के चरणों की सेवा में लगे रहते हैं, जिनके चित्त में केवल श्री राम का ही भरोसा है, और किसी का भरोसा जिन्हें नहीं और जो अपने पैरों से श्री राम से सम्बन्धित तीर्थों की यात्रा करते हैं, महर्षि वाल्मीकि कहते हैं कि 'हे श्री राघव, आप उनके हृदय में निवास करें!'

श्रीमद्भागवद में परम भागवत महाराज अम्बरीष की स्थितिका वर्णन करते हुये श्री शुकदेव जी नवम स्कन्ध के चौथे अध्याय में बताते हैं—

स वै मनः कृष्णपदारविन्दयो,
वचांसि वैकुण्ठगुणानुवर्णने ।
करौ हरेर्मन्दिरमार्जनादिषु,
श्रुतिं चकाराच्युतसत्कथोदये ॥१८॥
मुकुन्दलिङ्गालयदर्शने दृशौ,
तद्भृत्यगात्रस्पर्शेऽङ्ग सङ्गमम् ।
घ्राणं च तत्पादसरोज सौरभे,
श्रीमत्तुलस्या रसनां तदर्पिते ॥१९॥
पादौ हरेः क्षेत्रपदानुसर्पणे,
शिरो हृषीकेशपदाभिवन्दने ।
कामं च दास्ये न तु कामकाम्यया,
यथोत्तमश्लोक जनाश्रया रतिः ॥२०॥

उन परमभक्त महाराज अम्बरीष ने अपने मन को श्री कृष्णचन्द्र के चरणारविन्द-युगल में, वाणी को भगवद्गुणानुवर्णन में, हाथों को श्री हरि के मन्दिर को झाड़ने-बुहारने में और अपने कानों को भगवान की मङ्गलमयी कथा को सुनने में लगा रखा था। उन्होंने अपने नेत्र भगवान मुकुन्द की मूर्तियों एवं मन्दिरों के दर्शन में, स्पर्श शक्ति को भगवद्-भक्तों के शरीर-स्पर्श में, नासिका को श्रीहरि के चरणों पर चढ़ी तुलसी की दिव्य गन्ध लेने में और जिह्वा को भगवान को अर्पित नैवेद्य प्रसाद का रस लेने में लगाया था। अम्बरीष

के पैर भगवान के क्षेत्रों (तीर्थादि) की पैदल यात्रा करने में लगे रहते थे। उनका मस्तक हृषीकेशके चरणों की वन्दना किया करता था। उनकी जितनी भी कामनायें थीं (वस्त्र आभूषण, माला, चन्दनादि सम्बन्धी) वे अपने भोग के लिये नहीं थीं, वे उनसे भगवान की सेवा ही करना चाहते थे। उनके मन में एक मात्र भगवान का दास बने रहने की कामना थी। वे वह भगवत्प्रेम चाहते थे,इस सेवा से जो केवल उत्तमश्लोक भगवान के निज जनों में ही निवास करता है।

श्रीरामचरितमानस के इस प्रसंग में 'प्रथम भवन' बताते समय कानों का सदुपयोग कथा-श्रवण, 'द्वितीय भवन' बताते समय नेत्रों की सार्थकता भगवद्दर्शन के लिये लालसा और 'तृतीय भवन' बताते समय वाणी की संफलता भगवद्गुणानुवर्णन तो बता ही चुके हैं। अब शेष अंगों का कार्य इस 'चतुर्थ भवन' के निर्देश में आदिकवि बता रहे हैं।

'कुरंग मातंग पतंगभृंग,
मीनाहता पंचभिरेव पञ्च।

हिरन शिकारी के बाजे के स्वर से मोहित होकर बाण का निशाना बनता है। हाथी हथिनी का स्पर्श करने के लोभ में शिकारियों द्वारा लकड़ी की रखी गई हथिनी के पास आता है और तृण-पत्तों से ढके गड्ढे में गिरकर पकड़ा जाता है, फतिङ्गा रूप के लोभ में दीपक पर आकर जल जाता है, भ्रमर पराग-गन्ध की लालच में कमल पर बैठता है और सायंकाल कमल के बन्द हो जाने पर उसी में बन्द हो जाता है तथा मछली जिह्वा स्वाद के लोभ में पड़कर वंशी में फँसती है।

शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध में पाँच विषय हैं और इनको ग्रहण करने वाली पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं—श्रवण, त्वक, नेत्र, रसना और नासिका। जो भी इन इन्द्रियों के विषयों में आसक्त होता है,उसका पतन अनिवार्य है। मृग, गज, पतंग आदि एक एक इन्द्रियों के विषयों में आसक्त होने से मारे जाते हैं, फिर जो मनुष्य होकर पाँचो इन्द्रियों के विषयों में आसक्त है, उसके विनाश की तो बात ही क्या पूछना है।

विषयी पुरुषों से सर्वथा भिन्न बात होती है भगवान के भक्तों की। बात यह है कि पदार्थ में तो कोई गुण-दोष है नहीं,उस पदार्थ के प्रति जो भाव होता है, उसी में गुण-दोष होता है। एक ही नारी किसी की पत्नी है और किसी की बहिन। जिसकी वह पत्नी है, उसे पत्नी को देखकर काम के भाव मन में आते हैं और भाई के मन में उसे देखकर पवित्र स्नेह मन में जगता है। यही बात समस्त पदार्थों के सम्बन्ध में है। सामान्य लोग उत्तम वस्त्र,उत्तम भोजन, उत्तम गन्ध,उत्तम स्पर्श अपने लिये-अपने सुखोपभोग के लिये चाहते हैं, अतः इन पदार्थों से उनके मन में विषयासक्ति बढ़ती है और इससे उनका पतन होता है। भगवद् भक्त भगवान की प्रसादी नैवेद्य का भोजन करता है,भगवान के प्रसाद वस्त्रादि का धारण करता है। उसे भी उत्तम गन्ध,उत्तम रस,उत्तम स्पर्श प्राप्त होते हैं—खूब उत्तम प्राप्त होते हैं किन्तु वे उसके लिये भगवत्प्रसाद हैं। उनके सेवन से उसके चित्त में विषय-बुद्धि के बदले भगवद् बुद्धि जागृत होती है। फलतः उसका चित्त मलिन होने के स्थान पर शुद्ध होता जाता है। उसे भगवत्प्रसाद-सेवन से भगवत्प्राप्ति होती है; क्योंकि प्रसाद उसके लिये विषय-भोग नहीं है।

ज्ञानेन्द्रियों का उपयोग ही पर्याप्त नहीं है। भगवत्परायण व्यक्ति का पूरा जीवन-पूरा अन्तर्बाह्य भगवन्मय होता है, भगवान के लिये होता है। उसका मस्तक देव प्रतिमा देवता, ब्राह्मण एवं गुरुदेव को प्रणाम करता है। इनका वह सदा सम्मान करता है। जब

उसके आराध्य ही गौ, ब्राह्मण एवं देवताओं की रक्षा के लिये भूमि पर अवतरित होते हैं तो वह कैसे इनकी सेवा नहीं करेगा। गुरु, देवता एवं ब्राह्मणों का अपमान तो दूर, उपेक्षा भी वह नहीं कर सकता। ये तो उसके परम सम्मान्य हैं। इन्हें वह बार बार प्रणाम करता रहता है और इसी में अपने मस्तक की सफलता मानता है।

उसके हाथ सदा आराध्य की पूजा करते रहते हैं। इसमें 'कर नित करहिं रामपद पूजा' में 'नित' शब्द बतलाता है कि वह जो कुछ भी करता है, वह सब अपने स्वामी की आराधना के लिये ही करता है। प्रभु की आराधना से जिस का सम्बन्ध न हो, ऐसा कोई कर्म उनके हाथ नहीं करते। अपने शरीर के लिये, संसार के किसी काम के लिये जो वह हाथ हिलाता है, वह भी इसी लिये कि शरीर से प्रभु की सेवा होती है, संसार के उस काम को करने से प्रभु की सेवा बनेगी। उसके समस्त कर्म आराधना बन गये होते हैं। वह जो कुछ करता है, वह सब 'रामपद पूजा' ही हो चुका है।

ऐसी स्थिति कैसे होती है? ऐसी स्थिति तभी होती है, जब हृदय में केवल श्री राम का ही भरोसा रह गया हो। जब शरीर और संसार में कोई आसक्ति न हो और न अन्यत्र कहीं आशा-भरोसा हो। प्रभु स्वयं कहते हैं—

'मोर दास कहाइ नर आसा।
करइ तो कहहु कहा बिस्वासा॥

जिसके हृदय में केवल श्री राघवेन्द्र का भरोसा है, वह दूसरे के लिये कोई काम क्यों करेगा? उसे अपने स्वामी को छोड़ अन्य की सेवा का प्रयोजन ही क्या है?

'चरन राम तीरथ चलि जाहीं।' में बताया गया है कि तीर्थ यात्रा पैदल ही होनी चाहिये। तीर्थों में जाकर भी मोटर-ताँगों से घूमना तो फिर घूमना ही है। वह तीर्थ यात्रा नहीं है। तीर्थ यात्रा होती है चरणों को सफल बनाने के लिये और चरण तो चलेंगे तब सफल होंगे। संसार स्वार्थ के लिये तो भटकते हैं वे और भटकते ही रहते हैं। श्रीराम के तीर्थों की ओर उन तीर्थों की यात्रा के लिये उन तीर्थों में चलना ही वास्तविक चलना है और यही चरण पाने का परम फल है।

इस प्रकार जिनकी नासिका सामान्य सुगन्धि में कोई रुचि नहीं रखती। केवल भगवान को अर्पित पुष्प-माल्यादि की ही सुगन्धि लेती है और वह सुगन्धि भी सुखोपभोग के लिये नहीं, आदरपूर्वक—अपने को पवित्र करने के लिये लेती है, जिनकी रसना नाना प्रकार के व्यंजनों के लिये कभी लालायित नहीं होती, केवल भगवत्प्रसाद ही जिसे प्रिय है और उसमें भी जिसे स्वाद का सर्वथा ध्यान नहीं, भगवत्प्रसाद मात्र जिसे अमृत प्रतीत होता है, जो वस्त्र और आभूषण भगवान का प्रसाद ही धारण करते हैं, अपने को सजाने के लिये नहीं पहिनते और न उनमें आसक्ति रखते, जिनका मस्तक देव प्रतिमा, गुरु तथा ब्राह्मणों के सामने सदा झुक जाता है और यह नम्रता दिखावटी नहीं होती, इस नमस्कार में उनके हृदय का सच्चा प्रेम होता है और बहुत अधिक विनय होती है, देवता, ब्राह्मण, गुरु के प्रति अविनय, उपेक्षा या रूक्ष व्यवहार जिनसे कभी होता ही नहीं, जिनके हाथ केवल भगवत्सेवा के निमित्त कार्य करते हैं अर्थात जिनके समस्त काय भगवत्सेवारूप हो चुके हैं, जिनके हृदय में एक मात्र श्री राम का ही भरोसा है और जो समय, सुविधादि पाते ही प्रायः भगवत्तीर्थों की पैदल यात्रा करते हैं, अपने स्थान पर भी जो आराध्य के मन्दिरों का नियमित दर्शन करते हैं, उनके मन उन श्री अवधराजकुमार के लिये बसने योग्य स्थान हैं वहीं वे सुखपूर्वक निवास करते हैं।

अरण्यकाण्ड का वैशिष्ट्य

लें०—दण्डी स्वामी श्री प्रज्ञानानन्द सरस्वतीजी

(१) अरण्य काण्ड में मुख्यतः माया और इसके विनाश के मूल सहायक 'सद्गुरु'—का ही विवेचन किया गया है। अरण्यकाण्ड में जहाँ तहाँ माया का ही दर्शन होता है यथा (१) 'मोहाम्भोधरपूग' (अर० मं० श्लो० १) ही तो माया है। २ माया-शूर्पणखा 'रुचिर रूप धरि प्रभु पहिं आई।' (३) माया युद्ध 'करत-माया अति घनी' (४) माया नाथ का माया कौतुक 'देखहिं परस्पर राम' (५) माया सीता (६) मायामृग (७) मायासन्यासी (८) माया विरहशोक (९) माया-कबन्ध (शापहृत) (१०) माया रूपी नारि (दो०४३) (११) सतीकृत माया सीता रूप जिसका उल्लेख बालकाण्ड में 'धरि सीता कर रूप चली' (बा० ५२) (१२) 'माया रूपी नारि' यह सिद्धान्त भी इसी में ही है। (१३) माया काक।

(२) अरण्य मुनियों का निवासस्थान था। माया के पाशों से छुटकारा पाये बिना कोई भी ज्ञानी या भक्त नहीं हो सकता है। माया मोह से छुड़ाने वाले केवल गुरुवर ही हैं। 'महा मोह-मोहतम पुंज जासु वचन रविकर निकर (बा०-मं० सो० ५) 'सुनु गिरिराज कुमारि भ्रम तम रविकर वचन मम (बा ११५)। चाहे कोई भी व्यक्ति क्यों न हो गुरु शिवजी का ही रूप है। 'गुरुं शंकर रूपिणम्' 'तुम्ह त्रिभुवन गुर वेद बखाना। गुरु जी की सेवा ही शिव सेवा है।' 'सिव सेवाकर सुत फल सोई।' 'अविरल भगति राम पद होई' (उ० १०६-२) संकर भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि' (उ० ४५) दूसरे प्रमाण जन्मानेक शतैः सदादर युजा भक्त्या समाराधितो। भक्तैर्वैदिक लक्षणेन विधिना संतुष्ट ईशः (शंकर) स्वयम्। साक्षाच्छ्री गुरु रूप मेत्य कृपया दृग्गोचरः सन् प्रभुः। तत्त्वं साधु विबोध्य तारयति तान् संसार-दुःखार्णवान्।' शिव एवं गुरुः साक्षात् गुरुदेव शिवः स्वयम्। उभयोरन्तरं किंचिन्न द्रष्टव्यम् (मुमुक्षुभिः)' (सर्व वेदान्त सिद्धान्तसार-संग्रहः २५५। २५६) 'यमाश्रित्याऽश्रमेणैव परं पारंगता बुधाः' (२५८)। टिप्पणी—यहाँ का 'यमाश्रित्य' शब्द और 'यमाश्रित्य हि वक्रोऽपि' (बा० मं० ३) देखने जोग है। 'बिनु गुर होइ कि ग्यान (उ ८९ क) गुरु के सिवा' ज्ञान प्राप्ति नहीं हो सकती है और ग्यान के बिना' श्रीराम भक्ति की प्राप्ति नहीं होती है 'बिमल ग्यान जल जब सो नहाई। तब रह राम भगति उर छाई (उ० १२२-११) और माया के विनाश बिना ज्ञान की प्राप्ति नहीं। इससे इस काण्ड में पहिले श्लोक में शिव जी की वन्दना में गुरु के लक्षणों को ध्वनित कर दिये हैं महाकविकुल भास्कर श्रीतुलसीदासजी ने।

(३) बाल काण्ड के मंगल के तीसरे श्लोक में 'गुरुं शंकर रूपिणम्' शिवरूप गुरु की बन्दना कीहै। वह श्लोक तीसरे काण्ड का प्रतिनिधिहै, इससे इस काण्ड में प्रथमश्रीराम जी की बन्दना न करके शिव जी की ही बन्दना की गयी है।' तुम्ह ते अधिक गुरहि प्रिय जानी' यह है इसमें भाव। अब देखिये कि गुरुलक्षणों को 'मूलं धर्म तरोः—' इस श्लोक में कैसे भर दिया है। मूलं धर्म तरोः। धर्म का मूल है श्रद्धा 'श्रद्धा बिना धरम नहिं होई।' श्रद्धा का मूल है विवेक 'बिनु सत संग विवेक न होई।' संत-गुरु संगति में श्रवण किये बिना श्रद्धा का लाभ नहीं होता

है। गुरु जी के पास धर्म बढ़ाने की शक्ति चाहिये विवेक जलधेः पूर्णेन्दुम् विवेक-रूपी सागर को बढ़ाने वाला पौर्णिमा का चन्द्रमा गुरु ही होता है। 'बिनु सतसंग विवेक न होई'. आनन्दम्—आनन्द देने वाला राम प्राप्ति कराने वाला। आनन्द ही तो श्रीराम जी हैं यथा 'जो आनन्द सिंधु सुखरासी। सीकरतें त्रैलोक्य सुपासी। सोभाधाम राम असनामा' 'यदानन्द लेशैः समानन्दिविश्वम्।' विवेकवृद्धि कराने की शक्ति चाहिए। वैराग्याम्बुजभास्करम्-वैराग्य रूपी कमलों को खिलाने वाला भास्कर। विवेक से ही वैराग्य होता है। और गुरु के पास श्रवण करने से गुरु सेवा से और गुरु कृपा से वैराग्य बढ़ता है। वैराग्य के बिना ज्ञान लाभ नहीं होता है। यथा 'ग्यान कि होइ बिराग बिनु' (८६ ङ) यह 'भास्कर' प्रकाश करने वाला है, ज्ञान ही प्रकाश है, रवि है।' 'जासु ग्यान रवि भवनिसि नासा' (अयो० २७७-१) वैराग्य बढ़ाने वाले होने चाहिये इससे आगे कहते हैं कि 'ह्यघघन-ध्वान्तापहंतापहम्अघ = पाप, और घन = निबिड, ध्वान्त = तम, अन्धकार, पाप रूपी मेघों का और निबिड अन्धकार रूपी अज्ञान का नाश करने वाला वह सूरज है।' गुरु शब्द अर्थ भी 'अन्धकार का विनाश करने वाला' ऐसा ही है यथा—

'गुकारस्त्वन्धकारश्च रुकारस्तन्निवारकः।
अन्धकार निवारित्वाद्गुरुरित्याभिधीयते।
'गुकारः प्रथमो वर्णो मायादि गुण भासकः।
रुकारस्त्वपरो ब्रह्म माया भ्रान्ति विनाशनम्'

(गुरुगीता २३-२४) 'गुरुरेव परं ब्रह्म' (गु० गी० ३२) पर दिनकर (रवि) तो ताप को बढ़ाने वाला है और गुरु रूपी भास्कर तमका विनाश करने वाला होकर भी 'तापहम्' तापोंका त्रिविध तापोंका विनाश करता है यह गुरु भास्कर की अलौकिकता है। ज्ञान दायक और त्रिताप नाशकत्व मोहाम्भोधरपूग पाटन विधौ स्वःसंभवम्—मेघों के घनसमूहों को भगाने में केवल सूर्य का प्रकाश पर्याप्त नहीं है इसको प्रभञ्जन सहायक जब मिलता है तब ही यह हो सकता है। इससे गुरु देव में 'स्व-संभव'— आकाश में उत्पन्न होनेवाला वायु बना दिया है यहाँ। 'आकाशात् वायुः' (श्रुति) 'कबहुँ प्रबल बह मारुत जहँतह मेघ बिलाहिं' (कि: २६) 'चले भाजि (भय) मारुत ग्रसे' 'प्रबल पवनजिमि घन समुदाई' इससे गुरुजी के पास—मोहरूपी बादलों के समूहोंको भगाने की शक्ति होनी चाहिये। शंकरम्—गुरु की कृपा बिना कोई--'शं'—कल्याण—श्रेय, विश्राम, पा नहीं सकता है, यथा 'गुरु बिनु भवनिधि तरै न कोई। जौं बिरंचि संकर सम होई।' 'गुरुं शंकर रूपिणम्'। इससे और 'नररूप हर' से गुरु ही शंकर कल्याण करने वाले; मोक्ष, रामपद रति देने वाले, शंकर जी हैं। ब्रह्मकुलम्—ब्रह्म—वेद यथा 'ब्रह्माम्भोधि (समुद्भव)' 'कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि' (भ० गीता ३-१५) वेद ही जिन्हका कुल है' यथा रवि-कुल, 'आत्मा वै पुत्रनामाऽसि' इस वाक्यसे, जो वेदों का दूसरा रूप है' तीर्थानि दक्षिणे पादे वेदास्तन्मुखमाश्रिताः' (गु० गी० ८)' मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यम्' (गु० गी० ७६) सारांश यह निकला कि 'बोध जथारथ बेद पुराना' यह भी एक लक्षण गुरुके पास होना चाहिये। ब्रह्मकुलं—वेदका वंशज। वेद वंशज तो 'रामनाम है' ब्रह्माम्भोधि समुद्भवं श्रीरामनामामृतम्'। इससे यह भाव कि जो 'रामनाम स्वरूप है राम और नाम दोनों में अभेद है। और गुरु और राम में भी अभेद है। इससे जो नामकी परंपरा चलाते हैं (नाम मंत्रोपदेश देते हैं) कलङ्क शमनम्—कलंकों का नाश करने वाले। 'कामी पुनि किरहहिं अकलंका' 'अकलङ्कता कि कामी लहई' 'मच्छर काहि कलंक न लावा' इससे काम क्रोध लोभ मोह मद मत्सर इत्यादि सब माया का

परिवार ही कलंक है ये सब कलंक गुरु कृपासे ही मिट जाते हैं। ये सब दुःखदायक हैं दुःख भी एक कलंक है, दोष है। 'काल कर्म गुन दोष सुभाऊ। कछु दुख तुम्हहिं न ब्यापिहि काऊ' ऐसी गुरु कृपाशीर्वाद मिलने पर ही भुशुण्डीजी के सब संसय मिट गये। गरुड़जी भी यही कहते हैं कि 'तुम्हरी कृपा लहेउँ बिश्रामा' कारण यह कि 'तव प्रसाद प्रभु मम उर माहीं। संसय सोक मोह भ्रम नाहीं' 'जीवन जन्म सुफल मम भयऊ।। श्रीराम-भूप-प्रियम—'अस सज्जन बस मम उर कैसे। लोभी हृदय बसहि धन जैसे' 'ते सज्जन मम प्रान प्रिय गुन मंदिर सुख पुंज' सुनु मुनि सन्तन्ह के गुन कहऊँ। जिन्हतें मैं उन्हके बस रहऊँ' (अर० ४५-६) 'मोहि भगत प्रिय संतत' श्रीरामजी को भक्त ही प्रिय होते हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि गुरु राम भक्त—भगवद्भक्त भी होना चाहिये।

टिप्पणी—(१) इन सब लक्षणों को उपसंहार रूपसे 'दोहा ४५-६ से कहि न सकहि सारद श्रुति तेते' (दो० ४६-७ अरण्य) तक के सन्त-साधु-लक्षणोंमें देख लीजिये 'अमित बोध षट् विकार जित्, अनघ, अकामा. धीर, धर्म-गति, परम प्रवीना, विगत संदेह, गुरु गोविन्द प्रेमा, श्रद्धा, विरति विवेक, विनय, विग्याना, बोध जथारथ बेद पुराना, दंभ मान मद करहिं न काऊ, गावहिं सुनहिं सदा मम लीला—ये नमूने के लिये यहाँ दिये हैं। वाचक सूक्ष्मदृष्टि से मिलान करके देख सकेंगे। विस्तार भयसे संपूर्ण मिलान करके बताने का साहस नहीं किया।

(४) सद्गुरु का प्रधान कार्य श्रोता को संशय निवृत्ति करना, करने का प्रयत्न करना, और श्रोता का हित हो जाय ऐसी बातें कहना, उपदेश करना है। अरण्यकांड में एक दर सोलह उपदेश मिलते हैं। इन उपदेशों में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीति से श्रीसीताजी का अथवा अन्य नारिओं का संबंध मूल है। वह नीचे तालिका में वताया गया है।

अनु-क्रम	उपदेश किसका	किसको	मूल हेतु इत्यादि सीताजी या नारी का संबंध
१	नारद का	जयन्त को	सीताजी के चरनों में चोंच मारना 'सीता चरन चोंच हति भागा'
२	अनसूया का	सीताजीको	सीताजी इसमें हैं ही। विषय भी नारिधर्म है।
३	अगस्ति का	श्रीरामजी को	इससे निशाचरों के विनाश का कारन सीता जी ही होती हैं।
४	श्रीरामजी का	लक्ष्मणजी को	माया का प्रतिपादन इसमें प्रथम ही होता है। 'सो अवतरिहि मोर यह माया' सीताजी आदिमाया ही है।

५	शूर्पणखा का	रावण को	सीताजी का सौन्दर्य वर्णन ही रावण को प्रेरणा देने का मुख्य साधन है।
६	श्रीरामजी का	सीताजी को	प्रत्यक्ष सीताजी श्रोता और विषय माया सीता रखने का।
७	रावण का	मारीच को	श्री सीताजी को चुरा लाने में सहायता करना ही विषय है।
८	मारीच का	रावण को	सीताजी को चुरा लाने का विचार छोड़ देना इत्यादि।
९	जटायू का	रावण को	सीता जी को छोड़ के कुशल घर जाना ही विषय है।
१०	रामजी का	जटायू को	सीता हरण की बात दशरथ जी को न कहने के सम्बन्ध में।
११	रामजी का	कबन्ध को	वह शापजनित माया शक्ति से ही कबन्ध हो गया था।
१२	रामजी का	शबरी को	शबरी स्त्री है भक्ती के लक्षण कहे गये हैं "भक्ति स्त्री है।"
१३	शबरी का	रामजी को	सीताजी जी की खोज में क्या करना चाहिए यह इसका विषय है।
१४	रामजी का	लक्ष्मण को	कामदेव के प्रताप के वर्णन में मुख्य बल नारि
१५	रामजी का	नारद को	नारदजी का प्रश्न 'विश्वमोहिनी से विवाह के विषय में (वह भी हरिमाया निमित ही थी) ही था और उसमें नारीका छ ऋतुओं के रूपक में वर्णन।
१६	मानस कारका	मनको	'दीपशिखासम युवतितन मन जनि होसि पतंग' भजहि राम तजि काम मद करहि सदा सतसंग

टिप्पणी—इस प्रकार ४६ दोहों में सोलह जगह उपदेश है। इनमें १५ स्थानों में प्रत्यक्ष नारी जाति का सम्बन्ध ही मूल कारण वा प्रतिपादन का विषय है। अथवा वक्ता या श्रोता है। इन पंद्रह में से ग्यारह स्थानों में सीता जी का सम्बन्ध है। एक में हरिमाया का प्रत्यक्ष रूप विश्वमोहिनी और तीन में नारि। इतने अल्प विभाग में उपदेशों की इतनी संख्या दूसरे किसी भी कागड में नहीं है। (२) अरण्य कांड का 'मायापुरी'(सात पुरीओं में से तीसरी) होना महाकवि सम्राट शेखर ने कैसी कुशलता से चरितार्थ कर दिखाया है। (३) केवल इस कागड में ही माया ज्ञान विराग, जीव, शिव और भक्ति का तात्विक विवेचन हुआ है। (४) कागड के आरम्भ में गुरुलक्षणों का उपक्रम रूप से और अन्त में उपसंहार रूप से वर्णन है (५) अन्त के दोहे में भी 'सतसंग' शब्द से गुरु का ही निर्देश है। (६) मायारूपी नारि के फंदों में से छुटकारा पाने के लिये एक मात्र गुरुरूपी संत का संगही सिद्धिरूप साधन है। यह बताकर 'सोइ फल सिधि सब साधन फूली' यह सिद्धान्त सिद्ध करके बताया (७) इस कागड में ही श्रवणादिक नवधा साधन भक्ति और संतसंगादि नवविधा भक्ति का उल्लेख और वर्णन क्रमशः मिलता है। (८) अरण्य कागड में ही तीन प्रेमी भक्तों को सद्गति मिली है। इसमें एक पक्षी, वह भी गीध अधम खग आमिष-भोगी इसको सरूपता, शबरी एक स्त्री और वह भी एक भीलनी 'अधम ते अधम-अधम अति नारी। तिन्ह महँ (मैं) मतिमंद' इस भीलनी को मोक्ष। तीसरे भक्त शरभंग जी मुनि होने पर भी '(नाथ) सकल साधन मैं हीना' ऐसे थे। उनको भेदभक्ति देकर उनका उद्धार। (९) इस ४६ दोहों के छोटे से कागड में पाँच बार भक्तकृत भगवत्स्तुति है, और इनमें भी ज्ञान, विराग, भक्ति के लक्षण मिलते हैं। हाँ ग्यान नयन से निरखना अवश्य पड़ता है। (१०) महि निशिचर हीन करने की और रावण के बध की प्रतिज्ञा अरण्य कागड में ही श्रीरामजी के मुखारविन्द से हुई है। (११) रावण वध और सुरविमोचन नाटक की नांदी सूर्पणखा विरूपीकरण के निमित्त से इसमें ही की गयी है। (१२) इस नाटक का दूसरा अंक सीता हरण भी इसमें ही है। बाद के तीन कागडों में शेष दो अंक समाप्त होते हैं किष्किंधा में तीसरा व सुन्दर लंका मिलकर चौथा अंक समाप्त कर देते हैं (१३) अभागी, धन्य, चतुर इत्यादि अनेक शब्दों की सिद्धान्त रूप व्याख्याएँ इसी कागड में हैं। (१४) विविध नीतिओं के संक्षिप्त संकलित उपदेश इसी कागड में विशेष रूप से हैं। (१५) छओं ऋतुओं का संक्षिप्त वर्णन और ऋतुराज बसन्त का सुचारु सविस्तर वर्णन इसी में ही है। (१६) सुरहित दनुज विमोहन लीला, मनुज लीला का सुस्पष्ट सुरम्य निदर्शन केवल इसी कागड में किया गया है। (१७) पंद्रह मात्राओं के चरणों का प्रयोग चौपाई में प्रथम इसी कागड में प्रारंभ किया है और आगे सभी कागडों में इतस्ततः ऐसे चरणों की उपस्थिति हो गयी है। भाव प्रदर्शन कलाओं में से इस कला का उपयोग अरण्य कागड से शुरू हो गया है। ऐसे कम से कम १३१ चरण मानस में उपलब्ध हो गये हैं। और सभी स्थानों में वे सहेतुक हैं। (१८) मानस में कथा का संक्षिप्त वर्णन करने का प्रारंभ भी इसी में हुवा है। (१९) मानस की २८ स्तुतिसमूह रूपी नक्षत्र मगडल की रहस्यमय, विस्मय जनक, अतुल प्रतिभा निदर्शक रचना की ध्वनि जिस दोहे में निहित है वह इसी कागड में है। (दो० ४२ क)

———

श्रीराम बाल केलि

(मानस-तत्वान्वेषी पं० रामकुमारदासजी 'रामायणी' वे० भू० सा० र०, अयोध्या)

(१)

मानस राम चरित्र के भीतर भूरि गुणावलि है शुचि सी की।
वेदन को शुचि अर्थ अनूपम सोहति दिव्य कथा सियपी की ॥
सार 'कुमार' भर्‌यो सब शास्त्रन काव्य पुराणहुसों अति नीकी।
गागर में भर्‌यो सागर साँचु सो लागे लखे कविता तुलसीको ॥

(२)

सोने के खम्भन रेशम डोरिन पालनो डारि झुलावति हैं।
दूध पिआइ फुलेल लगाइ के गाइ कवौं हलरावति हैं ॥
चूमि 'कुमार' कपोलन लालन दै गुलचैं दुलरावति हैं।
घुघुना चटुआ चटुनी चट दै चुटकी चटकाइ खेलावति हैं ॥

(३)

सकल अनुग तजि एक दिन, अनुज शिशु सखन साथ।
खेलत खेलत सरजु तट, गये दूरि रघुनाथ ॥
एक पुरानी नाव लखि, भे सब तुरत सवार।
जल नावरि खेलन लगे शिशु गृह सुरति विसार ॥
भई राति झंझा उठ्यो तऊ हँसत सब बाल।
पूछ्यो कारण राम जब तब सब कहत हवाल ॥
नाव सु पुरानी पानी बढ्यो सरयू में घोर,
पाट को न पार नाहिं बूझत किनारा है।
भादवँ अमावस की राति अँधियारी घनी,
बादल अपार नभ सूझत न तारा है ॥
बालक अयानो तापै अकिलि हिरानो अबै,
कहत कुमार सबै अनर्थ करारा है।
ताहू पर मीत सब प्रफुलित चित्त हँसैं,
कारण कल्याण तुम कर्णधार धारा है ॥
जो निज जीवन नाव इमि दे रघुपति कर माहिं।
सो भव सरिसों अभय रह माया लखै न ताहिं ॥

रावण बध की तिथि

[विद्यार्थी पं० शङ्कर दयाल पाण्डेय]

(१ यात्रा दिन से छठे दिन, अर्थात् चैत्र शुक्ला १५ को रामचन्द्र जी चित्रकूट पहुँचे।

(२) दण्डकारण्य में, विभिन्न मुनियों के आश्रमों में रामचन्द्र जी दश वर्ष तक रहे और यह सारा समय उनका सुख से बीत गया, विराध का बध वे वनवास के आरम्भ में ही कर चुके थे।

तत्र संवसतस्तस्य मुनीनामाश्रमेषु वै।
रमतश्चानुकूल्येन ययुः संवत्सरा दश
(रा० ३।११।२६)

(३) बनवास के ग्यारहवें वर्ष के आरम्भ में श्री रामचन्द्र जी सुतीक्ष्ण मुनि के आश्रम में दूसरी बार आये और वहाँ पर अनुमान दश मास तक अर्थात् वर्ष काल की समाप्ति तक रहे।

सुतीक्ष्णस्याश्रमपदं पुनरेवा जगाम हा।
तत्रापि न्यवसद्रामः किञ्चित कालमरिन्दमः।।
(रा० ३।११।२८-२९)

(४) ग्यारहवें वर्ष के ग्यारहवें महीने में कार्तिक मास में श्री रामचन्द्रजी अगस्त्य मुनि के आश्रम में पहुँचे।

पद्मिन्यो विविधास्तत्र प्रसन्न सकिलाशयाः।
हंसकारण्डवाकीर्णाश्चक्रवाकोपशोभिताः ।।
(रा० ३।११।४०।।)

बारहवें वर्ष के ग्रीष्मकाल तक वहीं पर रहे।

(५) बारहवें वर्ष की वर्षा ऋतु के आरम्भ में भगवान श्रीराम पञ्चवटी में आये, जटायु से मिले।

'मयूरनादिता रम्याः दृश्यन्तै गिरय सौम्याः।
(रा० ३।१५।१३।१४)

वह वर्ष उनका वहीं समाप्त हो गया। तेरहवें वर्ष के मार्ग शीर्ष मास तक का समय भी वहीं पर निर्विघ्नता से व्यतीत हो गया।

वसतस्तस्यतु सुखं राघवस्य महात्मनः।
शरद्व्यपाये हेमन्तऋतुरिष्टः प्रवर्ततः॥
(रा० ३।१६।१)

शूर्पणखा के कर्ण-नासिका-छेदन के अनन्तर जन स्थान के चौदह सहस्र राक्षसों का वध हो लेने पर तेरहवें वर्ष के तीसरे महीने अर्थात् शिशिर ऋतु के अन्तिम मास फाल्गुन के आद्य पक्ष में रावण ने सीता जी का अपहरण किया॥

कुसुमापचयव्यग्रा पादपानत्य वर्तत
कर्णिकारान शोकाँश्च चूतांश्च मदि रेक्षणा॥
(रा० ३।४२।३०।३१)

(६) सीतान्वेषण के समय कवन्ध-बध और शबरी उद्धार के बाद अनुमान तेरहवें वर्ष के पाँचवें (वसन्त ऋतु के वैशाख) मास में भगवान् क्रमशः पम्पा सरोवर और ऋष्यमूक पर्वत पर पहुँच राज्यच्युत सुग्रीव से मिले।

गन्धवान् सुरभिर्मासो जात पुष्प फलद्रुमः
(रा० ४।१।१०)

(७) तेरहवें वर्ष के सातवें (आषाढ़) मास में बालि का बध हुआ। पश्चात श्रावण से लेकर पौष कृष्ण ८ अर्थात् चौदहवें वर्ष के आरम्भ तक श्रीराम चन्द्र जी माल्यवान् पर्वत पर रहे।

पूर्वोऽयं वार्षिको मासः श्रवणः सलिलागमः।
प्रवृत्ताः सौम्य चत्वारो मासा वार्षिक संज्ञिताः॥
कार्तिके समनुप्राप्ते त्वं रावणवधे यतः।
(रा० ४।२६।५३—१६)

(८) चौदह वर्ष के प्रथम मास मार्गशीर्ष की शुक्ला ११ को महावीर हनूमान् लंका में घुसे। अगले दिन द्वादशी को उनका श्रीजानकी जी से संवाद हुआ।

हिमव्यपायेन च शीतरश्मिरभ्युत्थितो नैक सहस्र-रश्मिः। (रा० ५।५।१)

(९) पौष कृष्ण अष्टमी उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में मध्यान्ह के समय।

अस्मिन् मूहूर्ते सुग्रीव प्रयाणमभिरोचये।
युक्तो मूहूर्ते विजये प्राप्तो मध्यं दिवाकरः॥
उत्तरा फाल्गुनी ह्यद्य (रा० ६।४।३।६)

(१०) पौष शुक्ला चतुर्दशी या पौर्णमासी को सेना के अग्रभाग को त्रिकूट पर्वत पर पहुँचा स्वयं सुवेल पर्वत पर चढ़े।

ततोऽस्तमगमत् सूर्यः सन्ध्यया प्रतिरंजितः।
पूर्ण चन्द्र प्रदीप्ता च निशा समभिवर्तत॥
(रा० ६।३८।१८)

श्रीरामचन्द्र जी की समस्त सेना एक मास में नल-सेतु द्वारा लंका तक पहुँच सकी।
(म० भा० ३।२८२।५०)

(११ इन दोनों कार्यों में माघ कृष्ण १ से अमावस्या तक के १५ दिन व्यतीत हो गये।

(१२) चतुर्दश वर्ष के चतुर्थ मास (माघ) की शुक्ला प्रतिपद् से भाद्रपद की अमावस्या तक, लंका से बाहर बानर और सेना मन्त्रियों से आक्षस राक्षसों की साधारण सेना के खण्ड युद्ध होते रहे। इन युद्धों में छः महीने निकल गये।

अयन्ते सुमहान् काल शयानस्य महावल।
सुषुप्तैस्त्वं न जानीषे मम राम-कृतं भयम्॥
(रा० ६।६२।१३)

उक्त युद्धों में प्रमुख योद्धा और सेनापतियों ने भाग नहीं लिया। आगे इन लोगों के जो युद्ध हुये उनके विवरण नीचे दिये जाते हैं।

(१३) भाद्र शुक्ला प्रतिपदा को स्वयं रावण द्वारा प्रेषित प्रधान सेना का बानरों के साथ संकुल युद्ध हुआ, इसी दिन दोनों ओर के प्रमुख वीरों का सब से बड़ा द्वन्द्व युद्ध हुआ।

निर्याण सर्वसैन्यानां द्रुतमाज्ञापयत्तथा।
(रा ६।४२।३२)

रक्षसां वानराणां च द्वन्द्व युद्धमवर्तत।

(१४) भाद्रपद शुक्ला प्रतिपदा की रात्रि के समय। अदृश्योनिशिताम् बाणान् मुमोचाशन्नि सन्निभान्। रामंच लक्ष्मणं चैव घोरै नगिमयैः शरैः॥

(रा० ६।४४।३७।३८)

(१५)	धूमाक्षवध-	भाद्र शुक्ला	२,
(१६)	वज्रद्रंष्ट बध	,, ,,	३,
(१७)	अकम्पन-बध	,, ,,	४,
(१८)	प्रहस्त बध	,, ,,	५,
(१९)	रावण का पराजय तथा पलायन	,, ,,	६,
(२०)	कुम्भकर्ण प्रबोध	,, ,,	८,
(२१)	कुम्भकर्ण बध—	,, ,,	१५,
(२२)	अतिकाय बध आश्विन कृष्ण	,,	१,
(२३)	त्रिशिरा-बध	,, ,,	२,
(२४)	देवान्तक बध	,, ,,	३,
(२५)	नरान्तक-बध	,, ,,	४,
(२६)	महोदर-बध	,, ,,	५,
(२७)	महापार्श्व-बध	,, ,,	६,
(२८)	मेघनादकृत ब्रह्मास्त्रप्रयोग	,, ,,	७,
(२९)	संजीवनी आनयन	,, ,,	८,
(३०)	कुम्भ निकुम्भ-बध	,, ,,	९,
(३१)	मकराक्ष (दिन में)		
(३२)	माया सीता (रात्रि के समय)		
(३३)	मेघनाद-बध	,, ,,	१३,
(३४)	मूल सेना-बध	,, ,,	१४,
(३५)	रावण-निर्याण आश्विन कृष्णा अमावस्या।		

अभ्युत्थातं त्वमद्यैव कृष्णपक्ष-चतुर्दशीम्।
कृत्वा निर्याह्यमावस्यां विजयाय कलै वृतः॥
रा० ६।९२।६४

(३६) रावणवध आश्विन शुक्ला नवमी

व्यतीते सप्तमे रात्रे नवम्यां रावणं ततः।
रामेण घातयामास महामाया जगन्मयी
(कालिका पुराण)

(३७) विजयोत्सव आश्विन शुक्ला दशमी

ततस्तु श्रवणाऽथदश्यां चण्डिकाँशुभाम्।
विसृज्य चक्रे शान्त्यर्थं बल-नीराजनं हरिः॥
(कालिका पुराण)

श्रीरामचन्द्र चरित्र के साधारण और असाधारण सैंतीस श्रेणी की सूची और उनका यथालब्ध समय प्रायः श्रीवाल्मीकीय रामायणके आधार पर ऊपर दिया गया है। कहीं केवल ऋतु का, कहीं ऋतु और मास दोनों का और कहीं पर नक्षत्र के आशय से पक्ष और तिथिका भी निश्चय हो गया है। किन्तु रामावतार की प्रधान घटना रावण वध के समय का स्पष्टतया उल्लेख रामायण में कहीं नहीं किया गया। अतः उनके निर्णय के लिये महाभारत और पुराणों की ही ओर अन्वेषक की दृष्टि दौड़ती है क्योंकि प्रेतिहास के सबसे बड़े कोश यही है। रावण वध के उक्त अन्धकाराच्छन्न अंश को (कालिका पुराण) प्रकाशित कर देता है कि आश्विन शुक्ला ९ को भगवान् रामचन्द्रजी ने रावण का वध किया और अगले दिन देवताओं ने सेना में रोशनी की। सम्भवतः नवमी को रावण देर से मरा और शेष समय भगवती दुर्गा की महती पूजा में व्यतीत हो गया, इससे दशमी के दिन देवी विसर्जनके अनन्तर देवताओं ने विजयोत्सव मनाया। यही कारण है कि नवमी तिथि दुर्गा पूजा की प्रधान तिथि मानी गयी और दशमीका नाम विजया हो गया। यद्यपि रावण का वध आश्विन शुक्ला ९ को हुआ परन्तु विजयोत्सव दशमी के दिन मनाये जाने से जनसाधारण ने रावण वध का वही दिन मान लिया और आज भी सारे हिन्दुस्थान की त्योहारी रामलीलाओं में दशहरा के दिवस ही रावण वध मनाया जाता है। रावणवध के दिन रामचन्द्र जी के वनवास के बारह दिन शेष रह गये थे। अब देखना चाहिये राम किस मास की किस तिथि को वनवास से अयोध्या में लौटे।

पूर्णे चतुर्दशे वर्षे पंचम्यां लक्ष्मणाग्रजः।
भरद्वाजाश्रमंप्राप्य ववन्दे नियतो मुनिम्॥
(रा० ६।२४।६)

अर्थात् नियमपरायण रामचन्द्र जीने चौदहवां वर्ष पूरा होते ही पञ्चमी के दिन भरद्वाज-आश्रम में पहुँचकर मुनि को प्रणाम किया। यहाँ पर केवल तिथि का ही निर्देश है, मास और पक्षका नहीं पर जब यह सिद्ध हो गया कि आश्विन शुक्ल १०को रावण का निधन हो चुका था तब साथ ही यह भी निश्चय हो गया कि रामचन्द्र जी जिस पंचमी को भरद्वाज मुनि के आश्रम में पहुँचे वह कार्तिक कृष्ण ५ ही थी। कार्तिक कृष्ण ६ को वनवास के चौदह वर्ष पूरे होते थे। इसलिए उस दिन भ्रातृ-भक्त भरत जी के पास रामचन्द्र जी का पहुँच जाना अतीव आवश्यक था।

उनके निश्चित समय पर वहाँ दर्शन नहीं देने से महान् अनर्थ की आशंका थी क्योंकि दृढ़व्रत भरत जी चित्रकूट में रामचन्द्र जी से कह चुके थे कि—

चतुर्दशेहिसम्पूर्णे वर्षेऽहनि रघूत्तम्
नद्रक्ष्यामि यदि त्वान्तु प्रवेक्ष्यामि हुताशनम्
(रा० २।११२।२४-२६)

अर्थात हे रघुश्रेष्ठ जिस दिन चौदह वर्ष पूरे-पूरे होंगे उस दिन आपको नहीं देख पाऊँगा तो मैं अग्नि में प्रवेश कर जाऊँगा। इसी तीव्र प्रतिज्ञा के प्रभाव से कार्तिक कृष्ण ५ को महावीर जी ने राम मेघ के चातक महात्मा भरत के पास उपस्थित होकर कहा कि—अविघ्नं पुष्य नक्षत्र योगेन श्वो रामं द्रष्टुमर्हसि। कलपुष्य नक्षत्र के समय बिना बाधा के आप रामचन्द्र जी को

देख सकोगे। इस सन्देश के अनुसार कार्तिक कृष्ण को पुष्य नक्षत्र के योग में भगवान् राम चन्द्र जी का भरत जी से मिलाप हुआ। कार्तिक कृष्ण सप्तमी को मध्याह्नकाल पुष्य नक्षत्र में ही चौदह वर्ष के सुदीर्घ काल के पश्चात् स्थगित श्री राम राज्याभिषेक पुनः सुसम्पन्न हुआ। यह विषय ध्यान देने का है कि रामचन्द्र जी का अभिषेक पहले भी पुष्य नक्षत्र में होने वाला था और अब दूसरी बार भी उसी नक्षत्र में हुआ। मालूम होता है कि कार्तिक कृष्ण ६ को मध्याह्नोत्तर और कार्तिक ७ को पूर्वाह्न में पुष्य नक्षत्र था। तभी यह हो सका कि भरत मिलाप और अभिषेक जैसे महत्वपूर्ण दोनों कार्य एक ही नक्षत्र में हो सके।

कार्तिक कृष्ण षष्ठी के दिन श्री राम का अयोध्या प्रवेश मान लेने पर यह सन्देह उपस्थित होता है कि जब चैत्र शुक्ला दशमी को वनवास का आरम्भ हुआ तो कार्तिक कृष्णा षष्ठी को वनवास के चतुर्दश वर्ष की पूर्ति किस तरह हुई। चौदह वर्ष में पाँच माह उन्नीस दिन की न्यूनता न रह जाती है। निस्सन्देह, उतने सन्देह में कोई आपत्ति नहीं हो सकती। पाण्डवों की बन यात्रा और अज्ञात चर्या के विषय में भी यही समस्या सामने आयी थी। विराट नगर के जो अपहरण युद्ध में बृहन्नला वेषधारी सत्यसन्ध अर्जुन को पहचान लेनेपर दुर्योधन ने होहल्ला मचाया था कि पाण्डवों के तेरह वर्षों की पूर्ति में पाँच माह और कई दिन की त्रुटि है। इसलिये प्रतिज्ञात समय से पहले प्रगट हो जाने के कारण इन्हें फिर वनचर्या और अज्ञात वास की आवृत्ति करनी पड़ेगी। उस समय परम धर्मज पितामह भीष्म जी ने यह कहा था कि—

पंचमे पंचमे वर्षे द्वौ मासा बुपचीयतः।
एषामभ्यधिका मासाः पंच च द्वादश क्षपाः॥
त्रयोदशानां वर्षाणामिति मे धीयते मतिः।
सर्वं यथावच्चरितं यद्यदेभिः प्रतिश्रुतम॥
येषां युधिष्ठिरो राजा कथं धर्मेऽपराध्नुयुः।
(महाभारत ४।५२।३-६)

अर्थात् हर पाँचवें वर्ष में दो महीने बढ़ते हैं। इस हिसाब से इन पाण्डवों के तेरह वर्षों में तो आजतक पाँच मास बारह दिन अधिक हो चुके। मेरी यह सम्मति है कि इन्होंने जो जो प्रतिज्ञाएँ की थीं; वे सब यथावत् पूरी करदीं? सभी पाण्डव महात्मा हैं और सभी धर्म तथा अर्थ शास्त्र के वेत्ता हैं। जिनका युधिष्ठिर जैसा सत्यवादी राजा है, वे धर्म विषय में कैसे अपराधी हो सकते हैं?

भीष्म जी की उक्त ज्योतिष-शास्त्रानुकूल व्यवस्था से यह सिद्ध है कि एतादृश विषयों में ३५४ दिन के तिथि बद्ध चान्द्र वर्षों का ही उपयोग होता है और ३६६ दिन वाले सौर वर्षों के अधिक मास मिलाकर उनकी पूर्ति की जाती है। अतः चान्द्र वर्ष की पूर्ति के लिए सौर वर्ष के अधिक मास की गणना न्यायसंगत है और उससे धर्म की कोई हानि भी नहीं होती। ऐसी दशा में महाराज राम चन्द्र जी अधिक मास गणना की उपेक्षा कैसे कर सकते थे। भरत जी भी अधिक मासों को गिने बिना क्यों रह सकते थे। अवश्य ही दोनों ओर से समय संगति पर पूर्ण विवेचना की गई है। चौदह वर्ष में पाँच माह और उन्नीस दिन अधिक मासों की गणना से बढ़ जाते हैं यही सोचकर श्रीराम कार्तिक कृष्ण षष्ठी को ही दर्शनोत्सुक और प्रतीक्षमाण भरत से जा मिले। कार्तिक कृष्ण षष्ठी में पाँच मास और उन्नीस दिन जोड़ देने से वनवास के चौदह वर्षों की यथावत पूर्ति हो जाती है। गणित शास्त्र का जो अपरिहार्य सिद्धान्त उस राजा दुर्योधन जैसे हठी राज्य के कामुक ने बिना आपति के स्वीकार कर लिया, उसे न्याय और त्याग के प्रथम शिक्षक कौशलेश

कुमार भगवान रामचन्द्र और भरत किस भाँति त्याग सकते थे।

उक्त सिद्धान्त से चतुर्दश वर्ष की पूर्ति का समाधान हो गया साथ ही यह भी निर्णय हो गया कि दशहरा श्रीराम विजय का स्मृति दिवस है अर्थात् रावण वध की तिथि दशहरा ही मानी जायगी। ×

× इस विषय पर 'मणि' में कई लेख जा चुके हैं। अब यह विवाद समाप्त किया जाता है। 'कल्याण' के 'रामायणांक' में इस विषय पर विस्तृत निबन्ध गया था। उसी के आधार पर लेखक ने ये तथ्य दिये हैं। इस प्रकार का अन्वेषण उत्साहप्रद है, क्योंकि इससे शास्त्रीय अध्ययन गम्भीर हो जाता है; किन्तु इसमें स्वपक्ष का दुराग्रह नहीं आना चाहिये। 'कलप भेद हरि चरित सुहाये' सा सभी ग्रन्थों के चरित एक मानकर कोई संगति लगाना बहुत समीचीन नहीं है। जैसे कल्प भेद से चरित भेद है, वैसे ही काल (तिथि) भेद भी है। अतः अमुक मत यदि शास्त्र के आधार पर है तो वह भी ठीक है। यह मान लेना चाहिये।

—सम्पादक

मानस

तुलसी के मानस में सप्तम सोपान वंधे,
सीतापति राम यश अथाह जल छायो है।

चारु चौपाइन के शोभत हैं कमल पत्र,
दोहा छंद सोरठन की कमल लसात है॥

संतो की सभा मानो सुन्दर अमराई लसे,
देखते बटोहियों का चित्त ललचात है।

मानस के प्रेमी वर्ग मज्जन करि मानस में,
'दास' कहें पाठ करत मोक्ष धाम जात हैं॥

—रामानुज वैष्णव 'दास'

सनमुख आयउ दधि अरु मीना,
कर पुस्तक दुइ विप्र प्रवीना।

अपशकुन :—

असगुन होंहि नगर पैठारा,
रटहिं कुभाँति कुखेत करारा।
खर सियार बोलहिं प्रतिकूला,
सुनि सुनि होंहि भरत मन सूला।
असुभ होन लागे तब नाना,
रोवहिं खर सृगाल बहु स्वाना।
बोलहिं खग जग आरत हेतू,
प्रगट भये नभ जहं तहं केतू।
दस दिसि दाह होन अति लागा,
भयउ परब बिनु रवि उपरागा।

इत्यादि

इस प्रकार से भक्तवत्सल भगवान श्री रामचन्द्र जी स्वयं श्री मुख से कहने लगे :— यद्यपि अशोक वाटिका से सिंधुपार श्री रामजी के निवास स्थान मध्य सैकड़ों मील की दूरी का अन्तर था पर प्रभुवाणी को माता जी द्वारा श्रवण करना ही सिद्ध हो रहा है कि वाणी प्रसारक यन्त्र उस काल में भी सुचारु रूपसे कार्य संपादन कर रहा था।

'कहेउ राम वियोग तव सीता,
मो कहं सकल भयउ बिपरीता।
नव तरु किसलय मनहुँ कृसानू,
काल निसा सम निसि ससि भानू।
कुवलय बिपिन कुन्त बन सरिसा,
बारिद तप्त तेल जनु बरिसा।
जे हित रहे करत सोइ पीरा,
उरग स्वास सम त्रिविध समीरा।
कहेहू ते कछु दुख घटि होई,
काहि कहौं यह जान न कोई।

परन्तु निम्न पद से स्वयं सिद्ध होता है कि पुत्र के समान पवन तनय जी के वाक्य कदापि हो ही नहीं सकते क्योंकि श्री सीता जी को माता कहते थे। 'प्रिया' शब्द का सम्बोधन सर्वथा श्री मुख ही वाक्य हो सकते हैं।

तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा,
जानत प्रिया ? एक मन मोरा।
सो मन रहत सदा तोहि पाहीं,
जानु प्रीति रस एतनेहिं माहीं।

अब (ब्राड कास्ट) वाणी प्रसार का अन्तिम पद आता है कि :—

प्रभु संदेश सुनत वैदेही,
मगन प्रेम तन सुधि नहिं तेही।

अन्ततो-गत्वा माता जी भी श्रीमुख ब्राडकास्टिंग वाक्य श्रवण कर तन्मय होकर उस तुरीयावस्था को (तल्लीनता) प्राप्त हो जात हैं। इधर वायु-पुत्र चैतन्य होकर पुनः कथ करते हैं।

कह कपि हृदय धीर धरु माता,
सुमिरि राम सेवक सुख दाता।

उक्त पदों का भाव यह है कि माता जी आपने तो राम नाम अंकित मुद्रिका प्राप्त करके भी जिसे कि पर्य्याप्त समय व्याह से बन गमन निषाद के दान समय तक (क्योंकि चढ़ावा दान में वह श्री दशरथ जी के द्वारा भेजी गई थी यद्यपि वह ब्रह्मा जी के द्वारा प्रदत्त मुद्रिका वाचाल थी) स्वकर धारण कर चुकी थीं तब भी उसे निरख कर यही भावना लक्षित किया था।

तब देखी मुद्रिका मनोहर,
राम नाम अंकित अति सुन्दर।
चकित चितव मुंदरी पहिचानी,
हरष बिषाद हृदय अकुलानी॥
जीति को सकइ अजय रघुराई,
माया ते अस रचि नहिं जाई।

द्वितीय अर्द्धाली मुद्रिका कथित वाक्य हैं कि मुझे राक्षस आदि कोई बना नहीं सकता।

कियो सीयप्रबोध मुँदरी दियोकपिहिं लखाउ।।

गीतावली सु०कां०पद सं० २२२ से भी प्रमाणित होता है।

प्रथम—भाव यह कि संदेहात्मक वाणी ही श्री सीता जी के द्वारा व्यक्त की गई परन्तु प्रभु का प्रेम सीता प्रति अवलोकन कीजिये—जब कि श्री सुग्रीव पट लाकर प्रदान करते हैं प्रभु यह नहीं विचार करने बैठते कि यह वस्त्र श्री सीता जी के हैं किंवा किसी अन्य रमणी के, वरन् उसे प्राप्त करते ही प्रभु ने हृदय से लगा लिया।

राम राम हा राम पुकारी,
हमहि देखि दीन्हेउ पट डारी।
मांगा राम तुरत तेहि दीन्हा,
पट उर लाइ सोच अतिकीन्हा॥

अतः सिद्ध होता है कि श्रीरामका प्रेम श्री सीता जी के प्रेम से द्विगुण था।

द्वितीय भाव यह कि जब वियोग वन्हि से सीता जी व्यथित हो जाती हैं उस पर रावण घाव पर नमक छिड़कने सदृश मास दिवस में प्राण हरण की भी प्रताड़ना दे जाता है तो शरीर त्याग हेतु अग्नि काष्ठ संचय का आदेश श्री त्रिजटा को दे डालती हैं। यद्यपि त्रिजटा ने समझा बुझा कर रात्रि में पावक अप्राप्त होने के बहाने से अथवा रात्रि में सधवा को न जलना चाहिये कहा और 'निस में न अनल से मिले' नीति की ओर संकेत करके अपने घर को चली जाती है परन्तु उसी विक्षिप्त दशा में श्री सीता जी कहने लगीं। इस वार्त्ता को त्रिजटा प्रसंग से ही चिंतवन कीजिये।

यह सपना मैं कहउँ बिचारी,
होइहि सत्य गये दिन चारी।
तासु बचन सुनि ते सब डरीं,
जनक सुता के चरनन परीं॥

श्री सीता जी को भयभीत करने वाली राक्षसियों में दृढ़ धारणा हो गई कि स्वप्न सत्य हो जावेगा तब तो यही हमारी महाराणी होवेंगी उस समय हम लोगों की बड़ी दुर्दशा करेंगी। अवश्य ही प्राण दंड तक देने में संशय न रहेगा। अतः भयातुर होकर के श्री सीता चरण बन्दन किया। पुनः रुककर प्रताड़ित करने के विपरीत :—

जहँ तहँ गई सकल तब,
सीता कर मन सोच।
मास दिवस बीते मोंहिं,
मारिहि निसिचर पोच॥

प्रत्येक स्वगृह न जाकर वस्तुतः सब मिल कर कहीं अन्यत्र एकाकी अज्ञात स्थान को चली गईं क्योंकि मास दिवस तक यदि दशानन का गुप्त चर उनकी विपरीत कार्य्य प्रणाली की सूचना उसको देता तो दशमुख उन सब को कठिन दण्ड अवश्यमेव दे डालता। अतएव दसकंधर उन राक्षसियों के आवन गमन समाचार से वंचित रह गया।

त्रिजटा सन बोली कर जोरी,
मातु बिपति संगिनि तैं मोरी।
तजौं देह करु बेग उपाई,
दुसह बिरह अब नहिं सहि जाई॥
आनि काठ रचु चिता बनाई,
मातु अनल पुनि देहि लगाई।
सत्य करहि मम प्रीति सयानी,
सुनै को श्रवन सूल सम बानी॥
सुनत बचन पद गहि समुझायसि,
प्रभु प्रताप बल सुजस सुनायसि।
निसि न अनल मिलि सुनु सुकुमारी,
अस कहि सो निज भवन सिधारी॥
कह सीता बिधि भा प्रतिकूला,
मिलहि न पावक मिटिहि न सूला।
देखियत प्रगट गगन अँगारा,
अवनि न आवत एकउ तारा॥
पावक मय ससि स्रवत न आगी,
मानहुँ मोहि जानि हत भागी।

सुनहि विनय मम विटप असोका,
सत्य नाम करु हरु मम सोका ॥
नूतन किसलय अनल समाना,
देहि अगिनि जनि करहि निदाना।
देखि परम विरहाकुल सीता,
सो छन कपिहि कलपसम बीता ॥
कपि करि हृदय विचार,
दीन्ह मुद्रिका डारि तब।
जनु असोक अँगार,
दीन्ह हरषि उठकर गहेउ ॥

न अग्नि प्राप्त हो सकी, न प्राण त्यागन किया जा सका। इधर त्रिजटा, चन्द्र, अशोक वृक्ष एवं नव तरु कोपलों से तन भस्मसात करने हेतु पावक की माँग होती है पर उधर श्री राम जी की वियोग व्यथा देखिये कि वह चन्द्र को सूर्य के समान शरीर दग्ध कर देने वाला भासित कर रहे हैं। किशलय तथा कंज के अविकसित कोमल कोपलें को पावकमय एवं भाला सदृश अवलोकन करते हैं। उनके मन की दशा क्या कहना है वह श्री सीता जी के वियोग ज्वाला में दग्ध होकर तथा प्रेम में लीन होकर उन्हीं के सन्निकट रहता ही था।

फल स्वरूप यदि इस विरह प्रज्ज्वलन को निरख कर श्री बजरंग दादा राम जी के प्रेम को श्री सीता के प्रेम से द्विगुण कह रहे हैं तो मेरी समझ में तब भी न्यूनता ही अवशेष रह जाती है। उन्हें तो अनेकों गुना कहना चाहिये था।

यहाँ पर यह आशंका आविर्भूत हो जाती है कि यदि माता जी को प्राण त्यागना ही अभीष्ट हो चुका था तब तो पावक के अतिरिक्त अन्य सुगम उपाय थे जैसे वृक्ष-पतन, तालाब कूप को माध्यम करके तथा फाँसी द्वारा प्रभृति अनेकों रूप से भी यह अशुभ कार्य संपादित किया जा सकता था पर अनल ही का क्यों उस समय आवाहन किया जा रहा था अवश्य ही कोई विशेषता रही होगी।

समाधान—प्रथम यह कि अग्नि द्वारा यज्ञ प्राप्त फल से ही प्रभु का अंशावतार था अतः पावक ही प्रभु का जन्म स्थान हुआ। सुतरां श्री जानकी जी उसी में केन्द्रीभूत होना चाहती थीं। इसका प्रमाण बाल कांड से ही प्राप्त होता है कि:—

भगति सहित मुनि आहुति दीन्हे,
प्रगटे अगिनि चरू कर लीन्हे।
यह हवि बाँटि देहु नृप जाई,
जथा जोग जेहि भाग बनाई ॥

द्वितीय—पावक पुँज में माता जी का पूर्व रूप आवरित था क्योंकि यह तो उनका स्वयं की प्रतिच्छाया मात्र शरीर था।

सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुशीला,
मैं कछु करब ललित नर लीला।
तुम्ह पावक महँ करहु निवासा,
जब लगि करउँ निसाचर नासा ॥
जबहिं राम सब कहा बखानो,
प्रभु पद धरि हिय अनल समानी ॥
निज प्रतिबिंब राखि तहँ सीता,
तैसेइ सील रूप सुविनीता ॥

तृतीय—शास्त्रोक्त मत है कि सधवा स्त्री अनल विपरीत अन्य मार्ग अवलम्बन मात्र से प्राण त्यागन नहीं कर सकती थी अतः अग्नि की खोज यथोचित ही थी।

इस भाँति से स्वयं सिद्ध हो जाता है कि रेडियो विस्तार अत्यन्त प्राचीन तथा भारत की ही चिरदेन है। ग्रामोफोन भी तो चिरकालीन महाराजा विक्रमादित्य के समय की अनुपम देन है। बत्तीस पुतलियों की आख्या-

यिका जो 'सिंहासन बत्तीसी' अथवा 'वैताल पचीसी' में इतिहास विदित है क्या उक्त यंत्र उसी के नाम परिवर्त्तन के—कृत्रिम रूप में नहीं हैं ? वर्त्तमान 'हैट' टोपी तथा साफा का ही सम्मिश्रण उन्नतिशील रूप है। अतएव सभी यंत्रादि वस्तुओं के समयानुसार केवल नाम परिवर्त्तन किये गये हैं परन्तु इन सब का पाश्चात्य निवासियों ने केवल अन्वेषण मात्र किया है। अतएव यह उनके मस्तिष्क की उपज नहीं कही जा सकती।

श्री रघुवीर प्रतापतें सिंधु तरे पाषान।
ते मतिमंद जेराम तजि भजहिं जाय प्रभु आन॥

॥ सियावर रामचन्द्र की जय॥



मानुस तन प्रभु पाने को है।

नित होता है साँझ सवेरा।
काल दिया करता है फेरा॥
क्षण-भंगुर है जीवन तेरा।
फिर क्यों करता तेरा मेरा॥

मुट्ठी बाँधे आया था तू।
हाथ पसारे जाने को है॥

'भजन बुढ़ापे में कर लूँगा।
तब ही भव-सागर तर लूंगा॥'
किंतु जीर्ण-रथ कभी चला है ?
सूखा तरुवर कभी फला है॥

अभी शक्ति है और जवानी;
यही समय तर जाने को है।

पुत्र, कलत्र, मित्र जो तेरे।
स्वारथ से रहते नित घेरे॥
सभी यहीं पर रह जायेंगे।
साथ कर्म-फल ही जायेंगे॥

काया भी जो मल मल धोता;
एक दिवस जल जाने को है।

—श्याम सुन्दर रावत

—:०:—

दासदोष सुरति चित रहित न दिये दान की

[श्री फकीर राम देवांगन]

निज गुण अरिकृत अनहितौ-
दास दोष सुरति चित रहति न दिये दान की।

वास्तव में श्री राम चन्द्र जी भगवान अपने भक्त के दोषों की ओर ख्याल तक नहीं करते। उनका स्वभाव ही है कि उनमें उनके केवल गुण ही गुण देखते रहते हैं। भक्त के द्वारा जान-बूझ कर भी यदि कोई अपराध हो जाता है तो भी उसे वे दण्डित नहीं करते, बल्कि भक्त के सुखों की ओर ही उनका लक्ष्य रहता है।

दुष्टों के दमन और उनके सुधार के लिए भगवान ने मनुष्य रूप धारण किया और उस उद्देश्य को कार्य में परिणित करते हुए बालि और रावण का बध किया। बालि और रावण में जो अनेक दुर्गुण माने गये थे उनमें से कुछ वहीं सुग्रीव और विभीषण में भी पाये गये थे। पर भगवान ने सुग्रीव और विभीषण का वध नहीं किया, वरन उन्हें उनके स्थान पर राजा बना दिया—

जेहिं अघ बधेउ व्याध जिमि बाली।
फिरि सुकंठ सोइ कीन्ह कुचाली॥
सोइ करतूति बिभीषण केरी।
सपनेहुँ सो न राम हिय हेरी॥

यह क्यों? इस लिये कि—
दास दोस सुरति चित्त रहति न दिये दान की।

यदि भगवान के सम्मुख शरणागत होकर सुग्रीव और विभीषण गये नहीं होते तो इनकी कुशलता कहाँ तक सम्भव थी? भगवान भक्तों के साथ एकता का सम्बन्ध स्थापित कर लेने पर भक्तों के अशिष्टता पर भी ध्यान नहीं देते यहाँ तक कि—

प्रभु तरु तर कपि डार पर
ते किय आपु समान।
तुलसी कहूँ न राम सो
साहिब सील निधान॥

भगवान अपने भक्तों (दासों) पर इतनी कृपा क्यों करते हैं। इसका एक मात्र कारण उनका विरद ही है। वे शरणागत विभीषण से तथा सुग्रीवादि वानरों से भुजा उठाकर अपनी विरद को प्रत्यक्ष करते हैं कि—

पुनि-पुनि भुजा उठाइ कहत हौं
सकल सभा पतिआउ।
नहिं कोउ प्रिय मोहि दास सम
कपट प्रीति बह जाउ॥
'सब से अधिक दास पर प्रीती',

इसी प्रीति के कारण ही भक्त के दोषों पर भगवान ध्यान नहीं देते—

साहिब होत सरोष
सेवक को अपराध सुनि।
अपने देखे दोष
सपनेहुँ राम न उर धरें॥

क्योंकि
दास दोष सुरति चित रहति न दिये दान की।

भक्त वत्सल भगवान की जय।

सेवा

(श्री रामप्राद जी पाण्डेय)

सेवा का तदात्म्य सम्बन्ध परिश्रम और निःस्वार्थता से है। जीवन को महान और चमत्कार बनाने की क्षमता सेवा भाव में है। वह सेवा, सेवा नहीं जिसमें स्वार्थ का सम्मिश्रण हो। प्रेम में लालच का समावेश वासना में परिवर्तन हो जाता है। सेवा में स्वार्थ वाणिज्य हो जाता है।

अब हमें परिश्रम को सेवा के कस पर लाना है। मानव जीवन का लक्ष्य और पराकाष्ठा मोक्ष प्राप्ति ही में बतलाए हैं। मोक्ष प्राप्ति के साधन हैं—कर्म, ज्ञान, उपासना। इसी के सूक्ष्म अंश में सेवा है। कर्म करने के लिए उसकी अपूर्व सफलता के हेतु ज्ञान की नितांत आवश्यकता है। उपासना तो परिश्रम के बिना हो ही नहीं सकती। मानव के अभ्यांतरिक स्थल में पवित्रता का जब प्रादुर्भाव होने लगता है तब उसके प्रत्येक अंग में नम्रता आने लगती है। अगर महलों में रहने वाले झोपड़ी के कष्ट का अनुभव करें तो, उन्हें शान्ति की एक रूप-रेखा झलकती दिखाई पड़ेगी। सेवा का अपूर्व दान परिश्रम और निःस्वार्थता की वेदी पर ही चुकाया जा सकता है।

न ऋते श्रांतस्य सख्याय देवाः।

अगर हम परिश्रम करने से भागते हैं तो भगवान भी हमारी मदद नहीं करते। उपासना और सेवा में कम अन्तर है।

तस्मादसक्तः सततं कार्य्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः॥गीता

प्रभु पद सेवा बिना भक्ति नहीं मिल सकती और भक्ति बिना मोक्ष नहीं।

मोक्ष सुनु खगराई, रहि न सकइ हरि भक्ति बिहाई।

सेवा किसी की भी करें, पर भगवान से शक्ति मांगने की आवश्यकता पड़ती है। सेवा में लेने की कोई चीज नहीं रह जाती परन्तु कुछ देनी ही पड़ती है। तभी हम सबके प्यारे बन सकते हैं।

सुचि सुशील सेवक सुमति प्रिय कहु काहि न लाग।
श्रुति पुरान कह नीति असि सावधान सुनु काग॥
सबके प्रिय सेवक यह नीती। मोरे अधिक दास पर प्रीती॥

स्पष्ट वाक्यों में—

सत्य कहउँ खग तोहि सुचि सेवक मम प्राण प्रिय
असविचारि..............।

और जो निरन्तर शुद्ध हृदय से सेवा करते हैं:—

करि प्रेम निरंतर नेम लिए।
पद पंकज सेवत सुद्ध हिएँ॥
सम मानि निरादर आदर ही।
सब संत सुखी बिचरंति मही।

महात्मा गांधी में निस्वार्थ सेवा भाव कूट-कूट कर भरा था और यही कारण था कि विदेश के दुश्मन भी अपनी टोपी उनके चरणों में रख भाग गये।

अब सेवा में स्वार्थ का फल भी देखना होगा। राजा भानुप्रताप ने धर्म सेवक, प्रजा सेवक होते हुए भी अपने सत्वगुण पर विश्वास न कर संसारिक सुखों की कामना किया और जो हुवा सो देखें।

१ प्रजा पाल अति बेद बिधि।
कतहुँ नहीं अघलेस॥
प्रभुहि तथापि प्रसन्न बिलोकी।
मागि अगम बर होउँ असोकी॥
२ जरा मरन दुख रहित तनु समर जितै जनि कोउ।
एक छत्र रिपुहीन महि राज कलप सत होउ।
३ काल पाइ मुनि सुनु सोइ राजा।
भयउ निसाचर सहित समाजा॥
दस सिर ताहि बीस भुज दंडा।
रावन नाम बीर बरि बंडा।

आधुनिक युग में जो भी महापुरुष हो रहे हैं सेवा का ही व्रत ले आगे बढ़ रहे हैं। भगवान भी अपने व्रत निभाने के लिए इस पृथ्वी पर अवतार लेते हैं और सज्जनों की सेवा करते हैं।

वर्तमान समय में संत विनोवाभावे सेवा को ही अपनाकर कार्य की सफलता मानते हैं। और निस्वार्थ सेवा पर सभी इष्ट माथा टेक रहे हैं।



मार्च मास में संघ के १७२ नये सदस्य बने। इस मास में १० नई शाखायें स्थापित हुईं। जिनका विवरण इस प्रकार है:

शाखा संख्या १३५६ इमामगंज (गया) सदस्य १६ मंत्री श्री सूर्यानन्द जी पाठक शा० सं० १३५७ सिलहरा (कानपुर) सं० १८ मं श्री जमुना नारायण जी। शा० सं० १३५८ चिलाचोन खुर्द (होशंगाबाद) स० ११ मं श्री रूपसिंह जी पटैल। शा० सं १३५ ठेलका (दुर्ग) सं १३ मं० श्री अयोध्याराम जी साहू। शा० सं १३६० देवरिया (यू० पी०) स० १२ मं श्री रामप्रसाद जी वकील। शा० सं० १३६१ पैकौली (देवरिया) सं० १४ मं० श्रीबेनीमाधव जी। शा० सं १३६२ सिल्हेटी (दुर्ग) स० १२ मं० श्री गोरेलाल जी शा० सं १३६३ बम्हौरी (होशंगाबाद) स ६ मं० श्री पं० जानकी प्रसाद जी। शा० सं० १३६४ धनौरा (दुर्ग स १२ मं० श्री डेरहाराम जी। शाखा संख्या १३६५ सिसवा (बनारस) सदस्य १४ मंत्री श्री राधेश्याम जी पाण्डे।

विविध-समाचार

बन्देमऊः—फाल्गुन शुक्ल एकादशी को २२ सदस्यों द्वारा अखंड पाठ हुआ। द्वादशी को प्रभात फेरी नगर-कीर्तन हुआ।

बाँदाः—ता० १२-२-५३ को हाटकेश्वर जी के मंदिर में किष्किन्ध्याकाँड तथा सुन्दर कांड के १८ पाठ हुए। बाद में कीर्तन हुआ। २४ घंटे तक ॐनमः शिवाय का अखंड कीर्तन हुआ।

—लक्ष्मणकरण

घेगाँवः—चैत्र पूनम को सुन्दरकाण्ड का पाठ तथा भजन कीर्तन हुआ।

—मुकाती पाटीदार

देवरियाः—श्री जगन्नाथ प्रसाद विशारद व मोहनलाल गुप्ता के यहाँ श्री शिवमंगल त्रिपाठी व्यास की कथा एक मास से हो रही है।

—उमाशङ्कर पाण्डे

बम्बईः—ता० २२-३ ५३ को भायखला पुलिस स्टेशन हंस राजलेन श्री शङ्कर श्री के मंदिर में पं० सीताराम जी शास्त्री द्वारा श्री मानस का २४ घन्टे का अखंड पाठ किया गया। पाठ समाप्त के बाद हवन, आरती और श्री रामजन्मोत्सव मनाया गया। बादी में श्री शास्त्री जी तथा प्रयाग-निवासी श्री कुंजबिहार जी का प्रवचन होकर कीर्तन हुआ।

—सुन्दरलाल श्रीवास्तव

गोमियाँ:—राधेश्याम संकीर्तन कमेटी कायम हुई। जिसमें सभी सदस्य गण रामायण पाठ तथा हरिनाम-संकीर्तन करने का वचन दिये। जिसमें ता० १२, १४, १५, १८, २०, २८ फरवरी तथा २,१३, १४,१५,१७,२०,२१,२७,२६,३१ मार्च को विविध सदस्यों के यहाँ पाठ तथा कीर्तन हुआ। बाद में प्रसाद वितरण होता था।

—हीरालाल

परौंख:—ता० ८,१५,२२, फरवरी तथा ३, १०,१७,२४,३१, मार्च सन् ५३ को श्री हनुमान चालीसा के पाठ १८,११,११,११,१४,११,१२,११ और सामूहिक पारायणमय विवेचन के, मानस अन्ताक्षरी, मानसगान, आरती एवं प्रसाद वितरण होता था।

शिवरात्रि को अखंड पाठ हुआ पूर्त्ति पर हवन तथा प्रसाद वितरण हुआ।

सरगाँव—में श्री मद्भागवत पारायण तथा विष्णु यज्ञ १० दिन तक हुआ। प्रवचन तथा भण्डारा हुआ।

चिमकुनी—में मानस सम्मेलन तथा श्रीमद्भागवत सप्ताह-पारायण हुआ।

—कुँ० धनसिंह भदौरिया

बकानी:—यहाँ एक भक्त प्राचीन श्री गणेश जी के मूर्त्ति को नित्य जल चढ़ाता था। एक दिन अचानक जल चढ़ाते समय मूर्त्ति फट गई। फट जाने पर श्री कन्हैयालाल जी के प्रयत्न से दूसरी मूर्त्ति स्थापित की गई। प्रतिष्ठा। समय मूर्त्ति को शीशा दिखाते समय शीशा चूर-चूर हो गया। इस घटना से प्रजा दंग रही। बाद में प्रवचन हुआ।

पासीघाट:—श्री बालाजी महावीर की पूजा प्रतिष्ठा रामायण और पुस्तकालय तथा होम यज्ञ हो कर प्रसाद वितरण हुआ। श्री हनुमान जयन्ती-उत्सव मनाया गया।

—श्रीपति पं० सम्राट काशी

सुपौल:—ता०१२-४-५३ को ११ पाठ एकाह मानस के हुए। बाद में हवन प्रसाद वितरण हुआ।

—मुसहरू चौधरी

चैत्र पारायण-समाचार

नीचे लिखे स्थानों से पारायण होने की सूचना आई है:—

डबरा—१०८ पाठ सामूहिक—रामगोपाल वर्मा। **नागौद**—६ पाठ—शुभचन्त किशोर। **गुलाबपुरा**—१५ पाठ-मीसालाल मोदी। **विरार**—५पाठ-भागवत पाण्डेय। **करकवेल**—१६ पाठ, गुलजारीलाल। **पिनाहट**—१४ पाठ-गजाधर प्रसाद। **किरावली**—२२ पाठ-शान्तिस्वरूप। रामगढ़-११पाठ-रामगोपाल सराफ। **चिरमिरी**—८ पाठ-नौरतनलाल अग्रवाल। **पनवाड़ी**—८ पाठ-लल्लूराम स्वर्णकार। **कुगदा**—६ पाठ—उदयराम। **कोटमी**—१२ पाठ-रामरंगीले दास वैष्णव। **नरसिंहपुर**—१४ पाठ—कोदूलाल ठाकुर। **हसामपुर**—६ पाठ विद्याधर शर्मा। करेली गञ्ज—१६ पाठ—रामप्यारी वाई भार्गव अलीगढ़—३ पाठ—गोवर्धननाथ शुक्ल। **कदौड़ी**—८ पाठ—रामप्रतापसिंह। **जरगांव** ६ पाठ सरस्वती प्रसाद त्रिवेदी। **अनगड़ा**—१०पाठ, **साल्हन**—३ पाठ—वनवारीराम। **धुरकोट:**—३ पाठ-धूवसिंह रंजीतसिंह **गिधौरी**—१४ पाठ-बाबूराम तिवारी। सिवनी—पाठ—हनुमान प्रसाद। **साले चौका रोड**—पाठ—लालचन्द्र दुर्गाप्रसाद पटैल। **अमोदा**—पाठ—नकछेदप्रसाद। **दुलमी**—७ पाठ—बलदेव

दाँगी। रंजीतनगर—६ पाठ—शालिगराम त्रिपाठी। चित्तौड़गढ़ ५ पाठ—बन्शीलाल मालीवाल। सिवनी ५ पाठ—रामसहाय शर्मा। करेली—१२ पाठ, गोवरगाँव १२ पाठ, नयाखेड़ा—६ पाठ—मूंगा राम पाठक। घेगाँव—४६ पाठ, रसगाँव—२४ पाठ—विष्णुदास साधु। सिंगोलि—७ पाठ—मांगी लाल। बन्देमऊ—२१ पाठ—राजाराम वर्मा। ऊन—५१ पाठ—नारायण नत्थू। डोंगरगाँव—४५ - बिहारीलाल। सूखरी—४० पाठ—जीवन लाल कायस्थ। लखनऊ—१३ पाठ—शालिग्राम दीक्षित। विहार शरीफ—११ पाठ—विन्ध्येश्वरी प्रसाद। परौंख—३ पाठ, झींझक—५पांठ—कुँ० धनसिंह भदौरिया। चोरल ६ पाठ—भागीरथ मिस्त्री। हरसिंहपुर — ५ पाठ — रामकंकन तिवारी। चन्दनिया—६ पाठ—डा० रूपमोहनसिंह। बेटमा—८पाठ—बालमुकुन्द शारदा। काशीखेरी — १७ पाठ—टीकमसिंह। हर्रई—६ पाठ कन्छेदीलाल। गोटेगाँव—२ पाठ—परमानन्द नेमा। डेहरी—१२ पाठ, वालेपुर २२ पाठ — कन्हैयालाल। सिलौटी—१२ पाठ, शोभाराम साहू। ऊन—३५ पाठ—सूरजसिंह मडंलोई। दौलतपुर—४५ पाठ—गोधनसिंह। शेरगढ़ — १२ पाठ — हरिप्रसाद उपाध्याय। घाटोली—६ पाठ—कन्हैयालाल शर्मा। भेलसा, कागजीपुरा, लखेरेघाट—श्यामलाल। लादीगढ़—अम्बिकाप्रसाद। नवीनगर—मुकुन्दलाल अग्रवाल। छेरकापुर—चोवाराम काश्यप। पागरा—गनेशप्रसाद शर्मा। जयसिंहनगर—दुर्गाप्रसाद। वासन पाली—शालिग्राम त्रिवेदी। फुलवरिया—कमलाकान्त उपाध्याय। वर्रा—श्याम लाल गु। ठिवगांव—शिवराम सोनी। चीचली लेखराम। मुरपा—हरखु महतो। वह्वलपुर—हरनामसिंह। सेंधवा—अमरचन्द्र लटूरिया। विहटा—वासुदेव राय। जबलपुर—स्वामीदीन। वसहा—सूर्यनारायण चौधरी। गोहद—रा० ना० लहास—रामविलास। दुर्जनपुर—५पाठ—मोतीलाल। खुपौल—११पाठ—८ पाठ अयोध्या में किये—महावीर चौधरी।

रामवन समचार

मानस आश्रम—मार्च मास म मानस का एक सम्पूर्ण अखंड पाठ नित्य होता रहा। इस मास में श्री मारुति रागभोग में १७६।≡) की आय हुई और खर्च ८६॥)। हुआ। मानस आश्रम में आय ३६५)। की हुई और खर्च ३७४॥)। हुआ। बचत क्रमशः ८६॥।=)॥, २०।) कुल ११०।=)॥। की हुई। जो पिछली कमी ६०६≡) में से घटाने पर ७६८॥)। की कमी रही। इस मास में श्रीराम संस्कृत विद्यालय में १५६=)॥ सहित कुल कमी २२६२।-) की रहीं आशा है खर्च हुआ पिछला कमी १३३४।-) प्रेमी जन इसकी पूर्त्ति की व्यवस्था करेंगे।

मानस आश्रम

६-३-५३

४॥=) श्री ज्वालाप्रसाद, सतना

१५) श्री सोहनलाल वाहोती, कलकत्ता

११-३-५३

॥) श्री गोपाल लाल, सतना

१६-३-३

१०) श्री अमरचन्द्र लटूरिया, सेंधवा

११) श्री विष्नुदास साधु घेगाँवद्वारा

१८-३-५३

५०) श्री रा० व० सेठ श्रीराम दुर्गाप्रसाद, तूमसर

२००) श्री शालिकराम मेहरोत्रा, श्रीरामजी, कलकत्ता १००) १८०)

१६-३-५३
५) श्रीसदाराम साहू, बांधाबाजार
२०-३-५३
१५) श्री रामनाथ कानोड़िया, कलकत्ता
११) श्री दयाराम अग्रवाल, तितिलागढ़
११) श्रीमती रामनाथ टण्डन, इटावा, (एक तस्तरी चाँदी)
२१-३-५३
३) श्री बी० पी० शुक्ला, पन्ना
२२-३-५३
२) श्री लल्लू महराज, सतना
२) श्री बाबू हरनाथ जी रीवाँ
२) श्री बाबू रामनारायण जी रीवाँ
२३-३-५३
५) श्री रामस्वरूप गुप्ता, मदनगंज
१०) श्री ज्वालाप्रसाद राय, कलकत्ता
३) श्री अम्बिकाप्रसाद, मुअरसही
३४।=)। कुल चढ़ोत्री

३६५)।

श्री मारुतिरागभोग

४-३-५३
१०) श्री सुरेन्द्रप्रसाद गर्ग जयपुर
५-३-५३
२) श्री छोटेलाल अग्रवाल, इलाहाबाद
१।) श्री नन्दकिशोर भंडिया, मान्डल
६-३-५३
५) शाखा जगन्नाथ पुर श्रीमन्त्री पुरुषोत्तम सिंह द्वारा
११-३-५३
२) श्री नन्दकिशोर पाधा, कानपुर
१३-३-५३
१५) श्री रामचन्द्र शर्मा, तितलागढ़
१४-३-५३
११) श्री ओमप्रकाश जी देलही
११) श्री किशनस्वरूप माथुर देलही

१६-४-५३
२) श्री रामस्वरूप दुबे, लश्कर
४।।।) सर्व श्री मेहतरु १, मदनसिंह १।), कामताराम १।), फगुआदास १।), भखारा
२।।) उमरावसिंह १।), श्री गोविन्दसाह १।), हटकेश्वर देवी, रांची
१७-३-५३
१०) सर्व श्रीमती रामानन्दी देवी ५), सुमित्रा ५)
५) श्री रामस्वरूप जी, देहली
५) श्री हरिहर जी चैतन्य कलेरा
१०) श्री चन्देल सिंह हल्दी
१६-३-५३
१।) श्री जगदीश चन्द्र गांधी, नैनीताल
१।) श्री रामरतन शर्मा. झांसी
२१-३-५३
२।।) श्री तिलमनी जी १।), छोटा वया १।) वरियावां
५) श्री हनुमानदास प्रागदास, कलकत्ता
२३-३-५३
१।।) श्री बाबू मनबहालसिंह, कैम्बो
५) ,, रामसजीवन शर्मा, बोरतलाव
५) ,, भागवत पाण्डेय, विरार
१।) ,, रामानुजदास वैष्णव कोटमी
१।) ,, जगन्नाथ सिंह सिउढ़
२३-३-५३
१०) श्री गोपाल दास, सतना
२४-३-५३
१६) श्री महिला समाज चीचली
५) गुन्नाजी ताम्रकार चीचली
५) ,, मीठालाल जी राठी द्रुग
४) ,, गुरुदयाल जी भेलसा
२) ,, पुनमिर गोस्वामी बिलारी
५) ,, चन्द्रशेखर त्रिवेदी नागपुर

३१-३-५३
६।≡) श्री पं० मिश्रीलाल त्रिपाठी गढ़पुर
२॥) श्री एन० के० पाठक छोटामुरी

१७६।≡) कुल। दाताओं को धन्यवाद।

कुटीर विभाग

सेंधवा कुटीरः - में १६॥) खर्च हुए। पिछली कमी १६७।)॥ सहित अब १८६।।)॥ बाकी है।

कोरी कुटियाः—में इस मास में काम नहीं हुआ और न कोई आय ही हुई। पूर्ववत् ४०६।≈) आना बाकी है।

नर्मदाखंड कुटीरः—पूर्ववत १८४॥।)॥ की पूर्त्ति करना बाकी है।

डांगढीना कुटीरः—डागीढाना सम्मेलन के समय प्रस्तावित और स्वीकृति डागीढाना कुटीर के निमित्त इस मास में २८॥≈)॥ खर्च हुए। आशा है डागीढाना के प्रेमीजन कुटिया की आवश्यक व्यवस्था शीघ्र करने में सफल होंगे।

श्री रामनाम मन्दिरः—में पूर्ववत डा० के० सी० मिश्र के यहां से १२६५।≈)॥। आना बाकी है। इसके दूसरे विभाग में २१५।) जमा है।

श्री तुलसी मन्दिरः—में पूर्ववत ३४॥)॥ जमा है।

पाकशालाः—मार्च मास में १५॥≈) खर्च हुए। पिछली बाकी २३१-)। सहित अब कुल २४६॥≡)। आना बाकी है।

श्रीराम संस्कृति विद्यालय भवनः—इस मास में श्री सेठ रामदेव हीरालाल सबुआ से १३) प्राप्त हुए पिछले १२७२॥-)॥। सहित अब १३२३॥-)॥। जमा है।

पारायण मन्दिर :—में इस मास में १०-)॥ प्राप्त हुए। पिछली कमी ५-)॥ घटाकर अब ५) जमा है।

६-३-५३
५) शाखा जगन्नाथपुर श्री मंत्री पुरुषोत्तमसिंह
२३-३-५३
५-)॥ श्री अनन्तप्रसाद सिंह, मोतीहारी

१०-)॥

मानस प्रचार :—मार्च मास में सदस्य शुल्क में १३२।) प्राप्त हुए। कार्यालय में १२०।) और चिट्ठी खर्च में ६५।।)॥ कुल २१५॥।)॥ खर्च हुआ। ८३।।)॥ की कमी रही। पिछली बचत १०६-)॥ में यह घटाकर अब २५॥-) जमा रहे।

श्री रामनाम लड्डू :—मार्च मास में ८७३२ लड्डू तैयार हुये। १५१ लड्डू दैनिक क्रम में श्री मारुति जी को समर्पण हुये। शेष नौका में सम्मिलित करके समर्पण हुये। केन्द्रों की स्थिति इस प्रकार है :— कलकत्ता २११५, भेलसा २०६४, गुलजार बाग पटना १७६१, डागीढ़ाना ११४३, सेंधवा १०५४।

मानस यज्ञ :—मार्च मास में १८८५॥।-) प्राप्त हुये। जो पिछली बचत १११०।।-)। सहित २९९६।≈)॥ हुआ। इस मास में खर्च २९९३।)॥ हुआ। इस प्रकार ३≈)। जमा रहे। अभी अनेक लोगों को रुपया देना बाकी है।

३-३-५३
२५) श्री धूमीलालजी देहली
४-३-५३
२५) श्री पोषणदासजी, सुन्दरपुर
५-३-५३
५१) मे० चुन्नीलाल पन्नालाल जी, पानीतुला
२५) श्री कु० अम्बिका प्रसाद सिंह, तालुकेदार लादीगढ़

२५) श्री रामस्वरूप दुबे, लश्कर

६-३-५३

२५) श्री शंकरदयाल दुबे, सिप्रा
५) ,, मती रविराव जाधव, लश्कर
२) ,, पं० रामचन्द्र बाजपेई, राजापुर पिपरहा

६-३-५३

१५१) मे० वल्लभदास ईश्वरदासजी, देहली
१५) श्री धूलीलालजी चारन अकलेरा
२) स्व० ममतादेवी, अयोध्या
५) सुश्री राजेश्वरी त्रिपाठी, बस्ती

१०-३-५३

१५०) श्री बाबू चंडीप्रसाद मोर, कलकत्ता
१२५) श्री बाबू गिरधारीलालगोयनका, कलकत्ता
२५) ,, बद्रीप्रसाद पाटोदिया, कलकत्ता
२५) ,, सी० एल० बर्म्मन कलकत्ता
२५) ,, नथमल जी, दसरासरिया
२५) ,, शिवभजन चोखानी, डिब्रूगढ़
१७६) ,, बनवारीलालजी चोखानी, माकूम जङ्क्शन
१००) ,, चुन्नीलाल पन्नालालजी, पानीतुला

११-३-५३

२) ,, कुं० धनसिंह भदौरिया, परौख
१।) ,, शोभाराम गुप्ता, जबलपुर
१।) ,, जगदीशप्रसाद जायसवाल, सेमरचुआ

१३-३-५३

२५) ,, सीताराम मारवाड़ी, सतना
२५) ,, बनारसीलाल गोयनका, कलकत्ता
२५) ,, माँगीलाल सीताराम, नवगाँव
२५) ,, शशिरंजन प्रसादजी, भीलवाड़ा
२५) ,, लक्ष्मणकरणजी मेहता, बाँदा
२५) ,, रामसेवक दुर्गाप्रसाद अग्रवाल मनेन्द्रगढ़
५०) ,, रामायण मंडली चिरमिरी द्वारा रामायण मंडली पोंड़ी, ३४) रामायण मंडली १६)

५) श्री चन्द्रिका प्रसाद राय, सारन
५) ,, मंगलजी जवाहिरजी, बम्बई २६

१४-३-५३

२५) ,, हरीराम नाथानी, न्यू देहली
१०) ,, अनन्तप्रसाद सिंह, मोतीहारी
२५) ,, मातूरामदासजी डालमियाँ, कलकत्ता
५।)।।।,, ग० क० गोलानिका, चासकमान
।)।। ,, मती ताराबाई, चासकमान
५) ,, यज्ञनारायणजी, बम्बई
२५) ,, रामनिवासजी व्यास छिंदवाड़ा

१६-३-५३

५) ,, केदारनाथ चौधरी, होसिर
५) ,, रामकृष्ण गुप्ता, माधवगढ़
२५) ,, दीनबन्धु प्रसादजी, पकरिया

१७-३-५३

२) गुप्तदान
३) ,, पं० अंबिकेश्वरपति त्रिपाठी अयोध्या

१८-३-५३

२५) ,, मनराखनप्रसाद शर्मा, भखारा
२१) ,, ज्वालाप्रसाद केजरीवाल, कानपुर
५१) ,, शालिकराम मेहरोत्रा, कलकत्ता
१०) ,, ब्रजमोहनलाल, बनारी

१६-३-५३

२५) ,, चेतराम महाजन, कामती मुर्गीढ़ाना शाखा से
५) ,, मिलापचन्द्र माणकचन्द्र बियानी अराँई
५) ,, कालूराम जी सोनी साईखेड़ा
१०) ,, उमाशंकर पोस्टमास्टर, देवरिया

२०-३-५३

२५) ,, ठा० कल्याण सिंह राठोड़ ओरड़ी
१५) ,, रतनचन्द्र सोहाने, जबलपुर
१५) ,, द्वारिका सिंह, इन्दौर
२) ,, राधिकादत्त किशुनदत्त तिवारी,

२) ,, मुद्रालाल बम्बई
२) ,, मोहन स्वरूप सक्सेना, जसोदा
२१-३-५३
२॥) ,, रामरक्षा सिंह, धनबाद
३॥) ,, मती गुलरानी, जबलपुर
२) ,, गोपाल की माँ
५१) ,, मान मझले राजा सा० बहादुर, पन्ना
११) ,, रामप्रताप वैद्य, रीवाँ
२२-३-५३
३१) ,, मीठालालजी राठी, द्रुग
८०) ,, भगवानजी वल्लभदास खाकीजाड़िया
२३-३-५३
५।) ,, चोवाराम वर्मा, बारगाँव
१) ,, रामनारायण गोहद
१) ,, गोपाल सतना
५०) ,, मती बाई साहब, हैदराबाद
५०) ,, मती कमल बाई साहबा, हैदराबाद
२५) ,, एन० एल०, इलाहाबाद
२४-३-५३
२५) ,, बाबूलालजी मिश्र, चीचली
२१) ,, मान राजा साहब बहादुर चीचली
१।) ,, पं० तरुणेन्द्र शेखर जी, माधवगढ़
५) ,, लालचन्द्रजी सतना
५) ,, मीठालालजी राठी, द्रुग
१०) ,, ठा० महीपतसिंह, अकौना
२५) ,, गुरुदयाल जी भेलसा
२५) ,, हरशंकरलालजी वधुवार
५) ,, कराँची स्टोर, सतना
५) ,, शिवबालक शर्मा, सिप्री बाजार
२१) ,, नवयुग रामायण मंडल, मनेन्द्रगढ़
१०) ,, रामचन्द्र सफड़िया, सतना

१८८५॥।-)॥

गोशाला :—यज्ञ के अवसर पर आये हुये प्रेमियों ने यह निश्चित किया कि आश्रम की दोनों कृष्णा तथा अन्य गायों के लिये यथा सम्भव शीघ्र गोशाला निर्माण की जानी चाहिये। और नीचे लिखे अनुसार ७०।) तत्काल प्रदान किये। गोशाला में शीघ्र ही काम लगा दिया जायगा और आशा है कि प्रेमीजन आवश्यक ३०००) की व्यवस्था शीघ्र करेंगे।

६-३-५३
१४) श्री रामचन्द्र सफड़िया, सतना
१८-३-५३
१०) ,, व्रजमोहनलालजी, बनारी
२२-३-५३
१५) ,, रामचन्द्र सफड़िया, सतना
५।) ,, सिद्धिनाथ जी रावत, इन्दौर
२३-३-५३
१०) ,, सुशील चन्द्रजी शुक्ल, राहौद
२४-३-५३
११) ,, रामनिवास जी व्यास, छिंदवाड़ा
५) ,, ठा० हरशंकर जी, वधुवार

७०।)

— — —

मानस यज्ञ

चैत्र नवरात्र के मानस यज्ञ की सफलता के लिये चैत्र कृष्ण ३० ता० १५-३-५३ को श्री रामार्चा हुई। निश्चित कार्यक्रम चैत्र शुक्ल १ को प्रातः काल ४॥ बजे प्रभातफेरी द्वारा प्रारम्भ हुआ। सूर्योदय के समय नूतन संवत्सर पूजन तथा ध्वजारोपण होकर श्री हनुमानजी की आरती ६॥ बजे हुई। सामूहिक प्रार्थना होकर ७। बजे सामूहिक पाठ तथा हवन प्रारम्भ हुआ। इसी समय टिटिला गढ़ के श्री रामचन्द्र शर्मा की ओर से श्रीरामार्चा प्रारम्भ हुई। पाठ का प्रथम विश्राम ११। बजे पूर्ण होने पर श्री रामार्चा की आरती हुई। सब साधकों ने श्रीरामार्चा, श्री रामनाममन्दिर तथा श्री मारुति मन्दिर की परिक्रमा की। इसके बाद श्री मारुति भगवान का भोग लगा आश्रम की दोनो कृष्णा गायों को भोग लगाया गया और साधकों ने प्रसाद पाया। अपराह्न में ४॥ बजे से ५॥ तक कथा हुई। फिर सन्ध्या आरती और सामूहिक प्रार्थना होकर भोग लगा और साधकों ने प्रसाद पाया। रात में ८ से ६॥ बजे तक पुनः कथा हुई। तदनन्तर विश्राम।

नित्य यही कार्य-क्रम चलता रहा। श्री रामार्चा चैत्र शुक्ल द्वितीया को श्री सेठ मंगनी राम रामकुमार बांगड़, कलकत्ता की ओर से तृतीया को श्री सेठ चुन्नीलाल पन्नालाल पानीतुला की ओर से, चतुर्थ को श्री सेठ वल्लभदास जी अग्रवाल कलकत्ता की ओर से, पंचमी को श्री बाबू चण्डी प्रसाद मोर कलकत्ता की ओर से और षष्ठी को श्री सेठ बनवारी लाल चोखानी, माकूम जंकशन की ओर से हुई शेष दिन आश्रम की ओर से हुई। इस प्रकार लगातार १० दिन श्री रामार्चा हुई। कथा श्री स्वामी प्रज्ञानानन्द जी सरस्वती तथा श्री रामरचित जी रामायणी की होती थी। कथा काल में बनारी की मंडली तथा अन्य प्रेमियों द्वारा ललित मानस गायन तथा संकीर्तन होता था। प्रभु की कृपा से प्रभात फेरी से प्रारम्भ होकर रात्रि की कथा पर्यन्त नित्य का कार्य बराबर समय से हुआ।

श्री मारुति भगवान का नित्य नया शृंगार होता था। कलकत्ता के श्री द्वारकादास जी राठी ने ६ पोशाकों की सेवा की। गोरखपुर के श्री ब्रजभूषण गनेड़ीवाला की सेवा से चान्दी के पार्षद लगभग पूर्ण हो गये। कानपुर के श्री नन्द किशोर पाधा ने चन्दन वत्ती पर्याप्त मात्रा में भेजीं। श्री स्वामी प्रज्ञानानन्द सरस्वती जी ने विविध रंग की स्याहियों से स्वहस्त-लिखित श्री रामचरित मानस की सुन्दर प्रति श्री मारुति भगवान को भेंट की। श्री भगवान जी वल्लभदास, खाकी जाड़िया ने ता० २२-३-५३ को भंडारा किया।

श्री रामनवमी को बड़े उत्साह के साथ पूर्णाहुति हुई। जन्म आरती और भंडारा हुआ। एक श्री राम नाम नौका श्री मारुति भगवान को समर्पण की गई। नाम रखने के लिये टीन की नौका सतना के सिन्धी बन्धुओं ने समर्पित की। यज्ञ काल में माला पर ७१००००० जप हुआ। श्री रामनाम मन्दिरकी परिक्रमा की संख्या नहीं लिखी जा सकी।

अनेक प्रेमी साधकों के आने में समय पर बाधा पड़ गई इसका खेद अवश्य है। उनके स्थान में अन्य साधकों ने पाठ किया। प्रस्तावित सामूहिक क्रमों की व्यवस्था नहीं हो सकी यह खास त्रुटि रही। यज्ञ के निमित्त श्री राम नाम मन्दिर तथा श्री मारुति मन्दिर के बीच पक्का यज्ञ मंडप निर्माण किया गया। इससे नित्य की एक विशेष कमी की पूर्त्ति भी हो गई। अभी छत पड़ना बाकी रह गया है। मंडप के फर्श पक्का करने की सेवा भेलसा के श्रीगुरुदयाल ताम्रकार ने स्वीकार की है।

हम इन सब प्रेमियों के आभारी हैं जिन्होंने आकर यज्ञ में भाग लिया अथवा सहायता भेजी। यज्ञ की सबसे बड़ी विशेषता थी दर्शकों का अभाव। प्रबन्धकों की अभिलाषा थी कि यज्ञ तमाशा न माना जाय। अतः व्यवस्था की गई थी कि साधकों के अतिरिक्त जो प्रेमी आये उन्हें माला दी जाय और वे जप करें। लगभग सभी आगन्तुकों ने जप किया। दुर्जनपुर के

कुछ व्यक्ति अपवाद रहे। उन्होंने माला चौराई तथा इस नियम पर एतराज भी किया। इन्होंने सिद्ध कर दिया कि अनियन्त्रित भीड़ से सात्विकता में बाधा पड़ती है।

आशा है भविष्य में बहुधा इस प्रकार के यज्ञ रामवन में हुआ करेंगे और निवासी साधकों की संख्या वृद्धि होने पर नित्य की व्यवस्था हो सकेगी। तब ही स्थान एक सच्चे तपोवन का रूप ग्रहण करेगा।

स्वागत प्रेमियों ने रामवन की स्थिति पर विचार किया और अन्य कार्यों पर आश्रम की कृष्णा आदि गायों के लिये पक्की गोशाला निर्माण को प्राथमिकता देकर अपने हाथों इसकी नींव तक खोदना प्रारम्भ कर दिया और ७०।) नगद चन्दा भी दिया। आशा है वर्षा के पूर्व गोशाला निर्माण की व्यवस्था हो जायगी।

श्रीरामनाम लड्डू के नियम

१—लिखते समय मुख से श्रीराम नाम का जप करना चाहिये।

२—केवल लाल स्याहीसे नाम लिखें।

३—केवल 'राम' यह नाम लिखें।

४—प्रत्येक पृष्ठ में १०८ नाम अर्थात् १२ पंक्ति और प्रत्येक पंक्ति में ९ नाम लिखें।

५—नाम लिखते समय शुद्ध होकर बैठें और मौन रहकर लिखें।

६—अपनी कापी में दूसरों से नाम न लिखवायें।

७—नाम स्पष्ट अक्षर में लिखें।

८—अशुद्ध लिखा जाने पर काटकर न सुधारें। उसे छोड़ दें और दूसरा लिखें।

९—लिखित नामों में पूज्य भाव रखें।

१०—लिखित 'राम' नाम की ५१ मालाओं का एक लड्डू माना जायगा और वह श्रीराम दूत को यहाँ समर्पित होगा।

११—फाउन्टेनपेन या फाउन्टेनपेन की स्याही से रामनाम नहीं लिखे जाँयगे।

१२—एक साथ चाहे जितने राम नाम लड्डू आप चढ़ाने को भेज सकते हैं।

१३—राम नाम लिखने के लिये एक लड्डू की एक पुस्तिका (कापी) का मूल्य एक आना।

४—श्रीरामनाम लड्डू के छपे कवर पृष्ठ १) के १००।

मन्त्री, मानस संघ
पो० रामवन वाया सतना

रामवन के विविध कार्य

१—वर्ष में श्रीरामचरितमानस का दो पाठ करने की प्रतज्ञा करने वाले सज्जन मानस संघ के सदस्य बनाए जाते हैं। आजीवन शुल्क ॥) है। जहाँ नौ सदस्य हो जाते हैं, वहाँ शाखा बन जाती है। इस समय देश में मानस संघ के २६२०० सदस्य हैं और १३२६ शाखायें हैं।

२—रामचरितमानस का प्रचार एवं अध्ययन व्यापक करने के लिए यह 'मानस-मणि' मासिक पत्र ग्यारह वर्ष से निकल रहा है। इस का वार्षिक मूल्य ३) है।

३—तुलसी साहित्य का प्रकाशन मानस प्रकाशन लिमिटेड द्वारा होता है। कम्पनी का प्रत्येक शेयर १०) का है। कम्पनी १६ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है। स्थायी ग्राहक शुल्क २) है। स्थायी ग्राहकों को प्रकाशित ग्रंथों पर २५ % कमीशन दिया जाता है।

४—श्रीरामचरितमानस पत्र व्यवहार विद्यालय द्वारा मानस संघ घर बैठे श्रीरामचरितमानस की शिक्षा देता है। विद्यालय का पाठ्य विषय तीन वर्षों का है और प्रथम वर्ष का शुल्क १०) है।

५—मानस आश्रम में नित्य अखण्ड मानस पाठ होता है। यहाँ रह कर साधक एकान्त में साधन भजन करते हैं।

६—तुलसी संग्रहालय भी रामवन में है।

७—मानस संघ राम नाम लड्डू लेखन का प्रचार करता है। ये लिखित रामनाम श्रीमारुति जी को अर्पण किये जाते हैं। २७ करोड़ अर्पित हो चुके हैं।

८—श्री राम संस्कृत विद्यालय में वाराणसेय-परीक्षा के पाठ्यक्रम के साथ मानस अध्ययन की भी सुविधा रखी गई है।

हर विभाग में आपका सहयोग अपेक्षित है।



'मानस-मणि'

पो०—रामवन (सतना)

ग्रा० नं०—८

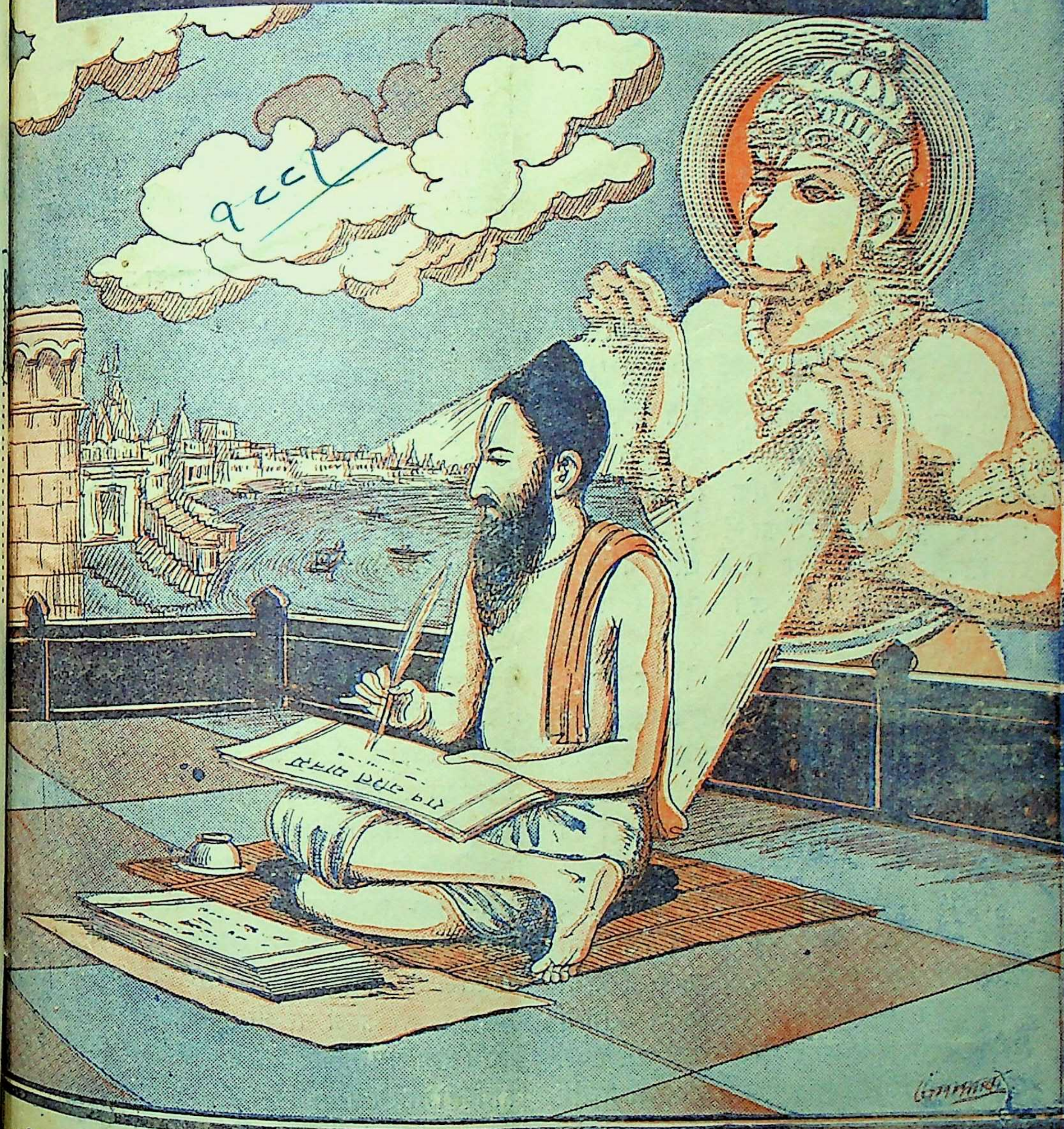
श्री ......पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

Gurukul Kangdi

सम्पादक—सुदर्शन सिंह

प्रकाशक—शारदा प्रसाद, मन्त्री, मानस सङ्घ, रामवन, (सतना)। मुद्रक—माधो प्रिंटिङ्ग वर्क्स, प्रयाग।

मानस मणि



मणि १२

जून १९५३

आलोक ६

वार्षिक मूल्य तीन रुपया

वी० पी० से तीन रुपया आठ आना

गोस्वामी तुलसीदासजी

गोस्वामी जी का एक महान् स्मारक राजापुर में बनने वाला है उत्तर प्रदेश के बड़ों की समिति सगठित होकर तदर्थ १० लाख रुपये संग्रह करने का उद्योग प्रारम्भ हो गया है। यह सर्वथा अनुकूल है। उनके जीवन से सम्बद्ध प्रत्येक स्थान में उनके स्मारक बनने चाहियें। वे हैं हमारे राष्ट्र-कवि, संरक्षक, उद्धारक और सब कुछ।

इतना ही क्यों ? उनके स्मारक तो बनने चाहिये देश के नगर-नगर ग्राम-ग्राम और कोने-कोने में। मानस और तुलसी साहित्य का प्रचारक होने के नाते रामवन एक बड़ा तुलसी स्मारक है। इसके मध्य में जो मानस सर निर्माण हो रहा है, वह तो उनके स्मारक का एक श्रेष्ठ रूप है ही। इसकी पूर्त्ति में अभी पर्याप्त रकम लगेगी। पर इस वर्ष इसका एक अंश तैयार करा लेने का विचार है। वह है पूर्व घाट। इसमें भी पर्याप्त काम शेष है। पर अनुमान किया गया है कि मंडप का शेष भाग पूर्ण करके गोस्वामी जी की मूर्त्ति स्थापित कराने का काम हजार सवा हजार रुपये के अन्दर हो जायगा। आगामी श्रावण शुक्ला सप्तमी सोमवार ता० १७ अगस्त १९५३ तक यह कार्य पूर्ण कर लेने लायक है।

श्री मारुति मन्दिर तथा श्री राम नाम मन्दिर निर्माण हो जाने के बाद गोस्वामी जी के घाट पर तुलसी मंडप होना और उसमें उनकी मूर्त्ति स्थापित हो जाना अब परम आवश्यक है। कुछ प्रेमियों ने इस निमित्त हमें सहायता भेजी है। उनके हम आभारी हैं। हमें आशा है अन्य प्रेमी भी अपना सहयोग का हाथ आगे बढ़ायेंगे। आइये गोस्वामी जी के महान ऋण से कुछ उऋण हों।

शारदा प्रसाद

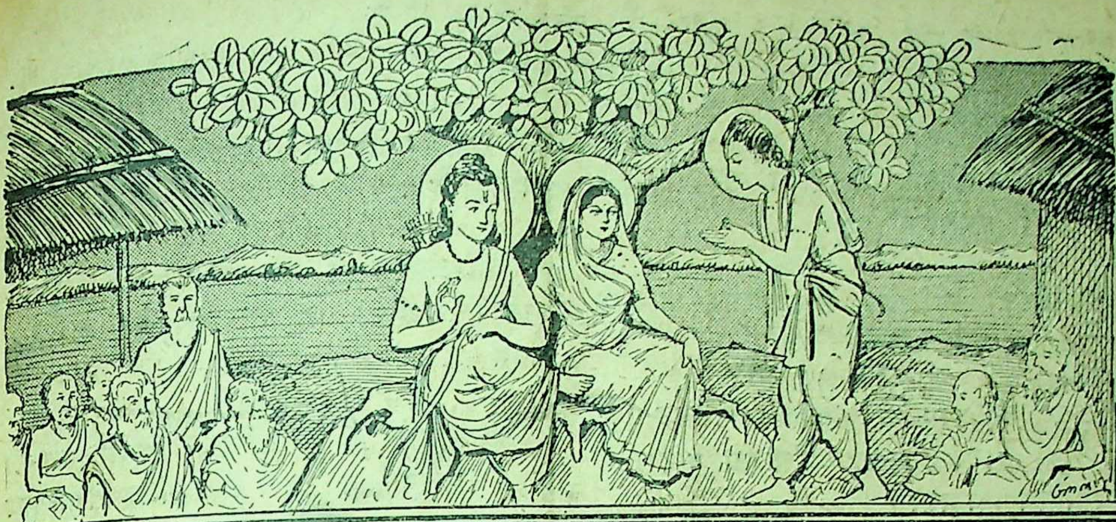
होशंगाबाद प्रचार

श्री कञ्ज जी रामायणी का जिला होशंगाबाद का प्रचार-क्रम अच्छी प्रगति कर रहा है। जिले के मानस प्रेमियों के सहयोग के आधार पर ही उन्होंने एक वर्ष में ११०० शाखायें स्थापित कराने का संकल्प डाँगीढ़ाना सम्मेलन के अवसर पर किया था। यह बड़े हर्ष की बात है कि प्रेमी जन सहयोग प्रदान कर रहे हैं।

सम्मेलन के बाद ही उन्होंने नरसिंहपुर तहसील में प्रचार किया। विभिन्न स्थानों में शाखायें स्थापित कराईं पर खेद है कि उन सब के फार्म अब तक प्रधान कार्यालय में नहीं आये हैं। परिणाम यह है कि अब तक वहाँ की शाखा माला पूर्ण नहीं हुई है। तहसील गाडरवारा में अध्यापकों ने प्रचार करने का सङ्कल्प किया है और श्री रामकृष्ण जायसवाल तथा श्री श्यामसुन्दर अग्रवाल ऐसे उत्साही तथा प्रभावशाली महानुभाव इस कार्य में लगे हैं इन पर माला पूर्ति का भार छोड़कर श्री कञ्ज जी आज कल सोहागपुर तहसील में प्रचार कर रहे हैं। यहाँ के प्रेमी उन्हें पूर्ण सहयोग प्रदान कर रहे हैं। इससे आशा है कि सोहागपुर तहसील की शाखा माला सर्व प्रथम पूर्ण होगी। जुन्हेटा के श्री गोविन्द सिंह जी, श्री ओंकार प्रसाद जी मिश्र, श्री दशरथ रायजी कामती मुर्गीढाना के श्री घासीराम जीचोकसे, मास्टर तथा बनखेड़ी के श्री लक्ष्मीचन्द्र जी मलानी, श्री भगवती प्रसाद जी सोनी, श्री पुरुषोत्तमदास जी महेश्वरी तथा ईश्वरीदासजी महेश्वरी आदि का सहयोग सर्वथा सराहनीय है। आशा है अन्यत्र भी ऐसा ही सहयोग प्राप्त होगा।

जिले की ६ तहसीलों में से अभी ३ में ही प्रचार हो रहा है। पर सङ्कल्प पूर्ति के लिए तो सबों में होना ही है। हर तहसील के मानस प्रेमियों से प्रार्थना है कि अपने-अपने ग्रामों में तथा आस-पास के ग्रामों में शाखायें स्थापित कराके समुचित क्षेत्र तैयार करें तथा प्रत्येक तहसील में दो-दो शाखा मालायें स्थापित कराने में श्री कञ्ज जी को पूर्ण सहयोग प्रदान करें। क्षेत्र तैयार करके उन्हें बुलाने में अधिक कार्य होगा ही।

संस्था सब प्रेमियों की आभारी है और सबसे प्रचार सहयोग की प्रार्थी है।



मानस मणि

राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं॥

मणि १२ — रामवन—जेष्ठ, मानस संवत् ३८०—जून १९५३ ई० — आलोक ६

मानस की सूक्तियाँ

काहु न कोउ सुख दुख कर दाता। निज कृत करम भोग सब भ्राता॥

\+ + +

सपने होइ भिखारि नृप, रंक नाकपति होइ।
जागे हानि न लाभ कछु, तिमि प्रपंच जिय जोइ॥

\+ + +

मोह निसा सब सोवनि हारा। देखिअ सपन अनेक प्रकारा॥

\+ + +

जानिअ तबहिं जीव जग जागा। जब सब बिषय बिलास बिरागा॥

\+ + +

सखा परम परमारथ एहू। मन क्रम बचन रामपद नेहू॥

\+ + +

धरम न दूसर सत्य समाना। आगम निगम पुरान बखाना॥

\+ + +

संभावित कहँ अपजस लाहू। मरन कोटि सम दारुन दाहू॥

\+ + +

करम बचन मन कपट तजि, जब लगि जन न तुम्हार।
तब लगि सुख सपनेहुँ नहीं, किये कोटि उपचार॥

(६५२)

सच्चा आस्तिक किसी भी सम्प्रदाय की निन्दा नहीं करता।

(६५३)

किसी की धार्मिक भावना पर आघात करना महान् अपराध है।

(६५४)

अधर्म या पाप का लक्षण है कि वह प्रभु से बिमुख होता है। वह व्यक्ति को बहिर्मुख भोग-परायण बनाता है।

(६५५)

सुख के पश्चात दुख, और दुख के पश्चात सुख आवेंगे ही। एक स्थिति स्थिर रह ही नहीं सकती।

(६५६)

शास्त्रों में मतभेद नहीं, वे तो अधिकारी भेद से साधन का विधान करते हैं।

(६५७)

शास्त्रों के वाक्य जो विषय सेवन का विधान करते प्रतीत होते हैं, विषय सेवन का विधान नहीं करते। वे केवल हमारी उच्छृंखल प्रकृति का नियमन करते हैं।

(६५८)

जिसकी जैसी प्रकृति है वह वैसे ही साधना द्वारा शीघ्र उन्नति करेगा। अन्य विपरीत साधन उसकी शीघ्र उन्नति नहीं कर सकते।

(६५९)

साधन व्यक्ति के लिये निश्चित होते हैं। एक समाज के लिये एक साधन नहीं हो सकता। हाँ, सब एक ही प्रकृति के हों तो दूसरी बात है।

(६६०)

वह शास्त्रवाक्य हो ही नहीं सकता जो प्रभु से विमुख ले जाता हो।

(६६१)

शास्त्रों का एक मात्र लक्ष्य प्रभु के चरणों की प्राप्ति है। यदि उसमें कुछ अन्यथा प्रतीत होता है तो समझना होगा कि इसमें कुछ रहस्य है। जो हमारी समझ में अभी नहीं आ रहा है।

(६६२)

वह अवश्य ही पाखण्डी या धूर्त है जो शास्त्रों के द्वारा प्रभु की विमुखता का प्रतिपादन कर रहा है।

(६६३)

वीतरागों के अतिरिक्त किसी को भी अपने स्वास्थ्य, धन, बल और संग्रह से सन्तोष नहीं होता।

(६६४)

प्राकृतिक जीवन ही सुदृढ़ पवित्र जीवन हो सकता है।

(६६५)

भाव ही प्रधान है। दुख में तपस्या की भावना करो। वह अन्तर शुद्धि का कारण होगा।

(६६६)

स्वेच्छा पूर्वक, समर्थ होते हुये भी, कष्ट सह लेना ही तप है। विवश होकर तो सभी दुख सहते हैं।

(६६७)

विलासिता-निर्बलता, रोग, एवं दुर्वासनाओं की जननी है।

(६६८)

जो गुरु बन कर धन तो लेता है पर अज्ञान का नाश नहीं करता, अवश्य ही उसकी दुर्गति होगी।

(६६९)

जो अज्ञान का नाश करे वही गुरु है। दूसरे गुरु तो केवल दिखावटी हैं।

(६७०)

सज्जन कष्ट देने पर भी भलाई ही करते हैं। काटने पर भी चन्दन सुगंधि ही देता है।

(६७१)

अधर्म के द्वारा उपार्जित द्रव्य शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

ऋषि गीता

[पञ्चम भवन]

—सुदर्शन सिंह

मंत्रराज नित जपहिं तुम्हारा।
पूजहिं तुम्हहिं सहित परिवारा॥
तरपन होम करहिं विधि नाना।
विप्र जेवाँइ देहिं बहु दाना॥
तुम्हते अधिक गुरुहिं जिय जानी।
सकल भाय सेवहिं सनमानी॥
सब करि माँगहिं एक फल,राम चरनरति होउ।
तिन्हके मनमन्दिर बसहु,सिय-रघुनन्दन दोउ॥

'जो नित्य तुम्हारे मन्त्र राज (श्रीराम नाम या राम षडक्षर मन्त्र) का जप करते हैं तथा परिवार के साथ तुम्हारी पूजा करते हैं, अनेक प्रकार से पर्वादि के अनुरूप तर्पण तथा हवन-यज्ञादि करते हैं, ब्राह्मणों को भोजन कराके उन्हें पर्याप्त दान देते हैं एवं गुरुदेव को अपने हृदय में आप से भी श्रेष्ठ समझकर सम्पूर्ण भाव-विशुद्ध भाव से (मन, वचन, कर्म) से उनकी सेवा करते हैं, उनका आदर करते हैं और यह सब करके केवल यही एक मात्र इन कर्मों का फल चाहते हैं कि हमारी श्रीराम के चरण कमलों में प्रीति हो।' महर्षि बाल्मीकि कहते हैं—'श्री रघुनाथ जी, आप इन श्रीविदेहकुमारीजी के साथ अपने ऐसे अनुरागी सेवकों के मन-मन्दिर में ही निवास करें!'

अब तक जो साधन भगवत्प्राप्ति के इस क्रम में कहे गये थे और आगे जो कहे जायँगे इस क्रम में, वे ऐसे हैं कि उनका सम्बन्ध केवल उपासक तक ही है और उनमें द्रव्य की कोई अनिवार्य आवश्यकता नहीं है। भगवान न किसी की पूजा के भूखे हैं और न पदार्थ के। श्री प्रह्लाद जी कह रहे हैं—

नैवात्मनः प्रभुरयं निजलाभपूर्णो,
मानं जनादविदुषः करुणो वृणीते।
यद् यज्जनो भगवते विदधीत मान,
तच्चात्मने प्रतिमुखस्य यथा मुखश्रीः॥

—भागवत ७।६।११

जो परतन्त्र होता है वह दूसरों से सहायता चाहता है, जो दरिद्र होता है, जिसके पास अभाव होता है, वह दूसरों से पदार्थ चाहता है; किन्तु श्री हरि तो सर्वेश्वर हैं, सब के स्वामी हैं और अपने आप में ही परिपूर्ण हैं, वे अज्ञानी जीवों से किसी प्रकार का कोई सम्मान नहीं चाहते। लेकिन मनुष्य भगवान के लिये जो कुछ करता है, वह सब उसे स्वयं ठीक वैसे ही प्राप्त होता है, जैसे अपने मुख को अलंकृत करने पर दर्पण में पड़ा मुखका प्रतिबिम्ब स्वयं अलंकृत हो जाता है।

भगवान सन्तुष्ट होते हैं भाव से; किन्तु जिनके पास उन दयामय प्रभु ने पदार्थ दे रखे हैं, उनके पदार्थों की सफलता भी यही है कि वे भगवत्सेवा में लगें। इसके साथ ही परिवार के प्रति भी मनुष्य का कुछ कर्तव्य होता है और सर्वश्रेष्ठ कर्तव्य है परिवार को भगवान की ओर प्रवृत्त करना। भगवान ऋषभ देव जी ने बताया है—

गुरुर्न स स्यात्स्वजनो न स स्यात्,
पिता न स स्याज्जननी न स स्यात्।
दैवं न तस्मान्न पतिश्च स,
स्यान्नमोचयेद्यः समुपेत मृत्युम्॥

—भागवत ५।५।१८

नित्य निरन्तर सिर पर सवार मृत्यु के पंजे से जो छुड़ा न सके वह गुरु गुरु नहीं है, वह स्वजन-स्वजन नहीं है, वह पिता पिता नहीं है, वह माता माता नहीं है, वह देवता देवता नहीं है और वह पति पति नहीं है।

अतएव सम्पत्ति-शालियों को सम्पत्ति का सदुप-

योग, गृहस्थ को गृहस्थ धर्म का पालन करते हुये उचित मार्ग तथा परिवार के प्रति उसका वास्तविक कर्तव्य बतलाते हुये यह 'पंचम भवन' रूप साधन कहा गया है।

हम दूसरों को उपदेश करें; किन्तु स्वयं कुछ न करें, यह 'पर उपदेस कुसल बहु तेरे।' वाली बात नहीं होनी चाहिये। साधन का मार्ग ऐकान्तिक होता है। कर्ता की ही मुख्यता होती है उसमें। अतः सबसे पहिली बात है—

'मन्त्रराज नित जपहिं तुम्हारा।'

स्वयं तुम्हारे मन्त्रराज का जप करते हैं। मन्त्रराज वैसे तो श्रीराम-चरितमानस में 'राम' नाम ही माना गया है; किन्तु जिसकी जिस नाम या मन्त्र में निष्ठा है, उसके लिये वही मन्त्रराज है। इसीलिये यहाँ मन्त्रराज कहकर उसे स्पष्ट नहीं किया गया। अवश्य ही वह मन्त्रराज 'तुम्हारा' अर्थात् श्री भगवान का होना चाहिये, किसी देवी-देवता का नहीं; क्योंकि भगवान ने गीता में बहुत स्पष्ट कहा है।

'देवान् देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि।'

जो भगवान् का भजन करेगा, वही भगवान को पावेगा। देवताओं का पूजनादि करने वाले देवलोक (स्वर्ग) ही पा सकते हैं। अतः होना चाहिये इष्ट-मंत्र भगवान् का और वह भी 'नित जपहिं' अर्थात् उसमें अन्तर नहीं पड़ना चाहिये। आज जप हुआ और कल नहीं, ऐसा न हो। नियम पूर्वक बिना नागा जप जीवन पर्यन्त चले। इस प्रकार स्वयं अपना साधन करते हुये—'पूजहिं तुम्हहिं सहित परिवारा।'

संग का प्रभाव पड़ता है। सबसे अधिक संग हमें अपने परिवार का प्राप्त होता है। यदि परिवार शुद्ध, सात्विक, भगवत्सेवा-परायण हो तो हमें अपने साधन में सहज प्रोत्साहन मिले। ऐसा परिवार तपोवन से भी उत्तम है। फिर हमारा परिवार के प्रति कर्तव्य है और सबसे बड़ा कर्तव्य है कि हम परिवार के सदस्यों को भगवान की ओर लगावें। इससे बड़ी सेवा किसी की और कुछ नहीं की जा सकती कि उसे इस जन्म-मरण के दुर्निवार चक्र से छूटने में प्रोत्साहित किया जाय। परिवार मे यदि भगवत्पूजन होगा, यदि भगवान की प्रतिमा घर में होगी तो अपने आप खान-पान, रहन-सहन मर्यादा में रहेगा। शुद्ध एवं पवित्र रहेगा। तब भोजन बनेगा भगवान को नैवेद्य लगाने के लिये। उपार्जन होगा भगवान की सेवा के लिये। विषय भोग एवं शरीर सेवा के साथ परिवार के सभी कर्म भगवत्सेवा-स्वरूप हो जायंगे। इस प्रकार घर जो बन्धन का कारण है, वह मोक्षदाता बन जायगा।

'तरपन होम करहिं बिधि नाना।

आज कल अनन्य-फनन्य होने का रोग हो गया है उपासकों में। अनन्यता का अर्थ कर लिया गया है कि दूसरे देवताओं का विहित पूजन भी न करना, उन्हें नमस्कार न करना; किन्तु यह बड़ा भारी भ्रम है। देवता और पितर आदि मन के, इन्द्रियों के, पदार्थों के, परिस्थितियों के अधिष्ठाता हैं। हम सरकारी कर्मचारियों, सम्पन्नों आदि की सेवा सत्कार तो करते हैं और उसमें हमारी अनन्यता नष्ट नहीं होती, पर गणेश या शिवजी का व्रत, पूजन, उपवास करने में अनन्यता नष्ट होने लगती है। हम समझते ही नहीं कि देवता भी सन्तुष्ट होकर हमारी अपनी निष्ठा में हमारी उपासना में सहायक हो सकते हैं। गोस्वामी जी एवं उनका श्रीरामचरित-मानस शास्त्र-मर्यादा का पूरा समर्थक है। मानस की अनन्यता का अर्थ है इष्ट के अतिरिक्त अन्यत्र अनुराग का न होना। दूसरों की पूजा करने में बाधा नहीं, पर उनसे भी इष्ट के प्रति प्रेम की ही याचना करना-अन्य कुछ नहीं चाहना। लेकिन शास्त्र जब जिस कार्य में, जिस काल में, जिस प्रकार जिस देवता के पूजन का विधान करते हैं, जब पितृ-तर्पण के समय हैं, तब तर्पण हवनादि उन-उन विधियों से करना ही चाहिये।

'बिप्र जेंवाइ देहिं बहु दाना।'

भगवान के दो मुख हैं—एक अग्नि और दूसरे ब्राह्मण। अग्नि में विधि-पूर्वक हवन करने से भगवान

तृप्त होते हैं और ब्राह्मणों को भोजन कराने से भी तृप्त होते हैं। इन दोनों में भी वे श्री हरि स्वयं एक को प्रधान बतलाते हैं—

नाहं तथाद्मि यजमानहविर्वितानेश्च्योतद्घृतप्लुतमदन् हुतभुङ्मुखेन।
यद्ब्राह्मणस्य मुखतश्चरतोनुघासं,
तुष्टस्य मय्यवहितैर्निजकर्मपाकैः॥

—भागवत ३।१६।८

जो अपने सम्पूर्ण कर्मफल मुझे समर्पित करके सदा सन्तुष्ट रहने वाले निष्काम ब्राह्मण हैं, वे जब घी से तर पकवानों का भोजन करते हैं तब उनके मुखमें जाते एक-एक ग्रास से मैं जैसा तृप्त होता हूँ वैसा यज्ञ में अग्नि रूप मुख में यजमान की दी हुई आहुतियों के ग्रहण से तृप्त नहीं होता।

मन्त्र-हीन एवं दक्षिणा-हीन कर्म तो सफल होते नहीं हैं, पर यहां 'बहु दाना' द्वारा कहा जा रहा है कि दक्षिणा देने में कृपणता नहीं करना चाहिये। अपनी शक्ति के अनुसार भरपूर दक्षिणा देना चाहिये।

'तुम्हते अधिक गुरुहिं जिय जानी।
सकल भाय सेवहिं सनमानी॥'
'गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु: गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः॥'

शास्त्र गुरु महिमा से पूर्ण हैं और श्रीराम चारितमानस में भी गुरु महिमा बहुत अधिक है। यहाँ तो कहा जा रहा है कि गुरु को आराध्य से भी अधिक मानना चाहिये और 'सकल भाव' अर्थात् मन, बचन कर्म से आदर पूर्वक उनकी सेवा करनी चाहिये। लेकिन इसके साथ यह ध्यान रखने की बात है कि जो ज्ञानदाता है, वही गुरु है। श्री गोस्वामी जी अन्धाधुन्ध गुरुडम के समर्थक नहीं हैं।

'सब करि मागहिं एक फल, राम चरन रति होउ।'

कर्मों का, देव-पितृ-पूजनादि का त्याग नहीं है। उन सब शास्त्रविहित कर्मों को वे करते हैं और सावधानी से, उत्साह से, श्रद्धा से करते हैं, किन्तु उन कर्मों का कोई पुण्य नहीं चाहिये उन्हें। उनका दूसरा कुछ फल नहीं चाहिये। वे तो सर्वत्र एक ही चाह रखते हैं, एक ही मांग है उनकी सबसे—

'राम चरन रति होउ।'

लेकिन उनके मन-मन्दिर में 'सिय-रघुनंदन दोउ' ही क्यों? श्री लक्ष्मण जी को छोड़ क्यों दिया यहाँ महर्षि ने?

बात यह है कि श्री लक्ष्मण जी तो जीवों के परमाचार्य हैं। वे ही गुरुतत्व हैं। जितने भी गुरु हैं, वे उन्हीं के अंश हैं। अतः गुरुतत्व के रूप में यहाँ इस आराधक द्वारा वे तो पहिले ही इष्ट से भी अधिक माने जा रहे हैं और सब प्रकार सम्मान पूर्वक सेवित हो रहे हैं। रह गये हैं 'सिय-रघुनन्दन' सो इन परात्पररूप दम्पति को महर्षि आराधक के हृदय में निवास करने को कह रहे हैं।

—:o:—

मानस प्रचार के लिये मानस का पारायण कीजिये।

भगवान श्री राघवेन्द्र का चरित्र बल

[पं० श्री रामरक्षित जी रामायणी]

पूर्ण ब्रह्म शुद्ध सच्चिदानन्दघन कौशल्या-यश वर्धन भगवान श्री राघवेन्द्र का अवतार लेकर चरित्र करने का प्रधान उद्देश्य था कि लोग श्रीरामचरित्र को देखकर अनुकरण कर चरित्रवान बनें। श्रीराम जो कुछ कहते थे वह स्वयं करते भी थे, लोगों को अपने चरित्र से ही उपदेश देते थे। लोग उनके आदर्श चरित्रों से ही शिक्षा लेकर चरित्रवान बना करते थे। उदाहरण के लिये भगवान् श्री राघवेन्द्र त्यागी, तपस्वी, परोपकारी, सेवापरायण आदि गुणों के साथ बनवासी बनें। इसका प्रभाव यह हुआ कि वन्य जीव. कोल किरातों में भी परोपकार आदि गुण उतर आये। श्रीराम के त्याग से लोगों ने त्याग सीखा, सेवा से सेवा सीखी, मानवता से मानवता सीखी, श्रीराम के त्यागमय व्यवहार का उदाहरण देखें। रानी कैकेई के द्वारा चौदह वर्ष के बनवास का वरदान माँगने पर श्री महाराज दशरथ जी जनु पाठीन दीन-बिन पानी के तरह कोप भवन में पड़े हैं रानी पास ही बैठी है, मंत्रीवर सुमन्त श्री सरकार को लेकर पहुंचते हैं।

करुनामय मृदु राम सुभाऊ।
प्रथम दीख दुख सुना न काऊ॥
तदपि धीर धरि समउ बिचारी।
पूँछी मधुर बचन महतारी॥
मोहि कहु मातु तात दुख कारन।
करिअ जतन जेहि होइ निवारन॥

इस पर श्रीमाता कैकेयीजी ने कहा कि राम तुम पर राजा का स्नेह बहुत है, उन्होंने मुझे दो बरदान देने के लिये कहा है, किन्तु तुम्हारे संकोच को छोड़ नहीं सकते। यही एक कारण है उनके दुखी होने का। इसी क्रम में वे अपने सभी निर्दय कृत्यों को कह गईं। तब तो त्याग-मूर्ति श्रीराघव मुसकाने लगे—

मन मुसुकाइ भानु कुल भानू।
रामु सहज आनन्द निधानू॥
बोले बचन बिगत सब दूषन।
मृदु मञ्जुल जनु बाग बिभूषन॥

चौदह वर्ष के बनवास से बढ़ करके दुख का विषय इस सुखमय समय में और क्या हो सकता है, किन्तु चौदह वर्ष के वनवास को सुनकर सरकार कहने लगे कि मां मुझे बनवास मिला है यह तो बहुत थोड़े सी बात है, पिताजी के दुख को देखते हुए तो दुखी होने का कोई महान् कारण जान पड़ता है।

थोरेहिं बात पितहिं दुख भारी।
होति प्रतीति न मोहि महतारी॥
राउ धीर गुन उदधि अगाधू।
भा मोहि तें कछु बड़ अपराधू॥
जाते मोहि न कहत कछु राऊ।
मोरि सपथ तोहि कहु सति भाऊ॥

निदान श्री कैकेयी मैया भरत की शपथ और सरकार की ही आन देकर अन्य कारणों से अपने को अनभिज्ञ बताने लगीं। इस पर सरकार श्री भैया भरत के राज्य का समर्थन करते हुए कहने लगे मां—

भरतु प्रान प्रिय पावहिं राजू।
बिधि सब बिधि मोहि सनमुख आजू॥
जौं न जाउँ बन ऐसेहु काजा।
प्रथम गनिअ मोहि मूढ़ समाजा॥

राम का राज्य मानों शरीर को राज्य था और भरत का राज्य तो प्राण को राज्य है। यह है त्याग। श्री राघवेन्द्र तन, मन, बचन से तपस्वी थे—

तन से:—बलकल बसन जटिल तन स्यामा।
जनु मुनिभेष कीन रति कामा॥

मन से:—श्री अम्बा कौशल्या जू के राज्य की उत्सुकता मई वाणी सुनकर तपस्येच्छुक राघवेन्द्र की दशा देखें,

मातु वचन सुनि अति अनुकूला।
जनु सनेह सुर तरु के फूला॥
सुख मकरन्द भरे श्रिय मूला।
निरखि राम मन भँवरु न भूला॥

वचन से:—बरस चारि दस बास बन,
मुनिब्रत बेष अहार।
ग्राम वास नहिं उचित सुनि,
गुहहि भयो दुख भार॥

परोपकार की क्रिया इससे बढ़ करके क्या होगी कि निशिचरहीन महि करने में सीता हरण हुआ। भैया श्री लक्ष्मण जी को शक्ति लगी, रावण से युद्ध तक करना पड़ा किन्तु इसका विचार नहीं किया गया। जब दण्डकारण्य में श्री सरकार घूम रहे थे उस समय राक्षसों के खाये हुए मुनियों के हड्डियों के ढेर को देखकर पूछने लगे—

अस्थि समूह देखि रघुराया।
पूछी मुनिन्ह लागि अति दाया॥
जानत हूँ पूछिअ कस स्वामी।
समदरसी तुम्ह अन्तरजामी॥
निसिचर निकर सकल मुनि खाये।
सुनि रघुवीर नयन जल छाये॥

बस फिर क्या था, आपने राक्षसों से ऋषीश्वरों को अभय करते हुए प्रतिज्ञा कर दिया कि—

निसिचर हीन करउं महि,भुज उठाय पन कीन्ह।
सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि, जाइ जाइ सुख दीन्ह॥

सरकार के द्वारा वन्य जीवों ने इन्हीं सब गुणों को सीखा। भगवान् राघवेन्द्र ने उन्हें अपने चरित्रों के द्वारा पढ़ाया। बनवासी सरकार जब चित्रकूट पहुँचे तब कोल किरात भील बनवासी सब दौड़े आये—

यह सुधि कोल किरातन्ह पाई।
हरषे जनु नव निधि घर आई॥
कन्दमूल फल भरि भरि दोना।
चले रंक जनु लूटन सोना॥

और श्री सरकार के समक्ष आकर भेंट देकर चित्र की भांति खड़े होकर टकटकी लगाये देखने लगे। श्री राघवेन्द्र ने स्नेह में डूबे हुए जानकर प्रेम से पुचकारा, आदर किया, तब किरातों ने अपने को धन्य मानकर अपने ढंग की सेवा करने का आश्वासन दिया और निःसंकोच आज्ञा देने की प्रार्थना की।

हम सब भाँति करब सेवकाई।
करि केहरि अहि बाघ बराई॥
बन बेहड़ गिरि कन्दर खोहा।
सब हमार प्रभु पग पग जोहा॥
तहँ तहँ तुमहि अहेर खेलाउब।
सर निरझर जल ठांउ देखाउब॥
हम सेवक परिवार समेता।
नाथ न सकुचब आयसु देता॥

करुणानिधान सरकार ने किरातों के प्रेम भरे शब्दों को सुनकर स्वीकार कैसे किया? न तो उन्हें सेवक की तरह अपनाया और न मित्र की तरह, उन्हें राघव अपनाते हैं पुत्र की तरह।

बेद बचन मुनि मन अगम ते प्रभु करुना ऐन।
बचन किरातन्ह के सुनत जिमि पितु बालक बैन॥

पुत्र में पिता का गुण अवश्य कुछ होना चाहिये तभी जिमि पितु बालक बैन की तरह अपनाना सार्थक होगा। अब चरित्र बल देखें। कोल-किरातों के श्रद्धा भाजन एवं सर्वस्व बनकर सरकार चित्रकूट में रहने लगे। श्री भरतलालजी, माताएँ, गुरु, एवं परिजन पुरजन सहित भगवान राघवेन्द्र को मनाने के लिये चित्रकूट पहुंचे। उस समय बन-वासियों ने जो भरतजी का स्वागत सेवा किया वहीं हमें श्रीराम-चरित्र से चरित्रवान नागरिक बने हुए कोलों का दर्शन होता है। परोपकार एवं पर-सेवा परायणता

स्वभाव वस कोल भील, भरतजी के स्वागत के लिये दौड़ पड़े—

कोल किरात भिल्ल बनवासी।
मधु सुचि सुन्दर स्वाद सुधासी॥
भरि भरि परन पुटी रचि रूरी।
कन्द मूल फल अंकुर जूरी॥
सबहि देहिं करि बिनय प्रनामा।
कहि कहि स्वाद भेद गुन नामा॥

कोल किरात और भील आदि वनवासी लोग पवित्र सुन्दर और अमृत-तुल्य स्वादिष्ट मधु को सुन्दर दोना बनाकर और उनमें भर-भर कर तथा कंद, मूल, फल और अंकुर आदि की जूड़ियों को सबको विनय-पूर्वक प्रणाम करके उन चीजों के अलग-अलग स्वाद भेद, गुण और नाम बता बताकर देते हैं। श्रीराघवेन्द्र ने अवध का त्याग किया किन्तु किरातों के तो वन के फल-फूल ही वैभव हैं। अस्तु जब अवध पुरवासी कंदमूल फलों के मोल देते हैं तो त्याग की भावना से ही उसे नहीं लेते।

देहिं लोग बहु मोल न लेहीं।
फेरत राम दोहाई देहीं॥

जब मूल्य ही नहीं लेते तो श्री भरतलाल जी के समाज के लोगों ने फल फूल आदि को लौटाना चाहा। इस पर कोल भील श्रीराम की ही दोहाई दे रहे हैं। और नम्रता से कहते हैं।—

कहहिं सनेह मगन मृदु बानी।
मानत साधु प्रेम पहिचानी॥
तुम्ह सुकृती हम नीच निषादा।
पावा दरसनु राम प्रसादा॥
हमहिं अगम अति दरस तुम्हारा।
जस मरु धरनि देव धुनि धारा॥

सरकार! हमें तो आपका दर्शन भी दुर्लभ है हमें अवश्य ही अपनाकर यह फल फूलादि स्वीकार करें। देखिये न आप के पूर्वज और राजा हैं, श्री राघवेन्द्र सरकार और हमारे प्रधान हैं निषादराज गुह! उन दोनों की कैसी जोड़ी बैठी, उसी तरह से हमारी और आप लोगों की जोड़ी हो जाय अर्थात् अपनालेवें।

राम कृपाल निषाद नेवाजा।
परिजन प्रजउ चहिअ जस राजा॥

अपनी भूख शान्ति के लिये या संग्रह के लिये फल फूल न लें हमें अपनाने के लिये ले लीजिये।

यह जिय जानि संकोच तजि करिय छोह लखि नेहु।
हमहिं कृतारथ करन लगि फल तृन अंकुर लेहु॥

असल में हम आपकी सेवा ही क्या कर सकते हैं। तस पूजा चाहिये जस देवता न्याय से आपकी सेवा तो राजोचित हो किन्तु हमारी योग्यता कहाँ।

तुम प्रिय पाहुने बन पगु धारे।
सेवा जोग न भाग हमारे॥
देब काह हम तुमहि गोसाईं।
ईंधन पात किरात मिताई॥

हाँ हम लोग आप लोगों की एक बहुत बड़ी सेवा कर रहे हैं और वह यह कि आपके जो बोरिया बंडल गोल नहीं कर दे रहे हैं। नहीं तो कब के नौ दो ग्यारह हो गये होते। क्योंकि हमारा ऐसा स्वभाव ही है।

यह हमार अति बड़ि सेवकाई।
लेहिं न बासन बसन चोराई॥

हम लोग जड़ जीव हैं, जीवों की हिंसा करने वाले हैं, नीच हैं रात दिन पाप करते ही जाता है फिर भी पेट में न दाना और न कमर में लंगोटी ऐसी दशा है।

हम जड़ जीव-जीव गन घाती।
कुटिल कुचाली कुमति कुजाती॥
पाप करत निसिबासर जाहीं।
नहिं पट कटि नहि पेट अघाहीं॥

यहाँ प्रश्न हो सकता है कि जब तुम लोग इतने दुष्ट हो, नीच हो तो तुम्हारे हृदय में धार्मिक

कैसे ? त्याग परोपकार सेवा विनयादि गुण कैसे ? इन प्रश्नों के उत्तर स्वरूप किरातों ने कहाः—

पाप करत निसि बासर जाहीं।
नहिं पट कटि नहिं पेट अघाहीं॥
सपनेहुं धर्म बुद्धि कस काऊ।
यह रघुनंदन दरस प्रभाऊ॥
जब ते प्रभु पद पदुम निहारे।
मिटे दुसह दुःख दोस हमारे॥

तभी तो गोस्वामी जी अन्यत्र लिखते हैं—भयेउ साधु सब कोल किरातन, राम दरस मिटि गये कलुषाई। यहाँ तो मनुष्यों की बात बताई गई है किन्तु पशु पक्षियों तक में श्रीराम चरित्र का प्रभाव है। जिस समय भैया श्रीभरत लाल जी चित्रकूट भ्रमण कर रहे हैं उस समय मृग, पशु, पक्षी, तृणादि सब के सब जिनपर श्री रामचरित्रकी छाप लगी है ऐसे वन्य-जीव श्री भरत लाल जी की सेवा करते हैं—

सहित समाज साज सब सादे।
चले राम बन अटन पयादे॥
कोमल चरन चलत बिनु पनहीं।
भइ मृदु भूमि सकुचि मन मनहीं॥
कुस कंटक काँकरी कुराई।
कटुक कठोर कुवस्तु दुराई॥
महि मंजुल मृदु मारग कीन्हें।
बहत समीर त्रिविधि सुख लीन्हें॥
सुमन बरषि सुर घन करि छाहीं।
बिटप फूलि फलि तृन मृदुताहीं॥
मृग बिलोकि खग बोलि सुबानी।
सेवहिं सकल राम प्रिय जानी॥

यह है चरित्रवान श्री सरकार का अद्भुत चरित्र बल।

बोलिये श्री राघव सरकार की जय !

श्री शिवा शिव विनोद

(मानस तत्वान्वेषी पं० श्री रामकुमारदास जी 'रामायणी' वे० भू० सा० र० अयोध्या)

श्री शिवा—

भाँग की टाटिन के घर में नित साँपन के विष सों भरती।
डूँड़ोसोबैल न खेती न पाती न अन्न न वस्त्र कहा करती॥
मुख पाँच भयंकर पन्द्रह आँखिन देखि कुमार हिये डरती।
हँसि हेरि हरैं कहैं हौले शिवा हमना वरतीं तुम्हें को बरती॥

श्री शिव--

सिंहावलोकन—

बरतो नहिं मानुष देव कोऊ पितु बंधु पहारन में मरतो।
मरतो लखि खप्पर खड्ग भयंकर काली कराली लखे डरतो॥
डरतो मृगराजकी गाज सुने कबहूँ न कुमारपनो हरतो।
हर तो हँसि हेरि उमासों कहैं हमना बरते तुम्है को बरतो॥

रामायण कालीन वर्णाश्रम धर्म

श्री पं० रामकुमार उपाध्याय

बोले बन्दी बचन बर, सुनहु सकल महिपाल।
पन बिदेह कर कइहिं हम, भुजा उठाय बिसाल॥२४६॥
से
कुँअरि मनोहर बिजय बड़ि, कीरति अति कमनीय।
पावनिहार बिरञ्चि जनु, रचेउ न धनु दमनीय॥२५१॥

यहां पर प्रश्न यह उठता है कि धनुष यज्ञ में क्या विदेह का यही प्रण था कि कोई भी धर्म वाला चाहे ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य तथा शूद्र किसी भी वर्णाश्रम धर्म का क्यों न हो धनुष भङ्ग कर सकता है जिसके सङ्ग श्री सीताजी का स्वयं वरण उपयुक्त हो सकता था ?

प्रातः स्मरणीय सन्त शिरोमणि को इस कलि का पूर्णरूपेण अनुभव प्राप्त होचुका था। वह यह समझते थे कि सन् १९५३ ई० के इस वैज्ञानिक युग में ऐसे भी कुतर्की व्यक्ति होंगे जिनके मस्तिष्क में ऐसी भावनायें तथा शङ्कायें घर कर सकती हैं कि इसी भांति का महाराजा जनकजी ने प्रण कर डाला होगा। पर धन्य! इस कल्पना के जाग्रत होने के पूर्वापरि ही अनुभवगम्य श्री बूढ़े बाबा ने समय ही नहीं दिया अपितु उसी पूर्व प्रसंग में ही सब कुछ कह डाला है।

उस मखशाला में तीन प्रकार के महानुभाव पधारे थे :- §

प्रथम—कतिपय ऐसे सज्जन विराज रहे थे जो धनुषभङ्ग का नियमित निमंत्रण-पत्र प्राप्तकर पधारे थे। ऐसे केवल क्षत्री महाराजा थे यद्यपि उनमें अन्तर्वर्णों की कोई भी ऊँच-नीच व्यवस्था अवश्यमेव नहीं थी जैसे कछवाह, भदौरिया, सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी, राठौरादि भले ही यह सभी लोग विद्यमान रह सकते थे।

द्वितीय—अधिकातर ऐसे वीर पधारे थे जिन्हें निमंत्रित तो अवश्य किया गया था पर वह दर्शक-बृन्दों की परिपाटी में थे। ऐसे प्रायः सभी जाति, वर्ग तथा वर्णों की श्रेणियां थीं। कुछ तो जनक जी के गुरु भाई शैव सम्प्रदाय अनुयायी भी विराज रहे थे जैसे रावण, वाणासुर इत्यादि।

तृतीय—कतिपय ऐसे दर्शक समुदाय उपस्थित श्रेणी में विराजते थे जिनके हेतु आमंत्रण-निमंत्रण कुछ भी नहीं भेजा गया था परन्तु पावन अभिलाषा-पूर्ण प्रभु दर्शनार्थ पधारे थे।

देव दनुज धरि मनुज सरीरा, बिपुल बीर आये रनधीरा।

विचारणीय वस्तु है कि उस युग में सर्वथा अधिकांश क्षत्री वंश के राजा महाराजा होने की परिपाटी वेदानुकूल चली आरही थी जैसा कि चिरकालीन वर्णाश्रम धर्म वैदिक मंत्रों में आता है कि:— ब्राह्मणस्य मुखमासीत् बाहुः राजन्यः कृतः। उरोद्जात यद् वैश्यःशूद्रमपदाभ्यामजायत्॥ ब्राह्मण उस प्रजापति के मुख के समान श्रेष्ठतम हुआ तथा क्षत्री वर्ग हेतु भायतीत इति क्षत्रियः इनको उस प्रजापति का हस्त किया। क्षत्री वर्ण को शरीर रक्षक बाहु की भांति वर्णों के रक्षार्थ कार्य अर्पण किया गया। उक्त पदों के पठन-पाठनसे ज्ञात हो रहा है कि महाराजा शब्दके जितने भी सम्बोधन प्राप्त हो रहे हैं वह सभी क्षत्री वीरों के हेतु ही प्रयुक्त हुये हैं। अन्य वर्ण धर्म वालों को कहीं भी

§श्री जानकी जी के स्वयंवर की घोषणा की गई थी। निमन्त्रण किसी को भी नहीं दिया गया था। जिन स्वयंवरों में कोई प्रतिज्ञा होती थी, उनका निमन्त्रण किसी को नहीं दिया जाता था। जो प्रतिज्ञा पूरी न कर सके, उसे निमन्त्रण देना उसका अपमान है। निमन्त्रण न देना शक्तिहीन मानना है। अतः निमन्त्रण दिया ही नहीं जाता था। घोषणा सुनकर जो अपने को समर्थ समझे, वह आवे। 'आये सुनि हम जो पन ठाना।' में यह बात स्पष्ट है।

—सम्पादक

सम्बोधित नहीं किया गया। उपरोक्त दोहे में जहां बन्दीजनों ने विदेह प्रण का वाणी विस्तार किया है, आया है 'सुनो सकल महिपाल !' अर्थात् केवल क्षत्री राजा वर्ग श्रवण करें क्योंकि वे ही धनुषभंग के उपयुक्त अधिकारी पात्र थे। यदि इस स्थल पर अन्य वर्ण वालों का सम्बोधन अभीष्ट होता तो यह अवश्य लेख आता कि'सुनो सकल पंडितगणमुंशी वृन्द,सेठ समुदाय अथवा अन्य वर्ण धर्म के वीर युवको ! इत्यादि। परन्तु यहां तो यह कल्पना ही निरी थोथी है। फलतः सिद्ध हुआ कि सभी उपयुक्त शब्द क्षत्री राजा के ही बोधक हैं अन्य के कदापि नहीं।

नृप, भूप, महीप, भूपति तथा महिपालादि।

इसी प्रसंग में एक स्थल पर तो 'महीप' शब्द प्रयुक्त करके वयोवृद्ध संतप्रवर ने कलम ही तोड़ डाली है।

जिनके कछु विचार मन माहीं।
चाप समीप महीप न जाहीं॥

'महीप' यहां इतना उपयुक्त हो जाता है कि कोई अन्य शब्द हो ही नहीं सकता। जिन क्षत्री राजाओं में कुछ भी मनन शक्ति अवशेष रह गई थी उन्होंने यह सोचा कि श्रीसीता जी तो मही की ही पुत्री हैं पर हम लोग महीपालन करने वाले महीप हैं अतः वे हमारी पुत्री तुल्य हुईं क्योंकि हम महीपति भी तो हैं। यह भाव जागृत होते ही वह भाग्यशाली नर पुङ्गव चाप सन्निकट गये तक नहीं अग्रिम क्रिया करने को कौन कहे।

धन्य ! साधुवाद !! संत प्रवर की लेखन शैली तथा उनकी भव्य विचार धारा !!!

एक बार बोलिये सच्चिदानन्द कंद कौशल किशोर की जय !

—•—

प्रभु प्रार्थना

जै जै दीन संकट हरन॥
आर्य भारत जन पतित होय, रहे चारो बरन।
छाड़ि आपन धर्म गौरव, भये पापाचरन॥
होत नारिन अति अनादर, लगिलक्ष्मी टरन।
बुद्धि हीन कपूत लागे, मात गोवध करन॥
दूध अरु घृत हीन होयजन, निबल लागे मरन।
खोज निज पौरुष सहायक, लगे डूबन तरन॥
पहिर पट अभिमान कायर, भेष अवरन वरन।
कू प्रथाकि नावपै चढ़ि, पार चाहत करन॥
डांडलै दुष्कर्म को सब, अंध खेवत तरन।
राखियो प्रभु दृष्टि इनपर, नाहि होइहैं मरन॥
नाथ अब अवतार धरहू, सुमिर आपन परन।
आज 'माधव' धर्म कोहै, देशसे परिहरन॥

संग्रहकर्त्ता—विश्वनाथ प्रसाद अग्रवाल

मन महं चरन बंदि सुख माना

[दण्डी स्वामी श्री प्रज्ञानन्द जी सरस्वती]

पंचवटी के पुण्य पावन आश्रम में त्रिदंडी सन्यासी के वेष में जाकर बहुत 'राजनीति, भय प्रीति दिखाने पर जब सीता जी ने यति वेष-धारी रावण को कहा है कि—

'बोलेउ बचन दुष्ट की नाईं।
तब रावन निजरूप देखावा।
भई सभय जब नाम सुनावा।

तब सीता जी वशर्तो होती ही नहीं हैं और निडर होकर रावण को ही डांटने लगी तब

'सुनत बचन दससीस रिसाना,
मनमहुं चरन बंदि सुखमाना॥ अर० २१ ३६।

यहाँ रावण का सीताजी पर क्रोध करना और उसी समय उनके चरणों को मनमें वन्दन करके सुख मानना, इन परस्पर विरुद्ध क्रियाओं को देखकर इन बचनों की संगति लगाने में भिन्न-भिन्न मत पाये जाते हैं।

रावण के इस परस्पर विरोधी कृति के हेतु के विषय में रामायणी और टीकाकारों में बहुत मत-भेद है।

'तौ मैं जाइ बैरु हठि करउँ।
प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ॥
होइहि भजनु न तामस देहा।'

(अरण्य २३) इत्यादि बचनों में रावण ने हठात् रामजी से वैर करने का निश्चय ठाना है। यद्यपि पूर्व निश्चित कार्यप्रणाली में बहुत अन्तर पड़ गया है तथापि रामजी से वैर करने का निश्चय लेशमात्र शिथिल भी नहीं हुआ है। उस निश्चय को दशानन ने अन्त तक सुचारु रूपसे निबाहा है। इधर तो रावण सीताजी को मानसिक वंदन कर गया है, फिर मानसिक विरोध तो रहा ही नहीं ऐसी शङ्का हो जायगी, तथापि रावण ने रामजी से ही वैर करने का निश्चय किया है; सीताजी से वैर का नहीं। रावण के मन में विचार करते-करते यह संशय हो गया था कि वे खरदूषण का वध करने वाले, नररूप भगवान हैं या नृप पुत्र हैं।

आइ गयउ प्रभु रहु खल ठाढ़ा'

इत्यादि उत्तर से रावण के संशयकी निवृत्ति हो गयी और इसने प्रथम ही जो कयास किया था कि

'खरदूषन मोहि सम बलवन्ता।
तिन्हहिको मारइ बिनु भगवन्ता॥

यह निसंशय निश्चित हो गया कि

'सुर रंजन भञ्जन महि भारा,

भगवान ने ही यह नर रूप अवतार लिया है।' इससे

'प्रभु सर प्रान तजे भव तरऊँ'

यह भी निश्चित हो गया। और रामजीसेवैर करनेको सीता जी को लेजाना यह मुख्य साधन होगा इससे हरण करके ले जाने का निश्चय भी किया। और 'जगदम्बिका रूप गुनखानी' जानकर मनमें ही वंदन कर लिया और आनंद हो गया कि अपनी मनीषा अब पूरी हो जायगी (प्रभु सर प्रान तजे भव तरने की)। इसके ऊपर शंका उठायी जायगी कि फिर क्रोध क्यों? समाधान—अनुनय विनय प्रीति और भीति बताने पर भी सीता जी अनुकूल होती नहीं हैं यह देखकर ही क्रोध किया है। सुन्दर कांड में सीता जी को तलवार

से मारने दौड़ता है यह कैसा ? यह भी राम-विरोधांगभूत क्रोध है, सीता जी से विरोध नहीं है। वह जानता था कि सीता जी आदि-माया हैं; उनको सताने से वे विकल होकर प्रार्थना करती रहेंगी और भगवान शीघ्रतम लंका में आ जायँगे और

"प्रभु सर प्रान तजे भव तरऊँ"

यह शीघ्र सिद्ध होगा। सनकादिक मुनियों से रावण ने कृत युग के अन्त में उपदेश पाया था कि मानव और देवों के हाथ से युद्ध में मरने पर स्वर्ग प्राप्ति होती है, तथापि पुनश्च जन्म लेना पड़ता है; असुरों के हाथ युद्ध में मरने से नर्क प्राप्ति होती है और भगवान के हाथ युद्ध में मरने से मुक्ति निर्वाणकी प्राप्ति होती है। पश्चात् नारद जी से पूँछने पर मन्त्र मिला था कि भगवान के हाथ से युद्ध में मरने का एक ही सुलभ उपाय यह है कि त्रेता में भगवान दशरथनन्दन के रूप में अवतीर्ण होकर आदिमाया सीता जी के साथ वन में रहेंगे तब उनकी धर्मपत्नी को हठात् हर के ले आने से कार्य हो जायगा, किन्तु यह मन्त्र गुप्त रखना चाहिये। मानस में भी यह कथा सूचित की गयी है, लंकाकांड में कुम्भकर्ण के बचनों में—

नारद मुनि मोहि ग्यान जो कहा।
कहतेउँ तोहि समय निरबहा॥
कीन्हेहु प्रभु विरोध तेहि देवक।
सिव विरंचि सुरजाके सेवक॥

कुम्भकर्ण को भी नारद जी ने उपदेश दिया था, कि भगवान से रावण वैर करेगा तब भगवान लंका में आकर युद्ध करेंगे उस समय उनसे युद्ध करके मरने से मोक्ष लाभ हो जायगा इत्यादि। उसी उपदेशका स्मरण कुम्भकर्णने रावण को दिया है (लं० ६३)। वा० रा० उत्तर कांड में अगस्ती जी ने राम जी से कहा है कि 'विज्ञाय च हृता सीता त्वत्तो मरणकांक्षया। लङ्कामानीय यत्नेन मातेव परिरक्षिता'॥ अर्थ रावण ने जान बूझ कर ही सीता जी का हरण,तुम्हारे हाथ से मरने की इच्छा से ही किया और उसने उनको लंका में लाकर माता के समान यत्न से उनका परिरक्षण किया। मानस में भी इस श्लोक की सूचना मिलती है 'राखिसि जतन कराइ' केवल 'मातेव' शब्द का प्रयोग (दो० २६३ में) नहीं किया है। वैसा करने से समग्र विरोध नाटक ही नीरस हो जाता। वाल्मीकीय में भी उत्तर काण्ड में यह उल्लेख है।

रावण कभी सीता जी पर काम मोहित था ही नहीं। जैसे राम जी विरह विलाप लीला करते रहे हैं; वैसा रावण ने भी यह सब नाट्य किया है। जो रावण अन्तःकरण से ही काम लुब्ध हो जाता, सीता जी पर तो मानस के अनुसार एक मास की अवधि, और वाल्मीकीय के अनुसार दो मासकी अवधि नहीं दे देता।

मास दिवस महुँ कहा न माना।
तौं मैं मारबि काढ़ि कृपाना॥

'द्वाभ्यामूर्ध्वं तु मासाभ्यां भर्तारं मामनिच्छतीम्। ममत्वा प्रातराशार्थे सूदाश्छेत्स्यन्ति खण्डशः' (वा० रा० सु० का० ६),। वह प्रतिदिन सीता जी के पास जाकर उनको राजनीति भय प्रीति क्यों न बताता ? उसको रोकने वाला लंका में कोई था ही नहीं। जो रावण हृदय से ही सीता-काम-लुब्ध होता तो राम प्रेमी त्रिजटा को सीता जी के समीप क्यों रहने देता ? (३) हनुमान जी के समक्ष सुन्दर काण्ड में; रावण ने सीता जी को समझा बुझाकर, भीति, लोभ, नीति बताकर वश करने का प्रयत्न करने के पश्चात्, पुनश्च कभी ऐसा प्रयत्न करने का उल्लेख एक

भी रामायण में नहीं है, क्या सच्चे कामी पुरुष से ऐसा बन सकता है कभी ?

खरदूषणादिकों का वध करने वाले, जिनका एक दूत आकर लंका का दाह कर गया था और 'मेरे स्वामी शीघ्र ही आकर तेरा नाश करेंगे' ऐसा कह गया था, वे महाशत्रु सागर के पार आ गए हैं, सागर पर सेतुबन्धन का प्रयत्न हो रहा है, इत्यादि सब समाचार चरों से मिलने पर भी सेतु-बन्धन कार्य में विघ्न न करके रावण के समान त्रैलोक्य विजयी, कुटिल नीतिज्ञ राजा, क्यों स्वस्थ बैठ रहा ? रामजी का बल क्या है वह उसने जनकपुरी में अपने नेत्रों से ही देखा था। रामजी ने परशुराम जी को परास्त करने की बात मारीच से ही तो ज्ञात हो गयी थी। जिस सहस्राबाहु ने कीड़े के समान रावण को पकड़ लिया था उस सहस्रार्जुन का वध करने वाले परशुराम जी का पराभव राम जी ने किया। यह समझने पर भी ऐसे शत्रु को रावण ने लंका में बिना विरोध आने दिया, इससे यह सूचित होता है कि रामजी से युद्ध करके मरना इतना ही कार्य उसको करना था। जिस लंका में मसक समान रूप-हनुमानजी को एकबार गुप्त रीति से प्रवेश करना असंभव हो गया था, उसी लंका में बिना विरोध जाना और सुषेण जी को घर के सहित बिना विरोध ले आना और वैसे ही फिर लौटाना क्यों शक्य हो गया ? लक्ष्मण के समान शत्रु को जिलाने के लिये सुषेण को बिना विरोध जाने देना क्या सूचित करता है ? लक्ष्मणजी मूर्छामुक्त होने तक और रामजी नाग पाश मुक्त होने तक युद्ध क्यों बन्द रखा ?। गरुड़ जी को जीतना तो रावण के हाथ का खेल था।

'मम बल जान सहित पति सोई',

तथापि गरुड़ जी के आने में और राम जी को नागपाश मुक्त करने के कार्य में रावणने विघ्न भी नहीं निर्माण किया। इन सब कारणों से यह सिद्ध हो गया कि रावण केवल भगवान के साथ वैर करके युद्ध में उनके हाथ मरने के लिये ही सब प्रयास करता रहा।

राम विरोध का मुख्य साधन सीता जी ने विरोध नहीं किया, शापाग्नि से भस्म नहीं कर दिया, इससे सुख-आनन्द हो गया; और कृतज्ञत्व बुद्धि से मानसिक नमन किया। मानसिक नमन का महत्व शरीर-नमन से अधिक है 'मनःकृतं कृतं लोके न शरीरकृतं कृतम्'। फिर यह प्रश्न बाकी रहता है कि नमन और क्रोध उनकी संगति कैसी लगाना।

रावण तो सत्वशील था ही नहीं। वह तमोगुण प्रधान रजोगुणी था।

'होइहि भजन न तामस देहा'

यह उसका ही वचन है। ऐसे पुरुषों में ऐसी विरुद्ध कृति व्यवहार में भी हमेशा देखी जाती है। स्वयं अपनी जननी भी अपनी इच्छानुकूल न करेगी तो वे लोग माता पर भी क्रोध करेंगे, इतना ही नहीं कटुवाक्यों से माता को विद्ध भी करेंगे। और नमन भी नित्यशः करते रहेंगे। उनका क्रोध और सद्भाव दोनों क्षणिक ही होते हैं। रावण तो ध्येयनिष्ठ है, ध्येयवादी परशुरामजी ने अपनी जननी को भी मार डाला। मानस में ही परशुरामजी ने राम-लक्ष्मण को प्रेम से आशीर्वाद देने पर भी कितना क्रोध किया है यह अवतरणों से बताने की आवश्यकता ही नहीं है। भीष्माचार्य और अर्जुन दोनों कृष्णभक्तों में भी युद्ध हुआ है

मानस-सरोवर

ले०—श्रीसुरेशसिंह जी 'व्यथित'

भारत के वक्षस्थल पर यवनश्री मुस्करा रही थी, हिन्दुओं के सुख के दिन दुःख के रूप में परिणित हो चुके थे, गम्भीरता अशान्ति के रूप में बदल चुकी थी। उस समय हिन्दू-मात्र को धैर्यता बंधाने वाला कोई दूसरा सहारा नहीं था। देवनदी गंगा जी अपने प्रभाव को गुप्त कर मन्द गति से बह रही थीं। उन्हें सन्मार्ग पर लाने वाला कोई दूसरा अवलम्ब नहीं था। गंगा जी का यहां कोई जोर नहीं क्योंकि वह परलोक की सहाय हैं अतः वह कर ही क्या सकती थीं। ऐसे समय पर इस मानस सरोवर की रचना की गई। इसको बनाने वाला कारीगर बड़ा ही चतुर रहा। इस सरोवर के बनवाने वाले भगवान भूतनाथ शशि शेखर गंगाधर सदाशिव हैं और कारीगर बनाने वाले जो अत्यन्त ही इस शिल्प विद्या में चतुर हैं वे हैं महात्मा गोस्वामी तुलसीदास, जिन्होंने अपनी कारीगरी का परिचय सारे संसार को दिया है। प्राणियों में सद्भावना, एकता, ईश्वर-भक्ति की सच्ची लगन पैदा कर दी है। क्या था, सरोवर तैयार हो गया और उससे यही आवाज सुनायी देने लगी—

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी,
सो नृप अवसि नरक अधिकारी॥

समस्त जनता ने इसी मंत्र का नारा लगाय और अपने को सुख शान्ति के स्थान पर पाया। संसार में राम-भक्ति की सरिता बह रही है और उसका उद्गम स्थान यही मानस सरोवर है। जो इस सरिता में स्नान करना चाहें, प्रथम इस मानस सरोवर में गोता लगाये। इसके अन्दर भक्ति रूपी अमूल्य रत्न पड़े हैं। जिसे पाने की इच्छा हो वह उतना ही गहरा गोता लगाये क्योंकि यह सरोवर अगाध है इसमें बहुत श्वांस साधने की जरूरत है। जिसने इसमें गोता लगाया अपने को शान्ति और सुख के शिखर पर बैठा हुआ पाया। फिर आनन्द-घन भगवान राम उससे दूर नहीं।

राम नाम कलि अभिमत दाता।
हित परलोक लोक पितु माता॥

यह कहना सम्भव न होगा कि तीर्थाटन करने या अन्य पुराणादि से भगवान की प्राप्ति नहीं होती; नहीं, है सभी में लेकिन, अन्य कर्मों के लिये पैसे व समय की आवश्यकता है। तीर्थयात्री को वहाँ ही स्वयं पहुँचना होगा। परन्तु यह मानस सरोवर प्रत्येक मानव जाति को घर में ही सुलभ। है न ज्यादा धन की आवश्यकता, न अधिक समय की। सिर्फ आवश्यकता है तो इच्छा और विश्वास की, फिर मनोवाञ्छित फल प्राप्त करने में कोई कठिनता नहीं:—

राम चरन रति जो चह, अथवा पद निर्वान।
भाव सहित सो यह कथा, करउ श्रवन पुट पान॥
(उत्तर० १२८॥)

इसके सेवन से मुनियों को भी दुर्लभ गति प्राप्त होती है जिस की सच्ची लगन सच्चा विश्वास है यथा:—

मुनि दुर्लभ हरि भगति नर पावहिं बिनहिं प्रयास।
जे यह कथा निरंतर सुनहिं मानि बिस्वास॥
उत्तर० १२६॥

इस सरोवर में सुन्दर रामनाम रूपी मणि भरी है अतः उसी के ढूँढने का प्रयास करना चाहिये:—

एहि महँ रघुपति नाम उदारा।
अति पावन पुरान श्रुति सारा॥

सरोवर का स्वरुप

इस सरोवर की भूमि अच्छी बुद्धि ही है और गहरा स्थल हृदय ही है, वेद और पुराण ही समुद्र है, साधु महात्मा ही बादल हैं और राम के यश रूपी जल से इसे भर दिया गया है साधु रूपी बादल द्वारा बरसा कर वह जल अत्यन्त मीठा मनोहर और मंगल का करने हारा है। जो सगुण-लीला का वर्णन है वही इस जल की स्वच्छता मैल दूर करने वाली है, और जो प्रेम भक्ति है जो कहने में नहीं आती वही इस जल

की मधुरता एवं सुन्दर शीतलता है। सो रामयश के जल से इस सरोवर का स्थल पूर्ण हुआ है। और शरद-ऋतु पाकर पुराना होकर सुखदायी हुआ है।

भरेउ सो मानस सुथल चिराना,
सुखद शीत रुचि चारु थिराना ॥

अब इस सरोवर के चार घाट बनाये गये हैं जो सुन्दर चार सम्वाद बुद्धि पूर्वक विचार कर रचे हैं जैसे शिव-पार्वती, काग-भुशुण्डि गरुड़, याज्ञवल्क्य-भरद्वाज, गोसाईं जी और भक्तों के जो सम्वाद है वे ही इस पवित्र सरोवर के चार मनोहर घाट हैं। यथाः—

सुठि सुन्दर सम्वादवर, विरचेउ बुद्धि विचारि।
तेइ यह पावन सुभग सर, घाट मनोहर चारि ॥ बा० ३

सात काण्ड ही इसकी सात सीढ़ीं हैं और मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान राम की जो तीनों गुणों से परे बाधा रहित महिमा हैं वही इस सरोवर के जल की गहराई है। अन्य उपमायें ही तरङ्गों का उठना है सुन्दर चौपाई ही घने पुरइन हैं कविता की युक्ति उज्ज्वल मोतियों की सीपी है छन्द, सोरठा, और अत्यन्त शोभायमान दोहा ही अनेक प्रकार के कमल हैं। और जो सुन्दर उपमा रहित अर्थ, सुन्दर भाषा, सुन्दर अर्थ है वही (मकरन्द) रस और सुगन्ध हैं। पुन्यात्माओं के समूह उज्ज्वल भौंरे हैं ज्ञान, वैराग्य का विचार हंस है, धुनि अवरेब, गुण जाति चार प्रकार के कवित्त मनोहर चार प्रकार की मछली हैं धर्म, अर्थ काम, मोक्ष जो चारों फल हैं ज्ञान, विज्ञान का विचार, नौ रस, जप तप, योग वैराग्य ये सब इस सरोवर के जलचर जीव हैं और जो पुण्यात्मा कर्म-काण्डी साधू हैं उनके नाम गुण ज्ञान का जो कथन है वही अनेक रंग के जल पक्षी हैं, संतों की सभा चारों ओर आम का बाग है और श्रद्धा वसन्त ऋतु है यथा :—

संत सभा चहुँ दिशि अंवराई,
श्रद्धा ऋतु बसंत सम गाई ॥

अनेक प्रकार से भक्ति का विचार, निश्चय क्षमा, दया यह सब उन वृक्षों पर बेलें फैली हुई हैं। संयम विषय का त्याग और नियम सुकर्म का ग्रहण यही फूल हैं, ज्ञान अर्थात् अपने स्वरूप को यथावत् जानना यही फल है और कौशल-किशोर राम के चरणों की प्रीति रस है ऐसा वेद कहते हैं, और भी प्रसंग पाकर जो अनेक कथाएं वर्णन की गई हैं वे ही तोते, कोकिला आदि बहुत रंग के पक्षी हैं यथाः—

औरउ कथा अनेक प्रसंगा,
ते सुक पिक बहु बरन विहंगा ॥

प्रसन्नता से शरीर का पुलकायमान होना फूल बाटिका है, श्रवण बाग है, श्रवण करने से अपने को भूल जाना ही वन है जिसमें सुख रूपी पक्षी विहार करता है। सुन्दर मन माली है, स्नेह के जल से सींचने के लिये नेत्र ही अच्छे घड़े बनाये गये हैं:—

पुलक बाटिका बाग बन, सुख सुविहंग विहारु।
माली सुमन सनेह जल, सींचत लोचन चारु ॥

—बाल० ३७

जो इस चरित्र को भाव सहित संभाल कर गाते हैं वे ही इस सरोवर के चतुर रक्षक हैं इसकी रक्षा यही कि कहीं कोई उपमा आदि अलंकार अशुद्ध न होने पावे-व चतुर कहने से चार का बोध भी होता है ज्ञान, उपासना, कर्म और दैन्य के क्रम से चार रखवाले हैं शिव, कागभुसुण्डि, याज्ञवल्क्य, गोसाईं जी। जो नर नारी इसे प्रतिदिन आदर से श्रवण करते हैं वे ही देवताओं में श्रेष्ठ इस मानस सरोवर के अधिकारी हैं।

अति खल जे विषयी बक कागा,
एहि सर निकट न जाहिं अभागा ॥
संबुक भेक सेवार समाना,
इहां न विषय कथा रस नाना ॥

अर्थात् जो अति दुष्ट बगुले कौए हैं वे अभागे इस सर के निकट नहीं जाने पाते, दुष्ट कौए वह हैं जो कथा के समय बकते या फाल बहस करते हैं, विषयी बगुले वे हैं कि मन तो मछली और मेव-रूपी विषय में है पर देखने में साधू बने बैठे हैं। शंबुक (घोंघा) भेक (मेढक) और सिवार छोटे-छोटे कीड़ों के सामान इसमें नाना-रसों की कथा नहीं है और उसका यही कारण है कि कौआ, बगुला (कामी) जिनका चारा इस सरोवर में नहीं हैं वे पापी हृदय से हार कर नहीं आते। इस सरो

वर में आने के लिये बड़ी कठिनता है बिना भुवन मद्दन राम की कृपा के आया नहीं जाता यथा :—

आवत एहिं सर अति कठिनाई,
राम कृपा बिनु आइ न जाई।

इस मानस सरोवर तक आने का जो मार्ग है वह भी अत्यन्त दुष्कर है उसको पार करना ही कठिन है। जो बड़े कठिन बुरे संग हैं वही तीक्ष्ण खोटा मार्ग है और उन्हीं लोगों के वचन सिंह, व्याघ्र एवं सर्प हैं। घर के अनेक जंजाल काम ही बड़े-बड़े दुर्गम पर्वत हैं उस मार्ग में मोह, मद, मान, विषय वन हैं कुतर्कना ही भयंकर नदी है इस तरह से तो इसका कठिन मार्ग तैयार किया गया हैं परन्तु यह अत्यन्त कष्टदायी उनके लिये हैं :—

जे श्रद्धा संबल रहित, नहिं संतन्ह कर साथ।
तिन्ह कहुँ मानस अगम अति, जिन्हहिं न प्रियरघुनाथ॥
—बाल० ३८

जिन्हें भगवान राम प्रिय नहीं, पास में श्रद्धा का खर्च नहीं, संतों का संग नहीं उन्हें ही यह मानस सरोवर मिलना कठिन है और यदि कोई कष्ट करके जाता भी है तो निद्रा रूपी सरदी जूड़ी आ जाती है या कि फिर मूर्खता का कठिन जाड़ा लगने लगता है जिससे कि वह अभागा स्नान नहीं करने पाता, जब सरोवर में स्नान पान न किया गया तो जल्द ही अभिमान सहित वापिस आ गये और जब कोई पूछने आया तो उसे सरोवर की निन्दा सुनाने लगे और कहने लगे, अजी क्या है कुछ कथा नहीं, घंटों बैठे रहे समझ में कुछ न आया, वक्ता जी क्या बकते रहे। मूर्ख तो हैं आही कैसे सकता है उनकी समझ में, उन्हें तो किस्से कहानी चाहिये फिल्मी गीत चाहिये, तो उनकी समझ में आये इसीलिये कहा है कि—

अति खल जे विषयी बक कागा।
एहि सर निकट न जाहिं अभागा॥

ऐसे धूर्तों को जाना भी न चाहिये कि आप तो स्वयं नहीं जाते और दूसरे को भी अपना साथी बनाते हैं। यही इस मार्ग में सबसे बड़ी कठिनता है लेकिन यह सब विघ्न उसे नहीं व्यापते जिस पर त्रैलोक्य रक्षक राम की कृपा होती है :—

सकल विघ्न व्यापहिं नहि तेही।
राम कृपा कर चितवहि जेही॥

वे ही इस सुन्दर सरोवर में आदर पूर्वक मज्जन करते हैं और जो महाघोर तीन ताप हैं दैहिक-ज्वरादि, दैविक अचानक वज्रपात आदि भौतिक सर्प-पशु आदि उसमें बाधक नहीं होते, अर्थात् उनका ये कुछ नहीं कर सकते, वे मनुष्य इस सरोवर को कभी नहीं छोड़ेंगे जिनका भगवान श्रीराम के चरणों में सच्चा प्रेम है—

ते नर यह सर तजहिं न काऊ।
जिन्हके राम चरन भल भाऊ॥

जो पापी हैं दुष्ट हैं, उनका तो सहज ही स्वभाव है कि उन्हें भगवान की कथा अच्छी नहीं लगती वे स्वभाव से ही इस सरोवर के नजदीक जाने की इच्छा तो दूर रही, इसका नाम स्मरण भी न करेंगे, स्वयं भगवान राम कहते हैं कि:—

पापवंत कर सहज सुभाऊ,
भजन मोर तेहि भाव न काऊ॥
जो पै दुष्ट हृदय सोइ होई,
मोरे सनमुख आव कि सोई।

जब पूर्व जन्म के पाप नष्ट होते, पुण्य उदय होते हैं तभी भगवान के चरणों में प्रीत होती व भगवान की कृपा होती व इस सरोवर में स्नान किया जा सकता है। भगवान ने कहा है कि:—

सन्मुख होइ जीव मोहि जबहीं,
जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं॥
—सुन्दर० दोहा नं०४३ के नीचे

इसलिये हे भाई, यदि इस सरोवर में स्नान करना चाहते हो तो मन लगा कर सत्संग करो:—

जो नहाय चह एहिं सर भाई,
सो सत्संग करउ मन लाई॥

क्योंकि बड़े भाग्य से यह अमूल्य नर तन मिला है तो उसका यह मतलब नहीं कि इसे विषय रस में ही डुबो कर गला दिया जाय।

बड़े भाग मानुष तन पावा,
सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा ॥
साधन धाम मोक्ष कर द्वारा,
पाइ न जेहि परलोक संवारा ॥

✕ ✕ ✕

यहि तन कर फल विषय न भाई,
स्वर्गउ स्वल्प अन्त दुखदाई ॥

वे मूर्ख हैं जो ऐसा अमूल्य तन पाकर और व्यर्थ ही गँवा देते हैं—

नर तनु पाय बिषय मन देहीं,
पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं ।

ऐसों को कोई भला नहीं कहता जो पारस मणि को खोकर रक्त गुंजा ग्रहण करते हैं ।

ताहि कबहुं भल कहइ न कोई,
गुंजा ग्रहइ परस मनि खोई ।

उन्हें यह मालूम नहीं कि यह नर तन कितनी कठिनता से प्राप्त होती हैं ।

आकर चारि लच्छ चौरासी,
जोनि भ्रमत यह जिव अबिनासी ।
फिरत सदा माया कर प्रेरा,
काल कर्म सुभाव गुन घेरा ॥

लेकिन फिर वह परमात्मा चौरासी लच्छ योनियों में भ्रमणकर जीव के कृतार्थ होने के लिये समय देते हैं :—

कबहुँक करि करुना नर देही ।
देत ईस बिनु हेतु सनेही ॥

✕ ✕ ✕

जो न तरै भव सागर, नर समाज अस पाइ ।
सो कृत निन्दक मंदमति, आत्माहन गति जाइ ॥
उत्तर० ४४ ॥

अधिक क्या कहा जाय :—

नर समान नहिं कवनेहुं देही,
जीव चराचर जाचत जेही ।

इसलिये इस सरोवर में स्नान कर पवित्र हो देश कल्याण व जीव उद्धार के लिये भगवत भजन में रत हो जाना चाहिये ।

बोलो मानस सरोवर की जय ।

सेवा

क्या आप रामवन के श्री मारुति भगवान की सेवा करना चाहते हैं ? श्री रामनाम लड्डू समर्पण एक श्रेष्ठ कर्म है । अन्य कर्मों के लिए पत्र व्यवहार कीजिए । आप चाहें तो आश्रम में रहकर स्वयं सेवा करने का अवसर भी प्राप्त हो सकता है ।

श्री रामचरित मानस की उपयोगिता

[श्री पं० शिवबालक जी शर्मा]

रामकथा मंदाकिनी चित्रकूट चित चारु,
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर विहारु।

जिन भाग्यशाली पुरुषों ने पतिव्रता शिरोमणि प्रातः स्मरणीया तपोधना महामहिमान्विता त्रिदेव परिपोषिका श्री अनुसुइया जी द्वारा आह्वानित साक्षात् ब्रह्मद्रव स्वरूपिणी श्री मन्दाकिनी जी का पापपुञ्ज विनाशक दर्शन किया है उनके अनुपम सुस्वादु निर्मल जल कणिका का पान किया है एवं उनके त्रिताप हारी परम सुखद सुगन्धित जल में गोते लगाये हैं वे ही श्री रामकथा की श्री मन्दाकिनी जी के साथ उपमा देने का तात्पर्य सुविधापूर्वक समझ सकते हैं। पुण्यसलिला मन्दाकिनी जी अनन्त स्रोतों के रूप में श्री अत्रि आश्रम के एक परमोच्च विन्ध्यशृङ्ग से प्रस्फुटित होती हैं। उनके शुभ्र जल को सघन उत्तुङ्ग वृक्षावली श्री जानकी कुण्ड तक लगातार आच्छादित किये हुए हैं। श्री अत्रि महाराज की तपोभूमि को अपने नीलमणि-प्रभजल से, जल विहंगों के कलरव से, भ्रमर गुञ्जार से, त्रिविधि समीर संचार से, मृग संचरण से एवं लता वितान की परमा शोभा से सरस और मनोरम बनाती हुई श्री मन्दाकिनी जी फटिक शिला की ओर कल-कल निनाद करती हुई जाती हैं। श्री स्फटिक शिला पर तो ऐसा प्रतीत होता है मानो 'सुर सरि धार' नहीं स्वयं श्री भागीरथी जी ही सहस्त्र धाराओं से हरद्वार के उत्तर प्रदेश में बह रही हों। इनके श्री जानकी कुंड के वाम कूल पर अनेकों कुटीरों, कंदराओं एवं आश्रमों में साधक, सिद्ध, विमुक्तादि भजन, कीर्तन, मनन, ध्यान, हरिगुण गान निरत मत्त रहते हैं। चित्रकूट में श्री रामघाट पर अनेकों देवस्थान संत महात्माओं के प्रश्रय स्थान एवं भारतवर्ष के अखिल प्रादेशिक पुण्यात्मा यात्रियों के सुपास के लिए आश्रय स्थान सुशोभित हैं। जहाँ सहस्त्रों नर-नारी त्रिकाल स्नान कर देवाराधन, श्री कामदगिरि परिक्रमा, तथा सत्संगादि द्वारा श्री सीय राम पद पदुम प्रेम प्राप्त्यर्थ प्रार्थना करते हैं। जिस प्रकार मन्दाकिनी जी चित्रकूट के प्रदेश को सुषमा से परिपूरित करती हुई बहती हैं उसी प्रकार श्री रामकथा भी शुद्धान्तः करण में ही अनुराग उत्पन्न करती हुई कल्लोल करती है। इनमें भी सुकृती साधु विरक्त विमुक्त एवम् सुजन समाज परस्पर कथनानुकथन द्वारा हर्ष पुलक गद्गदादि सात्विक भावों में पगे हुए निमज्जन कर अपूर्व सुख स्वरूपिणी शान्ति प्राप्त करते हैं। जैसे मन्दाकिनी जी पाप समूहों को उन्मूलन करने में प्रखर प्रतिभा शालिनी हैं वैसे ही श्री रामकथा भी मन-वच-कर्म जनित अघों के विनाश में दक्ष हैं। जिस प्रकार कीर्तिमती श्री अनुसुइया तपोर्जित गंगधार का आश्रय ग्रहण कर स्थान-स्थान पर मुनीश्वर लोग जीवन कृतार्थ कर रहे हैं उसी प्रकार श्रीमद्रामकथा सुधा तरंगिणी द्वारा कुशल रसज्ञ विषयी साधक सिद्ध प्रभृति मनरंजन करते हुए भव पार हो रहे हैं। जैसे मन्दाकिनी जी की भागीरथी, सरस्वती, कालिंदी, रेवा, गोदावरी, आदि सरितायें भूरि-भूरि प्रशंसा करती हैं वैसे ही श्री रामकथा की इतिहास पुराणों स्मृतियों एवं वेदों में अनेकानेक मनोहर प्रसंगों द्वारा

बड़ी सुहावनी चर्चा की गई है यद्यपि इसकी अविचल अविरल स्वतन्त्र धारा अनंत रामायणों में अधुना स्वतः प्रथक भी वह रही है। जैसे रघुकुल नायक राघवेन्द्र श्री रामभद्र जू ने श्री जनकनन्दनी किशोरी जू सहित चित्रकूट के प्राकृतिक दृश्य पर मुग्ध हो कहीं सुन्दर सुखद शिलाओं पर विश्राम किया, कहीं मञ्जुल पर्णकुटी छवा कर निवास किया, कहीं पुण्यतोया पयस्विनी जी में जल विहार किया, कहीं फल प्रसून पल्लवित लता वितानों तले मृदुल कुश किशलयमय साथरी डसा शीतल सुखद छाया का उपभोग किया, तथा विविध विहंगालि कुल नादित मृगादि सुन्दर वन पशु सेवित सुघर वनस्थली में विहरण किया। उसी प्रकार जहां विकार रहित सुन्दर प्रेमा परानुरक्ति सिंचित उच्चाति उच्च प्रेम-प्रसर-विह्वल चित्त में भगवती रामकथा को निनादित पाते हैं वहीं रम जाते हैं। जैसे हनुमान-धारा, कोटि तीर्थ, देवांगना, बांकेसिद्ध, गुप्त गोदावरी, भरत कूपादि, रमणीक तीर्थ, श्री चित्रकूट जी की महिमा ध्वजा को परमोच्च गौरव शिखर पर लहरा रहे हैं वैसे ही अनुराग-विराग प्रेम-प्रमोद आल्हाद-मत्तता आत्मा-रामतादि सुन्दर चित्त को भी सुशोभन करते हैं जिसमें श्री रामकथा मन्दाकिनी संतत वहती रहती है। जैसे उदयाचल अस्ताचल हिमाचल मन्दराचलादि पावन पर्वत श्री चित्रकूट गिरि की कीर्ति का प्रचुर गान करते हैं वैसे ही नाना साधनोपार्जित कर्म, धर्म, दान, व्रत, योग, जप तपादि श्रीरामकथोद्भूत रघुपति भक्तिवारि प्रच्छालित चित्त को सराहना करते हैं।

अतः श्रीरामचरित का पठन पाठन परम प्रेम पूर्वक आदर भाव से होना अनिवार्य है। ऐसे कराल काल में कर्मजाल में उलझ कर सुलझना कठिन है। न पर्याप्त सदुपायोपार्जित शुद्ध धन ही उपलब्ध होता है न पुनीत उपकरण ही एकत्रित किये जा सकते हैं न कुशल श्रोत्रिय याज्ञिक ही सुगमता से मिलते हैं, अतः कोई विरला ही मनस्वी लौह पुरुष ही इसका साधक हो सकता है। ज्ञान-मार्ग भी अगम है। जब तक देहाभिमान पूर्णतया चेतन से बिछुड़ नहीं जाता तब तक ज्ञान चर्चा निष्प्राण है। वह किन्हीं विजितात्माओं के लिये ही सत्पथ हो सकता है। निदान अति सुकर उपाय को ही क्यों न अपनाया जाय और जैसे कि रामायण पात्रों में हम पाते हैं उसी उमंग उसी अनुराग उसी उत्कण्ठा उसी आकर्षण से निरन्तर क्यों न भगवच्चरित्र गान किये जांय! यथा—

भयउ तासु मन परम उछाहा।
लाग कहै रघुपति गुन गाहा॥
प्रथमहिं अति अनुराग भवानी।
रामचरित सर कहेसि बखानी॥
बाल चरित कहि विविध विधि,
मन महँ परम उछाह।
सुनि भुसुन्डि के वचन सुहाये।
हरषित खगपति पंख फुलाये॥
नयन नीर मन अति हरषाना।
श्री रघुपति प्रताप उर आना॥
प्रेम सहित बहु भाँति बखानी।
गावत राम चरित मृदु बानी॥
सादर कहहिं सुनहिं नर नारी।
ते सुरबर मानस अधिकारी॥

———

मन नित लगा रहे

अखिल जगदीश पर, हरण दशशीश पर,
दीन जन नाथ पर, देवि-सिय-नाथ पर,
कोशलाधीश पर, मन नित लगा रहे।
राम रघुनाथ पर, मन नित लगा रहे।
अरि खरदूषण पर, रघुकुल भूषण पर,
धीरज अधीर पर, हरण पर पीर-पर,
प्रिय विभीषण पर, मननित लगा रहे।
राम रघुवीर पर, मन नित लगा रहे।
अवध अधिराज पर, असुर अकाज पर,
प्रभु श्रीराम पर, दीन अभिराम पर,
अहीश-विराज पर, मन नित लगा रहे।
ईश के नाम पर मन नित लगा रहे,
कर धनु धारी पर भव-भय हारी पर,
प्रेम निधान पर देव प्रधान पर,
जनहितकारी पर, मन नित लगा रहे।
सर्व गुण खानपर, मन नित लगा रहे।
करुणा निधान पर, रघुपति सुजान पर,
प्रिय सुर सन्तपर अनादि अनन्त पर,
करण अघ-हान पर, मन नित लगा रहे।
सती सिय-कन्त पर, मन नित लगा रहे।

खल दल गंजन पर, जन मन रंजन पर,
मुनि मन भावन पर, अघ-जग पावन पर,
दशरथ नन्दन पर, मन नित लगा रहे।
बलि छल वावन पर, मन नित लगा रहे।
चिर अविनाशी पर, विपिन निवासी पर,
मित्र सुग्रीव पर, अतुल बल सीव पर,
जन सुखरासी पर, मन नित लगा रहे।
जीव के जीव पर, मननित लगा रहे।
तन घन श्याम पर, भक्त सुख धाम पर,
राम सर्वेश पर, रघुकुल दिनेश पर,
राम शुचि नाम पर, मन नित लगा रहे।
तापस्यवेश पर, मन नित लगा रहे।
दनुज कृपाण पर, भव भय त्राण पर,
लखन के तात पर, भरत के भ्रात पर,
सियके प्राण पर, मन नित लगा रहे।
श्यामल गात पर, मन नित लगा रहे।
दानव दल अरि पर, हर वन्दित हरि पर,
सूरके श्याम पर तुलसी के राम पर,
कलि-गज केहरि पर, मन नित लगा रहे।
तव 'प्रीतिराम' पर मन नित लगा रहे।

———

उद्बोधक उक्तियाँ

(श्री रामलाल जी पहाड़ा)

मानस में कुछ ऐसी उपदेशप्रद बातें कहीं हैं जिनका स्मरण समय पर हो जाने से मनुष्य को अपूर्व उद्बोधन हो जाता है। मनुष्य नवीन उत्साह पाकर काम करने लग जाता है।

बिनु सतसंग बिवेक न होई।
रामकृपा बिन सुलभ न सोई॥

सतसंग=भले लोगों का संग, सत+सं+ग=सत्य में वा सत्य से सम्यक् गति, वा सतत सम्यक गति कृपा=अनुग्रह, कृ+पा=कृति का पालन श्रीरामजी की कुछ एक कृति का पालन करने एवं क्रियात्मक राम भजन करने से सत्य में या सत्य के साथ कर्म करने में गति होती है, जिससे मनुष्य को आत्म और अनात्म पदार्थों का ज्ञान होता है—

सठ सुधरहिं सत संगति पाई।
पारस परसि कुधातु सुहाई॥

सठ=दुराग्रही; हठी, षट् विकारयुक्त मनुष्य, पारस=लोहे को सोना बनाने वाली वस्तु, पार+रस=ब्रह्म रस, अन्तरिक्षस्थित प्राणतत्व कुधातु=लोहा, कु+धातु=शरीरांतगत पार्थिवद्रव्य पारस से लोहे का सोना बनते हुये किसी ने ही देखा हो। किन्तु यह सब कोई जानते हैं कि श्वासोच्छ्वास से अन्तरिक्ष स्थित प्राणतत्व के स्पर्श से शरीर के षड्चक्र, षड्विकार सुधरते हैं। यह क्रिया नित्य होती रहती है। इसी प्रकार सतत सम्यक् गति से शठ भी सुधर जाता है।

बिधि बस सुजन कुसङ्गति परहीं।
फनि मनि सम निज गुन अनुसरहीं॥

बिधि=विधाता, भाग्य, कर्मसूत्र
कुसङ्गति=बुरी मित्रता, पार्थिव प्रपञ्च

भाग्यवश सुजन भी प्रपञ्च या प्रपञ्च के झगड़ों में पड़ जाता है तो भी वह अपने गुणानुसार काम करता है जैसे यद्यपि मणि सर्प के पास रहती है किन्तु समय पर अपना गुण (प्रकाश, विषापहरण) प्रकट करती है। ध्वनि यह है कि भले मनुष्य प्रपञ्च में पड़कर भी अपने गुणानुसार काम करते रहें। क्षोभ में आकर अपने कर्तव्य से पराङ्मुख न रहें। प्रपञ्च में रहकर काम करने से खेद तो होगा उस समय यह स्मरण रखें।

काहु न कोउ सुख-दुख कर दाता।
निज कृत करम भोग सब भ्राता॥

अथवा

करम प्रधान विस्व करि राखा।
जो जस करइ सो तस फल चाखा॥

परन्तु मनुष्य प्रपञ्च में बँधा हुआ है। एक के कर्म का फल दूसरे पर भी पड़ जाता है। यह संसार स्वकर्म सूत्र से ग्रथित है। इसलिये कभी-कभी

और करे अपराध कोउ और पाव फल भोग।
अति विचित्र भगवंत गति को जग जाने जोग॥

यही विधि एवं भगवंत गति बड़ी विचित्र है। तब ही गीता में कहा है 'कर्मणो गहना गति' जिसे कौन जगमें जानता है? कहीं पाठ कौ जन है। को+जन=कः, ब्रह्म+मनुष्य= ब्रह्मनिष्ठ मनुष्य ही इस विचित्र योग को जानकर कर्म करते हुये शांत रहता है।

पर उपदेस कुसल बहुतेरे।
जे आचरहिं ते नर न घनेरे॥

पर=अन्य या ब्रह्म। कुशल=चतुर, कु+शल प्रपञ्च दुःख।

बहुत से मनुष्य दूसरों को एवम् ब्रह्मतत्त्व का उपदेश करने में चतुर हैं, अपनी चतुराई प्रकट करते हुये प्रपञ्च दुःख में पड़े हैं किन्तु आचरण करने वाले थोड़े हैं। ध्वनि यह है कि आचरण करके दिखाओ, बकवाद बढ़ाकर हुल्लड़ मत मचाओ। जैसा 'चरखा' आंदोलन में लोगों ने किया—

जहां सुमति तहं सम्पति नाना।
जहां कुमति तहं विपति निदाना॥

(मति संयोग से अच्छी और बुरी होकर परिणाम में सुखद या दुखद हो जाती है।) यह संस्काराधीन है जैसा कहा है

जा कहँ प्रभु दारुन दुख देहीं।
ताकर मति पहिले हर लेहीं॥

प्रभु—परमात्मा, प्रथम हुआ हो कर्म संस्कार, जो कर्म प्रथम हो चुके हैं (प्रभु हैं) उनके परिणामानुसार बुद्धि आगे कर्म में प्रवृत होती है। कर्मभोग मिलता ही है। वह अटल रहता है। ध्वनि यह है कि ईश्वर के शरण में रहकर कर्मभोग को शांति से सहन करलो। ईश्वर शरण में रहने से सहन शक्ति बढ़ जाती है।

परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
परपीड़ा सम नहिं अधमाई॥

पर=अन्यजन्य, परमार्थ, स्वरूपज्ञान।

(लौकिक—स्वार्थ त्याग कर अन्य जनों के हित करने के समान और कोई दूसरा धर्म नहीं है। अहिंसा ही परम धर्म है और स्वार्थ वश अन्य को पीड़ा पहुँचाना अधमता है।

परमार्थिक या आध्यात्मिक—अपने जीव का हित साधना, परमस्वरूप को पहिचानना ही परम धर्म है और विवेक भ्रष्ट हो स्वरूप को खो देना ही अधमता है। ध्वनि यह है कि विवेक सहित कर्तव्य (व्यष्टि और समष्टि व्यवहार) पालन करते रहना ही परम धर्म है और कर्तव्य में प्रमाद करना ही अधमता है।

———

हरि सम कोउ न आन हितु तेरो,
उन बिन और कौन भव-निधि ते पार करैगो बेरो।
संसृति क्लेश महा गर्भाशय, तब तुहिं कौन छुड़ायो,
पय भर दियो उरोजन प्रथमहिं तापै समुझ न आयो।
अमित बार तोहिं मनुष देहि दै, रहि-रहि चेत करावा,
जनम जनम कर माया घेरे, छूटब तोहिं न भावा।
धरती गिरत विपति सब भूली, पुन माया लिपटानी,
आपुहिं देह मान बहु कर्मन कीन्हें हित भइ हानी।
बार बार जग तोहिं चितायो, क्षण भङ्गुर यह काया,
मन मूरख तबहूँ नहिं चेता, राम नाम बिसराया।
मरण काल जस जस नियरावत माया अधिक सतावत,
'नारायण' परिवार मोह वश क्षण भर चैन न पावत॥

—गुरुनारायण 'नारायण'



अप्रैल मास में संघ के ३५७ नये सदस्य बने। इस मास में १७ नई शाखायें स्थापित हुईं। जिनका विवरण इस प्रकार है:—

शाखा संख्या १३६६ सहंसपुर (दुर्ग) सदस्य १७ मंत्री श्री मोतीसिंह जी। शा० सं० १३६७ गोटेगाँव (होशंगाबाद) स० १० मं० ठा० श्री अधारसिंह जी। शा० सं० १३६८ विचुआ (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री बाबूलाल जी सोनी। शा० सं० १३६९ विचुआ (होशंगाबाद) स० ११ मं० श्री शिवदयाल जी। शा० सं० १३७० विचुआ होशंगाबाद) स० १० मं० श्री सुजानसिंह जी। शा० सं० १३७१ हुरड़ा (मेवाड़) स० ६ मं० श्री रामजस जी कावरा। शा० सं० १३७२ ससहा (बिलासपुर) स० १० मं०। शा० सं० १३७३ हेड पोस्ट आफिस जबलपुर (सी० पी०) स० १७ मं० श्री हरगोविन्दसिंह जी ब्रह्मवंशी। शस००१३७४ सालेचौकारोड (होशंगबाद)स० १० मं० श्री लालचन्द जी वमोतिया। शा० सं० १३७५ गैंदाटोला (दुर्ग) स० १० मं० श्री बनवार-राम जी। शा० सं० १३७६ महँरूँग (दुर्ग) स० १४ मं० श्री कलाराम जी। शा० सं० १३७७ कन्देली (होशंगाबाद) स० १० मं० श्री रघुबरदास रामावत। शा० सं० १३७८ मगरधा (होशंगाबाद) स० १६ मं० श्री नारायण सिंह जी पटेल। शा० सं० १३७९ गड़ेरिया रानीगञ्ज (गया) स० १३ मं० श्री ब्रजमोहन जी पाण्डेय। शा० सं० १३८० मलहारी (गया) स० २५ मं० श्री प्रद्युम्न जी शर्मा। शा० सं० १३८१ रौंधा (गया) स० ६ मं० श्री महावीर सिंह जी। शाखा संख्या १३८२ गुरिया (गया) सदस्य ६ मन्त्री...।

इस मास में प्रेमियों ने इस प्रकार शाखायें स्थापित कराई हैं:—

१—श्री कंज जी रामायणी काशी ४ पूर्व स्थापित ६४ = ६८

२—श्री तीरथ प्रसाद जी कुन्देली ३ पूर्व स्थापित १२ = १५

३—इमामगंज सम्मेलन के समय ४ शाखायें स्थापित हुईं।

चैत्र पारायण समाचार

नीचे लिखे स्थानों से पारायण होने की सूचना आई है:—

चेचट—३२ पाठ—जगन्नाथ वीवस। **दुवाना** ६ पाठ—लादूराम। **गया**—६ पाठ—वेदनाथ मिश्र। **खापर खेड़ा**—शंकरलाल शर्मा। **बगदेई**—२२ पाठ, धरमसिंह साहू। **हसामपुर**—१०पाठ—विद्याधर शर्मा

विविध समाचार

जबलपुरः—ता० २५-४-५३ को रात्रि ६॥ बजे से सुबह तक रामायण पाठ, प्रवचन, कीर्तन, गायन हुआ।

—नर्मदाप्रसाद

चीचली—ता० १६-४-५३ को महिला समाज की ओर से अखंड पाठ, पूजन, मंगल गीत, आरती, तथा प्रसाद वितरण हुआ।

—लेखराम पैगवार

प्रागपुरा—गोवध निवारणार्थ एवं गौरक्षार्थ मानस मंडल द्वारा प्रथम बैशाख कृष्ण सोमवती अमावस्या से द्वितीय बैसाख कृष्ण अमावस्या तक ४० विद्वानों द्वारा १५१ पारायण हुए।

—गुलजारी लाल

बहवलपुर—बैसाख वदी १ से बैसाख सुदी पूर्णमासी तक मास पारायण तथा श्री हनुमान चालीसा का पाठ समाप्त हुआ। बाद में कीर्तन तथा प्रसाद वितरण हुआ। इसके बाद दूसरा मास पारायण शुरू किया गया।

—सरनाम सिंह यादव

खरौद तिवारी पाराः—पूज्य श्री रामरक्षित जी रामायणी का प्रवचन मौजा-कोड़ाभाठ, खरौद, राहौद में क्रमशः ता० १६ से १८, १६ से २१ तथा २२ अप्रैल को हुआ। प्रेमी जनता प्रवचन से मुग्ध थी।

—ताँतीराम साव

खम्हरियाः—मौजा सिल्हटी, बेदची में क्रमशः ता० ३ से ७ तथा ६ से १० मार्च तक श्री पं० रामरक्षित जी रामायणी की कथा हुई जनता कथा रस-पान बड़ी शान्त से कर रही थी। श्री रामायणी जी की प्रेरणा से खम्हरिया में मानससंघ सम्मेलन भी हुआ।

—जमुनालाल अग्रवाल

जुन्हैटाः—में ८ दिन तक श्री कंज जी रामायणी की कथा हुई। कई शाखायें भी स्थापित हुईं।

—परमानन्द राय

नयाघाट (श्री अयोध्याजी):—पुरुषोत्तम मास में मानस का पारायण पूरे मास तक किया।

—अम्बिकेश्वर पति त्रिपाठी

डोंगरगाँवः—द्वितीय बैसाख वदी १ से ४४ सदस्यों द्वारा नवाह पाठ हुआ।

—बिहारीलाल

मनकापुरः—एक मरीज के कई माह से उसके अंग-अंग कटकर गिर रहे थे। रोग पर कोई दवा फायदा न होने पर उसने भगवान पर भरोसा करके अखंड रामायण के पाठ की मनौती की। भगवत् कृपा से रोग धीरे-धीरे अच्छा होने लगा। अच्छा होने पर उसने "दीनदयाल बिरद संभारी.........." सम्पुट से अखंड पाठ करवाया। समाप्त होने पर हवन, कीर्तन, ब्राह्मण भोजन होकर प्रसाद वितरण हुआ।

—सरनामसिंह

महरैयाः—शाखा में पुरुषोत्तम मास प्रतिदिन प्रातः गंगा स्नान, सायं श्री हनुमान चालीसा के पाठ, संकीर्तन, गोस्वामी जी के दोहे, पुरुषोत्तम माहात्म्य की कथा होती थी। कुछ सदस्यों ने व्यक्तिगत, पंचकोशी यात्रा, श्री दुर्गा सप्तशती के पाठ, श्री जगदम्बा पूजन, पचास ब्राह्मणों को भोजन, अखंड कीर्तन, देवताओं का पूजन, प्रसाद वितरण, तथा श्री रामनाम लिखने का क्रम भी जारी रहा।

बह्वनियाँ व **रायपुर** में भी मासिक पाठ हुए।

—विश्वम्भरनाथ द्विवेदी

कलकत्ताः—मैदानीय श्री रामकथा मंडल कलकत्ता के तत्वावधान में मानस का सामूहिक नवाह पारायण श्री अयोध्या जी में पं० श्री रामशरण जी शर्मा की अध्यक्षता में बड़े समारोह से गोलाघाट

श्री सरयू तटस्थ विसाल मंदिर में सम्पन्न हुआ। श्री रामकथा मंडल के प्रेमियों के अतिरिक्त जो प्रचुर संख्या में यहाँ से गये थे बहुत से संत महात्मा तथा स्त्री-पुरुषों के भाग लेने के कारण चारों ओर से आनन्द की लहर उमड़ पड़ी। कुछ वर्षों से मंडल की ओर से दोनों नवरात्र में सामूहिक नवाह पाठ के अतिरिक्त भगवत-नाम जप होता है। अबकी चैत्र नवरात्र में नाम जप की संख्या नवासी करोड़ के लगभग पहुँच गई। आगामी आश्विन नवरात्र में मंडल की योजना एक अरब नाम जप की है। आशा है प्रेमी जन भाग लेंगे।

—मातूरामदास डालमियाँ

परौंखः—ता० ७, १४, २१, २८ अप्रैल को क्रमशः १२,११,१२,२२ श्री हनुमान चालीसा के पाठ हुए। प्रत्येक दिवस सामूहिक मानस गान तथा मानस अन्ताक्षरी हुई। बालकों को इनाम बांटा गया। समाप्ति पर आरती तथा प्रसाद वितरण हुआ।

फंफूदः—में श्री मद्भागवत सप्ताह पारायण तथा यज्ञ होकर भण्डारा हुआ।

—कुँ० धनसिंह भदौरिया

बन्देमऊः—प्रथम बैसाख शुक्ल ११ को श्री कीर्तन भवन में श्री कुँ० अमरसिंह की अध्यक्षता में कविता सम्मेलन तथा मानस अन्ताक्षरी हुई। पश्चात् कीर्तन एवं प्रवचन होकर प्रसाद वितरण हुआ।

—छोटेलाल वर्मा

— — —

रामवन-समाचार

मानस आश्रमः—अप्रैल मास में मानस का एक सम्पूर्ण अखंड पाठ नित्य होता रहा। इस मास में श्री मारुति रागभोग में १४८)।।। खर्च हुए और ६७।।)।। की आय हुई। ८०।।)। की कमी रही। मानस आश्रम में ५३५≡)।। की आय हुई और ३६५।।) खर्च हुए। १६६।।≡)। की बचत हुई। संस्कृत विद्यालय में १२७।।≡) खर्च हुए तीनों विभागों की आय-व्यय में कुल कमी ३८।≡)।।। की रही; जो पिछली कमी २२६२।-) सहित कुल कमी २३३०।।।)।।। होगई। आशा है प्रेमीजन इसकी पूर्ति की व्यवस्था करेंगे।

मानस आश्रम

३००) श्री रामेश्वरलाल सहारिया, कलकत्ता

१०-४-५३

२१) श्रीब्रजभूषण प्रसाद जी गनेड़ीवाला, गोरखपुर

३) श्री पं० वासुदेव प्रसाद जी पन्ना

१४-४-५३

१५) श्री गोविन्दलाल जायसवाल, कटोरी

४) श्री जगन्नाथ वोवस, चेचट

१६-४-५३

२०) श्री भागीरथजी भराड्या, श्रीमती बाई १५) सदा कुँवर, सेंधवा ५)

२०-४-५३

१) श्री गोपाल, सतना

२१-४-५३
८) श्री गोंदी महतों, परवतपुर
१७।।) श्री किशनलाल मूदड़ा, बम्बई
२२-४-५३
६।) श्री पं० गणेशदत्त कटारे, शहडोल
२३-४-५३
१५) श्री हीरालाल किशोरीलाल, सेंधवा
२४-४-५३
२४) श्री गुरुमुख राय रामानन्द, खरसिया
२८-४-५३
१००) श्री फूलचन्द्र टिकमानी, बांसजोड़ा
≡)।। चढ़ोत्री
५३५≡)।।

श्री मारुति राग भोग

१-४-५३
११) श्री अग्रवाल पंचायत, ओझर
१।) श्री कन्हैयालाल मोतीलाल, डेहरी
८-४-५३
१।)।। श्री रामविशालाचार्य, देवली
६-४-५३
२।।) श्री कन्हैयालाल पटवारी, घाटोली
१०-४-५३
२) श्री छोटेलाल अग्रवाल, इलाहाबाद
१०) श्री श्यामसुन्दर जी शर्मा, देहरादून
१।) श्री रामरतन शर्मा, झांसी
५) श्री पं० अहरवादीन मिश्र, शेषपुर
१३-४-५३
२) श्री खरगजीतसिंह पतरौल, भगवन्तपुरा
५) श्री ठा० गोपीसिंह, केवतरा
१५-४-५३
५) श्री अयोध्याप्रसाद बाजपेई, कलकत्ता
१४-४-५३
१।) श्री कठोरे सिंह, रमखिरिया
५) श्री कल्याणसिंह अर्जुनसिंह, पनागर
५) श्री रामरतन भागचन्द्र, पनागर
५) श्री टीकाराम चोकसे, ,,
५) श्री भागवत पाण्डे, विरार
६७।।)।। कुल। दाताओं को धन्यवाद।

मानसयज्ञः अप्रैल मास में ३८६।।।)। खर्च हुए और श्री रामचन्द्र शर्मा टिटिलागढ़ से २५) प्राप्त हुए। ३६१।।।)। की कमी रही। पिछली बचत ३=)। घटाकर वास्तविक कमी ३५८।।=) की रही।

कुटीर विभाग

सेंधवा कुटीर :— में पूर्ववत् १८६।।।)।। बाकी है।

कोरी कुटिया :— इस मास में २८।।-)।।। खर्च हुये पिछले ४०६।=) सहित ४३४।।।≡)।।। बाकी रहे। कोरी कुटिया के संलग्न एक कुटिया और बनी है। भूल से दूसरी कुटिया की रकम इसमें नाम पड़ गई है। इससे अधिक रकम बाकी प्रगट हो रही है।

नर्मदाखंड कुटीर :— पूर्ववत् १८४।।।)।।। की पूर्ति करना बाकी है।

डांगीढ़ाना कुटीर :— पूर्ववत् २८।।=)।। बाकी है।

श्री रामनाममन्दिर :— इस मास में श्री डा० के० सी० मिश्र से १००) प्राप्त हुये। अब ११६५।=)।।। आना बाकी है। दूसरे विभाग में २१५।) जमा है।

श्री तुलसी मन्दिर :— में श्री किशन लाल मूदड़ा, बम्बई से श्री गोस्वामी जी की मूर्ति के लिये १०) प्राप्त हुये। अब ४४।।)।। जमा है।

पारायण मन्दिर :—में पूर्ववत ५) जमा है।

पाकशाला :—अप्रैल मास में १०।) खर्च हुए। पिछली बाकी २४६॥≡)। सहित २५६॥≡)। आना बाकी है।

श्रीराम संस्कृत विद्यालय भवन :—पूर्ववत १३२३॥-)॥ जमा है। गत मास के मणि में श्री सेठ रामदेव हीरालाल सबुआ से भूल से १३) प्राप्त हुये छपा था वास्तव में, उनसे ५१) प्राप्त हुये थे। रकम में ५१) ठीक जोड़े गये हैं।

गोशाला :—इस मास में २४६।)॥ प्राप्त हुये। और नीव खोदने में ३७॥≡)। खर्च हुये। पिछली आय ७०।) सहित अब कुल २७६॥-)॥ जमा है।

६-४-५३
७८।)॥ श्री ज्वाला प्रसाद टाईवाला, सतना
८-४-५३
१००) श्री सुदर्शन सिंह जी, गोरखपुर
१५-४-५३
१५) श्री रामचन्द्र सफड़िया, सतना
२०-४-५३
१५) श्री रामचन्द्र सफड़िया, सतना
२७-४-५३
५१) श्री भागवत पांडे, बिहार

२५६।)॥

मानस प्रचार :—अप्रैल मास में सदस्य शुल्क में १२४।) प्राप्त हुये। कार्यालय में १११≡)॥ और चिट्ठी खर्च में ४१।≡)॥ कुल १५२॥≡) खर्च हुआ। ईमामगञ्ज सम्मेलन में जाने आने में १०६।=)॥। खर्च हुआ और स्वागत समिति से १०१) प्राप्त हुये। ५।=)॥ की कमी रही। इस मास में कुल कमी ३३॥-)॥ हुई। पिछली बचत २५॥-) घटाने पर कुल कमी ८।-)॥ रही।

श्री रामनाम लड्डू :—अप्रैल मास में ४८८ लड्डू तैयार हुये। १५० लड्डू दैनिक क्रम में श्री मारुति जी को समर्पण हुये। शेष अक्षय-तृतीया के लिए रखे गए। केन्द्रों की स्थिति पूर्ववत है।

कृपया साधन- भजन के लिए रामवन आइये

पञ्चदश मानससंघ सम्मेलन, इमामगंज

अप्रैल मास में दो विशेष सफल सम्मेलन हुए। पहिला हुआ इमामगञ्ज जिला गया में मिती प्रथम बैसाख कृष्ण ८ भौमवार तारीख ७-४-५३ से बैसाख कृष्ण १२ शुक्रवार ता० १० अप्रैल तक। सुन्दर विशाल पंडाल बना था। प्रथम दिवस प्रातः काल श्री हनुमान चालीसा के सामूहिक पाठ होकर यज्ञ हुआ। सांयकाल श्री हनुमान जी का जलूस निकला जो रानीगंज तक गया। रात्रि में प्रथम दिवस ही जनता की अपार भीड़ उपस्थित थी। स्वागत भाषण के उपरान्त प्रवचन हुए। गर्मी के कारण प्रातः-काल का कार्यक्रम स्थगित रखने का विचार था पर उपस्थित जनता को निराश करना उचित न था। अतः नित्य प्रातः काल ७ से ११ बजे तक तथा रात्रि में भी कथा-प्रवचन आदि बराबर हुए। काशी के (१) पं० श्री नारायण कान्त जी व्यास (२) चौबेबेल के पं० केशरी किशोर शरण जी (३) रामबन के श्री रामरक्षित जी (४) वृन्दावन के श्री बाबा मस्तराम जी और (५) अयोध्या के प० शीतल प्रसाद जी पधारे थे। अयोध्या के लीला स्वरूप की झांकी तथा भागलपुर की श्री हृदय राम आचारी की कीर्तन मंडली ने भी सम्मेलन में भाग लिया। ता० ९-४-५३ की रात को तो लगभग २० हजार जनता उपस्थित थी। १५ हजार का तो नित्य का ही अनुमान था। उपस्थिति की दृष्टि से यह सम्मेलन सर्व श्रेष्ठ रहा। ता० १०-४-५३ को कार्यकर्त्ताओं तथा श्रोताओं को धन्यवाद देकर सम्मेलन का कार्य पूर्ण हुआ। सभास्थल में लगे १५ विशाल महावीरी झंडों की एक विचित्र शोभा इस सम्मेलन में थी।

पं० श्री सूर्य्यानन्द जी शर्मा वैद्य, श्री बाबू शिवपूजन सिंह जी, पं० श्री केशरी किशोर शरण जी व्यास, श्री बाबू श्याम गोविन्द सिंह जी, तथा श्री बा० रामस्वरूप सिंह जी ने अथक परिश्रम इस सम्मेलन की सफलता के लिये किया। चारों ओर सराहनीय प्रचार पंडाल, आगन्तुकों का सत्कार आदि कुल व्यवस्था श्रेष्ठ थी। सम्मेलन संचालन में श्री व्रजमोहन पाण्डेय तथा श्री मनिराम जी शास्त्री ने भी सराहनीय सहयोग प्रदान किया। सब महानुभाव धन्यवाद के पात्र हैं। इमामगंज कोई बड़ा नगर नहीं है पर यहाँ के सम्मेलन में सिद्ध हो गया कि उत्साही कार्यकर्त्ता किस प्रकार सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

———

षोडस मानस संघ सम्मेलन खम्हरिया

अप्रैल मास का द्वितीय सफल सम्मेलन हुआ। खम्हरिया जिला दुर्ग में मिती प्रथम वैसाख शुक्ल १२ से १५ रविवार से बुधवार ता० २६ से २६ अप्रैल तक।

'प्रथम दिवस श्री हनुमान चालीसा के पाठ होकर हवन हुआ। सन्ध्या समय आंधी के कारण जलूस नहीं निकल सका। यह फिर अन्तिम दिवस बुधवार को निकला। नित्य रात्रि में ८ बजे से १२ बजे तक प्रवचन होते थे। (१) सन्त श्री विनीत विहारी दास जी, चिरगांव (२) श्री रामरक्षित जी, रामवन (३) श्री बावा मस्तराम जी, वृन्दावन (४) श्री सूरज प्रसाद जी व्यास, गोंसाईपुर तथा (५) श्री राजेश्वरनाथ जी ओझा, देवकर पधारे थे।

जिला दुर्ग में मानस संघ की १०४ शाखायें थीं। ४ और स्थापित होकर शाखा माला पूर्ण हुई। कुल २२० नये सदस्य बने। और यहां के उत्साही कार्यकर्त्ताओं ने नगर के ६ मील के अन्दर के प्रत्येक ग्राम में मानस संघ की शाखायें स्थापित कराने का संकल्प किया। विविध शाखाओं के मन्त्री तथा प्रतिनिधि यहाँ बड़ी संख्या में आये थे। प्रातःकाल का समय उनके परस्पर मिलन तथा विचार विनिमय आदि में सद्व्यय होता था। खम्हरिया वालों ने सोनपांडर के शाखा मन्त्री श्री रामशरण सिंह जी भुवाल का प्रस्ताव स्वीकार करके रामवन में एक कुटिया निर्माण कराना निश्चित किया। स्वागत समिति ने ५१) तथा महिला शाखा ने ३४॥) इसी समय प्रदान भी किये। स्वागत समिति ने प्रचार अच्छा किया था। नित्य लगभग १५००० जनता उपस्थित होती थी।

इस सम्मेलन की सफलता का श्रेय प्राप्त है (१) श्री पं० तोरनप्रसाद जी (२) श्री पं० भंवरीलाल जी शर्मा तथा (३) श्री जमुनालाल अग्रवाल को। प्रेरक थे श्री रामरक्षित जी। श्रीमूलचन्द्र जी डोकनिया ने नये सदस्य बनाने तथा व्यवस्था में विशेष परिश्रम किया। यों तो समस्त नगर उत्साह से ओत-प्रोत था और सबने पूर्ण सहयोग प्रदान किया। आगन्तुकों के ठहराने की व्यवस्था ठीक थी और भोजन के लिये तो नगर भर की लालसा लगी थी कि एक बार हमारे यहां भोजन हो।

इमामगंज तथा खम्हरिया दोनों ही सम्मेलनों में ऋतु विपरीत थी तथा यात्रा कठिन थी। पर दोनों स्थानों का उत्साह और प्रेम सराहनीय था। दोनों ने आगे के लिये आदर्श उपस्थित किया है।

ऋतु के कारण अब आश्विन तक सम्मेलन स्थगित रहेंगे। कातिक से वैसाख तक जो स्थान सम्मेलन करना चाहें अभी से निश्चित करके प्रचार प्रारम्भ करदें। प्रधान कार्यालय भी उन्हें इसमें पूर्ण सहयोग प्रदान कर सकेगा। अपनी सुविधा की तिथियां अभी से सुरक्षित करालें। जल्दी में व्यवस्था ठीक नहीं हो पाती है। यथेष्ट प्रचार की कमी में पूर्ण सफलता भी नहीं मिलती है। आगे के सम्मेलनों में उत्तरोत्तर अधिक काम होना चाहिये।

मानस प्रकाशन लिमिटेड रामवन द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

१—श्रीरामचरितमानस में मिथिलाधाम (अवधकिशोरदास श्रीवैष्णव) ।)

२—मानस प्रणेताशंकर (आचार्य पीठाधिपति श्री राघवाचार्य स्वामीजी) ≡)

३—जरठजटायु (श्री सुदर्शनसिंह) ।~)

४—देवर्षिनारद (श्री सुदर्शन सिंह) ।=)

५—श्री हनुमान चरित (श्री सुदर्शन सिंह) ३।)

६—अनुरागी केवट (श्री रामरक्षित जी रामायणी) ।=)

७—श्री भगवन्नाम संकीर्तन (श्रीसुदर्शनसिंह) ~)॥

८—मानस प्रसंग (मानस राजहंस श्री पं० विजयानन्द जी त्रिपाठी) ३।।)

९—विधाता विश्वामित्र (श्री सुदर्शनसिंह) ॥)

१०—श्रीमानस सिद्धान्त (वेदान्तभूषण श्री पं० रामकुमारदासजी रामायणी) २॥)

११—श्री रामचरितमानस में वेदान्त दर्शन (रायसाहब हीरालाल वर्मा) १।)

१२—महात्मा वालि (श्री सुदर्शनसिंह) ~।)

१३—शवरी मङ्गल (श्रीशम्भूप्रसाद बहुगुणा)।।।)

१४ सखी गीता (वेदान्तभूषण श्री पं० राम कुमारदासजी रामायणी) ।)

१५—शतपञ्च चौपाई (मानस राजहंस पं० विजयानन्द त्रिपाठी) २॥)

१६—स्व स्वरूप दर्शन (श्रीराय साहब हीरालाल वर्मा) १)

१७—मानस परायण पूजन पद्धति (वेदान्त भूषण श्री पं० रामकुमारदासजी रामायणी) ≡)

—-—

श्रीरामनाम लड्डू के नियम

१—लिखते समय मुख से श्रीराम नाम का जप करना चाहिये।

२—केवल लाल स्याहीसे नाम लिखें।

३—केवल 'राम' यह नाम लिखें।

४—प्रत्येक पृष्ठ में १०८ नाम अर्थात् १२ पंक्ति और प्रत्येक पंक्ति में ९ नाम लिखें।

५—नाम लिखते समय शुद्ध होकर बैठें और मौन रहकर लिखें।

६—अपनी कापी में दूसरों से नाम न लिखवायें।

७—नाम स्पष्ट अक्षर में लिखें।

८—अशुद्ध लिखा जाने पर काटकर न सुधारें। उसे छोड़ दें और दूसरा लिखें।

९—लिखित नामों में पूज्य भाव रखें।

१०—लिखित 'राम' नाम की ५१ मालाओं का एक लड्डू माना जायगा और वह श्रीराम दूत को यहाँ समर्पित होगा।

११—फाउन्टेनपेन या फाउन्टेनपेन की स्याही से रामनाम नहीं लिखे जाँयगे।

१२—एक साथ चाहे जितने राम नाम लड्डू आप चढ़ाने को भेज सकते हैं।

१३—राम नाम लिखने के लिये एक लड्डू की एक पुस्तिका (कापी) का मूल्य एक आना।

१४—श्रीरामनाम लड्डू के छपे कवर पृष्ठ १) के १००।

मन्त्री, मानस संघ
पो० रामवन वाया सतना

रामवन के विविध कार्य

१—वर्ष में श्रीरामचरितमानस का दो पाठ करने की प्रतज्ञा करने वाले सज्जन मानस संघ के सदस्य बनाए जाते हैं। आजीवन शुल्क ॥) है। जहाँ नौ सदस्य हो जाते हैं, वहाँ शाखा बन जाती है। इस समय देश में मानस संघ के २९२०० सदस्य हैं और १३२६ शाखायें हैं।

२—रामचरितमानस का प्रचार एवं अध्ययन व्यापक करने के लिए यह 'मानस-मणि' मासिक पत्र ग्यारह वर्ष से निकल रहा है। इस का वार्षिक मूल्य ३) है।

३—तुलसी साहित्य का प्रकाशन मानस प्रकाशन लिमिटेड द्वारा होता है। कम्पनी का प्रत्येक शेयर १०) का है। कम्पनी १६ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है। स्थायी ग्राहक शुल्क २) है। स्थायी ग्राहकों को प्रकाशित ग्रंथों पर २५ % कमीशन दिया जाता है।

४—श्रीरामचरितमानस पत्र व्यवहार विद्यालय द्वारा मानस संघ घर बैठे श्रीरामचरितमानस की शिक्षा देता है। विद्यालय का पाठ्य विषय तीन वर्षों का है और प्रथम वर्ष का शुल्क १०) है।

५—मानस आश्रम में नित्य अखण्ड मानस पाठ होता है। यहाँ रह कर साधक एकान्त में साधन भजन करते हैं।

६—तुलसी संग्रहालय भी रामवन में है।

७—मानस संघ राम नाम लड्डू लेखन का प्रचार करता है। ये लिखित रामनाम श्रीमारुति जी को अर्पण किये जाते हैं। २७ करोड़ अर्पित हो चुके हैं।

८—श्री राम संस्कृत विद्यालय में वाराणसेय-परीक्षा के पाठ्यक्रम के साथ मानस अध्ययन की भी सुविधा रखी गई है।

हर विभाग में आपका सहयोग अपेक्षित है।

'मानस-मणि'

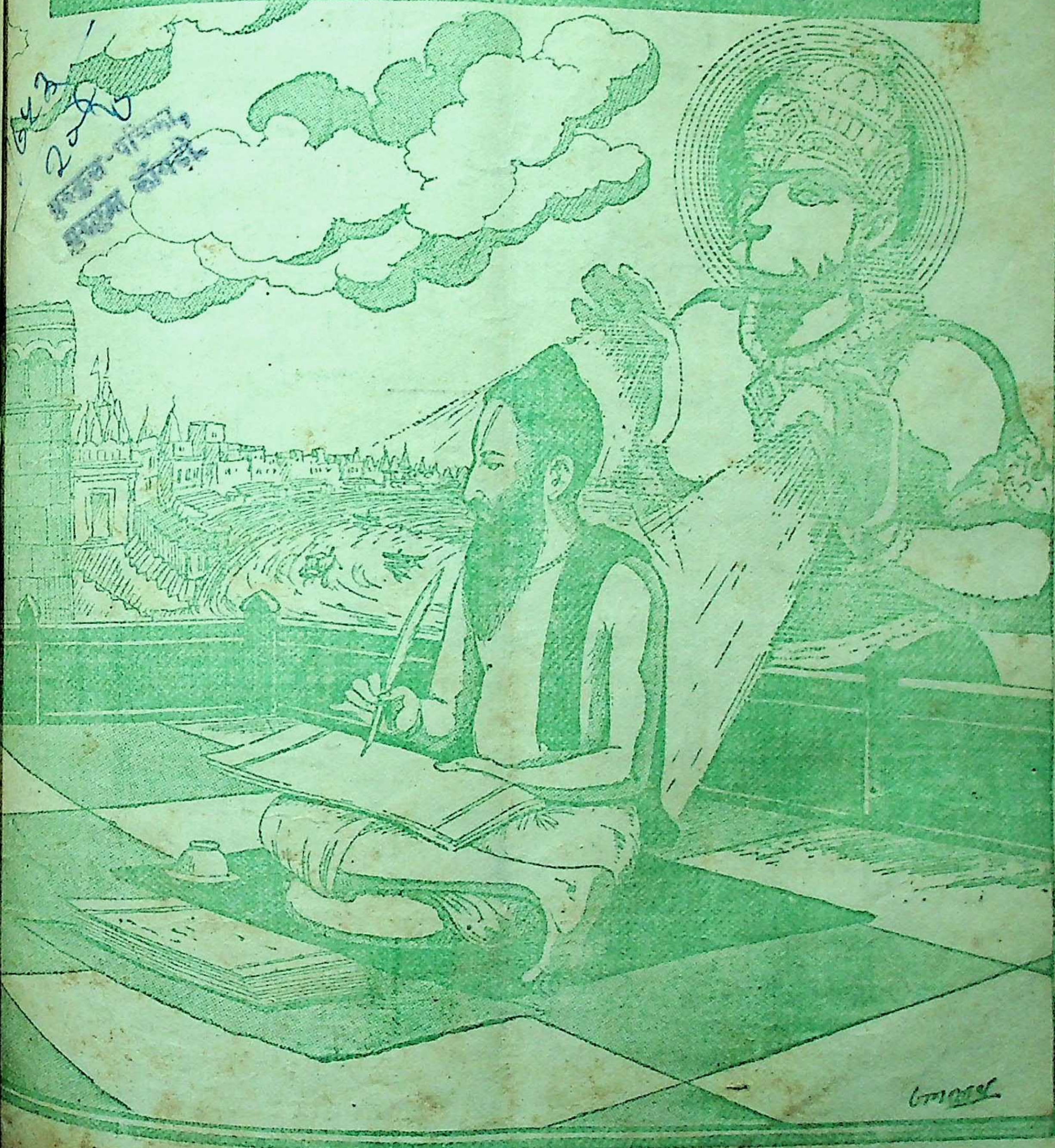
पो० – रामवन (सतना)

ग्रा० नं०—३

श्री संपादक जी गुरुकुल पत्रिका गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

सम्पादक—सुदर्शन सिंह

प्रकाशक -श्रीशारदा प्रसाद, मंत्री—मानससङ्घ रामवन, सतना। मुद्रक-माधो प्रिंटिंग वर्क्स,



मणि १०

अगस्त १९५३

आलोक ८

वार्षिक मूल्य तीन रुपया

वी० पी० से तीन रुपया आठ आना

श्रावण समारोह

यह अंक हमारे प्रेमी पाठकों के हाथ पहुंचेगा उस समय रामवन में एक मास का अखण्ड संकीर्तन प्रारम्भ हो चुका होगा। गुरुपूर्णिमा को प्रारम्भ होकर यह पूरे श्रावण मास चलेगा। साथ में अखण्ड दीप रहेगा ही, पर नवीन व्यवस्था यह होगी कि इसका काजल उतारा जायगा। यह प्रेमियों को भेजा जायगा। आशा है कि पर्याप्त संख्या में लोग यह श्रेष्ठ प्रसाद प्राप्त कर सकेंगे।

यदि आर्थिक व्यवस्था हो गई तो भाद्रपद में भी कुछ समय अथवा पूरे मास अखण्ड संकीर्तन संचालन में प्रबन्ध सम्बन्धी वाधा न होगी। उस दशा में और भी अधिक प्रे... को काजल, प्रसाद मिल सकेगा। यह ... मंगाने वालों को डाक-खर्च मात्र ... चाहिये।

प्रेमियों से अनुरोध है कि श्रावण शुक्ल ... सोमवार ता० १७-८-५३ को अपने यहाँ ... रोह से तुलसी जयन्ती मनावें और ... विवरण मानस मणि में प्रकाशनार्थ भेजें। ... पुर से निर्माण होकर मूर्त्ति आगई तो ... में मानस सर के पूर्व घाट में प्रतिष्ठि... जायगी।

यह है प्रगति

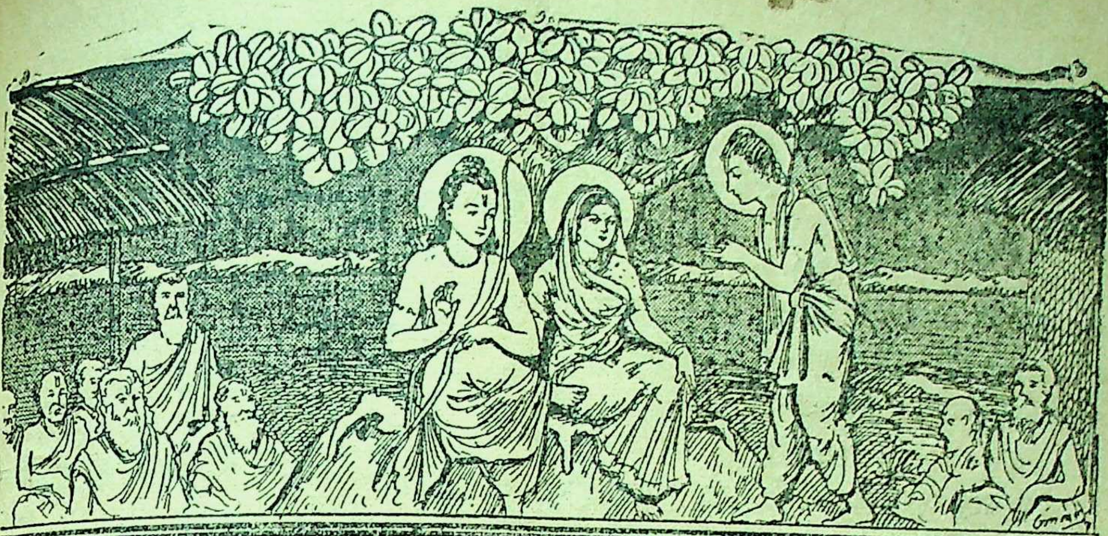
मानस मणि के जुलाई के अंक में प्रकाशित विवरण में जिला होशंगाबाद में २०६ शाखायें लिखी गई थीं। अब संख्या २३० है। जिले की द्वितीय शाखा माला पूर्ण करने का श्रेय श्री कंज जी तथा सोहागपुर तहसील को प्राप्त है। दो शाखा मालाओं की पूर्त्ति में सर्व-प्रथम होने पर जिला होशंगाबाद को हार्दिक बधाई। इसमें सहायक होने के लिये श्री कञ्ज जी तथा सोहागपुर, गाडरवारा और नरसिंह-पुर तहसीलों को हार्दिक धन्यवाद।

आज तहसीलों की स्थिति इस प्रकार है—

नरसिंहपुर —८२
गाडरवारा —७१
सोहागपुर — ६७
अन्य तहसील—१०
२३०

पर यह निश्चित मालूम हो रहा है कि इन पंक्तियों के पाठकों के हाथ पहुँचने तक सो... पुर संख्या सर्वोपरि हो जायगी। श्रीकञ्ज ... इस तहसील में उपस्थिति तथा तहसी... मानस प्रेमियों के धर्मोत्साह के परिज्ञान ... यह लिखा जा रहा है। हमें पूर्ण विश्वास ... सोहागपुर वाले ऐसा सहयोग प्रदान ... कि कञ्ज जी वहाँ दो मालायें पूर्ण करके ... आगे बढ़ सकेंगे। इस बीच में नरसिं... तथा गाडरवारा की शाखाओं तथा व... प्रेमियों को भी अपनी-अपनी मालायें पूर्ण ... लेना चाहिये।

जिले की शेष ३ तहसीलें क्या कर ... हैं? समय आ गया है कि वहाँ के प्रे... आगे आवें। विशेषकर सिवनी मालवा ... को तो शीघ्र ही आगे बढ़ना चाहिये। ... अन्य जिले भी अग्रसर होंगे।



मानस मणि

राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके ॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं ॥

मणि १२ | रामवन—श्रावण, मानस संवत् ३८०—अगस्त १९५३ ई० | आलोक ८

मानस की सूक्तियाँ

सब विधि सोचिअ पर अपकारी। निज तन पोषक निरदय भारी ॥
सोचनीय सबही विधि सोई। जो न छाँड़ि छल हरिजन होई ॥

× × ×

अनुचित उचित बिचार तजि, जे पालहिं पितु बैन।
ते भाजन सुख सुजस के, बसहिं अमरपति ऐन ॥

× × ×

गुरु पितु मातु स्वामि हित बानी। सुनि मन मुदित करिअ भलि जानी ॥
उचित कि अनुचित किये बिचारू। धरम जाइ सिर पातक भारू ॥

× × ×

बादि बसन बिनु भूषन भारू। बादि बिरति बिनु ब्रह्म बिचारू ॥
सरुज सरीर बादि बहु भोगा। बिनु हरिभगति जाय जप जोगा ॥

× × ×

मोरि बात सब बिधिहि बनाई। प्रजा पाँच कत करहु सहाई ॥

× × ×

उतरु देउं केहि बिधि केहि केही। कहहु सुखेन जथा रुचि जेही ॥

(६६२)

सत्संग अमूल्य है। उसका मूल्य कुछ भी हो नहीं सकता।

(६६३)

सभी धर्मों का उद्देश है मन से अशेष वासनाओं का राहित्य। यदि यह न हुआ तो धर्म केवल कोरे विवाद का साधन हो जाता है।

(६६४)

वह साधु नहीं, जो व्यर्थ संग्रह रखता है। संसारियों से घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है।

(६६५)

विवाद और कुतर्क महापुरुष नहीं करते। यह तो नाम मात्र के धार्मिकों का कार्य है।

(६६६)

जहां आडम्बर या दिखावट है, वहां सत्य नहीं हो सकता।

(६६७)

जो अन्य धर्मों के नाम से भी चिढ़ता है, निश्चय ही कि वह अपने धर्म के रहस्य को भी नहीं जानता।

(६६८)

सत्य का अन्वेषण करने वाला हठधर्मी नहीं हो सकता।

(६६९)

वैराग्य का एक मात्र फल, प्रभु के पथ प्रदर्शक सत्संग की प्राप्ति ही है।

(७००)

त्यागियों को ऐसी वस्तु देना पाप है, जिससे उनका आकर्षण संसार की ओर हो।

(७०१)

यदि तुम कमरे की सफाई कर रहे हो तो धूल उड़ेगी ही। घबराओ मत। साधन के द्वारा हृदय को शुद्ध करते समय पहले विकारों का उठना स्वाभाविक है।

(७०२)

विचार प्रधान अवश्य है पर जब उसके अनुसार कार्य भी हो। कोरा विचार तो केवल मस्तिष्क का भार वहन मात्र है।

(७०३)

सृष्टि का सम्पूर्ण ज्ञान तुम्हारे अन्दर ही छिपा है। उसे जानने की चेष्टा करो।

(७०४)

प्रकृति एवं प्राकृत में आसक्ति ही बन्धन तथा अनासक्ति ही मुक्ति है।

(७०५)

हम विश्व का जो रूप अपने चारों ओर देख रहे हैं वह रूप हमारी भावना का प्रतिबिम्बमात्र है। वस्तुतः वह ऐसी ही है यह नहीं कह सकते।

(७०६)

कोई कार्य बन्धक नहीं। मैंने किया-बस यह धारणा ही बन्धक है।

(७०७)

ईश्वर को पूर्णतः जानने वाला वहीं हो जाता है।

(७०८)

जिसने भगवान का साक्षात्कार कर लिया उससे दुष्कर्म हो ही नहीं सकते।

(७०९)

मन ही बन्धन और मुक्ति का कारण है।

(७१०)

जब तक विषय वासना का समूल नाश न हो जाय तब तक मुक्ति कैसी ?

(७११)

विषय प्रेम ही बन्धन का कारण है। उसकी निवृत्ति ही मुक्ति है।

(७१२)

सभी साधनों का चरम लक्ष्य है मन की सम्पूर्ण वासनाओं का विनाश।

(७१३)

ज्ञानी वही है, जिसे विषय लुब्ध एवं आकर्षित नहीं कर सकते।

ऋषि-गीता

[सप्तम भवन]

—सुदर्शन सिंह

सबके प्रिय सबके हितकारी।
दुख-सुख सरिस प्रसंसा गारी॥
कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी।
जागत सोवत सरन तुम्हारी॥
तुम्हहिं छांड़ि गति दूसरि नाहीं।
राम बसहु तिन्हके मन माहीं॥

जो सबके प्रिय हैं, सबका भला करने वाले हैं, जिन्हें दुःख-सुख निन्दा-स्तुति समान है, जो विचार पूर्वक प्रिय एवं सत्य बचन बोलते हैं तथा सोते-जागते प्रत्येक समय आपकी ही शरण में रहते हैं, जिनकी एकमात्र आप ही गति हैं, अन्य कोई आश्रय जिन्हें नहीं, हे श्री रघुनाथ जी ! आप उनके मन में निवास करें।

षष्ठम में निवृत्तमार्गी वैराग्य प्रधान साधकों की बात कहकर अब सप्तम में प्रवृत्ति मार्ग में लगे लोकोपकारी पुरुषों की बात कही जाती है। लोक-नेता या जनसेवक अथवा आचार्य आदि उस किसी भी पुरुष को कैसा होना चाहिये जो एक वृहत् समूह का अग्रणी है, यह आदर्श है इसमें।

'सबके प्रिय' अर्थात् अपना कोई आग्रह किसी प्रकार का रखना ही नहीं। जो अपना कोई आग्रह रखेगा, उसका किसी न किसी से विरोध भी होगा। वह सबका प्रिय नहीं बन सकता। जैसे वायु का किसी गन्ध के अनुकूल-प्रतिकूल भाव नहीं, जैसे आकाश सबके लिये समान है, वैसे ही सच्चा सत्पुरुष सबके ही अनुकूल होता है। वह किसी का विरोधी नहीं होता। उसे सभी प्रिय लगते हैं।

तब क्या वह चोर के साथ चोरी करेगा ? दूसरों के मुकदमों में झूठी साक्षी देगा ? शराबी को शराब पीने में सहायता करेगा ? ऐसे सन्देह न उठें, इसी के लिये 'सबके हितकारी' कहा गया। सत्पुरुष सबका प्रिय इसलिये है कि वह सबका हितैषी है। वह सबकी भलाई करता है। हितकारी का अर्थ दुष्कर्मों में सहायता करने वाला नहीं है। सच्चा हित है आत्मा का हित। सच्चा हितकारी वही है जो शरीर और मन के विरुद्ध जाना आवश्यक हो तो ऐसा करके भी आत्म-हित करता है। किसी को फोड़ा हो जाय तो उसके रोने चिल्लाने पर भी फोड़े को चीर देना ही सच्चा हित है। रोगी के मांगने पर भी उसे कुपथ्य न देना उसका हित है। माता कुमार्ग में जाते पुत्र को दण्ड देकर उसका सच्चा हित ही करती है। इस प्रकार का हितकारी भले पहिले अप्रिय लगे; पर अन्ततः वह प्रिय ही लगता है। कड़वी दवा पिलाने वाले वैद्य को उस समय तो रोगी मन में भला-बुरा कहता ही है, पर वैद्य उसे प्रिय होता है। स्वस्थ होने पर वह वैद्य का कृतज्ञ होता है। एवं उसका सम्मान करता है। अतः सबका वही वास्तविक प्रिय है जो सबका वास्तविक हितकारी है। किसी को प्रसन्न करने के लिये उसके अनुचित कार्य में सहायता करने वाला उसका अप्रिय और अहित करने वाला ही है।

'सुख-दुःख सरिस' जो सबका हितैषी है, उसे सुख ही सुख मिलेगा, ऐसी कोई बात नहीं है। अनेक बार लोग शंका करते हैं कि अमुक भजन करता है तो उसे रोग क्यों हुआ ? उस पर विपत्ति क्यों आई ? अमुक अधर्म करने पर भी स्वस्थ, धनी और सुखी क्यों है ? ये प्रश्न प्रारब्ध के विधान को न जानने के कारण होते हैं। सुख या दुःख प्रारब्ध से आता है। पिछले जन्मों के जैसे कर्म थे, वैसा उसका फल इस जन्म में मिल रहा है। इस जन्म के कर्मों का फल आगे के जन्मों में भोगना होगा। जैसे कौन मजदूर किस प्रकार भोजनादि में सुखी है, यह बात उसके पिछले सप्ताह के श्रम पर निर्भर है, यदि मजदूरी साप्ताहन्त मिलती हो। इस समय के श्रम का फल उसे सप्ताहान्त में ही प्राप्त होगा। इसलिये प्रारब्ध में जो सुख या दुःख है, उसे तो

भोगना ही पड़ेगा। सुख जैसे भगवान का प्रसाद है, दुःख भी उन्हीं का आशीर्वाद है। अतः उपासक न तो सुख में प्रमत्त होता और न दुःख में व्याकुल ही होता। वह दोनों में समान रहता है।

'सुख-दुःख समं कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैनं पापमवाप्स्यसि ॥' गीता

भगवान ने अर्जुन से कहा—सुख और दुःख को, लाभ और हानि को, जय और पराजय को, समान मानकर युद्ध (कर्तव्य) करो। इससे पाप तुम्हारा स्पर्श नहीं कर सकेगा।

'प्रसन्नतां या न गताऽभिषेकस्तथा, नमम्लेवनवासदुःखतः
मुखाम्बुजश्री रघुनन्दनस्य सा—————— ॥'

ऐसे आराध्य का जो ध्यान-चिन्तन करता है, उसके मन में सुख मूल्यवान बनकर उथल-पुथल मचावे और दुःख उसे व्यथित करे, यह किसी प्रकार संगत नहीं है।

'सरिस प्रसंसा-गारी।' यह भी सम्भव नहीं है कि जो सबका प्रिय हो एवं सबका 'हितकारी' हो, उसे सर्वत्र प्रसंसा ही प्राप्त होगी। निन्दा करने वाले असज्जन सबके होते हैं।

'मैं अपनी दिसि कीन्ह निहोरा।
तिन्ह निज ओर न लाउब भोरा ॥'

लेकिन जो भगवत्प्राप्ति के मार्ग में बढ़ रहा है, उसका तो आदर्श ही दूसरा है। उसके लिये तो 'प्रतिष्ठा शूकरी विष्ठा' है। श्री चैतन्य महाप्रभु ने बताया है—

'सम्मानं कलयाति घोरं गरलं नीचापमानं सुधां।'

सम्मान को अत्यन्त भयङ्कर हालाहल विष समझो और नीच के द्वारा हुये अपमान को अमृत के समान लाभकारी मानो। इसी से महात्मा कबीर ने कहा—

'निन्दक नियरे राखिये, आंगन कुटी छवाय।'

लोक सेवा का मार्ग ही ऐसा है कि इसमें पद-पद पर सुख-दुख, मान-अपमान मिलता ही रहता है। जहां उसका जयघोष होता है, वहीं काले झण्डे भी दिखाये जाते हैं। जो भी सुख-दुख या मान-अपमान को ध्यान देने योग्य मानेगा, वह अपने कर्तव्य पर स्थिर नहीं रह सकेगा।

'यस्मान्नो द्विजते लोको लोकान्नो द्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः ॥' गीता

जिससे लोग उद्विग्न नहीं होते (जिसे लोग अपना अप्रिय नहीं मानते। और लोगों से जो उद्विग्न नहीं होता (लोगों को देनेवाला या अपमान करने वाला मानकर जो घबड़ाता नहीं) हर्ष (सुख और मान में) अमर्ष (दुख और अपमान से) भले (दुख या अपमान न आवे तथा सुख या मान नष्ट न हो) और उद्वेग (व्याकुलता) से जो मुक्त है, वह मुझे (भगवान को) प्रिय है।

'कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी।'

झूठ तो साधक बोलेगा ही नहीं, पर 'खरी बात' कहने का गर्व भी उसमें नहीं होना चाहिये। यह 'खरी बात' कहना भी दुर्गुण ही है। नीति यह है—'सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात्सत्यमप्रियम्॥ सत्य बोले, किन्तु प्रिय सत्य बोले। अप्रिय सत्य न बोले।

लेकिन 'मानस' में यहां 'बिचारी' बोलने को कहकर और अधिक चमत्कार एवं उत्तमता का आदर्श उपस्थित किया गया है। जो अध्यात्ममार्ग का पथिक है, उसे वावदूक (बकवादी) नहीं होना चाहिये। उसे कम से कम बोलना चाहिये। जब बहुत आवश्यकता जान पड़े, तभी विचार करके वह प्रिय सत्य बोले। देश, काल, परिस्थिति और पात्र का विचार किये बिना न बोले। 'बिचारी' का यह भी भाव है कि जैसे विभीषण ने रावण को समझाने के लिये उसे अप्रिय लगने वाला सत्य भी कहा, परन्तु कहा बहुत प्रिय ढंग से। इसी प्रकार यदि प्रिय सत्य बोलना नितान्त असम्भव हो और दूसरे की भलाई के लिये बोलना आवश्यक ही हो तो अप्रिय सत्य बोला जा सकता है, लेकिन उसे भी बहुत प्रिय ढंग से बोलना चाहिये। यह सब विचार कर लेना चाहिये कि बोलना आवश्यक ही है या नहीं और प्रिय सत्य बोलना किसी प्रकार शक्य हो सकता है या नहीं।

'जागत सोवत सरन तुम्हारी।'

जो लोगों का प्रिय है, लोगों का हितकारी है, प्रिय सत्य बोलता है, और जिसकी बुद्धि सुख-दुःख, मान-अपमान, में समान रहती है, उसमें लोगों से सहायता पाने की आशा और अपनी समता का गर्व शक्य है और गर्व आया कि साधन चौपट हुआ। उसे एकमात्र प्रभु की ही शरण में होना चाहिये वे सर्व समर्थ ही उससे सब कार्य कराते हैं और उन्हीं की कृपा से चित्त में समता है, यह निश्चय सदा दृढ़ रहना चाहिये।

'धर्मस्य प्रभुरच्युतः' धर्म के स्वामी वे पुरुषोत्तम ही हैं। यह भ्रम है कि ईश्वर को न मानकर सत्य, सदाचार, त्याग आदि सद्गुण टिके रहेंगे। ये यदि कहीं देखे भी जाते हैं तो वहां इनकी नीवें बालूपर हैं। देखने में ये चाहे जितने बलवान दीखें, पर प्रलोभनों के अन्धड़ में कब ढह पड़ेंगे, इसका कुछ विश्वास नहीं। जिसका भगवान पर विश्वास नहीं, वह प्रत्यक्ष धर्म ही हो, तो भी उसका विश्वास नहीं किया जा सकता। अतः लोकनेता वही हो सकता है जिसे सोते-जागते सदा भगवान का ही आश्रय हो। जो नित्य निरन्तर प्रभु की शरण में हो। जो प्रभु के विश्वास पर ही निर्भय हो।

'तुमहिं छांड़ि गति दूसरि नाहीं।

परिस्थिति अनुकूल बनेंगी, अमुक सहायता देंगे, लोग मेरी बात मानेंगे, अथवा मैं इतना कर लूँगा आदि आशायें जिसे सर्वथा मोहित नहीं करतीं। जो एकमात्र प्रभु पर विश्वास करता है। 'प्रभु जो करेंगे, वही होगा। इस प्रकार जिसकी एक मात्र गति प्रभु ही हैं, वही सच्चा विश्वासी है। वही ठीक कर्मयोगी एवं उपयुक्त लोकनेता है।

दूसरे क्रम से भी देख लें। केवल भगवान पर भरोसा, एक मात्र भगवान पर निर्भरता होनी चाहिये। लेकिन इन आन्तरिक धर्मों के साथ व्यवहार में भी कुछ होना चाहिये। सबके प्रिय रहें, किसी का अप्रिय न करें। सबकी सेवा, सबकी भलाई करते रहने में लगे रहें, सुख-दुख, मानापमान में समान भाव रखें और प्रिय सत्य बोलें। मर्यादा पुरुषोत्तम ने स्वयं अनन्यता का लक्षण बताया है—

सो अनन्य जाकी अस, मति न टरै हनुमन्त।
मैं सेवक सचराचर, रूप रासि भगवन्त॥'

ऐसे अनन्य के मन में श्री राम निवास तो करते ही हैं।

श्रीरामचरित मानस की नींव

[दण्डी स्वामी श्री प्रज्ञानानन्द जी सरस्वती]

नारद मोह—

नारद मोह कथा शिव पुराण, रुद्रसंहिता, आदि खंड अध्याय २० में है, तथा अद्भुत रामायण में भी। यह भी गोस्वामीजी की कपोल-कल्पित, मनगढंत, कथा नहीं है।

(१) नारद के समान ज्ञानी विष्णु भक्त ने अपने आराध्य भगवान को ही शाप दिया यह सुनकर पार्वतीजी को बड़ा आश्चर्य लगा। उनके पूछने पर—

बोले बिहसि महेस तब।
ग्यानी मूढ न कोइ॥
जेहि जस रघुपति करहिं जब
सो तस तेहि छन होइ॥
(१२४ बाल०)

कह दिया कि कोई मूढ़ नहीं है और कोई ज्ञानी नहीं है। भगवान अपनी माया से ज्ञानी को मूढ़वत् और मूढ़ को ज्ञानी के समान बना देते हैं और ऐसा करने में एक क्षण भी नहीं लगता है उपदेश यह मिलता है कि कोई यह अभिमान न करे कि मैं ज्ञानी हूं और कोई मूढ़ हो गया सा देखने में आजाय तो उसका उपहास भी न करे।

(२) यह नारद मोह की कथा जब याज्ञवल्क्यजी भरद्वाज को कहते हैं तब कहा है कि—

'संभु दीन्ह उपदेस हित, नहिं नारदहि सोहान।
भरद्वाज कौतुक सुनहु हरि इच्छा बलवान॥
(बा० १२७)

और—'राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई।
करै अन्यथा अस नहिं कोई।'
(बाल० १२८।११)

याज्ञवल्क्य मुनि ऐसे थे कि
'होहि न देवि मुधा मुनि भाषा'

याज्ञवल्क्य जी के कथनानुसार नारद मोह का कारण 'हरिइच्छा' ही है।

(३) नारदजी क्षीरसागर में जाकर जब भगवान को मिलते हैं तब भगवान नारायण अपने मन में विचार करते हैं कि

'उर अंकुरेउ गरब तरु भारी।
बेगि सो मैं डारिहौं उखारी॥'
'पन हमार सेवक हितकारी।'
'मुनि कर हित मम कौतुक होई।
अवसि उपाय करबि मैं सोई॥'
'श्रीपति निजमाया तब प्रेरी॥'

(४) इसमें अवतार लेकर नर-लीला करना यह है 'ममकौतुक।' इससे यह सिद्ध हो गया कि नारद का गर्व तरु उखाड़कर उनका हित करना तो है ही तथापि अवतार लेने का कारण, और अवतार के खेल में विरुद्ध बाजू की उत्पत्ति भी करने की है। इससे भगवान ने नारद के पीछे अपनी माया लगा दी।

विश्व मोहिनी की प्राप्ति हो जाय इसलिये भगवान के पास—

'आपन रूप देहु प्रभु मोही।'

ऐसी याचना करने पर—

'जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा।
करहु सो बेगि दास मैं तोरा॥'

ऐसी प्रार्थना सुनने पर—

'निज माया बल देखि बिसाला।
हिय हंसि बोले दीनदयाला॥
जेहि बिधि होइहि परम हित,
नारद सुनहु तुम्हार।
सोइ हम करब न आन कछु,
बचन न मृषा हमार॥
(१३२ बाल०)

'कुपथ माँग रुज व्याकुल रोगी।
बैद न देइ सुनहु मुनि जोगी॥'
(बाल० १३३।१)

इन बचनों में भगवान का भावार्थ क्या है यह आज के कलियुग के मंदमति मानव भी समझ सकते हैं। मुनि समझते थे कि विश्वमोहिनी से विवाह करने में हित होगा। भगवान जानते हैं कि इसमें मुनी का हित तो दूर रहा पर महान अधःपात होगा। इससे भगवान परम हित करना चाहते हैं। और कह भी दिया कि तुम काम-रोगी हो, तुम कुपथ्य सेवन करना चाहते हो, हम वैद्य हैं, हम कुपथ्य तो देंगे ही नहीं, जिस दवा से तुम्हारा परम हित होगा ऐसी ही दवा हम देंगे। इतना सूचित करने पर नारद जैसे महान् देवर्षि भगवान का भाव समझ न सके।

'माया बिबस भए मुनि मूढ़ा।
समुझी नहिं हरि गिरा निगूढ़ा॥'

तथापि यह न भूलना चाहिये कि यह अविद्या माया नहीं है। अविद्या जो होती तो—

'जेहि बिधि नाथ होइ हित मोरा।'

इत्यादि वचन नारद जी के मुख में से न निकल पाते। और जो यह विनती नारद जी नहीं करते तो भगवान को उनका रक्षण करने का मार्ग ही नहीं रहता!

इसी प्रकरण में नारद जी के शाप देने पर जब भगवान ने—

'निज माया की प्रबलता करषि कृपानिधि लीन्हि'

तबः—

'मृषा होउ मम श्राप कृपाला।'

ऐसा नारद जी के विनय करने पर भगवान ने कह दिया कि 'मम इच्छा' 'मम इच्छा' पदों से यह सिद्ध होता है कि विश्वमोहिनी के दर्शन से मोहित होने से शाप देने पर्यंत जो कुछ बनाव बन गया वह सब 'हरि इच्छा' से ही बन गया है; इसमें नारद जी का दोष है ही नहीं। अवतार नाटक का बीज बोने के लिये नारद जी केवल निमित्त बनाये गये। खेल में परस्पर विरोधी दो पक्ष होने चाहिये और वे साधारणतः तुल्यबल भी होने चाहिये। इससे अवतार का खेल खेलने के लिये रावण, कुंभकर्ण आदि की उत्पत्ति होने का साधन, अवतार का रूप, खेल में सहायक इत्यादि सब प्रकार के साधनों का बीज इस नारद के शाप के निमित्त से बोया गया। पर यह रहस्य जिनके ध्यान में नहीं आता है वे नारद,रावणादि को दोष ही लगाते हैं। ऐसा खेल करने में भी क्या हेतु रहता है सो सती मोह प्रकरण में बताया गया है।

प्रतापभानु मोह—

'हृदय न कछु फल अनुसन्धाना।
भूप बिबेकी परम सुजाना॥'
'करइ जो धरम करम मन बानी।
बासुदेव अर्पित नृप ग्यानी॥'

ऐसा ईश्वरार्पण बुद्धि से निष्काम कर्म करने वाला, परम सुजान, ज्ञानी था। तदपि इसको ऐसी वासना हो गयी जो इसके पूर्व चरित्र के अनुसार होना असम्भव था। देखिये अब ऐसे ज्ञानी निष्काम ईश्वरार्पण कर्म करनार राजा भी कैसे मोहित हो गये। जिन बचनों को सुनकर आजकल का मंदमति अशिक्षित साधारण पुरुष भी परख लेता कि यह मुनि नहीं है, महादाम्भिक असत्यवादी है उन वचनों पर राजा की बड़ी श्रद्धा हो गयी। राजा को वह मुनि प्रथम कहता है कि

'नाम हमार भिखारि अब,

इस अब शब्द से कोई भी जान सकता कि उसका नाम पहले कुछ दूसरा था। फिर वही मुनि कहता है कि—

'नाम हमार एक तनु।'

इससे स्पष्ट हो जाता है कि पहिले जो नाम कहा 'भिखारि' वह असत्य भाषण था। और असत्य भाषण महापाप है—

'नहिं असत्य सम पातक पुञ्जा।
गिरि सम होहिं कि कोटिक गुंजा॥'

(२) मुनि ने कहा कि—

'आजु लगें अरु जब ते भयऊँ।
काहू के गृह ग्राम न गयऊँ॥'

और—

'अब लगि मोहि न मिलेउ कोऊ,
मैं न जनावउँ काहु।'

इतना सुनने पर प्रतापभानु के समान धर्मशील, बहुश्रुत राजा को यह संशय आना सुलभ था कि जब जन्म से आज तक किसी से इसकी भेट ही नहीं तो भाषा कैसे आ गयी। तपश्चर्या की बिधि किसने बतायी इत्यादि। तदपि राजा का विश्वास और श्रद्धा इतनी बढ़ गयी कि—

'जरा मरन दुख रहित तनु,
समर जितै जनि कोउ।
एक छत्र रिपुहीन महि,
राज कलपसत होउ॥'

ऐसा वर मांग लिया। धरमरुचि सचिव तो शुक्र समान थे। उनकी हरिपद प्रीति थी और नित्य नीति सिखाते थे राजा भी

'गुर सुर संत पितर महि देवा।
करइ सदा नृप सबकै सेवा॥'

ऐसा था। तथापि इसको असम्भव वस्तु मांगने की वासना हो गयी। इसमें केवल एक ही हेतु हो सकता है कि

'हरि इच्छा भावी बलवाना।'
'राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई।
करइ अन्यथा अस नहिं कोई।'

(३) विप्रों ने भी किसका दोष है इत्यादि का विचार किये बिना ही शाप दिया। और उन्होंने ही कहा है कि

'भूपति भावी मिटइ नहिं',
जदपि न दूषन तोर।'

इस प्रकार राजा को मृगया में भुलाना, दाम्भिक, कपटी मुनि को न पहिचानना, इसके मयूर के समान मधुर बचनों पर श्रद्धा करना, असम्भव वर मांगना, और तथास्तु कहने पर मुनी के हाथ की काष्ठ पुतली के समान आचरण करना ये सब कार्य हरिमाया के बिना कौन कर सकता था। कैसे सम्भव थे। यह भी अवतार के नाटक में विरोधी पात्र बनाने का बीज बोने के लिए ही हरिमाया की ही करनी है।

'हरिमाया वश जगत भ्रमाहीं।'

यहां तक अवतार कार्य में विरोधक बनाने के लिये पहले से ही 'हरिइच्छा' कैसी तैयारी कर देती है यह देख लिया। अब प्रत्यक्ष अवतार कार्य में भी ईश्वरी इच्छा से ही सब महत्व की घटना कैसी घटती है सो देखना चाहिये। (४) (बा-रा-बा.कां-सर्ग १८।३६ अथ राजा दशरथ स्तेषां दारक्रियां प्रति। चिन्तयामास धर्मात्मा सोपाध्यायः सबान्धव') इसी अवसर पर विश्वामित्र जी का आगमन होना, और 'धर्म सुजस प्रभु तुम्ह कौं इन्ह कर अति कल्यान' ऐसा कहना, इत्यादि से सिद्ध होता है कि यह सब हरि इच्छा से पूर्व नियोजित ही था और विश्वामित्र और बसिष्ठ जी यह पूर्व योजना जानते ही थे। (५) बिना मांगे, राम लक्ष्मण को अस्त्र विद्या प्रदान करना, और बिना पूछे ही बलातिबला विद्या देने में भी भावी अवतार कार्य की तैयारी ही हो जाती है। 'नाऽपृष्ठः कस्यचिद् ब्रूयात्' इस शास्त्राज्ञा का भी पालन नहीं किया है इस अस्त्र विद्या और बलातिबला विद्या देने में।

'जाते लाग न क्षुधा पिपासा।
अतुलित बल तन तेज प्रकासा॥'

ऐसी विद्या देने में लक्ष्मण जी के हाथ से मेघनाद का वध करने की तरतुद की गयी।

(६) मख रक्षण करने में निशाचरों का विनाश करते समय मारीच का वध न करके, उसका मन रामाकार बनाकर उसको शत-योजन दूर उड़ा देने में भी भावी सीताहरण नाटक में सहाय करने वाला एक महत्व का पात्र जानकर रखना यही एकमेव हेतु था। और उसी मारीच को भविष्य में, उसी कार्य में उसकी इच्छा न होने पर भी सहाय करना पड़ा है।'

राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई।
करइ अन्यथा अस नहिं कोई॥

मंथरा और कैकेयी मोह—

कैकेयी को सर्व साधारण जनसमाज आज जिस दृष्टि से देखता है वैसी वह कुटिल हृदय, राम-विरोधी, निजपति-घातिनी, सवती मत्सर युक्ता थी ही नहीं। मानस निर्माता ने तो कह दिया है कि कैकयी जी भी पति-अनुकूल, पति पर और रामजी पर अनन्य प्रेम करने वाली, सब आचरण पुनीत, हरिपद कमल दृढ़-प्रेमी और विनीत भी थीं। तथापि अकस्मात कैसा स्थित्यंतर हो गया!

'भलेहि मंद मंदेहि भल करहू'

यह नारद वाक्य, कैकयी जी के चरित्र में स्मरण में आ जाता है। भोली-भाली कैकयी जी! पूर्व प्रारब्धानुसार और एक विप्र के शाप सामर्थ्य साधन रूप बन गयीं अवतार नाटक में। कभी-कभी बड़े श्रीमान् लोग भी नाटक में भिखारी बनते हैं, भिखारी के समान ही आचरण करना पड़ता है उनको नाटक के रंगभूमि में किसको क्या काम देना यह निश्चित करते हैं नाटक के सूत्रधार और नियोजक। जो काम जिससे उत्तम से उत्तम बनेगा ऐसा वे जानते हैं उसको वह काम सौंप देते हैं। और नियोजक की प्रेरणा-नुसार संचालक-सूत्रधार उस कार्य को उनसे करा लेते हैं।

(२) जब देवमाया विवश मंथरा ने कैकयी जी की बुद्धि में भेद करके रामजी को वन में भेज देने के लिये प्रवृत्त करने का प्रयत्न करती है तब कैकयी जी कहती हैं कि 'राम जी मुझ पर अपनी जननी से भी अधिक प्रीति करते हैं, यथा—

'मो पर करहिं सनेहु बिसेषी।
मैं करि प्रीति परीछा देखी॥,
'जौं बिधि जनमु देइ करि छोहू।
होहुँ राम सिय पूत पुतोहू॥'
'प्रान ते अधिक रामु प्रिय मोरें।
तिन्ह के तिलक छोभु कस तोरें॥'
(अयो० १५।३-४)।

कैकयी जी ने तो इतना कहा है कि—
'पुनि अस कबहुं कहसि घरफोरी।
तब धरि जीभ कढ़ावउँ तोरी॥'

इन बचनों से सिद्ध होता है कि कैकयी जी का रामजी पर उत्कट प्रेम था। इस मत की पुष्टि दशरथ-कैकयी संवाद में और कैकयी सखी सम्वाद में होती है। यथा—

'तुहूँ सराहसि करसि सनेहू।'
(अयो० ३२-७)
सदा रामु एहि प्रान समाना।'
(अयो०-४७।६)

'भरतु न मोहि प्रिय राम समाना।
सदा कहहु यहु सबु जगु जाना॥'
करहु राम पर सहज सनेहू। 'इत्यादि तथापि वह बेचारी क्या कर सकती थी।

'भावी बस प्रतीति उर आई।'
'तसि मति फिरी अहइ जस भावी।'

देवों में बिनती करके शारदा जी को उनकी इच्छा विरुद्ध ही प्रेरणा दे दी। शारदा जी मंथरा को—

'अजस पेटारी ताहि करी,
गई गिरा मति फेरि।'

मंथरा में प्रविष्ट देवमाया ने कैकयी जी की बुद्धि को मोहित किया। कोई कहेंगे कि इसमें तो—

'ऊँच निवास नीच करतूती।
देखि न सकहिं पराइ विभूती॥'

ऐसे स्वारथी मलिन मन सुरों का ही यह सब कार्य है। तथापि सुरों ने भी यह सब काज भगवान की इच्छानुकूल ही किया था यह आगे स्पष्ट किया जायगा।

(३) दशरथ जी जब राम जी को राज्याभिषेक करने के लिये श्री वसिष्ठ जी की सम्मति लेने को गये तब वसिष्ठजी ने जो कहा है इससे भी सूचित होता है कि 'जब राम जी युवराज होंगे सोइ सुदिन सुमंगल समझना चाहिये भाव यह कि इस समय तो युवराज होंगे नहीं। तथापि यह वचन इतना संदिग्ध है कि दशरथ जी इसका गूढ भाव समझ न सके। (क) जब वसिष्ठ जी 'रामधाम सिख देन' गये हैं तब भी वे रामजी जो कुछ कहते हैं इससे भी सिद्ध होता है कि राम जी को उस दिन अभिषेक होना असम्भव सा ही लगता था उनको :—

भूप सजेउ अभिषेक समाजू।
चाहत देन तुम्हहि जुबराजू॥
(अयो० १०-२)

राम करहु सब संजम आजू।
जौं विधि कुसल निबाहै काजू॥
(अयो० १०-३)

श्री वसिष्ठ जी कितने समर्थ थे यह भरत जी के शब्दों से ही देखिये—

जनम हेतु सब कहुँ पितु माता।
करम सुभासुभ देइ विधाता॥
दलि दुख सजइ सकल कल्याना।
अस असीस राउरि जगु जाना॥
सो गोसांइ विधि गति जेहि छेकी।
सकइ को टारि टेक जो टेकी॥
(अयो०, ८६)

विधि के लिखे अङ्क भी मिटाने में वसिष्ठ ऋषि समर्थ होने पर भी

'जौं विधि कुसल निबाहै काजू'

ऐसा कह गए इसका यही कारण है कि वे जानते थे कि भगवान की इच्छा क्या है। इसकी पुष्टि 'बिमल बन्स यह अनुचित एकू। बन्धु बिहाइ बड़ेहि अभिषेकू॥ इस वचन से होती है। सार यह कि—

'राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई।
करइ अन्यथा अस नहिं कोई॥

चित्रकूट में वसिष्ठादि के साथ जाने पर भरत जी मनमें ही विचार करते हैं कि—

'अवसि फिरहिं, गुर आयसु मानी।
मुनि पुनि कहब राम रुचि जानी॥'

(४) अब देखना है कि इन्द्रादि देवताओं ने मंथरा को 'अजस पेटारि करि' उसकी 'मति फेरी' इस कार्य में किसकी इच्छा प्रेरक थी?-

'गुर सन कहेउ करिअ प्रभु सोई।
रामहि भरतहि भेंट न होई॥
(अयो० २१७८)

रामु सँकोची प्रेमबस,
भरत सप्रेम पयोधि।
बनी बात बेगरन चहति।
करिअ जतनु छलु सोधि।
(अयो० २१७)

सुरों की ऐसी विनती सुनकर सुर गुरु कहते हैं कि—

'माया पति सेवक सन माया।
करइ त उलटि परइ सुरराया॥
तब किछु कीन्ह राम रुख जानी।
अब कुचालि करि होइहि हानी॥
(२१८ २-३)

तब का अर्थ है जब राम जी को वन में भेजने के लिये शारदा जी को बुलाकर—
'बिनय सुर करहीं।
बारहिं बार पाय लै परहीं।
(अयो० ११) ८७।

'बिपति हमारि बिलोकि बड़ि,
मातु करिअ सुरकाज।'
'रामु जाहिं बन राजु तजि,
होइ सकल सुरकाज।'
(अयोध्या २१८)

ऊपर के अधोरेखांकित वचन से यह निर्विवाद सिद्ध हो गया कि मन्थरा और कैकयी जी की मति फिराकर राम जी को वन में भेजने को कैकयी जी की प्रवृत्त कराने में रामजी की ही इच्छा आधारभूत थी। इससे मानस में ही कहा है कि—
'तात कैकयिहि दोष नहिं।
गई गिरा मति धूति॥'

तथापि गिरा की और इन्द्रादि सुरों की कुटिल करनी में भी प्रेरक रामजी की ही इच्छा थी। अतएव जब निषादराज ने कैकयी जी के दोष बताये तब लखनलाल नें कहा ही है कि—
'काहुहि बादि न देइअ दोसू,
और—'करत चरित धरि मनुज तनु,
सुनत मिटहिं जग जाल।'
(अयो० ९३)

(५) अब देखना है कि कैकयी जी ही राम-वन-गमन में निमित्त क्यों बनायी गयीं। इसका उत्तर यह है कि उनका प्रारब्ध कर्म ही यह महत्कर्म करने के लिये अनुकूल था। कैकयीजी को जो दो वर मिल गये थे दशरथ जी से उनके आधार पर ही यह महत् कार्य संपन्न हो गया। तथापि जिस दाहिने हाथ से कैकेयी जी ने दशरथ जी के रथ का रक्षण करके उनको विजय संपादन करने में अलौकिक सहाय किया उस कमल सुकोमल हाथ में वज्र के समान कठोरता कहाँ से आयी यह रहस्य जान लेने से यह एक आश्चर्य लगता है कि कितने हजारों वर्ष पूर्व से ही अवतार नाटक में मुख्य कार्य करने वालों की और आवश्यक शक्ति की निर्मिति की जाती है। वह शक्ति, और (स्वभाव के विरुद्ध आचरण करके अनन्त-काल तक अकीर्ति रूप कलंक लगा लेने का) प्रारब्ध कैकयी जी को विवाह के पूर्व ही प्राप्त हो गया था। कथा इस प्रकार है—

जब कैकयी जी अविवाहित कुमारिका थीं तब एक दिन उनके पिता के महल में एक विप्र को प्रवेश करते समय उन्होंने देखा। वह विप्र इतना कुरूप था कि उसको देखने पर कुमारी कैकयी जी को घृणा हो गयी और जब वह विप्र ध्यान में बैठा था तब उन्होंने उस ब्राह्मण के मुख पर मसी लगाकर उसका मुख काला कर दिया। ब्राह्मण तो बेचारा ध्यान मग्न था। तथापि ध्यान विसर्जन होने के बाद जब उसने मुह पर सहज हाथ फिराया तब मुखपर किसी ने कज्जल लगाया है यह इसके ध्यान में आ जाने पर उसने शाप दिया कि जिसने कारण बिना ही मेरा मुख काला कर दिया हो उसके मुखको भी कारण बिना ही अनन्त काल तक अकीर्ति रूपी कलंक लगेगा। उसका मुख अकीर्ति से काला होगा' भरत जी ने भी कहा है कि—
'जो हसि सो हसि मुँह मसि लाई।
आँखि ओट उठि बैठहि जाई॥
(अयो०१६२।८)

ब्राह्मण तो नहीं जानता था कि किसने मुखपर मसी लगायी। कैकयी जी को भी खबर नहीं कि ब्राह्मण ने शाप दे दिया है।

पश्चात कैकयी जी ने ही उस ब्राह्मण को अपने हाथ से पूजा की सामग्री की थाल लाकर दे दी तब ब्राह्मण ने आशीर्वाद दे दिया। कि बेटी ! जिस हाथ से यह थाल तू लायी है यह तेरा दाहिना हाथ वज्र के समान हो जायगा। अब विचार कीजिये कि कैकयी जी को ही निमित्त बनाने की पात्रता कैसे आ गयी थी।

राम जी का अवतार होने पर उनको वन में भेज देने के लिये कितने हजारों वर्ष पूर्व ही इस अवतार नाटक की रूप रेखा बनायी जाती है यह संपाती के वचनों से इस लेख के प्रारम्भ में ही बताया है। जब राम जी का जन्म हुआ तब दशरथ जी साठ हजार वर्ष के थे ऐसा उन्होंने विश्वामित्र जी को कह दिया है (वा. रा.)

'षष्ठि वर्ष सहस्राणि जातस्य मम कौशिक।
दुःखे नोत्पादितश्चायं न रामं नेतुमर्हसि॥'

(वा० रा० २०|१०)

कौसल्या जी पट्टरानी थीं कैकयी जी मझली और सुमित्रा जी कनिष्ठ। जब अरण्य में लखन लालजी कैकयी जी को दोष देने लगे तब राम जी ने कहा है कि—

'नतेम्बा मध्यमा तात गर्हितव्या कदाचन।'

(मध्यमा अम्बा = मझली मा)।

इससे राम जी के वन गमन समय कैकयी की आयु कितनी थी इसकी कल्पना की जा सकती है (कम से कम पचास हजार से अधिक हीरही होगी। इससे यह सिद्ध होगया कि राम जी को वन में भेजने का मुख्य साधन कम से कम पचास हजार वर्ष पूर्व ही सिद्ध हो गया था। इतना सब जानने पर कैकयी जी को कौन सा सुविचारी मानव दोष देगा ?

—क्रमशः

भक्ति

[श्री के० वी० शेवरे जी]

वेदान्त वाक्य पुष्पेभ्यो ज्ञानामृतमधूत्तमम् ।
उज्जहारालिवद्यो नः तस्मै सद्गुरवे नमः ॥

अर्थ—जिस सदगुरु ने वेदान्त वाक्य फूलों से अमृत निकाला जैसे मधु फूलों से मधु मक्खियाँ निकालती हैं उन्हें नमस्कार है ।

गोस्वामी जी ने मानस में भक्ति को ज्ञान से भी ऊँचा स्थान दिया है, वह भक्ति क्या है इसी का यहां विचार किया जाता है । उनका दावा यह है कि निगम, आगम और पुराणों में जो सिद्धान्त हैं, वे ही मानस में हैं, इससे स्पष्ट है कि भक्ति का ऊँचा स्थान निगमादि सम्मत है । वे फिर कहते हैं कि भक्ति और ज्ञान में कुछ भेद नहीं है । 'उभय हरहिं भवसंभव खेदा ।' मानस में भक्ति के प्रकार और उसकी प्रक्रियाओं का वर्णन मिलता है, पर उसकी धात्वर्थ और व्याख्या मानस में नहीं मिलती । इस दृष्टि से भक्ति शब्द का विचार आवश्यक हुआ । यथा मति इस छोटे से लेख से यह किया जाता है ।

'भक्ति' शब्द भज् धातु से बना है, भज के अर्थ बहुत तरह के श्री आपटे के संस्कृत कोश में दिये हैं । सवाल यह है कि मानस में कौन सा अर्थ लिया जाय । इसमें भगवान शङ्कराचार्य के भगवद्गीता पर के भाष्य से सहायता मिलती है । यह शब्द भगवद्गीता में निम्न स्थानों में आया है :—अ० ४-११, ६-३१-४७—१६-२८ ६—१३-२६-३३-३०, १०-८-१० भाष्य कारने इसका अर्थ सेवा या सेवन करना लिया है, देखिये अ० १०श्लो० में भजन्ते याने सेवन्ते अर्थ भाष्य में किया है । इसकेसिवाय अन्य स्थानों में सेवन्तेही अर्थ किया है। यहां सेवा करना अर्थ निरुपयोगी होगा । निर्गुण निराकार की कोई भी सेवा नहीं बन सकती । सारांश भक्ति का अर्थ सेवन लेना चाहिये, जैसे आप औषधि या भोजन का सेवन करते हैं । श्री आपटे ने अपने कोश में भक्ति का अर्थ Devotion Attachment Loyalty किया है । यही अर्थ आसक्ति का भी दिया है । वैसा ही भज शब्दका भक्ति अथवा आसक्ति अर्थ लेने में कोई अड़चन नहीं होगी । श्रीगोस्वामी जी ने यही अर्थ पसन्द किया होगा, वे कहते हैं—

कामिहि नारि पिआरि जिमि,
लोभिहि प्रिय जिमि दाम ।
तिमि रघुनाथ निरन्तर,
प्रिय लागहु मोहि राम ॥
(उत्तर कां० दो० १३०)

यहां पर आसक्ति का अर्थ घटता है, जैसे कामी या लोभी आसक्त रहता है उसी प्रकार मैं राम में होऊँ, श्री राम प्रीति भाजन और तुलसी उनपर आसक्त याने भक्त होवें ।

भक्ति याने प्रेम करना भी का गोस्वामी जी ने कई जगह, अर्थ किया है:—

भव सिंधु अगाध परे नर ते ।
पद पंकज प्रेम न जे करते ॥
अति दीन मलीन दुखी नितहीं ।
जिन्ह कें पद पंकज प्रीति नहीं ॥
करि प्रेम निरन्तर नेम लिए ।
पद पंकज सेवत सुद्ध हिये ॥
(उत्तर कांड १३ चौ० के नीचे)

तव पद पङ्कज प्रीति निरन्तर ।
सब साधनकर यह फल सुन्दर ॥
नाथ एक बर मांगउं,
राम कृपा करि देहु ।
जन्म जन्म प्रभु पद कमल,
कबहुँ घटै जनि नेहु ॥ ४६ ॥
(उत्तर का० दो० और ऊपर चौपाई)

नेहु याने प्रेम—

बिनु सत संग न हरि कथा,
तेहि बिनु मोह न भाग।
मोह गये बिनु रामपद,
होइ न दृढ अनुराग ॥ ६१ ॥
(उ० का०)

सब कर फल रघुपति पद प्रेमा,
तेहि बिन कोउ न पावै छेमा।
(उ० का० ६४ दोहे के नीचे),

सारांश यह कि आसक्ति युक्त होकर प्रभु राम जी का सेवन करना यही भक्ति है, जिसे तुलसीदास जी ज्ञान से श्रेष्ठ मानते हैं।

प्राणी मात्र अपने जान पर ही प्रेम करता है। मनुष्य घन, पुत्र कलत्रादि छोड़ने को तैयार रहता है, पर अपनी जान बचाना चाहता है, ऐसा क्यों ? जगत् और प्राणी मात्र, कार्यरूप हैं इनका कारण अवश्य ही होना चाहिये, वेद और शास्त्रों का कहना है कि ब्रह्म ही सबका कारण है। सिद्धान्त यह है कि कार्य में कारण विद्यमान रहता है जैसे घटादिक में मट्टी। इससे यह सिद्ध है कि अपने में ब्रह्म है। सवाल यह उठता है कि कार्य प्रिय है या कारण। प्राकृत जन, देहादिक को प्रिय मानते हैं, इसीसे जन्म से लेकर मरते तक इन्हीं को सुख देने के प्रयत्न में जुटे रहते हैं, पर नतीजा यह होता है कि वे अपने दुःख की पूर्ण निवृत्ति नहीं कर पाते। इससे सब कुछ प्राप्त होने पर भी वे अशांत ही रहते हैं। इसका कारण यह है कि सुख कारण में है इससे वे अनभिज्ञ हैं। एक संत ने अद्वैत मकरन्द में कहा है :—

अहमेव सुखं नान्यदन्यच्चेन्नैव तत्सुखं।
अमदर्थं न तद्ध्येयो मदर्थं नस्वतः प्रियम् ॥२४॥

अर्थ – आत्मा ही में सुख है याने वही आनन्द रूप है इसके व्यतिरिक्त दूसरी किसी वस्तु में सुख नहीं है जो मुझे अनुकूल मालूम पड़ता है उसमें स्वयं सुख नहीं है, तो उसकी अनुकूलता का अनुभव करने वाले में याने मुझमें, जो मेरे अनुकूल नहीं हैं वह स्वयं प्रिय नहीं है।

यदि ऐसा न होता तो एक ही समय में एक स्त्री किसी को भोग्य, किसी को पूज्य और किसी को द्वेष्य न होती। निष्कर्ष यह हुआ कि कारण ही प्रिय है न कि कार्य। याने ब्रह्म ही प्रिय याने आनन्द रूप है देहादि नहीं। यह ज्ञान न होना अशांति का कारण प्रतीत होता है।

जगत् सबके पहिचान का है पर कारण का ज्ञान केवल श्रुति वाक्य से ही होता है श्रुति और स्मृति ग्रंथों में उसका वर्णन इस प्रकार है :—

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ॥२४॥
(भ० गी० अ० २)

अर्थ— यह आत्मा न कटने वाला, न जलने वाला और न सूखने वाला है, वह नित्य है इसी से सर्वगत है, सर्वव्यापी होने से स्थाणु याने स्थिर है, स्थिर होने से अचल और इसी कारण से सनातन याने सदैव रहने वाला है।

न देहो नेन्द्रियाण्यहं न प्राणो न मनो न धीः।
ममता परिरब्धत्वादाक्रीड़तादिदं धियः ॥८
(अद्वैत मकरन्द)

अर्थ—देह, इन्द्रियां, प्राण, मन, बुद्धि मैं नहीं हूं ये सब मेरे (आत्मा) कारण इन्हें ये नाम प्राप्त होते हैं, ये सब बुद्धि के क्रीड़ा स्थान हैं।

न जायते म्रियते वा विपश्चिन्नायं बभूव कश्चित।
अजो नित्यःशाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्य माने
शरीरे ॥ १८
क० अ० १ वल्ली २

अर्थ—यह ज्ञानी आत्मा न उत्पन्न होता न मरता है यह किसी ही कारण से नहीं हुआ है। वह स्वतः से भी अलग पदार्थ उत्पन्न नहीं हुआ है। इसलिये वह अज (अजन्मा) नित्य शाश्वत (हमेशा टिकने वाला) और पुराना है।

स पर्यगाच्छुक्रम कायम व्रण मस्ना विरै शुद्धम पापविद्धम्। कविर्मनीषी परिभूः स्वयमभूर्यथा तथ्य तोऽर्थान व्यदधाच्छा श्वतीभ्य समाभ्यः ॥८॥
(ईशावास्योपनिषद्)

अर्थ—वह आत्मा सर्वगत, शुद्ध, अशरीर, अक्षत स्नायुरहित, निर्मल, पापरहित, सर्वद्रष्टा, सर्वज्ञ, सर्वोत्कृष्ट और स्वयंभू है। उसी ने प्रजापतियों के लिये पदार्थों का विभाग किया है।

कदाचिदात्मा न मृतो न जायते, न क्षीयते नाऽपि विवर्धतेऽनवः॥ निरस्त सर्वातिशयः सुखात्मकः। स्वयंप्रभःसर्वगतोऽयमद्वयः॥३॥

(श्री राम गीता)

अर्थ—वह आत्मा कभी मरता नहीं वह कभी ज्यादा या कम नहीं होता वह अनादि अजन्मा है। उसमें किसी प्रकार की विशेषता नहीं है। वह सुख रूप है। वह अकेला है। उसके व्यतिरिक्त कोई दूसरा तात्विक पदार्थ नहीं है।

यहाँ तक कुछ श्रुति व स्मृति के आधारों से एक ही आत्म तत्त्व सर्व व्यापी इस ब्रह्माण्ड में ऐसा सिद्ध हुआ वह बहुत बृहत् होने से ब्रह्म कहा गया। जो श्रुति इत्यादि में विश्वास नहीं करते उनकी समझ से एक तत्त्ववाद सिद्ध नहीं हुआ, इस कारण से अपना अनुभव क्या सिद्ध करता है देखना चाहिये, यहां अन्वय और व्यतिरेक का उपयोग करना होगा।

अपनी बाल्य, तरुण और वृद्ध अवस्था वैसे ही जाग्रत,निद्रा और स्वप्न अवस्था होती हैं। इन सब का अपने को ज्ञान रहता है। इससे इन अवस्थाओं में हम अवश्य रहते हैं यह हुआ अन्वय। एक अवस्था रहते इतर नहीं रहती यह है व्यतिरेक। अपना अभाव कभी भी किसी के अनुभव में नहीं आता, याने हम नित्य हैं—चल और अचल ये दो भाव अपने परिचय के हैं—चल काल में अचल भाव तदितर रहता है। इसका अर्थ यह हुआ कि अचल नित्य है। अचल तभी रहेगा जब वह पदार्थ घन और विकास रहित हो। यदि ऐसा न हो तो वह चलायमान होगा, यदि विकास होगा, तो भी वह अचल न रह सकेगा। नित्य-पदार्थ अचल घन और सर्वव्यापी अद्वितीय ही होगा यही तो ब्रह्म का रूप श्रुति इत्यादि में वर्णन किया है।

भक्त शिरोमणी गोस्वामी जी किसी देवी, देवता की भक्ति करना नहीं कहते हैं। वे तो परमात्मा की ही करो ऐसा कहते हैं। वे श्री राम को ब्रह्म ही मानते हैं, देखिये :—

सारद सेस महेस विधि, आगम निगम पुरान।
नेति नेति कहि जासु गुन, करहिं निरंतर गान॥१२॥

(बाल का०)

सोइ राम व्यापक ब्रह्म भुवन निकायपति माया धनी।
अवतरेउ अपने भक्त हित निज तंत्र नित रघुकुल मनी॥

(छंद ४१ दोहे के ऊपर बा० का०)

राम ब्रह्म व्यापक जग जाना, परमानंद परेस पुराना॥

(११६ दोहे के ऊपर बा० का०)

जगतप्रकाश्य-प्रकाशक रामू, मायाधीस ज्ञान गुन धामू

(११७ दो० ऊपर बा० का०)

ज्ञान गिरा गोतीत अज, माया मन गुन पार।
सोइ सच्चिदानंद घन, कर नर चरित अपार॥२४॥

(उ० का०)

कहां तक उदाहरण दिये जांय संपूर्ण मानस रामजी को ब्रह्म ही मानता है। राम भक्ति ब्रह्म उपासना ही है जिसके बारे में स्वयं रामचंद्र जी कहते है :—

यावन्न पश्येदखिलं मदात्मकम्।
तावन्मदाराधन तत्परोभवेत्॥४८॥ रा० गी०

अर्थ—जब तक साधक सब दृश्य ब्रह्म मय है ऐसा नहीं देखता तब तक मेरे आराधन में जुटे रहना चाहिये।

तत्परता ही मोक्ष साधन (याने राम कृपा पाने का) का मुख्य साधन है (देखो त्रिपुरा रहस्य दत्त भार्गव संवाद प्रकरण २०)। सब कुछ करना परंतु इस कार्य को अवश्य सिद्ध करूँगा ऐसा निश्चय करके भक्ति करने को श्री राम जी कहते हैं यमराज कठ उपनिषद् अ० १ वल्ली २ मंत्र २३ में कहते हैं :—

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन।
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुते तनूं स्वाम्॥२५॥

अर्थ :—यह आत्मा वेद के अध्ययन से धारणा शक्ति से बहुत सुनने से लभ्य नहीं होता जो उसकी प्रार्थना (इच्छा) करता है उसी को वह अपना रूप व्यक्त कर देता है तत्परता पूर्वक रामभक्ति करना चाहिये इसी से ब्रह्म साक्षात्कार होकर सद्य मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।

केवल ज्ञान साध्य होते-होते अनेक विघ्न उठते हैं। सबसे बड़ा विघ्न मैं ज्ञाता हूं ऐसा अहंकार उत्पन्न होता है पर जो कहता है कि मैं ज्ञानी हूं उसे लेशमात्र भी ब्रह्म का ज्ञान नहीं है इसके सिवाय ज्ञान होने के बाद देह धारण करना ही पड़ता है अनंत जन्मों के संस्कार से इन्द्रिय ग्राम बड़ा बलवान होता है भगवान् व्यास नारायण अपने महाभारत में कहते हैं—बलवान इन्द्रिय ग्रामो विद्वांसमपिकर्षति, इसी से ज्ञान होने पर भी अपने विषयों की तरफ आकर्षित होते हैं और यही अपने अधः पात का कारण बन जाता है।

गोस्वामी जी अपने ज्ञान दीप में कहते हैं कि यदि बड़े प्रयास और प्रयत्न से ज्ञान दीप उजाल लिया जावे तो भी हृदय ग्रंथी छूटने के पहिले अनेक विघ्न उपस्थित होते हैं जैसे :—

माया ऋद्धि सिद्धि प्रेरइ बहु भाई।
बुद्धिहि लोभ दिखावहि आई॥
होइ बुद्धिजों परम सयानी।
तिन्ह तन चितव न अनहित जानी॥
इन्द्रिय द्वार झरोखा नाना,
तहं तहं सुर बैठे करि थाना॥
आवत देखहि विषय बयारी।
ते हठि देहिं कपाट उघारी॥

इससे ज्ञान दीप बुझ जाता है और हृदय ग्रंथी छूट नहीं पाती, ज्ञान पन्थ अति कठिन है जो इसे पार कर सके वही कैवल्य पद प्राप्त कर सकेगा। इतना ही नहीं आगे कहा है—

राम भजत सोइ मुक्ति गुसाईं।
अनइच्छित आवे बरिआईं॥

अस विचारि हरि भगत सयाने।
मुक्ति निरादर भगति लुभाने॥
रामभगति चिन्तामनि सुन्दर।
बसइ गरुड़ जाके उर अन्तर॥
प्रबल अविद्या तम मिटि जाई।
हारहिं सकल सलभ समुदाई॥
खल कामादि निकट नहिं जाहीं।
बसइ भगति जाके उर माहीं॥

तुलसीदास जी के मत से ज्ञान मार्ग बड़ा कठिन है और उस मार्ग में चलने वाले को अनेक विघ्नों का सामना करना पड़ता है। विरला ही कोई उसे पार कर सकता है। इससे भक्ति मार्ग ही अति सुगम है पर वह होना चाहिये श्रुति संम्मत। यह मत है भक्त शिरोमणि का जिन्हें प्रभु रामचन्द्रजी ने अपनाया है वे विनय पत्रिका में इस प्रकार कहते हैं—

पवन सुवन, रिपुदवन,
भरतलाल, लखन दीन की।
निज निज अवसर सुधि किये,
बलि जाउं दास अस पुजिहैं खास खीन की॥
समय संभारि सुधारबी तुलसी मलीन की।
प्रीति रीति समुझाइबी नतपाल कृपालुहिं
परमिति पराधीन की॥

(२७८ विनय पत्रिका)

जब यह समाचार श्री रघुनाथ जी को सुनाया और पत्रिका पेश की गई तब वे कहते हैं (२७९) बिहसि राम कह्यो, सत्य है, सुधि मैं हूँ लही है। मुदित माथ नावत बनि तुलसी अनाथ की परि रघुनाथ हात सहीहै। ये हैं बचन सनदी भक्त के। उनका निरादर नहीं होना चाहिये भगवान शंकराचार्य के मत से ज्ञान का वही अधिकारी हो सकता है जिसने सर्वसंग परित्याग किया है और सन्यासी है। यह जनता के लिये शक्य नहीं हो सकता इससे श्री तुलसी दास का भक्ति का अवलंबन करना सुविधा का होगा।

मानस में कन्या

[श्री किशन लाल जी दुबे, बी० ए०, सी० टी०]

संत-शिरोमणि भक्त-प्रवर महात्मा गोस्वामी तुलसीदास जी का राम-चरितमानस अमूल्य रत्नों का रत्नाकर है। ज्यों-ज्यों इसमें गोते लगाये जाते हैं त्यों त्यों वे रत्न प्राप्त होते जाते हैं। चाहिये श्रद्धा, विश्वास और निश्छल भक्ति क्योंकि—

'जे श्रद्धा संबल रहित, नहिं संतन कर साथ।
तिन कहँ मानस अगम अति जिनहिं न प्रिय रघुनाथ।।'

प्रातः स्मरणीय गोस्वामी जी पर जड़वादियों और पाश्चात्य शिक्षा के भ्रमोत्पादक विचारों से अभिभूत मस्तिष्क वालों द्वारा स्त्री-जाति के प्रति उनकी अनुदारता एवं असहिष्णुता का दोषारोपण किया जाता है। यद्यपि श्रद्धालु विद्वानों द्वारा उनकी शङ्काओं का समीचीन समाधान किया जा चुका है और किया भी जा रहा है, किन्तु लोहा इतना जङ्ग खा चुका है कि अब पूर्ण रूप से अग्नि में डाल कर क्षार द्वारा शुद्ध किया जाने पर ही वह अपनी पूर्व स्वाभाविक अभियुक्त अवस्था प्राप्त कर सकता है। आधुनिक समालोचकगण बड़े परिश्रम से लिखकर बृहदाकार ग्रन्थ प्रस्तुत कर रहे हैं, यह सर्वथा स्तुत्य है किन्तु उनका दृष्टिकोण भ्रम से रहित हो ऐसा नहीं कहा जा सकता। उनके आक्षेप विशेषकर निम्न पंक्तियों को लक्ष्य करके होते हैं—

१— ढोल गँवार सूद्र पसु नारी,
सकल ताड़ना के अधिकारी।।

२— नारि सुभाउ सत्य सब कहहीं।
अवगुन आठ सदा उर रहहीं।।
साहस अनृत चपलता माया।
भय अविवेक असौच अदाया।।

३— भ्राता पिता पुत्र उरगारी।
पुरुष मनोहर निरखत नारी।।
होइ बिकल सक मनहि न रोकी।
जिमि रवि मनि द्रव रविहि बिलोकी।।

४— सत्य कहहिं कबि नारि सुभाऊ।
सब बिधि अगह अगाध दुराऊ।।
निज प्रतिबिंब बरुक गहि जाई।
जानि न जाइ नारि गति भाई।।

५— कवने अवसर का भयउ,
गयउँ नारि बिस्वास।।

आदि कतिपय इन कथनों के पूर्वा पर विचार किये बिना, पात्र विशेष की मनस्थिति का अध्ययन किये बिना, परिस्थिति-विशेष की ओर ध्यान दिये बिना और मनोवैज्ञानिक तत्वों के विश्लेषण किये बिना ही वे कह बैठते हैं कि यह स्त्री-जाति का अपमान है और अशोभन कथन है। किन्तु वस्तुतः देखा जाय तो इन मनोवैज्ञानिक एवं नैसर्गिक तथ्यों के अतिरिक्त मानस तो नारी जाति के गुण-ग्रामों का अतुल भंडार है जिसमें विशुद्धतम मातृत्व, भगिनीत्व, सतीत्व और शक्तित्व के अलौकिक आदर्श उपस्थित किये गये हैं। इन भावों की ओर हमारे आलोचकों ने बहुत ही अल्प अथवा नहीं सा ध्यान देने का कष्ट किया है। प्रस्तुत पंक्तियों में नारी जाति के विभिन्न रूपों का विवेचन न किया जाकर 'कन्या का स्थान' जो हमारे परम पूज्य ग्रन्थकार अपने 'मानस' में निर्धारित करते हैं एक मात्र उसी का दिग्दर्शन कराये जाने का स्वमत्यनुसार स्वल्प प्रयास किया जा रहा है।

वैदिक काल से (अथवा सृष्टि के आरंभ काल से) अर्वाचीन समय तक के ऋषियों, मुनियों, शास्त्रकारों, नीतिकारों और धर्माचार्यों ने स्त्री जाति में कन्या को महान् गौरवमय उच्चपद प्रदान किया है। श्रुति,

स्मृति, पुराण, रामायण, महाभारत, काव्य, नाटक आदि में सर्वत्र कन्यारत्न के गुण-गान मुक्तकण्ठ से किये गये हैं, जो एक स्वतंत्र लेख का विषय है। अतः केवल मानस के आधार पर ही कन्या का महत्त्व प्रदर्शित किया जाता है।

माता-पिता अपने सुख-दुःख से उतने सुखी वा दुःखी नहीं हुआ करते जितने कि अपनी संतान के सुख-दुःख से। उसमें भी पुत्र के भावी को उज्ज्वल एवं सुखमय बनाने की चेष्टा करते हुए भी वे इतने चिंतित नहीं होते जितने कि अपनी प्राणों सम प्यारी पुत्री के भविष्य के चिंतन से होते हैं।

यद्यपि पुत्र हैं, प्राण हैं,

'मोरे भरत राम दुइ आंखी।
सत्य कहउँ करि संकरु साखी॥'

अथवा—'सब सुत प्रिय मोहि प्रान की नाईं।'

अथवा—'मेरे प्राणनाथ सुत दोऊ।'

तो भी कन्या के प्रति उनकी ममता विशेष ही रहती है, और माता का छोह तो अवर्णनीय होता है। पिता कभी-कभी भूल भी कर जाता है। उसका कारण कन्या नहीं होती, उसके श्वसुर-पक्ष के लोगों का अवांच्छनीय व्यवहार होता है। पर माता इस व्यवहार से भी उदासीन ही रहती है।

सती जी अपने पिता दक्ष प्रजापति के यहाँ उनके यज्ञ-समारोह में बिना निमन्त्रण के ही सम्मिलित हुईं क्योंकि

'यदपि मित्र प्रभु पितु गुरु गेहा।
जाइअ बिनु बोलेहुं न संदेहा॥'

परन्तु नीति यह कहती है कि—

'जो बिनु बोलें जाहु भवानी।
रहइ न सीलु सनेहु न कानी॥'

अतः सती जी का अपने पिता के घर स्वागत नहीं हुआ।

'पिता भवन जब गई भवानी।
दच्छ त्रास काहुं न सनमानी॥'

स्वयं पिता भी उदासीन रहे—

'दच्छ न कछु पूछी कुसलाता।'

इतना ही नहीं—

'सतिहि बिलोकि जरे सब गाता।'

बहिनों का व्यवहार भी व्यंगपूर्ण रहा—

'भगिनी मिलीं बहुत मुसकाता।'

इस परिहासपूर्ण मिलन से तो उनका न मिलना कहीं अच्छा होता। पर माता ऐसा नहीं कर सकती। उसका हृदय तो नवनीत से भी अधिक कोमल, समुद्र से भी अधिक गंभीर और गिरिराज हिमालय से भी अधिक उच्च और विशाल होता है। दक्ष के त्रास से सब भयभीत हैं किन्तु माता पति के कोप से लेशमात्र भी नहीं डरती। वह अपनी प्यारी पुत्री से मिली—

'सादर भलेहिं मिली इक माता।'

'भलेहिं' शब्द बड़ा साभिप्राय है क्योंकि एक माता ही सती जी से मिली थी और कोई भी तो नहीं मिला था। 'सादर' शब्द का प्रयोग बड़ा मार्मिक है। पुत्री से सस्नेह मिलन ही पर्याप्त होता है। आदर गौण है। किन्तु यहां आदर प्रधान है। कारण दक्ष ने भूत-भावन सदाशिव शंकर का अपने यज्ञ में अपमान जो कर रखा था। कन्या बड़े घर में जाने पर आदरणीय हो ही जाती है। वह आदर एक प्रकार से उसके श्वसुरालय का होता है। सती मिलने में श्री शिवजी का आदर निहित है। यदि ऐसा न होता तो हमारे पूज्य ग्रंथकार 'सानुराग मिली इक माता' ही कह कर संतोष कर लेते, पर उससे तो माता का अपनी पुत्री और अपने जामातृ के प्रति वात्सल्य एवं आदर प्रकट नहीं होता जो तुलसीदास जी को कभी इष्ट नहीं।

अब आइये गिरिराज के राजप्रासाद में। सतीजी गिरिराज किशोरी जी के रूप में प्रकट हुईं। माता-पिता को बालिका के भविष्य की चिंता तथा उत्सुकता हुई। नारद जी के आने पर उनकी अर्घ्यादिक से अर्चनोपासना के पश्चात् गिरिराज ने 'सुता बोलि मेली मुनि चरना।'

तथा उसके गुण-दोष पूछने पर—

'कह मुनि बिहंसि गूढ़ मृदु बानी।
सुता तुम्हारि सकल गुन खानी॥
सुन्दर सहज सुसील सयानी।
नाम उमा अम्बिका भवानी॥

सब लच्छन सम्पन्न कुमारी।
होइहि संतत पियहि पिआरी॥
सदा अचल एहिकर अहिवाता।
एहि तें जसु पैहहिं पितु माता॥
होइहि पूज्य सकल जग माहीं।
एहि सेवत कछु दुर्लभ नाहीं॥
एहि कर नामु सुमिरि संसारा।
त्रिय चढ़िहहिं पतिव्रत असिधारा॥
सैल सुलच्छन सुता तुम्हारी।
सुनहु जे अब अवगुन दुइ चारी॥
अगुन अमान मातु पितु हीना।
उदासीन सब संसय छीना॥

जोगी जटिल अकाम मन, नगन अमंगल वेष।
अस स्वामी एहिं कहँ मिलिहि परी हस्त असि रेख॥'

नारद जी तो एक ही सांस में कन्या के गुण-दोष कह गये। दम्पति को पुत्री के गुणों पर प्रसन्नता एवं हर्ष सूचित करने का अवसर ही न मिलने पाया कि उसके अवगुण सामने नाचने लगे।

'सुनि मुनि गिरा सत्य जियँ जानी।
दुख दंपतिहि उमा हरषानी॥'

सुख कहीं रह गया, दुःख उसकी जगह उपस्थित हो गया। सन्तान और विशेषकर कन्या के गुणों पर कौन माता-पिता न रीझेंगे जब कि—

'एहि ते जसु पैहहि पितु माता।"

कन्या के चरित्र में संदेह हो अथवा विधवा हो तो माता-पिता को असह्य दुःख का होना स्वाभाविक है, परन्तु यहाँ यह कारण नहीं है, क्योंकि गिरिराज कुमारी तो सुंदर, सहज सुशील और सयानी है, पति को प्यारी है और इसका अहिवात सदा अचल है। इनके दुःख का एकमात्र कारण है कन्या के भावी जीवन के आजीवन दुःखमय होने की आशंका, क्योंकि उसे वर ऐसा मिलने वाला है, जो गुणों से हीन, अनाथ, उदासीन, नंगा और बेघरबार है। नगाधिराज अधीर हो उठते हैं, परन्तु हैं वे पुरुष अतः उन्होंने फिर धैर्य को धारण किया—

'उर धरि धीर कहइ गिरि राऊ।
कहहु नाथ का करिअ उपाऊ॥'

इस पर परम कारुणिक परहितनिरत संत ने राजा का परितोष करके उपाय बताया कि उपर्युक्त तथा कथित अवगुण सबके सब भगवान शङ्कर में गुणों के रूप में विद्यमान हैं और—

'संभु सहज समरथ भगवाना।
एहि बिबाह सब बिधि कल्याना॥'

किन्तु—'दुराराध्य पै अहहिं महेसू।'
परन्तु हैं वे—'आसुतोष पुनि किएँ कलेसू।'
इसलिये— 'जौं तपु करै कुमारि तुम्हारी।
भाविउ मेटि सकहिं त्रिपुरारी॥'

यह कह कर नारदजी तो चले गये। परन्तु माता मैनाजी को तो संतोष नहीं हुआ अतः

'पतिहि एकान्त पाइ कह मैना।
नाथ न मैं समुझे मुनि बैना॥'

मैंने मुनि का कथन नहीं समझा से यही भाव झलकता है।

पुत्र का ससुराल चाहे अपने से मान, गौरव, ऐश्वर्य आदि में कुछ घटकर भी हो तो भी वहां से पुत्र-वधू सहर्ष ग्रहण की जा सकती है किन्तु कन्या के संबन्ध में ऐसी बात नहीं है। कन्या को तो अपने से उन्नत कुल की ही देने की माता-पिता की लालसा रहती है। मान-मर्यादा, धन सम्पत्ति, विद्या-बुद्धि और बल-पराक्रम में, कुल उच्च हो तथा सुन्दर, सुडौल, स्वस्थ, सर्वगुण सम्पन्न, सुशील और बुद्धिमान वर ही उनका एकमात्र लक्ष्य रहता है।

माता पिता का अपनी दुलारी पुत्री के लिये कितना प्रेम होता है यह इसका प्रमाण है। इसलिये श्री मैना जी कहती हैं।

जो घरु, बरु, कुलु होइ अनूपा।
करिय बिवाहु सुता अनुरूपा॥

यदि कदाचित ऐसा प्रसङ्ग न मिले तो एक बार माताएँ यह निश्चय कर ही तो लेती हैं कि कन्या हमारी कुमारी ही भली। मैना जी ने भी अपना निर्णय सुना ही दिया—

'न त कन्या बरु रहउ कुआरी।'

जनक राज भी ऐसा कहने के लिये बाध्य हो गये थे जबकि उन्हें भी सीता जी के लिए उपयुक्त वर पाना असम्भव सा प्रतीत होने लगा था।

'लिखा न बिधि बैदेहि बिबाहू।'

अथवा—'कुँअरि कुँआरि रहहु का करऊँ ॥

कितना संताप माता-पिता को होता है जब वे अपनी लाड़ली कन्या के लिए मनोनुकूल वर प्राप्त नहीं कर पाते। मैना जी अपनी कन्या का कुँआरापन पसन्द करती हैं क्योंकि वह उन्हें अत्यन्त प्यारी है, 'कंत उमा मम प्रान पियारी।'

इतना ही नहीं कन्या परिवार, पुरजन आदि सबको समान रूप से प्यारी हुआ करती है।

'परिवार पुरजन मोहि राजहिं,
प्रान प्रिय सिय जानिबी ॥'

कन्या का सम्बन्ध करने में यदि पिता से भूल हो जाती है तो उसके परिणाम स्वरूप कन्या के दुःखी जीवन को देखकर पिता को पश्चाताप होता ही है किन्तु माता विशेष दुःखी एवं संतापित होती है, क्योंकि कन्या के दुःख के अतिरिक्त पति का लोकापवाद भी उसके हृदय को शालता है। वह पति-निन्दा न सुन सकती है और न वह उसे सहन कर सकती है अतः गिरिराज पत्नी कहती है—

'जो न मिलिहि बरु गिरिजहिं जोगू।
गिरि जड़ सहज कहहिं सब लोगू ॥'

हे पतिदेव दोनों ही दुःख, कन्या का परिताप और अपना लोकापवाद, हमें न जलावे इसलिये

'सोइ बिचारि पति करेहु बिबाहू।
जेहिं न बहोरि होइ उर दाहू।,'

आत्माभिमानी तुलसीदास जी ने नारी को कितनी स्वात्माभिमानिनी सिद्ध किया है। भारतीयता का ऐसा उच्च आदर्श आर्य ललना द्वारा कन्या-प्रेम को आधार बनाते हुए मानसकार ने उपस्थिति कराकर हिन्दू जाति का मस्तक गिरिराज से भी ऊँचा कर दिया है।

पुरुष में विश्वास की मात्रा अधिक दृढ़ होती है अतः नारद वचन और उनके निर्दिष्ट उपाय पर भरोसा कर नगराज ने मैना जी को धैर्य बँधाया।

'नारद बचन सगर्भ सहेतू।
सुंदर सब गुन निधि बृष केतू ॥
अस बिचारि तुम तजहु असंका।
सबहि भाँति संकरु अकलंका ॥'

मैना जी को संतोष हुआ और वे वहाँ से अपनी पुत्री के पास गईं—

'सुनि पति बचन हरषि मन माहीं।
गई तुरत उठि गिरिजा पाहीं ॥

पुत्री को देखकर उनका स्नेह समुद्र उमड़ पड़ा।

'उमहि बिलोकि नयन भरि बारी।
सहित सनेह गोद बैठारी ॥
बारहि बार लेति उर लाई।
गद गद कंठ न कछु कहि जाई ॥,

यहाँ पार्वती जी द्वारा कन्या रूप में आदर्शशील का प्रदर्शन किया गया है। शैलजा नारद जी की भविष्यवाणी पर हर्षित हुई थी—'उमा हरषानी।, इतना ही नहीं उनके उपदेश से तप करने को उद्यत हो गईं। किन्तु माता-पिता की आज्ञा अवश्य प्राप्त की। यह तो स्वाभाविक है कि माता-पिता द्वारा कन्या को इस के लिये सहज ही में आज्ञा कैसे मिल सकती है। कुल-गुरु कालिदास जी ने अपने कुमार संभव में इसका सविस्तार वर्णन किया है किन्तु श्री तुलसीदास जी ने भी बड़े उत्तम ढंग से कन्या के शील का निर्वाह कराया है। कन्या ने किस विनय, बुद्धि एवं शालीनता से माता-पिता को आज्ञा देने के लिए प्रसन्न कर लिया—

सुनहि मातु मैं दीख अस सपन सुनावउँ तोहि।
सुन्दर गौर सुबिप्रवर अस उपदेसेउ मोहि ॥

करहि जाइ तपु सैल कुमारी।
नारद कहा सो सत्य विचारी॥
मातु पितहि पुनि यह मत भावा।
तपु सुख प्रद दुख दोष नसावा॥
तप बल रचइ प्रपंचु बिधाता।
तप बल बिष्णु सकल जगत्राता॥
तप बल संभु करहिं संघारा।
तप बल सेषु धरहि महिभारा॥
तप अधार सब सृष्टि भवानी।
करहि जाइ तपु असजिय जानी॥'

इस प्रकार माता को अपने मन की बात स्वप्न दर्शन के अनुसार सुनाई। माताएँ अपनी संतान के वचनों में बहुत अधिक विश्वास करती हैं, आश्चर्य करती हैं और प्रसन्न होती हैं। संतान भी पिता की आज्ञा माता द्वारा ही प्राप्त किया करती हैं अतः माता मैना तो विस्मित हो ही गईं—

'सुनत बचन बिस्मित महतारी।'

इतना ही नहीं झट पति को यह बात सुना दी—

'सपन सुनायउ गिरिहि हँकारी।'

इस प्रकार पार्वती जी—

'मातु पितहि बहुबिधि समुझाई।'

और फिर,—'चली उमा तपहित हरषाई॥'

यह है हमारी भारतीय कन्याओं का शील। विवाह के समय माता मैना जी के धैर्य और कुल-मर्यादा का बाँध ही मानो टूट गया। विकट वेषधारी दूलह को देखते ही माता मैना जी की दशा भी बड़ी विकट हो गई—

'मैना हृदय भयउ दुखु भारी।
लीन्ही बोलि गिरीस कुमारी॥
अधिक सनेहँ गोद बैठारी।
स्याम सरोज नयन भरि बारी॥
जेहि बिधि तुम्हहि रूपुअस दीन्हा।
तेहिं जड़ बरु बाउर कस कीन्हा॥'

जहाँ अपने पति की जनता द्वारा जड़ता बखाने जाने से भय खाती थी वहाँ इस दुःख से आज वही मैना जी अपयश को स्वीकार करने को उद्यत हैं, सो केवल कन्या के प्रति छोह और प्रेम के कारण ही। इतना ही नहीं आत्मघात जैसा महान् पातक करने पर भी वे तुल गईं।

'तुम्ह सहित गिरितें गिरौं,
पावक जरौं, जल निधि महु परौं।'

चाहे पतिदेव विवाह करदें मैं न करूँगी। पातिव्रत के भंग की भी चिंता न रही। इसी आवेश में वह नारद जी को भी कोसने लगीं—

'नारद कर मैं काह बिगारा।
भवनु मोर जिन्ह बसत उजारा॥'

कन्या से पिता का घर तो कहीं नहीं बसता है। तो मैना जी ने 'भवन मोर जिन्ह बसत उजारा' क्यों कहा? मातृ हृदय ही जो ठहरा। माता को पुत्री-पुत्र से भी अधिक प्रिय होती है। कन्या दोनों कुलों को उजागर करती हैं। माता-पिता इससे यश पाते हैं—

'एहितें जसु पैहहिं पितु-माता।'

यदि माता-पिता को पुत्री से यश न मिले तो वह घर कान्तिहीन हो जाता है, उजड़ा सा बन जाता है। जनकराज कहते हैं—

'पुत्रि पवित्र किये कुल दोऊ।
सुजस धवल जगु कह सब कोऊ॥'

इसी प्रकार माता सुनयना जी को इसके विपरीत सुन्दर, सुयोग्य वर के सहज ही में प्राप्त होने पर भी महाराज जनक जी व्यर्थ ही हठ किये हैं ऐसा जानकर कोसने लगीं। इतना ही नहीं वे भी अपने पति की बुद्धिमानी का अन्त समझने लगी—

'भूप सयानप सकल सिरानी।'

संपूर्ण सयानापन समाप्त हो गया। भला सुनयना जी जैसी सती-साध्वी भी अपने परम पूज्य पतिदेव के लिये ये शब्द कह ही तो गईं सो केवल अपनी प्राण प्यारी दुलारी जानकी के कारण।

अन्यच्च वर अनुकूल न मिलने पर पिता के घर में कन्या की शोभा नहीं रहती क्योंकि मूर्ख जामाता के प्रति प्रेम व आदर भाव नहीं प्रकट किया जाता है।

इसके अतिरिक्त कुआँरी वा विधवा कन्या दया भाजन होते हुए भी पितृ गृह में संदेह रहित अवस्था में नहीं रह सकती। ये विचार शूलवत् माता मैनाजी को शालते हैं और नारद जी के प्रति ये उद्गार निकलवाते हैं।

'साँचेहु उन्हके मोह न माया।
उदासीन धनु धाम न जाया॥
पर घर घालक लाज न भीरा।
बांझ कि जान प्रसव कै पीरा॥'

सती जी का परिचय पाने पर विवाह संपन्न हुआ। विदाई के समय माता को वियोग- संभाव्य दुःख का फिर कटु अनुभव हुआ, परन्तु सीख देने के अपने परम कर्तव्य से विमुख नहीं हुई'—

'लै उछंग सुन्दर सिख दीन्ही॥
करेहु सदा सङ्कर पद पूजा।
नारि धरमु पतिदेउ न दूजा॥'

कन्या की हित कामना से ऐसी सुन्दर सीख माता पिता एवं गुरुजनों द्वारा उसको दी जाती है। माता-सुनयना जी आदि रानियाँ—

'पुनि पुनि सीय गोद करि लेहीं।
देइ असीस सिखावन देहीं॥
होएहु संतत पियहिं पिआरी।
चिरु अहिवात असीस हमारी॥
सासु ससुर गुरु सेवा करेहू।
पति रुख लखि आयसु अनुसरेहू॥'

सखियां थी—

'अति सनेह बस सखी सयानी।
नारि धरम सिखवहिं मृदुबानी॥'

महाराज जनक जी ने—

'बहु बिधि भूप सुता समुझाई।
नारि धरमु कुल रीति सिखाई॥'

जनक जी के कुल की रीति 'विदेह' होना है। अतः सीताजी भी राज्यैश्वर्य से तनिक भी लिप्त न होकर रामचन्द्र जी के साथ विदेह बन बनवासिनी हुईं जिन्हें देख जनक जी को विशेष संतोष हुआ था।

—शेष अगले अङ्क में

भक्त रक्षक भगवान

हे अखिलेश दयानिधि माधव, गोविन्द कृष्ण बृजेश मुरारी।
आनँद कन्द परेश प्रभामय, राम रमापति सारँग धारी॥
सेवक जान हरो हरि संकट, टेक 'ब्रह्मानँद' एक तुम्हारी।
भक्त पुकार करैं जबही तबही प्रभु आय करौ रखवारी॥

—वै० भू० कविराज ब्रह्मानन्द चन्द्रवंशी

परम सौख्य सम्पत्ति

[श्री नन्द किशोर गौड़]

अंधकार वरु रविहि नसावै।
राम विमुख सुखजीव न पावै॥

मानस में मानव जीवन का मूल लक्ष्य राम नामाराधन है। इससे बढ़कर मनुष्य जीवन को सुखमय व्यतीत करने का कोई सुगम मार्ग नहीं है। संसार में जीव सुख की खोज में निकलता है लेकिन मृग मरीचिकावत् दुःख भोगता हुआ सुख को नहीं टटोल पाता। सुख मिले भी कहां से? जब संसार वृक्ष में सुख रूपी फल लगा ही नहीं तो फिर कैसे प्राप्त किया जा सके? संसारी पुरुषों की गणना इस प्रकार है कि कोई तन दुखी? कोई मन दुखी? कोई धन दुखी?

जब हम सुख की टटोल को निकलते हैं तो हमें पता चलता ही नहीं कि कौन सुखी है। हम अपने मन से कल्पना कर लेते हैं कि संसार में सबकी अपेक्षा किसान सुखी है। दिन भर काम धंधा अपना किया और रात में तान दुपट्टा आराम से सोया। लेकिन जब हम किसान भाई से पूछते हैं कि कहिये आप सुखी हैं? तो वह कहता है कि हम कहाँ सुखी? बैल, भैंस के लिये रुपये महाजन से लाये, बीज खेतों में दूसरे से लेकर बोया खाने के लिये भी उधार लाये हमें सुख नहीं है सुखी तो हमारे गांव का पटवारी है जो खेती भी कराता है तनख्वाह भी पाता है। हम लोगों से फसलाना भी लेता है। जब हम पटवारी से पूछते हैं कहिये आप सुखी हैं? वह कहता है बिलकुल नहीं। नवीन कागज बन रहे हैं एक दिन की छुट्टी नहीं मिलती, हमारी स्त्री बीमार है ठीक तौर से इलाज तक नहीं करा पाते, सुख तो कोसों दूर है। परन्तु क्या करें आत्मा का हनन कर सर्विस कर रहे हैं, न करें तो खायें क्या? हां होंगे तो तहसीलदार साहब सुखी होंगे। जब तहसीलदार से पूछो तो यही रोना है वहां पर भी है। वे कहते हैं कि घर से तार आया 'फौरन आओ' छुट्टी मांगी किंतु नहीं मिली मजबूर हो कर रुक गये। ऐसी ही हालत सब जगह है। कोई भी सुखी नहीं यदि है तो वह जो शश शृंगवत् संसार-वासना को छोड़ कर रामभजन का भिखारी बन चुका है। कहा भी है—

रे मन मूरख भूल मती न रहो तुम और उपायन में।
निकसे दिन जात तिहारे सभी,
नित के नित खान कमायन में॥
'नंदराय' कहैं न बिताओ समय,
नित गीत मल्हार के गायन में।
मन आन अराम नहीं सपने जो,
अराम है राम के पायन में॥

तभी तो मानसकार ने लिखा है कि :—

अंधकार वरु रविहि नसावै।
राम विमुख सुख जीव न पावै॥

———

(सियावर रामचन्द्र की जय)

मानस प्रचार के लिये मानस पारायण कीजिये।

आत्म-शिक्षा

(मानस तत्वान्वेषी पं० श्री रामकुमार दास जी 'रामायणी' वे० भू० सा० र० अयोध्या)

(१)

रसने ! जो तू राम राम रट लाती ॥ टेक ॥
तौ मानुष मुख वास सुफल करि रामधाम ले जाती ॥ रसने जो०
नाम सुनाइ तारती औरहिं तुमहुँ परम पदपाती ॥ रसने जो तू०
कबहुँ न कटुक काढ़ती तौ तू कोमल कांत सुहाती ॥ रसने जो तू०
वेद पुराण शास्त्र सम्मत रस पीती और पिलाती ॥ रसने जो तू०
श्री कौशल 'कुमार' गुण गावत रस नायिका कहाती ॥
रसने जो तू राम राम रट लाती ॥

(२)

मन राम राम नित कहु रे।
मानुष होइ न भजे भगवानहिं यह कलंक जनि सहु रे ॥ मन०
दम्भ कपट पाखण्ड द्वेष तजिसरल सन्त पथ गहु रे।
गाइ गाइ गोविन्द गुणावलि गाढ़ गर्व गढ़ ढहु रे ॥ मनराम०
दशरथ-नन्द 'कुमार' चरण भजि परम अनन्दहिं लहु रे।
सुर दुर्लभ सुख करि तहँ जैहै नहि जहँ से कोउ बहु रे ॥
मन राम राम नित कहु रे ॥

———



जून मास में संघ के ३७६ नये सदस्य बने। इस मास में २६ नई शाखायें स्थापित हुईं जिनका विवरण इस प्रकार है :—

शाखा संख्या १४३२ शोभापुर [होशंगाबाद] सदस्य १० मंत्री श्री बाबूलाल जी काबरा। शा० सं० १४३३ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० म० श्री रामप्रसाद जी तिवारी। शा० सं० १४३४ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री सुन्दरलाल जी तिवारी। शा० सं० १४३५ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री बाबूलाल जी साहु। शा० सं० १४३६ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री नवल किशोर जी। शा० सं० १४३७ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री मूलचन्द जी गट्टानी। शा० सं० १४३८ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री माँगीलाल जी पाठक। शा०सं० १४३९ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री अमानसिंह बरुआ। शा० सं० १४४० शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री माँगीलाल वाहेती। शा० सं० १४४१ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री नथमल जी दर्जी। शा० सं० १४४२ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री रिखीलाल जी श्रीवास्तव। शा० सं० १४४३ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री रामलाल जी। शा० सं० १४४४ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री हीरालाल जाजू शा० सं० १४४५ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री रामशंकर काबरा। शा० सं० १४४६ शोभापुर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री रामनाथ जी दुबे शिक्षक। शा० सं० १४४७ तालाखेड़ी [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री रघुनाथ सिंह पटेल। शा० सं० १४४८ कोहानी [होशंगाबाद] स० १० मंत्री श्री रामप्रसाद जी परसाई। शा० सं० १४४९ ढिकवारा [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री बलीराम पुरविया। शा० सं० १४५० पारसोली [राजस्थान] स० १३ मं० श्री नन्दकिशोर जी जोशी। शा० सं० १४५१ माँडलगढ़ [राजस्थान] स० २१ मं० श्री भूरदास जी वैरागी। शा० सं० १४५२ हरदा [होशंगाबाद] स० १० मं० श्रीमती पुनियाबाई। शा० सं० १४५३ बरूँदनी [राजस्थान] स० ९ मं० श्री माँगीलाल जी। शा० सं० १४५४ सिंगोली [राजस्थान] स० १० मं० श्री नन्दलाल जी पाराशर। शा० सं० १४५५ बड़ल्यास [राजस्थान] स० १३ मं० श्री बन्शीलाल जी काबरा। शा० सं० १४५६ कदवासा [मध्यभारत] स० ९ मं० श्री सोहनलाल जी पाराशर। शा० सं० १४५७ सिंगोली [मध्यभारत] सदस्य १५ मन्त्री श्री शिवनाथ शर्मा पालीवाल।

इस मास में प्रेमियों ने इस प्रकार शाखायें स्थापित कराई हैं :—

१—श्री कंज जी रामायणी काशी १८ पूर्व स्थापित १३४=१५२

२—श्री बेधड़क जी भीलवाड़ा ७ पूर्व स्थापित २०=२७

श्री कंज जी प्रथम महानुभाव हैं जिन्होंने एक शाखा माला पूर्ण की है। उनकी संख्या १५२ है, १०८ से भी ४४ अधिक। उनकी किन शब्दों में सराहना की जाय, किन शब्दों में धन्यवाद दिया जाय। ९ या अधिक सदस्यों की शाखाओं से हम प्रार्थना करते हैं कि वे दो शाखायें स्थापित करायें। वे असमर्थ होते हैं। अनेक व्यास मिलने पर कहते हैं कि हम प्रचार करेंगे पर उस वचन को भुलाने में विलम्ब नहीं करते। इन बातों के जानकार से पूछिये कि श्री कञ्ज जी के प्रचार का, उनके वचन का क्या मूल्य है उसके मन में। जिला होशंगाबाद में सहस्राधिक शाखायें स्थापित कराने के उनके सङ्कल्प की शीघ्र पूर्त्ति के हम अभिलाषी हैं। जिला होशंगाबाद के निवासियों को इसमें सहायक होना चाहिये। इस समय श्री कञ्ज जी तहसील सोहागपुर में उपस्थित हैं। अतः वर्तमान भार उन पर ही है।

विविध-समाचार

चील्ह :—जेठ सुदी १४ को अखंड पाठ हुआ। समाप्ति पर प्रसाद वितरण हुआ।

—रामकंकन तिवारी

परौंख—ता० ९, १६ २३ जून को क्रमशः ११, २० ११ पाठ श्रीहनुमान चालीसा के, सामूहिक गायन तथा मानस अन्ताक्षरी हुई पूर्त्ति पर आरती एवं प्रसाद वितरण हुआ। ता० १२ जून को श्री श्यामसुन्दर के यहाँ १२ घन्टे का सङ्कीर्तन तथा मानस अन्ताक्षरी होकर इनाम बाँटा गया। ग्राम में पंचायती श्री मद्भागवत पुराण का सप्ताह पारायण हुआ। पूर्ति पर भण्डारा हुआ।

—कुँ० धनसिंह भदौरिया

नयाघाट (अयोध्या)—मानसका एक सम्पूर्ण पाठ प्रति दोहे पर 'जेहि विधि नाथ होइ हित मोरा' सम्पुट से किया।

—अम्बिकेश्वरपति त्रिपाठी

साले चौकारोड—३ मास का मानस पारायण ता० २३-६-५३ को पूर्ण हुआ और उसी दिन एक अखंड पाठ हुआ। पूर्ति पर हवन तथा प्रसाद वितरण हुआ।

—लालचन्द्र वमनोतिया

बम्बई (सेंचुरी मील)—दो बार मासिकपाठ तथा हवन किया।

—रामप्रताप सिंह

भुरानवागाँव—ता० २०-६-५२ से २८-६-५२ तक ११ व्यक्तियों द्वारा श्री रामनाम भजन ९ दिन हुआ।

—गोपीनाथ यादव

रामवन-समाचार

मानस आश्रमः—जून मास में मानस का एक सम्पूर्ण अखंड पाठ नित्य होता रहा। इस मास में श्री मारुति रागभोग में ३२६।≡) की आय हुई और १८५)॥ खर्च हुआ। मानस आश्रम में ५५७)॥। की आय हुई और १३४)॥ खर्च हुआ। इस प्रकार श्री मारुति रागभोग में १४१।=)॥ और मानस आश्रम में ४२३) की कुल बचत ५६४।=)॥। हुई। जो पिछली कमी २५८२॥) में घटाने से अब २०१८-)॥ की कमी रह गई। आशा है श्री हनुमान जी इस कमी को भी पूर्ण करेंगे।

मानस आश्रम

५-६-५३

३) श्री वी० पी० शुक्ला, पन्ना

६-६-५३

१) श्री वैजनाथ त्रिपाठी, कुदरकोट

१२-६-५३

१) ,, भैरोंप्रसाद मंत्री, उमरिया चिन्की

१५-६-५३

१००) ,, सेठ शिवभजन चोखानी, डिब्रूगढ़

२६-६-५३

२५०) ,, सेठ रामेश्वर लाल सहारिया, कलकत्ता

३०-६-५३

१०१) श्री सेठ बनवारीलाल चोखानी, माकूमजंकशन

१०१) श्री सेठ रामगोपाल ब्रह्मदत्त, रेहावाड़ी

)॥। चढ़ोत्री

५५७)॥।

श्री मारुतिरागभोग

१-६-५३

२०) श्री श्रीकृष्ण वल्द हरनाथ जी धाकड़, कवल्दा

४-६-५३

५) श्री भैकूलाल कोरी, परौंख

५-६-५३

२) ,, छोटे लाल जी अग्रवाल, इलाहाबाद

५) ,, रामेश्वर सिंह वकील गोला

११-६-५३

१) ,, रामरतन शर्मा, झाँसी

१२-६-५३

१) ,, नन्हू लाल जी रि० पो० मा०, सागर

१५-६-५३

१) ,, पं० श्रीपति काशीनाथ सम्राट, डिब्रूगढ़

१८-६-५३

४४) ,, भैरों प्रसाद वड़कुर, बसुरिया

२०-६-५३

१॥≡) श्री गोपाल लाल, सतना

२५) ,, मूलचन्द्र खरे, सीधी

५) ,, काली शंकर वर्मा, चिरकुण्डा

२) ,, जानकी कुमार मिश्र, दधपा

२५-६-५३

५) ,, मदनलाल माहेश्वरी, छुवड़ा

२६-६-५३

५०) ,, रामचन्द्र शर्मा, तितलागढ़

२९-६-५३

५) ,, दिलचन्द्र देवाँगन, चाँपा

३०-६-५३

१०) ,, भागवत पाण्डेय, विरार (बम्बई)

२५) ,, सेठ कन्नीराम किशनलाल धानुका, रेहावाड़ी

२१) ,, सेठ हनुमानबक्स मंगलचन्द्र जसरासरिया, डिगबोई

५१) ,, सेठ डूंगरमल राधाकिशन, तिनसुकिया साइडिंग

२१) ,, सेठ किस्तूरचन्द काला, डिब्रूगढ़
२५) ,, सेठ बनवारी लाल चोखानी, माकूम जंक्शन

३२६।≡)

मानस यज्ञः—इस मास में २५) पिछले यज्ञ सम्बन्धी प्राप्त हुए और २०) आगामी आश्विन यज्ञ के लिये प्राप्त हुए। पिछली कमी ४५१।-) की थीं जो अब ४०६।-) रह गई।

१५-६-५३

२५) श्री सेठ हनुमान प्रसाद चोखानी, डिब्रूगढ़।

२५-६-५३

२०) श्री बृजभूषण प्रसाद गनेड़ीवाला, गोरखपुर।

४५)

श्री रामनाम मन्दिरः—में इस मास में श्री डा० के० सी० मिश्र से १००) प्राप्त हुए। पिछली कमी ११६५।=)॥। में घटाने से १०६५।=)॥। आना बाकी है। दूसरे विभाग में २१५।) जमा है।

श्री तुलसी मंदिरः—इस मास में २५२।-)॥ खर्च हुए। पहिले ६५॥)॥ जमा थे। अब तक १८६॥)॥। अधिक खर्च हो गया।

पारायण मंदिर :—की स्थिति पूर्ववत् है।

पाक शाला :—इस मास में १०६-) खर्च हुये और इसका काम पूरा हो गया। अब २१३)। आना बाकी है।

गोशालाः—इस मास में ४१०॥≡)। की आय हुई और २४०-)॥। खर्च हुआ। १७०॥-)॥ की बचत हुई। पिछली कमी ५६।=)॥। इसमें से घटाने से अब ११४=)॥। जमा हैं।

५-६-५३

१५) सेठ रामचन्द्र सफड़िया, सतना।

१३-६-५३

५०) श्री सतना स्टोन लाइन कं० सतना

१५-६-५३

५१) श्री सेठ चाँदमल द्वारकाप्रसाद तिनसुकिया

५१) श्री सेठ जुगल किशोर विहारीलाल टीटावर

१८-६-५३

११) श्री रा० आनन्दराय दिवाकर नाई, द्वारा भटेरा ग्राम से।

२०-६-५३

१५) श्री सेठ रामचन्द्र सफड़िया, सतना
१६॥≡)। श्री सेठ भीमराज ज्वालाप्रसाद सतना

३०-६-५३

२०१) श्री सेठ हनुतराम रामप्रताप जी, डिब्रूगढ़

४१०॥≡)।

श्री राम संस्कृत विद्यालय भवन रामवनः-की स्थिति पूर्ववत् है।

कुटीर विभाग :—

नर्मदा खंड कुटीर :—इस मास में २३॥) खर्च हुए और ८) की आय हुई। पिछली कमी १८४॥।)॥। सहित अब कमी २००॥)॥। की रही।

२०-६-५३

३) श्री दशरथ प्रसाद शिक्षक १॥) श्री गोकुल प्रसाद हलवाई, पंडरिया १॥)
२) श्री हीरासिंह कंवर, केराकछार

२३-६-५३

३) श्री नकछेद प्रसाद मंत्री दुरपा

८)

खम्हरिया कुटिया :—खंडसरा शाखा से मंत्री श्री खेमसिंह ठाकुर द्वारा १४=) प्राप्त

हुए। पूर्व प्राप्त ८५॥) सहित अब ६६॥=) जमा हैं।

कोरी कुटिया तथा डांगीढ़ाना कुटिया की स्थिति पूर्ववत् है।

मानस प्रचार:—जून मास में सदस्य शुल्क से १६५।=) प्राप्त हुए। कार्यालय में ६६॥=) और चिट्ठी खर्च में ४८॥।)॥ कुल १४५।=)॥ खर्च हुये १९॥।≡)॥ की बचत रही। पिछली कमी ३६।)॥। में यह घटाने से अब १९।-)॥ की कमी रही।

श्री रामनाम लड्डू:—जून मास में २१५ लड्डू तैयार हुए १५० लड्डू दैनिक क्रम में श्री मारुति जी को समर्पण हुए। शेष अक्षय तृतीया के लिये रखे गये। केन्द्रों की स्थिति इस प्रकार है:—

परौंख ५७, चैवासा ३६, लादीगढ़ ३३, सिवनी सरखों २५।

—कामना—

जो अनादि हैं, जो अनंत हैं,
जो हैं सम्पूरण निष्काम।
विश्व बना जिनकी माया से,
जो हैं सब जग के सुखधाम ॥१॥
भक्तगणों के पालक हैं जो,
थकितों को देते विश्राम।
जिनके कर में शंख, चक्र है,
गदा, पद्म है, तन है श्याम ॥२॥
कटि पर पीताम्बर है शोभित,
तथा शीश पर मुकुट ललाम।
जिनकी सुन्दर छवि के सन्मुख,
लज्जित होते रति पति काम ॥३॥
अति पामर भी तर जाता है,
जिनका जपने से शुचि नाम।
मेरे मन-मन्दिर में ऐसे,
बस जावें सीतापति राम ॥४॥

—श्रीकृष्ण शेन्द्रे "हृदयेश"

शूर्पणखा के नाक-कान क्यों कटे ?

श्री कुमारी अचल नन्दिनी

बहुधा रामायण का पाठ करते समय यह विचार मन में उठता है कि शूर्पणखा स्त्री होने के कारण अवध्य थी। फिर मर्यादा पुरुषोत्तम होते हुये भी श्रीराम ने उसके नाक-कान क्यों कटवाये ? विचार करके देखा जाय तो ज्ञात होता है कि इन सबमें शूर्पणखा का ही दोष था। रामायण में लिखा है—

रुचिर रूप धरि प्रभु पहिं जाई।
बोली बचन बहुत मुसुकाई॥

भला घोर एकांत वन में 'रुचिर रूप' क्या शोभा देता ? क्या श्रीराम इस बात से अनभिज्ञ थे कि इस वन के आस-पास कहीं कोई नगर नहीं है ? माना कि श्रीराम का सारा कार्य लक्ष्मण करते थे और राम को कोई कष्ट नहीं सहना होता था, फिर लक्ष्मण का तो उस वन का कोना-कोना देखा हुआ था। ऐसे समय में वह सुन्दरी स्त्री का रूप धारण करके तथा सुन्दर वस्त्राभूषण धारण करके घूमे; इसका अर्थ तो यह है कि वह असती है। यदि उसका वेष तपस्विनियों-सा होता तो कोई बात थी। ऐसे एकांत वन में इतनी रूपवती स्त्री क्यों घूम रही थी ? ऊपर से—

देखेउँ खोज लोक तिहुं माहीं।

वह अपने विवाह के लिये उपयुक्त वर खोजने स्वयं ही तीनों लोकों में गई थी, यह वह स्वयं कह रही है। तीनों लोकों में वह वर ढूँढ़ने के लिए घूमा करती थी। यह भी कहा—

तातें अब लगि रहिउँ कुमारी।
मनु माना कुछु तुम्हहि निहारी॥

अभी तक कोई मन के अनुरूप वर नहीं मिला था। अब श्रीराम को देखकर जरा कुछ मन स्थिर हुआ है। यह सुनकर भगवान ने परिहास किया—

'मेरा छोटा भाई लक्ष्मण भी अभी युवा है। तुम उसके पास जा सकती हो।'

कहकर प्रभु ने लक्ष्मण की ओर संकेत कर दिया। अब शूर्पणखा लक्ष्मण के पास गई। यह भी उसकी मूर्खता थी। जब एक बार वह राम के पास गई तब तो लक्ष्मण की भाभी हो गई। धर्मात्मा अब भला क्या उसे अङ्गीकार कर सकते थे ? उन्होंने उत्तर दिया—

'सुन्दरी, सुनो। मैं तो उनका दास हूँ, तुम्हें देखकर लगता है कि तुम बड़ी ही सुकुमार हो। तुम्हें दासी होकर रहना क्यों रुचेगा। फिर तुम्हें अंगीकार करना भी पाप है। वे तो बड़े हैं, प्रभु हैं। यदि वे अन्याय भी करें तो उन्हें शोभा देता है। अतः मुझसे भी तुम्हें निराश ही होना पड़ेगा।'

वह भी ऐसी निर्लज्ज निकली कि फिर वह श्रीराम के पास पहुँची। अब मर्यादापुरुषोत्तम उससे परिहास भी नहीं कर सकते थे। लक्ष्मण के पास जाने से तो वह उनकी पुत्रवधू के समान हो गई। अतः उन्होंने उसे फिर लक्ष्मण के पास ही भेज दिया। उसकी यह निर्लज्जता देखकर लक्ष्मण को बड़ा क्रोध आया। उन्होंने कहा—

'अरी दुष्टा ! तुझे तो वही वरेगा जिसने लज्जा को तिलाञ्जलि दे दी हो।'

अब यह सुनकर भी शूर्पणखा को यह नहीं सूझा कि चुपके-से लौट जाय। अब राम के पास जाकर उसने अपना राक्षसी स्वरूप प्रकट किया। तब राम के संकेत से लक्ष्मण ने उसके नाक और कान काट डाले। यहां एक बात और ध्यान में लाने योग्य है। नाक का अर्थ है 'स्वर्ग' और कान का अर्थ होता है 'वेद'। अतः लक्ष्मण ने उसे नाक-कान से रहित करके यह सिद्ध किया कि अब यह स्वर्ग की अधिकारिणी भी नहीं है और वैदिक आदर्शों से भी गिरी हुई है। इस प्रकार शूर्पणखा ने अपने-आप अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारी थी।

मानससंघ द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

श्री महेन्द्र पुस्तकमाला

१—श्री रामचरितमानस में वीर रस (श्री शारदा प्रसाद जी) ।-)
२—ध्यान के समय (एफ.जे. अलेकजएडर) ॥≡)
३—श्री रामचरितमानस में माता सुमित्रा (श्री सुदर्शन सिंह जी) ≡)॥
४—समुझाई (मानस राजहंस पं० श्री विजयानन्द त्रिपाठी) ॥)
५—श्री रामचरितमानस में महाराज जनक (वेदान्तरत्न रामायण-भूषण श्री अवध किशोर दास जी श्री वैष्णव) ।-)
६—भक्त शबरी (पं० भागवत द्विवेदी आयुर्वेदाचार्य) ≡)॥
७—महासती अनसूया (पं० देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।-)
८—ब्रह्मर्षि वसिष्ठ (श्री सुदर्शन सिंहजी) ।)
९—धर्मशीला कौशिल्या (पं० देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।-)
१०—स्नेहमयी कैकई (पं० देवदत्त शास्त्री 'विरक्त') ।-)
११—तुलसी मुक्तावली प्रथम किरण (श्री शम्भुप्रसाद बहुगुना, एम० ए०डिप० साइ०) ॥।-)
१२—तुलसी मुक्तावली द्वितीय किरण (श्री शम्भु प्रसाद बहुगुना एम० ए० डिप० साइ०) ।॥)
१३—मानस मूल (मानस राजहंस पं० श्री विजयानन्द जी त्रिपाठी) ॥)
१४—मानस-व्याकरण (श्री मानस राजहंस पं० विजयानन्द जी त्रिपाठी) २)
१५—सचिव सुमन्त्र (सुदर्शन सिंह) ।-)
१६—विवेकी विभीषण (सुदर्शन सिंह) ॥)
१७—मानस महत्व (पं० भैरवानन्द) १)

श्री मानस-रत्नावली ग्रंथमाला

१—रामवन (श्रीसुदर्शन सिंह जी 'चक्र') ।≡)
२—सार्थ श्री रामतारक प्रयोग विधि (महन्त श्री रामपदार्थ दास जी महाराज एवं वेदान्त भूषण पं० श्रीरामकुमार दास जी रामायणी ॥)
३—सब ग्रंथन को रस (रा० सा० हीरालाल) १)

श्री कौशलेन्द्र कथामाला

१—नव निर्झरिणी (नवधा भक्ति पर ६ कहानियाँ) (श्री चक्र ।=)
२—नूतन नवरत्न (कहानियाँ) श्रीचक्र ।=)
३—दिव्य दशमी (श्री चक्र) ।=)
४—मानस मन्दाकिनी प्रथम हिलोर (श्री (चक्र ।)॥
५— „ „ द्वितीय „ (श्री चक्र) ।-)
६— „ „ तृतीय „ (श्री चक्र) ।-)

रामदास भक्तमाला

१—महाभागवत चरित (पहिला भाग) (महात्मा श्री बालकरामजी विनायक) १)
२—महाभागवत चरित (दूसरा भाग) (महात्मा बालक रामजी विनायक) ।)

पीयूष प्रवाह

१—विश्व साहित्य में रामचरित मानस (काव्य समीक्षा) (श्री राजबहादुर लमगोड़ा) १=)
२—श्री भगवन्नाम संकीर्तन (श्री सुदर्शन सिंह) -)॥

संचालक
मानस प्रकाशन लिमिटेड
पो०—रामवन (सतना)

रजिस्टर्ड नं० एन ८७३

रामवन के विविध कार्य

१—वर्ष में श्रीरामचरितमानस का दो पाठ करने की प्रतज्ञा करने वाले सज्जन मानस संघ के सदस्य बनाए जाते हैं। आजीवन शुल्क ॥) है। जहाँ नौ सदस्य हो जाते हैं, वहाँ शाखा बन जाती है। इस समय देश में मानस संघ के ३११५१ सदस्य हैं और १४५७ शाखायें हैं।

२—रामचरितमानस का प्रचार एवं अध्ययन व्यापक करने के लिए यह 'मानस-मणि' मासिक पत्र ग्यारह वर्ष से निकल रहा है। इस का वार्षिक मूल्य ३) है।

३—तुलसी साहित्य का प्रकाशन मानस प्रकाशन लिमिटेड द्वारा होता है। कम्पनी का प्रत्येक शेयर १०) का है। कम्पनी १६ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है। स्थायी ग्राहक शुल्क २) है। स्थायी ग्राहकों को प्रकाशित ग्रंथों पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जाता है।

४—श्रीरामचरितमानस पत्र व्यवहार विद्यालय द्वारा मानस संघ घर बैठे श्रीरामचरितमानस की शिक्षा देता है। विद्यालय का पाठ्य विषय तीन वर्षों का है और प्रथम वर्ष का शुल्क १०) है।

५—मानस आश्रम में नित्य अखण्ड मानस पाठ होता है। यहाँ रह कर साधक एकान्त में साधन भजन करते हैं।

६—तुलसी संग्रहालय भी रामवन में है।

७—मानस संघ राम नाम लड्डू लेखन का प्रचार करता है। ये लिखित रामनाम श्रीमारुति जी को अर्पण किये जाते हैं। २७ करोड़ अर्पित हो चुके हैं।

८—श्री राम संस्कृत विद्यालय में वाराणसेय-परीक्षा के पाठ्यक्रम के साथ मानस अध्ययन की भी सुविधा रखी गई है।

हर विभाग में आपका सहयोग अपेक्षित है।



'मानस-मणि'

पो— रामवन (सतना)

श्री सम्पादक जी 'गुरुकुल पत्रिका'

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार

पो० गुरुकुल कांगड़ी

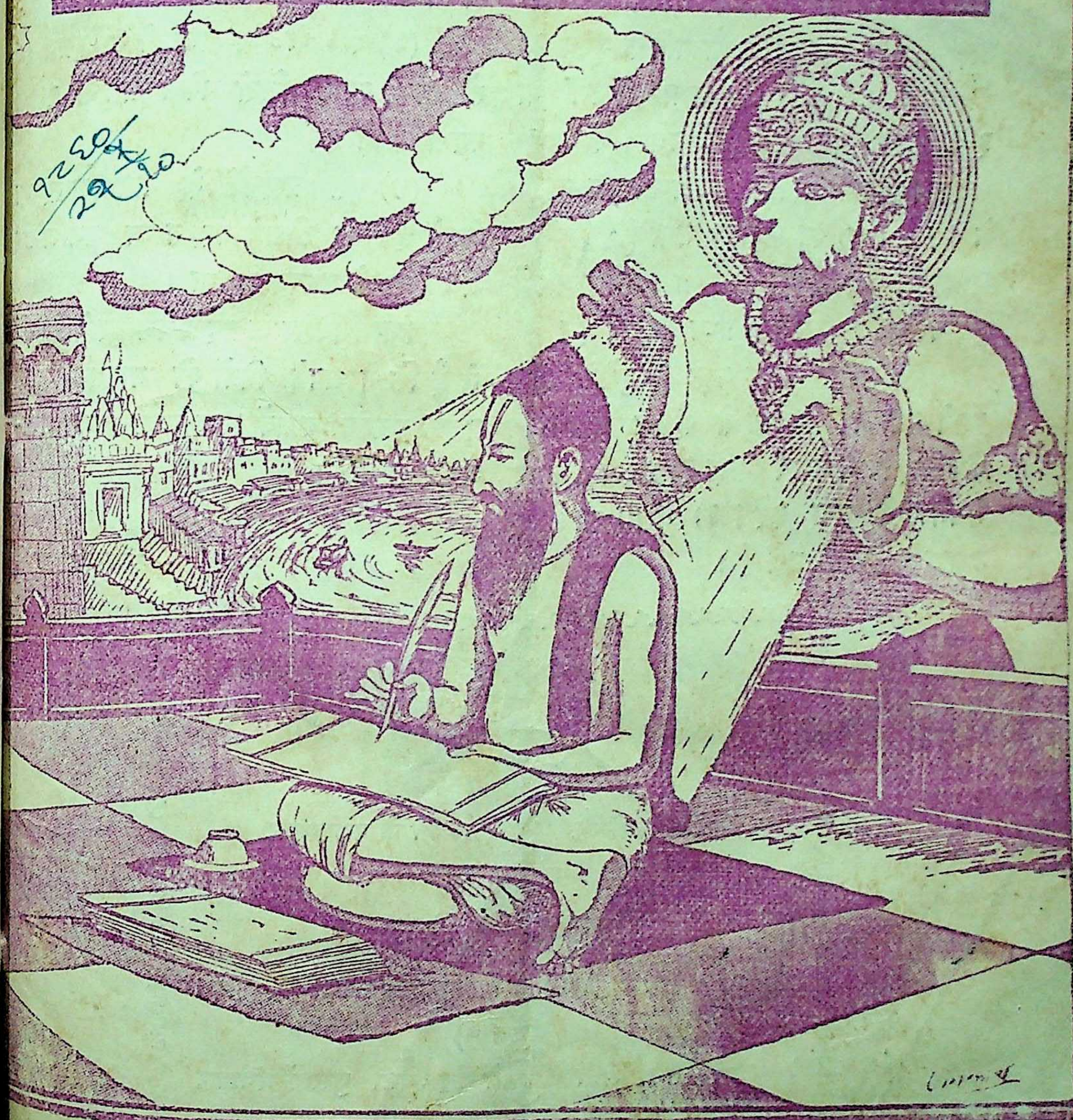
(सहारनपुर)

मं० नं०— ८

सम्पादक—सुदर्शन सिंह

प्रकाशक—श्रीशारदा प्रसाद, मंत्री—मानससङ्घ रामवन, सतना। मुद्रक-माधो प्रिंटिंग वर्क्स, प्रयाग।

मानस मणि



मयूख १२ | सितम्बर १९५३ | आलोक ९

वार्षिक मूल्य तीन रुपया
वी० पी० से तीन रुपया दस आना

प्रेमी ग्राहकों से अत्यावश्यक निवेदन

हमारी दयालु सरकार को रुपयों की अत्यधिक आवश्यकता है। इससे उसने बुक पोस्ट का रेट दूना कर दिया है। मासिक पत्रों को चिरकाल से उपलब्ध सुविधा में बाधा डाल दी है। मानसमणि का वार्षिक मूल्य ३) है। आप मनीआर्डर भेजकर ग्राहक बनें तो ३=) लगेंगे। पर वी० पी० मगाने में ३॥=) लगेंगे। पिछली प्रतियां मगावें तो उन पर)॥ के स्थान में -) का टिकट लगेगा।

इन कारणों से हम भी अपने क्रमों में कुछ परिवर्त्तन करने को वाध्य हो गये हैं।

(१) हमारा बहुत बड़ा अनुरोध अपने पुराने तथा नये ग्राहकों से है कि आप वी० पी० कदापि न मगावें। सदा ३) का मनीआर्डर भेजने की कृपा करें। ३) में ॥) की हानि उठाना बुद्धिमानी नहीं है।

(२) साधारणतया जिस मास में आपका रुपया आयेगा उससे ही १२ मास के लिये हम आपको ग्राहक बनायेंगे। पिछली प्रतियां लेना हो तो पत्र में स्पष्ट लिखें।

(३) वी० पी० मंगाना ही अनिवार्य हो तो पत्र में स्पष्ट लिखें किस मास से ग्राहक बनना चाहते हैं।

(४) पुराने ग्राहकों के पास हम सूचना भेजते हैं। वह मिलने पर तुरन्त मनीआर्डर भेज देना ही उपयुक्त होगा।

हमारा विशेष आग्रह अपने पुराने ग्राहकों से है कि वे अपने मित्रों को मानस-मणि के ग्राहक अवश्य बनावें। पर सदैव चन्दा मनी-आर्डर से भेजें।

—शारदाप्रसाद



मानस मणि

राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके ॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं ॥

मणि १२ | रामवन—भाद्रपद, मानस संवत् ३८०—सितम्बर १९५३ ई० | आलोक ९

मानस की सूक्तियाँ

जरउ सो संपति सदन सुख, सुहृद मात पितु भाइ।
सनमुख होत जो रामपद, क[illegible] न सहस सहाइ ॥

\+ + +

करइ स्वामि हित सेवक सोई, दूषन कोटि देइ किन कोई ॥

\+ + +

साधु समाज न जाकर लेखा। राम भगत मँह जासु न रेखा ॥
जाय जिअत जग सो महि भारू। जननी जौवन बिटप कुठारू ॥

\+ + +

लखब सनेह सुभाय सुहाये। बैर प्रीति नहिं दुरइ दुराये ॥

\+ + +

राम राम कहि जे जमुहाहीं। तिनहिं न पाप पुंज समुहाहीं ॥

\+ + +

स्वपच सबर खस जमन जड़, पामर कोल किरात।
राम कहत पावन परम, होत भुवन बिख्यात ॥

\+ + +

जोरि पानि मागउँ बर एहू। सीय राम पद सहज सनेहू ॥

—:०:—

सहस्र रश्मि

(७१४)

शास्त्रीय-नियम बन्धन से ज्ञानवान ऊपर उठ चुका है।

(७१५)

वही ज्ञानी है जो इस सुख और दुःख के द्वन्दों में समान शान्त रहता है।

(७१६)

प्रोग्राम मत बनाओ। उठो जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के मार्ग पर शीघ्रता से आगे बढ़ो।

(७१७)

यदि ईश्वर को जानना चाहते हो तो पहले अपने को जानो। तुम कौन हो ?

(७१८)

वही पावेगा जो पाना चाहता है। वही जानेगा जो जानना चाहता है।

(७१९)

जो जितने अंश में विषयों से अलग है, वह उतने ही अंश में मुक्त है।

(७२०)

जिसने सांसारिक विषय भोगों को मिथ्या या कष्टमय जान लिया, वह उनमें क्यों प्रवृत्त होगा ? उनके पाने का यत्न क्यों करेगा ?

(७२१)

जब तक हम माया को चाहते रहते हैं तब तक वह दूर भागती है और जब नहीं चाहते हैं तब पीछे-पीछे दौड़ती है।

(७२२)

थोड़ी देर एकान्त में शान्त होकर सोचो-मैं कौन हूँ ? यहाँ मैं क्यों आया ? इससे तुम्हें शान्ति का मार्ग मिल जायगा।

(७२३)

सुख-दुख, जीवन-मरण, ये मन और शरीर के धर्म हैं। आत्मा का इनसे कोई सम्बन्ध नहीं।

(७२४)

शान्ति तो तुम्हारे अन्दर है। कामना का पर्दा वैराग्य से दूर कर दो फिर तो शान्ति ही शान्ति है।

(७२५)

जब मूर्खता और स्वार्थपरता का नाश हो जाता है, तब ज्ञान का प्रकाश होता है।

(७२६)

ज्ञान प्राप्ति का साधन है-सारे मतमतान्तरों को सम्पूर्ण अन्धविश्वासों को हृदय से निकाल दो।

(७२७)

अपने को तथा दूसरों को भी, वही ठीक रूप में देखता है, जिसमें इच्छा, वासना, तथा पक्षपात का नाम मात्र भी शेष नहीं।

(७२८)

कल्याण प्राप्ति का, दुर्भाग्य को दूर करने का, एक मार्ग है पहले दुखकी वास्तविकता को ठीक-ठीक भली-भाँति समझना।

(७२९)

वह सभी नश्वर है जो समय के भीतर है। नित्य की सीमा समय से परे है।

(७३०)

जिसमें विश्वास नहीं, जिसमें संशय है, उसे इस लोक या परलोक में कहीं भी सुख न मिलेगा। ज्ञान तो उससे बहुत दूर है।

(७३१)

प्रभु न तो किसी के पाप लेते न पुण्य। अज्ञान के द्वारा ज्ञान आवृत है इसी से प्राणी भ्रम में पड़े हैं।

(७३२)

कोई भी कर्मों का पूर्णतः त्याग कर नहीं सकता। अतः कर्म फल का त्याग ही सच्चा त्याग है।

ऋषि गीता

—सुदर्शनसिंह

(अष्टम भवन)

जननी सम जानहिं पर नारी।
धन पराय बिषतें बिष भारी॥
जे हरषहिं पर सम्पति देखी।
दुखी होहिं पर बिपति बिसेषी॥
जिन्हहिं राम तुम प्रान पियारे।
तिन्हके मन सुभ सदन तुम्हारे॥

जो पर स्त्री को माता के समान समझते हैं और पर द्रव्य को हलाहल विष से भी अधिक घातक मानते हैं, जिन्हें दूसरे को सम्पत्तिशाली होते देखकर हर्ष होता है और दूसरे को विपत्ति में पड़ा देख जो विशेष दुखी होते हैं तथा जिनको आप प्राणों के समान प्रिय हैं, श्री रघुनाथ जी! उन लोगों के मन आपके मंगलमय भवन हैं।

'पर नारी जननी सम' यह कहने से ही यह प्रगट हो गया कि उसे अपनी स्त्री भी है और 'पर धन विष सम' यह कह रहा है कि उसके पास अपनी सम्पत्ति भी है। इससे यह स्पष्ट हो गया कि अष्टम भवन में जिस साधक का वर्णन है, वह विरक्त साधु नहीं है, वानप्रस्थ या ब्रह्मचारी भी नहीं है और ऋषि-मुनियों के समान वन में रहने वाला अपरिग्रही गृहस्थ भी नहीं है। वह गृहस्थ है और उसके पास अपनी सम्पत्ति भी है। चतुर्थ एवं पञ्चम भवन में जिन साधकों की बात कही गई है, वे भी गृहस्थ हैं; किन्तु अष्टम के इस गृहस्थ की अलग विशेषता है। इसमें कर्मनिष्ठा या उपासना का कोई बाहरी लक्षण नहीं है। इसे लोग धर्मात्मा या भगत जी नहीं जानते। यह बाहरी रूप से अपने घर के काम धन्धे में ही लगा दिखाई देता है। इतने पर भी यह परम-भक्त है।

'आचार प्रभवो धर्मः
धर्मस्य प्रभुरच्युतः।'

धर्म सदाचार से उत्पन्न होता है और धर्म के स्वामी भगवान हैं। जहां सदाचार नहीं है, वहाँ धर्म नहीं है। भगवान और धर्म तो साथ-साथ रहेंगे। जहां भगवान पर विश्वास नहीं होगा, वहाँ धर्म टिकेगा ही नहीं और जहाँ धर्म नहीं होगा, वहाँ प्रभु पधार नहीं सकते।

'जननी सम जानहिं परनारी।'

अपनी स्त्री को छोड़कर संसार में और जितनी भी स्त्रियाँ हैं, वे अपनी सगी माता के समान हैं। उनके प्रति मन में स्वप्न में भी विकार नहीं आना चाहिये। काम की वृत्ति ही अधर्म की जड़ है। सदाचार का मुख्य अङ्ग है काम पर पूरा नियन्त्रण। क्यों कि—

'जहाँ राम तहँ काम नहिं,
जहाँ काम नहिं राम।
तुलसी कबहुँ कि रहि सकहिं,
रवि रजनी इक ठाम॥'

यह असम्भव है कि एक साथ हम पूरब भी चलें और पश्चिम भी। काम चित्त की संसारोन्मुख, पतनोन्मुख प्रवृत्ति है। जब तक यह अवस्था चित्त की है, तब तक चित्त अन्तर्मुखी, भगवनोन्मुख हो कैसे सकता है।

'विद्या समस्ता तव देवि भेदा'
स्त्रिया समस्ता सकला जगत्सु।'

सम्पूर्ण नारियां उस आदि शक्ति की ही अंश रूपा है। अतः अपनी पत्नी को छोड़कर शेष सभी नारियां माता ही हैं। शास्त्र ने केवल अपनी पत्नी को ही जाया के रूप पुरुष को दिया है। अतः पत्नी को छोड़कर समस्त नारी जाति के प्रति माता का दृढ़ भाव हृदय में होना चाहिये। केवल मुख से 'माता जी' और 'बहिन जी' कह देना पर्याप्त नहीं है।

'धन पराय विषते विष भारी।'

यदि मनुष्य का मन काम से कलुषित न हो तो फिर उसे केवल अर्थ ही अपवित्र कर सकता है। क्योंकि हम जैसा अन्न खायेंगे; वैसा ही मन बनेगा। श्री मनु जी ने शौचाचार का विधान करते हुये बताया है—

सर्वेषामेव शौचानामर्थं
शौचं परं स्मृतम्।
योऽर्थे हि शुचिः स शुचिः
न मद्वारि शुचिलुचिः॥

सब प्रकार की पवित्रताओं में धन की पवित्रता ही सबसे मुख्य है। जो धन से पवित्र है, अर्थात् जिनका धन न्यायोपार्जित है, वही पवित्र है। मिट्टी, गोबर आदि लगाकर, या जल से नहा-धोकर पवित्र रहने वाले पवित्र नहीं हैं।

आजकल बाहरी शौचाचार को बहुत महत्व दिया जाता है। लोटा सात बार मला जायगा। हाथ सत्रह बार धोया जायगा, वस्त्र किसी से छू न जाय, यह ध्यान अत्यधिक रखा जायगा, इस प्रकार ढेरों आडम्बर किये जायँगे, किन्तु हम जो भोजन इतने ढकोसले से प्रस्तुत कर रहे हैं, वह किस प्रकार का है, यह कोई नहीं देखता। झूठ, कपट, छल, चोर बाजारी, मक्कारी, दम्भ, आदि से प्राप्त द्रव्य से जो पदार्थ आये, वे तो मल से भी मलिन हैं। शौचाचार को मैं व्यर्थ नहीं कहता और न उसकी निन्दा करना चाहता। वह श्रेष्ठ है और उससे लाभ भी है, परन्तु उसे ही सब कुछ नहीं कहा जा सकता। यदि कोई पूरा चौका गोबर से लीपकर, सब आडम्बर करके प्याज या मांस बनावे तो क्या उसका शौचाचार उसके भोजन को पवित्र कर देगा? अधर्म और अन्याय के धन से आये पदार्थ चाहे फल, दूध, शाक ही हों, वे मांस से भी अधिक अपवित्र तथा मन को मलिन करने वाले हैं। उन्हें कोई शौचाचार शुद्ध नहीं कर सकता। छल-कपट की कमाई करके सात्विक भोजन का दम्भ करना एक व्यर्थ ढकोसला ही है। जैसे फल और शाक का आहार बिना शौचाचार के किया जाय, तो भी शौचाचार रखकर किये गये मांसाहार से वह उत्तम ही है, ऐसे ही न्यायपूर्ण कमाई से जो भोजन प्राप्त होता है वह शौचाचार न भी रहे, कुछ राजस भी हो तो भी अन्याय के द्वारा प्राप्त द्रव्य के सात्विक भोजन से जो शौचाचार रख कर बना है हजार गुने श्रेष्ठ है। न्याय से प्राप्त द्रव्य के द्वारा शौचाचार पूर्वक सात्विक आहार प्रस्तुत हो तब तो सोने में सुगन्धि है।

पराया धन हलाहल विष से भी घातक विष है, यह बात जब तक समझ में न आ जाय, साधन के मार्ग में प्रगति कठिन ही है। हलाहल विष तो केवल शरीर को नष्ट कर सकता है; किन्तु अन्याय से प्राप्त धन मन को मलिन करके अनन्त जीवन को ही नष्ट कर देता है।

घूसखोरी, चोर बाजारी, पाखण्ड, छल, कपट, चोरी, झूठ, हिंसा आदि से जो धन आता है, वह जहाँ भी जायगा अधर्म का ही प्रचार करेगा। ऐसे धन का जो दान लेता है, उसका चित्त भी मलिन हो जाता है। जो भगवान की ओर जाना चाहता है, भगवत्प्राप्ति

करना चाहता है, उसे दूसरे के धन, दूसरे के स्वत्व को हलाहल विष से भी अधिक भयङ्कर समझना चाहिये। जैसे मनुष्य विष से सावधान रहता है, उसके स्पर्श का किञ्चित भ्रम भी सहता नहीं, वैसे ही पराये धन से साधक को सदा सावधान रहना चाहिये। भूल से, प्रमाद से, सङ्कोच से, दबाव से, किसी भी प्रकार किञ्चित भी पर धन उसके उपयोग में न आवे, यह ध्यान, रखना चाहिये।

कामिनी और कंचन यही दो संसार में सारे अनर्थों की जड़ हैं। जो इन दोनों की वासना जीत सका, उसने माया को जीत लिया। गीता में भगवान ने कहा—

'त्रिविधं नरकस्येदं द्वारंनाशनमात्मनः।
कामः क्रोधस्तथालोभः तस्मादेतत्त्रयत्यजेत् ॥'

आत्मनाश करने वाले ये तीन नरक के द्वार हैं—काम, क्रोध और लोभ, इसलिये इन तीनों को छोड़ देना चाहिये।

इन तीनों विकारों में से काम और लोभ को छोड़ देने पर क्रोध का केवल एक ही रूप रह जाता है—अमर्ष। क्यों कि जब काम और लोभ न होंगे तो उनके सम्बन्ध से क्रोध भी नहीं हो सकेगा। अमर्षत्याग की बात कहते हैं—

'जे हरषहिं पर सम्पति देखी।'

दूसरे मुझसे बड़े न हो जाँय यह तो संसारासक्त अहङ्कारी पुरुष का भाव है। दूसरे की सुख-सम्पत्ति को देखकर जलने वाले, उससे डाह करने वाले तो पामर प्राणी हैं। सत्पुरुष दूसरे के सुख को देख कर उदासीन भी नहीं रहते। उनके मन में अमर्ष नहीं रहता, स्नेह रहता है। दूसरे का सुख देख कर उन्हें सुख होता है। दूसरे को सम्पत्तिशाली देख कर वे प्रसन्न होते हैं।

'दुखित होहिं पर विपति बिसेषी।'

अपने दुख में तो सत्पुरुष शांत रहते हैं, स्थिर रहते हैं। दुख को भगवान का मङ्गलमय प्रसाद मानकर सन्तुष्ट रहते हैं, किन्तु दूसरे को दुख में देख कर वे अयन्त व्याकुल हो जाते हैं। उनसे दूसरे का दुख देखा नहीं जाता।

संत हृदय नवनीत समाना।
कहा कबिन पर कहइ न जाना।
निज परिताप द्रवइ नवनीता।
पर दुख द्रवहिं सन्त सुपुनीता॥

इस प्रकार परस्त्री मात्र में माता की दृढ़ भावना तथा परद्रव्य को हलाहल विष मानकर जिन्होंने छोड़ दिया है, जो अपनी स्त्री तथा अपने परिश्रम से धर्म एवं न्यायपूर्वक प्राप्त धन पर ही सन्तुष्ट रहते हैं, जिन्हें दूसरों की सुख-सम्पत्ति देखकर प्रसन्नता होती है और दूसरों को विपत्ति में देखकर जो अत्यन्त व्याकुल हो जाते हैं, उन महापुरुषों के बाह्य आचरण का वर्णन करके अब उनके चित्त की प्रवृत्ति बतलाते हैं—

"जिन्हहिं राम तुम प्रान पियारे।"

वे जप, तप, भजन पूजन करते हों या न करते हों, पर उनके प्राण सदा श्री राम में ही लगे रहते हैं। श्री राम ही उनकी आसक्ति के एक मात्र केन्द्र हैं। वही उनके प्राणों के प्राण एवं जीवन के जीवन हैं। यदि ऐसा न होता तो भला काम, लोभ, अमर्ष जैसे प्रबल शत्रुओं को वे जीत कैसे पाते। जब तक कोई मनको भगवान में ही आसक्त नहीं कर देता। विषयाशक्ति निर्मूल हो कैसे सकती है। अतः जिन्होंने श्री कौशल राजकुमार को ही अपना हृदय सर्वस्व बना लिया है और काम, क्रोध, अमर्ष को सर्वथा निर्मूल कर दिया है, उनके हृदय अपने उन आराध्य के लिये सदन ही नहीं, शुभ-सदन—मंगलमय निवास बन गये हैं।

———

श्रीरामचरित मानस की नींव

(दण्डी स्वामी श्री प्रज्ञानानन्द जी सरस्वती)

रावण मोह

रावण के चरित्र में यह देखना है कि सीता-हरणादि जो कुछ निन्द्यकर्म उसने किया उसमें उसकी राक्षसी दुष्ट मती की ही प्रेरणा थी कि और कोई दूसरी प्रेरक शक्ति उससे वह कराती थी।

(१) शूर्पणखा विरूपण प्रसंग में यह सिद्ध होता है कि यह सब प्रेरणा भगवान की ही थी यथा—

'ताके कर रावन कहँ मनौ चुनौती दीन्ह।'

राम जी ने मुनियों के समक्ष प्रतिज्ञा की थी कि—

'निसिचर हीन करउँ महि,
भुज उठाइ पन कीन्ह।'

इस प्रतिज्ञापूर्ति के लिये, मारीच, कालनेमि, रावणादि मृत्यु लोक निवासी निशाचरों का विनाश करना था। किसी को भी अपराध बिना दण्ड करना, या उसके ऊपर आक्रमण करना अनीति है। अतएव कलह के लिये कुछ सबल कारण की जरूरत थी ही। भगवान की इच्छा से ही शूर्पणखा पंचवटी में आकर जब सीता जो को खा डालने के हेतु से—

'तब खिसिआनि राम पहिं गई।
रूप भयङ्कर प्रगटत भई॥'

तब उसको यथोचित दण्ड देना कर्तव्य ही हो गया। तथापि ताड़का के समान उसका वध न करने में यह हेतु था कि जनस्थान निवासी निशाचरों का और महीतल गत समस्त निशाचरों का विनाश, अधर्म का अवलंबन किये बिना ही, करने को शूर्पणखा को निमित्त मूल साधन बनाया। इस अनुमान की पुष्टि 'मनौं चुनौती दीन्ह' शब्दों से होती है।

(२) श्री मानस के अनुसार रावण को प्रेरणा देने को केवल शूर्पणखा ही गयी है। बाल्मीकीय में प्रथम अकंपन राक्षस ने जाकर रावण को सीताहरण करने के लिये बहुत उत्तेजित किया उस प्रेरणावश दशानन मारीच के पास गया भी, तथापि मारीच के अनुनय, प्रीति-भीति इत्यादि प्रकारों से बहुत समझाने पर रावण लंका लौट गया। बाद में शूर्पणखा की प्रेरणा से जब गया तब भी मारीच ने उसी तरह बहुत समझाया तथापि उसने नहीं माना। जब शूर्पणखा को ही उस कार्य में प्रेरक बनाने की भगवान की ही इच्छा थी तब अकंपन की दी हुई प्रेरणा का क्रियाशील होना असम्भव था।

'राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई।
करइ अन्यथा अस नहिं कोई॥'

यह सिद्धान्त त्रिकालाबाधित है!'

(३) शूर्पणखा से खरदूषणादिकों के वध का समाचारादि मिलने पर—

'गयउ भवन अति सोच बस,
नींद परइ नहिं राति।'
(अरण्य २२)

रात्रि भर दशशीस विचार करता रहा कि अब क्या और कैसे करना चाहिये। उसके विचारों का सारांश जो मानस में दिया है उसका अब सूक्ष्म दृष्टि से विश्लेषण करना चाहिये—

'सुर नर असुर नाग खग माहीं।
मोरे अनुचर कहँ कोउ नाहीं॥'
'खरदूषन मोहि सम बलवन्ता।
तिन्हहि को मारइ बिनु भगवंता॥
सुर रंजन भंजन महि भारा।
जौं भगवन्त लीन्ह अवतारा॥
तौ मैं जाइ बैरु हठि करऊँ।
प्रभु सर प्रान तजे भव तरऊँ॥
होइहि भजनु न तामस देहा।
मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ एहा॥

जौं नर रूप भूप सुत कोऊ।
हरिहउँ नारि जीति रन दोऊ॥
चला अकेल जान चढ़ि तहवां।
बस मारीच सिंधु तट जहवां॥'
(२३।१—७)।

(क) रावण ने प्रथम विचार करके यह मंत्र निश्चित किया कि (क) जो वे भूप सुत नर-रूप प्रभु होंगे तो उनके निकट जाकर युद्ध करके—

'प्रभु सर प्रान तजे भव तरऊँ।
कारण होइहि भजनु न तामस देहा॥'

(ख) जो नर रूप भगवान होंगे तो उनके हाथ मेरा मरण असंभव है, तब मैं ही उनको युद्धों में मारकर उनकी नारी को हठात् ले आऊँगा। (ग) इससे यह स्पष्ट है कि रावण के मन में अब तक निश्चय नहीं हुआ था कि वे पंचवटी निवासी खरारि, भूपसुत ही केवल हैं या भूपसुत रूपी भगवान हैं। (घ) तथापि एक कार्य करने का उसका निश्चय दृढ़ है कि पंचवटी में जाकर युद्ध करना, युद्ध में विजय किसकी होगी इसमें संशय है। तथापि पराजय हो जाय तो मोक्ष प्राप्ति होगी, विजय लाभ होगा तो रतिशत कोटि लजावनि हारी रमणी की प्राप्ति होगी इस तरह—

'दुहूँ हाथ मुद मोदक मोरे' ही मिलेगा।

(ङ) उसके निश्चय में मारीच को सहायक बनाकर सीता जी की चोरी करने के विचार की गंध भी नहीं है। उसके विचारानुसार मारीच के पास, अकेला, बिना सारथी, गुप्त रीति से जाने की जरा सी भी आवश्यकता थी नहीं। (च) इन्द्रजितादि चुने हुये विश्वविजयी वीरों को साथ लेकर युद्ध की सामग्री से सुसज्जित होकर वह जा सकता था। ऐसा करने को भरपूर सबल कारण भी था ही—खरदूषणादि अनुचरों का वध और भगिनी-विरूपीकरण-तथापि—

'चला अकेल जान चढ़ि तहवां-
बस मारीच सिन्धु तट जहवां।'

ऐसा विपरीत क्यों हो गया, कार्य-प्रणाली निश्चय में यह परिवर्तन अकस्मात् क्यों हो गया? यह अब विचारणीय है।

(४) यह परिवर्तन करने वाली शक्ति रावण के निश्चय शक्ति से अधिक बलवती शक्ति ही होनी चाहिये। रावण से अधिक बलवान विरोधक अब त्रैलोक्य में श्री रघुवीर के सिवा अन्य कोई भी था नहीं।

'उर प्रेरक रघुबंस विभूषण'

ऐसी प्रेरणा रामजी की माया ने ही उनकी इच्छानुसार ही दे दी।

(क) जो रावण पंचवटी में आकर युद्ध करता तो केवल रावण का ही वध हो जाता। मारीच, कुंभकर्ण, इन्द्रजीत, कालनेमि इत्यादि करोड़ों निशाचर जीते ही रह जाते। और रामजीने

'निशिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह'

है। इससे इस प्रण की परिपूर्ति के लिये लंका में ही युद्ध होना आवश्यक था। इससे भगवान की योगमाया ने रावण की मति में परिवर्तन कर दिया।

(ख) जो केवल रावण का ही वध करने की इच्छा होती, भगवान की, तो जनक सुता को

'तुम्ह पावक महँ करउ निवासा'

इत्यादि कहकर 'इहाँ जुगुति' बनाने की आवश्यकता ही नहीं थी'। खरदूषण युद्ध प्रसंग के समान ही

'लै जानकिहि जाहु गिरि कंदर।
आवत निशचर रिपु दसकंधर॥'

'रहेहु सजग' ऐसा कहकर सीता जी को सुरक्षित रखने की व्यवस्था कर सकते थे। अतएव

'जनकसुता सन बोले बिहसि कृपा सुखवृंद'
(अरण्य २३)

(ग) उधर रावणने युद्ध करने का निश्चय किया और इधर राम जी बिहँसे। यदा-यदा राम जी बिहँसते हैं तदा-तदा निज माया को प्रेरते हैं अथवा अपनी माया को आकर्षित कर लेते हैं। इस-सिद्धांत का विवरण अरण्य २३ की टीका में **श्री मानस**

पीयूष में विस्तार पूर्वक किया है। तथा जब रामजी मुसकुराते हैं तब किसी के हृदय में प्रादुर्भूत ऐश्वर्यभाव को दबाकर फिर से माधुर्य भाव को जाग्रत कर देते हैं। इसकी चर्चा भी 'श्री मानस पीयूष में ही देखिये विस्तार भय से यहाँ देना अनुचित जान पड़ता है। तथापि केवल थोड़े से अवतरण दिये जाते हैं।

(घ) (१) **बोले बिहसि** राम मृदुबानी।
(बा० ३१६)

(२) **बोले बिहसि** चराचर राया।
बहुते दिनन्ह कीन्हि मुनि माया'
(बा० १२८।६)

(३) **बिहसि** कठिन कोदंड चढ़ावा'
(अरण्य १८।१३)

(४) **बिहसँत** तुरत गयउँ मुखमाहीं'
(उ०८०।२)

(५) देखि कृपाल बिकल मोहि **बिहँसे** तब रघुबीर।
बिहँसत ही मुख बाहर, आयउँ सुनु मतधीर
(उ० ८२)।

इतने उदाहरण पर्याप्त हैं।

(ङ) तथापि यह सब कार्य श्री रामजी ने अत्यन्त गुप्त रीति से संपादन कर दिया।

'लछिमन हू यह मरम न जाना।
जो कछु चरित रचा भगवाना'।

'दसमुख गयउ जहाँ मरीचा'—

(५) मारीच के आचरण में भी 'अति दुस्तर हरिमाया' का कार्य देखने को मिलता है और 'हरि-माया तरि न जाइ' 'और इसमें से निस्तार भी' हरि की कृपा से ही हो सकता है

'नाथ जीव तब माया मोहा।
सो निस्तरइ तुम्हारेहि छोहा॥'

(क) मारीच की इच्छा थी कि रावण ऐसा नीच कार्य न करे। तथापि हरिमायावश रावण थोड़े ही मानने वाला था। आखिर रावण के हाथ से या तो रामजी के हाथ से मरण निश्चित है ऐसा जानकर

'उभय भाँति देखा निज मरना।
तब ताकिसि रघुनायक सरना॥
उतरु देत मोहि बधब अभागे।
कस न मरौं रघुपति सर लागे।
अस जिय जानि दसानन संगा।
चला राम पद प्रेम अभंगा।'
(अरण्य० २६)

(ख) रावण के हाथ मरण न आ जाय और 'निज पानि संधानि सो मोहि बधिहि सुख सागर हरी' और

'निर्वाण दायक क्रोध जाकर भगति अवसहि बस करी'

यह थी मारीच की प्रबल वासना। इस वासना पूर्ति के लिए कनक, कपट-मृग, परम रुचिर, बनकर रामजी को भुलाकर, आश्रम से सुदूर ले जाना, इतनी करणी आवश्यक थी, तथापि रामजी के सदृश आर्त स्वर में लक्ष्मण जी को पुकारने की जरूरत न थी। इसके बिना उसकी मनीषा तृप्त हो सकती थी और उसकी प्रेमभक्ति के विरुद्ध अनावश्यक कार्य करने के दोष से भी वह बच सकता था।

(ग) ऐसी घटना बनती तो लखनलाल को रामाज्ञा-भंग करके, सीताजी को संकट में रखकर, आश्रम छोड़कर जाना न पड़ता और सीताहरण भी नहीं होता।

(घ) तब रावण के साथ लङ्का में युद्ध करके 'निसाचर नासा' करने की भगवदिच्छा निष्फल हो जाती और

'जो कछु चरित रचा भगवाना।'

'जुगुति' भी निरर्थक और निष्फल हो जाती। रामजी की चाह के विरुद्ध ही हो जाता, पर सिद्धांत यह है कि

'राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई।
करइ अन्यथा अस नहिं कोई।'

अतएव हरिमाया की अनिवार्य प्रेरणा से ही मारीच ने 'लछिमन कर नामा प्रथम' ले लिया, ऐसा मानना ही पड़ेगा।

(६) अब सीताजी और लक्ष्मणजी के कार्यों को देखिये :—

'मरम बचन जब सीता बोला।
हरि प्रेरित लछिमन मन डोला।'

सीताजी लखनलाल का शील-स्वभाव, विनय, सेवकभाव बराबर जानती थीं, तथापि ऐसे अनुचित उरदाहक, अपमान कारक, कठोर, रोमहर्षण वचन बोलीं कि उनका उल्लेख करने में भी, हमारे लखन-लाल-भक्त, भक्तशिरोमणि, कविकुलविभूषण चूड़ामणि तुलसी जी को संकोच हो गया और उन्होंने 'मरम बचन' इतने में ही सब सार निहित कर दिया। बाल्मीकीय जी सीता के वचन न देकर केवल लक्ष्मण को वे कितने क्लेशकारक हो गये इतना ही बताना है यथा—

'न सहेत्वीदृशंवाक्यं वैदेहि जनकात्मजे।
श्रोत्रयोरुभयोर्मध्येतप्त नाराच संनिभम्॥'
(वा० रा० अर० सर्ग ४५। ३०-३१)

ये आपके वाक्य धगधगित लोहे के बाणों के समान ही मेरे दोनों कानों में प्रविष्ट हो गये।' यह है सार लक्ष्मणोक्ति का। ऐसे वचन उच्चारना सीता जी के सुशील, सुविनीत स्वभावानुसार सम्भव था, ऐसा कोई सहृदय, मर्मज्ञ पाठक स्वप्न में भी कह सकेगा। नहीं, नहीं कदापि नहीं। तो फिर यह अघटित घटना कैसे घटी? उतर तो मानस निर्माता ने बड़ी खूबी से दे ही दिया है। सीता बोली' ऐसा शुद्ध कर्तरी प्रयोग न करके कर्म कर्तरी प्रयोग किया है और भी 'हरि प्रेरित' भी कहा है, तथापि 'हरि प्रेरित' शब्द दूसरी अर्धाली में होने से उनकी 'सीता बोला' के साथ लगाने की इच्छा क्वचित ही होती होगी। अर्थ यह है कि हरि की प्रेरणा से सीता जी से ऐसा बोला गया। ऐसे मर्म वचन उनके मुखारविंद से निकल पड़े। इस अर्थ के पुष्टि के लिये सीता जी के वचन सुनिये—

'जेहि बिधि मोहि दुख दुसह सहाए।
लछिमन कहुँ कटु बचन कहाए॥'
(लंका—६६-८)

(७) लखनलाल जी भी सीता जी के वचनों से मर्माहत होने पर, उनको अकेली छोड़कर, रामजी के 'वचन पेली' आश्रम से गये। वह कार्य भी हरि प्रेरित ही हुआ है—

'हरि प्रेरित लछिमन मन डोला॥'

नोट—'मरम बचन जब सीता बोला।
हरि प्रेरित लछिमन मन डोला॥'

इस चौपाई के पूर्वार्ध का यथार्थ भाव ध्यान में आने से प्रकाशकों ने अथवा 'पोथी लेखकों ने—

मरम बचन जब **सीता बोली।**
हरि प्रेरित लछिमन मति डोली॥

ऐसा प्रक्षेप करके प्रकाशित किया है।'
'अस मानस, मानस चखु चाही।'
यह वचन चरितार्थ है।'

(८) केवल कामवासना तृप्ति के लिये, सीता सौंदर्य लुब्ध होकर ही, रावण को सीता जी के हर लेने की इच्छा थी ऐसा मान लिया जाय तो भी वह जिस प्रकार से सीता जी को ले गया उस रीति से न जाता। वह इन्द्र का रूप लेकर अथवा अन्य किसी देव के रूप में ही सीता जी को रथ में बैठाकर उर्ध्व दिशा में स्वर्ग की तरफ आकर विविध रूप से चोर, डाकुओं के समान दिशा भूल कर रुकता था। सीता जी को ऋष्यमूक पर्वत पर वस्त्र-भूषणों को फेंक देने में विरोध करता। छिन्न पक्ष जटायू को भी साथ में लेकर फेंक देता कहीं, मारने के बाद। सीता हरण का पता बताने वाले का पता ही वह इस भूमि में न रहने देता। ऐसी दशा में दशों दिशाओं में जाने वाले वानरों को एकेक मुद्रिका देनी पड़ती। हनुमान जी के लंका से लौटने पर रावण सीता जी को पाताल में ले जाकर भी छिपा दे सकता था अहि-रावणादिकों के ताबे में। तब सीता जी का पता लगाना अशक्यवत् हो जाता। पर यह सब नाटक अपार काल पूर्व हरि इच्छा से निश्चय रूपरेखा के अनुसार ही होता है। इसमें कोई भी हेर-फेर नहीं कर सकता है। अतएव ही याज्ञवल्क्य जी का—

'राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई।
करइ अन्यथा अस नहिं कोई॥'

यह सिद्धान्त अपेल' है—

'होइ न देवि मुषा मुनि भाषा'

ऐसा सुनयना जी ने भी कहा है। रावण के चरित्र की अन्य क्रियाओं का विचार यहाँ करने से लेख बहुत बढ़ जायगा।

(९) सीता जी को लंका में ले जाने पर रावण से अठारा बार बिनती, उपदेश किया गया है कि सीता जी को रामचन्द्र के पास भेज दो, अन्यथा वंश विध्वंस हो जायगा। इन उपदेशकों में मारीच विभीषण, माल्यवान, प्रहस्त, कुंभकर्ण, शुक्र (सारण) कालनेमि, हनुमान, अंगद, लखनलाल, इत्यादि हैं। इनमें मारीचादि सब रावण के निकट संबन्धी, मामा भाई, मातामह, पुत्र, सचिव, हैं और हनुमन्तादि महा-बीर महाभगवद्भक्त भी। तथापि उन सबको उसने प्रत्यक्ष देहदण्ड या वाक्ताड़न ही किया है। मंदोदरी सरीखी प्रेमी, पतिव्रता पट्टराणी नें चार बार समझाया और चौथे समय तो नीच, निर्लज्ज, पुरुषार्थहीन इत्यादि कठोर शब्दों से फटकारने में कमी भी नहीं किया तथापि राम जी के चाह के विरुद्ध आचरण करने की प्रभुता, ब्रह्माजी-शिवजी ऐसे बड़ों को भी नहीं है। तो रावण में कहाँ से आ जायगी!

'नट मरकट इव सबहिं नचावत।
रामु, खगेस! बेद अस गावत'
(कि० ७।२४)

उमा दास जोषित की नाईं।
सबहि नचावत राम गोसांई'
(कि० ११।७)

ये राम रहस्य 'राम सुभाऊ' जानने वाले भुशुंडि शंभु (गिरिजाऊ) के बचन अन्यथा हो ही नही सकते हैं।

(१०) 'मैं बैरु हठि करऊँ' इस प्रतिज्ञा का 'मन क्रम बचन से अक्षरशःपालन किया है। उसके शिर जब तक धड़ पर थे उसके मुख से राम, भगवान्, प्रभु इत्यादि शब्दों का उच्चारण भूल से भी नहीं हुआ है आकाश में भ्रमण करने वाले रावण के मुण्ड भी, यद्यपि 'राम' शब्द का उच्चार करते हैं तथापि भाषा 'कहाँ राम, रन हतौं पचारी' ऐसी बैर की ही बोलते हैं।

'कहँ रामु कहि सिर निकर धाए'
(लं० ८३। छंद।

भक्ति भाव से रावण ने राम स्मरण कभी किया ही नहीं तथापि बैर भाव से वह राम स्मरण करता था यह इससे सिद्ध होता है कि कटे हुए मुंड भी 'कहँ रामु कहि सिर निकर धाए।' और जो कभी मनमें भी राम स्मरण करता न होगा उसके मुख से जीते जी मरन काल में 'राम' का उच्चार होना असंभव सा ही है।

'जनम जनम मुनि जतनु कराहीं
अन्त राम कहि आवत नाही'
(बाली वचन)

जो मुनि दुर्लभ 'राम' उच्चार रावण के काटे सिर करते थे, इससे वह सतत 'राम' स्मरण (बैर भाव से ही क्यों न हो) करता रहा होगा ऐसा अनुमान किया जा सकता है।

'बैर भाव मोहि सुमिरत निसिचर'
(लं० ४५।४)

यह मानस का ही प्रमाण भी पुष्टिकारक है इस अनुमान को। अथवा यह श्री राम जी के बाणों का ही प्रताप समझना चाहिये। बैर भाव से स्मरण करना भी राम कृपा बिना नहीं बनेगा।

गरुड मोह

जब रघुनाथ कीन्हि रन क्रीड़ा।
इन्द्रजीत कर आपु बँधायो॥
तब नारद मुनि गरुड़ पठायो।

मानस का नारी-आदर्श

श्री महादेव प्रसाद जी स्वर्णकार

'रामचरित-मानस में हिन्दू संस्कृति अपनी समग्रता में चित्रित हुई है। अत्याचार की विभीषिका जब मंडराती थी तब भग्नांश हिन्दू हृदय में आशा की ज्योति जगमगाई और—

'निसिचर हीन करउ महि'

का उद्घोष सुन पड़ा।

इसी मानस के अन्तर्गत गोस्वामी जी ने स्त्री जाति के चित्रण से अपनी विलक्षण बुद्धि का परिचय दिया है। उनकी दृष्टि में नारी के जितने भी रूप हैं वे सब आदर्श हैं। मन्दोदरी अपने पति को समझाती हुई इस प्रकार रो पड़ती है।

'असि कहि नयन नीर भरि,
गहि पद कम्पित गात।

ऐसे कुअवसर पर तो यह न जाने क्या-क्या कह सकती थी परन्तु कहने को कौन कहे कुछ सोच तक न सकी। कवि यदि चाहता तो ऐसे कुअवसर पर पत्नी का विरोध प्रकट करा सकता था परन्तु तुलसीदास जी के हृदय में तो महिला का अपूर्व सम्मान रहा फिर वह ऐसा करही कैसे सकते थे।

तुलसी के पातिव्रत धर्म के आदर्श बड़े दिव्य थे इसके लिए तो कौसल्या, सुमित्रा, सुनयना, तथा जगजननी जानकी आदि का पवित्र नाम लेना ही पर्याप्त है।

मानसकार ने स्त्री जाति को एक उच्च स्तर पर पहुचाने का प्रयास किया है। महिला जाति की प्रमुख विशेषता सतीत्व ही है। इसी से वह मनुष्यों और देवताओं की भी देवता है। महिला जाति का यह सतीत्व चन्द्र की छटा, सूर्य का प्रकाश और सौंदर्य का सौंदर्य है। महिला जाति के इस दिव्य गुण की मानसकार ने मानस में सर्वत्र आरती उतारी है। गोस्वामी जी ने कहा है:—

'डिगै न संभु सरासन कैसे।
कामी बचन सती मन जैसे॥'

महिला जाति की इससे श्रेष्ठ बड़ाई क्या हो सकती है? स्त्री जाति लोक और परलोक साधक कार्य-कलाप की सहायक मानी गई है। साथ ही हिन्दू परम्परा के पुजारी गोस्वामी जी ने नारियों को वह मान दिया जो पुरुषों को दिया ही नहीं जा सकता था। उन्होंने स्त्री जाति को दोनों कुल अर्थात् पितृकुल और पति-कुल तारिणी बतलाया है। उन्होंने जनक जी से कहलवाया है।

'पुत्रि पवित्र किये कुल दोऊ।
सुजस धवल जगु कह सब कोऊ॥
जिति सुर सरि कीरति सरि तोरी।
गवन कीन्ह बिधि अंड करोरी॥
गंग अवनिथल तीनि बड़ेरे।
एहिं किय साधु समाज घनेरे॥

नारी जाति के सम्मान का कितना ऊँचा आदर्श इन पंक्तियों में अंकित हैं यदि हम क्षण भर के लिये यह भी कल्पना कर लें कि तुलसी ने एक दो बातें ऐसी भी लिखी हैं जो सर्वथा असत्य हैं और महिला जाति की मान मर्यादा की नाशक हैं। उदाहरणार्थ—

अवगुन आठ सदा उर रहहीं।
नारि सुभाउ सत्य सब कहहीं॥
साहस अनृत चपलता माया।
भय अविवेक असौच अदाया॥

ऐसी अवस्था में भी हम कह सकते हैं कि इससे तो नारी जाति का सौंदर्य बढ़ता ही है क्योंकि अनंत गुणों में एक अवगुण महत्व का ही कारण है। पूर्णिमा के चन्द्र के धब्बे तो उसकी कांति ही को बढ़ाने वाले हैं।

———

मानस में कन्या

[श्री किशनलाल जी दुबे, बी० ए०, सी० टी०]

(गतांक से आगे)

अनुसूया जी,

'कह रिषिवधू सरस मृदुबानी ।
नारि धर्म कछु ब्याज बखानी ॥'

पति सेवा नारी का प्रधान धर्म और परम कर्तव्य है। यहां यह ध्यान देने योग्य है कि पिता को छोड़ स्त्री को अपने कर्तव्य, धर्म, पातिव्रत आदि का हितोपदेश मानसकार ने प्रायः नारी-जाति द्वारा ही करवाया है। यह तुलसीदासजी का औदार्य है, नारी-सम्मान है और उनकी निस्वार्थ पवित्र भावना है।

उपदेश देते हुये माता मैना जी को वियोग संताप ने फिर आ दबाया—

'बचन कहत भरे लोचन वारी।
बहुरि लाइ उर लीन्हि कुमारी॥
कत विधि सृजीं नारि जग माहीं।
पराधीन सपनेहुँ सुखु नाहीं॥

यह नारी-हृदय की झाँकी है। एक ओर तो पति सेवा का इतना बड़ा मूल्य अङ्कन कर रही है तो दूसरी ओर पराधीनता का कटु अनुभव। इतने वर्ष के विवाहित जीवन की पराधीनता का अनुभव विदाई के पूर्व कभी नहीं हुआ। इसके विपरीत घर और वर अच्छा होना चाहिये की लगन अवश्य रही। वह लक्ष्य तो पूर्ण हो गया। पराधीनता दुःख है तो पहिले ही विवाह का प्रस्ताव उपस्थित नहीं होना चाहिये था और मुनिराज से इसके भविष्य का फल भी न पूछना था। यहाँ मानसकार का सूक्ष्म मानसाध्ययन है।

'पराधीन सपनेहु सुख नाहीं—'

यह वाह्य जड़ जगत का प्राकृतिक नियम है कि सूक्ष्म चैतन्य वनस्पति से विकसित चैतन्य मानव तक कोई भी प्राणी पराधीनता पसंद नहीं करता। मैना जी ने भी इस स्थूल जगत के व्यवहार का प्रतीक क्षणिक मोह को व्यक्त किया है। इसी से ये उद्गार निकल पड़े। दूसरा भाव यह है कि माता मैना जी को अपने पितृगृह से वियोग पाने का अनुभव है। पितृगृह का स्वच्छन्द जीवन पतिगृह में सर्वथा असंभव है और तो मर्यादा के प्रतिकूल होता है। मैना जी अपनी पुत्री की यही अवस्था देख रही हैं। अब उसका पितृगृह छूटता है। पति-भवन में वह सर्वतन्त्र स्वतंत्र न रह सकेगी। भावातिरेक का ही यह उद्गार है। माता सुनयना जी के भी ठीक ऐसे ही उद्गार हैं—

'बहुरि बहुरि भेंटहिं महतारी।
कहहिं बिरंचि रची कत नारी॥'

यह है माताओं का अपनी कन्याओं के प्रति वात्सल्य भाव. आलोचकों के कटाक्ष का विषय कदापि नहीं।

पुत्री के प्रति प्रेम ऐसा अलौकिक होता है कि पिता यदि परमज्ञानी ब्रह्म बिदावर हो तो भी साधारण लौकिक मानवतुल्य उसकी भी परिस्थिति हो जाती है। महामुनि कण्व वनवासी होते हुए भी पुत्रकृता शकुन्तला की विदाई के समय कितने व्याकुल हुये थे—

यास्यत्यद्य सकुंतलेति
हृदयं संस्पृष्टमुत्कण्ठया
कण्ठः स्तम्भित बाष्पवृत्ति
कलुषाश्चिताजडं दर्शनम्।
वैक्लव्यं मम ताव दी दृशम
म हो स्नेहादरण्यौ कसः

पीड्यन्ते गृहिणः कथं न
तनया विश्लेष दुःखैर्नवैः ॥

महर्षिकण्व कहते हैं कि 'आज शकुंतला जायगी इस उत्कण्ठा से हृदय भारी हो रहा है, कंठावरोध हो रहा है, नेत्र आंसुओं से सिक्त हो रहे हैं। हम अरण्यवासियों की भी स्नेह के कारण ऐसी विकलता हो रही है तो कन्या के नूतन वियोग जन्य दुख से गृहस्थी के लोग क्यों न दुःखी होते होंगे!' ब्रह्मविद् जनकराज, जो आदर्श गृहस्थ हैं, अपनी प्राणप्यारी कन्या के इस नव विश्लेष दुःख से दुःखी हुये बिना न रहे—

'बन्धु समेत जनक तब आये।
प्रेम उमगि लोचन जल छाए॥
सीय बिलोकि धीरता भागी।
रहे कहावत परम बिरागी।
लीन्हि राय उर लाइ जानकी॥
मिटी महा मरजाद ज्ञानकी॥

ज्ञान का न होना उतना चिन्त्य नहीं जितना उसकी मर्यादा का मिटना। मर्यादा-भङ्ग सर्वदा, सर्वत्र और सर्वथा अवांछनीय है। यहां तो ज्ञान की मर्यादा ही मिट गई। ब्रह्मज्ञानी रो पड़े, पुत्री-प्रेम के कारण। ब्रह्मज्ञान कन्या के प्रति किये जाने वाले प्रेम के साथ संतुलित नहीं हो सकता। इसीलिये मंत्रीगण जो लौकिक होते हैं समझाने लगे क्योंकि जब ब्रह्म राम भी मर्यादा तोड़कर प्राकृत जन के समान विरहाकुल हो विलाप करने लगे थे—

'आश्रम देखि जानकी हीना।
भये बिकल जस प्राकृत दीना॥'

तो लक्ष्मण रूप जीव ने ही उन्हें समझाया था—

'लछिमन समुझाए बहु भांती।'

तब ब्रह्म-कार्य-निरत हुआ और—

'पूछत चले लता तरु पांती॥

यहां भी ज्ञानाग्रणी विदेहराज को—

'समुझावत सब सचिव सयाने।'

तब वे भी—

'बारहिं बार सुता उर लाई।
सजि सुन्दर पालकी मंगाई॥'

और विदाई का उपक्रम करने लगे। शुभ-कामनार्थ शुभ लग्न साधा और गणेश मनाये गये।

'प्रेम बिबस परिवारु सबु,
जानि सुलगन नरेस।
कुँअरि चढ़ाई पालकिन्ह,
सुमिरे सिद्धि गनेस॥'

जामाता के सम्पन्न घर को देखते हुए भी पिता कन्या को यौतुक देने में नहीं अघाता। वह उसे सब कुछ सुविधाएं, जो उस के श्वसुरालय में पहले से ही विद्यमान हैं, अपनी ओर से देता है। त्रिलोक-प्रसिद्ध, सकल ऐश्वर्य-सम्पन्न तथा अखिल ब्रह्माण्ड-नायक ने प्रकट होकर अपनी ललित लीला माधुरी से जिनके प्रासाद-प्राङ्गण को सुशोभित किया उन चक्रवर्ती महाराज श्री दशरथ जी के यहाँ भला किस वस्तु की कमी हो सकती है फिर भी उस पूर्णानंदघन परात्पर ब्रह्म की ही अघटित घटना पटीयसी सर्वशक्तिमती महामाया जगदम्बा श्री जानकी जी को पिता विदेह राज ने—

'दासीं दास दिये बहुतेरे।
सुचि सेवक जे प्रिय सिय केरे॥
कहि न जाइ कछु दाइज भूरी।
रहा कनक मनि मन्डप पूरी॥
कंबल बसन बिचित्र पटोरे।
भाँति-भाँति बहु मोल न थोरे॥
गज रथ तुरग दास अरु दासी।
धेनु अलंकृत काम दुहासी॥

वस्तु अनेक करिअ किमि लेखा।
कहि न जाइ जानहिं जिन देखा॥'

इसी प्रकार जब यह बात श्री नारद जी द्वारा ज्ञात हो गई कि—

'...जगदम्बा तब सुता भवानी॥
अजा अनादि सक्ति अबिनासिनि।
सदा संभु अरधंग निवासिनि॥
जग सम्भव पालन लय कारिनि।
निज इच्छा लीला वपु धारिनि॥'

तो—

तब मयना हिमवंत अनंदे।
पुनि पुनि पारवती पद बन्दे॥

और भूत-भावन भगवान् शंकर को पूर्ण काम मानते हुए भी—

'का देउँ पूरन काम सङ्कर चरन पंकज गहि रह्यो।

गिरिराज ने—

'दासी दास तुरग रथ नाना।
धेनु बसन मनि बस्तु बिभागा॥
अन्न कनक भाजन भरि जाना।
दाइज दीन्ह न जाइ बखाना॥'

यह सब कन्या के प्रति माता-पिता के हार्दिक स्नेह का ही परिचायक है। यह है भारतीय हिन्दू-संस्कृति में हमारे कन्यादान का स्वरूप और महत्व। वर्तमान समय में भी अधार्मिक मनोवृत्ति एवं पश्चिम के जड़वाद तथा तमःप्रधान शिक्षा के घातक प्रभाव से आक्रान्त हिन्दू समाज का एक अकिंचन किन्तु श्रद्धालु एवं धर्मभीरु पिता—पुत्र तो फिर कमा लेगा—सोचकर कन्या को अधिक से अधिक अर्पण करने की उत्कट कामना रखता है और वह सुपुत्र भी अपनी भगिनी के प्रेम में विभोर होकर सहर्ष स्वानुमति देता हुआ माता-पिता के साथ कन्यादान का सत्संकल्प करता है। इस प्रकार हमारी कन्याओं का पिता की सम्पत्ति पर पवित्र एवं शास्त्रीय अधिकार है और इसके साथ माता पिता और भाई की उदारता का सुंदर परिचय भी व्यक्त होता है, किन्तु आज तथाकथित शिक्षित एवं भ्रमित मस्तिष्क वाले सुधारकगण हिन्दूकोड जैसे घातक, विषाक्त और नाशकारी काले कानूनों का निर्माण कर हमारी दुलारी एवं प्राणप्यारी पुत्रियों को सदा के लिये दुख के अथाह सागर में डुबाना चाहते हैं, और घर-घर में कलह का बीजारोपण करना चाहते हैं। त्रिलोकीनाथ ही इस महान संकट से इस देश का त्राण करें।

कन्या को विदा करते समय पिता का हृदय भर आता है। वह बड़ा दीन बन जाता है। कन्या को उसके श्वसुर अथवा पति (जामातृ) को सौंपते समय उसकी नम्रता अपूर्व हो जाती है, गिरिराज भगवान् शंकर से कहते हैं—'का देउँ पूरन काम' इतना ही नहीं श्वसुर ने जामातृ के चरण पकड़ लिये—

संकर चरन पंकज गहि रह्यो॥

माता मैना जी भी कहती हैं—

नाथ उमा मम प्रान सम,
गृह किंकिरी करेहु।
छमेहु सकल अपराध अब,
होइ प्रसन्न बर देहु॥

इसी प्रकार जनक जो महाराज दशरथ जी से कहते हैं।

ए दारिका परिचारिका करि
पालिबीं करुना नई।
अपराध छमिबो बोलि पठये
बहुत हौं ढीट्यो कई॥

माता सुनयना जी भी श्री राम से कहती हैं।

परिवार पुरजन मोहि राजहि,
प्रानप्रिय सिय जानिबी।

इसलिए हे राम—

तुलसी ससीलु सनेहु लखि
निज किंकरी करि मानिबी।

अर्थात् माता-पिता यही चाहते हैं कि लाड़-प्यार में पली हमारी कन्या से कदाचित कोई त्रुटि हो जाय, अथवा सेवा में भूल हो जाय तो उसके अपराध को क्षमा करना। बड़ी नम्रता से यह प्रार्थना करबद्ध होकर की जाती है।

कन्या के सुचरित्र से माता-पिता को अपूर्व गर्व होता है। यदि वह दैवयोग से विपत्ति में पड़ जाय पर उसमें से वह खरे सोने-सी निकल आवे तो वे फूले नहीं समाते हैं। जनक जो अपनी दुलारी सीता लली को तापस वेष में देखकर दुःखी नहीं हुए अपितु उनके प्रेम-पयोधि में आनन्द का ज्वार उमड़ पड़ा और संतोष विशेष हुआ।

'तापस बेष जनक सिय देखी।
भयउ प्रेमु परितोषु बिसेषी॥
पुत्रि पवित्र किये कुल दोऊ।
सुजस धवल जगु कह सब कोऊ।
जिति सुरसरि कीरति सरि तोरी।
गवनु कीन्ह बिधि अंड करोरी॥
गङ्ग अवनि थल तीनि बड़ेरे।
एहिं किए साधु समाज घनेरे॥'

भला ऐसी पुत्री से किस पिता को गर्व न होगा?

कन्या के साथ किये गये प्रेम मय व्यवहार से ही नारी जाति के प्रति किया जाने वाला व्यवहार आँका जाता है। यही एकमात्र मान-दण्ड है। इसीलिये तो भगवान् राम बालि से कहते हैं—

'अनुज बधू, भगिनी, सुत नारी।
सुनु सठ कन्या सम ए चारी॥'

कन्या को सब के अंत में रखने का भाव भी यही प्रतीत होता है। ये चारों हैं तो समान, एक ही सा व्यवहार इनके प्रति होना चाहिये परन्तु मान (standard) कौन सा हो यही संकेत करने के लिये 'कन्या' अंत में रखा गया है और 'सम' ठीक इसके समीप है। बालि का वह घृणित अपराध नहीं है जो अब तक लोग भूल से समझते आ रहे थे। वस्तुतः उसका महान् प्रमुख अपराध उसका प्रभु को भूलना, दुराग्रह और अधम अभिमान था। इसीके प्रभाव से उसने सुग्रीव के कुटुम्ब को उसके पास नहीं जाने दिया। पिता कन्या की उसके पति-वियोग-जन्य व्यथा को सहन नहीं कर सकता। बालि ने कन्यावत् अपनी अनुज-वधू रूमा को उसके पति से वियोग कराकर किष्किंधापुरी में ही रखा था। यह उसका व्यवहार उचित नहीं था। इसीलिये तो अनुज-बधू शब्द सबसे पहले प्रयुक्त हुआ है। भगवान् को बालि को उसके अभिमान का ही दण्ड देना था किन्तु कन्या तथा कन्या-तुल्य अन्य नारियों के प्रति प्रेम-व्यवहार का और उन्हें सुखी बनाने का सदुपदेश भी तो जगत को देना था। अतः भगवान् के ये बचन बालि—मृत्यु प्रसङ्ग में अप्रासङ्गिक नहीं हैं अपितु साभिप्राय हैं। पिता यदि पुत्री को दुःखी नहीं देख सकता तो फिर अनुजवधू, भगिनी और सुत नारी को दुःखी रखना कहाँ की मानवता है? यह तो शठता है। पुत्र वधू पर चक्रवर्ती जी कितने अवलंबित हैं—

'जेहि बिधि अवध आव फिरि सीया।
सोई रघुबरहि तुम्हहि करनीया॥
नतरु निपट अवलंब बिहीना।
मैं न जिअब जिमि जल बिनु मीना॥'

और वास्तव में चक्रवर्ती जी ने इस नश्वर शरीर को त्याग ही तो दिया। माता कौशल्या जी कहती हैं—

'मैं पुनि पुत्र बधू प्रिय पाई।
रूप रासि गुन सील सुहाई॥
नयन पुतरि करि प्रीति बढ़ाई।
राखेउं प्रान जानकिहि लाई॥
कलप बेलि जिमि बहु बिधि लाली।
सींचिं सनेह सलिल प्रतिपाली॥
पलँग पीठि तजि गोद हिंडोरा।
सिय न दीन्ह पगु अवनि कठोरा॥
जिअनमूरि जिमि जोगवत रहऊँ।
दीप बाति नहिं टारन कहऊँ॥

पुत्र 'नेत्र' हैं पर पुत्र-बधू तो 'नेत्रपुतली' है जिसके बिना नेत्र निरर्थक हैं। कितनी साभिप्राय शब्द-योजना है हमारे पूज्य गोस्वामी जी की पुत्री के समान प्राण-प्यारी तो वह है ही, इसीलिये—

'अनुज बधू, भगिनी सुत नारी।
सुनु सठ कन्या सम ए चारी॥'

सर्वथा सत्य एवं उचित उपदेश भगवान ने बालि के मिस संसार को दिया है।

एक प्रश्न

३=) में होने वाले काम के लिये ३॥=) खर्च करना उचित है क्या ? मानसमणि का चन्दा मनीआर्डर से ही भेजना चाहिए। वी० पी० मँगाना अनुचित है।

'सरल स्वभाव छुआ छल नाहीं'

[श्री पं० रामकुमार उपाध्याय विशारद]

हृदयँ सराहत सीय लोनाई।
गुरु समीप गवने दोउ भाई॥
राम कहा सब कौसिक पाहीं।
सरल सुभाउ छुअत छल नाहीं।
+ + +

सच्चिदानन्द आनन्दकंद मर्य्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी कौशल किशोर सुमनदल सहित गुरुदेव श्री विश्वामित्र जी के समक्ष पधारते हैं। युगल-पंकज-पाणि-पुष्पों से अलंकृत होने के कारण गुरुदेव के चरण वंदन न कर सके। नियत समय से दो घड़ियां पुष्पवाटिका में अधिक गत हो चुकी थीं। प्राचीन काल की शिष्टता दर्शनीय थी कि युगल कर पुष्पावरुद्ध होने के कारणभूत प्रणाम कैसे किया जाता था। पर इस विकास युग में आधुनिक प्रणाम प्रणाली तो बहुत ही उन्नति कर चुकी है। रामायण काल की दंडवत पर किञ्चित ध्यान दीजिये। कितना सौष्ठव पूर्ण वह थी। श्री राम की दिनचर्य्या कितनी उत्कृष्ट थी, यथा :—

प्रात काल उठि कै रघुनाथा।
मातु पिता गुरु नावहिं माथा॥
+ + +
करि दंडवत मुनिहि सनमानी।
निज आसन बैठारेन्हि आनी॥
× + ×
पुनि चरनन मेले सुत चारी।
राम देखि मुनि देह बिसारी॥
+ + +
कीन्ह प्रनाम चरन धरि माथा।
दीन्हि असीस मुदित मुनि नाथा।
+ + +
मुनिहिं प्रसंसि नाइ पद सीसू,
चलेउ लवाइ नगर अवनीसू।
× + +
कीन्हि दंडवत तीनिउ भाई।
सहित पवन सुत सुख अधिकाई।

देखि राम मुनि आवत,
हरषि दंडवत कीन्ह।
स्वागत पूँछि पीत पट,
प्रभु बैठन कहँ दीन्ह॥

प्रचलित प्रणाम प्रणाली तो ऐसी है कि पंडित जी जा रहे हैं। सेठ जी ने जो दक्षिण हस्त में स्वयं डन्डा धारण किये हुये थे, पंडित जी को देखा तो पांच गज दूर से ही हाथ से डन्डा उठाते हुये कहा पंडित जी महाराज साथ ही पंडित जी ने उस प्रणाम के बदले यथोचित उत्तर दिया—भइया! भइया!! इतने ही में दंड प्रणाम तथा आशिष क्रिया समाप्त हो गई। यहां तक कि मुख से शिष्टाचार का शब्द उच्चरित होना दुस्तर है। पता न चला कि दंड उठाकर प्रणाम कार्य्य सिद्ध किया गया अथवा मारने की क्रिया का प्रतिपादन। लोगों का कथन है कि विज्ञान का युग है प्रगति हो रही है पर मेरी समझ में तो सभ्यता तथा शिष्टता की दुर्गति अवश्य भासित हो रही है। खैर—

जब इस प्रकार से श्री रामचन्द्र जी ने विचार किया कि निज पुष्प-धारित युगल पाणिपंकरुह सर से लगाकर प्रणाम करता हूँ तो सुमन दल मुझे ही अर्पण हो जावेंगे महर्षि के पूजन कार्य्य के उपयुक्त न हो सकेंगे अतएव पुष्पविहीन हस्त होने से ही यह क्रिया सम्भव हो सकती है। फलतः उस समय प्रणाम नहीं किया। इसी समय इनको देखकर गुरु

देव संकेत से प्रश्न करते हैं कि देरी कैसी ? धन्य ! सरल स्वभाव पूर्ण, छल-छिद्र-विहीन:—

'राम कहा सब कौसिक पाहीं।'

अर्थात् छल, कपट पूर्ण व्यवहार का बहिष्कार करते हुये सरल स्वभाव से प्रभु राम जी ने अपने गुरुदेव से सब कुछ सत्य ही कह डाला कि :—

तात जनक तनया यह सोई।
धनुष जग्य जेहि कारन होई॥
जासु बिलोकि अलौकिक सोभा।
सहज पुनीत मोर मन छोभा॥

\+ + +

दूषित भावना पूर्ण चरित्र होने से क्या कभी गुरुदेव समक्ष ऐसी वार्ता हो सकती थी ! आज भी आप यदि तेजस्वी गुरु हैं तो कथन में स्वयं क्षोभ तथा आत्मग्लानि की अनुभूति करेंगे, कह नहीं पावेंगे। परन्तु जहां श्री राम जी ऐसे शिष्य तथा विश्वामित्र जी ऐसे महर्षि गुरु उपस्थित हों तो क्या कहना। ऐसी आशंका का हृदय उपवन में अंकुरित होना ही पातक है। श्री बूढ़े बाबा तो इसकी पुष्टि पूर्वापरि ही कर चुके हैं कि श्री राम ही क्या वंश परम्परा ही उज्जवल चरित्र की सजीव जागृत आदर्श थी।

रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ।
मन कुपंथ पगु धरइ न काऊ॥
मोहिं अतिसय प्रतीति मन केरी।
जेहिं सपनेहुँ परनारि न हेरी॥
जिन्ह कै लहहिं न रिपु रन पीठी।
नहिं पावहिं परतिय मनु दीठी।
मंगन लहहिं न जिन्ह कै नाहीं,
ते नरबर थोरे जग माहीं॥

\+ + +

सुतरां सत्यसंध, नीतिज्ञ श्री राम ने गुरु से दुराव नहीं किया। सच ही कहा कि गुरुवर पुष्प बाटिका में वही मैथिली पधारी थीं 'जिनका कल ही स्वयंवर होने जा रहा है। वह अनिन्द्य सुन्दरी थी कि जिनकी अतुल छवि हम देखते ही रह गये इसी कारणवश देर लग गई। यद्यपि सौन्दर्य्य-उपासना वर्णन गुरु के समक्ष करना ही अपने को संकुचित तथा लज्जित करना है पर यदि उपासना छल छद्म रहित हो कलुषित न हो तब दुराव कैसा ? पश्चात् परम भागवत संत प्रवर श्री गोस्वामी जी लिखते हैं :—

सुमन पाइ मुनि पूजा कीन्हीं।
पुनि असीस दुहु भाइन्ह दीन्हीं।

प्रणाम तो हुआ नहीं था फिर यह आशिष कैसी ? वास्तव में यह हार्दिक आशीर्वाद उसी हार्दिक भावना हेतु ही था जो छवि वर्णन प्रभु राम जी ने किया था

सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे।
राम लखन सुनि भये सुखारे॥

महर्षि प्रवर ने निज मानस में श्री राम-स्वभाव की प्रशंसा किया कि हे राम यदि तुमने बिना दुराव मात्र गुरु समक्ष सत्यभावना व्यक्त किया तो मैं भी तुम्हें सच्चे गुरु के सम्बन्ध स्वरूप प्रौढ़ आशिष दे रहा हूँ कि तुम्हारी मनोवांच्छित छवि तुम्हें प्राप्त हो अर्थात् वही छवि बरेगी। मेरा वचन भी मिथ्या नहीं होगा। यही होकर के रहेगा। इस प्रकार से जब कि :—

सतानन्द पद बन्दि प्रभु,
बैठे गुरु पहिं जाइ।
चलहु तात मुनि कहेउ तब,
पठवा जनक बोलाइ॥

अतः मुनि दोनों बन्धु राम तथा लक्ष्मण को बुलाकर कहते हैं कि :—

सीय स्वयंबर देखिअ जाई,
ईस काहि धौं देइ बड़ाई।

भावार्थ—सीता का स्वयंबर हो रहा है जाकर देख आइये। ईश्वर किसे धनु-भङ्ग का बड़प्पन प्रदान करेगा पता नहीं।

यह सुनते ही श्री लखन लाल से न रहा गया और सोचने लगे कि अभी अभी मुनि पूजन अनन्तर आशिष दे चुके हैं कि—

'सुफल मनोरथ होहुं तुम्हारे'

तब भी कहते हैं कि पता नहीं ईश्वर बड़ाई किसे दे। तो क्या इनका आशीर्वाद कहीं अनृत हो सकता है ? कदापि नहीं तब बोलते हैं—

लखन कहा जस भाजन सोई,
नाथ कृपा तव जापर होई।

भाव यह कि उसी को यश लाभ होगा जिसपर श्रीमान् की कृपादृष्टि हो चुकी है। पर धन्य! गोस्वामी जी की लेखन शैली को! क्योंकि गुरु ने तो लक्ष्मण जी की आशंका पूर्व ही निर्मल कर रक्खी थी

'हे राम तुम्ही तो सीता के स्वयंबर हो धनुष यज्ञ समारोह में प्रस्थान करो तथा उसे अवलोकन करो, तुम्हारे अतिरिक्त जैसा कि मेरा भी आशिष संग सहयोगी है ईश्वर और अन्य किसको बड़प्पन देगा ! अर्थात् विजय तथा धनुष-भङ्ग तुम्हारे ही द्वारा होना अनिवार्य है। श्री सीता तुम्हें ही वरेंगी। यह लक्ष्मण की सांकेतिक मूक भाषा को समझकर महर्षि ने प्रसन्न होकर लखन लाल की उसी श्रेष्ठ वाणी का स्वागत किया। यथा :—

हरषे मुनि सब सुनि बर बानी।
दीन्हि असीस सबहिं सुख मानी॥

जिला होशंगाबाद वालों से श्री कंजजी रामायणी की अपील

इसे मैं अपना परम सौभाग्य मानता हूँ कि विविध स्थानों में भ्रमण करते हुए मैं होशंगाबाद ऐसे धर्म प्राण और मानस प्रेमी जिले में पहुंच गया। तहसील नरसिंह और गाडरवारा में कथाओं के साथ मानस संघ रामवन की शाखाओं के स्थापन का भी क्रम चला। प्रेमियों का सहयोग बराबर प्राप्त हुआ। डांगीढ़ाना में सम्मेलन भी हुआ।

वहाँ का उत्साह दर्शनीय था। उसके बल पर ही मैंने घोषणा की है कि एक वर्ष में जिला होशंगाबाद में मानस संघ की ११०० शाखायें हो जांयगी। श्री मुरली धर जी पटैल तथा श्री ज्वाला प्रसाद जी कृषक का आग्रह था कि नरसिंहपुर तथा गाडरवारा तहसीलों में ही ११०० शाखायें स्थापित कराई जाँय। उन्होंने व्यवस्था भी की और मैंने गोटेगांव तक पैदल यात्रा की। हर ग्राम में अपूर्व उत्साह पाया। शाखायें स्थापित हुईं। प्रेमियों ने रामवन के श्री मारुति भगवान के रागभोग के लिये अपने मन से ही चने के बचन दिये। मुझे बड़ी आशा बंधी। पर मुझे खेद हो रहा है कि अब प्रेमियों ने रामकाज में ढील कर दी है जो शाखायें स्थापित हुई थीं उनके कुल फार्म अब तक रामवन नहीं पहुँचे हैं। अधिकांश लोग मेरी प्रतीक्षाकर रहे हैं। पर मैं हर जगह बार बार कैसे पहुंच सकता हूं। अतः मानस मणि के द्वारा सब प्रेमियों से अनुरोध करता हूँ कि—

(१) आप पूर्व स्थापित शाखाओं के फार्म शीघ्र रामवन भेजने की कृपा करें।

(२) बड़ी संख्या में नई शाखायें आसपास के ग्रामों में स्थापित करावें जिसमें आपकी तहसील में २०० शाखायें शीघ्र हो जाँय।

(३) गाडरवारा में श्री रामकृष्ण जी जायसवाल तथा जनपद शिक्षक संघ के सदस्यों से अनुरोध है कि वे अपनी तहसील का शेष कार्य पूर्ण करने की कृपा करें।

इस समय में सोहागपुर तहसील में प्रचार कर रहा हूँ। यहाँ की प्रगति विशेष अच्छी है और मुझे आशा है कि २०० शाखायें पूर्ण होकर निकट भविष्य में यहाँ मानस यज्ञ और सम्मेलन होगा। सम्मेलन तो नरसिंहपुर तथा गाडरवारा तहसीलों में भी होने ही चाहिये।

अभी ३ तहसीलें शेष हैं। वहाँ के तथा संलग्न भोपाल के मानस प्रेमी चुप न बैठें। अपने अपने ग्रामों में शाखायें स्थापित कराना प्रारम्भ कर दें। मैं इधर का कार्य पूर्ण करके वहाँ भी पहुँचूँगा। तब तक क्षेत्र तैयार हो गया तो विशेष प्रगति होगी।

समस्त भारत में आपका जिला मानस प्रचार में सर्व श्रेष्ठ है—इस गौरव प्राप्ति के लिये आप क्या करेंगे? वास्तव में सब कुछ आप ही करते हैं। मैं तो सुझाव उपस्थित करके निमित्त मात्र बन सकता हूँ।

मेरा आग्रह और अनुरोध प्रत्येक शाखा तथा मानस प्रेमी से है कि आप चुप न बैठें। मेरी प्रतीक्षा न करें। अधिक से अधिक प्रचार करें शाखा मालायें पूर्ण कराके सम्मेलनों और मानस यज्ञों की धूम मचा दें। देश में आपका धर्म और सुयश व्याप्त हो जाय। सबका कल्याण हो।

आपका ही
कंज

श्री कंज जी के उद्योग से जिलाहोशंगाबाद में शाखाओं की विशेष वृद्धि हुई है। इस समय संख्या २४८ है। संकल्प पूर्ति के लिये अभी भी ८५२ और स्थापित कराना है। अकेले श्री कंजी जी इतनी स्थापित करा सकते हैं पर स्वाभाविक उसमें समय अधिक लग जायगा। सभी शाखायें तथा मानस प्रेमी उद्योग करें तो कार्य बहुत जल्दी पूर्ण होगा। प्रेमी जन उन पर समस्त भार न डालकर उनका हाथ बटावें यही उचित है। आवश्यक फार्म प्रधान कार्यालय से मंगा लिया करें। यहाँ से उन्हें सदैव पूर्ण सहयोग प्राप्त होगा।

निवेदक
शारदा प्रसाद
मंत्री मानस संघ पो०—रामवन (जि० सतना)

ज्ञान और भक्ति के साथ ब्रह्म का विनोद

[पं० श्रीरामरक्षित जी शुक्ल रामायणी]

व्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुन विगत विनोद।
सो अज प्रेम भगति बस कौसल्या के गोद॥

धर्म मूर्ति महाराज श्री मनु और महारानी श्री सतरूपा जी जिस समय भगवत्प्राप्त्यर्थ तपश्चर्यार्थ वन को प्रस्थान करते हैं; उस समय रास्ते में पथिक रूप दम्पति के लिये कहा गया है कि:—

पंथ जात सोहहिं मतिधीरा।
ग्यान भगति जनु धरें सरीरा॥

भगवत्प्राप्ति इन दोनों के द्वारा हुई। तात्पर्य यह कि ज्ञान भक्ति दोनों हों तब भगवत्प्राप्ति हो एक से सुगम साध्य नहीं होते। दोनों को समता देने के लिये ही सरकार का दंपति के साथ समान व्यवहार हुआ है। मानस में सर्वत्र ही चरणों में पड़े हुए भक्त भगवान के द्वारा हृदय से लगाये जाते हैं, किन्तु भक्ति ग्यान स्वरूप राजा रानी जब चरणों में गिरे तो सरकार हृदय से नहीं लगाते हैं केवल कर कमल स्पर्श के साथ उठा लेते हैं।

सिर परसे प्रभु निज कर कंजा।
तुरत उठाये करुना पुंजा॥

दोनों के ऊपर दोनों हाथ फेर दिया गया और उठा लिये गये नहीं तो यदि एक को उठाते हैं या हृदय से लगाते हैं तो दोनों परम प्रेम स्वरूप हैं दोनों समान तप किये हैं, पहले चाहे जिनको ही उठाते उन्हीं की विशेषता होती और पीछे जिन्हें उठाते उनकी न्यूनता। इसीलिये समान रूप से—

सिर परसे प्रभु निज कर कंजा।
तुरत उठाये करुणा पुंजा॥

भगवान श्री राघवेन्द्र के—होइहहु अवध भुआल तब मैं होब तुम्हार सुत, इस आश्वासन के अनुसार ज्ञान भक्ति स्वरूप राजा रानी ब्रह्म को पुत्र रूप में पाने की इच्छा पूरी करने के लिये अवध चक्रवर्ती महाराज श्री दशरथ जी तथा यह महिषी श्री कौशल्या जी के रूप में धराधाम पर आये। समय और संयोजन पाकर श्री सरकार दशरथ अजिर बिहारी बने। एक दिन अवध राज महल की मणिमय अँगनाई में लावण्य लीला धाम चारों ललित लाल सखाओं के साथ ललक कर, ठिलककर, फुदककर पैंजन से मणिमय अंगनाई को गुँजित करते हुए खेल रहे थे। क्या ही अनोखी छटा है :—

रघुवर बाल छबि कहौं बरनि।
सकल सुख की सींव,
कोटि मनोज सोभा हरनि॥
बसी मानहु चरनि कमलनि,
अरुणता तजि तरनि।
रुचिर नूपुर किंकनी,
मन हरति रुन झुन करनि॥
मंजु मेचक मृदुल तनु,
अनुहरति भूषन भरनि।
जनु सुभग सिंगार सिसु तरु,
फरयो है अद्भुत करनि॥
भुजनि भुजग, सरोज नयननि,
बदन बिधु जीत्यो लरनि।

रहे घुटुरुनि ललित नभ,
उपमा अपर दुरि डरनि ॥
लसत कर प्रतिबिंब मनि,
आँगन घुटुरुवनि चरनि ।
जनु जलज संपुट सुछवि भरि भरि,
धरति उर धर नि ॥
पुन्यफल अनुभवति सुतहिं,
बिलोकि दशरथ घरनि ।
बसति तुलसी हृदय प्रभु,
किलकिनि ललित लर सरनि ॥

श्री चक्रवर्ती महाराज भोजन करने बैठे ,हैं महारानी कौशल्या परस रही हैं । अभी अभी थाल परस कर श्री महारानी जी भोजन शाला के द्वार पर खड़ी होकर ललित लाल की लरकाई और चक्रवर्ती जी के भोजन कृत्य देख रही हैं । महाराज भोजन करते जा रहे हैं और बीच-बीच में लाल को देखकर सहभोज करने की लोलुपता जग जाती है । अतः संकेत से बुलाने लगे, सरकार सिर हिलाकर नाहीं नाहीं करने लगे इस पर श्री महाराज पुकार कर कहने लगे आओ लल्ला आओ भैया और भैया आ आ बेटा थो··ड़ा ······खाले । श्री सरकार उहूँ······उहूँ······ कहकर और आगे दौड़ चले :—

भोजन करत बोल जब राजा ।
नहिं आवत तजि बाल समाजा ॥

श्री दशरथ जी हैं ज्ञान और महारानी कौशल्या हैं भक्ति, केवल ज्ञान चाहा कि मैं ब्रह्म को पा जाऊँ । इस पर भक्ति के भावानुभाव स्वरूप सखाओं को छोड़कर आने में ब्रह्म की अस्वीकृति हो गई । भक्ति ने देखा कि ज्ञान मुझे आशाभरी दृष्टि से देख रहा है अतः दौड़ गई ब्रह्म को पकड़ने के लिये ।

ब्रह्म ने देखा कि भक्ति समीप आई है तो लीला रस की मधुरिमा बढ़ाने के लिये भागने लगे :—

कौशल्या जब बोलन जाई ।
ठुमुक ठुमुक प्रभु चलहिं पराई ॥

सरकार पैंजन की झुनझुनाहट के साथ माँ माँ की ओर पीठ करके भागे, माँ पीछे लगी, साड़ी उड़ रही थी अन्त में श्री मैया जा दाहिने हाथ से साड़ी के किनारी को संभालकर बायें हाथ से श्री राम ललाजू के भुजा को पकड़ीं, जिस भुजा से :—

जेहि भुजबल प्रहलाद उबारे,
कनक कशिपु उर फारे हो ।
सो भुज पकरि कहति कौशल्या,
ठाढ़े होहु ललारे हो ॥

पकड़े जाने पर श्री सरकार मुँह मोड़ कर माँ की ओर विवशता भरी चितवन से देखने लगे ।

निगम नेति सिव अंत न पावा ।
ताहि धरै जननि हठि धावा ॥

भक्ती ब्रह्म को उठाकर लाईं ज्ञान के पास और ज्ञान के गोद में बैठा दीं । धूल धूसरित बाल रमैया को पिता जी गोदी में लिये । भक्ति से प्राप्य ब्रह्म का ज्ञान स्वागत किया ।

धूसर धूरि भरें तनु आए ।
भूपति बिहँसि गोद बैठाए ॥

ब्रह्म, ज्ञान के गोद में बैठा है सुख तो दोनों को देना है अतः पहले पकड़ में न आकर बाद में स्वयं पकड़ा कर भक्ति के साथ विनोद कर के उन्हें सुख दिया गया और अब ज्ञान के साथ विनोद करके उन्हें सुख देना है इसलिये –

भोजन करत चपलचित,
इत उत अवसरु पाइ ।
भाजि चले किलकत मुख,
दधि ओदन लपटाइ ॥

॥ श्री सीताराम महाराज की जय ॥



जुलाई मास में संघ के ५७६ नये सदस्य बने। इस मास में ५० नई शाखायें स्थापित हुईं जिनका विवरण इस प्रकार है :—

शाखा संख्या १४५८ वनखेड़ी [होशंगाबाद] सदस्य १० मन्त्री श्रीरामलाल जी पटवा। शा० सं० १४५९ वनखेड़ी [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री नर्मदाप्रसाद जी ब्रा०। शा० सं० १४६० वनखेड़ी [होशंगाबाद] स० १० मं० श्रीहरप्रसाद जी साहू। शा० सं० १४६१ वनखेड़ी [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री हरीराम जी साहू। शा० सं० १४६२ वनखेड़ी [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री सुखलाल जी शा० सं० १४६३ वनखेड़ी [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री भगवतीप्रसादजी सोनी। शा० सं० १४६४ वनखेड़ी [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री पुरुषोत्तमदास जी शा० सं० १४६५ वनखेड़ी [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री ईश्वरदासजी माहेश्वरी। शा०सं० १४६६ वनखेड़ी [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री लक्ष्मीचन्द्र जी माहेश्वरी। शा० स० १४६७ पिपरिया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्रीजुगुलकिशोर जी कावरा। शा०सं० १४६८ पिपरिया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री बद्रीप्रसाद जी राठी। शा० सं० १४६९ पिपरिया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री रामनिवास। शा० १४७० पिपरिया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री टाकुरदासजी गट्टानी। शा० सं० १४७१ पिपरिया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री बृजमोहनदास जी तोषनीवाल। शा० स० १४७२ पिपरिया। [होशंगाबाद] स०१० मं० श्री बाबूलाल जी शास्त्री शा० सं०१४७३ पिपरिया होशंगाबाद सं०१० मं०श्री रामचन्द्रसोढ़ानी। शा० सं० १४७४ पिपरिया [होशंगाबाद] स०१०मं०श्रीविनायकजीपुराणिक। सं०१४७५ पिपरिया [होशंगाबाद] स० १० मंत्री श्री कन्हैयालाल सराठे। शा० स० १४७६ पिपरिया [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री मूलचन्द जी। शा० स० १४७७ पिपरिया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री राधाकिशन लोया। शा० सं० १४७८ पिपरिया [होशंगाबाद] स०१० मं० हरीदास मालानी। शा० सं० १४७९ पिपरिया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री बेनीप्रसाद मानपाल्य शा० सं० १४८० पिपरिया [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्रीगौरीशंकर जी। शा० सं० १४८१ चुम्बा [हजारीबाग] स० ६ मं० श्री ज्योतिन प्रसाद जी। शा० सं० १४८२ नवागांव [रांची] स० ६ मं० श्री भैरवजी साहू। शा०सं १४८३ कमडारा[राँची] स० ६ मं० श्री इम्बर जी साहू। शा० सं० १४८४ सुन्दारी [रांची] स० ६ मं श्री ज्ञानचन्द्र जी। शा० १४८५ वालीया [मध्यभारत] स० १२ मं०। शा० स० १४८६ पावदी [मध्यभारत] स० ६ मं०। शा० सं० १४८७ पकरिया [विलासपुर] सं० १४ मं० श्रीहेमलाल जी कुर्मी। शा० सं० १४८८ भटेरा [होशंगाबाद] स० ६ मं० श्री आनन्दराव जी। शा० सं० १४८९ मंडी श्री करनपुर [राजस्थान] स० २४ मं० श्री लक्ष्मीचन्द जी। शा० सं० १४९० पिपरिया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री राधेलाल जी तिवारी। शा० स० १४९१ पिपरिया [होशंगाबाद] स० १० मं० तुलसीराम कावरा। शा० सं०१४९२ पिपरिया [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री गणेश प्रसाद जी व्यास। शा० स० १४९३ पिपरिया [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री तुलसीराम जी जैन। शा० १४९४ पिपरिया [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री कोदूलाल जी।

शा० सं० १४६५ पिपरिया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री नन्हेलाल जी पुजारी। शा० सं० १४६६ साँड़िया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री तुलसीराम जी मुरकार। शा०सं० १४६७ साँड़िया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री रामलाल सीरई। शा० सं० १४६८ साँड़िया [होशंगाबाद] स० १० म० श्री सी० एम० जी सस्ताकर। शा० सं० १४६६ साँड़िया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री किशोरलाल वर्मा। शा० सं० १५०० सांड़िया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री भागीरथ प्रसाद जी। शा० सं० १५०१ सांड़िया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री उमाशङ्कर जी। शा० सं० १५०२ सांड़िया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री खुन्नूलाल जी। शा० सं० १५०३ सांड़िया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री सुन्दरलाल राय जी शा० सं० १५०४ सांड़िया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री चन्द्रभूषण जी पाण्डे। शा० सं० १५०५ साँड़िया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री मुन्शीलाल जी वर्मा। शा० सं० १५०६ साँड़िया [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री बालाजी नाई। शा० सं० १५०७ इंदौर [मध्यभारत] सदस्य ११ मंत्री श्री मानसिंह जी गौर।

इस मास में श्री कंज जी रामायणी काशी ने ४० शाखायें स्थापित कराईं। पूर्व स्थापित १५२ थीं अब १६२ हो गईं। श्री कज जी की द्वितीय शाखा माला पूर्ण होने ही वाली है यह बड़े हर्ष की बात है।

विविध-समाचार

तंवरः—श्री नर्मदानन्द ब्रह्मचारी के सदुद्योग से द्वितीय वैशाख पूर्णिमा को रेवातट भेड़ाघाट में पञ्चमुखी श्री महावीर जी के सम्मुख ५ अखंड पाठ तथा ज्येष्ठ शुक्ल ५ को पाठशाला के अंजनीलाल के सम्मुख २ अखंड पाठ मानस के हुए।

—नाथूराम व्यास

राजाखेड़ाः—ज्येष्ठ वदी ८ को श्री बिहारी जी के मंदिर में मानस का वार्षिक उत्सव हुआ। ता० ६ को अखंड हरि कीर्तन हुआ। पूर्ति पर हवन, ब्राह्मण भोजन हुआ।

—रामचन्द्र दीक्षित

मोतीहारीः—पुरुषोत्तम मास में एक मास का अष्टयाम सदस्यों तथा श्री गंगासागर जी के सहयोग से सानन्द समाप्त हुआ।

—अनन्त प्रसाद सिंह

इन्दौरः—पुरुषोत्तम मास में जिन्सी शंकरगंज शाखा की तरफ से ता० ८-५-५३ से १६-५-५३ तक श्री रामदरबार का आयोजन किया गया था। परम पूज्य पं० रामानन्दजी व पं० शिवकुमारजी एम०ए० द्वारा संगीत पर मानस गायन हुआ। नर नारियों से नित्य मानस पाठ करने के प्रतिज्ञापत्र लिखवाये गये। जनता की काफी भीड़ थी। श्री रामदरबार आयोजन सुभाष चौक, जूनी इन्दौर, जिन्सी, चित्रनबाग हायर स्कूल के मैदान में, बजाजखाना में भी हुआ।

—नीलकंठ

सुपौलः—ता० ८-६-५३ को एकाह पाठ ६१ प्रेमियों द्वारा हुआ। बाद में हवन व प्रसाद वितरण हुआ।

—मुसहरू चौधरी

काँकेबारः—चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक नवाह पारायण ५ साधकों द्वारा पूर्ण हुआ। श्री मारुति जी की ध्वजा फहराई गई।

—टेकूलाल राम मेहता

बुन्डूः—वैशाख सुदी १ से ६ तक श्री राधारानी जी के मंदिर में अखंड हरिनाम कीर्तन तथा मानस के

६ अखंड पाठ ६ व्यक्तियों द्वारा हुए। काफी भीड़ रहती थी। बड़े-बड़े विद्वान तथा संत आदि थे।

—बद्रीदत्त व्यास

पकरिया:—ता० ८-७-५३ से ६-७-५३ तक श्री १००८ परम श्रद्धेय पूज्य श्री पं० रामरचित जी रामायणी का प्रवचन हुआ। जनता की काफी भीड़ होती थी। संघ के १४ सदस्य भी बने।

हेमलाल कुर्मी

सालेबैका रोड:—ता० ११-७-५३ को श्री काशीराम जी वैद्य के यहाँ रामायण का अखंड पाठ हुआ।

—लालचन्द्र बमनोतिया

गया:—आषाढ़ शुक्ल १ तथा २ को रथयात्रा महोत्सव मनाया गया। सेन जी की ठाकुरबाड़ी से भगवान रामलक्ष्मण तथा जानकी जी की शोभा चाँदी के रथ में अवर्णनीय थी। समाप्ति पर प्रसाद वितरण तथा कीर्तन हुआ।

—वैद्यनाथ मिश्र

पन्ना:—माह जून के तीन सप्ताह तक नित्य सायं ८॥ से १०॥ बजे तक श्रीयुगलकिशोर व श्रीबल्देव जी के मंदिर में श्री शिवशङ्कर जी पाठक 'प्रेमी' बनारस द्वारा मानस का प्रवचन हुआ। समाप्ति पर हवन पूजन हुआ। कथा सुनने के लिये श्री महाराजा सा० व श्रीमती महारानी साहिबा और नगर के समस्त नर नारी आते थे। जनता की रुचि मानस के कथा-वाचकों के प्रति उत्साह वर्धक है।

—सुरेन्द्रकुमार

देवरिया:—कचहरी के मन्दिर में अषाढ़ कृष्ण पक्ष में ११ दिन तक श्री पं० बच्चा पाण्डे व्यास की कथा हुई अंत में हवन तथा ब्राह्मण भोजन हुआ। अषाढ़ शुक्लपक्ष २ से ६ तक श्रीरामचरितमानस की कथा और आद्योपान्त पारायण पाठ श्री शिवमंगल नाथ तिवारी व्यास ग्राम नदौली द्वारा मेरे निवास स्थान पर हुआ। अन्त में हवन ब्राह्मण भोजन भी हुआ अषाढ़ शुक्ल १ से ११ तक श्री कृष्ण मारवाड़ी के स्थान पर श्री पं० बच्चा पांडे व्यास की कथा हुई।

—रामधारीलाल मुख्तार

सौंडिया:—श्री कंज जी रामायणी काशी वालों की १५ दिन तक कथा हुई। और केन्द्र बनाकर १२ शाखायें नई स्थापित की गई।

—रामलाल सीरई

खम्हरिया:—अषाढ़ पूर्णिमा को ग्रहण के वक्त ४ बजे शाम को २ घन्टे तक कीर्तन हुआ।

—जमनालाल

रामवन:—प्रातःकाल ७ बजे से ही चन्द्रग्रहण का सूतक लग जाने के कारण इस बार श्री गुरुपूर्णिमा का प्राथमिक कार्यक्रम इसके पूर्व ही पूर्ण किया गया। श्री मारुति भगवान की विशेष पूजा तथा गुरुपूजा हुई। ८ बजे से अखंड संकीर्तन प्रारम्भ हुआ जो तब से निरन्तर चल रहा है। सन्ध्या समय सतना से लगभग ४० प्रेमी मानससर में ग्रहण स्नान करने आये। मोक्षोपरान्त श्री मारुति भगवान का शृंगार होकर आरती हुई। प्रसाद वितरण हुआ।

एक प्रश्न

३=) में होने वाले काम के लिये ३॥=) खर्च करना उचित है क्या? मानस मणि का चन्दा मनीआर्डर से ही भेजना चाहिये। वी० पी० मंगाना अनुचित है।

रामवन समाचार

मानस आश्रम—जुलाई मास में मानस का एक सम्पूर्ण अखंड पाठ नित्य होता रहा। इस मास में मानस आश्रम में ५६०=)॥।की आय हुई और४६६=)॥। खर्च हुआ। ६३॥।≡)॥ की बचत हुई। श्री मारुतिराग भोग में २५२=)॥। की खर्च हुआ और आय १६३॥।≡)॥ हुई। कमी ८८≡)। की रही। कुल बचत ५॥।)। की रही। जो पिछली कमी २०१८)। में घटाने से अब २०१२।-) की कमी रह गई।

मानस आश्रम

१०-७-५३

१६) श्री फूलकुमार पोद्दार, नागपुर

११) ,, विष्णु सहाय, धनबाद

५) श्री शारदाप्रसाद कटोर, शहडोल

२००) ,, सेठगजाधर सोमानी, बम्बई

६) ,, हरिचरणलाल कन्देले, डबरामंडी

१५-७-५३

५) गुप्तदान

१७-७-५३

११) श्री शशिरंजन प्रसाद जी, भीलवाड़ा

१८-७-५३

१००) श्री सेठ चन्डीप्रसाद मोर, कलकत्ता

६६) श्री रामचन्द्रशर्मा, टिटिलागढ़

२०-७-५३

१६) श्री रतनचन्द्र सोहाने, जबलपुर

२१-७-५३

२०) श्री महाराज सा० श्री शिवदानसिंह जी साहब उदयपुर

२२-७-५३

१६) श्री ठा० दुर्गाप्रसाद वर्मा, देवरिया

११) ,, गोविन्दलाल जी जयसवाल कटोरी

६।) ,, गनेशदत्त कटारे, शहडोल द्वारा श्री फूलचन्द्र अग्रवाल

२३-७-५३

१७) श्री लाल पुष्पराजसिंह, मनकेशर

२४-७-५३

५) श्री रामनाथ कानोड़िया, कलकत्ता

२५-७-५३

१।) श्री शालिग्राम पाठक, देवपूर

५) श्रीमती इन्द्रमणि पोद्दार, पुलगांव

११) श्री भागवत पाण्डेय, विरार (बम्बई)

२७-७-५३

११) श्री दीवान केशवदास सोनी, सिरसा

२८-७-५३

११) श्री टी० सी० पटेल, भाड़ी

६॥=)। चढ़ोत्री

५६०=)॥

श्रीमारुतिरागभोग

१-७-५३

१।) श्री जगमोहनलाल, जानसठ

६-७-५३

५) श्री सीताराम शान्त, बनारस सिटी

६।) ,, एम० मेहता जी बम्बई

६-७-५३

२) श्री छोटेलाल अग्रवाल इलाहाबाद

१०-७-५३

१।) श्री रामरतन शर्मा, झांसी

१३-७-५३

५) श्री रामेश्वर सिंह वकील, गोंडा

४) श्री सोनीधनजी भाई बीरचन्द्र सागर

२) ,, हरिहरप्रसाद अग्रवाल बेगूसरांय

५।) ,, हरिचरणलाल कन्देले, डबरामंडी

१४-७-५३

११॥।) श्रीसेठ विरदीचन्द्र पोद्दार, नागपुर

१५-७-५३
१।) श्री सेठ बालमुकुन्द रामजीलाल, लालकुड़ती
२॥) ,, शङ्करप्रसाद अग्रवाल, मुजफ्फरपुर
५) ,, सहदेवप्रसाद, पाकुर
१७-७-५३
५) श्री स्वामी महन्त रामदास जी, पिण्डोरीधाम
१८-७-५३
२) श्री कुँ० धनसिंह भदौरिया, परौंख
२५) ,, पुरुषोत्तम तिवारी, मंत्री पेटरबार
३४) श्री रामचन्द्रशर्मा, तितलागढ़
२०-७-५३
१।) श्री अयोध्यानाथ बजाज, खालरा
२१-७-५३
६) महाराजा साहब श्री शिवदान सिंह जी साहब उदयपुर
२२-७-५३
५) श्रीमती रामप्यारी बाई, पेंगवार, चीचली
२३-७-५३
१।) श्री पुरुषोत्तमसिंह, जगन्नाथपुर
२४-७-५३
२॥≡)॥ श्री बनारसीप्रसाद, टिटिलागढ़
२५-७-५३
३) श्री रामचरणलाल पटेल, करेलीवस्ती
२८-७-५३
११) श्री रामनारायण गंगाराम बा० सेंधवा
५) ,, टी० सी० पटेल, भाड़ी
३०-७-५३
५) सर्वश्री अहरबादीन मिश्र, पं०पुरुषोत्तम शरण १।) २॥)
पं० कृष्णदत्तशुक्ल १।)
३१-७-५३
१।) श्री रामपदारथशरण, पोभी बाजार

१६३॥॥≡)॥

नीचे लिखे सज्जनों ने श्रीमारुति रागभोग के लिए चना भेजने की कृपा की है। हम उनके आभारी हैं। अपने खेत के अन्न से सेवा का यह क्रम श्रेष्ठ और अनुकरणीय है।

श्री डा० विश्वनाथसिंह जी गोटेगांव — १ बोरा
,, इमरतसिंह, दिवारी — १ बोरा (२॥ऽ)
,, राव रघुराजसिंहजी उमरिया — १ ,, (२॥ऽ)
,, नेतराम चौधरी, बहोरी पार — १ ,, (१॥ऽ)
,, जीवनलालजी पटेल, रीछा — १ ,, (२ऽ)
,, छोटेलाल पटेल, चीलाचोन, — १ऽ
श्रीमती सवित्री बाई,छोटीकोदादारास ॥ऽ
श्री शशिभूषण सिंह, मानेगांव — १ ,, (२ऽ)
,, थोवनसिंह पटेल, बौछार — १ ,, (२ऽ)

मानसयज्ञः—में पूर्ववत् ४०६।≈) बाकी है।

श्रीरामनाम मन्दिरः—इस मास में डा० श्री के० सी० मिश्र से १००) प्राप्त हुए। पिछली बाकी १०६५।≈)॥। में से घटाने से अब ९६५।≈)॥। आना बाकी है। दूसरे विभाग में २१५।) जमा थे। २≈) चढ़ोत्री के आये, अब २१७।≈) जमा है।

श्रीतुलसी मन्दिरः- इस मास में ६६॥)प्राप्त हुए जो पिछली बाकी १८६॥।)॥। में घटाने से अब १२०।)॥। की कमी रही।

३-७-५३
५) श्रीकोकसिंह त्रिपाठी, धौलपुर
९-७-५३
८) ,, अनन्त प्रसाद सिंह मोतीहारी
१७-७-५३
५०) ,, सेठ बिरदीचन्द पोद्दार, नागपुर
२२-७-५३
३॥) सर्वश्रीदीवान रामदयाल १), पं० लालजी प्रसाद १),हरप्रसादसाहू १),राधेचरणविश्कर्मा,बेलखेड़ा ॥)

६६॥)

पारायण मन्दिरः—पूर्ववत् ११) जमा हैं।

पाकशालाः—२१३)। आना बाकी था सो सेठ भीमराज ज्वालाप्रसाद सतना से प्राप्त हो गया है। पाकशाला पर सेठ भीमराज जी टाईंवाला का नाम लिखा ही जा चुका है।

गोशाला—इस मास में ९१) की आय हुई और ।।) खर्च हुआ। पहले की रकम ११४=)।।। में ९०।।।) जोड़कर अब २०४।।।=)।।। जमा है।

३-७-५३
२१) श्री सेठ रामचन्द्र सफड़िया, सतना
१३-७-५३
५।) श्री हरिचरणलाल कन्देले, डबरामंडी
१८-७-५३
५०) श्री सतना स्टोनलाइन कं, सतना
१५) श्री सेठ रामचन्द्र सफड़िया, सतना

———

९१)

श्रीरामसंस्कृत विद्यालय भवनः—की स्थिति पूर्ववत् है।

कुटीर विभागः—

नर्मदाखंड कुटीरः—इस मास में श्री हीरासिंह कंवरके राकछार से ३)- प्राप्त हुए। पिछली कमी २००।।)।।। में यह घटकर अब १९७।।)।।। की कमी रह गई।

कोरी कुटियाः—श्री दुज्जा कोरी, खगीपुर से ३४) तथा श्री भोला कोरी उरसान से १६) कुल ५०) इस मास में प्राप्त हुए। १५४६।।-)।।। में से यह घटाने से अब १४९६।।-)।।। दोनों कुटियों में बाकी रहा।

खम्हरिया तथा डाँगीढ़ाना कुटियों:—की स्थिति पूर्ववत् है।

मानसप्रचारः—जुलाई मास में सदस्य शुल्क में ३०१।।) प्राप्त हुए। कार्यालय में ८५।।।≡)।।, चिट्ठी खर्च में ५५।।।=)।। तथा छपाई में ६८) कुल २०७।।।=) खर्च हुए। ९१।।=) की बचत हुई। पिछली कमी १६।-)। घटाने से अब ७५।)।।। जमा हैं।

श्रीरामनामलड्डूः—जुलाई मास में २५३ लड्डू तैयार हुए। दैनिक क्रम में १५५ लड्डू श्री मारुतिजी को समर्पण हुए। शेष अक्षय तृतीया के लिये रखे गये। केन्द्रों की स्थिति इस प्रकार है—परौंख ८७, लादीगढ़ ८५, मुलढ़ाना ५०, चैवासा ३६, झालावाड़ ३६।

शुभागमन:—पन्ना से परम पूज्य महात्मा श्री शङ्कर दास जी रामवन आगये हैं। उनकी अध्यक्षता में अखण्ड संकीर्तन चल रहा है। नागपुर से प्रतिष्ठित सेठ श्री बिरदी चन्द जी पोद्दार रामवन आये तथा दो दिन रहे। टिटिलागढ़ से श्री सेठ बनारसी दास अग्रवाल आये। एक दिन रहे। डिब्रूगढ़ से आकर पं० श्रीपति पंडित सम्राट रामवन में गायत्री का अनुष्ठान कर रहे हैं।

—:०:—

हमारा आग्रह

कृपया मानसमणि वी० पी० न मंगाइये।
३) का मनीआर्डर भेजिये। आपके ।।) बचेंगे।

आश्विन में पुनः मानस यज्ञ

८ से १६ अक्टूबर तक

आश्विन नवरात्र में चैत्र के सदृश ही पुनः रामवन में मानस यज्ञ होगा। पूर्व प्रकाशित सूचना के अनुसार बाहर के लगभग ४० ही साधकों के ठहराने की व्यवस्था हो सकेगी। ६ साधकों ने अपने शुभ नाम लिखा लिये हैं। अन्य प्रेमियों को भी नाम लिखा लेना चाहिये। पूर्व क्रमानुसार यह यज्ञ भी भाग लेने वाले साधकों की ओर से ही होगा। पर चैत्र के यज्ञ में प्रस्तुत चौकी पुस्तक आदि अब भी काम आवेंगी। इस कारण प्रति साधक खर्च २०) मात्र पड़ेगा।

चैत्र का कार्यक्रम कितना प्रिय था यह इससे ही प्रगट होता है कि उपरोक्त ६ साधकों में ४ ऐसे हैं जो चैत्र में सम्मिलित थे। आश्विन का कार्यक्रम भी श्रेष्ट रखने का पूर्ण उद्योग किया जायगा। आश्रम में कुटियों की संख्या बढ़ने पर अधिक साधक सम्मिलित किये जाया करेंगे। अभी तो हम ३४ ही और ले सकेंगे।

—शारदाप्रसाद

आगामी सम्मेलन

कार्तिक शुक्ल पक्ष में लोहारदागा जिला राँची में सम्मेलन होने की संभावना है। आशा है यह कार्तिक शुक्ल २ को प्रारम्भ होगा। छोटा नागपुर तथा बिहार की शाखाओं तथा मानस प्रेमियों से सहयोग की आशा है।

इधर जिला होशंगाबाद में ३ स्थानों में सम्मेलन का प्रस्ताव विचाराधीन है। जिले के प्रचार को व्यापक तथा प्रभावशाली बनाने के लिये प्रत्येक तहसील में इस वर्ष एक सम्मेलन होना चाहिये। श्री कंज जी हर तहसील में दो दो सौ शाखायें स्थापित कराने तथा एक-एक सम्मेलन कराने के उद्योग में लगे हैं। श्री मारुतिभगवान उनके उद्योग को सफल करेंगे।

श्री रामरक्षित जी की योजना छत्तीसगढ़ में ३ सम्मेलन की है। उधर श्री बेधड़क जी मध्यभारत तथा राजस्थान में एक एक सम्मेलन की नींव डाल चुके हैं। विविध राज्यों में मिलाकर इस समय १८ सम्मेलन विचाराधीन हैं। पर ६ कार्तिक से वैशाख तक ६ मास में सुविधा पूर्वक व्यवस्था तो ६ से ८ तक की ही हो सकेगी। अतः कृत संकल्प शाखाओं को चाहिये कि अपने अनुकूल समय के सम्बन्ध में अभी से पत्र-व्यवहार कर लें। ठीक अवसर पर मन का समय मिलना कठिन हो सकता है।

—शारदा प्रसाद

श्रीरामनाम लड्डू

चैत्र नवरात्र के मानस यज्ञ के अवसार पर एक नौका श्रीरामनाम श्रीमारुति भगवान को समर्पण करके अब प्रगति धीमी हो गई है। प्रेमियों को चाहिये इस शुभ सेवा को बराबर बढ़ायें। इसका तो प्रत्यक्ष फल आत्मानुभव तथा शान्ति के रूप में तुरन्त ही प्राप्त होता है। जिसने न किया हो वह लिखकर देखे।

—शारदा प्रसाद

अनुरोध

मानस-मणि का चन्दा सदैव मनीआर्डर से भेजिये। ३) में ।।) की हानि उठाना बुद्धिमत्ता का काम नहीं है।

रजिस्टर्ड नं०—एन ८७१

रामवन के विविध कार्य

१—वर्ष में श्रीरामचरितमानस का दो पाठ करने की प्रतिज्ञा करने वाले सज्जन मानस संघ के सदस्य बनाए जाते हैं। आजीवन शुल्क ॥) है। जहाँ नौ सदस्य हो जाते हैं, वहाँ शाखा बन जाती है। इस समय देश में मानस संघ के २७७८१सदस्य हैं और १२२६शाखायें हैं।

२—रामचरितमानस का प्रचार एवं अध्ययन व्यापक करने के लिए यह 'मानस मणि' मासिक पत्र ग्यारह वर्ष से निकल रहा है। इस का वार्षिम मूल्य ३) है।

३—तुलसी साहित्य का प्रकाशन मानस प्रकाशन लिमिटेड द्वारा होता है। कम्पनी का प्रत्येक शेयर १०) का है। कम्पनी १६ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है। स्थायी ग्राहक शुल्क २) है। स्थायी ग्राहकों को प्रकाशित ग्रंथों पर २५ % कमीशन दिया जाता है।

४—श्रीरामचरितमानस पत्र व्यवहार विद्यालय द्वारा मानस संघ घर बैठे श्रीरामचरितमानस की शिक्षा देता है। विद्यालय का पाठ्य विषय तीन वर्षों का है और प्रथम वर्ष का शुल्क १०) है।

५—मानस आश्रम में नित्य अखण्ड मानस पाठ होता है। यहाँ रह कर साधक एकान्त में साधन भजन करते हैं।

६—तुलसी संग्रहालय भी रामवन में है।

७—मानस संघ राम नाम लड्डू लिखने का प्रचार करता है। ये लिखित रामनाम श्रीमारुति जी को अर्पण किये जाते हैं। २७ करोड़ अर्पित हो चुके हैं।

८—श्री राम संस्कृत विद्यालय में वाराणसेय-परीक्षा के पाठ्यक्रम के साथ मानस अध्ययन की भी सुविधा रखी गई है।

हर विभाग में आपका सहयोग अपेक्षित है।

'मानस-मणि'

पो०—रामवन (सतना)

ग्रा० न०—

श्री......सम्पादक जी......गुरुकुल पत्रिका......गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय......हरिद्वार......पो० गुरुकुल कांगड़ी

सम्पादक—सुदर्शन सिंह

प्रकाशक—शारदा प्रसाद, मन्त्री, मानस सङ्घ, रामवन, (सतना)। मुद्रक—माधो प्रिंटिङ्ग वर्क्स, प्रयाग।

मानस मणि



मणि १२ | अक्टूबर १९५३ | आलोक १०

वार्षिक मूल्य तीन रुपया

वी० पी० से तीन रुपया दस आना

श्री रामनाम लड्डू

श्री डाक्टर कमलेश्वरी चरण मिश्र ने श्री रामनाम मन्दिर बनवा कर मानस आश्रम रामवन को एक बड़ी सुविधा प्रदान कर दी है। नित्य के समर्पित तथा संग्रहीत समर्पित श्री रामनाम लड्डू रखने का ठिकाना हो गया। त्रिताप से संदिग्ध प्राणियों को श्री रामनाम की परिक्रमा करके अपने पाप ताप निवारण का अवसर मिल गया।

अब प्रेमियों का कर्त्तव्य है कि दूने उत्साह से श्री रामनाम लेखन में श्री रामनाम लड्डू निर्माण में लग जाँय। बड़े आदमी कापियाँ बनवाकर अपने अपने नगर ग्राम में वितरण करें और लिखी कापियाँ संग्रह करके रामवन भेजें। इसमें उन्हें महान पुण्य होगा। इस क्रम में छोटी उमर के बालकों को श्री रामनाम लेखन में लगाया जा सके तो उनके भविष्य का सुन्दर निर्माण होगा।

जिन प्रेमियों के ध्यान में इस शुभ कार्य को प्रगति प्रदान करने की कोई नई योजना आवे तो वे अवश्य पत्र व्यवहार करने की कृपा करें। ऐसा उद्योग होना ही चाहिये कि मन्दिर में ९६ करोड़ श्री राम नाम संग्रहीत हो जाँय।

—शारदा प्रसाद

रामायण प्रचार

अभी कुछ ही दिन पूर्व ब्रिटिश एण्ड फारेन बाइबिल सोसाइटी ने मंगोल भाषा में बाइबिल का नवीन संस्करण प्रकाशित किया है। इसकी एक प्रति की लागत ४४ शिलिंग पड़ी है। सोसाइटी ८ शिलिंग से कम में एक प्रति बिक्री कर रही है। संसार के धनी इसाई इस घटी की पूर्ति करते हैं अपने धर्म के प्रचार के लिये। इस दिशा में आप क्या करते हैं। डाकखाने वाले एक दो अंक मानसमणि के चुरा लेते हैं तो आप कार्यालय को दोषी मानकर मणि मंगाना बन्द कर देते हैं। एक पोस्टकार्ड डालकर वे अंक दुबारा मंगा लेना क्या उचित नहीं है। यदि आपका क्रोध इतना बढ़ गया है कि अनुचित उचित का विचार करना संभव नहीं है तब तो कुछ कहना नहीं है। पर यह स्थिति न हो तो ३) मनीआर्डर द्वारा भेजकर आगामी वर्ष के चन्दे में ॥) की बचत कीजियेगा। ग्राहक नहीं ही रहना हो तो एक पोस्टकार्ड डाल दीजियेगा।

रामायण प्रचार के लिये औसत ।) मासिक खर्च करना क्या बहुत बड़ा त्याग है। केवल बाइबिल प्रकाशन में उपरोक्त सोसाइटी प्रति वर्ष पचास साठ लाख रुपये खर्च करती है।

—शारदा प्रसाद

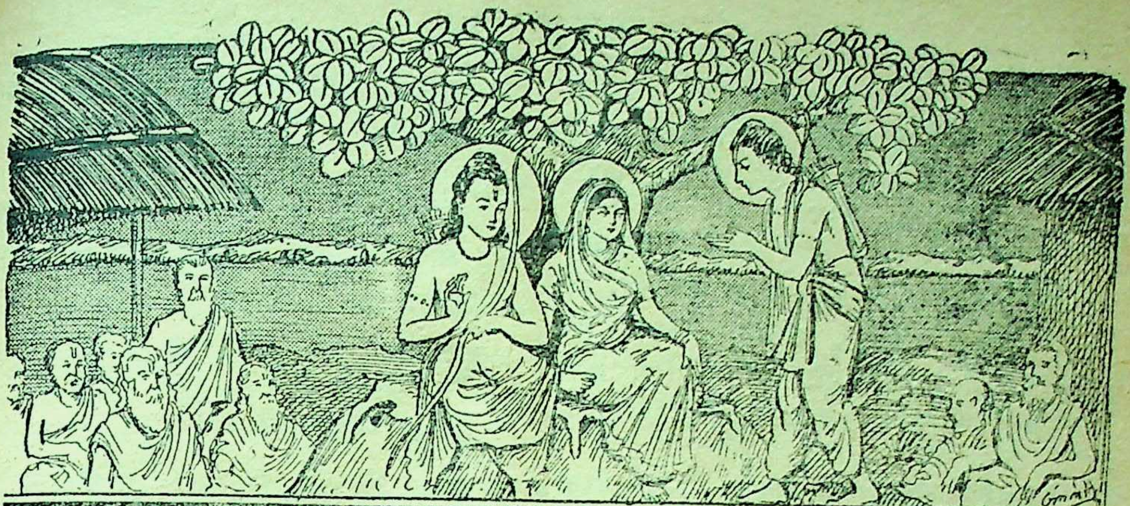
जिला दुर्ग के शाखा मंत्रियों से निवेदन

आप में से अनेक खम्हरिया के षोड़स मानस संघ सम्मेलन में उपस्थित थे। अपने जिले का यह प्रथम सम्मेलन था अधिवेशन सफल भी रहा। इसमें मैंने प्रस्ताव किया था कि इस सम्मेलन के उपलक्ष में रामवन में एक कुटिया निर्माण कराई जाय। प्रस्ताव स्वीकृत हुआ और तत्काल ८१॥) प्राप्त भी हुए।

सम्मेलन के अवसर पर ही जिले की शाखा माला भी पूर्ण हुई। रामवन जाकर मंत्री श्री शारदा प्रसाद जी ने शाखाओं से प्रस्ताव किया कि माला पूर्त्ति के उपलक्ष में वे एक कुटिया की व्यवस्था करें तो खम्हरिया तथा दुर्ग जिले की शेष शाखाओं की ओर से श्री हनुमान जी का कोठार २०००) में बन जाय। मंत्री जी का प्रस्ताव हर शाखा से १५) के सहयोग का है। अवश्य ही इसे अधिक नहीं कहा जा सकता है। चार शाखा में से ५३।) प्राप्त भी हुए हैं।

खम्हरिया नगर में दानवीर मारवाड़ी समाज के शताधिक घर हैं। इनमें अनेक ऐसे हैं जो अकेले ही १०००) प्रदान करके एक कुटिया बनवा सकते हैं। जो इस लोक में अपने तथा अपनी सन्तति के निवास के लिये लाख पचास हजार खर्च करके विशाल भवन बनवाते हैं वे परलोक में अपना ठिकाना ठीक करने को १०००) भी न खर्च करें तो आश्चर्य की बात होगी। पर सम्मेलन का प्रस्ताव तो इतना भी नहीं है। सब मिलकर एक कुटिया बनवाने का है। मुझे विश्वास है कि खम्हरिया वाले तो १०००) संग्रह कर ही लेंगे। शेष शाखाओं से ही मेरा विशेष निवेदन है कि अपना अपना भाग पूर्ण करने में विलम्ब न करें। दुर्ग जिले का इसी में ही गौरव है।

रामशरण सिंह भुवाल
मंत्री, मानस संघ शाखा, सोनपाँडर



मानस मणि

राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं॥

मणि १२ — रामवन—आश्विन, मानस संवत् ३८०—अक्तूबर १९५३ ई० — आलोक १०

मानस की सूक्तियाँ

जलद जनम भरि सुरत बिसारेउ। जाँचत जल पबि पाहन डारेउ॥
चातक रटनि घटे घटि जाई। बढ़े प्रेम सब भाँति भलाई॥
कनकहिं बान चढ़इ जिमि दाहे। तिमि प्रियतम पद नेह निबाहे॥

× × ×

सिर धरि आयसु करिअ तुम्हारा। परम धरम यह नाथ हमारा॥

× × ×

बारेक राम कहत जग जेऊ। होत तरन तारन नर तेऊ॥

× × ×

माया पति सेवक सन माया। करइ त उलटि परइ सुरराया॥

× + +

जो अपराध भगत कर करई। राम रोष पावक सो जरई॥

+ + +

मनहुँ न आनिअ अमरपति, रघुबर भगत अकाज।
अजस लोक परलोक दुख, दिन दिन सोक समाज॥

+ + +

करम प्रधान बिस्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फल चाखा॥

—:०:—

(७३३)

नियत कर्म का त्याग हो ही नहीं सकता उसके त्याग की चेष्टा तो तामस चेष्टा है।

(७३४)

जिसमें मैं कर्ता नहीं हूँ ऐसी दृढ़ और सच्ची धारणा है, चाहे वह जो भी करे उसे कर्मों के भले या बुरे फल नहीं होते। पर स्मरण रहे, उससे बुरे कर्म हो ही नहीं सकते। क्योंकि वे राग से ही होते हैं।

(७३५)

अवश्य आनन्द को अपने भीतर पाना कठिन है। पर उसे अन्यत्र पाना तो असम्भव ही है।

(७३६)

मन का यदि सावधानी से निरीक्षण कर सकोगे तो वह तुम्हारा आज्ञाकारी हो जायगा।

(७३७)

बिना महापुरुषों का सङ्ग किये कोई भी ज्ञान नहीं प्राप्त कर सकता।

(७३८)

हम हैं अतः ईश्वर भी हैं। हमारा अस्तित्व ही ईश्वर का प्रमाण है।

(७३९)

सभी वैषयिक सुखों के मूल में दुख छिपा हुआ है।

(७४०)

जो भी कर्म करोगे उसका संस्कार होगा जो पुनः उसी कर्म की ओर प्रवृत्त करेगा इस कारण एक ही सुकर्म संस्कार परम्परा से उन्नति और एक ही दुष्कर्म अवनति कर डालता है।

(७४१)

केवल सुनने या पढ़ने से ज्ञान नहीं होता उसके लिये-संयम, मनन और त्याग की आवश्यकता होती है।

(७४२)

'संसार दुख रूप है' यह शास्त्र का सिद्धान्त है, और यही जीव मात्र का अन्तिम अनुभव भी है।

(७४३)

प्रिय वस्तु का वियोग विषयी को कष्ट प्रद, और धैर्यशालियों को कल्याण प्रद प्रतीत होता है।

(७४४)

संसार निःसार है। यहाँ कुछ सार है तो सत्सङ्ग और भगवान।

(७४५)

चाहे कोई जैसा भी हो, पर विरक्ति के बिना ज्ञान की स्थिरता नहीं होती।

(७४६)

शब्द को पीछे छोड़ दो। उसके अर्थ में प्रवेश करो। जो कुछ सुनो विनीत होकर वही हो जाओ।

(७४७)

अधिक ग्रन्थ पढ़ना ही अच्छी बात नहीं। जितना पढ़ो, उसे समझो। आचरण में लाओ।

(७४८)

गंगा का अन्त जाने बिना हमारा क्या काम रुक जाता है? हमारा मतलब तो केवल प्यास बुझाने से है।

(७४९)

श्रद्धालु, उत्कृष्ट मुमुक्षु, तथा गुरु वाक्य पर विश्वास करने वाला ही सत्य को पावेगा।

(७५०)

यदि सत्य को प्राप्त करना है तो सम्पूर्ण अभिमान और कुतर्क को त्याग कर उनकी शरण में जाओ, जिन्होंने उसे प्राप्त कर लिया है।

(७५१)

ज्ञान कहीं रखा नहीं, जो कोई उठा कर तुम्हें दे देगा। वह तो तुम्हारे अन्दर ही है। आवश्यकता इतनी ही है कि उस पर पड़े माया के आवरण को हटा दिया जावे।

श्री वेदपाद स्तोत्रम

श्री अवध किशोर दास जी श्री वैष्णव

यत् किञ्चत्

इस स्तोत्र के विषय में यत् किञ्चत् ही कहना है। हमारी परम्परा में वशिष्ठ,परासर, व्यास, शुक, बौधायनादि महर्षियों का स्मरण होता है उनके धर्म विषयक स्मृति आदि ग्रन्थों के अतिरिक्त अन्य श्री रामभक्ति प्रतिपादक ग्रन्थ भी उपलब्ध हैं। जैसे श्री वशिष्ठ संहितोक्त साकेत वर्णन,पराशर मुनिप्रोक्त मिथिला माहात्म्य, व्यास प्रणीत कोशल खण्डादि, उसी प्रकार श्री भरद्वाजमुनि प्रणीत वैष्णव धर्म प्रतिपादक भारद्वाज संहिता भी प्राप्य है। श्री तुलसीकृत रामायण के मानस मुखबन्ध में प्रथम याज्ञवल्क्य-भरद्वाज-सम्वाद ही है। अतएव अनन्य श्रीरामनिष्ठ भरद्वाजमुनि का यह स्तोत्र देखकर मानस के वाक्यों से मिलाने पर ठीक-ठीक मिल गया। अन्वेषण करने पर यथावत् श्लोकार्थ भी मिल सकता है। याज्ञवल्क्य मुनि का तो ६००० श्लोकों का सीतारामोपासना पर एक स्वतंत्र ग्रन्थ ही है।

मानस प्रेमियों के विनोदार्थ समान भाव-वाले वाक्य चुनकर श्लोकार्थ के नीचे देने का अल्प प्रयास किया गया है। साथ ही वेदपाद स्तोत्र से सम्बन्धित श्रुति वाक्यों का भी यथा सम्भव निर्देश किया गया है। ये मन्त्र भी विद्वत्समाज में प्रचलित हैं इसलिये अध्यायादि अंक नहीं दिए गये हैं। आवश्यक प्रतीत होने पर दूसरे संस्करण में यह भी हो सकता है।

यह स्तोत्र अभी अप्रकाशित ही है। इसकी एक संस्कृत टीका युक्त हस्तलिखित प्रति भी मेरे पास है। उसके अंत में 'मिती फाल्गुनवदी १२ शनिवासरे सम्वत १९१३ लिखितं पं० श्री चौबे पलटूराम' लिखा है। टीकाकार ने श्री भरद्वाज सम्प्रोक्त वेद पादामिध स्तुतेः। विनायक कृता टीकार्पिता सीतापतेः पदे ॥१॥ पश्यन्तु साधवःसर्वे दूषणम्भूषणं मम्। न हानिः साधु वदने दूषणम्भूषणम्भवेत ॥२॥ वापटोपनामक वल्लालसूरि सूनु गोविन्द सुत विनायक कृता वेदपादस्तुति व्याख्या समाप्ता। शुभम्भवतु मङ्गलन्ददातु।' लिखा है।

इसके प्रत्येक श्लोक में वैदिक श्रुतियों का एकीपाद रखा गया है, जैसे आयु कीर्तिम्प्रजां ददुः अणोरणीयानमहतो महीयान्' आदि। यद्यपि उस चरण का प्रयोग मुनि ने स्वतंत्र अपनी भावनानुसार ही किया है तथापि श्रौत पदों का महत्व समझकर इसका 'वेद पाद स्तोत्र' नाम रखा होगा, यह प्रतीत होता है। श्रुतियों के शब्दों द्वारा प्रभु श्री राम का रामनाम का लीला का, धाम का, उनके निज भक्तों के स्वभावादि का वर्णन मुनि की अपनी मौलिक रचना है। पूर्व काल में भी ऋषि मुनि श्रुत्यार्थ अपने इष्टदेव राम के परत्व वर्णन में ही संगत समझते थे यह भी प्रकट होता है।

इस विषय में विद्वान महापुरुष अधिक अनुसन्धान कर सकते हैं मैंने इसी संस्कृत टीका के भाव की रक्षा करते हुए हिन्दी अनुवाद करने का प्रयत्न किया है। यदि श्री सीताराम चरणानुरागी मानस प्रेमी महानुभावों का इससे कुछ मनोविनोद हुआ, तो मैं अपना श्रम सफल समझूंगा।

महर्षि श्री भारद्वाज मुनि प्रणीत वेदपाद स्तोत्रम्

श्रीमद्रामं रघूत्तमं सच्चिदानन्दलक्षणम्
भवन्तं करुणावन्तं गाये त्वा मनसा गिरा ॥१॥

अर्थ—श्रीमान रघुकुल शिरोमणि, सच्चिानंद परब्रह्म, परमकारुणीक, श्रीरामभद्रजू, मैं मानसिक भावनायुक्त प्रेमभरीवाणी से आपका गान करता हूं ॥१॥

श्रीमत्—श्री सहित दिनकर बंसभूषन,
काम छवि बहु सोहई।

राम—जिनकर नाम लेत जग माहीं।
सकल अमङ्गल मूल नसाही॥
करतल तोहिं पदारथ चारी।
तेइ सियराम कहेउ कामारी॥

रघुत्तंसम्—पुरुष प्रसिद्ध प्रकास निधि,
प्रगट परावर नाथ।
रघुकुल मनि मम स्वामि सोइ,
कहि सिव नायउ माथ॥

सच्चिदानन्द—राम सच्चिानन्द दिनेसा।
चिदानन्द मय देह तुम्हारी।

करुणावन्तम्—कारुणीक कलकञ्ज बिलोचन।
करुनामय कृपाल रघुराई। इत्यादि।

रामे दूर्वादल श्यामे जानकी कनकोज्वला।
भाति मद्दैवते मेघे विद्युल्लेखेव भास्वरा॥२॥

अर्थ—मेरे इष्टदेव नवदूर्वादलश्याम प्रभु श्रीरामजी के लोकललाम श्री अंक में कनक वल्ली के समान गौरवर्ण श्री जनक राजकुमारी ऐसी सुन्दर लगती हैं, जैसे घनश्याम नवीन मेघ में प्रकाश पूर्ण विद्युत् की मनोहर रेखा ॥२॥

रामेदूर्वादल श्यामे—
नील सरोरुह नील मनि,
नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि,
कोटि-कोटि सत काम॥

जानकी कनकोज्वला—
सम सुबरन सुखमाकर सुखद न थोर,
सीय अंग सखि कोमल कनक कठोर।

विद्युल्लेखेव भास्वरा—
राजति राम जानकी जोरी।
स्याम-सरोज जलद सुन्दर बर,
दुलहिन तड़ित बरन तनगोरी।
दूलह राम सिया दुलही री।
घन दामिनि बर बरन हरन मन,
सुंदरता नख सिख निबहीरी॥

मद्दैवते रामे—इष्टदेव मम सोइ रघुबीरा।
तरहिं न बिनु सेये मम स्वामी, राम...

ऊपर के दोनों श्लोकों में "अस्ति भाति प्रियं रूपं नाम चेत्यंश पञ्चकम्" इस श्रुति का भाव आ गया है। अस्तित्व, भातित्व और प्रियत्व ये तीनों 'सच्चिदानंद' शब्द से प्रकट हैं और नाम तथा रूप दूसरे श्लोक में॥

त्वदन्यं न भजे राम निष्कामान्ये भजन्तु तान्
भक्तेभ्यो यो पुरा देव आयुः कीर्ति प्रजां ददुः

अर्थ—हे श्रीरामजी, मैं तो आपको त्याग कर अन्य किसी का भजन नहीं करता हूं। जो उनको भजते हैं वे भले ही भजें। आप निष्काम एवं पूर्णकाम हैं तथा पूर्वकाल में निष्काम भक्तों को बिना माँगे ही आयुकीर्ति तथा प्रजादि प्रदान कर उन्हें सुखी किया है।

त्वदन्यं न भजे—तुमहिं छांड़ि गति दूसरि नाहीं।
बसहु राम तिनके मन माहीं
जाउं कहां तजि चरण तुम्हारे।
श्री रघुबीर चरन चिंतन तजि नाहिंन ठौर कहूँ॥
ये भजंतुतान—भरोसो जाहि दूसरो सो करो॥
भक्तेभ्यो यो पुरा देव आयुः कीर्तिंप्रजां ददुः—

ध्रुव सगलानि जपेउ हरि नामू।
पायेउ अचल अनूपम ठामू।
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू।
भगत सिरोमनि भे प्रहलादू।
साधक नाम जपहिं लय लाये।
होहिं सिद्ध अनिमादिक पाये।
स्वारथ परमारथ सकल सुलभ एक ही ओर।
द्वार दूसरे दीनता उचित न तुलसी तोर।
यो वैताम्ब्रह्मणो वेद अमृतेनावृताम्पुरीम्।
तस्मै ब्रह्म च ब्राह्माच्च आयुः कीर्त्तिम्प्रजां ददुः॥

इस अथर्वणीय श्रुति का भाव इस श्लोक में व्यक्त किया गया है।

भजनम्पूजनं राम करिष्यामि यवानिशम्।
श्रियंनेच्छामि संसारादभयं विन्दतिमामिह ॥४॥

हे रघुनाथ जी, मैं दिन रात आपका भजन पूजन करता हूं। अन्य लौकिक धन-लक्ष्मी आदि कुछ नहीं चाहता। क्योंकि संसार का भय मेरे पास आता है ॥४॥

भजनम्पूजनं राम करिष्यामि तवानिशम—प्रणमामि निरंतर श्रीरमनं।

पूजहिं तुमहिं सहित परिवारा।
रामहिं सुमिरिय गाइय रामहिं।
संतत सुनिय राम गुन ग्रामहिं।

श्रियंनेच्छामि—भजिय राम सब काम बिसारी।

चहौं न सुमति सुगति सम्पति कछु,
रिधि सिधि विपुल बड़ाई।
हेतु रहित अनुराग राम पद,
बढ़ौ अनुदिन अधिकाई।

संसाराद्भयं विन्दतिपामिह—

देखत ही रमणीय महा संसार भयङ्कर भारी।
तेहि बिनु तजे भजे बिनु रघुपति विपति सकै को टारी।
समन सकल भवत्रास॥

'विष्णोः पदं निर्भयम्'। भीषास्माद्वातः पवते भीषोदेति सूर्यः। भीषादग्निश्चेन्द्रश्च मृत्युर्धावति पञ्चमम्। इत्यादि श्रुतियों का भाव यहां लाया गया है। ततः सद्यो विमुच्येत यद् बिभेति स्वयं भयम्। अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रतं मम।

इत्यादि शास्त्र वाक्यों का भी यही भाव है।

रामरामेति रामेति वदन्तं विकलम्भवान्
यमदूतैरतुक्रांतं वत्सं गौरिवधावतु ॥५॥

श्री राम, राम, राम, इस प्रकार आपके सर्व शक्तिमान नाम का स्मरण करने वाले यमदूतों से आक्रांत इस भक्त का उद्धार करने के लिये परम कारुणीक आप बछड़े के पीछे दौड़ने वाली गाय की भांति कृपाकर अतिशीघ्र पधारें।

सूचना—इस श्लोक से षडक्षर मंत्रराज का उद्धार होता है। प्रथम राम बीज है। द्वितीय से रान, तृतीय से चतुर्थी विभक्ति और वदंति से नमः पद प्रकट होता है।

जपहिं नाम जन आरत भारी।
मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी।
चहुँ जुग तीन काल तिहुँ लोका।
भए नाम जपि जीव बिसोका।
नाम काम तरु काल कराला।
सुमिरत समन सकल जगजाला।

इस श्लोक में 'यस्य नाम महद्यशः' 'मुमुक्षुर्वै शरणमहम्प्रपद्ये' आदि श्रुतियों का भाव व्यक्त किया गया है।

स्वच्छंद चारिणं दीनं राम रामेति वादिनम्।
तावन्नामनु निम्नेन यथा वारीव धावतु ॥६॥

स्वच्छंद आचरण करने वाले मनमुखी मेरे जैसे दीन-हीन को श्री राम राम ऐसा आपका नाम संकीर्तन करते देखकर आप भली-भांति वात्सल्यपूर्ण हृदय से जैसे विकट मार्ग में जल दौड़ता है वैसे अनाथ भक्त की रक्षा के लिए दौड़ कर पधारें।

मानत नहीं निगम अनुसासन त्रास न काहू केरो।
स्वच्छंद चारिणम—चलत कुपंथ बेद मग छांड़े।

बरन धर्म नहिं आश्रम चारी।
श्रुति पथ विमुख सकल नर नारी।

राम रामेति वादिनम्—राम कहत पावन परम
होत भुवन विख्यात ।

सेवा बिन गुन बिहीन दीनता सुनाए,
जेते तैं निहाल किये फूले फिरत पाये ।

राम त्वं हृदये येषां सुखं लभ्यं वनेऽपि तैः ।
मंडञ्च नवनीतञ्च क्षीरं सर्पिः मधूदकम् ॥७॥

अब अधिकाधिक भक्तवत्सलता प्रकट करते हुये कहते हैं—कि हे श्रीरामजी, आप जिन भाग्य भाजनों के हृदय में निवास करते हैं उनको वन में भी घृत दूध दही मधु तथा सुन्दर अन्न जल पर्याप्त मात्रा में प्राप्त होते रहते हैं । अर्थात् भक्त को कहीं कुछ भी कष्ट नहीं प्रतीत होता है ।

सुखं लभ्यं वनेऽपि तैः—

तिमि सुख सम्पति बिनहिं बुलाये ।
धरम सील पहँ जाहिं सुभाये ।
राम बसत जिनके उर माहीं ।
जग महँ कछु दुर्लभ तेहि नाहीं ।

राम भये जेहि दाहिने सकल दाहिने ताहि ।
राम भरोसे जे रहे पर्वत पै हरियाय ।
तुलसी बिरवा बाग के सींचत हूँ कुम्हिलाय ।

जो इच्छा करिहउ मन माहीं ।
रामकृपा कछु दुर्लभ नाहीं ॥
सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं ।
अंत काल रघुपति पुर जाहीं ॥

प्रार्थये त्वां रघूत्तंस माभून्मम कदाचन
सभ्यस्तीर्थेषु सर्वत्र पापेभ्यश्च परिग्रहः ॥८॥

हे श्री रघुवंश विभूषण सर्वत्र सर्वदा तीर्थों में सभ्यजनों द्वारा मेरा सत्कार कभी न हो, क्योंकि ऐसी दशा में पापों के लिए सहायक रूप कुछ न कुछ लेना ही पड़ता है ।

सबहिं मानप्रद आपु अमानी ।
बहुत प्रीति पुजाइबे पर पूजिबे पर थोरि ।
देत सिख सिखये न मानत मूढ़ता अस मोरि ।

सास ससुर गुरु मातु पिता प्रभु भयो चहै सब कोइ ।
होनो दूजी ओर को सुजन सराहत सोइ । आदि
'तेनत्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्यस्विद्धनम्'
इस श्रुति का भाव स्पष्ट किया गया है ।

श्री राम जानकी जाने भुवने भवने वने
स्वभक्त कुल जातानामस्माकमविता भव ॥९॥

हे श्री जानकी प्राण प्रियतम ! त्रिभुवन में, जहां कहीं भी भवन में या वन में यह शरीर रहे, हमको अपने भक्तों के कुल में उत्पन्न अपना सम्बन्धी समझ कर आप सर्वदा हमारे रक्षक हों ।

जेहि जेहि जोनि जाउँ करुणानिधि कर्मन की बरिआईं
तहां तहां जनि छोहु छाड़ियहु कमठ अंड की नाईं ।

अस अभिमान जाइ जनि भोरे ।
मैं सेवक रघुपति पति मोरे ।
यहि नाते नरकहुँ सचुपैहों ।
यहि बिनु परम पदहिं सुख दहिहौं ।
नाते सब हाँते करि राखत राम सनेह सगाई ।
जानत प्रीति रीति रघुराई ॥

'यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु ।' तथा
मधुव्वाताऋतायते मधुक्षरंति सिन्धवः'
आदि श्रुतियों का मर्म स्पष्ट किया गया है ।

सर्वे मदर्थं कुरुतोपकारं श्रीराम माकर्ण्य कर्ण नित्यम्
मूर्धन्नमालोकय नेत्र जिह्वे स्तुति श्रुतं गर्त सदंयुवानम्

हे प्रभु मेरी सभी इन्द्रियां मेरा इतना उपकार करें कि कान निरंतर राम नाम सुना करें, मस्तक आपके तथा सन्त जनों के चरणों में नमा करे, जिह्वा आ[illegible] का ही यशोगान तथा नाम सङ्कीर्तन किया करे, तथा हृदय सुने हुये आपके गुण गणों को तथा आपके स्वरूप को प्रेमपूर्वक अपने भीतर बसाया करे ॥१०॥

पुलकगात हिय सिय रघुबीरू ।
जीह नाम जप लोचन नीरू ।
सजल नयन गदगद गिरा गहवर मन पुलक शरीर ।
गुनगन सुमिरत राम के केहि की न मिटी भव भीर ॥
श्रवनन और कथा नहिं सुनिहौं रसना और न गैहौं ।

रोकिहीं नयन बिलोकत औरहिं सीस ईस ही नैहीं ॥
भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
इस श्रुति का भाव महर्षि ने प्रकट किया है।
भद्रं श्रीरामम्।

भवान् रघूत्तंस तु दैवतं मे यं सच्चिदानंद घन स्वरूपम्।
एकं परंब्रह्म वदन्ति नित्यं वेदांत विज्ञान सुनिश्चितार्थाः ॥११॥

हे रघुकुल कमल दिवाकर, जिस एक परब्रह्म परमात्मा को निश्चित अर्थ कहने वाले वेद, वेदांत, शास्त्र तथा ज्ञानी महात्मागण सच्चिदानंद घन स्वरूप कह कर प्रतिपादन करते हैं वही आप श्रीराम प्रभु मेरे देवता हैं।

जेहि इमि गावहिं वेद बुध जाहि धरहिं मुनि ध्यान।
सोइ दसरथ सुत भगत हित कोसल पति भगवान।

वेदांत विज्ञान सुनिश्चितार्थाः सन्यास योगाद्यतयः शुद्ध भावाः पतिं पतीनां परमं परस्ताद्विदाम देवं भुवनेश मीड्यम् ॥ आदि श्रुतियों का तत्व वर्णित है।

भवाकृपापांग विलोकितेन वैकुण्ठ वासः क्रियते जनेन ज्ञात्वा भवंतं शरणागतोऽस्मि यस्मात् परं नापरमस्ति किञ्चित ॥१२॥

आपकी कृपादृष्टि का अवलंब मिलते ही जीव कृतार्थ हो जाता है। उस भाग्यशाली का पर वैकुंठ साकेत धाम में सदा निवास होता है, यही सब रहस्य जानकर मैं आपके शरणागत आया हूँ। क्योंकि आप से बढ़कर और परतत्व शिव विरञ्चि नारायणादि कोई भी नहीं है। अर्थात् आप ही परात्परतम तत्व हैं।

रामहिं भजहिं तात सिव धाता,
नर पामर कर केतिक बाता।
जासु अंस उपजहिं बिधि नाना,
अगनित सिव बिरञ्चि भगवाना।

हरिहिं हरिता बिधिहिं बिधिता सिवहिं सिवता जेहि दई,
सोइ जानकीबर मधुर मूरति मोदमय मंजुल मई।

ब्रिस्नु कोटि सम पालन कर्ता,
रुद्र कोटि सत सम संहर्ता।
निरुपम न उपमा आन राम समान राम निगम कहै।

वेदाह मेतं पुरुषं महान्तमादित्य वर्णं तमसः परस्तात्' तमेव विदित्वाति मृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय। इस श्रुति का भाव व्यक्त किया गया है।

दीनान् भवद्भक्तकुल प्रसूतान् भवत्पदाराधन हीन चिंतान्।
अनाथ बंधो करुणैकसिंधो पितेव पुत्रान् प्रतिनोऽजुपस्व ॥१३॥

यद्यपि हम दीन हैं, आपके आराधन से विमुख हैं; आपके श्री चरण कमल में मन भी नहीं लगाये हैं, तथापि आपके भक्तों के कुल में हमने जन्म लिया है। किसी न किसी प्रकार हमारा नित्य सम्पर्क आपसे है ही। इसलिये हे करुणानिधे पिता जैसे अपने कपूत की भी लज्जा रखता है उस पर भी दया दिखाता है वैसे ही हे अनाथों के नाथ, आप भी हमारा पालन कीजिये।

नाथ जीव तव माया मोहा,
सो निस्तरइ तुम्हारेहि छोहा।
तापर मैं रघुबीर दुहाई,
जानउं नहिं कछु भजन उपाई।
सेवक सुत पितु मातु भरोसे,
रहइ असोच बनइ प्रभु पोसे।
सुनु सर्वज्ञ कृपा सुख सिंधो,
दीन दयाकर आरत बंधो।
असरन सरन बिरद संभारी,
मोहिं जनि तजहु भगतभयहारी।
मोरे तुम प्रभु गुरु पितु माता,
जाउँ कहाँ तजि पद जलजाता।

'सनो बंधुर्जनिता स विधाता धामानिवेद भुवनानि विश्वा' नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन। यमेवैष वृणुते तेनलभ्यस्तस्यैष आत्मा विवृणुतेतनूँ स्वाम् इति श्रुतिः।

भवान, भवव्याघ्र भयादि भीतं,
जराभिभूतं सह लक्ष्मणेन।

सदैव माँ रक्षतु राघवेशः,
पश्चात्पुरस्ताद् धराद्‌दक्तात् ॥१४॥

हे 'श्री राघवेन्द्र प्रभु, जरा (वृद्धावस्था) तथा भवरूपी व्याघ्र (मृत्यु) से भयभीत मेरी रक्षा कीजिए। पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिणादि ऊर्ध्व अधः सर्वदा सर्वत्र आप मेरी रक्षा करने की कृपा कीजिए।

मामभिरक्षय रघुकुल नायक,
धृत बर चाप रुचिर कर सायक।
देस काल दिसि बिदिसहु माहीं,
कहहु सो कहां जहां प्रभु नाहीं।
जहँ देखौं तहँ प्रभु आसीना,
सेवहिं सिद्ध मुनीस प्रवीना।
सीता अनुज समेत प्रभु,
नील जलद तनु स्याम।
मम हिय बसहु निरंतर,
सगुन रूप श्री राम।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके,
सर्वतोऽक्षि शिरोमुखम्।
सर्वतः पाणि पादं तन्,
सर्व मावृत्य तिष्ठति ॥
संसृज्य विश्वा भुवनानि गोप्ताः।
स एव काले भुवनस्य गोप्ता ॥
सतन्मयो ह्यमृत ईश संस्थो,
ज्ञः सर्वगो भुवनस्यास्य गोप्ता।
ब्रह्मैवेद मृतं पुरस्ताद्ब्रह्म,
पश्चाद्ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण
अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्मैवेदं,
विश्व मिदं वरिष्ठम् इत्यादि श्रुतिः।

कामाघमध्येऽथ विविधमग्नं,
रोगं मदीयं भव नाम धेयम्।
दूरी कुरुत्वं यदहं त्रिलोक्यां
भिष्यक्तमं त्वां भिषजंश्रृणोमि ॥१४॥

कामनाओं का वासना पूर्वक निरन्तर चिन्तन करते-करते भवनाम का मेरा रोग अत्यन्त विकराल हो गया है। इस कुरोग का औषध हमने बहुत खोजा परंतु सबने इस रोग के नामी वैद्यराज के रूप में आपका ही नाम बतलाया। अतएव सभीके मुख से एक ही बात सुन कर 'भजामि रामं भव रोग वैद्य' आपके शरण आया हूँ। अब आप दया करें मेरे वैद्यराज बन कर मेरा सब रोग दूर करने की कृपा करें। क्योंकि आपके द्वारा नीरोग हुए रोगियों को फिर कभी कोई रोग होता ही नहीं है। यह बात सर्वत्र प्रसिद्ध है।

'राम कृपा नासहिं भव रोगा,
जौं यहि भांति बनइ संजोगा।
जासु नाम भव भेषज हरन घोर त्रय सूल।
सो कृपालु मोहिं तोहिं पर रहहुँ सदा अनुकूल।
सदगुरु ज्ञान बिराग जोग के।
बिबुध बैद भव भीम रोग के ॥
संसृति रोग सजीवन मूरी।
राम कथा गावहिं स्रुति सूरी ॥

श्री रामचंद्र, सजयेदजस्रं,
लंका पुरिद्रोण गिरौ पयोधौ ॥
यस्य प्रसादादभवद्'
हनूमानणोरणीयान् महतो महीयान् ॥१६॥

उन श्री रामचंद्र जी की सर्वत्र विजय हो जिनकी कृपा से श्री हनुमान जी लंका दहन के समय, द्रोणाचल लाने के समय तथा समुद्र लंघन के समय 'महतो महीयान्' तथा लंका प्रवेश श्री सीतान्वेषणादि समय पर अणोरणीयान् होकर प्रभु के महान् कर्म को सिद्ध कर सके।

बांधि सिंधु हाटक पुर जारा।
निसिचर गन बधि बिपिन उजारा ॥
सो सब तव प्रताप रघुराई।
नाथ न कछू मोर प्रभुताई ॥
\+ \+ \+
जामवंत कह सुनु रघुराया।
जापर नाथ करहु तुम दाया ॥

ताहि सदा सुभ कुसल निरंतर ।
सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर ।।
सोइ बिजयी बिनयी गुन सागर ।
तासु सुजस त्रैलोक उजागर ।।
प्रभु की कृपा भयउ सब काजू ।
जन्म हमार सुफल भा आजू ।।

समुद्र लंघन के समय—
चलेउ हरषि हिय धरि रघुनाथा,

लंका प्रवेश के समय—
पैठा नगर सुमिरि भगवाना ।

श्री किशोरी जी के प्रति—प्रभु प्रताप ते गरुड़हि,
खाइ परम लघु ब्याल ।

लंका दहन में—
ताकर दूत अनल जेहि सिरिजा,
जरा न सो तेहि कारन गिरिजा ।

द्रोणाचल लाने में—
राम चरन सरसिज उर राखी,
चला प्रभंजन सुतबल भाखी ।

अणोरणीयान्महतोमहीयानात्मा,
गुहायाँ निहितोऽस्य जन्तोः ।
तमक्रतुं पश्यति वीत शोको,
धातुः प्रसादान्महिमानमीशम् ।

सीतापते रामरघूत्तमेतियो नामानि,
जल्पेद्युधितस्य तत्क्षणात् ।
दिशो द्रवन्त्येव युयुत्सवोऽपि,
भियं दधाना हृदयेषु शत्रवः ।।१७।।

भव रोग के कामादि भट्ट लड़कर पछाड़ने की इच्छा से आक्रमण करने पर भी यदि युद्ध में प्रतिवादी के मुख से—'श्री सीतापति रामचन्द्र रघुपति-रघुराई'

आदि प्रभु के प्रतापी नामों का स्मरण कर लेते हैं, तो उसी क्षण हृदय से भयभीत होकर दशों दिशाओं में यत्र-तत्र भाग जाते हैं ।

राम नामँ को प्रभाव जानु जूड़ि आगि है,
सहित सहाय कलिकाल भीरु भागि है ।

काल कर्म गुन स्वभाव सबके सीस चपत,
राम नाम महिमा की चरचाउ चलत चपत ।
सेवक सुमिरत नाम सप्रीती,
बिनु श्रम प्रबल मोहदल जीती ।
फिरत सनेह मगन सुख अपने,
नाम प्रसाद सोच नहिं सपने ।

भिद्यते हृदय ग्रंथिश्छिद्यन्ते सर्व संशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे ।।

इति श्रुतिः ।

अनादिमव्यक्तमनन्त माद्यं,
परं स्वयं ज्योतिषमप्रमेयम् ।
विलोकये दाशरथे कदात्वा,
मादित्य वर्णं तमसः परस्तात् ।।१८।।

हे दशरथ राजकुमार, मैं अनादि अव्यक्त अनंत, आद्य, परम जोतिर्मय अप्रमेय, प्रकाशवान, परात्पर प्रभु आपका स्वरूप इन नयनों से देखकर कब तृप्त होऊँगा ।

अगुन अरूप अलख अज जोई,
भगत प्रेम बस सगुन सो होई ।
अज व्यापकमेक मनादि सदा,
करुनाकर राम नमामि मुदा ।

'वेदाहमेतम्पुरुषम्महान्तमादित्य वर्णन्तमसः परस्तात् ।'
इति श्रुतिः ।

श्री राघवस्यीय पदारविन्दे,
सेवां भवान्तः सततं ददातु ।
वयं स्वजन्मांतर सञ्चितानि,
ययाति विबूवादुरितांतरेम ।।१९।।

हे रघुनंदन, आप अपने चरण कमलों की मधुर सेवा हम सबको सतत काल प्रदान करने की कृपा करें क्योंकि सेवा के प्रभाव से जन्म जन्मांतरीय अत्यंत बढ़े हुये दुष्कर्मों से हम सहज में ही तर जायंगे ।

सेवक हम स्वामी सियनाहू ।
होहु नाथ यहु ओर निबाहू ।

अस अभिमान जाइ जनि भोरे ।
मैं सेवक रघुपति पति मोरे ।
नीच टहल गृह कै सब करिहौं ।
पद पङ्कज बिलोकि भव तरिहौं ।
जद्यपि गृह सेवक सेवकिनी ।
बिपुल सकल सेवा बिधि गुनी ।
निज करगृह परिचरजा करई ।
रामचंद्र आयसु अनुसरई ।
जेहि बिधि कृपासिंधु सुख मानइ
सोइ करि श्री सेवाबिधि जानइ ।
सेवहिं सानुकूल सब भाई ।
रामचरन रति अति अधिकाई ।
सेवहिं लखन सीय रघुबीरहिं ।
जिमि अविवेकी पुरुष सरीरहिं ।

भूयिष्ठांते नम उक्तिं विधेम । कस्मै देवाय हविषा विधेम ।' इति श्रुतिः ।

भोचित्त चेत्कामयसे विभूतिं,
तमेव संसर्प व वीरमेकम् ।
रघूत्तमः श्री रमणः सदायः
श्रीणामुदारो धरुणो रयीणामं ॥२०॥

रे मन, यदि तू सम्पत्ति चाहता है तो उन्हीं रघुवंश विभूषण के शरण जा, जो स्वयं श्री रमण हैं तथा जो धनवानों के भी उदार धनवान तथा श्री के धारण करने वाले हैं ।

जे सकाम नर सुनहि जे गावहिं,
सुख सम्पति नाना विधि पावहिं ।
ऐसो को उदार जगमाहीं ।
बिनु सेवा जो द्रवइ दीन पर राम सरिस कोउ नाहीं ।
और काहि मांगिये जो मांगिबो निवारै ।
जग जांचिय कोउ न जांचिये, जौं जिय जाँचिये जानकि जानहि रे ।
जेहि जाचत जाचकता जरिजाय,
जो जारत जोर जहानहि रें ।

वंदेरविन्दे क्षणमम्बुदाभ माकर्णनेत्रा सुकुमार गात्रा यं जानकी हर्षवती वनेऽपि प्रियं सखायं परिषस्वजाता ॥२१॥

कर्ण पर्यन्त विशाल नेत्रवाली अत्यंत सुकुमारी श्री जनकदुलारी जी जिस प्राणाधिक प्रियतम का प्रेमालिङ्गन पाकर गहवर वन में भी समस्त दुःखों को भुलाकर परम हर्षवती रहती थीं, उन नवनीरदाभ राजीवलोचन श्री राघवेन्द्र प्रभु की मैं बार-बार वन्दना करता हूँ ।

प्रसन्नतां या न गताभिषेकतस्तथा, न मम्ले वनवास दुःखतः । मुखाम्बुज श्री रघुनन्दनस्य मे, सदास्तु सा मंजुल मंगल प्रदा ।

कलपबेलि जिमि बहुबिधि लाली ।
सींचि सनेह सलिल प्रतिपाली ॥
पलंग पीठि तजि गोद हिंडोरा ।
सिय न दीन्ह पगु अवनि कठोरा ॥
छिनु छिनु प्रभुपद कमल बिलोकी ।
रहिहउं मुदित दिवसजिमि कोकी ॥
श्रमकन सहित स्याम तनु देखे ।
कहँ दुख समउ प्रान पति पेखें ॥
बार बार मृदु मूरति जोही ।
लागिहि तात बयारि न मोही ॥
राम संग सिय रहति सुखारी ।
पुर परिजन गृह सुरति बिसारी ।
नाहनेह नित बढ़त बिलोकी ।
हरषित रहत दिवस जिमि कोकी ॥

सीताजाने नैवजाने त्वदन्यँ त्यक्त्वा श्रीः स्त्रीः पुत्रमायुः कदाहम् त्वां वै स्मृत्वा देवयानाधिरूढस्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानः ॥२२॥

हे सीतापते, आपके बिना अन्य किसी को मैं अपना नहीं समझता । अतएव धन, जन, स्त्री, पुरुष परिवार को त्याग आपका स्मरण कर दिव्य विमानारूढ़ ब्रह्मादि सुरगणवन्दित, आपको मैं प्राप्त कर कब कृतार्थ होऊं ।

ब्रह्मणावन्दमान :

धिग जीवन देव शरीर हरे।
तवभक्ति बिना भव भूलि परे।
हम देवता परम अधिकारी।
स्वारथ रत प्रभु भगति बिसारी।
भव प्रवाह सन्तत हम परे।
अब प्रभु पाहि सरन अनुसरे।

त्यक्त्वा श्रीः स्त्रीः—

जाति पाँति धन धरम बड़ाई।
प्रिय परिवार सदन सुखदाई।
सब तजि तुमहिं रहइ लय लाई।
तिनके हृदय रहहु रघुराई।

अहं भरद्वाज मुनि निरंतरं श्रीराममेकं जगदेक नाथम्। तम्वर्ण्ये मुक्ति रसादिवित्तदं कविं कवीनामुपमस्रवस्तमम् ।।२३।।

मैं भरद्वाज मुनि स्वर्ग पाताल भूलोकादिकों का समस्त वैभव तथा परम धाम मोक्ष देने वाले अखिल लोकनायक, कवियों के आदि कवि अत्यन्त उत्तम यशवाले भगवान श्रीराम का निरन्तर गुणगान करता रहता हूँ।

है नीको मेरे देवता कोशल पति राम।
सुभग सरोरुह लोचन सुठि सुन्दर श्याम।

जगदेक नाथम्—

भुवन अनेक रोम प्रति जासू।
यह प्रभुता कछु बहुत न तासू।।
सो महिमा समुझत प्रभु केरी।
यह बरनत हीनता घनेरी।।

मुक्ति रसादि वित्तदम्—

लोकप होहिं बिलोकत तोरे।
जो अवलोकत लोकपति लोक सम्पदा थोरि।

(स्वयं भरद्वाज मुनि का वैभव)—

रिधि बिसमय दायक विभव, मुनिवर तप बल कीन्ह।
मुनि प्रभाव जब भरत बिलोका।
सब लघु लगे लोकपति लोका।

अमृतं काव्य देवस्य न ममार न जीर्यति इतिश्रुतिः।

पठन्ति स्तुतिं ये नरा मुक्तिकामाः।
समृद्धिं चिरायुष्यमायुष्य कामाः॥
लभन्तेऽत्र निःसंशयम्पुत्र कामाः।
लभन्तेऽत्रपुत्रांल्लभन्तेऽत्र पुत्रान् ।।२४।।

अब स्तोत्र पाठ का फल कहते हैं—लोक परलोक स्वार्थ परमार्थ सभी पूर्ण करने वाले प्रभु का एक मात्र आश्रय लेने वाले भक्त जन यदि अर्थार्थी बनकर ऋद्धि-सिद्धि की कामना से इस स्तोत्र का पाठ करेंगे तो वह भी अनायास प्राप्त होगी। सभी प्रकार की समृद्धि सम्पत्ति आयुष्य दीर्घजीवन जो कुछ चाहें प्राप्त होगा, प्राप्त होगा, प्राप्त होगा।

वेद पाद मिदं स्तोत्रं स्नात्वा भक्त्या सकृन्नरः।
यःपठेद्राघवस्याग्रे जीवति शरदः शतम्॥ २५॥

श्री भरद्वाज मुनि अन्त में कहते हैं, नित्य प्रति स्नान करके श्री रघुनन्दनजू के समीप बैठकर जो भक्ति पूर्वक इस वेदपाद स्तोत्रपाठ करेगा, वह सौ वर्ष पर्यन्त जीवन धारण कर सुख से प्रभु धाम जायगा।

इति श्री भरद्वाज मुनि प्रणीतम् वेदपाद स्तोत्रम् अवध किशोर दास श्री वैष्णव प्रेमनिधिकृत हिन्दी भाषानुवाद सहितं सम्पूर्णम।

स्वर्गीय पं० श्री राजाराम पति जी त्रिपाठी

[साहित्यालंकार—पं० श्री सुरेश जी पाठक "मुग्ध" शास्त्री, साहित्यरत्न]

पं० श्री राजाराम पति जी पण्डित राज उमापति जी के भ्राता पं० विद्यापति जी के चतुर्थ पुत्र पं० शुभनारायण पति जी के प्रथम पुत्र रत्न थे। आपका प्रादुर्भाव विक्रमीय सं० १६३१ में अपने मातृकुल गोरखपुर जनपद पयासी ग्राम में हुआ था। आप आजानुबाहु एवं अरुण नेत्र थे। आपके पूर्वज गोरखपुर जनपद में भगवती सरयू के परम पवित्र तट पर स्थित पिन्डोग्राम के निवासी थे। जीविकोपार्जन की दृष्टि से आपका परिवार (छपरा-विहार) जनपद के महुजा ग्राम में आगया। सर्व प्रथम आपके पितामह श्री उमापति जी ने अवध में आकर निवास किया।

आप प्राथमिक शिक्षा महुजा ग्राम में ही प्राप्त करके विशेष अध्ययनार्थ काशी पधारे। आप बाल्यकाल से ही प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। काशी में आकर आपने शास्त्रों का गहन अध्ययन कर उच्च शिक्षा प्राप्त की। इसके पश्चात् आप अयोध्या जी चले आए। अयोध्या आने पर अकस्मात् उसी समय पं० विद्यापति जी के प्रथम पुत्र पं० रंगराजपति जी जो 'मानस' के बड़े मर्मज्ञ थे, इनके प्रथम पुत्र श्री पं० बब्बनपति जी का देहावसान हो गया। बब्बन पति जी पं० श्री उमापति जी के स्थानापन्न हुए थे, अपने पिता के बाद। पं० श्री बब्बनपति जी का मृतसंस्कार आदि कर्म समाप्त हो जानेके बाद श्रीराजाराम पति जी को उस स्थान का अधिपति बनना पड़ा। आप उस स्थान के पास ही पूर्व दिशा में अपनी भूमि में गृह निर्माण करवा कर इसी में रहने लगे। एक स्वतन्त्र स्थान बना लिया जो इन्हीं के नाम का स्थान एवं गद्दी से प्रसिद्ध है। आप एक अत्यन्त निष्ठावान कर्मकाण्डी थे। आप त्रिकाल सन्ध्योपासन, एवं वाल्मीकि रामायण तथा श्री सप्तशती का पारायण नित्य करते थे।

एक समय की घटना है जब आप नूतन गृह निर्माण करवा रहे थे, उसी समय आपके इकलौते पौत्र को श्वान ने काट लिया। पौत्र को लेकर आपने सपरिवार शिमला, मन्सूरी आदि स्थानों का भ्रमण किया किन्तु कुछ लाभ होते न देखकर आप पुनः श्री अवध लौट आये। यहाँ पर पौत्र की मृत्यु हो गई। जिससे गृह निर्माण का ऊपरी कार्य-क्रम रुक गया। आज तक ऊपरी भाग स्थित दिवाल उस हृदय विदीर्ण करने वाले शोक जनित घटना चक्र की स्मृति रूप में प्रत्यक्ष नेत्रों के सम्मुख विराजमान है। आपका यह नियम था कि पाक निर्माण स्वयं ही करते थे। अपने गृह वालों में किसी का निर्माण किया हुआ प्रसाद नहीं भोग लगाते थे। आप पाक निर्माण दाहिने हाथ से लकड़ी धोकर करते। नित्य बलि वैश्व देव आदि करने के बाद प्रसाद पाते थे। आप अधिकतर माघ में कल्पवास एक माह प्रत्येक वर्ष प्रयाग में करते थे। काशी आदि तीर्थ स्थानों में ही आपका जीवन अधिक से अधिक व्यतीत होता था।

आप बाहर भी भ्रमणार्थ जाया करते थे। यात्रा में जहाँ भी देखते कि यहां से आगे वाले स्टेशन पर सूर्योदय या सूर्यास्त हो जायेगा तो मैं सन्ध्या कैसे करूँगा, इसलिये

उसी स्टेशन पर उतर कर संध्योपासन आदि कर्म से निवृत होकर तब आगे जाते थे। रेलवे नियमानुसार टिकट नष्ट हो जाने पर पुनः दूसरा टिकट लेकर यात्रा करते थे। कुछ लोगों ने इस पर कहा तो आपने कहा कि 'क्या मैं टिकट को कार्य के लिये सुरक्षित रहने के डर से अपना नित्य का कर्म, धर्म छोड़ दूं।' एक समय रामगंज स्टेट (जो प्रतापगढ़ जनपद में स्थित है) से बारात बङ्गाल में स्योरगन्ज जो उस समय स्वतन्त्र रियासत थी स्पेशल ट्रेन द्वारा जा रही थी। आप भी उसी ट्रेन से यात्रा कर रहे थे। वरपक्ष से बारात में निमन्त्रित थे। मार्ग में कहीं प्रातः काल हो रहा था, आप ट्रेन रुकवा कर सन्ध्या आदि कृत्य करने लगे, जिससे ट्रेन ५ घन्टे लेट हो गई। स्टेट के मैनेजर ने कहा कि समय का अपव्यय हो रहा है। किसी तरह यह बात आपके कानों तक पहुँच गई। स्वाभिमानी भी आप कम नहीं थे। आपने कह दिया कि मैं इस ट्रेन से अब नहीं जा सकता। पुनः विशेष आग्रह करने से दूसरी ट्रेन से गये। आपके दो पुत्र थे, दोनों ही युवावस्था में चल बसे। इसको आपने ईश्वरेच्छा समझ कर कुछ भी ध्यान न दिया। दिन रात भजन, पूजन, आदि में लगे रहने के कारण आपके शरीर का अस्थिपंजर मात्र ही दिखता था।

एक समय आपके गृह में डाका पड़ा। उस समय रात्रि के चार बजे का समय था, आप माता सरयू के यहां स्नान पूजन के लिये गये हुए थे। घर में बड़ी पुत्रवधू थीं। घर से एक विद्यार्थी गया घाट पर और बताया कि घर में डाका पड़ा है, तो आपने अत्यन्त सहनशीलता पूर्वक उत्तर दिया कि सब वस्तु उठा ले जाने दो। हम लोगों को केवल एक मात्र ईश्वर का ही भरोसा रखना चाहिये। स्थानीय भारत सरकार से रजिस्टर्ड अखिल भारतीय विद्वत् समिति के कई बार सभापति रह चुके थे। स्थानीय सुरसर स्टेट के मन्दिर में पं० शशिनाथ झा जो कई शास्त्रों के पण्डित थे उनसे ६ मास तक शास्त्रार्थ करके विजय प्राप्त किया। विजय देख सुरसर की महारानी ने श्री भागवत की कथा सुनने की इच्छा प्रगट की किन्तु आपने कहा था कि मैं केवल गुरुदीक्षा ही देता हूँ। उन्होंने प्रलोभन भी दिया किन्तु वहाँ कौन सुनता है। सारा प्रयत्न असफल रहा।

एक बार प्रयाग में निवास करते समय पं. मदन मोहन मालवीय जी आपसे किसी धार्मिक विषय में कुछ सम्मति लेने गये थे। बड़े प्रसन्न हुए थे सम्मति मिलने पर। आप अयोध्या में रहते हुए भी दीन जनों एवं विद्यार्थियों की सहायता के लिये अन्न आदि बराबर प्रदान किया करते थे। विद्यादान भी करते थे। स्थान में विद्यार्थी पंडितों की अधिकता रहती थी। आपसे बड़े-बड़े लोग शिक्षा ग्रहण करने आते थे, जिसमें सर्वप्रथम स्थान बस्ती जनपद रियासत कानपुर के बाबू गिरजेशपाल बहादुर सिंह जी का स्मरणीय है। आप वृद्धावस्था तक स्वयं पढ़ने के लिये इच्छुक रहा करते थे। कई लोगों ने इस पर आपत्ति भी की तो आपने कहा कि पढ़ना तो कभी बन्द करना ही नहीं चाहिये। श्री अवध जू के विद्वत् मंडली में आपका सम्मान था। आपने अपने पितामह श्री उमापति जी के जन्म स्थान पिण्डी ग्राम में उमापति विद्यामंदिर नाम का पक्का गृह बनवाकर, उसी में पाठशाला भी स्थापित की जिसके प्रारम्भिक अवस्था में आपही के ऊपर आय-व्यय का पूर्ण भार था। वह भार वहन आपने

पांच वर्ष तक किया। उसके बाद भी सहायता प्रदान करते रहे। आप 'मानस' के बड़े समर्थक थे। जहाँ भी कहीं जाते थे श्री गोस्वामी तुलसी कृत 'मानस' के पठन पाठन का विशेष आग्रह करते थे। ऐसे संस्कृतज्ञ पण्डित को 'मानस' के प्रति प्रोत्साहन देते हुए कम देखा गया है। किन्तु आपके हृदय में 'मानस' के प्रति कुछ भी भेद-भाव नहीं था। आप स्वयं 'मानस' की कथा बड़े प्रेम से सुनते थे। विद्वता के कारण आपसे बोलने को कौन कहे नेत्रों से नेत्र भी कोई नहीं मिला सकता था। बच्चे अथवा कोई भी हो उनसे रात्रि में विश्राम करने समय कहकर बड़े प्रेम से कहानी सुनते थे। कहानी सुनाने वाले निद्रा आने के कारण चुपके से बहानेबाजी करके सो जाते थे। तब आप कहते थे कि नकल करके सो गया है। अच्छा सो ले अभी मेरे स्नान आदि कराने के लिये तो जागना ही पड़ेगा।

आपने कई स्तोत्रों की रचना की थी जो सुरक्षित न रहने के कारण उपलब्ध नहीं हो रहे हैं। वे स्तोत्र बड़े सरस एवं पाण्डित्य पूर्ण थे। आप संस्कृत के एक सफल कवि भी थे। आपने 'मानस' की सुन्दर टीका लिखी थी वह उपलब्ध नहीं हो रही है। आप नित्य तीन बजे ही ब्राह्म मुहूर्त में संध्या आदि कृत्य करने के लिये प्रायः उठ जाया करते थे। 'मानस' उत्तर-काण्ड के अन्तर्गत जो 'नमामीशमीशान निर्वाणरूपं' वाली शंकर स्तुति है उसको आप एक बार देख रहे थे, देखते-देखते आपके मन में भाव आगया आपने उसी तरह की एक बड़ी स्तुति बना डाली। आप एक बार अपने पितामह श्री पंडित राज उमापति जी त्रिपाठी कृत प्रकाशित सरयू अष्टक स्तोत्र को देख रहे थे। उसके आधार पर आपने सरयू लहरी नामक स्तोत्र की रचना की।

आपका स्वर्गारोहण उत्तरायण सूर्य पश्चिमाभिमुख सायं सन्ध्या करते समय दीवाल के सहारे बैठे हुये सन् १९४० ई० में पौष सुदी नवमी गुरुवार तदनुसार दिनांक १८ जनवरी को ६ बजे रात्रि में सहसा योगियों के तरह समाधिस्थ होकर हुआ। स्थानीय गणों को यह ज्ञान तब हुआ, जब पाक निर्माण के लिये प्रार्थना करने गये। तब ज्ञात हुआ कि महाराज का श्वासावरोध हो गया है।

——— —

एक प्रश्न

३=) में होने वाले काम के लिये ३॥=) खर्च करना उचित है क्या ? मानस मणि का चन्दा मनीआडर से ही भेजना चाहिये। वी० पी० मँगाना अनुचित है।

तुलसी के राम

[श्री पं० रामकुमार उपाध्याय विशारद]

राजत राज समाज महँ,
कोसल राजकिसोर।
सुन्दर श्यामल गौर तन,
विस्वविलोचन चोर॥

यद्यपि मखशाला में, अद्वितीय, तेजस्वी, धीर, वीर, वस्त्राभूषणों से सुसज्जित विशेषतया क्षत्री एवं अन्य राजा तथा महाराजागण पधारे, शुभासनासीन हुये तथापि सन्त प्रवर बूढ़े बाबा की वाणी से उक्त शब्द ही निकले। भावार्थ यह कि उस रंगमंच के राज समाज में 'तुलसी के राम' राजकिशोर की ही अपरिमित तथा अद्वितीय शोभा प्रदर्शित हो रही थी। अतः तुलनात्मक दृष्टिकोण से कोई भी उपस्थित महीप किसी भी प्रकार से समानता करने में नितान्त असमर्थ सिद्ध हो रहा था।

आइए अब हम लोग श्री तुलसी के सहित्य में मनन करें कि उनके श्री राम जी में क्या विशेषता थी जिसका कि अन्य उपस्थिति में सर्वथा अभाव पाया जाता था।

ध्रुव-सत्य है। अनन्य भक्त प्रवर श्री तुलसीदास जी की अनिन्द्य वाणी क्या कभी अनर्गल पद प्राप्त कर सकती है? कदापि नहीं। विचार कीजिये। मनुष्मृति के अनुसार राजनीति के अष्टांग वर्णित हैं। यथाः—

'ईज्याऽध्ययन दानानि, तपः सत्यं धृति क्षमा, अलोभादि'।

१—ईज्या यज्ञ। २—अध्ययन ३—दान ४—तप ५—सत्य ६—धैर्य्य ७—क्षमा ८—अलोभादि। श्री रामचन्द्र जी आठों अंग से प्रपूरित थे। सम्पूर्ण अष्टांग परिपूर्ण कोई भी राजा कभी नहीं हुआ। किसी में दो किसी में चार ही अंग रह गये। उनके वंश की भी यही दशा रही तथा त्रैलोक्य में कहीं भी सम्पूर्णता नहीं आई प्रत्येक के सजीव प्रमाण रामायण में अवलोकन कीजिये।

प्रथम—ईज्या=एक नहीं अपने राज्य शासन काल में जो दस १० हजार १० सौ वरस रहा प्रभु राम ने करोड़ों यज्ञ किये एक-दो की क्या गणना थी यथा—

कोटिन्ह बाजि मेध प्रभु कीन्हें,
दान अनेक द्विजन्ह कहं दीन्हें॥

प्रभु का स्वरूप कैसा था :—

विश्वरूप रघुवंश मणि,
करहु वचन विस्वास।
लोक कल्पना वेद कर,
अंग अंग प्रति जासु॥
+ + +
पद पाताल सीस अज धामा,
अपर लोक अंग अंग विश्रामा॥

बालकाण्ड में राम का स्वरूप कैसा था।

देखरावा मातहि निज,
अद्भुत रूप अखण्ड।
रोम रोम प्रति लागे,
कोटि कोटि ब्रह्मंड॥

द्वितीय—अध्ययन=अन्य सभी अवतारों में तो जैसे कृष्णादि को कुछ समय शिक्षा के हेतु प्राप्त हुआ था परन्तु प्रभु राम के स्वाध्याय हेतु तो बड़ा ही समयाभाव रहा, देखिये! विगत मई अंक मणि ११ आलोक ५ शीर्षक 'रावण बध की निश्चित तिथि' लेख में श्रद्धे यसुरेश सिंह जी 'व्यथित' अग्नि वेश के मतानुसार समय सूची प्रदान कर चुके हैं कि

चैत्र शुक्ल नवमी को जन्म, चौदह वर्ष तक चारों बन्धुओं का बालचरित्र १५ वर्ष की आयु में कौशिक जी के संग मख रक्षार्थ प्रस्थानादि इससे सिद्ध होता है कि लगभग ५ वर्ष की आयु में विद्यादानारम्भ किया गया जिससे ६ वर्ष केवल शिक्षार्थ प्राप्त हो सके जो नितान्त अल्प काल था यथा :—

गुरु गृह गए पढ़न रघुराई,
अलप काल विद्या सब पाई।
जाकी सहज स्वास श्रुति चारी,
सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी ॥

तृतीय—दान = 'रहिमन सरिता के घटे कुआँ खनावत लोग' के अनुसार प्रभु राम का तो वह दान समय था जबकि वे :—

'तापस वेष विसेष उदासी,
चौदह बरिस रामु बनबासी'
भूमि सयन बलकल बसन,
असनु कंद फल मूल'।

अर्थात उनके पास दान योग्य कुछ भी नहीं अवशेष रह गया था। किन्तु उस समय प्रभु सम्पूर्ण राज्य का महादान करते हैं यथा:—

जो संपति सिव रावनहिं,
दीन्हि दियें दस माथ।
सोइ सम्पदा बिभीषनहि,
सकुचि दीन्हि रघुनाथ ॥

ऐसा ही दान तो प्रत्येक काल में सात्विकी हुआ करता है।

चतुर्थ—तप = मानव चरित्र-चित्रण सम्बन्ध से विश्व कल्याणार्थ कितना कठिन साधक का साधन काल था वह कि :—

भूमि सयन बलकल बसन,
असन कन्द फल मूल।
ते कि सदा सब दिन मिलहिं,
सबुइ समय अनुकूल ॥

पंचम—सत्य = विरक्त विदेह का प्रवचन है कि :—

राम सत्यव्रत धरम रत,
सबकर सीलु सनेहु।
संकट सहत सकोच बस,
कहिअ जो आयसु देहु ॥

षष्टम—धैर्य = महाराजाधिराज श्री दशरथ जी के वाक्य थे कि :—

जौं नहिं फिरहिं धीर दोउ भाई,
सत्यसंध दृढ़व्रत रघुराई।

अपरंच—

सत्यसंध पालक श्रुति सेतू।
'कोमल चित कृपाल रघुराई ॥
'सरल स्वभाव छुआ छल नाहीं'।

श्री भरत जी कहते हैं कि :—

सील सकुच सुठि सरल सुभाऊ,
कृपा सनेह सदन रघुराऊ।
अरिहुक अनभल कीन्ह न रामा।

सप्तम—क्षमा = भरत जी श्री मुख से क्षमा का स्वाभाविक वर्णन करते हैं कि :—

जद्यपि मैं अनभल अपराधी,
भै मोहि कारन सकल उपाधी।
तदपि सरन सनमुख मोहि देखी,
छमि सब करिहहिं कृपा बिसेषी ॥
अरिहुक अनभल कीन्ह न रामा,
मैं सिसु सेवक जद्यपि बामा ॥

श्री बजरंग दादा समर्थन करते हैं कि प्रभु राम कैसे हैं :—

प्रनतपाल रघुनायक,
करुना सिंधु खरारि।
गयें सरन प्रभु राखिहैं,
तव अपराध बिसारि ॥'

स्वयं श्री मुख के ही वाक्य थे कि :—

सन्मुख होइ जीव मोहि जबहीं,
कोटि जन्म अघ नासइ तबहीं।

तथा

अपरम—अलोभ—लंका विजय पश्चात् लंकेश विभीषण तापस राम के सम्मुख पदार्पण करते हैं कर बद्ध प्रार्थना करते हैं,

'अब जन गृह पुनीत प्रभु कीजे,
मज्जन करिय समर श्रम छीजे।
देखि कोष मंदिर संपदा,
देहु कृपालु कपिन्ह कहुँ मुदा॥

परन्तु भक्त-वत्सल भगवान श्री राम को श्री भरत लाल अत्यधिक प्रिय थे। उस काल श्री भरत जी की दशा का चिन्तवन कर करुना-सिंधु अत्यन्त अधीर हो जाते हैं। अश्रुपात होने लगता है। यथा :—

सुनत बचन मृदु दीनदयाला।
सजल भये द्वौ नयन बिसाला।
तोर कोस गृह मोर सब,
सत्य बचन सुनु भ्रात।
भरत दसा सुमिरत मोहि,
निमिष कल्प सम जात॥
तापस बेष गात कृस,
जपत निरंतर मोहिँ,
देखौं बेगि सो जतनु करु,
सखा निहोरउँ तोहिँ॥
बीते अवधि जाउँ जौं,
जिअत न पावउँ बीर,
सुमिरत अनुज प्रीति प्रभु,
पुनि पुनि पुलक सरीर'।

जगत में प्रायः युद्ध हुआ करता है। निष्कर्ष, राज्य प्राप्त करने के लिये, अपने हेतु, अपने वंशजों के हेतु, राज्य से राज्य श्री (धन) प्राप्त होती है। पर विचार कर लोग ध्यान दें कि अपने पूर्वजों में कितना त्याग था, त्याग की चरम सीमा हो चुकी थी। राज्य लिप्सा छू तक नहीं गई थी, अन्यथा लक्ष्मण उपस्थित थे क्या उन्हें लंका का राज्य धन नहीं दिया जा सकता था अथवा अयोध्या राज्य में वह कंचनपुरी लंका भी मिश्रित कर ली गई होती जैसा कि आजकल के राजे-महराजे किया करते हैं। किन्तु मर्य्यादित प्रभु राम के चरित्र में यह महान कलंक हो जाता। उनमें चिन्तवन कीजिये, लोभ का कहीं पता तक नहीं था। किष्किन्धा का राज्य सुग्रीव को प्रदान किया, तथा लङ्का विभीषण, रावण के वंशज, भाई ही को मिली। कैसा उच्चकोटि का पावन त्याग था वह। यथा:-

बहुरि बिभीषण भवन सिधायो,
मनिगन; बसन बिमान भरायो।
लै पुष्पक प्रभु आगे राखा,
हँसिकर कृपा सिन्धु तब भाषा॥

विमान (वायुयान) जो अमरों की सम्पति थी प्रभु ने भेंट स्वरूप प्राप्त किया था अतः उनका उस पर सर्वाधिकार स्वरक्षित था किन्तु राम का राज्यनीति के अंग प्रत्यंग पालन करना ध्येय तथा श्रेय हो चुका था। लोभवश मर्य्यादा लंघन न हो जाय कहीं, अतः श्रीराम जी भक्त विभीषण से कहने लगे कि:—

चढ़ि बिमान सुनु सखा बिभीषण,
गगन जाइ बरसहु पट भूषण।

सत्वर उन्होंने आज्ञा शिरोधार्य किया यथाः—

नभ पर जाइ बिभीषण तबहीं,
बरसि दिये नभ अंबर सबहीं॥
जोइ जोइ मन भावै सोइ लेहीं,
मनि मुख मेलि डारि कपि देहीं॥
हँसे राम श्री अनुज समेता,
परम कौतुकी कृपा निकेता॥

फलतः भावना प्रेरित हो श्री रामचन्द्र ने अविलम्ब अवध पहुँचने मात्र हेतु उस पुष्पक विमान को स्वीकार किया। उससे उतरते ही आपने कहाः—

उतरि कह्यो प्रभु पुष्पकँहि,
तुम्ह कुबेर पहँ जाहु ।
प्रेरित राम चलेउ सो,
हरष विरह अति ताहु ॥

सबसे श्रेष्ठ तथा अन्तिम राजनीति का अंग अवशेष रह जाता है नीति का यथोचित पालन करना आदर्श। श्रीरामचन्द्र नीति कुशल तो थे ही, जिसके राज्य में वक तथा श्वान उलूक, गिद्ध तक का न्याय होता रहे, जिसका वर्णन 'रामचन्द्रिका' में आया है कि श्वान के वाक्य थेः—

मेरो भायो करहु जो,
रामचन्द्र हित मंडि ।
कीजै द्विज यह मठपती,
और दन्ड सब छंडि ॥
वाको थोरो दोष मैं,
दीन्हों दंड अगाध ।
राम चराचर ईश तुम,
छमियो यह अपराध ॥
लोक कर्यो अपवित्र वहि,
लोक नरक को वास ।
ह्वै जो कोऊ मठपती,
ताको पुन्य विनास ॥
कालिंजरे महाराज,
कौलपत्यं प्रदीयताम ।
एतछ्रुत्वा तु रामेण,
कौलपत्योऽभिषेचितः ॥
७ श्लोकः—(बा० रा०)

विनय पत्रिका में श्रीगोस्वामी पाद पद १४६ में लिखते हैं—
जेहि कौतुक बक श्वान को प्रभु न्याव निबेरो ।

—अपरंच—

राम राज्य का रजक चक्रवर्ती राम जी के सन्निकट आता है। कहता है प्रभो ! मैंने सुना है कि शीघ्र ही संदेह श्रीवसिष्ठ जी,लखनलाल जी,भरत तथा शत्रुघ्नादि स्वर्गको प्रस्थान करने वाले हैं अतः उनके प्रवचन हैं कि हम सभी रामराज्य के रजक का बहिष्कार करेंगे क्योंकि उसने जगत जननी जानकी की घोर निन्दा की है वह महान पातकी है। अतएव उसे अमरपुर स्वपड़ोस में न रहने देंगे तथा उसका वहाँ मुख देखना अपने को पाप पंक में डाल कलुषित करना है। अतः प्रभु राम जी ! न्यायशील, दयालु भगवान !! मेरी करबद्ध विनम्र प्रार्थना है कि मुझे भी वहाँ इन लोगों के संग रहना स्वीकार नहीं है। क्या यह भी सम्भव है कि राम-राज्य का रजक नर्कवासी हो। प्रभो ? 'प्रणतपाल रघुवन्शमणि' सम्बन्धरूप आपको अपना विरद भी रक्षित करना है इस कारण दया कीजिये। मुझे आपका उस लोक में भी प्रतिदिन दर्शन लाभ होना आवश्यक है।

'कोमल चित कृपाल रघुराई' को कोटिशः धन्यवाद ! सन्तप्रवर की लेखनी अविश्राम गति से चल पड़ी वह लिखते हैं कि उस रजक को अमरलोक में निवास हो इस भाँति कि उसे कष्ट न हो सके अतः प्रभु राम ने एक विशेष प्रकार के 'विशोक' लोक नवीन की रचना की। उसके पातक पुन्ज नष्ट किये तथा उसी नव निर्मित लोक में आसीन कराया।

संग ही उसे प्रतिदिन दर्शन देना भी स्वीकार किया यथाः—

बालकांड में ही लिख डाला है किः—
सिय निन्दक अघ ओघ नसाये,
लोक विसोक बनाइ बसाये ॥

सुतरां संत शिरोमणि ने ठीक ही तो कहा था कि—
'राजत राज समाज महँ,
कौशल राज किशोर।

उस राज समाज में कौशल किशोर की ही अपरिमित शोभा थी।

———

श्रीरामचरित मानस के राम

श्री भागवतदास जी मिश्र

श्रीमद् गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने श्रीं राम-चरित द्वारा यह बताया कि—

कलप कलप प्रति प्रभु अवतरहीं।
चारु चरित नाना विधि करहीं॥

परम सत्य है। त्रयलोकी के बाहर महालोक से लेकर ब्रह्मलोक तक में, इस मृत्युलोक की एक हजार चतुर्युगी का एक दिन होता है। इतनी ही बड़ी रात होती है जिसमें जगत कर्त्ता ब्रह्माजी सोते हैं और जागने पर जो दिनारम्भ होता उसे ही 'कल्प' कहते हैं। इस प्रकार, कल्प में १४ मनु होते हैं। प्रत्येक 'मनु' इकहत्तर चौकड़ी से भी अधिक समय तक राज्य शासन करते हैं। सृष्टि रचना के आरम्भ में 'ब्राह्म' नामक महाकल्प था। उसमें सर्व प्रथम मनु, स्वायम्भुव मनु जी हुए और उनकी पटरानी श्री शतरूपा अम्बा थीं। उन्हीं युगुल दम्पति से यह नरसृष्टि उत्पन्न हुई और सर्वत्र फैल गई। उनकी तीन कन्याएँ और दो पुत्र प्रमुख थे। सबसे बड़ी कन्या 'आकूति' का विवाह रुचि प्रजापति से हुआ, मझली-'देवहूति' का विवाह श्री कर्दम प्रजापति से हुआ और छोटी 'प्रसूति' की शादी दक्ष प्रजापति से हुई। इस प्रकार उक्त तीनों प्रजापतियों की सन्तानों से संसार भर गया। दक्ष प्रजापति की महारानी 'प्रसूति' से श्री सती जी उत्पन्न हुई थीं, जिनका विवाह भगवान शङ्कर से हुआ।

श्री कर्दम प्रजापति की अर्धाङ्गी श्री देवहूति से भगवान कपिलदेव उत्पन्न हुए, जिन्होंने तत्व विचार की सीमा को प्रदर्शित कर, समस्त पृथ्वी का बड़ा सुन्दर भेद खोल दिया। नाती का असली ज्ञान सुनकर और पुत्री द्वारा उसका प्रेरक रूप समझ आदि स्वायम्भुव मनु जबकि राज्य करते करते इकहत्तरवीं चतुर्युगी आरम्भ हुई, बरबस अपने पुत्र उत्तानपाद को राज्य देकर चौथी वस्था में तप करने के लिए वन को चले गए। उन्होंने यह दृढ़ निश्चय कर लिया कि उस आदि सनातन परम दिव्य दम्पति का प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहिए। दोनों ने महाघोर तप किया, जिसे देखकर ब्रह्मा-विष्णु और शिव जी बारम्बार आए और वर मांगने को कहा किन्तु वे जरा भी विचलित नहीं हुए। उन परात्पर प्रभु के दर्शन पर तुले ही रहे। शरीर में सूखी हड्डियां ही रह गईं, तब कहीं उनकी मनोकामना पूर्ण हुई! दिव्य ब्रह्म-वाणी हुई, उसके सुनते ही—

'रिष्ट-पुष्ट तनु भए सुहाए
मानहु अबहिं भवन ते आए॥'

ऐसे तत्काल हो गए।

फिर क्या था, उन क्रीड़ाशील, सागर, आनंद महा प्रेम-घन, सच्चिदानन्द दम्पति ने दर्शन देकर कृतार्थ किया। उनकी इच्छानुसार पुत्र रूप में अवतार लेना स्वीकार कर लिया। कुछ समय बाद श्री मनु शतरूपा स्वर्ग में जाकर रहे, समय आ जाने पर वहां से आकर जब इस पृथ्वी पर अयोध्या में नृप दशरथ और महारानी कौशिल्या नाम से विख्यात हो प्रजा पालन करने लगे तो परात्पर ब्रह्म ने आकर मनुज अवतार लिा और 'राम' नाम से जनता को आनन्दित कया। पिता की बात और धर्म मर्यादा की रक्षार्थ १४ वर्ष के लिए वन में निवास किया। जिस समय 'राम' पंचवटी में श्री जानकी जी और लक्ष्मण जी के साथ रह रहे थे, वहाँ जाकर मारीच की सहायता से लंका का राजा रावण श्री वैदेही जी को हर ले गया। उस समय सती जी और भगवान शंकर, श्री कुंभज ऋषि के पास से लौटकर चले आ रहे थे कि मार्ग में राम-लक्ष्मण को सीता जी की खोज में विचरते हुए देखा। देखते ही शिव जी से नहीं रहा गया, क्योंकि

वे उनके सर्वस्व जीवन प्राण प्रिय इष्टदेव थे। अतएव उन्होंने—'जय सच्चिदानन्द जग पावन' कह कर प्रणाम किया। पर! ये ही शब्द 'सती' जी के 'मोह' के मुख्य कारण बन गए। इसके आगे जो कुछ हुआ मानस प्रेमी जन जानते ही हैं। जब सती हिमाचल के यहाँ अवतार लेकर पार्वती कहलाईं और फिर शङ्कर जी से विवाह हुआ तथा कैलास पर निवास करने लगीं तो प्रथम जन्म के चरित्र याद कर श्रीराम चरित्र को सुनने की सदिच्छा प्रगट की। शङ्कर ने सर्व प्रथम—जय-विजय के शाप की बात बताकर रामावतार की चर्चा की दूसरे—जलंधर की सूक्ष्म कथा कह कर रामावतार का होना बताया। तीसरे-नारद मोह का प्रसङ्ग दर्शाकर श्री रामावतार की कथा कही। चौथे—श्रीमनु-शतरूपा की कथा को वर्णन कर परात्पर राम के सुन्दर लीला चरित्रों का विशद रूप से वर्णन किया। इस प्रकार चार कल्पों की कथाएँ श्री रामावतार के विषय में श्रीमद्रामचरित मानस में आईं। इन सुन्दर कथाओं में यह जानना आवश्यक है कि—प्रथम कल्प के राज्य शासन कर्ता आदि स्वायम्भुव मनु की कथा को चौथी श्रेणी से लाकर क्यों वर्णन किया। सद् विचार करने पर श्रीमन्मानस प्रेमियों को यह प्रगट हो जायगा कि भगवान शिवने उन-उन कल्पों की कथा का वर्णन किया. जिनमें केवल रामावतार ही किसी कारण वश हुए हैं। शेष कल्पों को अन्य श्री हरिचरित्रों के आधार पर छोड़ दिया है। क्योंकि जब श्री गरुड़ अपना मोह अज्ञान छुड़ाने के लिए श्री काग भुसुंडि जी के पास गए थे तो उन्होंने बताया था कि

'इहां बसति मोहि सुनु खग ईसा।
बीते कलप सात अरु बीसा॥'

इस प्रकार उन सत्ताईस कल्पों में से चार कल्प मात्र ऐसे हुए जिनमें 'रामावतार अटल सिद्ध है। उन चार कल्पों के रामावतार में से दो विष्णु भगवान ने, एक क्षीरसागर निवासी महालक्ष्मी नारायणने और एक परात्पर सच्चिदानन्द दम्पति ने अवतार लिया है। इस प्रकार की सुन्दर कथा प्रसङ्ग के क्रम से वह प्रमाणित हो रही है कि सात्त्विक महान तत्त्वों की ऐक्यता को अभिन्न रूप दिखाकर अवतारी महाप्रभुओं के कार्यक्रम और स्थान को सद्भक्तों की भावनानुसार पृथक दर्शाते हुए लोक कल्याण की सुन्दर होने वाली लीलाओं का मनोरम वर्णन कर दिखाया है। जो ध्रुव सत्य है। साथ ही साथ श्री रामावतार लेने वाले महाप्रभुओं के सगुण-निर्गुण स्वरूपों का दिव्य दर्शन कराते हुए महादिव्य रामस्वरूप की विचित्र और अनुपम झाँकी को दिखाने के लिए ही—

जो स्वरूप बस शिव मन माहीं।
जेहि कारन मुनि जतन कराहीं॥

को—सबके सामने चतुर्थ युग की श्रेणी में इस लिए रक्खा है कि स्वायम्भुवमनु के ये ही प्राण प्रिय 'राम' सर्वोत्कृष्ट महाप्रभु हैं। जिन्होंने मनु जी की सन्तान मानव मात्र को कृतार्थ कर दिया और बाद में आने वाले कल्पों के नर-नारियों के लिए ऐसा दृढ़ सेतु बाँध दिया, जिसमें सात भूङ्गी ज्ञान, त्रिविध कर्म, एकादश भक्ति, और त्रयोदश त्याग के राज मार्ग अङ्कित हैं। परम ज्ञानी, विरक्त और त्रिगुणातीत मुनि घोर अंगिरस, अगस्त्य, सुतीक्ष्ण, श्रुति परस और शाँडिल्य आदि-आदि महाभागवतों ने उस अमृत का पान किया और छक कर मस्त हो गए। इस तरह चौरानबे ९४ उत्तमकोटि के महामुनि श्री राम भक्त ऋषि मुनि हुए हैं जिन्होंने भगवान शङ्कर के समान शिव पद को प्राप्त कर लिया है। बलिहारी!

हमारा आग्रह

कृपया मानस मणि वी० पी० न मँगाइये। २) का मनीआर्डर भेजिये। आपके ॥ बचेंगे।

सङ्घ-समाचार

अगस्त मास में संघ के ३७४ नये सदस्य बने। इस मास में ३० नई शाखायें स्थापित हुईं जिनका विवरण इस प्रकार है:—

शाखा संख्या १५०८ मरचा [राँची] सदस्य ६ मंत्री श्री छेदी जी साव। शा० सं० १५०६ चक्रधरपुर [सिंहभूमि] स० ६ मं० श्री गोपाल जी कुम्भकार। शा०सं० १५१० देवरिया [यू०पी०] स० ११ मं० श्री बनारसीलाल जी खेतड़ी-वाला। शा० सं० १५११ बावई खुर्द [होशंगा-बाद] स० १० मं० श्री काशीप्रसाद जी। शा० सं० १५१२ चिल्ली [हमीरपुर] स० ६ मं० श्री माताप्रसाद जी त्रिवेदी। शा० सं० १५१३ मारे-गाँव [होशंगाबाद] सं० १८ मं० श्री तारा-चन्द्र जी। शा० सं० १५१४ सर्राकिशोर [होशं गाबाद] स० १० मं० श्री ठा० गुट्टूसिंह जी। शा० स० १५१५ सर्राकिशोर [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री तीर्थप्रसाद जी बेंदेल। शा० सं १५१६ सहलवाड़ा [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री महादेव प्रसाद जी। शा० सं० १५१७ सहलवाड़ा [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री हर-प्रसाद जी राजपूत। शा० सं० १५१८ सह-लवाड़ा [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री धन्नू-लाल जी। शा० सं० १५१६ सहलवाड़ा [होशं-गाबाद] स० १० मं० श्री धन्नूलाल जी वाहरे। शा० सं० १५२० सहलवाड़ा [होशंगाबाद] स० १० मंत्री श्री धर्मसिंह जी चन्देल शा० सं० १५२१ माथनी [होशंगाबाद] स० १० म० श्री भैयालाल जी भार्गव शा० सं० १५२२ माथनी [होशंगाबाद] स० १० मं श्री विजयशंकर जी। शा० सं० १५२३ माथनी [होशंगाबाद] स० १२ मंत्री श्री बाबू रवीन्द्रकुमारजी कटक-वार। शा० सं० १५२४ माथनी [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री दलपतसिंह जी। शाखा सं० १५२५ माथनी [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री विजयसिंह जी। शा० सं० १५२६ गाड़ाघाट [होशंगाबाद] स० १० म० श्री रामप्रसाद जी। शा० सं० १५२७ सेमरा [रायपुर] स० ६ मं० श्री गेंदूराय जी। शा० सं० १५२८ पचलावरा [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री महरबान सिंह जी। शा० सं० १५२६ पचलावरा [होशंगाबाद] स०१० मं० श्री हरिप्रसाद जी शा० सं० १५३० पचलावरा [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री हर भजन उर्फ डालचन्द जी। शा० सं० १५३१ पचलावरा [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री तुलसीराम जी नेगी। शा० सं० १५३२ पचला-वरा [होशंगाबाद] स० १० म० श्री शिवशंकर जी जैसवाल। शा० सं० १५३३ पचलावरा [होशंगाबाद] स० १० मं० श्री गोपीचन्द जी सोनी। शा०स०१५३४ गुरला [राजस्थान] स० ६ मं० श्री शोभालालजी माथुर। शा०सं० १५३५ कठिया [दुर्ग] स०६ मं० श्री पं० रामानुज जी। शा० सं० १५३६ वहेरा [दुर्ग] स० ६ मं० श्री टिकेन्द्रनाथ तिवारी। शाखा संख्या १५३७ अभनपुर [रायपुर] सदस्य १४ मंत्री श्री राम-लाल सिंह ठाकुर।

इस मास में प्रेमियों ने इस प्रकार शाखायें स्थापित कराई हैं—

श्री कंज जी रामायणी काशी १८ पूर्वस्थापित १६२—२१०

श्री बद्रीदत्त जी व्यास 'मानसशास्त्री राँची २ पूर्व स्थापित २६—३१

श्री बेधड़क जी भीलवाड़ा १ पूर्वस्थापित २७—२८

विविध-समाचार

संधवाः—श्रावण सुदी ६ से १४ तक रामायण के १२५ पाठ और ११ पाठ से हवन हुआ। समाप्ति पर १५०० व्यक्तियों ने प्रसाद पाया। मन्दिर में १२ सदस्य पाठ किये।

—भागीरथ भण्ड्या

जबलपुरः—गुरुपुर्णिमा को रामायण के पाठ, सुन्दरकांड तथा श्री हनुमान चालीसा के ११०० पाठ हुए। भजन कीर्तन भी हुआ।

—हरगोविन्दसिंह

शहवाजपुरः—गुरुपूर्णिमा को श्रीमानस का अखंड पाठ १५ प्रेमियों द्वारा हुआ। तदुपरान्त हवन हुआ।

—चन्द्रशेखर शास्त्री

घेगाँवः—ग्रहण के दिन अखंड पाठ, हरि-कीर्तन हुआ। हर शनिवार को सुन्दरकाण्ड के पाठ होते हैं चितावली में भी ५ सदस्यों द्वारा अखंड पाठ हुआ।

—गणेशचन्द्र

अयोध्या (नयाघाट)ः—मानस का एक पाठ 'जेहि विधि नाथ होइ हित मोरा' से प्रति दोहों पर सम्पुट से किया। श्री नारायण दत्त जी शास्त्री भी ६ मानस के पाठ कर चुके हैं।

—पं० अम्बिकेश्वरपति त्रिपाठी

परसाहीः—दो सदस्यों ने पाठ किये।

—श्यामलाल पटेल

गातापारः—श्री हरिसंकीर्तन बड़े धूम धाम से हुआ।

—इतवारा राम साहू

राँचः—आगामी आश्विन नवरात्र में नवाह पाठ बड़े धूम धाम से होगा। जिसमें श्री विन्दु जी, श्री शिवनारायण जी व्यास तथा अन्य विद्वानों के पधारने की आशा है।

—दुर्गाप्रसाद मोदी

देवरीः—ता० १६ से २१ अगस्त तक सम्पुट सहित अखंड पाठ होकर हवन, पूजन हुआ।

—रामनारायण

कुकदाः—भाद्रपद कृष्ण जन्माष्टमी को श्री भीषमलाल मा० गु० के घर में सामूहिक रूप से मन्त्री सहित ६ सदस्यों द्वारा अखंड ज्योति जलाकर अखंड पाठ और १००२ पाठ श्री हनुमान चालीसा के हुआ। रात्रि को कीर्तन हुआ। दूसरे दिन हवन, प्रसाद वितरण हुआ।

—दाऊराम त्रिपाठी

बन्देमऊः—नागपंचमी को श्री रामबाग की स्थापना में आम्र वृक्षारोपण, श्रीहनुमान चबूतरा पर हनुमत् पताका गायन करते हुए फहराई गई—तथा बाग में प्रदक्षिणा करते हुए रामध्वनि हुई। हवन एवं प्रसाद वितरण हुआ। श्रावणी सोमवार को श्री कीर्तन भवन में कविता सम्मेलन एवं कीर्तन हुआ। श्री राजाराम वर्मा का मासिक मानस की कथा प्रारम्भ हुई। सत्संग, प्रवचन हुआ।

—छोटेलाल

पिनाहटः—अषाढ़ शुक्ल १५ को श्री हिम्मत बहादुर शर्मा के यहाँ श्री बलेश्वर महादेव जी के मन्दिर में श्री मानस का अखंड पाठ हुआ। समाप्ति पर ब्राह्मण भोजन, हवन, श्रीसत्य-नारायण की कथा तथा प्रसाद वितरण हुआ।

—गजाधर प्रसाद

चीचलीः—ता० ३०-७-५३ से ६-८-५३ तक श्रीमारुति भगवान के चबूतरे पर श्रीहरिकीर्तन श्री रामायण, श्रीसुखसागर तथा श्री शिवपुराण

का लगातार १ सप्ताह तक अखंड पाठ हुआ। हवन यज्ञादि एवं प्रसाद वितरण किया गया। ता० ६-८-५३ को नदी किनारे श्रीतपस्वनी बाई की अध्यक्षता में कुटी पर तथा श्रीलक्ष्मी मेटल वर्कस में श्री मानस का अखंड पाठ हुआ।

—लेखराम पैगवार

साँड़िया:—श्री कंज जी रामायणी, काशी वालों के उपदेश से ग्रामवासियों ने श्रीजन्माष्टमी के दिन रामायण मंडल की तरफ से श्री दुर्गा जी के मन्दिर में १४ घन्टे अखंड कीर्तन व १७ घन्टे तक श्री मानस का अखंड पाठ पूर्ण हुआ। बाद में ब्राह्मण भोजन व प्रसाद वितरण हुआ। कीर्तन में महिलाओं ने भी भाग लिया। हर शनिवार व मंगलवार को रामायण होती है।

—

सहलवाड़ा:—ता० २८-७-५३ को श्री कंज जी रामायणी काशी वाले पधारे और ८ दिन तक उनका प्रवचन हुआ और मानस सङ्घ की पाँच नई शाखायें स्थापित करायें।

—महादेव प्रसाद

सर्रा नर्मदा:—श्री कंजजी रामायणी काशी वाले ता० ८-८-५३ को पधारे और ४ दिन तक उनका प्रवचन हुआ। सङ्घ की दो नई शाखायें भी स्थापित कराये।

—तीरथप्रसाद

परौंख:—ता० ७, १४, २१, २८ जुलाई को क्रमशः १४,१६,२०,२२ पाठ श्री हनुमानचालीसा के हुए। प्रत्येक दिन सामूहिक गायन मय विवेचन के, मानस अन्ताक्षरी एवं पूर्त्ति पर आरती और प्रसाद वितरण होता था।

—कुँ०धनसिंह भदौरिया

मुगवारा:—ता० २८, २६ अगस्त को श्री पं०रामरचित जी रामायणी का प्रवचन मानस पर हुआ।

—रामस्वरूप चौधरी

मोहद:—ता० ३१ अगस्त को श्री पं० रामरचित जी रामायणी का प्रवचन मानस पर हमारे घर पर हुआ।

—चौ० भोजराजसिंह

आमगाँव बड़ा:—ता० २६, २७ अगस्त को श्री रावहमीरसिंह जी के आँगन में प्रसिद्ध रामायणी पं० श्री रामरचित जी का मानस पर प्रवचन हुआ। चारों ओर से जनता कथा श्रवण करने आती थी। श्री रामायणीजी को पुनः बुलाने के लिये अधिक से अधिक सदस्य बनना स्वीकार किया।

—राघवल्लभाशरण तिवारी

रामवन:—भाद्रपद कृष्ण ८ को श्रीकृष्ण जन्मोत्सव के दिन भगवान की सुन्दर झाँकी की सजावट बनाई गई थी। कीर्तन होकर १२ बजे रात्रि को जन्म मनाया गया। उनका पूजन आरती तथा नैवेद्य का भोग लगाया गया। बाद में प्रसाद वितरण किया गया।

सारंगगढ़:—दो नवाह पाठ हुए। साथ ही साथ कीर्तन भी हुआ। पूरे सावन भर पाठ हुआ। पूर्त्ति पर हवन, ब्राह्मण भोजन और जलूस निकाला गया।

—पुनीराम वानी

सूरत:—अयोध्या निवासी रत्न श्रीरामानुग्रहदास जी महाराज जी की श्री राम जी मन्दिर वाला जी रोड में श्री मानस की कथा कहते हैं। अमावस्या को १०८ सदस्यों द्वारा गोहत्या प्रतिवन्ध निमित्त सुन्दरकाँड का पाठ हुआ। समाप्ति पर अंताक्षरी हुई।

तुलसी जयंती समाचार

बघुवार:--ता०१७अगस्त को तुलसी जयंती के उपलक्ष में मानस का एक अखंड पाठ तथा रामध्वनि व प्रसाद वितरण हुआ।

—डा० हरशंकर लाल

शहीदगाँव:—श्री कामताप्रसाद जी विद्यार्थी के सभापतित्व में तुलसी जयन्ती उत्सव मनाया गया।

मेहरैया:—शाखा में भी ७ उत्सव मनाया गया। स्तुति, हनुमानचालीसा के पाठ तथा कीर्तन व प्रवचन हुआ।

—विश्वम्भरनाथ द्विवेदी

गया:—१८-८-५३ को तुलसी जयन्ती के अवसर पर उनकी जीवनी और काव्य शैली पर प्रकाश डाला गया। वक्तव्य, कविता, सुन्दर-काण्ड के पाठ और भाषण हुए।

—छेदनाथमिश्र

मऊरानीपुर:—तुलसी आश्रम में श्री गोस्वामी जी के चित्र का, श्री मानस सहित, विमान बड़े समारोह के साथश्री रामध्वनि करता हुआ मन्दिर में पहुँचा। अलीगढ़ निवासी पं० बनारसीदास जी रामायणी की अध्यक्षता में सभा हुई। विद्वानों, कवियों व बालकों के भाषण कीर्तन हुए।

—केशवचन्द्र श्रोत्रिय

वासनपाली:—ता० १७-८-५३ को श्रीमान गौ० पुहुपसिंह जी के भवन पर अखंड पाठ, जप, हवन, पूजन आदि हुआ। बाद में प्रसाद वितरण हुआ।

--पं० शालिग्राम

राँची:—तुलसी जयन्ती धूमधाम से मनाई गई। मानस का एकाह पाठ, हवन,पूजन तथा प्रसाद वितरण हुआ।

—सत्यनारायण तिवारी

होसिर:—श्री शिवाला में श्री तुलसी जयन्ती को मानस का पाठ हुआ। छोटा नागपुर के श्री श्रीमोर मुकुट प्रसाद जी का तीन दिन तक संकीर्तन हुआ। प्रसाद बाँटा गया।

—केदारनाथ चौधरी

पाण्डुका:—ता० १७-८-५३ को श्रीगोस्वामी जी के जीवन चरित्र तथा उनकी रचनाओं पर प्रकाश डाला गया। मानस गायन भी हुआ।

— फकीरराम देवाँगन

अनगड़ा:—ता० १७-८-५३ को श्री महावीर जी के मंदिर में अखंड रामायण का पाठ, आरती तथा प्रसाद वितरण हुआ।

—बनवारीराम

रायगढ़:—ता० १६-८-५३ को सार्वजनिक गाँधी पुस्तकालय में श्री विश्वनाथ प्रसाद जी मिश्रा सिविल जज की अध्यक्षता में जयन्ती समारोह मनाया गया। जिसमें नगर के प्रमुख साहित्यकों ने श्रद्धाँजलियाँ अर्पित कीं।

—श्यामलाल थाइत

पिनाहट:—श्रावण शुक्ला ७ को बाबा तपसी जी स्थान पर बाजार मंडी में श्री हनुमान जी के मन्दिर में अखंड पाठ, हवन साधु-ब्राह्मण भोजन तथा प्रसाद वितरण हुआ।

—गजाधरप्रसाद

डबरा:—श्री तुलसी जयन्ती पर मानस का अखण्ड पाठ, पूजन, हवन, ब्राह्मण भोजन हुआ। माननीय श्री महादेवी वर्मा, श्री विनीत जी तथा अन्य विद्वानों के भाषण तथा प्रवचन हुए। जुलूस भी निकाला गया। स्थानीय हिन्दी साहित्य सभा ने भी उत्सव मनाया।

—रामगोपालशर्मा

खम्हरिया:—श्री तुलसी जयन्ती उत्सव पर गायन, भाषण और जुलूस निकाला गया। बाद में प्रसाद वितरण हुआ।

—जमुनालाल अग्रवाल

कानपुर:—मानस समाज टी० पी० १, आरमापुर के तत्वाधान में श्री तुलसी जयन्ती परमानस का अखंड पाठ, हवन सुन्दरकाण्ड के दोहे से, जन्मोत्सव, पूजन, भाषण तथा संकीर्तन हुआ। बाद में आरती व प्रसाद वितरण किया गया।

—रामगोपाल अग्निहोत्री

पचमढ़ी:—श्री तुलसी जयन्ती उत्सव, प्रभात फेरी, जुलूस, कीर्तन, भाषण और आरती हुई। श्री कुंज जी रामायणी का १ घंटे तक प्रवचन हुआ। जनता प्रवचन से बड़ी प्रसन्न हुई।

—श्यामलाल अग्रवाल

सिद्धौर:—श्री तुलसी जयन्ती के दिन श्री सुन्दर काँड का सामूहिक पाठ व श्री पं० रामनारायण जी रामायणी का उपदेश हुआ। कुछ कविता भी हुई।

—रामभरोसे स्वर्णकार

तुमसर:—श्री तुलसी जयन्ती उत्सव में ता० १०-८-५३ को अखंड पाठ शुरू करके श्रावण शुक्ला ७ को पूर्ण हुआ। तदनंतर तुलसी जयंती पर प्रकाश व नाम माहात्म्य की महिमा पं० रुद्रदत्त जी चतुर्वेदी, श्री वृन्दावन वाले रामायणी, श्री रामदयाल जी, श्री पं० रामआसरे जी का व अन्य प्रेमी जनों का प्रवचन हुआ। ५०० जनता की भीड़ थी।

—मूलचन्द शर्मा

समनापुर (डाँगीढ़ाना) ता० ३०-८-५३ को श्री रामरक्षित जी रामायणी की अध्यक्षता में तुलसी जयन्ती मनाई गई। श्री पं० बद्रीप्रसाद जी एवं पं० गणेशप्रसाद जी रामायणी भी उपस्थित थे।

—ज्वालाप्रसाद कृषक

करेली:—नगर के हाई स्कूल में ता० १७-८-५३ को श्री श्यामसुन्दर शर्मा सम्पादक 'जयहिन्द' के सभापतित्व में श्री गोस्वामी जी की जयन्ती मनाई गई। प्रसिद्ध रामायणी पं० श्री रामरक्षित जी का मानस की उपयोगिता पर भाषण हुआ। इसी क्रम में ता० १८ से २३ अगस्त तक श्री हनुमान जी के मन्दिर में श्री रामायणी जी का प्रवचन हुआ। संघ के सदस्य भी कुछ बने। तत्पश्चात आरती होकर प्रसाद वितरण किया गया।

—मूंगाराम पाठक

भीलवाड़ा:—श्री तुलसी जयन्ती उत्सव में ता० १६-८-५३ से मानस का अखंड शुरू होकर १७-८-५३ को पूर्ण हुआ। उसके बाद सुन्दर काण्ड का पाठ व हवन हुआ। संकीर्तन, संगीत, भजन, भाषण आदि हुआ। श्रीकृष्ण जन्माष्टमी को जन्म, पूजन, आरती, कथा होकर प्रसाद वितरण किया गया।

—बैधनाथ शास्त्री

रामवन:—श्रावण शुक्ल ७ को श्री तुलसी जयन्ती बड़े धूमधाम से मनाई गई। श्री गोस्वामी जी का पूजन, नैवेद्य, कीर्तन, भाषण आदि हुआ।

रामवन समाचार

मानसआश्रमः—अगस्त मास में मानस का एक सम्पूर्ण अखंड पाठ नित्य होता रहा। इस मास में मानस आश्रम में ५०२॥-)। खर्च हुए और ४६४॥≡) की आय हुई। श्री मारुति राग भोग में २८४।=) खर्च हुए और २६६।) की आय हुई। इस प्रकार आश्रम में ३७॥।=)। और रागभोग में १८=) कुल ५६)। की कमी रही। पिछली कमी २०१२।-) सहित अब कुल २०६८।-)। की कमी रह गई। इस मास में अखंड संकीर्तन के कारण खर्च अधिक हुआ। प्रेमियों ने सहायता भी अधिक की पर खेद है कि कुछ कमी रह ही गई।

मानस आश्रमः—

१-८-५३

६) श्री सेठ बिरदीचन्द्र पोद्दार, नागपुर

२-८-५३

११) श्री शंकरदयाल दुबे, शिप्रा
७॥) श्री शिवराज जी सुराणा, सेंधवा
११) श्री कन्हैयालाल छगनलाल, ,,
११) श्री भागीरथ भरड़या, ,,

४-८-५३

१) श्री विवेकदास मन्त्री, भटगाँव

६-८-५३

६) श्री बी० पी० शुकला, पन्ना
१) श्री कुँवर धनसिंह भदौरिया, परौंख

७-८-५३

२) श्री गंगासागर पाठक, इटाढ़ी
६) श्रीमती रतनी बाई चोखानी, नागपुर
३०) श्री सेठ चन्द्रप्रकाश, ,,

८-८-५३

१०) श्री वृजभूषण गनेड़ीवाला, गोरखपुर

१०-८-५३

१२) श्री लक्ष्मणकरण जी मेहता, बांदा

१२-८-५३

२) श्री गोविन्दलाल जायसवाल, कटोरी

१३-८-५३

५) श्री चन्द्रबहादुरसिंह, बिलासपुर

१४-८-५३

५) श्री कामताप्रसाद शुक्ल, जबलपुर
५) श्री कन्छेदीलाल वर्मा, चीचली
५) ,, श्रीनिवास शारदा सेठ, राजनाँदगाँव
५) ,, एम० सी० पाण्डे, लखनऊ
१०) ,, सेठ बिरदीचन्द्र पोद्दार, नागपुर
१०) ,, सेठ रामगोपाल पोदार, ,,
१०) ,, गणेश नारायण जोमाली, वर्धा
१५) ,, केशवदेव पोद्दार, पुलगाँव

१६-८-५३

५) ,, बैजनाथ लक्ष्मीनारायण, आसनसोल
४) ,, ब्रह्मचारी कल्याणदास, कनखल
५) ,, दौआराम देवाँगन, कुरूद
५) ,, सदाराम साहू, बाँधाबाजार
१) ,, मदनलाल प्रभुदयाल, हावड़ा
१००) श्री सेठ चन्डीप्रसाद मोर, कलकत्ता
५) श्री चन्द्रिकाप्रसाद राय, छपरा

२०-८-५३

५) श्री जी० डी० कौशिक, सिकन्दराबाद
११) श्री सच्चिदानन्द प्रसाद, पटना

२१-८-५३

११) श्री विश्वम्भरलाल अग्रवाल, कलकत्ता
१) ,, अयोध्याप्रसाद श्रीवास्तव, खागा
१) ,, राम राखनसिंह, खागा
१७) श्री सुमनसिंह भट्ट, बाराद्वार द्वारा

(सर्व श्री डी० आर० शर्मा ५), सुमनसिंह ५), चन्द्रकेशसिंह २), फूलसहाय २), टी० एस० गौतम १), रुक्मणलाल १) जगन्नाथलाल १)।

२) श्री गोकुलचन्द्र चन्द्रप्रकाश बजाज-हल्दवानी

५) श्री नटवरलाल जी महता, इलाहाबाद

२४-८-५३

५) श्री पीलाराम जी शिरमौर, छेरकापुर

७) श्री ठा० आनन्दसिंह, पुटपुरा

२५-८-५३

५) श्री घनश्यामदास सातूवाला, पेण्ड्रा

१४) श्री नकछेद प्रसाद जी स्वर्णकार, अमोदा

२६-८-५३

२।) श्री चेतनसिंह सोय, नगरी

३) श्री चौ० महरबानसिंह, पचलावरा

२) श्री चौ० शिवरतन सिंह, चौराहेट

२८-८-५३

१०) श्री मालूराम सिंघानिया, खम्हरिया

५) श्री द्वारकादास राठी, कलकत्ता

२६-८-५३

५०) श्री जी० पी० जायसवाल, एण्ड कं० इलाहाबाद

३॥≡) चढ़ोत्री

— ——

४६४॥≡)

श्रीमारुतिरागभोग

४-८-५३

५) श्री ओमप्रकाश जी दिल्ली

१) ,, रामशरण जी श्रोत्रिय, नगीना

७-८-५३

२) श्री छोटेलाल अग्रवाल, इलाहाबाद

१०-८-५३

५) श्री रामेश्वरसिंह वकील, गोंडा

११-८-५३

३) श्री बाबू उग्रहनारायणसिंह, दधपा

१३-८-५३

१।) श्री रामरतन शर्मा, झांसी

१४-८-५३

१७२) श्री सेठ बिरदीचन्द्र पोद्दार, नागपुर

१६-८-५३

५) श्री रामचन्द्र शर्मा बी० ए० दिल्ली

५) ,, मदनलाल प्रभुदयाल, हावड़ा

१०) श्री हरचरण लाल कन्देले, डबरामंडी

२।) श्री मुरलीधर भारद्वाज, छिंदवाड़ा

२०-८-५३

५) श्री रघुवीरनारायण भटनागर, बरेली

५) श्री भागवतपाण्डेय, विरार (बम्बई)

२१-८-५३

५) श्री चौ० सुखलाल, सेकन्दराबाद

१०) श्री नरेन्द्रसिंह, अछल्दा

१।) श्री मती अन्नपूर्णा देवी, डुमरिया

२२-८-५३

२) श्रीबलराम जी अइयर, सिकन्दराबाद

२८-८-५३

२१) श्री मालूराम सिंघानिया, खम्हरिया

५) श्री द्वारकादास राठी, कलकत्ता

———

२६६।) कुल। दाताओं को धन्यवाद!

मानस यज्ञ :—में साधक शुल्क में ४०) की आय हुई और मंगाई पुस्तकों में ५॥) की विक्री हुई। इस प्रकार कुल ४५॥) की आय हुई जो पिछली बाकी ४०६॥) में घटाने से अब ३६१) बाकी रहे।

३-८-५३

२०) श्री कन्हैयालाल छगनलाल, सेंधवा

२०) श्री भागीरथ भण्ड्या, ,,

——

४०)

श्री रामनाम मंदिर :—के दो भाग हैं। एक नीचे की कुटिया और एक मंदिर। श्री डा० के० सी० मिश्र का कथन है कि मंदिर का हिसाब पूरा हो चुका है कुटिया का बाकी है। उनकी इच्छानुसार इस प्रकार जमा खर्च किया गया। ६६५।=)॥। आना बाकी था। २१७।=) दूसरे विभाग में जमा थे। दघपा के श्री बाबू देवराज सिंह से १) प्राप्त हुआ। कुल २१८।=), ६६५।=)॥। में घटने से ७४७)॥। बाकी रहा। जो अब कमल कुटीर के खाते में नाम डाला गया। श्री रामनाम मंदिर का हिसाब पूरामाना गया।

श्री तुलसी मंदिर :—इस मास में ६६॥) प्राप्त हुए। पिछली बाकी १२०।,॥। में यह घटाकर अब २३।॥)॥। की पूर्ति करना बाकी है। जयपुर से समाचार आया है कि मूर्ति लगभग तैयार है। इसकी निछावर शीघ्र भेजनी होगी और मंडप भी पूर्ण कराना होगा। आशा है कि शाखायें और प्रेमीजन इस विभाग की सहायता शीघ्र करेंगे।

३-८-५३

१०) श्री कन्हैयालाल छगनलाल, सेंधवा
१०) श्री सर्वेश्वर कम्पनी, ,,
१०) श्री घीसालाल बद्रीलाल, ,,
११) श्री भगवान सहाय गुरजीलाल जी, ,,
७) श्री पं० देवी प्रसाद पालीवाल, ५) श्री बाबू सीताराम पालीवाल, २) नगरिया

७-८-५३

१) श्री बाबू मनबहाल सिंह, कैम्बो

११-८-५३

१०॥) शाखा वगदेई मंत्री श्री धरमसिंह साहू द्वारा

२१-८-५३

१५) श्रीमंत्री नगर रामायणसमिति १०), महिलामंडल ५), गोटेगाँव

२४-८-५३

५) श्री शिवराजसिंह ध्रुव, डाही
५) ,, उत्तम लाल शर्मा, झालदा

२८-८-५३

१०) श्री द्वारिकादास राठी, कलकत्ता

२६-८-५३

२) श्री शिवदुलारे मिश्र मंत्री, विलासपुर
——
६६॥)

पारायण मंदिर :—श्री लक्ष्मण करण वि० मेहता बाँदा से ३) और शाखा कुन्डेल से श्री घसियाराम साहू से ५) प्राप्त हुए हैं पहिले के ११) सहित अब १६) जमा हैं।

गोशाला :—इस मास में ५२ की आय हुई पिछली रकम २०३।॥=)॥। सहित अब २५६।॥=)॥। जमा हैं।

११-८-५३

१) श्री बाबू प्रहलाद सिंह, दघया
५१) ,, नन्द किशोर जी, देहली
——
५२)

श्री रामसंस्कृत विद्यालय भवन :—की स्थिति पूर्ववत् है।

कुटीर विभाग—

नर्मदाखंड कुटीर :—इस मास में १२) प्राप्त हुए। पिछली कमी १६७॥)॥। में से घटाने से अब १८५॥,)॥। बाकी हैं।

५-८-५३

३) शाखा रामपुर श्री प्रेमचन्द्र अग्रवाल द्वारा

२५-८-५३

३) श्री लक्ष्मीनारायण जी, अमोदा
३) ,, नकछेद प्रसाद स्वर्णकार, अमोदा

२६-८-५३

३) ,, शिवदुलारे मिश्र मंत्री विलासपुर
——
१२)

खम्हरिया कुटिया :—इस मास में ५२=) प्राप्त हुए। पिछले ६६॥=) सहित अब कुल १५१॥।) जमा हैं।

३-८-५३

१०) श्री जुगुल रामयनकार, कुटेली

४-८-५३

१४=) ,, विवेकदास मंत्री, भदगाँव

२६-८-५३

१५) ,, दद्दुआ साहू मंत्री, भड़खानो

३०-८-५३

१३) ,, तीरथराम मंत्री, बुन्देली

———

५२=)

डाँगीढाना और कोरी कुटिया :—की स्थिति पूर्ववत् है।

मानस प्रचार :—अगस्त मास में सदस्य शुल्क से १७२=) प्राप्त हुए। खर्च कार्यालय में १२४।≡), चिट्ठी खर्च में ५६॥≡) और छपाई में १६) कुल २०३=) खर्च हुआ। ३१) की कमी रही। जो पिछली बचत ७५।)।।। में घटाने से अब ४५।)।।। जमा रहे।

श्रीरामनामलड्डू :—इस मास में १६३ श्रीराम नाम लड्डू तैयार हुए। १५५ लड्डू दैनिक क्रम में श्री मारुति समर्पण हुए। बाकी अक्षय तृतीया के लिये रखे गये। केन्द्रों की स्थिति इस प्रकार है—परौंख १०७, लादीगढ़ ८१, चैयासा ४८, मुलढाना ५०।

शुभागमन :—परम पूज्य महात्मा श्री शंकर दास जी रामवन में ही विराज रहे हैं, चित्रकूट के बाबा श्रीगोविन्ददास जी इस मास में आये और अखंड संकीर्तन में प्रमुख भाग ले रहे हैं। सिकन्दराबाद दक्षिण से श्री बलराम अय्यर डिप्टी चीफ आडीटर और बम्बई से श्री नटवरलाल महता चीफ आडीटर सेन्ट्रल रेलवे, श्री मारुति भगवान के दर्शन करने आये। पं० श्री पति डिब्रूगढ़ वापस गये।

अखंड संकीर्तन

श्रावणमास के लिये प्रारम्भ किया गया अखंड संकीर्तन भाद्रमास तक के लिये बढ़ा दिया गया। ग्राहकों की सेवा में यह अंक पहुँचने तक यह पूर्ण हो जायगा। और आश्रम में आश्विन के मानस यज्ञ की तैयारी शुरू हो जायगी।

———

प्राप्ति स्वीकार

विन्ध्य प्रदेश के सूचना एवं प्रचार विभाग से निम्न साहित्य प्राप्त हुआ है।

१—मंगल वेला—स्वतंत्रता का सातवाँ पर्व

२—विन्ध्यप्रदेश शासन

३—विन्ध्यप्रदेश विधान सभा

४—विन्ध्यप्रदेश वार्षिक प्रशासन विवरण १९५२

५—विन्ध्यप्रदेश के आदि वासी

६—विन्ध्यप्रदेश विद्युत प्रसार

७—विन्ध्यभूमि त्रैमासिक का मार्च अंक

साहित्य चित्रों तथा आंकड़ों से परिपूर्ण है और इसे पढ़ने से मालूम होता है कि प्रदेश बड़ी तीव्रगति से उन्नति कर रहा है। आशा है निकट भविष्य में प्रदेश की प्रजा को स्वर्ग की उपलब्धि हो जायगी।

शारदा प्रसाद

———

  रजिस्टर्ड नं०—एन ८७१

रामवन के विविध कार्य

१—वर्ष में श्रीरामचरितमानस का दो पाठ करने की प्रतिज्ञा करने वाले सज्जन मानस संघ के सदस्य बनाए जाते हैं। आजीवन शुल्क ॥) है। जहाँ नौ सदस्य हो जाते हैं, वहाँ शाखा बन जाती है। इस समय देश में मानस संघ के ३२१०१ सदस्य हैं और १५३७ शाखायें हैं।

२—रामचरितमानस का प्रचार एवं अध्ययन व्यापक करने के लिए यह 'मानस मणि' मासिक पत्र बारह वर्ष से निकल रहा है। इस का वार्षिक मूल्य ३) है।

३—तुलसी साहित्य का प्रकाशन मानस प्रकाशन लिमिटेड द्वारा होता है। कम्पनी का प्रत्येक शेयर १०) का है। कम्पनी १६ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है। स्थायी ग्राहक शुल्क २) है। स्थायी ग्राहकों को प्रकाशित ग्रंथों पर २५% कमीशन दिया जाता है।

४—श्रीरामचरितमानस पत्र व्यवहार विद्यालय द्वारा मानस संघ घर बैठे श्रीरामचरितमानस की शिक्षा देता है। विद्यालय का पाठ्य विषय तीन वर्षों का है और प्रथम वर्ष का शुल्क १०) है।

५—मानस आश्रम में नित्य अखण्ड मानस पाठ होता है। यहाँ रह कर साधक एकान्त में साधन भजन करते हैं।

६—तुलसी संग्रहालय भी रामवन में है।

७—मानस संघ राम नाम लड्डू लिखने का प्रचार करता है। ये लिखित रामनाम श्रीमारुति जी को अर्पण किये जाते हैं। २७ करोड़ अर्पित हो चुके हैं।

८—श्री राम संस्कृत विद्यालय में वाराणसेय-परीक्षा के पाठ्यक्रम के साथ मानस अध्ययन की भी सुविधा रखी गई है।

हर विभाग में आपका सहयोग अपेक्षित है।

'मानस मणि'

पो०—रामवन (सतना)

ग्रा० न०—

श्री—

सम्पादक—सुदर्शन सिंह

प्रकाशक—शारदा प्रसाद, मन्त्री, मानस सङ्घ, रामवन, (सतना)। मुद्रक—माधो प्रिंटिङ्ग वर्क्स, प्रयाग।

गुरुकुल-पत्रिका



भाग ११ नवम्बर १९५३ आलोक ११
वार्षिक मूल्य तीन रुपया

श्री मारुति भगवान की सेवा

रामवन के श्री मारुति भगवान की विविध सेवायें प्रेमियों द्वारा बराबर हुआ करती हैं। इनमें प्रमुख हैं।

१—श्री रामनाम लड्डू की सेवा
२—रागभोग की सेवा
३—मानस श्रवण कराने की सेवा
४—जप, संकीर्तन आदि की सेवा
५—पोशाक आदि की सेवा

१—अब तक ७॥ करोड़ श्री रामनाम समर्पण होकर श्री रामनाम मन्दिर में रखे जा चुके हैं। विगत चैत्र नवरात्र में एक नौका समर्पित हुई थी। प्रेमियों को उत्साह पूर्वक श्री रामनाम लड्डू लिखकर भेजना चाहिये। अपने यहाँ केन्द्र बनाना चाहिये जिसमें पुनः नौका समर्पण हो।

२—रागभोग के लिये प्रेमी रुपये भेजा करते हैं। यह सुगम है। पर सामग्री भेजना और भी उत्तम है। अभी कुछ प्रेमियों ने चना भेजा था। अपनी भेजी वस्तु भोग में काम आवे इसमें विशेष सन्तोष होता है। चना दाल गुड़ शक्कर तिल आदि भेज सकते हैं। गेहूँ चावल पर तो अभी एक स्थान से दूसरे स्थान भेजने में रोक है। लगने को तो मकाई जुवार बाजरा आदि भी सेवा में सहर्ष लगेगा।

३—विविध प्रेमियों की ओर से श्रीरामचरित मानस के नवाह, अखंड पाठ आदि हुआ करते हैं।

४—इसी प्रकार श्री हनुमान चालीसा के तथा जप की भी सेवा होती रहती है। अभी दो मास का अखंड संकीर्तन हुआ ही है। आगे भी होना संभव है।

५—श्री मारुति-भगवान के आभूषण, पोशाक, पर्दा, पताका, पात्र आदि की सेवा भी विविध अवसरों पर प्रेमी करते हैं।

श्रद्धा और भक्ति पूर्वक की गई इन सात्विक सेवाओं ने ही रामवन का वातावरण शुद्ध और शान्त बना दिया है। यहाँ साधन भजन करके प्रेमी जन अनुपम अनुभूति उपलब्ध करते हैं। जो सज्जन आकर यहाँ रहना चाहें, पत्र व्यवहार करें। किसी प्रकार की सेवा करना चाहें वे भी अपनी इच्छा की सूचना दें। यथा संभव व्यवस्था की जायगी।

—:०:—

बिहार प्रान्त के मानस प्रेमियों और मानस सङ्घ की शाखाओं से विशेष निवेदन

लोहारदगा—(राँची) सम्मेलन में भाग लेकर अनुगृहीत करें। स्वयं आवें तथा मित्रों को लावें। श्री अवध से रामलीला मंडली आ रही है। विधि-पूर्वक विवाह होगा जो बड़ा मनोरंजक होगा। दूसरे पंडाल में ७२ घन्टे अखंड संकीर्तन होगा। बिहार प्रान्तीय तथा बाहर के व्यासों के प्रवचन होंगे। चक्रधरपुर शाखा आगन्तुक व्यास तथा मन्त्रियों का स्वागत करेगी। सम्मेलन विशेष रूप से आदिवासियों के लिये तो रहा है। राँची तथा हजारीबाग की शाखाओं के मन्त्री विशेष रूप से इसका प्रचार करने की कृपा करें।

निवेदक
बद्रीदत्त (व्यास)

— ——



मानस मणि

राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं॥

मणि १२ | रामवन—कार्तिक, मानस संवत् ३८०— नवम्बर १९५३ ई० | आलोक ११

मानस की सूक्तियाँ

राम सदा सेवक रुचि राखी। बेद पुरान साधु सुर साखी॥

बिषई जीव पाइ प्रभुताई। मूढ़ मोह बस होहिं जनाई॥

अनुचित उचित काज किछु होऊ। समुझि करिअ भल कह सब कोऊ॥
सहसा करि पाछे पछिताहीं। कहहिं बेद बुध ते बुध नाहीं॥

जौं परिहरहिं मलिन मन जानी। जौं सनमानहिं सेवक मानी॥
मोरे सरन राम की पनहीं। राम सुस्वामि दोष सब जनहीं॥

देव काह हम तुम्हहिं गोसाईं। ईंधन पात किरात मिताई॥
यह हमार अति बड़ सेवकाई। लेहिं न बासन बसन चोराई॥

पाप करत निसि बासर जाहीं। नहिं पट कटि नहिं पेट अघाहीं॥

लोकहुँ बेद बिदित कबि कहहीं। राम बिमुख थल नरक न लहहीं॥

———

(७५२)

दुख तभी तक है जब तक हम स्वप्न को सत्य मानते हैं। उसकी वास्तविकता जान लेने पर दुख कैसा ?

(७५३)

यदि शरीर या शरीर के सम्बन्धियों से मोह है तो ज्ञान हुआ ही नहीं।

(७५४)

मुक्ति कोई ऐसी वस्तु नहीं जो मरने पर ही मिले। उसे तो इसी जीवन में पाना होगा ?

(७५५)

श्रद्धालु के लिये दो शब्द ही पर्याप्त हैं। पर कुतर्की के लिये सम्पूर्ण शास्त्र भी पर्याप्त नहीं।

(७५६)

कर्म, वासना के क्षीण होने का साधन है। ज्ञान तो पराकाष्ठा है।

(७५७)

कर्म के द्वारा ही कर्म फलका आत्यन्तिक नाश करने की चेष्टा ठीक कीचड़ से कीचड़ धोने जैसा ही है।

(७५८)

जिज्ञासा जितनी ही अच्छी है,कुतर्क उतना ही बुरा।

(७५९)

शास्त्र ऐसे नहीं जिन्हें केवल पढ़कर ही समझ लोगे। उनका रहस्य समझने के लिये अनुभव की आवश्यकता है।

(७६०)

मन जिन साँसारिक वस्तुओं को चाहे उन्हें छोड़ दो। यही उसके वश करने का एक मात्र उपाय है।

(७६१)

ज्ञान की बातें करना चाहे जितना सरल हो, पर इससे अनुभव कुछ भी नहीं होगा।

(७६२)

फल--निश्चय के बल का ही विकसित रूप है।

(७६३)

जगत में जो भी आनन्द प्रतीत होता है वह आत्मा का ही आनन्द है। नहीं तो नीरस जगत में आनन्द कहाँ ?

(७६४)

यद्यपि आनन्द सदा ही पवित्र है पर अभिव्यंजक की पवित्रता और दोष से वह हेय और उपादेय होता है।

(७६५)

जो आदि और अन्त में होगा वही मध्य में भी होगा।

(७६६)

जब तक दूसरे की सत्ता है, तब तक भय रहेगा ही।

(७६७)

जो उत्पन्न होता है, जो बनाया जाता है, वह नश्वर ही होगा।

(७६८)

विकाश के पूर्व जो स्थिति थी, वही होगी पूर्ण विकाश में भी। अन्तर इतना ही है कि पहली में होता है अज्ञान एवं अनित्यता तथा दूसरी में ज्ञान, नित्यता और पूर्णता।

(७६९)

किसी विशेष कारण से होने वाला एकाएक वैराग्य, स्थायी नहीं होता।

(७७०)

अस्थाई वैराग्य में उतावले मत बनो। ऐसा न हो कि त्याग कर फिर पश्चाताप करो।

(७७१)

वैराग्य किसी के कहने से नहीं होता, वह स्वयं होता है। हां, दूसरों के वचन उसके उद्रेक में निमित्त हो सकते हैं।

ऋषि-गीता

[दशम भवन]

सुदर्शन सिंह

अवगुन तजि सबके गुन गहहीं।
बिप्र धेनु हित संकट सहहीं॥
नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका।
घर तुम्हार तिन्ह कर मन नीका॥

जो अवगुणों को छोड़कर सबके गुण ही ग्रहण करते हैं और ब्राह्मणों तथा गायों की रक्षा एवं सेवा के लिये विपत्ति भी उठाते हैं, संसार में जो नीति-निपुण प्रसिद्ध हैं, उनका मन आपके लिये अच्छा भवन है।

श्री भरत लाल जी से मर्यादा पुरुषोत्तम ने स्वयं कहा है—

'सुनहु तात मायाकृत,
गुन अरु दोष अनेक।
गुन यह उभय न देखिये,
देखिय सो अविवेक॥"

भगवान श्री कृष्णचन्द्र ने उद्धवजी को उपदेश करते हुये श्रीमद्भागवत के एकादश-स्कन्ध में इसे स्पष्ट किया है—

'गुणदोषदृशिर्दोषः गुणस्तूभयवर्जितः।'

गुण और दोष दृष्टि के दोष हैं। जिससे हमारा स्नेह है, जिसमें हमारा अपनत्व है, उसके दोष भी गुण जान पड़ते हैं और जिससे हमारा द्वेष हो जाता है, उसके गुण भी दोष प्रतीत होते हैं। दृष्टिकोण के भेद से एक ही कार्य किसी को गुण और किसी को दोष जान पड़ता है। यह गुण-दोष देखने वाली वृत्ति दृष्टि का दोष है। यह 'अविवेक' है। इसलिये सर्वोत्तम मार्ग तो यह है—

अन्यस्य दोष-गुण चिन्तनमाशुमुक्त्वा
सेवाकथारसमहो नितरां पिबत्वम्॥

—भागवत माहात्म्य ४।८०

दूसरों के दोष एवं गुण का चिन्तन छोड़ कर सबको भगवत्स्वरूप समझकर सबकी यथाशक्य सेवा की जाय और भगवान की मंगल कथा का रसास्वादन किया जाय।

'जड़-चेतन गुन-दोषमय,
विस्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुन गहहिं पय,
परिहरि बारि बिकार॥"

सृष्टिकर्ता ने सम्पूर्ण सृष्टि को ही गुण-दोषमय बनाया है। जड़ हो या चेतन, यहाँ कोई पदार्थ ऐसा नहीं, जिसमें गुण ही गुण हों दोष न हों और कोई ऐसा भी पदार्थ नहीं, जिसमें दोष ही दोष हों, कोई गुण न हो। जब हम किसी वस्तु या व्यक्ति में दोष देखते हैं तो वह दोष उस वस्तु या व्यक्ति में हो या न हो, हमारे चित्त में दोषवृत्ति का उदय तो होता ही है। हमारा चित्त उससे मलिन होता है। इसी प्रकार हम जब किसी में गुण देखते हैं तो वह गुण उसमें भले न हो, हमारे चित्त में गुण वृत्ति बनती है। इसलिये दोष देखने में अपनी हानि ही हानि है और लाभ कुछ नहीं है। गुण देखने में अपनी हानि कुछ नहीं, केवल लाभ ही लाभ है। कहीं एक मरा कुत्ता पड़ा था। दो सन्त उधर से जा रहे थे। उनमें एक ने कहा—'कितना निकृष्ट जीव है। मर कर भी दुर्गन्धि फैलाता है।' दूसरे सन्तने कहा—'इसके दाँत कितने श्वेत हैं। अवश्य पूर्वजन्म में कोई पुण्य किया होगा इसने।' इन दोनों सन्तों में से दूसरे सन्त का आदर्श ही उत्तम एवं ग्रहण करने योग्य है।

'विप्र धेनु हित संकट सहहीं।'

ब्राह्मणों एवं गौओं की रक्षा के लिये, उन्हें सुखी करने के लिये जो स्वयं कष्ट उठाते हैं। अपने को विपत्ति में डालकर भी उनकी रक्षा करते हैं, वे धर्म के तत्व को ठीक समझते हैं। वे सच्चे धर्मात्मा हैं। स्वयं परात्पर परमब्रह्म निखिल ब्रह्माण्डनायक सच्चिदानन्द घन श्री राम भी—

'बिप्रधेनु हित नर तनु धरहीं।'

ब्राह्मणों की रक्षा, ब्राह्मणों की सेवा और गायों की रक्षा तथा गायों की सेवा तो भगवान का अपना काम है। जो इस काम में लगते हैं, वे भगवान के निजी काम में योग देते हैं। उनके काम का महत्व भगवत्पूजा से किसी प्रकार कम नहीं है। जो गौ तथा ब्राह्मणों की रक्षा एवं सेवा के लिये विपत्ति उठा लेते हैं, उन्होंने तो ठीक उस प्रकार भगवत्कार्य के लिये अपने को संकट में डाला है, जैसे जटायु ने रावण के हाथ से श्री जानकी जी को छुड़ाने के लिये संकट में डाल लिया था अपने को। उनके कार्य को प्रभु सबसे श्रेष्ठ मानते हैं। सर्वाधिक प्रिय हैं वे पुरुष श्री राघव के।

'नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका।'

जो किसी का दोष नहीं देखता, सबमें गुण ही देखता है, वह सर्वत्र धोखा खाता होगा। धूर्त लोग उसे ठगते ही रहते होंगे। गो-ब्राह्मणों की रक्षा के उत्साह में वह अकारण भी अपने को विपत्ति में डाल लेता होगा। इन सब शंकाओं का निवारण कर दिया गया यहाँ। वे इतने नीति कुशल होते हैं कि संसार उनके पद चिह्नों पर चलता है। उनके द्वारा स्थापित नीतिमार्ग दूसरों को पथ-दर्शन देता है। उदाहरण देखना हो तो महाभारत मे श्री विदुरजी की नीति और उनका जीवन देखना चाहिये। पितामह भीष्म भी इसके आदर्श हैं। मानस में श्री भरत लाल एवं हनुमान जी के चरित देखने योग्य हैं इस विषय में।

अन्याय करना पाप है और अन्याय सहना भी पाप जैसा ही है। किसी में दोष नहीं देखना चाहिये; पर किसी के भुलावे में नहीं आना चाहिये। दोष न देखकर गुण देखना सन्त का चिह्न है और ठगे जाना अज्ञान का। सन्त अज्ञानी नहीं होता। उसे ठगा नहीं जा सकता। जान बूझकर वह किसी के छल को किसी कारण सह ले, उपेक्षा कर दे उसकी यह दूसरी बात है।

गौ एवं ब्राह्मणों की रक्षा भी वही कर सकेगा जो नीति-निपुण होगा। केवल उत्साह एवं त्याग से रक्षा नहीं होती। उत्साह और त्याग होने पर भी नीति कुशलता न हो तो रक्षा के स्थान पर अपने अटपटे व्यवहार से रक्ष्यका संकट बढ़ जाने की सम्भावना रहती है। अतः रक्षा का दायित्व लेने वाले को आदर्श नीति-निपुण होना चाहिये। नीति-निपुण का अर्थ है कि वह स्वयं अन्याय नहीं करेगा और किसी के अन्याय को चलने नहीं देगा। उसे ठगा नहीं जा सकता। व्यवहार में पूरा सावधान रहता है वह।

यह दशम भवन भी लोकनेता का आदर्श रखता है, किन्तु यह लोकनेता सामान्य लोकनेता नहीं है। यह जन साधारण का अग्रणी नहीं। यह गो एवं ब्राह्मणों का सेवक है। धार्मिक नेता है यह। गो (धर्म) ब्राह्मण (शास्त्र) का यह संरक्षक है। ऐसे धार्मिक नेता का स्वरूप इसमें निर्दिष्ट हुआ है।

इस भवन में भी उपासना की आवश्यकता नहीं बताई गई है। यह निष्काम कर्मयोग का ही मार्ग है। कहीं किसी में दोष न देखकर सर्वत्र सबके गुणों पर ही दृष्टि रखता हुआ, गौ-ब्राह्मणों की सेवा में विपत्ति उठाने से भी जो हिचकता नहीं और व्यवहार के क्षेत्र में जो आदर्श नीति-निपुण है, उसका मन तो श्रीराम के लिये 'नीका' भवन है।

श्री मानस दोषारोप निराकरण

[दण्डी स्वामी श्री प्रज्ञानानन्दजी सरस्वती०]

मानसमणि ११।८ में श्री मानस में से लगभग बीस प्रकार के दोषों का प्रदर्शन लेखक महाशय ने किया है। उनमें से नौ प्रकार के दोषों का निकास मानसमणि ११।११ में किया गया। शेष दोषों में से नीचे कुछ दोषारोपों का निराकरण यथामति किया जाता है।

१ भाषाहीन (शब्दगत-दोष)

इसका उदाहरण 'देख महोख ऊँट बिसराते' देकर लिख मारा है कि "संस्कृत व्याकरण के अनुसार 'वेशरायते' ऐसी क्रिया होती है। संस्कृत भाषा का प्रयोग बिगाड़कर 'बिसराते' कर दिया है—। अब यह क्रिया न हिंदी की हुई न संस्कृत ही की रह गयी।"

(१) संस्कृत व्याकरण के अनुसार ही भाषा में शब्दारंभ के अक्षर में के 'ए' का 'इ' आदेश होता है, यथा केदार = कियारी, एषणा ईषणा। इसी नियमसे वेशरायते = बिसरायते हुआ। (मानस व्याकरण पृ० ५६।६ पं० वि० त्रिपाठी जी कृत देखिये)

(२) आदि में न होने वाले क, ग, च, ज, त, द, प, य और व का प्रायेण लोप हो जाता है (क ग, च ज त द पयवाँ प्रायेण लोपः। यथा दैव = दैअ; भुवन = भुअन; जीवत = जीअत = जिअत; सुवासिनी = सुआसिनी (भा-व्याकरण) इसी नियम से बिसरायते = बिसराअते = बिसराते।

ऊपर के 'दैअ' आदि शब्द हिंदी हैं इसमें लेखक महाशय को भी शंका न होगी। अब पाठक ही विचार करें कि 'यह क्रिया हिंदी की हुई या न हुई।'

'मोह जनित भ्रम मन में जिनहीं।
मानस में ते दोष निरखहीं।'

२ अश्लील (शब्दगत दोष)

'भा भिनुसार गुदारा लागा, लेखक महाशय कहते हैं कि "'गुदारा' यह शब्द लज्जाजनक है।' इसको अश्लील कहने का कारण उनकी समझ से अधोरेखाँकित शब्द ही मालूम पड़ता है। पर इस शब्द को अश्लील मानने से 'गुदरना', गुदड़ी, गुदर, गुद्दाम, गुदाना, गुदगुदाना, 'गुदरर्क लाल' इत्यादि शब्दों को भी अश्लील कहना पड़ेगा। पर ऐसा कोई नागरिक भी नहीं मानेगा। 'गुदारा लागा' यह के वटों की भाषा का प्रयोग है।

अश्लीलता का अन्यत्र जब नाम भी श्री मानस में न मिला तब इस शब्द पर अश्लीलता का सिक्का मार दिया।

३ न्यूनाक्षर (वाक्यगत दोष)

उदाहरण यह दिया है :—'अंगद हनू समेत' 'हनू' के स्थान पर 'हनूमान' पूरा होना चाहिये' ऐसा उनका मत है!

(१) व्याकरण के 'नामैक देशे नामग्रहणम्' नियमानुसार 'सत्यभामा' = 'सत्या' या 'भामा' 'अमावास्या' = 'अमा' 'पयस्विनी' = 'पय' इत्यादि प्रयोग, जैसे व्याकरण शुद्ध और निर्दोष हैं इसी तरह, चक्रवा = कचक्र। (अमरकोषे) वैसा हनूमान = हनू, भी निर्दोष है। दोष है लेखक महोदय के अज्ञान का।' निज अग्यान काव्य पर आना' यही सत्य है। नाम के एक विभाग से पूरे नाम का निर्देश करना दोष नहीं है। कारण संदर्भानुसार अर्थ जानना दुष्कर नहीं।

४ अधिक पद (वाक्यगत दोष)

'सुनि हनुमन्त हृदयँ अति भाए' और 'कन्द मूल फल खाइ' ये उदाहरण दिये गये हैं

और कहा है कि 'हृदय' और 'मूल' पदों के बिना भी काम चल सकता था।'

यह कहना भी मिथ्या दोष लगाना ही है देखिये—यह वचन सुन्दर काण्डारंभ में इस प्रकार है—'जामवन्त के बचन सुहाए। सुनि हनुमन्त हृदयँ अति भाए' वचन सुनना कानों का धर्म है। कभी कभी बचन कानों को तो भाते हैं पर हृदय को नहीं। और कभी हृदय को भाते हैं पर कानों को नहीं। कभी दोनों को भी भाते हैं। यथा

(क) 'श्रवन सुधा सम वचन सुनि' में कानों को भानेका भाव है। (ख) 'सुनि को श्रवन सूल सम बानी' में कानों को न भाने का भाव है। (ग) 'सीतल सिख दाहक भइ कैसे' में कानों को सीतल पर हृदय को दाहक कहने से, शब्द कर्ण शीतल [भाने वाले] पर हृदय को न भाने वाले—दाहक हो सकते हैं यह स्पष्ट है। 'तब बतकही गूढ़ मृग लोचनि। समुझत सुखद सुनत भय मोचनि' [भयसूचक] से हृदय को भाने वाले पर कानों को न भानेवाले वचन हो सकते हैं यह सिद्ध हुआ। अतः उपरोक्त वचन में निःसंदिग्ध अर्थ बोध कराने के लिये 'हृदय' शब्द की आवश्यकता थी यह स्पष्ट हो गया। अतः यहाँ अधिकपद दोष नहीं है।

[२] कन्द मूल फल खाइ'। इसमें मूल शब्द की आवश्यकता है ही। लेखक महोदयने कन्द और मूल में क्या भेद है यह नहीं जान पाया। अतः लिख मारा कि यह दोष है—

[क] कन्द = अर्शोघ्नः सूरणः कन्दः [इति अमरकोषे] प्याज, लहसुन, नोलकोल, गाजर, ये कन्द हैं एक पेड़से जमीन में एक ही—सूरण के समान-लगते हैं वे कन्द हैं—

[ख] आलू, शकरकन्द, आदि लता या पेड़ से जमीन में एक सेअनेक पैदा होते हैं और जो मूलों के ही परिणत स्वरूप होते हैं वे 'मूल' हैं।

[ग] मराठी में भी कन्द और मूल में भेद गिनते हैं। कन्द अनेक प्रकारके हैं वैसे मूल भी अनेक जाति के हैं।

५ पतत्प्रकर्ष (वाक्यगत दो)

'धर्म वर्म नर्मद गुण ग्रामः।
संततशंतनोतु मम रामः॥'
यद्पि बिरज व्यापक अविनासी।
सबके हृदयँ निरंतर बासी॥'

यह उदाहरण देकर समालोचक कहते हैं कि 'उचित था कि अगले दोहे तक एक ही भाषा चलती। बीच में भाषा भिन्नता आ जाने से प्रकर्ष का पतन हो गया। वह ओज नहीं रहा जो प्रथम चरण में था।

१—यह अवतरण अरण्यकाण्ड में सुतीक्ष्ण जी कृत स्तुति में से है।

(क) समालोचक 'धर्म वर्म नर्मदगुणग्रामः को प्रथम चरण समझते हैं यह उनकी बड़ी भूल है। यह उस आठवीं चौपाई का तीसरा चरण है।

'अतुलित भुज प्रताप बलधामः।
कलिमल विपुल विभंजन नामः॥
धर्म वर्म नर्मदगुणग्रामः।
संतत शंतनोतु मम रामः॥

यह है चौपाई।

(ख) इस स्तुति में—

'सगुन अगुन उर अन्तर्यामी।' रूपों में राम जी का वर्णन दो प्रकारों से किया है, एक शरीर का-रूपका और दूसरा ऐश्वर्य का। ऐश्वर्य वर्णन प्रथम चौपाई के द्वितीयार्ध से शुरू हुआ। जिसके लिये ओजस्वी भाषा का प्रयोग अथ से इति तक उत्तरोत्तर अधिक ओजयुक्त पदों का उपयोग करके किया है और इस ऐश्वर्य वर्णन की समाप्ति 'संतत शंतनोतु' में किया है। अगली चौपाई से 'अगुन उर अंतर्यामी' का विवेचन और मति अनुसार

वर याचना का उल्लेख इत्यादि है अतः इस चौपाई में सगुण वर्णन-विषय का उपसंहार है। आगे इस प्रकार के ओज की आवश्यकता ही रही नहीं। ऐश्वर्य वर्णन की चौपाई के चतुर्थ चरण में 'त्रातु' शब्द का प्रयोग है और शंतनोतु' से 'त्रातु' का अर्थ स्पष्ट-विस्तृत किया है।

२—ऐश्वर्य वर्णन परक एकचौपाई के अनन्तर शरीरसौंदर्यादिका वर्णन करने वाली एक चौपाई रक्खी है, जिसमें माधुर्य-जनक का पदोंप्रयोग किया है।तीन चौपाइयों में शरीर के रूपादि का वर्णन किया है जिनमें हरेक चौपाई के चतुर्थ चरण में 'नौमि' का प्रयोग मिलता है।

३—उपक्रम ऐश्वर्य वर्णन से किया 'महिमा अमित मोरि मति थोरी। रवि सन्मुख खद्योत अँजोरी॥

और सगुण के वर्णन का उपसंहार भी ऐश्वर्य वर्णन को चौपाई में ही किया। बीच में तीन चौपाइयों में सौंदर्यादिका वर्णन तथा तीन चौपाइयों में ऐश्वर्य का वर्णन किया। तीन बार 'नौमि' और तीन बार 'त्रातु' पद आया है।'

४—इस प्रकार के भेद से यह भाव प्रगट किया कि शरीर सौंदर्य,कोमलतादिका विचार करने पर ऐश्वर्य अधिक है, कोमलता के प्रमाण से बहुत अधिक है। और 'महिमा अमित' यह उपक्रम का वचन चरितार्थ करके बताया।

५—इस प्रकार इन आठ चौपाइयों में सगुण का वर्णन पूर्ण किया। आगे अगुण का वर्णन 'विरजव्यापक अविनासी।' में किया। और सबके हृदय निरंतर वासी' में अन्तर्यामी स्वरूप का वर्णन किया। अन्य विषयों का वर्णन 'जदपि विरज—' से शुरू होता है अतः उसी भाषा का प्रयोग करने की आवश्यकता कहाँ। जो यहाँ भी ओजस्वी शब्दों का प्रयोग करते तो वह अनुचित ही होता।

(६) 'तदपि अनुज श्री सहित खरारी' से 'मैं सेवक रघुपति पति मोरे' तक मुनि जी अपनी मति अनुसार वर याचना कर रहे हैं।

(७) आगे राम जी का प्रसन्न होना और वर माँगने को कहना इत्यादि वर्णित है। तथा मुनि का कथन भी है—

(८) आगे भगवान ने 'अविरल भगति—' आदि दिया पर मुनि जी की रुचि अनुसार यह नहीं मिला अतः

(९) 'अब सो देहु मोहि जो भावा' और दोहे में मुनिवर माँगते हैं

[१०] नौंवी चौपाई से आगे अन्य भिन्न-भिन्न विषयों का वर्णन है अतः ओज की आवश्यकता ही रही नहीं। अन्यथा 'अगले दोहे तक ही क्यों काण्ड की परिसमाप्ति भी ओज की भाषा आवश्यक थी ऐसा कहना भी विसंगत न होगा।

नोट—यह दोष प्रदर्शन[समानकमहालोचकशयकृत] स्पष्ट बताता है कि लेखक महाशय ने इस स्तुति की तरफ विचार पूर्वक देखा ही नहीं। अतः चतुर्थ तृतीय चरण को 'प्रथम' कहा। और विवेक विलोचन के अभाव में इस रचना का मर्म भी उनकी समझ में नहीं आया।

अब पाठक ही निर्णय करें कि इसमें पतत्प्रकर्ष 'दोष' है या नहीं!

५ पुनरुक्ति (वाक्यगत दोष)

'वन बाग उपवन वाटिका' और 'चोहट्ट हट्ट' ये इस दोष के उदाहरण दिये गये हैं।

१—इन उदाहरणों में समालोचक महाशय को पुनरुक्ति दोष दिख पड़ने का कारण यही जान पड़ता है कि वे उन शब्दों का अर्थभेद (व्याप्ति) जानते नहीं हैं और अमरकोष में देखने का भी कष्ट उन्होंने उठाया नहीं। या

तो जान बूझकर निर्दोष को सदोष बताकर पाठकों में बुद्धिभेद करने की इच्छा की तृप्ति की गयी होगी। कारण कुछ भी हो। पर इस तरह निर्दोष को सदोष बताना दुःसाहस है यद्यपि दयनीय है।

अब देखिये कि इन शब्दों के अर्थ में क्या भेद है।'

'बन बाग उपबन वाटिका'

(१) वन अटव्यम्, गहन काननं वनम्' (अमरकोषे) यथा, आम्रवन, अशोक वन, तालवन, नारिकेलवन नैसर्गिक वन

(२) बाग - उद्यान—'पुमानाक्रीड उद्यान' राज्ञः साधारणं वनम्, जिनको आज Public park कहते हैं जैसे—बम्बई में 'रानी का बाग' [Victoria gardens] बड़ोदामें 'कमाठी बाग'

[३] उपवन = 'आरामः स्याद् उपवनम् = कृत्रिमं वनमेक तत् कृत्रिम वनको उपवन कहते हैं।

[४] वाटिका = 'अमात्य गणिकागेहोपवने वृक्ष वाटिका।' फूलों के बगीचे को भी पुष्प-वाटिका', = वाटिका कहते हैं। श्री मानस का पुष्पवाटिका प्रसंग विख्यात है ही।

और भी एक प्रकार है—

[५] प्रमद्वन = जिस उद्यान में राजा, राणी के साथ क्रीड़ा करते हैं।'

अब कहो कि 'वन बाग उपवन वाटिका' में पुनरुक्ति दोष कहाँ है!

[क] 'चौहट्ट हट्ट सुबट्ट बीथी'

[१] चौहट्ट = चवाठा [शृंगाटक चतुष्पथे = चतुर्मार्ग संगमे इति अमर कोषे] [२] हट्ट = इस प्रकार यहाँ भी पुनरुक्ति दोष नहीं है।

७ विरुद्ध मतिकृत् (अर्थगत दोष)

'अवधपुरी' रघुकुलमनि राऊ।
बेद बिदित तेहि दसरथ नाऊ'।

लेखक महाशयका आक्षेप है कि 'यहाँ 'नाऊ' पद 'नाई' जाति का स्मरण दिलाता है। 'नाऊ' शब्द 'नाई' के अर्थ में मानस में भी आया है।'

[१] एक शब्द के अनेक अर्थ जैसे संस्कृत में होते हैं वैसे हरेक भाषा में होते हैं। सैंधव शब्द का अर्थ 'घोड़ा' और 'लवण' भी है। भोजन के समय कोई सैंधव माँगे और श्रोता घोड़े को लाकर खड़ा कर दे तो इसमें वक्ता का दोष है या श्रोता का?

[क] अनेकार्थ शब्दों का अर्थ करने के बारह साधन साहित्य शास्त्र में बताये हैं। उनमें से एक भी उपस्थित न हों तो दोष लेखक का ही सिद्ध होगा। [देखिये-'मानस प्रसङ्ग' पं० वि० त्रिपाठीकृत- पृ १४२]

[२] जैसा 'नाऊ' शब्द का प्रयोग 'नाई' के अर्थ में मानस में अन्यत्र मिलता है वैसा 'नाम' के अर्थ में भी वह अन्यत्र मानस में ही मिलता है। यथा 'नाउँ, गाउँ बूझत सकुचाहीं' [२।११०।३]

[३] रघुकुलमनि राऊ' कोई नाई हो ही नहीं सकता। अतः साहचर्य और औचित्यबल से 'नाऊ' का अर्थ कोई अपढ़ व्यक्ति भी 'नाम' ही करेगा। इससे विरुद्ध मति पैदा होना असंभव है। हाँ! समालोचक के हृदय में ही निर्दोषता में सदोषता देखने की विपरीत मति बसी है यही मूल कारण है।'

८ अपुष्टार्थ—(अर्थगत दोष)

'भानु पीठि सेइअ उर आगी।
स्वामिहि सर्बभाव छल त्यागी।'

'बाजार यहाँ 'भानु' और 'आगी' के दृष्टान्त स्वामी भजन को पुष्ट नहीं करते' यह है समालोचक महाशय का आक्षेप!

'भानु पीठि सेइअ उर आगी'
वचन 'अग्रे वन्हिः पृष्ठे भानुः।

रात्रौ चुबुकसमर्पित जानुः ।
करतल भिक्षा तरुतल वासः ।
तदपि न मुंचत्याशापाशः ॥'

इस श्रीमदाचार्यकृत चर्पट-पञ्जरिका स्तोत्र के श्लोकका ही सार कहता है। जैसा ग्यान मान जहँ एकउ नाहीं' यह चरण 'अमानित्वमदम्भित्वम्—इत्यादि भगवद्गीता कथित श्लोकों का बोध करता है।

[२] भानु को पीठ पर ग्रहण करने सूर्य की क्या सेवा होती है ? इससे भानु_सूर्य-किरण_तरणितापका सेवन=ग्रहणरूपी तपश्चर्या सूचित की, और उद्धरण के आधार से यह भी सूचित किया कि ऐसी तपश्चर्या में कुछ न कुछ आशा रहती ही है [तदपि न मुंचत्याशापाशः]। पर ऐसी स्वार्थी आशा_छल_कपट-का त्याग करके ही स्वामी की सेवा करना परमार्थका अधिक श्रेयस्कर साधन है।

[क] ऐसी स्वामी सेवा से भी 'तजि माया सेइअ परलोका' यह श्रेयस्कर है। तथापि सर्वोत्तम साधन 'भजिअ राम सब काम बिहाई' यह है।

यहाँ उत्तरोत्तर साधनों की श्रेष्ठता बतायी। अतः अपुष्टार्थ दोष नहीं है। 'भानु पीठि सेइअ उर आगी' में 'सेइअ' का अर्थ 'सेवा करना' ऐसा करने से ही इस दोष का दर्शन लेखक महाशय को हुआ। यहाँ सेवन 'ग्रहण' अर्थ उचित है जो 'तजि माया सेइअ परलोका' में भी है। और स्वामी सेवा में सेइअ=भजिअ_सेवा करना अर्थ है।

नोट—इस प्रकार मानसमणि ११।८ में प्रकाशित १७ दोषारोपों का निराकरण यथाशक्ति किया गया। अब 'रसगत' दोषों का निराकरण बाकी रहा। वह भी भविष्य में जब कभी प्रभुकी प्रेरणा होगी तब पाठकों की सेवा में उपस्थित किया जायगा।

(२) पाठकों से यह विनम्र विनय है कि जब कहीं भी मानस में दोषाभास प्रतीत होगा तब ग्रंथों में खोज कीजियेगा या तो मानसव्यासों तथा मानस-प्रेमी संतों से पूछियेगा।

श्री मानस में से दोषों का प्रदर्शन करना ग्रीष्मके मध्यान्ह कालीन सूर्य बिंबपर थूकने के समान ही है।

बोलो दोष-दूषण-हीन श्रीमानस की तथा श्रीमानस निर्माता की जय।

ज्ञान प्रसार में बाधा

ज्ञान प्रसार के लिये अनिवार्य शिक्षा तथा विद्यालयों और पुस्तकालयों पर हमारी सरकार करोड़ों रुपये खर्च करने का विज्ञापन करती है जिसमें जनता प्रसन्न हो। वही सरकार डाक महसूल बढ़ाकर जनता को पुस्तक खरीदने में बाधा पहुँचाती है।

अँग्रेजों के सामने रजिस्ट्री फीस ≡) थी अब ।=) है। बुकपोस्ट का रेट दूना कर दिया गया है और एक नई वी० पी० फीस लगा दी गई है। मनीआर्डर कमीशन भी बढ़ा दिया गया है। प्रतिफल यह है कि ।≡) की पुस्तक मानस पारायण पूजनपद्धति की एक प्रति मंगाने वाले को -) बुक पोस्ट का -) वी० पी० कमीशन का ।=) रजिस्ट्री का तथा =) मनीआर्डर कमीशन का कुल ॥=) खर्चा देना पड़ता है। सात आने की पुस्तक सत्रह आने में मिलती है। २५) की पुस्तकें हों तो बीमा भी कराना अनिवार्य है और उसके रेट भी अन्धेर बढ़ा दिये गये हैं।

मालूम नहीं सरकार का प्रचार विभाग इन महती कृपाओं का विज्ञापन कब प्रारम्भ करेगा।

केवलाद्वैत और विशिष्टाद्वैत का समतुलन

[राव बहादुर श्री एस० एम० पाराण्डे, रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट जज]

यह तो बहुधा सब मानते हैं कि गोस्वामी तुलसीदास जी ने किसी विशेष मत का प्रचार नहीं किया, वरन उन्होंने अपने 'रामचरित मानस' में अनेक महत्व-पूर्ण धार्मिक सिद्धान्तों का समन्वय किया है। देखिये! 'मानस' के मंगलाचरण के सातवें श्लोक में उन्होंने स्वयं कहा है कि वे अपने ग्रन्थ में पुराणों, वेदों और शास्त्रों की सम्मति के अनुसार ही श्री रघुनाथ जी की कथा का वर्णन करेंगे। रामायण की आरती में भी लिखा है कि 'मानस' में 'चारउ वेद पुराण अष्टदश, छहों शास्त्र और सब ग्रन्थों का रस' भरा है। यही कारण है कि मानस इतना लोकप्रिय है। यदि उसमें किसी एक ही सम्प्रदाय की पुष्टि की होती, तो सम्भव था कि दूसरे विरोधी मत वालों को उससे द्वेष हो जाता। असल बात यह है कि 'मानस' के लिखे जाने के पूर्व ही, श्रीमद् भगवद्गीता की संयोगिक दृष्टि का प्रभाव दार्शनिक जगत पर पड़ चुका था, इसलिये गोस्वामी जी ने भी बड़ी चतुराई के साथ गीता के समान मध्यवर्ती मार्ग पर चलना उचित समझा। उनके समय में जहाँ अद्वैत वेदान्त की महत्ता दृढ़ हो चुकी थी, वहाँ भक्तिमार्ग ही मुक्ति का सरल साधन माना जाने लगा था। इसलिये ऐसा ज्ञात पड़ता है कि गोस्वामी जी ने शंकराचार्य के केवली अद्वैत, याने मायावाद को स्वीकार करते हुये रामानुजाचार्य के 'कैंकर्य' सिद्धान्त पर जोर दिया, जो गीता का भी सार है।

हर्ष का विषय कि कुछ दिनों से 'मानस' का अच्छा प्रचार किया जा रहा है, और उसके दार्शनिक, काव्य रचना, साहित्यिक, वैज्ञानिक सौंदर्य पर प्रकाश डाला जा रहा है। इन विषयों पर, रामवन से कई पुस्तकें भी प्रकाशित हुई हैं। उनमें से कुछ के लेखकों का विचार है कि गोस्वामी जी विशिष्टाद्वैती थे, और किसी ने यह सिद्ध किया है कि वे शाँकर मत के अनुयायी थे। रामायण के साधारण पाठकगण इन दोनों मतों में क्या भेद है, यह नहीं जानते और उनके सिद्धान्तों का समझना सरल बात भी नहीं है। हाल में, लेखक को एक पुस्तक 'अद्वैतामोद' नामी देखने को मिली। यह पुस्तक संस्कृत में है और उनके रचयिता वासुदेव शास्त्री अभ्यंकर हैं। इस पुस्तक में केवलाद्वैत और विशिष्टाद्वैत पर सविस्तार विवेचन किया गया है, और उसमें एक सूची भी दी गई है जिसमें दोनों मतों के मुख्य अंगों का मुकाबला भी किया गया है। यह समतुलन इस प्रकार है:—

शंकराचार्य का मत	रामानुजाचार्य का मत
१—संसार में केवल एक आत्मतत्व है; दूसरा कुछ भी नहीं है	१—चेतन तथा जड़ को शामिल किया हुआ जिसका शरीर है, ऐसा परमात्मा एक ही है। उस ऐसे के अतिरिक्त, संसार में कुछ भी नहीं है।
२—आत्मा से सजातीय, विजातीय अथवा स्वगत अन्य कुछ नहीं है। याने वह सजातीय, विजातीय तथा स्वगत भेद से शून्य है	२—आत्मा, चेतनता में सजातीय जीवों से, जड़ता में विजातीय जड़ों से; और स्वयं उसमें जो कल्याणकारक गुण हैं उनके कारण, उनसे भिन्न है। अर्थात् वह सजातीय और विजातीय भेदों से शून्य है; परन्तु उसमें स्वगत भेद है।

३—उसमें किसी प्रकार की विशेषता न होने के कारण उसके विषय में यह नहीं कहा जा सकता कि वह ऐसा है, या वैसा है।	३—उसमें सर्वज्ञत्व, नित्यत्व व्यापित्व आदि विशेष गुण होने के कारण, वह सर्वज्ञ, नित्य, सर्वव्यापी आदि शब्दों से कहा जा सकता है।
४—इसी कारण वह निर्गुण है। उसमें कल्याण कारक गुण भी नहीं है।	४—आत्मा स्वभावतःही निष्पाप और सब कल्याण कारक गुणों का आश्रय है। उसमें त्याज्य गुण कोई नहीं है।
५—ज्ञान रूपी गुण भी उसमें नहीं रहता, क्योंकि वह स्वयं ज्ञान रूप है।	५—ज्ञान स्वरूप होते हुये भी वह ज्ञान रूपी गुण का आश्रय है। गुणरूप ज्ञान, स्वरूप भूत ज्ञान से भिन्न है।
६—इसी कारण, उसमें ज्ञातृत्व नहीं है। केवल औपचारिक रीति से उसको विज्ञाता कहते हैं।	६—इस कारण, उसमें ज्ञातृत्व है और इसी कारण, उस को श्रुतियों में विज्ञान कहा है।
७—परमात्मा, अपने रूप में कूटस्थ नित्य (अर्थात् लुहार की निहाई के समान) निश्चल है; और उसी रूप में वह अद्वितीय है।	७—परमात्मा अपने रूप से निहाई के समान कूटस्थ नित्य अवश्य है; परन्तु अपने चिज्जड़ विशिष्ट शरीर के रूप से परिणामी नित्य है; और इसी विशिष्ट रूप से अद्वितीय है। याने, उसमें विविध प्रकार के अनेक जीव और जड़ होते हुये भी, ऐसा ब्रह्म एक ही है।
८—वह जाना भी नहीं जा सकता; क्योंकि जो अपने आप ही में विराजमान रहते हुये, अद्वितीय है, वह किसी के ज्ञान का विषय कैसे हो सकता है।	८—स्वरूपभूत ज्ञान से गुण भूत ज्ञान, भिन्न होने के कारण, वह अपने ज्ञान का विषय हो सकता है।
९—इसी से ब्रह्म अद्वितीय कहा जाता है।	९—ब्रह्म में अनेक प्रकार होने से वह प्रकारी है; लेकिन, उस प्रकारी के समान अन्य न होनेसे, प्रकारी अद्वितीय हैं; यद्यपि प्रकार में भेद भले ही हों।
१०—परमात्मा सत् रूप होने से, और वही चित् अर्थात् ज्ञान रूप होनेसे ज्ञान भी सतरूप होता है। सत् ज्ञान का विषय नहीं होता।	१०—यहाँ ज्ञान के दो रूप माने हैं। एक स्वरूप और दूसरा गुण रूप। इनमें से गुण रूपज्ञान का विषय सत् हो सकता है।
११—परमात्मा से भिन्न न होती हुई पर भिन्न सी दिखने वाली, परमात्मा	११—परमात्मा से सचमुच विभिन्न त्रिगुणात्मक प्रधान, जगत की प्रकृति का मूल कारण है।

की शक्ति त्रिगुणात्मिका माया, अज्ञान प्रकृति आदि कही जाती है। उससे ढंका हुआ परमात्मा जगत की उत्पत्ति आदि का मूल कारण है।

१२—परमात्मा ही से याने माया की उपाधि से ईश्वरत्व और अविद्या की उपाधि से जीवत्व भासता है। जड़ तो प्रातिभासिक, अर्थात् स्वप्नवत् है। अतः मिथ्या है। इस प्रकार सब एक ही तत्व है।

१३—अज्ञान से परमात्मा में इस जगत का भास होता है। उसे विवर्तवाद कहते हैं।

१४—परमात्मा में विवर्त रूप से भासने वाला यह संपूर्ण जगत मिथ्या है, सत्य नहीं।

१५—यह अनिर्वचनीय जगत, अज्ञान से भासता है। इसे अनिर्वचनीय कहते हैं।

१६—ज्ञान के साधन प्रमाण छै हैं: प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति और अनुपलब्धि।

१७—प्रमाणों से जो ज्ञान होता है, वह अन्तः करण अभिव्यक्त करता है।

१८—परमेश्वर के समान-उससे अभिन्न, जीव भी ज्ञान स्वरूप हैं; पर उनका ज्ञातृत्व, अन्तःकरणरूप, उपाधि से है।

१९—ज्ञान के आश्रय के रूप से भासने वाला अहंकार, जीव नहीं है। अन्तः करण का एक विशेष रूप जीव है।

२०—जीव विभु है, उसकी अपने ही रूप से, सारे शरीर में व्याप्ति रहती है

१२—परमात्मा ही परमेश्वर है। उसका शरीर जीव वर्ग और जड़ वर्ग है। वह भिन्न ही है। इस प्रकार, चित, जड़ और परमेश्वर ऐसे तीन तत्व हैं।

१३—प्रधान ही अन्तर्यामी परमेश्वर के सान्निध्य से जगत के रूप में परिणत होता है। उसे परिणामवाद कहते हैं।

१४—प्रधान से उत्पन्न हुवा, यह सारा जगत सत्य है, मिथ्या नहीं।

१५—सचमुच में जो सत्य है, ऐसे ही जगत की हमें प्रतीति होती है। इसे सत्ख्याति कहते हैं।

१६—प्रमाण तीन ही हैं। प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द।

१७—प्रमाणों से जो ज्ञान होता है, वह जीव को होता है।

१८—परमात्मा से अभिन्न और परमात्मा के शरीर भूत जीवों का ज्ञान, एक गुण होने से ज्ञातृत्व जीवों को ही रहता है।

१९—ज्ञान के आश्रय से रहने वाला, अहं-पद से वाच्य जो है, वही जीव है। उससे अन्य, ज्ञान से आश्रयभूत अहंकार, जीव नहीं है।

२०—जीव अणु है। उसको शरीर के सब अवयवों में व्याप्ति ज्ञान के द्वारा रहती है।

२१—जीव ब्रह्म स्वरूप ही में रहता है, इस कारण वह एक ही है। उसका अनेकत्व, उपाधियों के कारण है।	२१—जीव स्वयं ही भिन्न भिन्न होते हैं। उनकी एकरूपता इस कारण है कि वे सब एक वर्ग में आते हैं।
२२—साधन चतुष्टय संपन्न होने पर ही ब्रह्म विचार का आरम्भ करना चाहिये।	२२—कर्म के स्वरूप का बोध आरम्भ हो जाने पर ही ब्रह्म विचार का आरम्भ करना उचित है।
२३—प्रत्यक्ष सामग्री पास होने पर शब्द भी प्रत्यक्ष ज्ञान उत्पन्न करता है।	२३—शब्द से होने वाला ज्ञान सदैव परोक्ष ही रहता है।
२४—महावाक्यों से आत्म स्वरूप का साक्षात्कार होकर अविद्या का तुरन्त नाश हो जाता है।	२४—महावाक्यों के श्रवण द्वारा उपासना दृढ़ होने पर, परमात्मा की प्रसन्नता होती है।
२५—सुखदुःखातीत, आत्म साक्षात्कार होने पर लौकिक शरीर बना रहने पर भी, जीवित अवस्था में मुक्ति प्राप्त होती है, जिसे जीवन्मुक्ति कहते हैं।	२५—जब तक लौकिक शरीर बना रहता है, तब तक सुखदुःख का अनुभव भी होता रहता है। इसलिये जीवित अवस्था में मुक्ति हो नहीं सकती।
२६—प्रारब्ध कर्म के क्षय होने से शरीर छूटने पर आत्मा अपने स्वरूप में हो जाता है।	२६—प्रारब्ध कर्म के क्षय से लौकिक शरीर छूटने पर दिव्यदेह प्राप्ति होती है और परमात्मा से परम साम्य होता है।
२७—शरीर न रहने पर जब मुक्ति होती है उसे विदेह मुक्ति कहते हैं।	२७—इसी का नाम मोक्ष है।
२८—मुक्ति में 'अहम्'भावना नहीं रहती।	२८—मुक्ति होने पर भी अहं भावना बनी रहती है।
२९—मुक्ति होने पर जीव और ब्रह्म में कुछ भी भेद नहीं रहता।	२९—मुक्ति होने पर भी जीव और ब्रह्म में भेद बना रहता है। जीव को सृष्टि रचने की शक्ति कभी नहीं मिल सकती।
३०—इस अवस्था में किसी प्रकार का दुःख नहीं रहता और सुख भी नहीं होता।	३०—इस अवस्था में दुःख तो रहता ही नहीं, परन्तु अत्यन्त सुख का अनुभव होता रहता है।

इस सूचीपत्र को सामने रखकर, यदि गोस्वामी जी की अनेक चौपाइयों का जिनमें दार्शनिक तत्व भरे हैं, उनके यथार्थ भावों का बिना खींचा-तानी किये हुए ग्रहण किया जावे, तब मामूली पाठकों को भी विदित होजावेगा कि तुलसीदास जी किस मत के अनुयायी थे।

भक्ति

(प्रेषक—श्री विनायक प्रसाद जी भट्ट)

भक्ति का अर्थ—भगवान की उपासना, भगवान की सेवा, भगवान की शरणागति।

भगवान से मिलने के चार मार्ग हैं—कर्म-योग, ज्ञानयोग, भक्तियोग, प्रपत्ति योग।

कर्म तीन प्रकार के होते हैं—प्रारब्ध, संचित, क्रीयमाण,

भगवान के ध्यान से, चिन्तन से, स्मरण से हृदय के सारे विकार अपने आप नष्ट हो जाते हैं—

'तब लगि हृदय बसत खल नाना।
लोभ मोह मच्छर मद माना।
जब लगि उर न बसत रघुनाथा।
धरे चाप सायक-कटिभाथा॥

भगवान के चिन्मय, आनन्द मय रूप का प्रकाश हृदय में आते ही अन्तःकरण का अंधकार आप से आप मिट जाता है।

ममता तरुण तिमिर अँधियारी,
राग द्वेष उलूक सुखकारी॥
तब लगि बसत जीव मनमाही,
जब लगि प्रभु प्रताप रवि नाहीं॥

ज्ञानयोग की सफलता भी भक्तियोग पर ही निर्भर करती है। भक्ति से पृथक ज्ञान का मार्ग दुर्गम और कठिन है, पर भक्ति पथ अत्यन्त सुलभ है।

भगति करत बिनु जतन प्रयासा,
संसृति-मूल अविद्या नासा॥
कहत कठिन समुझत कठिन साधन कठिन विवेक।
होइ घुनाच्छर न्याय ज्यों पुनि प्रत्यूह अनेक॥

भक्ति के दो रूप हैं—उपासना,—सदैव भगवान का चिन्तन, स्मरण और ध्यान करना, भगवान में अखण्ड विश्वास, परमात्मा के साथ मानव हृदय एकाकार हो जाय, तब उसका नाम उपासना है।

तनसे कर्म करहु विधि नाना।
मन राखहु जहँ कृपा निधाना॥
मनसे सकल वासना त्यागी।
केवल रामचरन लय लागी॥

उपासना की सफलता के लिये भगवान के ऊपर अत्यधिक प्रेम होना आवश्यक है।

मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा।
किएँ जोग तप नेम बिरागा॥

भगवान के चरणों में अन्तःकरण को जोड़ देना ही योग कहलाता है :—

जननी जनक बन्धु सुत दारा,
तनु धनु भवन सुहृद परिवारा॥
सबकै ममता ताग बटोरी,
मम पद मनहिं बाँधि बर डोरी॥
समदरसी इच्छा कछु नाहीं,
हरष सोक भय नहिं मन माहीं॥
अस सज्जन मम उर बस कैसे,
लोभी हृदयँ बसइ धनु जैसे॥

उपासना में सबसे अधिक आवश्यकता है भगवत्प्रेम की, क्योंकि हम जिसको सबसे अधिक प्यार करते हैं, दिनरात उसी को सोचते रहते हैं। उसके स्मरण और चिन्तन में एक आनन्द की अनुभूति होती है। भगवान को यदि हम हृदय से प्यार करेंगे तो उनका ध्यान सदैव हमें लगा रहेगा।

उनके स्मरण और चिन्तन में आनन्द की अनुभूति होगी। उनके प्रेम में हम मस्त और मतवाले बने रहेंगे और एक क्षण भी बिना उनको देखे हृदय बेचैन हो उठेगा। अन्तः

करण का सबसे बड़ा आकर्षण प्रेम ही है। बिना प्रेम के यदि बरजोरी मनको भगवान में लगाया भी जाय तो वहाँ वह अधिक देर तक नहीं टिक सकता, क्योंकि मन चंचल है और हठात विषयों की ओर चला जाता है। भोग रस पान करने वाले चंचल मनको प्रथम भगवान में लगाने के लिये दो साधनों की आवश्यकता है। अभ्यास और वैराग्य की। अभ्यास के द्वारा मनको भगवान में टिकने की तथा भगवान से प्रेम करने की आदत पड़ जाती है। वैराग्य के द्वारा संसार से विरक्ति और परमात्मा में अनुरक्ति उत्पन्न होती है।

अन्तर्यामी भगवान सर्वत्र एवं सभी प्राणियों में वर्तमान है। यह रूप सूक्ष्म, व्यापक एवं घटघट वासी है। इसका कैङ्कर्य तीन प्रकार का होता है :—

(१) किसी भी स्थान में कभी छिपकर कोई पाप न करना। ऐसा कोई भी स्थान नहीं जहाँ अन्तर्यामी भगवान् न हों। अतः छिपकर पाप करने के लिये कोई भी एकान्त स्थल कभी किसी को मिल ही नहीं सकता।

(२) अन्तर्यामी भगवान सभी प्राणियों में वर्तमान हैं, अतः प्रत्येक नर-नारी का शरीर परमात्मा का मन्दिर है, अतः किसी के साथ ईर्षा द्वेष रखना, किसी का अमङ्गल करना किसी को दुखी करने की चेष्टा, मन से, वचन से और शरीर से किसी की बुराई करना—अन्तर्यामी भगवान की अवहेलना मात्र है। गरीब और दुखियों की सेवा, सत्य, अहिंसा, न्याय प्रत्येक नरनारी का कल्याण और प्रत्येक प्राणी को सुखी बनाने की चेष्टा ही अन्तर्यामी भगवान का कैङ्कर्य है।

(३) अपना शरीर भी उन अन्तर्यामी का मन्दिर है। अतः भगवान के मन्दिर को स्वच्छ और पवित्र रखना जीवका परम कर्तव्य है। अन्तःकरण रूपी मन्दिर में अविद्या का अन्धकार, वासना की गन्दगी और अभिमान की बदबू नहीं रहनी चाहिये। हृदय में काम, क्रोध मद, मोह, दम्भ, वैर, ईर्षा, हिंसा, लोभ आदि के गन्दे विचारों और कलुषित इच्छाओं के रहने से अन्तर्यामी भगवान की अवहेलना होती है। परिवार, राष्ट्र तथा देश के लिये त्याग और सेवा की भावना कैङ्कर्य है।

सन्ध्या, गायत्री, पूजा, रसोई, फूल, तुलसी, भोग आरती यह अर्चावतार का कैङ्कर्य है।

किन्तु शरणागति में अनन्य तथा अकिञ्चन भाव का होना आवश्यक है।

कोटि विप्र बध लागहिं जाहू।
आए सरन तजौं नहिं ताहू॥
सनमुख होइ जीव मोहिं जबहीं।
जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं॥
॥ सियावर रामचन्द्र की जय॥

नवम्बर का मानस मणि आपके हाथ में है १९५४ का वार्षिक मूल्य ३) मनिआर्डर द्वारा तुरन्त भेज देना उचित है। वी० पी० मँगाने में तो व्यर्थ ॥) की हानि है।

सत्संग

[स्वामी श्री रामकुमारदास जी विरक्त]

वस्तुतः मानव जीवन पवित्र बनाने का एक सुन्दर उपाय सत्संग है। हमारे धर्म शास्त्रों में ऐसी अनेक कथाएँ महान पुरुषों की पाई जाती हैं जो केवल सत्संग के प्रभाव से महान पुरुष बने। महामुनि वालमीकि जी की कथा सर्व विदित है। देवरिषि नारद जी की कथा सब जानते हैं कि यह उपयुक्त महान पुरुष संत और सत्संग महिमा अपने मुख से कह गये हैं। यथा

बालमीकि नारद घट जोनी
निज निज मुखनि कही निज होनी
श्रीगोस्वामीजी ने तो यहाँ तक कहा है कि
जल चर थल चर नभ चर नाना
जे जड़ चेतन जीव जहाना॥
मति कीरति गति भूति भलाई
जब जेहि जतन जहाँ जेहि पाई॥

जल में रहने वाले, जमीन पर चलने वाले और आकाश में विचरने वाले नाना प्रकार के जड़ चेतन जितने भी जीव हैं उनमें से जिसने जिस समय जहाँ कहीं जिस यत्न से बुद्धि कीर्ति सद्‌गति विभूति ऐश्वर्य और भलाई पाई है। वह केवल सत्संग का ही प्रभाव समझना चाहिए

कहा किः

सो जानहु सत्संग प्रभाऊ।
लोकहु वेद न आन उपाऊ॥

उसका लोक और वेद में दूसरा उपाय ही नहीं। उसी की महिमा श्रीनारद ने भक्ति सूत्र में भी कही है कि यदि प्रभुमय बनना हो तो अति अमोघ संत पुरुषों का संग नाम सत्संग को साधो फिर तो क्या तुम में और तुम्हारे प्रभु में कुछ भेद नहीं है। श्रीमद्‌भागवत में भी कहा किः—

नरोधयति माँ योगो, न सांख्यं धर्म उद्धव।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो, नेष्टापूर्तं न दक्षिणा॥
व्रतानि यज्ञश्छन्दाँसि, तीर्थानि नियमायमा।
यथा वरुन्धे सत्संग सर्वसंगापहोहि माम्॥

अर्थात् मैं किसी भी साधन से इतना वस नहीं होता कि जितना सत्संग से होता हूँ। सरवेश्वर भगवानरामजी ने सतसंग की महिमा बताते हुए सनकादि रिषियों से कहा कि

बड़े भाग पाइब सतसंगा,
विनहिं प्रयास होहिं भवभंगा।

बड़े भाग्य से सतसंग मिलता है जिससे बिना प्रयास जन्म मृत्यु का चक्र नष्ट हो जाता है। श्री राघवेन्द्र जी ने निज भक्तों के प्राप्त करने का उपाय पुरवासियों को उपदेश देते समय सतसंग ही बताया है। कहा कि

भक्ति सुतन्त्र सकल सुख खानी।
बिनु सत संग न पावहिं प्रानी॥

मेरी भक्ति का वही अधिकारी है जिसे सतसंग प्रिय हो। इससे यही सिद्ध होता है कि भगवान की भक्ति का सुगम उपाय केवल सत्संग है। अन्त में श्रीगोस्वामीजी ने कहा कि
तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिय तुला एक अंग।
तूल नताहि सकल मिलि, जो सुख लव सतसंग।

धन्य सतसंग तेरी महिमा।

रामचरितमानस एवं तुलसी ग्रन्थावली में 'चकोर'

[श्री समय लाल जी]

संसार में चकोर से बढ़कर चंद्रमा का कोई प्रेमी नहीं, शरद् ऋतु में जिस समय चकोर तन्मय होकर चन्द्रमा को देखता है, उस समय उसे अपने तन-बदन की सुधि नहीं रह जाती, चन्द्रमा को देखते समय चकोर को पकड़ लेना बिलकुल सरल बात हो जाती है उस समय उसे वाह्य संसार का कुछ बोध नहीं रह जाता।

भगवान का सच्चा भक्त भगवत्कृपा का आश्रय पाकर दुनिया की अनेक विपद और आपदाओं का मनोयोग पूर्वक सहन कर लेता है। चंद्रभक्त चकोर मौका पड़ने पर अंगारे भी चुग लेता है और चंद्र की शीतल किरणों का आश्रय उसे अबाध सुखी रख लेता है,

रामायण व तुलसी ग्रंथावली के अवलोकन से पता लगता है कि महात्मा तुलसीदास को 'चकोर' शब्द बहुत प्यारा था तथा उस शब्द का योग यत्र-तत्र इन्होंने स्वयं भगवान या उनके प्रेमी भक्तों के लिये किया है।

चंद्र और चकोर की तुलना में क्या गुरु, क्या माता-पिता, क्या भाई, क्या पत्नी, क्या सास-ससुर, क्या प्रेमी क्या भक्त सभी आगये हैं। यहाँ तक कि भगवान शङ्कर जी के मुख की कल्पना चन्द्र से की गई है और उमा महारानी की कल्पना चकोरी से की गयी है।

यथा—सीता जी पुष्प वाटिका में देवी पूजन करते समय क्या प्रार्थना करती हैं।

यथाः—चौ० 'जै जै गिरिवरराज किशोरी।
जै महेस मुखचंद्र चकोरी ॥' आदि

इसी प्रकार समस्त रामायण और तुलसी ग्रंथावली में चकोर शब्द किस तरह यथा-स्थान बैठाया गया है जिस तरह राजमुकुट पर रत्न।

उदाहरण के लिये पहिले रामायण के अनेक स्थलों से उद्धरण उद्धृत कर समझाया जा रहा है

पहिला प्रसंग

पहिला प्रसंग अयोध्यापुरी में विश्वामित्र जी के आगमन के समय का है। यथाः—

जिस समय महामुनि विश्वामित्र राजा दशरथ जी के दरबार में पहुँचते हैं, उस समय अनेक आदर सत्कार के बाद क्या होता है।

यथाः—पुनि चरननि मेले सुतचारी।
राम देखि मुनि देह बिसारी ॥
भये मगन देखत मुख सोभा।
जनु चकोर पूरन ससि लोभा ॥

दूसरा प्रसंग

दूसरा प्रसंग जनकपुरी में आया है। मुनिवर विश्वामित्र के आगमन को सुनकर महाराज जनक उनसे भेंट करने के लिए बस्ती के बाहर अमराई में जाते हैं। भगवान राम और लक्ष्मण की मनोहर मूर्तियों को देखकर अपने विदेह नाम को सार्थक कर लेते हैं।

राजा जनक मुनिवर से क्या कहते हैं।

यथाः—सहज बिरागरूप मन मोरा,
थकित होत जिमि चंद चकोरा।

तीसरा प्रसंग

तीसरा प्रसंग फुलवारी में उपस्थित हुआ है—

किसी समय नारद जी ने सीता जी को आशीर्वाद दिया था कि इसी फुलवारी में जिन श्याम सुन्दर को देखकर तुम्हारे हृदय में पुनीत प्रीति उत्पन्नहोगी वही तुम्हारे स्वामी होंगे। अस्तु—भगवान राम ने देखा कि सीता जी फुलवारी में अपनी प्रिय सखियों के साथ उसकी शोभा देख रही हैं। उस समय की अवस्था का कवि ने क्या ही सुन्दर दृश्य प्रदर्शित किया है। यथाः—

अस कहि फिरि चितये तेहि ओरा।
सिय मुख ससि भये नयन चकोरा॥'
'भये बिलोचन चारु अचंचल।
मनहुँ सकुचि निमि तजे दिगंचल॥

चौथा प्रसङ्ग

चौथा प्रसंग भी इसी पुष्पवाटिका का है। ज्योंही सखियों ने सीता जी से कहा कि इस फुलवारी में भगवान राम अपने भाई लक्ष्मण सहित फूल तोड़ने आये हैं त्योंही उनके मन में राम-दर्शन की उत्कंठा प्रबल हो उठी। सखियों ने लताओं की ओट से युगुल जोड़ी को दिखा दिया। फिर देखिये, सीता जी की अवस्था का क्या ही अच्छा वर्णन कवि ने किया है।

देखि रूप लोचन ललचाने।
हरषे जनु निज निधि पहिचाने॥
थके नयन रघुपति छवि देखें।
पलकन्हिहूँ परिहरी निमेषें॥
अधिक सनेहँ देह भै भोरी।
सरद ससिहि जनु चितव चकोरी।'

पाँचवा प्रसंग

भगवान राम ने जनक जी के प्रण का धनुष तोड़ डाला है। नानाप्रकार के वाद्य बज रहे हैं, स्त्रियाँ माँगलिक गीत गान कर रही हैं। जनक की रानियाँ अत्यन्त हर्षित हैं, राजा इस तरह से सुखी हैं मानो अनंत जलराशि में तैरते-तैरते थक जाने वाले को जल्दी ही किनारा मिल गया हो। सब राजा लोग धनुष टूटने से उदास हो गये हैं, उस समय सीता जी के मन में महान हर्ष हो रहा है मानो चातकी को स्वाती का जल मिल गया हो। श्री लखनलाल जी खुशी के मारे भगवान की ओर सन्मुख होकर दृष्टिपात कर रहे हैं।

यथाः—

'रामहि लखनु बिलोकत कैसे।
ससिहि चकोर किसोरकु जैसे॥'

छठवाँ प्रसंग

राजा जनक के यहाँ के विवाह मंडप का है। विवाह मंडप की शोभा का वर्णन करते हुए कवि क्या लिखते हैं।

मिथिलेश के यहाँ विवाह-मंडप में महाराज दशरथ और जनक सकुटुम्ब विराजमान हैं, बड़े प्रेम के साथ भगवान राम के मुखारविंद का दर्शन करते हैं।

यथाः—

'रामचन्द्र मुखचंद्र छवि-लोचन चारु चकोर।
करत पान सादर सकल प्रेम प्रमोद न थोर॥

यहाँ कवि ने माता, पिता, सगे सम्बन्धी, सास, ससुर, गुरु तथा अन्य सम्बन्धी सभी को चकोर संज्ञा दे दी है।

सातवाँ प्रसंग

परसुराम सम्वाद के बाद आया है।

परसुरामजी भगवान राम और लक्ष्मण जी से क्षमा याचना करके तप करने के हेतु वन को चले गये। देवता लोग प्रसन्नता पूर्वक भगवान के ऊपर फूलों की वर्षा कर रहे हैं राजा जनक महान हर्ष से फूले नहीं समाते मानो किसी दरिद्री को गड़ा हुआ खजाना हाथ लग गया हो। सीता जी के मन का दुख दूर हो गया है।

यथाः—

'बिगत त्रास भइ सीय सुखारी।
जनु बिधु उदय चकोर कुमारी॥'

मानस में हितोपदेश की अवहेलना

(श्री फकीर राम जी देवाँगन)

हित उपदेस सुहाइ न कैसे।
काल बिबस कहँ भेजप जैसे॥

१ 'विनाश काले विपरीत बुद्धिः॥

काल के वशीभूत होने के कारण जिस प्रकार औषधि अच्छी नहीं लगती उसी प्रकार बुरे समय आने पर भलाई का उपदेश भी अच्छा नहीं लगता।

श्रीरामचरित-मानसान्तर्गत इस विषय पर अनेक उदाहरण प्रस्तुत हैं। भ्रमजनित बुद्धि जब किसी विषय पर कुण्ठित हो जाती है तब किसी के दिये हुए हितकर उपदेश भी विपरीत प्रतीत होते हैं। चित्त में एकदम विरोधाभाव आ जाता है और उस समय हितोपदेश का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। वे अपने ही अभिमान और हठ के कारण स्वतः गिर जाते हैं और संसार में उस समय उनकी जो स्थिति होती है उसका उन्हें ही पता लग जाता है। यथाः

(१) नारद मोह प्रसंगः - श्रीनारद जी को काम विजय पर गर्व हुआ। विजयोन्मत्त हो वे श्रीशङ्कर जी के पास पहुँचे। और—

मार चरित शङ्करहिं सुनाये।

शङ्करजी ने नारदजी के मन की स्थिति जान ली। उनने नारद जी के हितार्थ—

अति प्रिय जानि महेस सिखाये॥
बार बार बिनवउँ मुनि तोही।
जिमि यह कथा सुनायेउ मोही॥
तिमि जनि हरिहि सुनायेहु कबहूँ।
चलेहु प्रसंग दुरायेहु तबहूँ॥

पर आखिर नारदजी क्यों मानने चले उन्हें तो—

संभु दीन्ह उपदेश हित नहिं नारदहि सोहान।

और अन्त में भगवान के पास कामचरित नारद सब भारे।

इससे जो फल मिला—सर्व विदित ही है।

(२) कैकेई प्रसंगः—श्रीरामचन्द्रजी के राज्याभिषेक के अवसर पर 'जब कैकेई ने दो वरदान माँगकर अवध का वातावरण ही बदल दिया, तब कैकेई को भी हितोपदेश दिया गया—

बिप्रबधू कुलमान्य जठेरी।
जे प्रिय परम कैकेई केरी॥
लगीं देन सिख सिलु सराही।

पर कैकेई को सब

बचन बान सम लागहिं ताही॥

उन्हें तो यहाँ तक समझाया गया कि—

भरतहि अवसि देहु जुवराजू।
कानन काह राम कर काजू॥
नाहिन रामु राज के भूखे।
धरम धुरीन बिषय रस रूखे॥
गुर गृह बसहुँ रामु तजि गेहू।
नप सब अस बरु दूसर लेहू॥
जौं नहिं लगिहहु कहें हमारे॥
नहिं लागहिं कछु हाथ तुम्हारे॥
सखिन सिखावन दीन्ह,
सुनत मधुर परिनाम हित।
तेहि कछु कान न कीन्ह,
कुटिल प्रबोधी कूबरी॥

अन्त में इससे राज्य को व कैकेई जी को जो अवसर देखने को मिला यह भी सर्व विदित ही है।

(३) श्रीहनुमान-रावण प्रसंग-श्रीहनुमानजी रावण के बगीचे को तहस-नहस कर जब मेघनाथ द्वारा बँधकर उनके दरबार में जाते हैं—तब—

कह लंकेस कवन तै कीसा।

प्रत्युत्तर में श्री हनुमान जी ने जो परिचय और शिक्षा दी रावण के लिये वह विरुद्ध हुई। अन्त में—

बोला बिहसि महा अभिमानी।
मिला हमहि कपि गुर बड़ ग्यानी॥
मृत्यु निकट आई खल तोही।
लागेसि अधम सिखावन मोही॥

श्री हनुमान जी ने जान लिया और कहा कि -

उलटा होइहि कह हनुमाना।
मतिभ्रम तोर प्रगट मैं जाना॥

शिक्षा का प्रभाव कुछ नहीं हुआ और सर्व-विदित गति इनकी जो हुई वह तो प्रत्यक्ष ही है।

(४) इसी प्रकार विभीषण जी ने रावण को जो उपदेश दिया वह भी

बुध पुरान श्रुति संमत बानी।
कही बिभीषन नीति बखानी॥

पर—

सुनत दसानन उठा रिसाई।

शिक्षा मानना तो दूर रहा चरण प्रहार, कर दिया।

शुक ने भी जो हितोपदेश दिया।

सुनहु बचन मम परिहरि क्रोधा।
नाथ रामसन तजहु बिरोधा॥
अति कोमल रघुबीर सुभाऊ।
जद्यपि अखिल लोक कर राऊ॥
मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करहीं।
उर अपराध न एकउ धरहीं॥
जनक सुता रघुनाथहिं दीजै।
इतना कहा मोर प्रभु कीजै॥

तब तो फिर पूछना क्या है, हितोपदेश की बात सुनना तो दूर रहा,

चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही।

मंदोदरी ने भी रावण को जो समझाया वह हितोपदेश ही कहा जायगा, पर अपनी स्त्री द्वारा उपदेश उपयुक्त समझा जाना रावण के लिए मान्य न था। उन्होंने रावण को पाँच बार समझाया—पर व्यर्थ ही हुआ।

श्रीअंगद जी के दूतत्व के समय भी रावण को सचेत हो जाना था, पर उस समय भी यह सब प्रयास व्यर्थ हुआ। रावण के लिए यह अन्तिम अवसर था, पर रावण ने ध्यान ही नहीं दिया। अंगदजी ने तो इतना भी कह दिया था कि जो कुछ हुआ सो हुआ—

अब सुभ कहा सुनहु तुम मोरा।
सब अपराध छमिहि प्रभु तोरा॥
दसन गहहु तृन कंठ कुठारी।
परिजन सहित संग निज नारी॥
सादर जनक-सुता करि आगे।
एहि बिधि चलहु सकल भय त्यागे॥

प्रनतपाल रघुबंसमनि त्राहि त्राहि अब मोहि।
आरत गिरा सुनत प्रभु अभय करैंगे तोहि॥

पर रावण ने झट कह दिया—

रे कपि पोत बोलु संभारी।
मूढ़ न जानेहि मोहि सुरारी॥

रावण को उपदेश देना बन्द कर अंगदजी वापस चले गये, और जो गति रावण की हुई, सर्व विदित है।

इन सबका तात्पर्य यह है कि नारद कैकेई और रावण को जो हितोपदेश दिया गया, उसका उन लोगों ने कुछ भी ख्याल न किया।

(७) अपने हठ पर अड़े रहने का परिणाम दुखद ही हुआ।

उपदेश देने वाले तो उपदेश देते समय अनुनय विनय पूर्वक भी समझाते हैं—यथा नारद को शङ्करजी ने—

बार बार बिनवहुँ मुनि तोही।

रावण को हनुमानजी ने—

बिनती करउँ जोरि कर रावन।

रावण को विभीषण ने—

बार बार पद लागउँ, विनय करउँ दससीस।

पर इस पर भी इसका प्रभाव नहीं पड़ता इसका कारण यह है कि

हित उपदेस सुहाइ न कैसे।
काल विवस कहँ भेषज जैसे॥

पाठकों को यह न समझ लेना चाहिए कि रावण की श्रेणी में कैकेई और नारद को रख कर पाठ तैयार किया गया। उन्हें यही ध्यान रखना चाहिए कि अभिमान तथा हठ वश लोग किसी की शिक्षा सुनना पसन्द नहीं करते, चाहे वे ऋषि हों, माता हों न राक्षस हों!

तुलसी की रामायण चहत घर घर में

व्यास सनकादिकों के, रचित अनमोल ग्रन्थ,
वेद औ पुरान रहे, केवल द्विज कर में।
गीता को परम ज्ञान, अर्जुन के हित भयो,
सीमित ह्वै गयो तत्व, ज्ञानिन के स्वर में॥
पावें न थाह कुछ, सर्व साधारण-जन,
अल्प बुद्धि हम जैसे, भूले तम गहर में।
वेद ना पुरान चहें, गीता न चाहें 'पद्म'
तुलसी की रामायण, चहत घर घर में॥१॥
कलि के प्रताप पाप, छायो सारी सृष्टि में,
धर्म गयो बिसरि, विराग भय खावतो।
फँस्यो अघ पंक माहि, या हू तै निकासे कौन,
त्रस्त भयो जीव कहो, कहाँ सुख पावतो॥
नीति, व्यवहार, स्नेह, धर्म, ज्ञान, भक्ति और,
तात-भ्रात मात तिय धर्म को सिखावतो।
अतुल अपार अनमोल उपदेश भरी,
जो पै यह रामायण तुलसी न गावतो॥२॥
घोर-अघ, गहन-तम, भारत के ओर छोर,
धर्म मार्ग त्यागि, निज कर्म भूलि जावतो।
पश्चिमी बयार आय बवंडर मचाती ऐसो,
सत्य धर्म को न कहूँ, नाम सुन पावतो॥
साहित्य को शेष-शव प्राण हीन हो तो 'पद्म'
देव-वाणी को न यहाँ, मान रह जावतो।
भूले न पाते पथ, हाते न शुभ कृत,
जो पै यह रामायण तुलसी न गावतो॥३॥

—पद्मराज जैन



सितम्बर मास में संघ के २८५ नये सदस्य बने। इस मास में २३ नई शाखायें स्थापित हुई जिनका विवरण इस प्रकार है :—

शाखा संख्या १५३८ सन्डी [दुर्ग] सदस्य १० मंत्री श्रीमती बहूराबाई पंडितिन। शा० सं० १५३६ खापरखेड़ा [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री हरी सिंह गोयदानी। शा० सं० १५४० खापर खेड़ा [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री जवाहरलाल जी पटैल। शा० सं० १५४१ खापर खेड़ा [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री कुंजीलाल जी। शा० सं० १५४२ खापर खेड़ा [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री बाबू लाल जी पुरोहित। शा० सं० १५४३ पिपरिया कलाँ [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री बिहारी लाल जी पटैल। शा० सं० १५४४ खापरखेड़ा [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री किशन दास जी घुरका। शा० सं० १५४५ खापर खेड़ा [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री मुन्शीलाल शा० सं० १५४६ खापरखेड़ा [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री शंकर लाल जी दुबे। शा० सं० १५४७ खापरखेड़ा [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री बेनी प्रसाद जी पुरोहित। शा० सं० १५४८ आमली [भीलवाड़ा] सं० १० मं० श्री मूलचंद जी पाराशर। शा० सं० १५४६ बाबू रामडिह [रांची] सं० ११ मं० श्री जुगुल किशोर जी। शा० सं० १५५० निवारी [होशंगाबाद] सं० ६ मं० श्री कुन्दन लाल जी दुबे। शा० सं० १५५१ देवरिया [यू० पी०] सं० १० मं० श्रीरमाशंकर जी पाण्डेय। शा० सं० १५५२ अचरौंवा [कोटा] सं० ६ मं० श्री कृष्ण गोपाल जी। शा० सं० १५५३ पड़रिया [होशंगाबाद] सं० १६ मं० श्री जयसिंह जी पटेल। शा० सं० १५५४ सलगापुर [होशंगाबाद] सं० १० मं० श्री जानकी प्रसाद जी। शा० सं० १५५५ करेली बस्ती [होशंगाबाद] सं० १४ मं० श्री परमानन्द जी। शा० सं० १५५६ करेलीबस्ती [होशंगाबाद] सं० १४ मं० श्रीपरमानन्द जी शा० सं० १५५६ करेलीबस्ती [होशंगाबाद] सं० १४ मं० श्री जालम सिंह जी। शा० सं० १५५७ सोहागपुर [दुर्ग] सं० १२ मं० श्री रामप्रसाद जी। शा० सं० १५५८ बम्बई १८ सं० १२ मं० श्री लक्ष्मीपति जी त्रिपाठी। शाखा संख्या १५५६ अरमापुर कानपुर सदस्य १६ मन्त्री श्री रामगोपाल जी अग्निहोत्री।

इस मास में प्रेमियों ने इस प्रकार शाखायें स्थापित कराई है :—

श्री कुंज जी रामायणी काशी ६ पूर्व स्थापित २१० = २१६

श्री राम रक्षित जी रामायणी बनारी ५

श्री तीरथराम जी मुन्त्री बुन्देली शाखा १

विविध समाचार

फतहनगर—हर मंगल को सुन्दर काण्ड पाठ और हर पूर्णिमा को अखंड पाठ हमेशा होता है।

—गोपाल लाल

अयोध्या (नयाघाट) :—श्रावण झूले के अवसर पर शाखा की ओर से संघ के नियम पर्चा १४५ तथा शतपंच चोपाई का पर्चा १६३ प्रचारार्थ वितरण किया गया।

—अम्बिकेश्वरपति त्रिपाठी

पतगवां :—श्री माता दीन द्वारा साप्ताहिक रामयण चालू है तथा पं० ठुनू महराज द्वारा जन्माष्टमी उत्सव में श्रीमानस का अखंड पाठ व श्री हनुमान चालीसा के १८० पाठ हुए।

—मातादीन गुप्त

देवरिया :—श्रावण शुक्ल १ से पूर्णिमा तक श्री सीता राम जी के मन्दिर में शाखा द्वारा तुलसी जयन्ती मनाई गई। श्री पं० उमाशंकर जी पांडे का भाषण व्यासपद से बराबर होता रहा तथा सर्वश्री पं० अच्युदानंद जी पांडे, डा० रामकोमल शास्त्री, जगन्नाथ विशारद व जगन्नाथ सिंह जी के भाषण मानस के ऊपर हुए।

कुड़कई :—श्री जन्माष्टमी को श्री पं० जनक प्रसाद जी पयासी के अध्यक्षता में मानस और गीता का अखंड पाठ और श्री हनुमान चालीसा के ११०० पाठ, अखंड ज्योति जलाकर हुआ। तदुपरान्त श्री कृष्ण जन्मकथा एवं ब्राह्मण भोजन, प्रसाद वितरण आदि हुआ।

—मातादीन गुप्त

कलकत्ता :—मैदानीय श्री राम कथा मन्डल के तत्वावधान में परम पुनीत श्रावण कृष्ण १ से १५ तक श्री मानस का अखंड पाठ अखंड दीप के साथ में नं० ५३ नलनी सेट रोड में सानन्द सम्पन्न हुआ। भाद्रपद १ को पूर्णाहुति, हवन ब्राह्मण भोजन आदि हुआ।

बुन्देली :—ता० २१-८-५३ को दिनरात श्री राम धुन रामायण मन्डली के तरफ से हुआ। पूर्व पर हवन करके प्रसाद बांटा गया। श्री मारुति भगवान का जलूस भी बड़े धूम धाम से निकाला गया।

—रुद्रदास

अनगड़ा :—आश्विन शुक्ल १ से ६ तक चितड़ाग के श्री महावीर मन्दिर में मानस पारायण १८ सदस्यों द्वारा हुआ। अन्त में हवन हुआ। इस पारायण में एक कुत्ता और एक मैना जब तक पाठ होता था तब तक बराबर कथा श्रवण करते रहते थे। और जय बोलने पर वे भी सिर उठा कर कुछ कह जाते थे मानो वे भी जय बोलते थे। मैना ने तो 'राम' कहना भी सीख लिया है।

—बनवारी लाल

करकबेल :—ता० १३, १४ सितम्बर को श्री राम रक्षित जी रामायणी का प्रवचन हुआ।

—गुलजारी लाल

सिद्धनगर :—सावन बदी १३ से भादो सुदी ७ अर्थात् ४१ दिन तक मानस के १०६ अखंड पाठ और वाल्मीकि रामायण तथा २४ घन्टे का अखंड कीर्तन हुआ।

—भागवत

खंडवा :—ट्रेनिंग कालेज में पं० श्री रामरक्षित जी रामायणी का ता० २६-९-५३ को कालेज के छात्रों और लेक्चरारों के बीच श्री रामचरितमानस पर प्रवचन चरित्र-चित्रण

पर विशेष ध्यान देने के अलिये ौर श्री भगवान राघवेन्द्र के चरित्र प्रभाव पर हुआ।

—पूर्ण प्रसाद मिश्र

जुन्हैटा :—ता० २२-६-५३ को रात्रि से अखंड पाठ श्री कुमारी रामाबाई के यहाँ हुआ। बाद में कीर्तन हुआ।

सेंधवा :—श्री गणेशोत्सव ता० १२-६-५३ को शुरू हुआ उसी समय से श्री पं० रामरक्षित जी रामायणी की कथा श्री राम मन्दिर में श्री भरत लाल जी के चित्रकूट मिलन पर ६ दिन तक हुये।

—भागीरथ भराड़िया

भड़ेवनः—भाद्र सुदी ७ से १४ तक श्री नाम यज्ञ हुआ। अन्तिम दिन गाँव के चारों ओर और मंदिरों की परिक्रमा करते समाप्त हुआ। हवन, ब्राह्मण भोजन हुआ। भोयली में भी इसी तरह का संकीर्तन यज्ञ हुआ।

—गम्भीर सिंह

अफरीदः—श्री पं देवीधर जी शास्त्री वेदान्त-केशरी की ७३ वर्ष की अवस्था में ता० १६-६-५३ को ६॥ बजे अकस्मिक मृत्यु हो गई। आप प्रथम मानस सङ्घ सम्मेलन बनारस के अध्यक्ष थे। प्रभु से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को शान्ति दें।

—सीताराम शर्मा

उमरेठः प्रतिमास नवाह पाठ होता है। पुरुषोत्तम मास में दो नवाह पाठ और भागवत सप्ताह हुआ था। भाद्रपद शुक्ल नवाह पाठ और भाद्रपद कृष्ण ४ से आश्विन सुदी ७ तक गीता शुरू हुआ। श्री रामपंचायतन की अर्चन, पूजन, नैवेद्य, आरती, हुई। प्रसार वितरण होता था। अषाढ़ शुक्ल ६ से १५ तक श्री धर्मानन्दा तीर्थ रामायणी का प्रवचन हुआ। ३००,४०० प्रेमी आते थे।

—मंगुभाई

[illegible]पुरः—भाद्रपद ५ से १३ तक आठ साधकों द्वारा नवाह पाठ आनन्द पूर्वक हुआ।

—शिवचरणलाल

कन्देलीः—भाद्रपद वदी३ से ११ तक नवाह पाठ हुआ। पूर्ण पर हवन, ब्राह्मण भोजन, कीर्तन, वंदना तथा प्रसाद वितरण हुआ।

—रघुवरदास रामावतार

शुरलाः—प्रत्येक मंगलवार को प्रत्येक सदस्यों के यहाँ सुन्दरकाण्ड का पाठ बड़े उत्साह से लिया जाता है। श्री मोहन लाल व्यास और श्री जागीरदार सा० के यहाँ मंगलवार को क्रमशः सुन्दकाण्ड का पाठ हुआ।

—शोभालाल

लालेचोकारोडः—ता० ६, ११, १३, १४ सितम्बर को क्रमशः सब श्री चुन्नीलाल, रामसेवक वमनीतिया; माध्यमिक शाला में अखंड पाठ, भजन, आरती तथा प्रसाद वितरण हुआ। ता० १६ का डोल ता० २२ अनन्त चौदस को श्री गणेश विसर्जन तथा जलूस निकाला गया। ता० १६, ३० अगस्त को सर्व श्री वीरन मुहारिया, दुर्गा प्रसाद जी अलोड़िया के यहाँ मानस का प्रवचन हुआ। ता० ३१ जन्माष्टमी का श्री रामप्रसाद के यहाँ अखंड पाठ हुआ। ता० ६ अगस्त को श्री रामजानकी मन्दिर में मानस की कथा हुई। श्री सखाराम भमोरहा के ग्रह पर पाँच सदस्यों द्वारा अखंड पाठ विप्र धेन सुर संत हित...सम्पुट से तथा १८ पाठ हनुमान चालीसा के हुए। अंत में हवन प्रसाद वितरण तथा सदस्य भोजन हुआ।

—लालचन्द्र वमनीतिया

पिपरियाः—प्रथम श्रावण सोमवार को श्री मोहनलाल छदामी लाल जी की दुकान में २४ घन्टे का पारायण श्री बृजमोहन लाल तथा श्री तिवारी जी द्वारा सम्पन्न हुआ। द्वितीय श्रावण सोमवार को श्री राम निवास जी हुरकट के यहाँ २४ घन्टे का पारायण, तृतीय

श्रावण सोमवार को हिन्दी साहित्य परिषद् कार्यालय में २४ घन्टे का पारायण व श्री तुलसी जयन्ती, आरती विद्वानों के भाषण। चतुर्थ श्रावण सोमवार को श्री नरसिंगदास खुशालचन्द्र जी की दूकान में २४ घन्टे का पारायण तथा सुन्दरकांड सम्पुट सहित ५० आदमियों द्वारा हुआ। श्रावण में श्री जगदीश प्रसाद ब्राह्मण के २४ घन्टे का पारायण, भाद्रपद कृष्ण में श्री रवीशङ्कर जी ब्राह्मण के यहाँ २४ घंटे का पारायण, भाद्रपद कृष्ण ३ से ७ दिन तक अखंड पाठ व हरे राम का अखंड कीर्तन, सुन्दर काण्ड के पाठ हुए। भाद्रपद कृष्ण १० को जलूस निकाला गया बाद में हवन, आरती, १०१ कन्यायें तथा ५१ ब्राह्मणों का भोजन कराया गया। श्री शुकदेव प्रसाद जी माहेश्वरी के यहाँ अखंड पाठ हुआ। सभी पाठों के अन्त में आरती, प्रसाद वितरण होता था। श्री कावरा जी के गुरु महाराज के आदेशानुसार १० माह से प्रत्येक रविवार को संकीर्तन तथा श्री कंज जी के आज्ञानुसार श्री रामायण जी का पाठ प्रेमी वैष्णव द्वारा होता है। तुलसी राम रामायण मंडल द्वारा रोज सामूहिक रामायण पाठ अर्थ सहित होता है।

—बदरी प्रसाद राठी

प्रतापपुरः—श्री भोलासिंह जी गौड़ ने तीजा पर्व पर स्त्रियों द्वारा पूजा, हवन हुआ। रामायण का एक आवर्त अखंड पाठ, श्री गणराज जी का झूला तथा झांकी दर्शन, शिव बरात प्रदर्शन, प्रवचन तथा जलूस निकाला गया।

—भास्करसिंह परिहार

रामवन समाचार

मानस आश्रमः—सितम्बर मास में मानस का एक सम्पूर्ण अखंड पाठ नित्य होता रहा। इस मास में मानस आश्रम में ३८१॥≡)॥। खर्च हुआ और ३२०।॥≡)। की आय हुई। श्री मारुति रागभोग में २८८।॥)॥ खर्च हुआ और १५४ की हुई। इस प्रकार मानस आश्रम में ६०॥)॥ और रागभोग में १३४)॥ अधिक खर्च हुआ कुल कमी १६४।॥-) की रही। पिछली कमी २०६८।-)। सहित अब कुल २२६३=)। की कमी रही। इस मास में भी अखंड संकीर्तन के कारण खर्च अधिक हुआ। आगामी मास में नवरात्र के कारण अधिक खर्च होगा। यदि अनुकूल आय न हुई तो आश्रम संचालन में बाधा पड़ने का भय है।

मानस आश्रम

१-६-५३

२॥) श्री झुलाराम अग्ररिया, सीपत

३-६-५३

२५) गुप्तदान

४-६-५३

६) श्री जगन्नाथ प्रसाद गुप्त, मुंगलसराय

५-६-५३

५) श्री रामप्रसाद पोद्दार, देहली

७-६-५३

११) श्री रामविलास शङ्कर लाल सराफ, यवतमाल

८-६-५३

१।।।) श्री शिवक लखन लाल श्रीवास्तव, बिलासपुर

३) श्री बी० पी० शुक्ला, पन्ना

१०-६-५३

१५) श्री हनुमानबक्सजी, डिबूगढ़

१०१) श्रीरामलाल ओंकारमल चोखानी, पोवाई

१=) श्री दीवान केशवदास, सिरसा

११-६-५३

११) श्री बृजराज सिंह भदौरिया, नकुलनार

१४-६-५३

२) श्री राम जन्मप्रसाद, कलकत्ता

३८) श्री सेठ बिरदीचन्द्र पोद्दार, नागपुर

१६-६-५३

२) श्री भागवत पाण्डेय, विरार, (बम्बई)

५) श्री भुजवीर सिंह, रुड़की

१८-६-५३

५) श्री डी० एल० चारन, अकलेश

५) श्री दयाराम कृष्ण कुमार, टिटिलागढ़

२१-६-५३

५) श्री देवधर प्रसाद साहू, ओटेबन्द

२२-६-५३

२५) गुप्तदान

२४-६-५३

२५) श्री सेठ किशनलाल मुंदड़ा बम्बई

२६-६-५३

५) श्री हरीराम अग्रवाल, बरगढ़

२=) श्री चेतन सिंह नगरी

२६-६-५३

५) श्री रामभवन, नारनौल

३०-६-५३

५) श्री रघुवीर सिंह बलवीर सिंह, नकुलनार

५) श्री लालबहादुर सिंह, नकुलनार

४।≡)। चढ़ोत्री

३२०।।।≡)।

श्रीमारुति रागभोग

१-६-५३

१०) श्री प्रहलाद राम सीताराम, खेतड़ी कामरूप

५१) श्री पं० अहरवादीन मश्र, शेषपुर

४-६-५३

५) श्री मीठालाल राठी द्रुग

५-६-५३

२१) श्री ठा० हरशङ्कर लाल सिंह बघुवार

८-६-५३

१०) श्री रामचन्द्र शर्मा, ५) रामस्वरूप, ५) दिल्ली

१०-६-५३

२) श्री छोटेलाल अग्रवाल, इलाहाबाद

५) श्री ओमप्रकाश जी, दिल्ली

२५) श्री रामलाल ओंकारमल चोखानी, पोवाई

१४-६-५३

१।) श्री रामरतन शर्मा, झाँसी

१७-६-५३

५) श्री पं० मनोहरलाल तिवारी, चाँपा

२१-६-५३

५) श्री रमेश्वरसिंह वकील, गोंड़ा

२३-६-५३

१५) श्रीमती शांतरा देवी, १०) श्री बाई देवकी ५), तितलागढ़

३) सर्वश्री, अमृतलाल शर्मा १, बुड़गा राम १), ठा० शरदचन्द्र सिंह १); धुरकोट

२४-६-५३

५) श्री चुन्नीलाल खत्री, कन्नौज

२) श्री देवकामता दीक्षित, कानपुर

५) श्री किशनलाल मुंदड़ा, बम्बई

२६-६-५३

१) श्री शिवराज सिंह झरहा

२८-६-५३

११) श्री रामरक्षित जी रामायणी, बनारी

२६-६-५३

५) श्री रामभवन, नारनौल

३०-६-५३

२1) श्री गोपाल, सतना

११) श्री सेठ रामचन्द्र, सतना

१५४।।।) कुल। दाताओं को धन्यवाद।

मानस यज्ञः—साधक शुल्क में ४१) की आय हुई। जो पिछली कमी ३६१) में घटाने से अब ३२०) बाकी रहे।

१०-६-५३

२१) श्री दीवान केशवदास, सिरसा

१६-६-५३

२०) श्री भागवत पान्डेय, विरार (बम्बई)

४१)

श्री रामनाम सेवाः—श्री रामनाम मंदिर में ४।≡) चढ़ौत्री के प्राप्त हुए। यह जमा हैं और श्री रामनाम प्रचार में खर्च किये जाँयगे।

श्री तुलसी मन्दिरः—इस मास में ६७) प्राप्त हुए। पिछली बाकी २३।।)।।। की पूर्त्ति हो कर अब ४३≡)। जमा रहा।

१-६-५३

२) श्री चमरू जी महतो, पंथा

३-६-५३

५) श्री हरिश्चन्द्र बड़ोन्या, चीचली

४-६-५३

१०) श्री शालिगराम परसाई, करेली

५-६-५३

६) महिला शाखा चीचली, मंत्री श्रीमती कस्तूरी बाई वैश्य

८-६-५३

५) श्री पुरुषोतम तिवारी, पेटरवार

११-६-५३

७) श्री गोपाल दास खण्डेलवाल, फतहनगर

१४-६-५३

५) श्री राम बीज पाण्डे चिल्हारी

१५-६-५३

७) श्री अमृत लाल सोनी, चीचली

१६-६-५३

७) शाखा नन्द बाई मन्त्री श्रीनिवास भांवर

१८-६-५३

५) श्री सुन्दर लाल तिवारी, इन्दौर

२६-६-५३

२) शाखातुलसी, श्री घांसीराम

३०-६-५३

३) श्री नन्द लाल नामदेव, सतना

६७)

पारायण मंदिर :—इस मास में ६)प्राप्त हुए। पिछले १६) सहित अब २८) जमा है।

४-६-५३

२) श्री ठा० अधार सिंह, गोटेगाँव

८-६-५३

७) श्री पुरुषोत्तम तिवारी पेटरवार

६)

गोशालाः—इस मास में ३१) की आयु हुई। पिछली रकम २५६।।=)।।। सहित अब २८७।।-)।।। जमा हैं।

८-६-५३

१५) श्री सेठ रामचन्द्र सतना

१५-६-५३

१) श्रीमती द्रोपदी बाई, कटनी

३०-६-५३

१५) श्री सेठ राम चन्द्र, सतना

३१)

श्री रामसंस्कृत विद्यालय भवन :— की स्थिति पूर्ववत् है।

कुटीर विभागः—

नर्मदाखंड कुटीर :— में श्री पं० मोहन लाल तिवारी चांपा से ५) प्राप्त हुए। १८५॥)॥। बाकी थे। अब १८०॥)॥। की पूर्ति बाकी है।

खम्हरिया कुटीर :— में ४०) प्राप्त हुए। पिछले १५।॥) सहित अब १६१॥।) जमा हैं।

३-९-५३

१६) श्री जमुना लाल मन्त्री शाखा खम्हरिया

५) भंवर लाल गुप्ता मन्त्री भिनपुरी

१४-९-५३

२) शाखा बुन्देली, श्री मन्त्री तीरथराम

७) शाखा टाटावाही, श्री तेजराम जी

१८-९-५३

१०) श्री मीठा लाल राठो दुर्ग

४०)

कमल कुटीर :— गत मास में प्रकाशित श्री राम नाम मन्दिर के हिसाब के अनुसार ७४३≡) आना बाकी है।

डांगोढाना और कोरी कुटिया :— की स्थिति पूर्ववत् है।

मानस प्रचार :— सितम्बर मास में सदस्य शुल्क से १४८॥) प्राप्त हुए। खर्च कार्यालय में ८१॥)॥ और चिट्ठी में ८६।)॥ कुल १६७॥।-)हुआ। १८-)की कमी रही। जो पिछली बचत ४५।)॥। में से घटाने से अब २६≡)॥। जमा रहे।

श्री रामनाम लड्डू :— सितम्बर मास में २०५ श्री रामनाम लड्डू तैयार हुए। १५० लड्डू दैनिक क्रम में श्री मारुति जी को समर्पण हुए। बाकी अक्षय तृतीया के लिये रखे गये। केन्द्रों की स्थिति इस प्रकार है:—लादीगढ़ १३६, परोख १२६, मुलठाना १००, डवरामंडी ७८।

शुभागमन

इस मास में बधुवार शाखा के मंत्री श्री डा० हरशङ्कर लाल और करेला शाखा के मंत्री श्री पं० सूंगाराम जी पाठक रामवन आये। सुमेरपुर तथा छतरपुर से यात्रियों की एक एक टोली आई। प्रत्येक में, ८, १० प्रेमी थे।

भावी सम्मेलन

लोहारदगा

कार्तिक शुक्ल ४ मंगलवार, तारीख १० नवम्बर से कार्तिक शुक्ल ६ गुरुवार तारीख १२ नवम्बर तक।

रांची

कार्तिक शुक्ल ८ शनिवार तारीख १४ नवम्बर से कार्तिक शुक्ल १० सोमवार तारीख १६ नवम्बर तक।

उपरोक्त तिथियाँ निश्चित हो चुकी हैं। राँची तथा हजारी बाग, पलामू आदि समीप जिलों के मानस प्रेमियों तथा मित्रियों को अवश्य भाग लेना चाहिये।

अगहन में

बिडोला जिला सीतापुर में सम्मेलन तथा आमगाँव बड़ा जिला हाशंगाबाद में मानस में यज्ञ होने की आशा है। पूस के लिये रमपुरा जिला दुर्ग में व्यवस्था हो रही है।

शारदा प्रसाद

अत्यन्त आवश्यक

मानस-मणि के बारहवें वर्ष का यह ग्यारहवाँ अंक आपके हाथों में है। बारहवाँ अंक तारीख १-१२-५३ को प्रकाशित होकर वर्ष पूर्ण हो जायगा। नये वर्ष का प्रथम अंक पहिली जनवरी १९५४ को प्रकाशित होगा।

विगत अंकों में मैंने प्रेमी ग्राहकों का ध्यान डाक विभाग की व्यवस्था की ओर आकर्षित किया है। उसे पढ़कर कुछ ग्राहकों ने १९५४ का वार्षिक मूल्य मनीआर्डर द्वारा भेज दिया है। हम उनके आभारी हैं। अब सब ही प्रेमियों से प्रार्थना है कि वे आगामी वर्ष का चन्दा मनीआर्डर द्वारा भेजने की कृपा करें।

(१) वी॰ पी॰ मंगाकर ॥) व्यर्थ खोना उचित नहीं है।

(२) इधर हर महीने में अनेक ग्राहकों के अंक डाक में खोये हैं। सूचना मिलने पर हमने यह अंक बराबर दुबारा भेजे हैं। साथ ही डाक विभाग के अधिकारियों से शिकायत की है। अब पोस्ट मास्टर जनरल नागपुर का पत्र आया है कि वे यह दोष मिटाने की विशेष व्यवस्था कर रहे हैं। अवश्य ही भविष्य में ग्राहकों को अंक समय पर मिलने की आशा है। फिर भी दुबारा भेजने की हमारी नीति में कोई परिवर्तन न होगा। खोये अंक के बदले के अंक यहाँ से पुनः भेजे जाँयगे।

(३) पोस्ट मास्टर जनरल के इस आश्वासन पर प्रेमियों को अधिक संख्या में मित्रों को मानस-मणि के ग्राहक बनाना उचित है। आशा है आप तथा मित्रों का चन्दा शीघ्र मनीआर्डर द्वारा भेजेंगे।

(४) हमें कुछ विशिष्ट विद्वानों के सहयोग का आश्वासन मिला है। भविष्य में अधिक उपादेय लेख प्रकाशित होना निश्चित है।

हमें आशा है हमारे सभी प्रेमी ग्राहक समय से रुपये भेज देंगे। वी॰ पी॰ भेजनी ही न पड़ेगी पर जिनके रुपये ३१-१२-५३ तक न आजायँगे उनके नाम १-१-५४ को ही वी॰ पी॰ पोस्ट कर देने का भी प्रबन्ध हमने कर लिया है। इन कुल बातों को ध्यान में रख कर आप अपना सहयोग प्रदान करें और हमें अधिक सेवा करने का अवसर प्रदान करें यही प्रार्थना है।

शारदा प्रसाद
व्यवस्थापक
मानस मणि
पो॰—रामवन (जि॰—सतना)

रामवन के विविध कार्य

१—वर्ष में श्रीरामचरितमानस का दो पाठ करने की प्रतिज्ञा करने वाले सज्जन मानस संघ के सदस्य बनाए जाते हैं। आजीवन शुल्क ॥) है। जहाँ नौ सदस्य हो जाते हैं, वहाँ शाखा बन जाती है। इस समय देश में मानस संघ के ३२१०१सदस्य हैं और १५३७ शाखायें हैं।

२—रामचरितमानस का प्रचार एवं अध्ययन व्यापक करने के लिए यह 'मानस मणि' मासिक पत्र बारह वर्ष से निकल रहा है। इस का वार्षिक मूल्य ३) है।

३—तुलसी साहित्य का प्रकाशन मानस प्रकाशन लिमिटेड द्वारा होता है। कम्पनी का प्रत्येक शेयर १०) का है। कम्पनी १६ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है। स्थायी ग्राहक शुल्क २) है। स्थायी ग्राहकों को प्रकाशित ग्रंथों पर २५% कमीशन दिया जाता है।

४—श्रीरामचरितमानस पत्र व्यवहार विद्यालय द्वारा मानस संघ घर बैठे श्रीरामचरितमानस की शिक्षा देता है। विद्यालय का पाठ्य विषय तीन वर्षों का है और प्रथम वर्ष का शुल्क १०) है।

५ - मानस आश्रम में नित्य अखण्ड मानस पाठ होता है। यहाँ रह कर साधक एकान्त में साधन भजन करते हैं।

६—तुलसी संग्रहालय भी रामवन में है।

७—मानस संघ राम नाम लड्डू लिखने का प्रचार करता है। ये लिखित रामनाम श्रीमारुति जी को अर्पण किये जाते हैं। २७ करोड़ अर्पित हो चुके हैं।

८—श्री राम संस्कृत विद्यालय में वाराणसेय परीक्षा के पाठ्यक्रम के साथ मानस अध्ययन की भी सुविधा रखी गई है।

हर विभाग में आपका सहयोग अपेक्षित है।

'मानस मणि'

पो०—रामवन (सतना)

ग्रा० न०—

सम्पादक—सुदर्शन सिंह

प्रकाशक—शारदा प्रसाद, मन्त्री, मानस सङ्घ, रामवन, (सतना)। मुद्रक—माधो प्रिंटिङ्ग वर्क्स, प्रयाग।

मानसमणि



मणि १२ | दिसम्बर १९५३ | आलोक १२

वार्षिक मूल्य तीन रुपया

वी० पी० से तीन रुपया दस आना

प्रेमी ग्राहकों से निवेदन

मानसमणि के बारहवें वर्ष का बारहवां अंक आपके हाथ में है। इस अंक से यह वर्ष पूर्ण हो रहा है। अधिकांश ग्राहकों का चन्दा भी इससे पूर्ण हो रहा है। उनसे प्रार्थना है कि आप नये साल का चन्दा शीघ्र मनीआर्डर द्वारा भेजदें। परिस्थिति का पूर्ण विवेचन गत मास के अंक में किया जा चुका है।

बारहवें वर्ष में भी मानसमणि को हानि उठानी पड़ी है पर उसकी मात्रा अन्य वर्षों से कम है। आपके थोड़े सहयोग से हानि का क्रम बन्द हो सकता है।

(१) कृपया अपना चन्दा यह अंक पाते ही मनीआर्डर द्वारा भेजदें।

(२) आपके कोई मित्र ग्राहक बनना स्वीकार करें तो उनका चन्दा भी साथ ही भेजें।

(३) जो सज्जन भविष्य में ग्राहक न रहना चाहें वे इसकी सूचना एक कार्ड द्वारा अवश्य भेजदें।)॥ खर्च करके एक धार्मिक संस्था के ॥) बचाने की कृपा करें।

कुम्भ मेला, प्रयाग

में मानस संघ का कार्यालय रखने का विचार नहीं है। पूरे मास के लिये आश्रम छोड़ना उपयुक्त न होगा। प्रेमियों से प्रार्थना है कि इस यात्रा क्रम में वे रामवन आवें। अपना आश्रम देखें, श्री मारुति भगवान के दर्शन करें। जिनकी यात्रा में मार्ग में सतना स्टेशन पड़ेगा उनके लिये तो यह अत्यन्त सरल होगा। सतना से रामवन १० मील है। दिन रात लारी चलती हैं। जिनके मार्ग में सतना नहीं है वे प्रयाग से सतना आने की कृपा करें। ऐसा सहज सुयोग बार-बार प्राप्त न होगा।

सम्मेलन क्रम

प्रेमी ग्राहकों के पास यह अंक पहुँचने के पूर्व लोहरदगा में सत्रहवाँ मानस सङ्घ सम्मेलन हो चुकेगा। बिठौली में अठारवाँ अधिवेशन मार्गशीर्ष शुक्ल ७, ८, और ९ तारीख १३, १४ तथा १५ दिसम्बर को होगा। यह स्थान लखनऊ सीतापुर लाइन पर स्थित कमलापुर स्टेशन के समीप है। सीतापुर, लखनऊ, कानपुर तथा अन्य समीपी जिलों की शाखाओं तथा प्रेमियों को विशेष रूप से इसमें भाग लेना चाहिये। श्री तुरन्त नाम आश्रम के श्री स्वामी १०८ श्री रामनारायण दास जी बड़े उत्साह से व्यवस्था कर रहे हैं।

—शारदा प्रसाद

नौका

चैत्र के मानस यज्ञ में श्री रामनाम नौका समर्पण में तो आप सहायक होंगे। १६५०५ श्री राम नाम लड्डू तैयार करने है। आप कितने भेजेंगे।

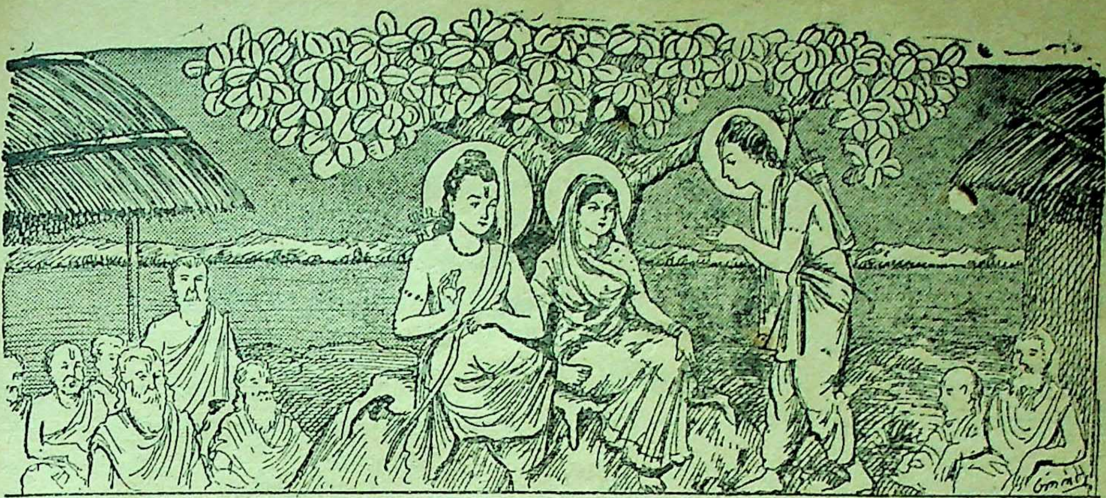
श्री मारुति भगवान की पोशाक पर्दा, पात्र आदि की सेवा का भी श्रेष्ट अवसर है। आवश्यक समान की सूची मंगाकर देखें।

—शारदा प्रसाद

आठ आने में दो हकदार
एक आप दूसरी सरकार
निर्णय पर आपका अधिकार

मानस मणि का १९५४ का चन्दा मनीआर्डर द्वारा भेजें तो अपने ॥) पर आपका अधिकार बना रहेगा। वी० पी० मंगावें तो वे चले जाँयगे और पायेगी सरकार। क्या मनीआर्डर भेजने में इतना कष्ट है कि उसका मूल्य ॥) से अधिक माना जाय। कृपया मनीआर्डर ही भेजेंगे। न भेजेंगे तो वी० पी० जायगी ही।

जिन्हें अगले साल ग्राहक न रहना हो वे सूचना देने की कृपा करेंगे।



मानस मणि

राम भगति मनि उर बस जाके। दुख लवलेस न सपनेहु ताके॥
चतुर सिरोमनि तेइ जग माहीं। जे मनि लागि सुजतन कराहीं॥

मणि १२ | रामवन—मार्गशीर्ष, मानस संवत् ३८०—दिसम्बर १९५३ ई० | आलोक १२

मानस की सूक्तियाँ

मोहि अनुचर कर केतिक बाता। तेहि महँ कुसमउ बाम बिधाता॥
जौं हठ करउँ त निपट कुकरमू। हर गिरि ते गुरु सेवक धरमू॥

नीति प्रीति परमारथ स्वारथ। कोउ न राम सम जान जथारथ॥

करि बिचार जिय देखहु नीके। राम रजाइ सीस सबही के॥

आरत कहहिं बिचारि न काऊ। सूझ जुआरिहि आपन दाऊ॥

जे गुरु पद अंबुज अनुरागी। ते लोकहुँ बेदहुँ बड़ भागी॥

फरइ कि कोदव बालि सुसाली। मुकता प्रसव कि संबुक काली॥

हित अनहित पसु पच्छिउ जाना। मानुस तन गुन ज्ञान निधाना॥

सीतापति सेवक सेवकाई। कामधेनु सय सरिस सुहाई।

—:०:०:—

सहस्र रश्मि

(७७२)

ज्ञान के विना समत्व, तथा श्रद्धा के विना धर्म नहीं होता।

(७७३)

जहाँ क्रोध है वहाँ ज्ञान हो ही नहीं सकता क्योंकि क्रोध का ल ही है अज्ञान।

(७७४)

मृत्यु जीवन की एक अवस्था है, अन्त नहीं। वह एक बड़े ग्रन्थ के एक अध्याय की समाप्ति का पूर्ण विराम है। जीवन अनादि और अनन्त है।

(७७५)

जिस अन्न का आज भोजन किया वही प्रातः विष्ठा हो गया। फिर उसी अन्न से बना शरीर कितने दिन रहेगा ?

(७७६)

यदि विष्ठा, मल, मूत्र का ढेर शरीर में प्रेम है तो नर्क में भी होगा। क्योंकि वहाँ भी तो यही सब हैं।

(७७७)

मनुष्य योनि में उसे प्राप्त करने का यत्न करो जो दूसरी योनियों में न मिल सके। ये विषय तो सभी में मिल सकते हैं।

(७७८)

देखो तो क्या जो तुमसे प्रेम करते हैं वे सचमुच प्रेम करते हैं, यदि तुम निर्धन, वृद्ध, रुग्ण होते तो क्या वे यों ही तुमसे प्रेम करते ?

(७७९)

जब तक धन है तब तक सभी प्रेमी हैं। पर स्मरण रखो न न रहने पर ये बात भी न पूछेंगे।

(७८०)

कुटुम्बी तुमसे इसलिये स्नेह करते हैं कि तुमसे आशा है, स्वार्थ है। यदि यह न हो या जब तुम निर्धन और वृद्ध हो जाओगे वे तुमसे घृणा करेंगे।

(७८१)

हम बड़े से बड़ों को मृत्यु का ग्रास होते देखकर भी निश्चिन्त हैं, आश्चर्य ?

(७८२)

जीवन का चरम लक्ष्य आज ही प्राप्त करो मृत्यु किसी की प्रतीक्षा नहीं करती।

(७८३)

क्या हुआ यदि साँसारिक कार्य अपूर्ण है। यदि तुम आज ही न रहो तो वे कैसे पूर्ण होंगे ?

(७८४)

'ये लोग मेरे ही आश्रित हैं यह कल्पना मोह के अतिरिक्त और कुछ नहीं। क्या यदि आज तुम न रहो तो ये भी नष्ट हो जायँगे ?

(७८५)

संसार के कार्य कभी समाप्त न होंगे। उन्हें समाप्त करने की कल्पना कोरी भूल है। उन्हें तो यों ही छोड़ना ही पड़ेगा।

(७८६)

यदि तुम सोचते हो कि इतने कार्य करलूं तब प्रभु प्राप्ति का यत्न करूंगा, तो कभी भी यत्न नहीं कर सकोगे।

(७८७)

आज ही आगे बढ़ो। किसी के बिना संसार का कोई कार्य रुका नहीं रहता।

(७८८)

यदि जन्म मरण के चक्र से छूटने का यत्न न किया तो सम्पूर्ण विश्व पर विजय पा लेना भी व्यर्थ ही है।

(७८९)

इस अनित्य शरीर से नित्य प्रभु को प्राप्त करो। यदि अनित्य से अनित्य की ही प्राप्ति में लगे रहे तो जीवन व्यर्थ गया।

—:०:—

मानस में राम-राज्य

[श्री विश्वनाथ प्रसाद जी गिदरोनियाँ एम० ए०, एल० एल० बी०, मानस रत्न]

भय एवं अविश्वास की आशंकाओं से परिपूर्ण प्रजातंत्रवाद एवं साम्यवाद की कलह-मूलक गति विधियों के फल-स्वरूप तृतीय-महायुद्ध के प्रारम्भ होने की विडम्बना में फँसे मानव-समाज के समक्ष 'राम-राज्य' का नाम लेना अवश्य ही लोगों को बेढंगा सा प्रतीत होगा किन्तु इस अशांत वातावरण में हमारी साँस्कृतिक परंपरा ही हमें उस प्रकाशपुंज, आनंदमय, शान्ति के साम्राज्य को पाने का मार्ग दर्शा सकती है। जिस रामराज्य को हमने स्वाधीनता संग्राम में साध्य बना, राज-नैतिक स्वराज्य प्राप्त किया, वही रामराज्य हमारा भविष्य का स्वप्न भी है। बिना 'राम-राज्य' के हमारा स्वराज्य अपूर्ण एवं निरर्थक है।

श्रीराम पूर्वतापनीयोपनिषद् में 'राम' शब्द के विविध अर्थों को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि 'वे राज्य पाने के अधिकारी महीपालों को अपने आदर्श चरित्र द्वारा धर्म-मार्ग का उपदेश देते हैं।' अस्तु यदि हमें सच्चे अर्थ में स्वराज्य की स्थापना करना है तो उसका एकमेव आधार 'रामचरित' ही मानना होगा।

'स्वराज्य' और 'रामराज्य' में चोली और दामन का साथ है। 'रामराज्य' से विलग 'स्व-राज्य' की कल्पना ही शक्य नहीं। जो स्वाधीन होता है, वही सुखी रहता है। 'पर-तंत्र' में सुख मृग-जल की भाँति मिथ्या एवं दुःख का कारण होता है। इसीलिये भारतीय आचार्यों ने कहा है कि—'सर्व आत्मवश सुख' तथा 'पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।' यह सुख की इच्छा ही समस्त कार्य-कलापों की प्रेरक शक्ति है। राम के सिंहासनासीन होते ही चतुर्दिक लोकोत्तर आनंद का साम्राज्य छा जाता है—

> राम राज्य बैठे त्रैलोका।
> हर्षित भए गए सब शोका॥

इस प्रकार राम-राज्य आनंद से परिपूर्ण था और आनन्द की परिपूर्णता ही 'स्व-राज्य' का लक्षण है।'स्व'—आत्मा × आधीन अर्थात् आत्माधीन या 'आत्म-तंत्र' में ही 'पर' का विनाश होकर 'स्व' की सत्ता स्थापित होती है। 'राम' इसी 'आत्म' शब्द का परिचायक है अतएव 'स्व-तंत्र' और 'राम-तंत्र' भिन्न नहीं हैं।

> भूमि सप्त सागर मेखला।
> एक भूप रघुपति कोशला॥

सप्त समुद्र से घिरी हुई पृथ्वी के एक छत्र शासक राम थे। 'राति राजते वा महीस्थितः सन इति रामः' इस विग्रह के अनुसार जो महीतल पर स्थित होकर, भक्तजनों का मनोरथ पूर्ण करते और राजा के रूप में सुशोभित होते हैं, वे राम हैं।'

(श्री राम पूर्वतापनीयोपनिषद्)

इस दृष्टि से समस्त प्राणि मात्र के मनो-रथों को पूर्ण करने वाले तुलसी के राम के लोकरंजनकारी अभिराम स्वरूप की झाँकी हमें रामचरितमानस में प्राप्त होती है।

प्रजा-तंत्र के इस युग में "प्रजा का राज्य, प्रजा के द्वारा तथा प्रजा के लिये" ही श्रेयस्कर समझा जाता है किन्तु असंख्य जनसंख्या वाले राज्यों में 'प्रतिनिधि मूलक-प्रजातंत्र' ही सफल

एवं सम्भव हो सकता है। पर क्या कोई किसी का पूर्ण-रूपेण प्रतिनिधित्व कर सकता है? व्यवहार इस सिद्धांत का प्रयोग, इसका खोखलापन प्रकट कर देता है तभी दूसरा व्यावहारिक सूत्र—"अधिक से अधिक लोगों को अधिक से अधिक सुख" सामने आता है। तात्पर्य यह कि ऐसी अवस्था में राष्ट्रपति लिंकन की परिभाषा के सच्चे अर्थ में प्रजातंत्र अव्यावहारिक हो सिद्ध होता है। इसी बात को लक्ष्य कर महात्मा गांधी ने प्रजातंत्र के आधिभौतिक पक्ष से लोगों का ध्यान हटा कर आध्यात्मिक पक्ष की ओर आकृष्ट किया था। वे कहते हैं कि 'प्रजातंत्र की स्थापना जनता के अंतःकरण में हुआ करती है न कि शासन-यंत्र की बाह्य रूप रेखा में।' अतएव प्रत्येक नागरिक जब 'आत्म-भाव' में स्थित होकर 'आत्मा-राम' की सहायता से कामरूप स्वार्थी दुष्ट मन द्वारा सृजित रावणादि राक्षसों का बध कर डालते हैं तभी सच्चा प्रजातंत्र अथवा 'राम-राज्य स्थापित होता है।

अंग्रेज आदर्शवादी राजनीतिज्ञ ग्रीन के अनुसार राज्य अथवा शासन का मूलाधार, शासितों की स्वीकृति ही है— '(Will not force is the basis of State)' सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न (Sovereign) होकर भी 'प्रजा की स्वीकृति में ही 'राज्य' का शासन आधारित होता है यथा—

> एक बार रघुनाथ बुलाये।
> गुरु द्विज पुरवासी सब आए॥
> बैठे सभा संग द्विज सज्जन।
> बोले बचन भक्त-भय-भञ्जन॥
> सुनहु सकल पुरजन मम बाणी।
> कहौं न कछु ममता उर आनी॥
> नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई।
> सुनहु करहु जो तुम्हहिं सुहाई॥
> जो अनीति कछु भाषौं भाई।
> तो मोहिं बरजहु भय बिसराई॥

मानस की इन चौपाइयों से राम-राज्य में जन-गण कितने स्वतंत थे—अपना मतदान देने तथा राजा को अनीति से रोकने में, स्पष्ट ज्ञान हो जाता है। पाश्चात्य जगत में आदर्श राज्य शासन के लिये 'दार्शनिक राजा' की व्यवस्था दी गई थी तथा उसे अविवाहित रहने का निर्देश प्रसिद्ध राजनीतिक प्लेटो द्वारा किया गया था। इस प्रकार की व्यवस्था केवल राजा को ममत्व हीन होकर प्रजाहित में लगाने के लिए ही की गई थी। यह व्यवस्था भी राम-राज्य में पूर्ण रूप से विकसित हुई किन्तु परिमार्जित रूप में। भारत में विवाहित होना धार्मिक आदेश है तथापि ममत्व का लोक-हित के लिए समर्पण भी भारतीय संस्कृति का स्वाभाविक स्वरूप है। राम स्वयं अपने मुख से इस ममत्व का निषेध करते हैं—

> 'कहौं न कछु ममता उर आनी'

तथा उतने ही स्वाभाविक ढंग से वे 'प्रभुताई' (प्रभुत्व या Sovereignty) का राजा में निषेध करते हुए, प्रजा में ही उसका आरोप करते हैं।

> 'सुनहु करहु जो तुम्हहिं सुहाई'

मे तो स्पष्ट रूप से राम ने स्वयं को केवल सलाहकार के रूप में सीमित किया है, निर्णय की पूर्ण स्वतन्त्रता प्रजा को ही सौंप दी गई है। इसी आशय को व्यक्त करते हुए चाणक्य ने लिखा है—

> प्रजा सुखे सुखं राज्ञः प्रजनाम व हिते हितम्।
> नात्मप्रियं हितं राज्ञः प्रजानाँ तु प्रियं हितम्॥
> अर्थ शास्त्र १।१६।१६।

अर्थात् राजा का हित अहित कुछ भी नहीं हो सकता। प्रजा को जो प्रिय हो वहीं राजा

को भी प्रिय है।' शुक्रनीति में भी इसी मत का समर्थन किया गया है।

भारत के जिस काल की यह चर्चा है वह तो आदर्श-काल था। राम ने तो आदर्श-तंत्र को जन्म दिया था। उनके पूर्व भी राजा, प्रजा द्वारा निर्वाचित हुआ करता था और उसे राज्याभिषेक के अवसर पर प्रतिज्ञाभी वर्तमान राष्ट्रपति की भाँति ग्रहण करनी पड़ती थी। इसका उल्लेख अथर्ववेद में इस प्रकार किया गया है—"वह (वृत्तराज) श्रद्धा के साथ कहे जिस रात्रि में मैं पैदा हुआ हूँ उससे लेकर, जिस रात्रि में मैं मरूँ उस समय तक मेरे अच्छे काम मेरा संसार, मेरा सुकृत, मेरी आज्ञा, मेरी संतति—सब मुझे आप वर्ज दें यदि मैं आप (अर्थात् चुनने वाले विशः) को पीड़ा पहुँचाऊँ" अथर्ववेद (४।१।१५) इस प्रकार प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहने वाले राजा के ही विशेषण 'धृतव्रत,' 'सत्यसन्ध,' तथा 'सत्य-प्रतिज्ञ' हुआ करते थे। अतः राम की उपर्युक्त घोषणा का इस अथर्ववेद की प्रतिज्ञा से हम मिलान करें तो हमें स्पष्ट रूप से उनके उक्त कथन का आशय समझ में आ जायगा। वे कहते हैं—जो अनीति कछु भाषौ-भाई। तौ मोहिं बरजहु भय बिसराई॥ यह वास्तव में कितनी महान प्रतिज्ञा थी जिसके पालन में अन्त में उन्हें प्राण-प्रिया गर्भिणी आसन्न प्रसवा सीता को लोक-रंजन के लिये त्याग देना पड़ा। कितना महान् आदर्श है? जो लोग राम के चरित्र पर इस घटना को लेकर आक्षेप करते हैं वे राजा के इस कठोर कर्त्तव्य को भूल जाते हैं कि प्रजा ही राजा के कार्यों का विचार करती है तथा साधारण से साधारण नागरिक या राजकृतः के मत का महत्व राजा के व्यक्तिगत-जीवन से कहीं अधिक है।

राम के इस प्रजा सम्मत तंत्र का वर्णन तुलसी ने इस प्रकार किया है—

राम राज बैठे त्रैलोका।
हरषित भए गए सब सोका॥
बयरु न कर काहू सन कोई।
राम प्रताप विषमता खोई॥

'स्वतंत्रता' का लक्षण ही है—अखंड आनन्द की प्राप्ति तथा दुःख का नाश। अतएव राम के राज्याभिषेक होते ही त्रैलोक हर्षित हो उठा क्योंकि लोग स्वतंत्र में स्थित हो गए थे तब भला शोक का स्थान कहाँ? जहाँ स्व = आत्म-शासन ही रह गया वहाँ सब अपने ही हो गये। वह सम्पूर्ण राष्ट्र एक कुटुम्ब बन गया, पर के लिए कोई स्थान ही न रह गया और तब साम्यवाद स्थापित होते देर नहीं लगी; तभी तो दूसरी चौपाई तुलसी ने लिखी है—

बयरु न कर काहू सन कोई।
राम प्रताप विषमता खोई॥

जब सब एक ही राष्ट्र के अंग हो गए, जब केवल आत्म-भाव ही रह गया—'पर'—भाव की सत्ता समग्र रूप से ही नष्ट हो गई तब फिर वहाँ कौन छोटा और कौन बड़ा रह गया, कौन राजा और कौन रंक रह गया? वहाँ तो जहाँ देखो—'मैं ही हूँ' अर्थात् 'राम ही हैं' यही भावना व्याप्त हो रही थी, अतः विषमता पूर्ण-रूप से नष्ट हो गई। सारी सम्पत्ति राष्ट्र की सम्पत्ति हो गई और राजा तथा प्रजा सभी केवल उसके उपभोक्ता मात्र ही रह गए फलतः उस सुन्दर राष्ट्र का निर्माण हुआ जिसे आज हम खोजने पर भी न पा सकेंगे।

महाकवि ने उस आदर्श राज्य का वर्णन करते हुए लिखा है—

दैहिक, दैविक, भौतिक तापा।
राम राज नहिँ काहुहिव्यापा॥

न केवल प्रजा त्रितापों से ही मुक्त हो चुकी थी वरन् किसी की अल्प मृत्यु भी नहीं होती थी, सब सुन्दर स्वस्थ एवं निरोगी थे यथाः—

२

अल्प मृत्यु नहिँ कवनिउ पीरा।
सब सुन्दर सब बिरुज सरीरा॥

रामराज्य में कोई न तो निर्धन था, न दुखी और न दीन, वरन् कोई अविवेकी और लक्षण हीन भी न था।

'नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना।
नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना॥'

सभी चतुर, गुणवान तथा पंडित एवं ज्ञानी थे।

सब निर्दंभ धर्मरत पुनी।
नर अरु नारि चतुर सब गुनी॥
सब गुनग्य पंडित सब ग्यानी।
सब कृतज्ञ नहिं कपट सयानी॥

इस प्रकार किसी भी प्रकार की विषमता लोगों में नहीं रह गई थी। सभी ज्ञानी थे-चाहे शूद्र हो, अथवा वैश्य, ब्राह्मण हो चाहे क्षत्रिय। स्त्री और पुरुष में भी कोई विशेष विषमता नहीं रह गयी थी। इस प्रकार सम्पूर्ण राष्ट्र के नागरिक परस्पर परिपूरक अंग बन गए थे यह तो व्यावहारिक साम्यवाद है। जरा इसका फल आर्थिक साम्य भी देखिए। यह तो पहले ही लिखा जा चुका है कि वहाँ कोई दरिद्र और दीन नहीं था अतः परस्पर बराबरी वाले व्यक्तियों में फिर विनिमय अमूल्य ही होने लगता है क्योंकि अतृप्ति एवं अल्पता ही मुद्रा प्रचलन का एक प्रधान कारण है। जहाँ पूर्ण साम्यावस्था स्थापित हो जाती है वहाँ फिर हृदय का ही मूल्य प्रधान माना जाता है अतः बाजार का वर्णन करते हुए महाकवि ने लिखा है—

बाजार रुचिर न बनइ बरनत,
बस्तु बिनु गथ पाइए।
जँह भूप रमा निवास तँह की,
संपदा किमि गाइए॥
बैठे बजाज सराफ बनिक,
अनेक मनहुँ कुबेर ते।
सब सुखी सब सच्चरित सुन्दर,
नारि नर सिसु जरठ जे॥

इस प्रकार रामराज्य में वस्तुएँ अमुल्य प्राप्त होती थीं। भला पाठकगण विचार करें कि इतनी उच्चकोटि के साम्यवाद के दर्शन भला विश्व के साहित्य में हमें मानस को छोड़ और कहाँ प्राप्त हो सकेंगे? विभीषण ने भाई रावण को समझाते हुए कहा है कि—

चौदह भुवन एक पति होई।
भूत द्रोह तिष्टइ नहिं सोई॥ (३७।४।सु० का)

उपर्युक्त चौपाई में भली-भाँति यह स्पष्ट कर दिया गया है कि चाहे चौदह भुवनों का भुवनेश्वर ही क्यों न हो 'भूत-द्रोह' कर वह कभी राज्य नहीं कर सकता। यही कारण है कि सम्पूर्ण समृद्धि के साधनों के होते हुए भी 'लोकहित' एवं 'साम्यवाद' के अभाव में रावण का नाश हुआ। अतः अगर इन कतिपय पंक्तियों में महान् साम्यवादी आदर्श रामराज्य को हमारा राष्ट्र अपना सके, तो अवश्य ही भारत अपना भव्य-भाल संसार के अन्य राष्ट्रों के सम्मुख राष्ट्र (राजाहीन) बन समुन्नत कर सकेगा।

—:०:—

शिव-स्तुति

जय शिव शङ्कर, जय जग अघहर।
योगीश्वर जय; हर हर हर॥

कोटि चंद सुन्दर वपु धारी।
अशरण शरण भक्त भय हारी॥
पद नख ज्योति घोर अघ तम हर।
ध्यावत सदा सकल सुर मुनि नर॥

मुंड माल धर, कंठ गरल धर।
चिता भस्म धर, जय विषधर धर॥
जयति दिगम्बर, बाघम्बर धर।
अशिव वेश धर, जय जग शिवंकर॥

सूर्य सोम पावक, त्रय लोचन।
विश्वनाथ जय, दुख त्रयमोचन॥
काशी वासी जय कैलासी।
सहज मोक्ष कर गङ्गाधर॥

जटा-जूट मस्तक पर सोहे।
बाल विधु मुनि-जन मन मोहे॥
जयति पुरारी, जय अन्धाकारी।
जय मन्मथारी जगदीश्वर॥

रुद्र स्वरूप, दक्ष मख नाशक।
वेद स्वरूप, धर्म-मय व्यापक॥
जय उत्पादक, जय प्रतिपालक।
जय संहारक, परमेश्वर॥

जय गिरिजा पति, हे पशुपति जय।
जगत्पति जय, सर्वेश्वर॥
मुनि जन वंदित, जय सुरसेवित।
जय जग पूजित, रामेश्वर॥
—जय शिव शङ्कर०॥

—श्याम सुन्दर रावत

—:०:—

तुलसी का गीध

[श्री आनन्दबहादुर सिंह जी]

महाकवि तुलसीदास ने अपने विश्व-प्रसिद्ध महाकाव्य मानस में मनुष्यों के मार्मिक चरित्र चित्रण के साथ-साथ पक्षियों तथा पशुओं का भी चित्रण अनोखे ढङ्ग से किया है। शुद्ध सात्विक वातावरण के सम्पर्क में आने के कारण पशु पक्षी भी परोपकारी एवं मानवोचित कर्तव्य पालन करने लगते हैं। इसी सत्व-गुण की वृद्धि के कारण राक्षसादि भी मरने पर भगवान के लोक को प्राप्त हुए हैं।

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत्।
तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते॥१४-१४॥

अर्थात् अपने में सत्व की वृद्धि हुई हो उस समय देहधारी मरे तो उत्तम ज्ञातियों के निर्मल लोक को पाता है।

यों तो मानस में अन्यान्य लोगों की मृत्यु हुई है और उन सबों को रामधाम की प्राप्ति भी हो गयी है पर उनमें से सबसे बेजोड़ और उत्तम मृत्यु का सौभाग्य आमिष भोजी गृद्ध को ही प्राप्त हुआ है।

सबसे उत्तम 'मृत्यु' की कल्पना—

समर मरन पुनि सुरसरि तीरा।
राम काजु छन भंगु सरीरा॥
भरत भाइ नृपु मैं जन नीचू।
बड़े भाग पाइय असि मीचू॥
स्वामि काज करिहउँ रनरारी।
जस धवलिहउँ भुवनदस चारी॥

उपरोक्त 'मृत्यु की कल्पना' मृत्यु के उच्चतम भारतीय आदर्शों पर आधारित है। परन्तु गृद्धराज की मृत्यु इस कल्पना से भी उच्चतर है। गृद्ध ने जो रावण के साथ द्वन्द किया वह फल भावना से प्रेरित नहीं था। उसमें कोई आसक्ति नहीं थी। उनका कर्म ज्ञानियों के कर्म की भाँति था।

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम्॥
।३-२५॥

अर्थात् कर्म में आसक्त हुए अज्ञानी जन जैसे कर्म करते हैं वैसे ही अनासक्त हुआ विद्वान भी लोक शिक्षा को चाहता है।

× × ×

मानस में इस पक्षिराज का चित्रण बड़े मनोहारी ढंग से किया गया है। भगवान राम पंचवटी पहुँच कर गोदावरी के पुनीत तटपर अपना निवास स्थान बनाते हैं। वहाँ पहुँचते ही गृद्धराज से भेंट होती है और पक्षिराज पिता की भाँति भगवान राम की पूरी व्यवस्था कर देते हैं।

गीध राज से भेंट भइ बहु बिधि प्रीति बढ़ाइ।
गोदावरी निकट प्रभु रहे परन गृह छाइ॥
—मानस

कुछ दिनों के पश्चात पंचवटी में ही शूर्पणखा आती है। उसको विरूप किया जाता है और स्वर्ण मृग के पीछे भगवान राम, लक्ष्मण की संरक्षता में जानकी को रख कर दौड़ते हैं। लक्ष्मण जानकी के कटु वाक्यों से आहत होकर भाई के पास जाते हैं। सीताहरण होता है। विश्व-विजयी रावण चोरों की भाँति जानकी को अपहृत कर बलात् ही लङ्का की ओर अभियान करता है। जानकी भगवान के पावन नाम का स्मरण कर विलख रही हैं।

हा जग एक बीर रघुराया।
केहि अपराध बिसारेहु दाया॥

हनुमन्नाटक में भीः—

हा राम हा रमण जगदेक वीर,
हा नाथ हा रघुपते किमुपेक्षसे माम।

इस प्रकार—

विविध विलाप करत वैदेही।
भूरि कृपा प्रभु दूरि सनेही॥ —मानस

गीतावली का चित्रण और भी मार्मिक है।

आरत वचन कहत वैदेही।
बिलपति भूरि बिसूरि दूरि गए,
मृग संग परम सनेही॥
कहे कटु बचन, रेख नाँघी मैं,
तात छमा सो कीजै।
देखि बधिकबस राज मरालिनि,
लखनलाल! छिनि लीजै॥
'तुलसिदास रघुनाथ नाम धुनि
अकनि गीध धुकि धायो
पुत्रि पुत्रि! जनि डरहि न जैहै
नीचु? मीचु हौं आयो।

जटायु महाबली रावण से द्वन्द के लिए तत्पर हो गया और जानकी को आशान्वित किया।

सीते पुत्रि करसि जन त्रासा।
करिहउँ जातुधान कर नासा॥
धावा क्रोधवंत खग कैसे।
छूटइ पवि परबत कहुँ जैसे॥

सुनसान राक्षस सम्पन्न वन में मनुष्य तो थे नहीं जो जानकी के विलाप को श्रवण करते। पर भारत का एक पक्षी भी 'नारी अपहरण' का दृश्य नहीं देख सकता था। वह जानकी को पुत्रीवत् मानता था और उसकी रक्षा के लिए या यों कहिए कि मानवता तथा संस्कृति की रक्षा के लिए (जो अपहृत हो रही थी) प्रबल प्रतिद्वन्द्वी रावण से युद्ध ठान लेता है। प्रथम द्वन्द में रावण परास्त हो जाता है और मुर्छित हो जाता है। गीध जानकी को छीन-कर विश्राम दिलाता और निडर होने का उप-देश देता है। विधि का विपर्यय रावण की मुर्छा भंग होती है और द्वितीय द्वन्द आरम्भ होता है। वृद्धता के कारण रावण द्वारा गीधराज जी पराजित होते हैं। रावण पलायित होता है।

गिद्ध असहायता की निरीहावस्था में आसूँ बहाता है, अब उसकी स्थिति परशुराम जैसी है।

बहइ न हाथ दहइ रिस छाती।

गीध ने सामरिक नियमों का पूर्ण-रूप से पालन किया। उसने रावण का मुर्छावस्था में वध नहीं किया जानकी को छिपाया नहीं। पर रावण ने नियमों का पूर्ण-उलंघन कर तलवार द्वारा गीधराज के परों को काट [illegible]। द्वन्द में वादी प्रतिवादी दोनों ही को एक [illegible]स्त्र-शस्त्र से लड़ना चाहिए। यदि एक के पास तलवार है दूसरे के पास नहीं तो पहला भी तलवार फेंक देगा यह प्राचीन सामरिक नियम है। भारत के पक्षी ने उसे निभाया पर रावण ने नहीं।

गीतावली में युद्ध वर्णन देखिए इससे स्थिति स्पष्ट हो जाएगी।

फिरत न बारहिं बार प्रचार्‌यो।
चपर चोंच-चङ्गुल हय हति रथ,
खंड खंड करि डार्‌यो।
बिरथ बिकल कियो छीन लीन्हि सिय,
घन घायनि अकुलान्यो।
तब असि काढ़ि काटि कटि,
पाँवर लै प्रभु प्रिया परान्यो।
रामकाज खगराज आज लर्‌यो,
जियत न जानकि त्यागी।
तुलसीदास सुर सिद्ध सराहत,
धन्य विहग बड़ भागी॥
—गीतावली

गृद्ध का महान कार्य समाप्त हुआ पर दो बातें उनके हृदय में घूम रही हैं। एक वे जानकी को रावण से बलात् छीन न सकें और

दूसरी मृत्यु के समय मङ्गलमय भगवान के विरागमय [illegible] का अवलोकन न कर सके।

राम 'जानकी हरण' का समाचार सुन 'हा गुन खानि जानकी सीता' आदि शब्दों से उनके महत् गुणों का स्मरण कर पशुओं-पक्षियों से पूछते हुए आगे बढ़ते हैं। इसी बीच उन्हें गीध की नाम साधना का सरस स्वर सुनाई पड़ता है।

रटति अकनि पहिचनि गीध !
फिरे करुनामय रघुराई।
तुलसी [illegible]हि प्रिया विसर गई,
[illegible] सनेह सगाई ॥
और गीध की दशा भी शोचनीय है:—
बर बस हरत निसाचर पति सो
हठि न जानकी राखी।
मरत न मैं रघुबीर बिलोके
तापस बेष बनाये।
चाहत चलन प्रान पावँर बिनु
सिय सुधि प्रभुहि सुनाये।
बार बार कर मीजि,
सीस धुनि गीधराज पछिताई।
तुलसी प्रभु कृपाल तेहि अवसर
आइ गए दोउ भाई ॥
कर सरोज सिर परसेउ
कृपासिंधु रघुवीर।
निरखि राम छबि धाम मुख
बिगत भई सब पीर ॥
—मानस,

गीध की निरीह दशा को देखकर भगवान अत्यन्त दुखी होते हैं और 'राघौ गीध गोद करि लीन्हों' जनमन रन्जन मर्यादा पुरुषोत्तम ने पक्षिराज को गोद में ले लिया। ऐसा सौभाग्य किसी भी 'मानस-पात्र' को नहीं मिला। भगवान राम आंसुओं की झड़ी लगा देते हैं और उनके शब्दों की मार्मिक वेदना देखिए:—

नयन सरोज सनेह सलिल सुचि
मनहुँ अरघ जल दीन्हों।
सुनहुँ लखन खगपतिहिं मिले बन
मैं पितु मरण न जान्यौ।
सहि न सक्यो सो कठिन बिधाता
बड़ो बधु आजुहि मान्यौ।
बहु बिधि राम कह्यो तनु राखन
परम धीर नहीं डोल्यो।
रोकि प्रेम अवलोकि बदन बिधु
बचन मनोहर बोल्यौ।
तुलसी प्रभु झूठे जीवन लगि
समय न धोखो लैहौं।
जाको नाम मरत मुनि दुरलभ
तुमहि कहाँ पुनि पैहौं।

भारत के पक्षी ने जिस मानवता का परिचय दिया वह अन्यत्र दुर्लभ है। अमर कलाकार तुलसी ने अपने साहित्य में 'गृद्ध चरित' को बहुत ही उदारता पूर्वक वर्णन किया है।

रामचरित मानस के कथानक में दो गिद्ध हैं। पहला, जटायु जिसका धवल चरित्र अंकन किया गया है। दूसरा उसका बड़ा भाई संपाती जिसने सीता की खोज में तत्पर बानरों को समुद्र तट पर जानकी का पता बतला करके उनकी सहायता की। एक से हमें आत्म-त्याग का परिचय मिलता है और दूसरे से भ्रातृ प्रेम तथा कथानक के बढ़ाने में सहायता। संपाती निराश बन्दरों को कितना सूक्ष्म परिचय बतलाता है।—

गिरि त्रिकूट ऊपर बस लङ्का।
तहँ रह रावन सहज असंका ॥
तहँ असोक उपवन जह रहई।
सीता बैठि सोच रत अहई ॥

समुद्र तट पर कथानक एक प्रकार से समाप्त हो जाता है; उसी समय चमत्कारिक

ढंग से 'गीध' प्रकट होकर कथा वस्तु को बहुत ही सुन्दर ढ़ङ्ग से आगे बढ़ाता है। और 'राम-काज' का मुख्य श्रेय इस द्वितीय वृद्ध गिद्ध को सहज ही मिल जाता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि रामायण के कथानक की चरम सीमा दो स्थानों पर आती है। एक है सीता-हरण दूसरी उस समय जब सभी वानर सीता की खोज में अपने को असमर्थ पाते हैं। इन दोनों चरम सीमाओं (क्लाइमेक्स का अवरोह इन्हीं दो गिद्ध पत्रों द्वारा होता है एवं कथानक का प्रगति में सहायता मिलती है।

—:o:—

मानस यज्ञ

प्रभु की असीम दया से आश्विन नवरात्र का मानस यज्ञ अपने छोटे रूप में पूर्ण हुआ। आगामी चैत्र नवरात्र के निमित्त विस्तृत कार्यक्रम विचाराधीन है। अब तक जो कार्यक्रम प्रस्तावित हुआ है वह नीचे प्रकाशित किया जाता है। अभी इसका परिवर्त्तन [illegible]र परिवर्धन सहज सम्भाव्य है। प्रेमियों से [illegible]र्थना है कि वे अपने विचार लिखने की कृपा करें।

—:o:—

चैत्र नवरात्र २०११ में रामवन में होने वाले मानस यज्ञ का प्रस्तावित कार्यक्रम

१—१२५ साधकों द्वारा सामूहिक पाठ तथा हवन

२—नित्य श्री रामार्चा

३—अखण्ड (१) ज्योति (२) मानस पाठ (३) सुन्दरकाण्ड पाठ (४) श्री हनुमान चालीसा पाठ (५) रामनाम लेखन (६) जलधारा (शङ्कर जी पर) (७) संकीर्तन (८) जप (९) रामनाम परिक्रमा

४—एक नौका जप ९०९०९९०९

५—सवा लाख परिक्रमा

६—नित्य नई झांकी (१) कदलीवन (२) वृन्दावन (३) करवीर मठ या उद्यान (४) अञ्जना पर्वत (५) सर-कमलासन (६) अर्क पुष्प (७) पार्क या घोर वन (८) केले का मन्दिर (७) परदों की (८) पुष्पायुधों की (९) लता कुञ्ज आदि।

७—ललार्चना अथवा नवधा मानस (छत्तीसगढ़ की मण्डलियों द्वारा)

८—श्री राम नाम नौका समपर्ण

९—प्रभात फेरी, नूतन संवत्सर पूजन, सामूहिक प्रार्थना, मानस गायन, संकीर्तन, गोसेवा, कथा आदि।

—:o:—

भक्त बनने का सरल साधन

(श्री विनायक प्रसाद जी भट्ट)

कलियुग समस्त दोषों का खजाना है, साथ ही इसमें एक महान गुण भी है, इसमें थोड़े ही समय तक साधन करने से मनुष्य सिद्धि को प्राप्त हो जाते हैं। श्री तुलसीदास जी कहते हैं

कलिजुग सम जुग आन नहिं,
जौं नर कर विश्वास।
गाइ राम गुन गनन बिमल,
भव तर विनहिं प्रयास॥

मनुष्य शरीर में ही परमात्माप्राप्ति का मुख्यतया अधिकार है, इसलिये शास्त्रों में जगह-जगह मनुष्य शरीर की भूरि-भूरि प्रशंसा की गई है। श्री तुलसीदास जी कहते हैं :—

बड़े भाग मानुष तन पावा,
सुर दुर्लभ सद्ग्रंथन्हि गावा

× × ×

संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही,
चितवहिं राम कृपा करि जेही।

तथा भक्त विभीषण ने हनुमान जी से कहा है—

अब मोहिं भा भरोस हनुमंता,
बिनु हरि कृपा मिलहिं नहिं संता।

इस प्रकार भगवान की दया से सब संयोग मिल जाने पर भी हम लोग भगवान की प्राप्ति से वंचित रह जाँय तो यह हमारे लिये बहुत ही दुख और लज्जा की बात है। गोस्वामी जी कहते हैं —

जो न तरइ भव सागर, नर समाज अस पाइ।
सो कृत निन्दक मंदमति आत्माहन गति जाइ॥

अतएव आप लोगों को इस अमूल्य मनुष्य जीवन को पाकर शरीर और संसार से मोह हटाकर तन मन धन से परमात्मा की प्राप्ति के लिये तपस्या के साथ प्राणपर्यन्त चेष्टा करनी चाहिये, नहीं तो आगे जाकर घोर पश्चाताप करना पड़ेगा। श्री तुलसीदासजी कहते हैं—

सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ।
कालहिं कर्महिं ईस्वरहिं मिथ्या दोष लगाइ॥

इन सब बातों को सोचकर मनुष्य को परमात्मा की प्राप्ति के लिये शीघ्रातिशीघ्र साधन में लग जाना चाहिये। मृत्यु का कोई भरोसा नहीं, न मालूम किस समय आकर प्राप्त हो जाय।

सत्ययुग में दस वर्षों तक साधन करने से मनुष्य जिस पुण्य का संग्रह करते हैं, त्रेता में उसी पुण्य को एक वर्ष में सिद्ध कर लेते हैं और द्वापर में उसी को एक मास में एवं कलियुग में उसे एक दिन में कर लेते हैं।

त्रेता में एक वर्ष तक तथा द्वापर में एक मास तक क्लेश सहन पूर्वक धर्मानुष्ठान करने वाले बुद्धिमान पुरुष को जो फल प्राप्त होता है, वह कलियुग में एक दिन के अनुष्ठान से मिल जाता है।

श्रीतुलसी दासजी कहते हैं—

पय अहार फल खाइ जपु, राम नाम षट मास।
सकल सुमंगल सिद्धि सब करतल तुलसीदास॥

छः महीने तक केवल दूध का आहार करके अथवा फल खाकर राम-नाम का जप करो, श्रीतुलसीदास जी कहते हैं कि ऐसा करने से सब प्रकार से सुमंगल और सब सिद्धियाँ करतल गत हो जाँयगी अर्थात् अपने आप ही मिल जायँगी।

लगन लगन सब कोइ कहै लगन कहावत सोइ।
नारायण जिस लगन में तन मन दीजे खोइ॥

सगर वंशी महाराज विश्वसह के पुत्र राजा खट्वाङ्ग की बात श्रीमद्भागवत में आती है। जब उन्होंने देवताओं से पूछा कि मेरी आयु कितनी शेष है, तब देवताओं ने कहा कि तुम्हारी आयु दो घड़ी ही बाकी है, यह सुनकर राजा सब कामों को छोड़कर परमात्मा के ध्यान में तन्मय हो गये और इस प्रकार की उनकी तीव्र लगन से दो घड़ी में ही भगवान श्री हरि को प्राप्त हो गये। भगवान के विरह में भरत जी की भाँति व्याकुल हो जाय और भगवान के वियोग में उसके प्राण जाने की तैयारी हो जाय।

श्री तुलसीदास जी ने भरत जी की दशा का वर्णन करते हुए कहा है।

राम बिरह सागर मह भरत मगन मन होत।
विप्ररूप धरि पवन सुत आइ गयो जनु पोत॥

प्रेमास्पद के वियोग में इस प्रकार की विरह व्याकुलता हो जाने पर फिर भगवान के आने में विलम्ब नहीं होता। अतः जैसे मछली जल के वियोग में जल के लिये तड़फड़ाती है, उसी प्रकार की तड़पन हम लोगों में भगवान के लिये होनी चाहिये।

श्रीरामचरितमानस का वर्णन है। किष्किन्धाकाँडमें भगवान श्रीराम ने भक्ति की दृष्टि से भक्त हनुमान से कहा है—

समदरसी मोहि कह सब कोऊ,
सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ॥
सो अनन्य जाके असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत॥

सर्व साधारण के लिये यह भक्ति का मार्ग सरल और सुगम होने से उत्तम है, भक्ति मार्ग के सभी कोई अधिकारी हो सकते हैं, चाहे वे जाति से हीन और मूर्ख ही क्यों न हों; केवल भगवान में प्रेम होना चाहिये, भगवान तो केवल प्रेम को ही देखते हैं। शबरी न तो कुछ विशेष पढ़ी-लिखी थी। और जाति से भी अत्यन्त हीन थी। उसने स्वयं भगवान श्रीरामचन्द्र जी से कहा है—

केहि विधि अस्तुति करौं तुम्हारी।
अधम जाति मैं जड़ मति भारी॥
अधम ते अधम अधम अति नारी।
तिन्ह महँ मैं मतिमंद गवाँरी॥

इस पर भगवान ने यही कहा कि

कह रघुपति सुनु भामिनि बाता।
मानउँ एक भगति कर नाता॥

भगवान ने उसके प्रेम भा[illegible] को देखकर उसकी कुटिया पर जाकर उसके [illegible] से दिये हुए बेर खाये, धन्य है दयामय प्रभु की दया को। रामचरित मानस में श्रीशिवजी ने कहा है

हरि व्यापक सर्वत्र समाना।
प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना॥

इस प्रकार का दृढ़ निश्चय करके शबरी की भाँति प्रतिक्षण-भगवान की प्रतीक्षा करनी चाहिये। इस प्रकार प्रतीक्षा करने से भगवान शीघ्र ही मिल सकते हैं।

जब रावण से तिरस्कृत होकर विभीषण भगवान श्रीराम की शरण में आया, उस समय भगवान ने उसके साथ शरणागत वत्सलता, उदारता, दया और प्रेम आदि से युक्त सुहृद्यता का व्यवहार किया। भगवान के व्यवहार के इस प्रकार गुणों को देखना ही भगवान की लीला में गुणों का दिग्दर्शन है।

श्री रामचरित मानस के बालकाण्ड का वर्णन है कि धनुषभंग के अनन्तर श्री परशुराम जी पधारे और अन्त में उन्होंने कहा कि—

राम रमापति कर धनु लेहू।
खैंचहु मिटै मोर संदेहू॥
देत चापु आपुहिं चढ़ि गयऊ।
परसुराम मन बिसमय भयऊ॥

इस प्रकार बिना ही परिश्रम भगवान के केवल छूने मात्र से ही धनुष का अपने आप ही चढ़ जाना यह भगवानकी लीला का प्रभाव है। जब ब्रह्माजी ने ग्वाल-बाल और बछड़ों का रूप धारण करके साल भर तक क्रीड़ा की, लीला से ही भगवान एक क्षण में अनेक रूप हो गये। श्रीरामचरितमानस में बतलाया है कि भगवान श्रीराम जब चौदह वर्ष की अवधि के पश्चात् अयोध्यामें पधारे, तब समस्त अयोध्यावासियों की शीघ्र ही मिलने की अतिशय उत्कण्ठा जान कर वे वहाँ अनन्त रूपों में प्रकट होकर सबसे मिले।

अमित रूप प्रगटे तेहि काला।
जथा जोग मिले सबहिं कृपाला॥
छन महिं सबहिं मिले भगवाना।
उमा मरम यह काहुँ न जाना॥

भगवान क्षण में सबसे एक साथ मिले। किन्तु यह बात एक दूसरे को मालूम नहींहुई। हर एक व्यक्ति यहीसमझता था कि भगवान मुझसे ही मिले हैं। इसका निष्कर्ष यह निकला कि केवल शरणागत होने से ही भक्त बनने का सरल साधन उपलब्ध हो जाता है।



——

पश्चात्ताप

(र० मानस तत्वान्वेषी पं० श्री रामकुमार दास जी 'रामायणी' वे० भू० सा० र० मणिपर्वत अयोध्या)

(१)

हरि सरवस अपराध हमारो ॥ टेक ॥
तुम अति कृपा कियो नरतन दियो मम कर्मन ते न्यारो।
सुर दुर्लभ तनु पाइ तुमहिं तजि विषयनि में मनगारो॥ १ ॥ हरि०
दम्भ कपट छल मान मोह मद सेवत तुमहिं बिसारो।
जनम जात कामिनि मुख जोवत मिलत न तनिक सहारो॥ २ ॥ हरि०
लोभ मदारी आस डोरि कसि मोह दण्ड गहि मारो।
तृष्णा कला सिखाइ नचावत चलत नहीं कछु चारो॥ ३ ॥ हरि०
क्रोध सर्प पालत उर अन्तर ईर्षा पय मुख डारो।
'रामकुमार'! शरण गहे राखहु कलि खलसों अब तारो॥ ४ ॥
हरि सरबस अपराध हमारो।'

(२)

दीन्ह दयानिधि जो तुम मोंहि सो औगुन खानि लखात सबै।
मन दीन्ह कुमार्गि सो तो महाखल नेकहु ना ठहरात अबै॥
नैन तुम्हें नहि देखन चाहत माया मयी यहि खूब फबै।
कान 'कुमार' सुनै नित मायिक बात-न-कीर्ति तुम्हार कबै॥

——

भक्त तथा भगवान का साक्षात्कार

[श्री पं० रामकुमार उपाध्याय]

सत्संग का महात्म बड़ा ही सत्वर फलदायक होता है। यदि वह अधिक काल तक हो तो उत्तम ही है किन्तु चाहे अल्प काल या क्षण मात्र हेतु ही क्यों न हो तब भी कल्याणकारी होता है यथा :—

सत संगति दुर्लभ संसारा,
निमिष दंड भरि एकहु वारा।
तात स्वर्ग अपवर्ग सुख,
धरिय तुला इक अंग॥
तुलइ ताहि सकल मिलि,
जो सुख लव सत्संग॥

परन्तु भक्तराज निषाद को तो लखनलाल का रात्रि भर का सत्संग प्राप्त हो चुका था जिसमें उसने अपनी जिज्ञासा की पूर्ण जानकारी प्राप्त करली थी। तब तो कहना ही क्या है। यथाः—

'कछुक दूरि सजि वान सरासन,
जागन लगे बैठि वीरासन।
गुह बुलाय पाहरू प्रतीती,
ठाँव ठाँव राखे अति प्रीती॥
आप लखन पहि बैठेउ जाई,
कटि भाथी सर चाप चढ़ाई।

नाना प्रकारेण आध्यात्मिक प्रश्न करने के पश्चात् :—

भयउ बिषाद निषादहिँ भारी,
राम सीय महि सयन निहारी।
बोले लखन मधुर मृदुबानी,
ज्ञान विराग भगति रस सानी॥

अनेक भाँति प्रभु रूप का साक्षात्कार करते हुये लखन लालजी ने कहा—

यहि जग जामिनि जागहि जोगी,
परमारथी प्रपंच वियोगी।
जानिय तबहि जीव जग जागा,
जब सब विषय विलास विरागा॥
होइ विवेक मोह भ्रम भागा,
तब रघुनाथ चरन अनुरागा।
सखा परम परमारथ येहू,
मन क्रम बचन राम पद नेहू॥

इन्हें केवल दासरथी ही [illegible] समझ बैठना वरन् :—

राम ब्रम्ह परमारथ रूपा।
अविगत अलख अनादि अनूपा॥
सकल विकार रहित गत भेदा।
कहि नित नेति निरूपहिं वेदा॥
भगति, भूमि, भूसुर, सुरभि,
सुरहित लागि कृपाल॥
करत चरित धरि मनुज तन,
सुनत मिटहि जग जाल॥

उक्त भावना प्रेरित होकर ही अपढ़ ग्रामीण भक्तराज निषाद यह कहने को समर्थ हो सका था कि—

माँगी नाव न केवट आना।
कहइ तुम्हार मरम मैं जाना॥

अर्थात् वह एक रात्रि लक्ष्मणजी के सत्संग से श्री राम को केवल चक्रवर्त्ती सुवन ही न समझ कर ब्रह्म मय देखने लगा था। यही उस मर्म की जानकारी थी। भक्त से भगवान नौका लाने का आग्रह करते हैं किन्तु भक्त हठ योग ग्रहण किये हुए था। प्रश्न करने पर कुछ व्यक्त भी नहीं कर रहा था एवं नौका भी नहीं लाता था। कैसा अनुपम दृश्य था वह। ऊपर

कहने लगा कि प्रभो ! यहाँ से थोड़ी ही दूर रह गया है जहाँ कमर ही तक जल है।

यथाः—

यहि घाट से थोरिक दूरि अहै,
कटिलौं जल थाह दिखाइहौं जू।
परसे पग धूरि तरै तरनी,
घरनी घर क्यों समुझाइहौं जू॥
वरु मारिय तीर बिना पग धोये,
हौं नाथ न नाव चढ़ाइहौं जू।
तुलसी अवलम्ब न और कछू,
लरिका केहि भाँति जिआईहौंजू॥

आधुनिक काल तो उन्नति का युग है। अत्यन्त [illegible]काल समझा जाता है परन्तु प्राचीन शिष्ट आर्यावर्त्त की शिष्टता कितनी उच्च शिखर पर थी यह आगे की वार्त्ता से पता चल जायगा। विचार कीजिये।

अभी थोड़ा ही समय हुआ जब की आँग्ल वर्ग का सूर्य्य संसार व्यापी बना हुआ था कभी तिरोहित नहीं हो रहा था। भारत परतंत्रता की बेड़ी में जकड़ा हुआ था। उस समय नौकर शाही की दशा नितान्त दयनीय हो चली थी। कोई 'अपटु-डेट' मैन किसी आँग्ल आफिसर के संनिकट जाता जब वह 'सर मैं आई कम' कहकर आफिस द्वार में प्रवेश करता तो साहब के दर्शन होते। पता नहीं चला सकता कि वे किस 'मूड' में तल्लीन हैं। आगन्तुक महाशय शिष्टता की जो ट्रेनिंग किये आ रहे हैं बिना किसी उनके 'मूड' पर विचार किये उनके प्रश्न पर कहते ही 'ह्वाट डू यू वान्ट ?' सत्वर उत्तर दे बैठते अपने हृदय की वेदना 'सर, आई रिक्वेस्ट फार सर्विस' इस वार्त्ता पर उन्हें कोरा यही उत्तर प्राप्त होता था 'नो वैकन्सी गेट आउट' यदि उसकी भावना का ध्यान करते हुए वार्त्ता की जाती तो सम्भव था कि कार्य्य सिद्ध हो जाता। इसी प्रकार से तो सर्वत्र निराशा देवी के ही दर्शन होते थे। अब विचार कीजिये कि वह अशिक्षित ग्रामीण इस वर्त्तमान सभ्यता से कितना परे जा चुका था। वह भक्त यही सोच कर अपने प्रभु समक्ष भावना स्वाध्याय किये बिना अपने विचार नहीं व्यक्त कर रहा था। वह सोच रहा था कि यदि भगवान प्रसन्न हो जावें तभी अपनी बात कहूँ जिससे स्वीकृति प्राप्त हो सके। अतएव उस भक्त ने समय ढूँढ़ ही निकाला यह कह कर कि—

जो प्रभु अवसि पार गा चहहू।
तौ पद पदुम पखारन कहहू॥

इस प्रकार से प्रभु राम जी—

सुनि केवट के बैन, प्रेम लपेटे अटपटे।
बिहँसे करुना ऐन, चितै जानकी लखन तन॥

भाव किः—प्रथम प्रभु ने सीता की ओर पुनः लक्ष्मण की ओर देखा और केवट की प्रेम पूर्ण वार्त्ता सुन कर हँस पड़े। सीता को लक्षित करने में संकेत था कि पूर्व इन चरणों को तुम्हारे पिता ने स्पर्श करके धोया तो तुम्हारा दान किया। द्वितीय अनुज सम्बन्ध से लक्ष्मण ने यदि प्रक्षालन किया तो समानता का भाव प्रदर्शित रहा। उसी भाँति आज यह भक्त पाद प्रक्षालन राज कर विहीन अर्थात् 'बिला टिकट' करना चाहता है। यह विचार उठते ही भगवान को भक्त के भाव चातुर्य्य पर हँसी आ गई। हँसी सर्वथा प्रसन्नता सूचक ही हुआ करती है। अतः समय पाकर केवट ने मर्म भावना व्यक्त कर दिया। प्रभो ! यदि आज्ञा हो तो पद-पदुम प्रक्षालन कर कृत कृत्य होऊँ। यद्यपि कोई अतिथि अपने सत्कारक को आदेश नहीं दिया करता कि मैं तुम्हारा आतिथ्य स्वीकार कर रहा हूँ अतः तुम शीघ्र जल लाकर हमारा पद प्रक्षालन करो। कितना कर्ण-कटु व्यवहार हो जाता है यह। परन्तु

यहाँ तो भक्त तथा भगवान का साक्षात्कार होना था न ! क्योंकि प्रभु के तो प्रायः ऐसे भी रूपों का दर्शन हुआ है कि—

'प्रबल प्रेम के पाले पड़कर प्रभु को नियम बदलते देखा'

भक्त की भक्ति की पराकाष्ठा होते ही भक्त वत्सल विवश होकर बोले क्योंकि यही उसकी प्रेम पूर्ण अट-पट वाणी थी। यथा :—

कृपा सिंधु बोले मुसकाई।
सोइ करु जेहि तव नाव न जाई॥
बेगि आनि जल पाँय पखारू।
होत बिलंब उतारहिं पारू॥

यद्यपि विचार करने की बात है कि—

जासु नाम सुमिरत एक बारा।
उतरहिं नर भव सिंधु अपारा॥

पर भागीरथी की भी मर्य्यादा रखनी थी न।

सोइ कृपाल केवटहिँ निहोरा।
जेहि जगु किय तिहुँ पगते थोरा॥

तब क्या था श्री गंगा जी भी अपने जन्म स्थान प्रभु नख के मिलन हेतु उतावली होकर बढ़ीं—

पद नख निरखि देवसरि हरषी।
सुनि प्रभु बचन मोह मति करषी॥

पाद प्रक्षालन आदेश प्राप्त करते हीः—

केवट राम रजायसु पावा।
पानी कठउता भरि लै आवा॥

यद्यपि गंगोदक समीप ही था पर कूप जल ही निषाद उस पानीय-पात्र में भर लाया। अतः संत प्रवर उसे भी संकेत करना नहीं विस्मृत कर सके। उस स्थान में कूप जल को 'पानी' शब्द से ही सम्बोधन किया है 'जल' नहीं कहा। पद प्रक्षालन पश्चात गंगा जल तुल्य होने से 'जल' नाम करण किया।

उसी समय एक अनुपम घटना घटित होती है कि जब निषादराज पद पखारने लगा तो उचित आसन विहीन स्थान में विलम्ब होते देख कर भगवान को खड़े करके ही एक पैर धोने लगा। पद स्पर्श से समानता आते ही धोने में विलंब हो गया। एक पद पर देर तक अवलंबित होना कष्ट कारक हो जाता है। अतः प्रभु राम ने पैर खींच कर पृथ्वी पर पुनः रख लिया। कहने लगे कब तक एक ही पैर धोता रहेगा ? समानता के भाव से अब वह मनमानी करने का भी अधिकारी हो गया था। कहा अब तो धोते रहना मेरी इच्छा पर निर्भर है मेरी जब तक इच्छा [illegible] धोऊँगा। आप ने धुला पैर पृथ्वी [illegible] रख लिया है। जिससे पूर्व से अधिक [illegible] कण लग चुका है। मैं उसे पुनः धोऊँगा क्योंकि रजकण के आधिक्य से मेरी आशङ्का पहिले से अत्याधिक बढ़ गई। हाँ ठीक है, मैं समझ गया कदाचित् आप को एक पैर से खड़े रहने में अधिक कष्ट हो रहा है अतः कृपा करके अपना हाथ मेरे सिर पर रख लीजिये तब कुछ आश्रय अवश्य प्राप्त हो जायेगा। मैं पूर्ण रूपेण निश्चित होकर पाद-प्रक्षालन कर सकूंगा। विचारक विचार करें कि जैसे जैसे पाद प्रक्षालन होता था वैसे वैसे पद स्पर्श करते ही वह प्रभु साक्षात्कार करता जाता था। उसके हस्त रखाने का हठ कितना भाव गाम्भीर्य रखता था जब कि संत बाबा ने एक तुच्छ तृन की दशा का कहीं अन्यत्र कितना सुन्दर चित्र खींचा है—

तुलसी तृन जल कूल को,
निर्बल निपट निकाज।
का राखै का संग चलै,
बाँह गहे की लाज॥

भाव कि नदी के कगार का तृण जो अत्यन्त निर्बल तथा निकम्मा समझा जाता है एवं लाभदायक भी नहीं होता यदि डूबने वाले

ने उसको निज आश्रय प्रश्रय हेतु ग्रहण किया उसकी मूल बुद्धि भी दृढ़ हुई तो रक्षा करता है। जिससे वह जीवन से हाथ धोने वाला व्यक्ति रक्षित हो जाता है। परन्तु मूल यदि धरा से निर्मूल हो चुकी तो उस डूबते हुये व्यक्ति के संग स्वयं तृण भी डूब जाता है क्योंकि उसे तो बाँह ग्रहण की लज्जा रखनी हैं।

अब भला विचार करने की बात है कि उस भक्त निषाद ने क्या दूर तक की सोची थी ? जब तृण ऐसे निर्जीव की यह दशा कि आगत का स्वागत करें। तो भगवान का वरद हस्त जिस बड़ भागी नर पुंगव के सर पर होगा तो क्यों वह सदेह ही भगवत साक्षात्कार न कर सकेगा ? इसमें सन्देह की कल्पना मात्र ही अल्प ज्ञान का सूचक हैं।

इस आग्रह को भी भगवान ने भक्त कल्याणार्थ यथा तथ्य स्वीकार किया। तब निषाद राज द्वितीय पद प्रक्षालन करने लगा। विलंब का कारण वही समता भाव का आगमन तथा साथ-साथ वह स्वपरिवार पर पद-धुला हुआ जल भी छिड़कता जाता था। जिससे उनका भी पातक पुँज विनष्ट होता रहे। नीति में कहा है—

'वरमेको गुणी पुत्रो न च मूर्ख शतान्यपि।
एकश्चन्द्रो तमो हन्ति, न च तारागणैरपि॥

भाव—शत मूर्ख पुत्रों से एक गुणी पुत्र अति उत्तम है। जैसे असंख्य नक्षत्रों से एक प्रतिभाशाली चन्द्र जो प्रकाशदायक है, श्रेष्ठतम है। किसी हिन्दी भाषा भाषी कवि ने कितना उत्तम भाव प्रदर्शन किया है यथा—

चन्दन, चन्द्र, उशीर हिमोपल,
हिमरजनी भी और कपूर।
यह सब मिल कर भी न करेंगे,
मानव हृदय ताप को दूर॥
पर सुपूत जिस कुल में होगा,
उसका समय आप हो आप।
पलट जायेगा यश फैलेगा,
मिट जावेगा सब संताप॥

इस प्रकार केवट—

अति आनंद उमंग अनुरागा,
चरन सरोज पखारन लागा।
बरसि सुमन सुर सकल सिहाहीं,
यहि सम पुन्य पुंज कोउ नाहीं॥
पद पखारि जलपान करि,
आप सहित परिवार॥
पितर पार करि प्रभुहिं पुनि,
मुदित गयउलै पार।

भाव यह कि भक्त राज प्रभु को नौका पर आसीन कराके पार उतारने हेतु चल पड़ा। उस समय श्री राधेश्याम कृत रामायण के अनुसार एक अलौकिक घटना घटित हुई। कि नाविक नौकारूढ़ के श्रवण हेतु तन्मय हो कर एक गीत गुनगुनाने लगा :—

"मेरी नाव चली बजरंग बली,
जरा बल्ली कृपा की लगा देना।"

नीचे चल रहा था गान परन्तु ऊपर निरख कर, यह तान जिसके सर्वथा विरुद्ध छिड़ चुका था युद्ध। अर्थात् दो दलों में संघर्ष होने लगा। उसका न्यायाधीश न्याय करने बैठा, जिसने उचित न्याय कर दिया। दोनों दलों में सन्धि हो गई। यह था समय का लेखा। मध्यान्ह काल था। नभस्थल में इतस्ततःजलद विचरण कर रहे थे। जो भगवान भास्कर को आकर आच्छादित कर लेते थे। तब भानु ने कहा यह भानु वंशी क्षत्री मेरे वंशज हैं। अतः दर्शन करने का प्रथम मेरा स्वत्व है। पर वारिद कहते, नहीं यह तो घनश्याम मेरे रंग के हैं। अतएव मेरा तुमसे अधिक एवं पूर्व दर्शन का स्वत्व होता है। न्याय हेतु न्यायाधीश पवन ने

शनैः शनैः प्रवाहित होकर दोनों दलों को दर्शन लाभ सुअवसर प्रदान किया। परन्तु क्रम से अर्थात् कभी पयोद दल दिवाकर को आच्छादित करता। कभी पृथक् करके दर्शन को समय देता। इस भाँति नाविक की नौका पार लगी। पार उतरते ही प्रभु को संकोच हुआ।

केवट उतरि दंडवत कीन्हा।
प्रभुहिं सकुचि यहि नहिंकछु दीन्हा॥
पिय हिय की सिय जानन हारी।
मनि मुँदरी मन मुदित उतारी॥

प्रियतम के हृदय की जानने वाली हुआ करती हैं प्रियतमा। अतः सती-सीता भावना समझ गईं कि प्राणेश्वर चक्रवर्ती के सम्बन्ध स्वरूप नाविक को पारिश्रमिक रूप में कुछ प्रदान करना चाहते हैं। अतः पुलकित मन से स्वकरधारित मणि-जटित-मुद्रिका प्रभु के कर कमलों में प्रदान किया। भगवान उसे ही केवट को देने कहने लगे। किन्तु केवट पद-प्रक्षालन पश्चात ही समता भाव प्राप्त कर उसे पूर्ण अस्वीकार कर गया। भक्ति समस्त धन-वैभव को ठुकराना आज इसी कुशल भक्त से सीखना है। मुद्रिका महाराजा दशरथ द्वारा जनक गृह चढ़ावा दान की थी। आज एक साधारण व्यक्ति यदि चढ़ावा पुत्र ब्याह में बन्धुओं के यहाँ ले जाता है तो विशेष रूप उत्तमोत्तम। जिसे दर्शक देखते ही रह जाँय। परन्तु वह था चक्रवर्ती काचढ़ावा जिसका मूल्य कितना रहा होगा उस केवट की वस्तु तुलना में जो अपनी नौका को सर्वस्व समझ बैठा था यह कह कर कि प्रभु

यहि प्रतिपालउँ सब परिवारू।
नहिं जानउँ कछु और कबारू॥

यदि केवट उसे ग्रहण कर लेता तो कदाचित् दो चार पीढ़ियों तक नौ[illegible] चलाने से छुटकारा पा जाता परन्तु यह था भक्त का महान त्याग जिसने भगवत् भक्ति पर अतुल संपत्ति को निछावर कर दिया। अर्थात् मणि जटित मुद्रिका ग्रहण करना अस्वीकार कर दिया। देखिये संत प्रवर की वाणीः—

कहेउ कृपालु लेहु उतराई।
केवट चरन गहेउ अकुलाई॥
नाथ आज मैं काह न पावा।
मिटे दोष दुख दारिद दावा॥
बहुत काल मैं कीन्ह [illegible]।
आज दीन्ह विधि बनि भ[illegible]॥
अब कछु नाथ न चाहिय मोरे,
दीन दयाल अनुग्रह तोरे॥

साथ ही भाव चातुर्य से भक्त निषाद चाहता है कि पुनः मेरे घाट से ही प्रभु पार उतरें जिससे दर्शन लाभ हो सकें अतएव कहने लगा किः—

फिरती बार मोहिं जो देबा।
सो प्रसाद मैं सिर धरि लेबा॥

इस पर भी—

बहुत कीन्ह प्रभु लखन सिय,
नहिं कछु केवट लेइ।

तब तो परिणामतः—

बिदा कीन्ह करुनायतन,
भगति बिमल बर देइ।

प्रस्तुत लेख का श्रेय श्रद्धेय राजेश्वर प्रसाद साह जी को है। जिनके लेख 'श्री राम और केवट प्रसंग' मणि ग्यारह, आलोक पाँच, में प्रकाशित से मेरे हृदय में लेखन स्फूर्ति जागृत हुई। आपने पूर्ण भाव प्रदर्शन किया है।

—:o:—

नमः श्रीपवननन्दनाय

पं० रामकुमारदास जी "रामायणी" वेदान्त-भूषण, साहित्यरत्न, मणि पार्वतीय, अयोध्या

मानस-मणि के जन्म के प्रथम से ही मेरा सम्बन्ध मानस-संघ रामवन से स्थापित हो चुका है। एतदर्थ मैंने रामवन को इस सुरम्य भूमि को उस समय देखा है जब यह केवल एक ऊसर (भाठा) के रूप में थी और इसके यशस्वी मंत्री महोदय सतना-स्थित अपनी विशाल कोठी में बैठे-बैठे सुप्रसिद्ध गोपीनाथ लाल बिहारी फर्म का संचालन करते हुये मानस प्रचार का काम भी मानस संघ स्थापित कर करते थे। प्रभु कृपा से मानस प्रचार की भावना इतनी तीव्र हुई कि आप अपने समस्त शारीरिक सुख एवं तदुपकरणात्मक स्पृहणीय वैभव से विरक्त होकर रामवन में विरक्त-चर्य्या से रहते हुए मानस प्रचार में अहर्निश सर्वतो भावेन लगे रहने लगे। पहिले तो अधिक लोगों को विश्वास न हुआ कि विलास वैभव की गोदी में जन्मने-पलने और क्रीड़ा करने वाला व्यक्ति ऐसे त्याग वैराग्य से रह सकेगा परन्तु 'मनस्विनांकिं दुष्करम्' न्याया-नुसार-रामवन में फूस की झोपड़ी में रहकर इस कर्मठ तपस्वी ने मानस संघ संस्था को भारत व्यापी तो बनाया ही। आज तेरह वर्ष से मानस की अपूर्व पत्रिका मानस-मणि का संचालन, अनेक मानसोपयोगी पुस्तकों का प्रकाशन, सहस्त्रों अखण्ड पाठ, रामनाम लेखन और अनेक मानस सम्मेलन आदि की सुव्य-वस्था करता रहा।

मैंने एवं अन्य प्रेमियों ने जब जब आग्रह किया कि बाबू जी आप रामवन में मानस संघ का दफ्तर पक्का कर लीजिये जिससे बरसात में दफ्तर के कागजों में खराबी न आये और दफ्तर में छप्परों तथा दीवारों में जो नाग-राजों के कई कुनबे रहते हैं, इनसे दफ्तर में काम करने वालों को हरदम प्राण भय न बना रहे और आप जो रात में दफ्तर में ही सोते भी हैं तो आपको भी इन विषधरों का भय न रहे। तब तब आपने यही उत्तर दिया कि महाराज जब तक रामवन के सभी कार्य-कर्त्ताओं के लिये पक्की कोठरियाँ न बन जाँयगी तब तक दफ्तर या अपने रहने के लिये कोई चर्चा नहीं। अब मानस संघ के समस्त प्रेमियों की सद्भावना एवं विशिष्ट आर्थिक सहयोग से सभी साधकों के लिये काम चलाऊ पक्की कोठरियाँ तैयार हो गई हैं यद्यपि कि अभी गोशाला, मानस सर के चारों घाट अतिथि-शाला आदि कई आवश्यकीय अंग बनने को अवशिष्ट हैं तो भी मानस संघ का दफ्तर तो शीघ्रातिशीघ्र पक्का हो ही जाना चाहिये। इस बरसात में दो तीन मास के भीतर दो दर्जन से अधिक साँप निकले जिनमें १२, १३ मारे गये हैं तो भी अभी इस दफ्तर की सड़ी दीवाल और बाँस तथा खपड़े की छावन में कई परिवार भयंकर नागों के रहते हैं। इसलिये मानस संघ एवं मानस-मणि के सभी प्रेमियों से मेरा सप्रेमानुरोध है कि सभी मानस प्रेमी लोग मानस कार्यालय को पक्का बनाने में सहयोग देकर मन्त्री महोदय को सुरक्षित स्थान में रखकर मानस की अधिकाधिक सेवा लें। आज (आश्विन शुक्ल २०१०) के नौरात्र में अयोध्या से आकर एक सप्ताह के लिये मानस सङ्घ कार्यालय में बैठा अनुभव कर रहा हूँ कि जैसे भी हो यह मानस सङ्घ संस्था तथा मानस-मणि पत्रिका बहुत दिनों तक चलती रहे और यह तभी

संभव मालूम पड़ता है जब मंत्री महोदय अपने जोवन भर स्वस्थ एवं सबल रह कर मानस सङ्घ तथा समिति का संचालन करते रहें। यह तो सभी जानते हैं कि 'ससर्पश्च गृहे वासो जीवन्नेव मृतो नरः' इसलिये इस सर्पारण्य में स्थित रामवन में फूस बाँस की झोपड़ी में रहने वाला सुरक्षित नहीं माना जा सकता। और जब मन्त्री महोदय से साधकों की पक्की कुटिया में रहने को कहा जाता हैं तो उत्तर मिलता है कि मानस सङ्घ कार्यालय एवं कार्यकर्त्ताओं को अरक्षित छोड़कर मैं अलग नहीं सकता। अतएव मन्त्री जी की रक्षा के लिये मानस सङ्घ कार्यालय का पक्का बन जाना बहुत आवश्यक है। इसमें अनुमानतः दस सहस्त्र रुपये लगेंगे और इतना तो मानस प्रेमी मानस सङ्घ के विशाल परिवार के लिये न्यूनतम द्रव्यांक है। यदि सभी मानस प्रेमी इधर किंचित मात्र ध्यान दे दें तो यह कार्य अत्यल्प काल में ही सम्पादित हो जायेगा। मेरा पूर्ण विश्वास है कि सभी मानस प्रेमी अविलंब इस शुभ कार्य में अधिकाधिक सहयोग देने में सचेष्ट हो जाँयेगे।



अक्टूबर मास में संघ के २२३ नये सदस्य बने। इस मास में ११ नई शाखायें स्थापित हुईं जिनका विवरण इस प्रकार है :—

शाखा संख्या १५६० पिण्ढरई [मण्डला] सदस्य ६ मन्त्री श्री भगवानदास जी लखेरा। शा० सं० १५६१ सोरटी बारूल [मध्यभारत] सं० १५ मं०...। शा० सं० १५६२ हसामर [बहराइच] सं० ११ मं०...। शा० सं० १५६३ जगतापुर [बहराइच] सं० १२ मं...। शा०सं० १५६४ मानपुर [दुर्ग] सं० ६ मं० श्रीकवलसिंह जी। शा० सं० १५६५ लोहारदगा [रांची] सं० ६ मं० रायसाहब श्री बलदेव जी साहू। शा० सं० १५६६ सकतपुर [राजस्थान] सं०१० मं० श्री भट गौरीशङ्कर जी शर्मा। शा० सं० १५६७ सकतपुर [राजस्थान] सं० १६ मं० श्री मथुरा लाल जी शर्मा। शा० सं० १५६८ नोहल्या सकतपुर [राजस्थान] सं० ६ मं० मुन्शी श्री शिवचरणजी शर्मा। शा० सं० १५६६ तलवाड़ा [मध्यभारत] सं० १० मं०...। शाखा संख्या १५७० विठौली [सीतापुर] सदस्य १३ मन्त्री श्री स्वामी रामनारायणदास जी।

आश्विन पारायण समाचार

(आश्विन शुक्ल १ से ६, ता० ८ से १६ अक्टूबर तक)

कोटमीः—व्यक्तिगत ३ पाठ, एकाह एक पाठ एवं सामूहिक पाठ १६ सदस्यों द्वारा सम्पन्न हुआ। पाठोपरान्त ब्रह्म भोज एवं प्रसाद वितरण हुआ।

—रामरंगीलेदास वैष्णव

बधुवारः—१३ सदस्यों द्वारा ६ दिन तक अखंड-पाठ अखंड ज्योति सहित हुआ। शनिवार को उत्तरकाण्ड की सम्पूर्ण दोहा, चौपाई द्वारा तथा श्रीरामचन्द्रायनमः का सम्पुट लगाकर हवन हुआ। बाद में कन्या और साधकों को भोजन कराकर प्रसाद वितरण हुआ।

— ठा० हरशङ्करलाल

धमनाः—नवाह पाठ हुआ।

—संवलियाप्रसाद

रामराजतलाः—श्रीरामकथा मंडल बोर्ड में सामूहिक नवाह पाठ, डेढ़ अरब सीताराम नाम जप, श्रीहनुमान जी को १३१० प्रेमियों द्वारा समर्पित हुआ।

—मदन

बलवाड़ाः—ता० ८ से १४ तक अहर्निशि रामायण पारायण एवं श्रीहनुमानचालीसा के ५१ पाठ हुए। प्रभातफेरी निकाली गई। हवन, ब्रह्मभोज सेठ सुरजमल छोगालाल के तरफ से हुआ। प्रसाद वितरण हुआ।

—नारायण दुबे

चांपाः—८ बहिनों ने नवाह पाठ किये।

—रामप्यारी बाई

पाण्डूः—१६ सदस्यों ने नवाह पाठ किये।

—शिवसम्पति पाण्डे

पाण्डुकाः—व्यक्तिगत पारायण तथा ६ सदस्यों ने अलग पाठ किये। कुन्डेल, गाडडीह में सामूहिक पाठ हुआ।

—फकीर राम देवांगन

लखनऊः—प्रथम भगवानराम का पूजन स्तुति कीर्तन होकर नवाह पाठ शुरू होता था। पूर्ण पर हवन, प्रसाद वितरण हुआ।

—शालिग्राम दीक्षित

मोतीहारीः—७ सदस्यों ने नवाह पाठ विधवत किये। बाद में हवन हुआ।

—गंगासागर

चोरलः—श्रीश्री १०८ कुटिया वाले महात्माजी के आश्रम पर तथा श्रीमान (जूनी) पटवारिन बाई साहब के मकान पर नवाह्निक पारायण हुआ। समाप्ति पर हवन, प्रसाद वितरण एवं डोलयात्रा निकाली गई।

—भागीरथ मिस्त्री

सिवनीः—६ सदस्यों ने नवाह पाठ किये। दशमी को श्रीराम लक्ष्मण की सवारी सजाकर कीर्तन करते हुए जलूस निकाला गया। समाप्ति पर आरती, प्रसाद वितरण हुआ।

—रामसहाय पाण्डे

धनवादः—भैयाठाकुर में ७ सदस्य, जिअलगढ़ में ७ नवयुवक, भैयाडीह में ६ व्यक्ति, विश्वासडीह में १२ व्यक्तियों ने पाठ किये। सभी जगह पाठ ६ बजे से ६ बजे तक होता था। समाप्ति पर हवन, रागभोग श्री सीताराम को लगाकर ब्राह्मणों को भोजन कराया गया। प्रसाद वितरण हुआ। श्रीरामनाथ पाठक ने नवाह पाठ पूर्ण करके उसी दिन एक आसन से अखंड पाठ किये।

—रामरत्नासिंह

बहवलपुरः—व्यक्तिगत नवाह पाठ हुए। समाप्ति पर हवन, प्रसाद एवं [illegible] भोजन हुआ।

—सरनामसिंह

दावांगढ़ः—सात नवाह पाठ २४ घंटे का अखंड राम नाम, अखंड दीप सहित हुआ। बाद में हवन, ब्राह्मण भोजन कराया गया।

—ब्रह्मदेवनारायण

पनागरः—नवाह पाठ हुआ। ता० १६-१०-५३ को दूसरा अखंड पाठ हुआ।

—टीकाराम चौकसे

करेलीगञ्जः—११ महिलाओं द्वारा नवाह पाठ हुआ।

—रामप्यारी बाई

ननोदाः—श्रीराममन्दिर में १० व्यक्तियों द्वारा सामूहिक अखंड पाठ करके सुन्दरकाँड पाठ से हवन करके श्रीमारुति जी का पूजन गया।

—जगन्नाथदाससाधू

माफोः—सामूहिक नवाह पाठ हुआ।

—शीतल शर्मा

गरसंडाः—आठ सज्जनों ने व्यक्तिगत पारायण किया।

—भगवानसिंह

सहोरा चरखारी:—पारायण हुआ। समाप्ति पर १०० व्यक्तियों को भोजन कराया गया।

—रामेश्वरसिंह

विहटा:—तीन सज्जनों ने व्यक्तिगत पाठ किये। नित्य प्रार्थना तथा कथा होती थी।

—वासुदेवराय

गुलाबगञ्ज:—एक नवाह पाठ किया।

—नारायण लक्ष्मण नाइक

विचुवा:—१६ सदस्यों द्वारा नवाह पाठ हुआ। पं[illegible] श्री बलराम जी पुजारी का आचार्य[illegible] और श्री काशीराम तिवारी का सहयोग सराहनीय था।

—शिवदयाल सोनी

घेगांव:—३५ सदस्यों द्वारा पाठ पूर्ण हुआ। बाद में हवन, कीर्तन, जलूस तथा प्रवचन हुआ।

—विष्णुदास साधु

प्रागपुरा:—श्री पं० भरतराम शर्मा के यहाँ मानस के ३ पाठ और रामनाम जप हुआ।

—मुरारीलाला शर्मा

चिरमिरी:—श्री हनुमान जी के मन्दिर में व्यक्तिगत ३ पाठ हुए। समाप्ति पर हवन, पूजन तथा प्रसाद-वितरण हुआ।

विलारी:—४ सदस्यों ने व्यक्तिगत तथा ३ सदस्यों ने नवरात्रि भर पारायण किये।

—ताँतीराम साव

किरावली:—धर्मशाला में नवाह पाठ वाद्य सहित हुआ। नित्य सायं कीर्तन होता था।

—शान्तिस्वरूप

चीचली:—महिला शाखा में सामूहिक नवाह पाठ हुआ। समाप्ति पर आरती, कीर्तन व प्रसाद वितरण हुआ। पुरुष शाखा में व्यक्तिगत पाठ हुए।

—लेखराम पैगवार

गोटेगांव:—४ व्यक्तियों ने नवाह पाठ किये।

—परमानन्द

डूंगरपुर:—विजयासना देवी के स्थान पर दस साधकों ने नवाह पाठ, एक अखंड पाठ ५४० पाठ हनुमान चालीसा के हुए। शनिवार को चण्डी, हनुमान जी की पूजा हवन व प्रसाद वितरण हुआ। भोजपुरा में ११ पाठ हुए।

—शिवचरणलाल शर्मा

[illegible]या:—एक नवाह पाठ किया। पूर्ण पर, ब्राह्मण भोजन तथा प्रसाद वितरण हुआ। दशमी को प्रतिमा विसर्जन, नाटक, कीर्तन आदि हुए।

—वैद्नाथ मिश्र

नवघटा:—६ पाठ हुए। समाप्ति पर हवन, सत्यनारायण की पूजा हुई। ४ व्यक्तियों ने अलग पाठ किये।

—गोविन्दसिंह

हिरमी:—दो व्यक्ति नवाह पाठ किये। नित्य ६ दोहे अर्थ सहित, १० श्लोक गीता के व हरे राम हरे राम माला जप होता था।

—चोवाराम कश्यप

सूरजपुर (सुरगुजा)—श्री प्रेमनारायण भार्गव के यहाँ नवाह पाठ हुआ। पूर्णाहुति पर हवन, कन्या भोजन हुआ।

—रामलाल गुप्ता

भेलसा:—सागर वाले श्रीमहाराज जी का रामायण एवं श्रीमद्भागवत् पर प्रवचन, सामूहिक नवाह पाठ, अखंड पाठ, हनुमान चालीसा के ११ पाठ नित्य होता था। अन्तिम

दिन हवन, ब्राह्मणों व १०० कन्याओं को भोजन कराया गया।

—श्यामलाल

आमली:—व्यक्तिगत १ नवाह पाठ, हनुमान चालीसा तथा सुन्दरकाण्ड के ३ पाठ हुए।

—मूलचन्द्र मिश्र

खुदगड़ा:—दो नवाह पाठ हुए। हर मङ्गलवार को रामायण का पाठ होता है।

—गुनाराम

डोंगरगाव:—अठवीं को अखंड पारायण होकर नवमी को हवन पूजन हुआ।

—विहारीलाल

दुर्जनपुर:—व्यक्तिगत नवाह पाठ हुए।

—मोतीलाल

मोहभट्ठा-:व्यक्तिगत नवाह पाठ हुए।

देवरिया:—आश्विन शुक्ल पक्ष भर विभिन्न स्थानों पर श्री पं० रामानाथ जी व्यास द्वारा श्रीमानस की कथा हुई। व्यक्तिगत नवाह पाठ हुए।

—रामधारीलाल मुख्तार

चक्रधरपुर:—व्यक्तिगत नवाह पाठ सम्पुट से हुआ। पूर्ति पर हवन हुआ।

पिपरामड़का:—१० व्यक्तियों ने एकाह पाठ किये। पश्चात् हवन किया गया।

—श्रीकृष्णशरण

घाटोली:—५ व्यक्तिगत नवाह पाठ हुए। पूर्त्ति पर हवन, भोज्य तथा प्रसाद वितरण हुआ।

गतोरी:—५ व्यक्तिगत नवाह हुए।

—रामसनेहीदुबे

परौंख और भींझक:—में कई व्यक्तिगत नवाह पाठ हुए। श्री पं० शिवकुमार के यहां १८ सदस्यों द्वारा सामूहिक नवाह पाठ और श्री हनुमान चालीसा के ४१६ पाठ तथा श्री अंगदराम के यहाँ अखंड पाठ और श्री हनुमान चालीसा के ५१ पाठ हुए। अन्त में आरती, हवन तथा प्रसाद वितरण हुआ।

—कुँ० धनसिंह

सुपौल:—श्री महावीर प्रसाद वकील के रामकुटी में एकाह पाठ हुआ। श्री हरिकीर्तन भवन में ११ सदस्यों द्वारा नवाह पाठ हुआ। बाद में हवन, ब्राह्मणकुमारी तथा सदस्यों को भोजन कराया गया।

—[illegible]रू चौधरी

सूखारी:—श्री शङ्कर जी के मन्दिर में ६ पाठ हुए। अन्तिम दिन रामधुनि करते हुए नगर की परिक्रमा की गई।

—जीवनलाल

पिनाहट:—६ व्यक्तियों ने नवाह पाठ किये। श्री वटेश्वरदयाल जी के मकान पर एक अखंड पाठ हुआ। समाप्ति पर हवन, ब्राह्मण भोजन व प्रसाद बाँटा गया श्री रामलीला भी हुई। श्री तालेश्वर महादेव जी पर हमेशा कथा होती रहती है।

—गजाधरप्रसाद

रामवन:—विजयादशमी को अयोध्या के वेदान्त भूषणाय रामकुमारदास जी रामायणी के सभापतित्व में रामवन वासियों की एक सभा हुई। मानस राजहंस पं० श्री विजयानन्द जी त्रिपाठी की ७३ वीं गाँठ पर बधाई तथा उन्हें दीर्घायु होने की प्रार्थना श्री मारुति भगवान से की गई।

मानस यज्ञ

आश्विन नवरात्र में मानस यज्ञ रामवन में १३ साधकों ने भाग लिया। दो साधक प्रत्येक

चौपाई पर प्रवचन करते थे। नित्य श्रीहनुमानजी को नई झाँकी की सजावट बराबर ९ दिन तक होती रही। रात्रि को अयोध्या के वेदान्त भूषण पं० रामकुमारदासजी रामायणी की कथा होती थी। अन्तिम दिन पूर्णाहुति तथा रामायण की आरती हुई। नित्य श्री रामनाम मन्दिर की परिक्रमा तथा साधकों और आश्रम वासियों का भण्डारा होता था।

—:०:—

विविध-समाचार

गुरलाँ:—ता० ६-१०-५३ को सुन्दरकाँड का पारायण श्री बनतावरमल जी जैन और श्री नन्दकेश[illegible] जी त्रिवेदी के यहाँ ११ सदस्यों द्वारा हुआ। [illegible] २७-१०-५३ को श्री भैरूँलाल जी के मका[illegible] पर सुन्दरकाण्ड का पाठ हुआ। आगामी मङ्गलवार को श्री बद्रीलाल टेलर के यहाँ होगा।

—पंचोली शोभा लाल

दन्तेवाड़ा:—शरदपूर्णिमा को श्रीरामकृष्ण मिश्रा के यहाँ श्रीरामनिहोरेलाल सबइन्स्पेक्टर पुलिस कुवा कुंडा द्वारा रामायण की कथा हुई। जनता की काफी भीड़ थी। अन्त में कीर्तन होकर प्रसाद वितरण किया गया।

—मरुँलाल पटवारी

बुन्देली:—सावन बदी ५ से ७ तक दिन रात २४ घंटे रामध्वनि हुई। समाप्ति पर होम, हवन, जलूस तथा प्रसाद वितरण हुआ।

—परसराम

जुन्हैटा:—ता० ३-१०-५३ से ४-१०-५३ तक अखंड रामायण पाठ होकर कीर्तन हुआ।

—ओंकार प्रसाद

भन्देमऊ:—मानस का अखंड पाठ क्वार कृष्ण २ को हुआ। पश्चात् हवन, प्रसाद वितरण हुआ।

—छोटेलाल गुप्ता

गमनामऊ:—श्री जगन्नाथ तिवारी ने अपने मन्दिर में श्री महावीर जी का हवन, पाठ, गायन, कीर्तन तथा प्रसाद वितरण हुआ।

—शम्भूदयाल कठेरिया

परौंख:—ता० ८,१५,२२,२९ सितम्बर को क्रमशः श्री हनुमान चालीसा के, १२, ११, १२, १५ पाठ हुए। सामूहिक रामायणगान, मानस अन्ताक्षरी, प्रत्येक में हुई। पारितोषिक दिया गया। पूर्त्ति पर आरती एवं प्रसाद वितरण हुआ। ता० ६, १३, २०, २७ अक्टूबर को भी ऊपर लिखे मुताबिक क्रमशः ११, २२, २१, १० पाठ हुए।

—कुँ० धनसिंह भदौरिया

हरसूद:—श्री पं० गौरीशङ्कर द्विवेदी आचार्य कथावाचक का ९ दिन तक मानस प्रवचन श्री राममन्दिर में हुआ। प्रवचन से जनता के हृदय में मानस के प्रति भावना जाग्रत हुई।

—विष्णुप्रसाद

चित्तौड़गढ़:—ता० २० से २५ अक्टूबर तक श्री पं० रामरक्षित जी रामायणी की कथा ४ दिन नीचे तथा एक दिन ऊपर हुई।

—पन्नालाल

रामवन-समाचार

मानस आश्रमः—अक्टूबर मास में एक सम्पूर्ण अखंड पाठ नित्य होता रहा। इस मास में मानस आश्रम में ५५२॥≡) की आय हुई और खर्च ४७१≡) हुआ। ८१॥) की बचत हुई। श्री मारुति रागभोग में २३१॥) की आय हुई और खर्च २६३।)॥। हुआ। कमी ३१॥)।।। की रही। मास की कुल बचत ४६॥≡)। हुई। जो पिछली कमी २२६२=) में से घटाकर अब कुल कमी २२१२।≡) की रही।

मानस आश्रम

१-१०-५३

१।) श्रीनन्दकुमार पाठक, मुरी
१) श्रीधूलील चारन, अकलेरा

३-१०-५३

१५) श्रीबजरंगलाल बेड़िया, डिब्रूगढ़
१०) श्रीरामनिवास दरगढ़, मदनगंज
५) न्यूमेरीन कालियरी, कुसुन्डा

७-१०-५३

१॥) श्री रामरत्नासिंह, धनबाद
३) श्री वासुदेव शुक्ल, पन्ना

८-१०-५३

५) श्री कृष्णा प्रसाद; बालूमाथ

१०-१०-५३

१०७) श्री सेठ चुन्नीलाल पन्नालाल, पानीतुला
१११) श्री सेठ शिवभजन चोखानी, डिब्रूगढ़

१४-१०-५३

२॥) श्री द्वारकादास राठी, कलकत्ता

१६-१०-५३

७८) श्री विरदीचन्द्र पोद्दार, नागपुर

२१-१०-५३

१००) श्री शालिग्राम मेहरोत्रा, कलकत्ता

२२-१०-५३

५) श्री बद्रीलाल जी सोनी, अगूँचा

२४-१०-५३

१०) श्री रामेश्वर सिंह वकील, गोंड़ा
२५) श्री शिवरामदास राजपुरीया, हीगंणघाट

२८-१० ५३

१०) श्री नन्दलाल जी, सतना

३०-१०-५३

५०) श्री रामचन्द्र शर्मा. टिटिलामढ़
२।≡) चढ़ोत्री

———

५५२॥≡)

श्री मारुतिरागभोग

३-१०-५३

१३) गुप्तदान
२०॥) श्री बजरंगलाल बेड़िया, [illegible]गढ़

५-१०-५३

५ श्री द्वारकालाल खंडेलवाल, वारा

६-१०-५३

५) श्री भागवत पाण्डेय, विरार (बम्बई)

८-१०-५३

७) श्री कृष्ण प्रसाद, बालूमाथ
३२।) श्री मूलचन्द्र सोन्थालिया १६।), श्रीसरस्वतीराइस मिल ११), श्री प्रभूदयाल केडिया ५) फगुरम

६-१०-५३

१५) श्री विद्यासागर मिश्र, फूलापुर

१०-१०-५३

५) श्री फूलचन्द्र टिकमानी, बाँसजोड़ा
५) श्री ओमप्रकाश, दिल्ली
२१) श्री चिरौंजी लाल चोधरी, मारघरिटा

१२-१०-५३

१।) श्री रामरतन शर्मा, झाँसी

१३-१०-५३

१) श्री कृष्णकान्त मिश्र डुमरिया

१४-१०-५३

२॥) श्री द्वारकादास राठी, कलकत्ता
५।) श्री मुन्दरलाल श्रीवास्तव, बम्बई

१५-१०-५३
६।) श्रीमती कस्तूरी बाई वैश्य, चीचली
१६-१०-५३
१०) श्री रामउजागर तिवारी, फुरसाइन
१०) श्री उमाशङ्कर लाल, बड़ा गाँव
१०) श्री ठा० महीपति सिंह, अकौना
१६-१०-५३
२) श्री छोटेलाल अग्रवाल, इलाहाबाद
२) श्री रामेश्वर प्रसाद गुप्त,भरुवा सुमेरपुर
२२-१०-५३
५) श्री [illegible]लाल बानी, मल्हार
२८-१०-५३
११) श्री [illegible] रामचन्द्र, सतना
६।) श्री कन्हैयालाल, खोखरा
१५) श्री ब्रजभूषण गनेड़ीवाला, गोरखपुर
१) श्रीमती नेपुरी देवी, कुरहा
११) श्री मानस यज्ञ समिति, फतह नगर
५) श्री विशन स्वरूप माथुर, दिल्ली

२३१॥)

भूल सुधारः––अक्टूबर के रामवन समाचार में श्री मारुति रागभोग में ५) श्री रामचन्द्र शर्मा दिल्ली के नाम भूल से छप गया है। वास्तव में वह ५) भक्तवर श्री रामस्वरूप दिल्ली के नाम का है।

मानस यज्ञः—विभाग में २००) की आय हुई और खर्च ७३~)॥ हुआ। बचत १२६॥=)। की रही। जो पिछली कमी ३२०) में घटाने से अब १६४~)॥ की पूर्ति करना बाकी रहा।

१-१०-५३
२०) श्री गङ्गा प्रसाद बच्चूलाल, जावरा
७-१०-५३
२०) श्री ठा० हरशङ्कर लाल, बघुवार
२०) श्री मूलचन्द्र खरे, सीधी
८-१०-५३
२०) श्री भोलानाथ पाण्डेय, पाण्डु
६-१०-५३
२०) श्री गिरधारी लाल मुख्तार, देवरिया
१०) श्री हरिश्चन्द्र शर्मा, रीवा
१५-१०-५३
२०) श्री एन० एल० महता, बम्बई
१८-१० ५३
१५) श्री सेठ रामचन्द्र, सतना
२०) श्री उमाशङ्कर पोस्ट मास्टर, देवरिया
२५) श्री बजरंगदास एडवोकेट, सिरसा

२००)

श्रीरामनाम सेवा:—में भक्तवर श्रीरामस्वरूप दिल्ली से २) तथा श्री रामनाम मन्दिर में ।~)॥ के कुल २।~)॥ प्राप्त हुए और ।) खर्च हुए। पिछली बचत ४।≡) सहित अब ६।।)॥ जमा है।

श्री तुलसी मन्दिर:—इस मास में ७६।) की आय हुई। पिछला बचत ४३≡)। सहित अब ११६।≡)। जमा है।

१-१०-५३
५) श्री टेकलाल मेहता, शाखा काकेवार
८-१०-५३
५) श्री शाखा करेली बस्ती, श्री जालमसिंह रघुवंशी
५) श्री भोलानाथ पाण्डेय, पाण्डु
६-१०-५३
५) श्री रघुवर दास राम कन्देली
१३-१०-५३
५) शाखा बांदा श्री लक्ष्मण करण वि० मेहता
१५-१०-५३
१०) श्री कुँ० पुरुषोत्तम सिंह, जगन्नाथपुर
१६-१०-५३
५।) श्री हरगोविन्दसिंह ब्रह्मवंशी, जबलपुर

५) शाखा घेगाँव श्री विष्णुदास, साधु
१०) नरसिंहपुर कन्देल, श्री भगवानदास पाण्डे
२३-१०-५३
५) श्री रमणीक प्रसाद, मोपका
५) श्री परसादी मोड़, गागरा
२८-१०-५३
५) सनवाड़ शाखा मंत्री श्री गिरधारी लाल जी, वटवाल
५) श्री वंशीलाल जी मालीवाल, चित्तौड़गढ़
१) ,, हरखुमहतों, मोरपा

७६१)

पारायण मन्दिर :--इस मास में ११) की आय हुई। पिछली बचत २८) सहित अब ३९) जमा हैं।

७-१०-५३
५) श्री राम अधार त्रिपाठी, बम्बई
१५-१०-५३
६) श्री पं० शीतल शर्मा कर्मकाण्डी, माफी

११)

गोशाला :--इस मास में १३५≡) की आय हुई और २६॥≡) खर्च हुआ। १०८॥) की बचत रही। और १३२३॥।-)॥ श्रीराम संस्कृत विद्यालय भवन के जमा किये गये। पिछली रकम २८७॥।-)॥ सहित अब १७२०≡)॥ जमा हैं।

१०-१०-५३
५१) श्री गंगा विशुन मोती लाल, होजाई
५१) ,, गोपी राम नरसिंह दास, डिब्रूगढ़
१८-१०-५३
१५) श्री सेठ रामचन्द्र, सतना
२१-१०-५३
३≡) श्री ज्वाला प्रसाद, सतना
३१-१०-५३
१५) श्री सेठ रामचन्द्र, सतना

१३५≡)

श्रीराम संस्कृत विद्यालय, भवन :-- खाते में १३२३॥।-)॥ जमा थे। इनमें ६६६) डिब्रूगढ़ के दाताओं के थे शेष सतना स्टोन लाइम कं० सतना के। डिब्रूगढ़ वालों ने अपनी रकम गोशाला निर्माण में खर्च करने का आदेश दिया है। सतना वालों को भी यह स्वीकार है। अतः कुल रकम गोशाला खाते में जमा की जा रही है। अब इसमें कुछ शेष नहीं रहा।

कुटीर विभाग:—

नर्मदाखण्ड कुटीर:--पूर्व वत् १८१॥)॥। की पूर्ति करना बाकी रहा।

सम्हरिया कुटीर:-- श्री तीरथराम बुन्देली के द्वारा ८) प्राप्त हुए। पिछले १६१॥।) सहित १६६॥।) जमा हैं।

कमल कुटीर:—इस मास में श्री के सी० मिश्र से १००) प्राप्त हुए। अब ६४३≡) आना बाकी है।

डाँगीढ़ाना कुटीर:-:—बनने को कोई आशा नहीं है। इसके बाकी २८॥=)॥ इसी खाते में जमा करके मानस आश्रम खाते में नाम डाला गया।

कोरी कुटिया:--:में १५४६। [illegible] बाकी निकलते हैं जिनमें वास्तव में ४८) क[illegible] कुटिया विभाग में बाकी है। शेष १४६८॥-)॥ साथ में बनी कुटिया में लगे थे। अतः उस खाते में नाम लिखे जारहे हैं।

मानस प्रचार:--अक्तूबर मास में ६४॥-) सदस्य शुल्क से प्राप्त हुए। खर्च कार्यालय में १३१) चिट्ठा में ३७≡) और छपाई में ६२) कुल २६।≡) हुआ। १२५-)॥। की कमी रहा। जो पिछला रकम २६≡)॥। जमा थे। अब ८८॥=) की कमी रही।

सामान सेवा:--श्री बेधड़क जी ने एक सुन्दर पर्दा भेजने की कृपा की कृपा की है। धन्यवाद!

श्रीरामनाम लड्डू:—अक्टूबर मास में ५३१ लड्डू प्राप्त हुए। १५५ लड्डू श्री मारुति जी को समर्पण हुए। बाकी अक्षया तृतीया के लिये रखे गये। केन्द्रों की स्थिति इस प्रकार है:—

लाड़ीगढ़ १७३, परीख १४७, मुलठाना, १२५, चैबासा ८२।

शुभागमन:----इस मास में अयोध्या से साहित्यरत्न वेदान्त भूषण पं० श्री रामकुमार दास जी रामायणी, सूरत से श्री रामचन्द्र गान्धी और इलाहाबाद के असिस्टेंट इन्कम टैक्स कमिश्नर सा० अपने मित्रों सहित आये। महात्मा श्री शङ्करदास जी महराज पन्ना पधार गये।

—:०:—

रामवन के विविध कार्य

१—वर्ष में श्रीरामचरितमानस का दो पाठ करने की प्रतिज्ञा करने वाले सज्जन मानस संघ के सदस्य बनाए जाते हैं। आजीवन शुल्क ॥) है; जहाँ नौ सदस्य हो जाते हैं, वहाँ शाखा बन जाती है। इस समय देश में मानस संघ के ३२१०१ सदस्य हैं और १५२७ शाखायें हैं।

२—रामचरितमानस का प्रचार एवं अध्ययन व्यापक करने के लिए यह 'मानस मणि' मासिक पत्र बारह वर्ष से निकल रहा है। इसका वार्षिक मूल्य ३) है।

३—तुलसी साहित्य का प्रकाशन मानस प्रकाशन लिमिटेड द्वारा होता है। कम्पनी का प्रत्येक शेयर १०) का है। कम्पनी १६ ग्रन्थ प्रकाशित कर चुकी है। स्थायी ग्राहक शुल्क २) है। स्थायी ग्राहकों को प्रकाशित ग्रंथों पर २५ कमीशन [illegible] जाता है।

४—श्रीरामचरितमानस एवं व्यवहार विद्यालय द्वारा मानस संघ घर बैठे श्रीरामचरितमानस की शिक्षा देता है। विद्यालय का पाठ्य विषय तीन वर्षों का है और प्रथम वर्ष का शुल्क ६) है।

५—मानस आश्रम में नित्य अखण्ड मानस पाठ होता है जहाँ रह कर साधक एकान्त में साधन भजन करते हैं।

६—तुलसी संग्रहालय भी रामवन में है।

७—मानस संघ राम नाम लड्डू लिखने का प्रचार करता है। ये लिखित रामनाम श्रीमारुति जी को अर्पण किये जाते हैं। २७ करोड़ अर्पित हो चुके हैं।

८—श्री राम संस्कृत विद्यालय में वाराणसेय-परीक्षा के पाठ्यक्रम के साथ मानस अध्ययन की भी सुविधा रखी गई है।

हर विभाग में आपका सहयोग अपेक्षित है।



'मानस मणि'

पो०—रामवन (सतना)

ग्रा० न०— 8

श्री सम्पादक जी गुरुकुल पत्रिका गुरुकुल कांगड़ी

सम्पादक—सुदर्शन सिंह

प्रकाशक—शारदा प्रसाद, मन्त्री, मानस सङ्घ, रामवन, (सतना) मुद्रक—माधो प्रिंटिङ्ग वर्क्स, प्रयाग।